



आरोग्यदर्पण ॥

विविध वैद्यक विषयक सम्बन्धी अपूर्व पुस्तक

प्रथम खण्ड

जिस्मे आयुर्वेद मतके प्रातःज्ञानाद्याख्य समनान्त पर्यन्त कर्म,
जति लाभदायक शिक्षा, घातृ शिक्षादि और अंगरेजी
दवाइयों की समावेशना किया है । जो लोग कुपथ्य
यस अनेक रोगोंमें लिप्त रहते हैं उनके उपकारार्थ पं०
जगन्नाथ शर्मा राजवैद्य रचकर प्रकाश किया
आयुर्वेदाक्त औषधालय प्रयाग

(प्रयाग)

“ धार्मिकयन्त्रालय ” में सुद्रित हुआ ॥

यह पुस्तक ऐकृ २५ के मुताबिक रजिस्टरी की गई है मियाय
ग्रन्थकर्ता के किसी को छापने अथवा भाषा बदल
बदल करने का अधिकार नहीं है ॥

अप्रैल सन् १८८३ ई०

द्वितीयमार १०००

मूल्य फी पुस्तक १॥१

मंगला चरणा ।



दोहा ।

रचे पदारथ जिन सकल लता, गुल्म रस योग ।
व्यापका व्याप अनन्त गुण तिनमह आतम योग ॥
पाप पुण्य फल सफलता बलता रोग निरोग ।
जीव चराचर बुद्धिते सदा सिद्ध उद्योग ॥
याते हम सब चित्त दै वाकी अकथ कहानि ।
भनै गुनै श्रवणन सुनै बरतै नित हित मानि ॥

चौपाई ॥

यह शरीर मल विमल अगारू । बसै सदा जहां रुज परिवारू ।
राव रंक यति तपी चिबंकू । रुज समूह तैं नाहि असंकू ॥
चहै संसागर धरि महि धारा । होय प्रलय नवनिधि आगारा ॥
मांगे भीख रहै निज जालू । सुतवित त्यागिहू होइ निरालू ॥
द्रन्दिन बस करि रहै सुधीरा । बल वीरज से सतत गँभीरा ॥
अरा से अराहु होय पै रोगी । शान्तिकहा गित भये सुभोगी ॥

दोहा ।

याते विनवै हे सुजन चित्तदै सुनो विधान ।
रोग औपधी योग सुख याते योग न आन ॥

प्रस्तावना ॥

सृजन पालन आदि कर्ता ईश्वर ने इस स्थूल भूतम कारण एवं पञ्च तत्त्वमय इन्द्रियादि सहित इस मनुष्य शरीर को उत्पन्न किया और इसमें इस शरीर द्वारा उपयुक्त यहाँ तक शक्ति दे दी है कि यही मनुष्य वह लौकिक धर्म अर्थ काम और धार लौकिक मोक्ष को भी मिट्ट कर सकता है परन्तु इन सबों का मुख्य कारण आरोग्यता है । जिस शरीर में आरोग्यता नहीं होती वह समस्त भूगण्डल का राजा होने पर और चीन्हा कला विद्या निधान रहने पर भी उपरोक्त चारों पदार्थों से वञ्चित रहता है । हाय वह आरोग्यता जैसी कि अब चाहिये कहीं नहीं दिखलाई देती । पुरा काल में इसी भूगण्डल के मध्य में आरोग्य प्रभाव से कैसे २ और पुरुष और वेदोपवेद के आद्योपान्त वेत्ता अनेक महर्षि हुये हैं कि जिनकी विद्यात अब तक सब मनुष्यों के हृदयस्थ हो रहा है । थोड़ेही रोज हुये कि इसी मध्य प्रदेश में आरुहा ऊदल दयाराम आदिक अति यत्नवान और श्रीधर आदिक कैसे विद्वान हुये हैं कि जिनका शतांश भी आज कल के मनुष्यों में होना दुष्कर है, वर्तमान में ही देखिये हम लोगों की अपेक्षा इस समय इङ्ग्लैण्ड के लोग इसी दिन चर्या रात्रि चर्या के उत्तम आचरण से कैसे २ काम कर रहे हैं कि जिनके केवल यंत्र विद्याओं को देख कर एक दूसरे प्रज्ञा का अवतार मानना पड़ता है । इस से सब से प्रथम इस आरोग्यता पर सब को ध्यान देना अवश्य चाहिये । यद्यपि लोग रिष्ट पुष्ट और अपने काम काज में लिपटे हुये दिखलाई देते हैं, लेकिन प्रायः देखने में यही आता है कि लोग मिथ्याहार विहारादि द्वारा रोगाकुल हो हजार में चाहे दो, चार पूर्ण आयु को प्राप्त होते हैं बाकी सब अकाल ही में मृत्यु को प्राप्त होते हैं । वेद में भी प्रमाण है कि मनुष्य शत जीवी हैं परंच विकर्म के प्रभाव (सांसारिक बुरे आचरण) से शीघ्र ही काल यस होते हैं । यह वेद का कथन प्रत्यक्ष देखने में आता है कि देवा

आज फल मनुष्य तुच्छ २ रोगों से अकस्मात् शीघ्र मर जाते हैं । तथा तीस ३० चालीस ४० वर्ष भर में ही मृदु हो जाते हैं । कहां तक कहें कि दश वर्ष की अवस्था से बाल पकना शुरू हो जाता है । यहां तब देखने में आता है कि पांच सात वर्ष के बालक मूत्र रुच्छादिक रोगों से पीड़ित हैं । इसका मुख्य कारण यह है कि आंगे के लोगें भूखा खाना पीना चलना फिरना स्त्री प्रसूनादिक जितने कर्म हैं सब ठीक तौर पर ये आज फल क्यों नहीं हैं वैद्यके शास्त्र के न जानने से ! वैद्यक विद्या केवल वैद्यों ही के लिये नहीं है बल्कि सर्व साधारण के स्मरण रखने के योग्य है ।

सर्व साधारण में यह विद्या प्रायः लुप्त क्यों हो गई है कारण यह है कि जब से यह देश अत्याचारी यवनों के हाथ में आकर उत्पीड़ित होने लगा और सगस्त वेद वेदाङ्ग यावत् हिन्दू शास्त्र से वे सब भस्मी भूत हो कर प्रदेश मात्र में सदेव विद्या फैल गई और प्रजा मानव को असहन कष्ट प्राप्त होने लग गया तभी से यहां के लोगों का शारीरिक और मानसिक बल क्रम से घटते घटते जो कुछ रहा सदा वह भी अङ्गरेजी राज्य के गुणानुसार खाना पीना रीति नीति प्रयत्नित होने से मनुष्य प्रकृति में बहुत कुछ हेर फेर हो इस महीपकारी विद्या का लोपही हो गया ।

अतीव आक्षेप का विषय इस पर है कि जब तमाम भारत वर्ष अस्वास्थ्य कर क्यों हो गया है और इसका प्रतीकार भी किसी प्रकार हो सक्ता है इस बात की कोई खोज खबर नहीं लेता ले कौन, यह सबों की दृढ़ निश्चय हो गया है कि जब तब इस वैद्य विद्या में राजा ध्यान नहीं देगा उन्नति होना असंभव है ॥

पर हम यही कह सकते हैं कि इस विद्या का जीर्णोद्धार चाहे जय हो समाज ही करेगी । इस लिये विशेष कर पहिले हम आयुर्वेदीय चिकित्सक जन समाज से ही सविनय प्रार्थना करते हैं कि आप लोग क्यों घोर निद्रा में सो रहे हैं क्या आप लोगों के कर्ण में रोगाक्रान्त दुःखियों

देश वाले आज तक नहीं कर सकते । हाय, यह यही आयुर्वेद है कि जो इस समय प्रायः लुप्त दशा पर भी इस देश के अनेक चिकित्सक बिना काटेही स्नान मूल प्रलेप पही अथवा पिचकारी किम्या अन्य कोई औषध भर कर अनायाम पाय अच्छा कर देते हैं । ऐसे बहुत ब्रण देखे गये हैं कि जिन्हें डाक्टर लोग पुलटिस देकर नहीं पका सके देशी वैद्यों ने एकही प्रलेप के द्वारा उसे गला दिया है । शरीर में ऐसे बहुतसे स्थान हैं कि जहां शस्त्र प्रयोग अत्यन्त कठिन और दुखदाई है डाक्टर लोग सेवाय शस्त्र प्रयोग के पीच और रक्त कदापि नहीं गिरा सक्ते परन्तु एतद्देशीय उत्तम चिकित्सक गण औषध के द्वारा ऐसी युक्ति करते हैं कि चमड़ा फट कर आपसे आप पीच और रक्त निकल जाता है । ऐसे भी बहुत ब्रण तथा शोथ देखे गये हैं कि डाक्टरों ने बहुत दिनों तक अनेक चेष्टा की पर ये नहीं बैठे और आयुर्वेदाक्त प्रलेप द्वारा झट पट बैठ गये हैं । ब्रण शोधन और रोदन के लिये आयुः शील गुणोंपेत पण्डित गण ऐसे २ तैल और घृत निकाल गये हैं कि जिनके द्वारा भगन्दर नाड़ी ब्रण और दुष्ट ब्रण अच्छा हो जाता है । अपची गण्डनाल आदि रोगों के अच्छा करने में आज तक आयुर्वेदाक्त चिकित्सकों की बराबरी कोई नहीं कर सका ॥

घात रोग, कुष्ठ रोग, जीर्णज्वर प्रभृति रोगों पर आयुर्वेदाक्त केवल तैल जैसा उल्कण है वैसे उष्ण औषध दूसरे किसी चिकित्सक के मत में नहीं पाया जाता रक्तातिसार आदि रोगों में हमारे देश की औषधियां येल सुगन्ध वाला कुरैया नागरमोषा आदि जैसी गुण कारिणी हैं विदेशी दवाइयों में ऐसी कोई नहीं है यह घात बहुत ठीक और मेटेरियामेडिका एवं कारना कोपिया आदि किताबों से स्पष्ट है कि इस देश में आय कर डाक्टर लोग भी एतद्देशीय औषधियों का अनुकरण पूर्यक फोस में लाने लगे तथापि हमारे शास्त्रोक्त कुटजायलेह, कुटज पुटपाक की चमत्कारी को नहीं पाते । ग्रहणी उदर आदिक रोगों में प्रत्यक्ष देखा जाता है कि देशी वैद्य लोग परपटी दुग्ध बटी, मानमंड प्रभृतिके द्वारा जितने रोगी आरोग्य कर सक्ते हैं, उतना डाक्टरों से होना असम्भव है ॥

इसपत्रका मुख्यप्रयोजन क्याहै ॥

व्याध्युपश्रुष्टानां व्याधिपरिमोक्षः स्वस्थस्य रक्षणञ्च ॥

आध्यात्मिक (ज्वरादि रोगों से क्लेश) आधि भौतिक (सर्पादि दुष्ट जन्तुओं से क्लेश) आधि दैविक (मन इन्द्रियादिकों से क्लेश) रोग युक्त पुरुषों को रोग से परिमोक्ष करना तथा आरोग्य जन की रक्षा । इस मास्ते हम सब मनुष्यों के उपकार के लिये लघु ग्रहत्सिद्धान्त ग्रन्थों की सम्पत्ति से एवं श्रेष्ठ प्राचीन वैद्यों के निश्चित किये हुए अभिप्रायों से, अनुमान से, प्रत्यक्ष से, वर्तमान पृथ्वी जल वायु के गुणानुसार देह पालन, आयुस्संरक्षण धात्री शिक्षा, बालरक्षा, स्त्री पुरुष व्यवहार, साद्याऽऽखाद्य आचार व्यव-
हारादि अनेक शरीरोप योगी पदार्थों का वर्णन आरोग्य दर्पण पत्र द्वारा प्रकाश करना आरंभ किया है आशा है, कि इस पत्र के अनुसार चलने से बीसे की आगे के लोग पुरुषार्थी पराक्रमी और विद्वान् होते ये सब भी होने लगे । आज हम बड़े आनन्द के साथ मनुष्यों के उन सङ्गल कारों का यों प्रकाश करते हैं जो कि सब से प्रथम मनुष्यों को फलदायक हैं ॥

शौच ॥

सा दे प्रकार है एक मास्य दूसरा आभ्यन्तर मृत्तिका और जलसे हस्त पादादि धोना साक्ष्यशौच है और काम क्रोध लोभ मोहादिक से रहित होना आभ्यन्तर शौच है । अतएव मनुष्यको शरीर रक्षार्थ यह दोनों शौच करना अवश्य है । सबको उचित है कि सूर्योदय के पूर्वही उठ ईश्वर की प्रार्थना कर अपने कर्तव्यकार्य को विचार कर तब शौच अर्थात् दिशा को जाये परन्तु गलत्यागे उठ समी मग्न नहीं किन्तु दग मिट ठहर के तब जाय निश्चिन्ने दक्ष गुणवत्ता जाये । दक्ष छानेके लिये किमी प्रकार की आदत न

डालनी चाहिये जैसा कि लोग दस्त जानेके पड़िले तमाकू खाते हैं या पीते हैं
 या दस्ताचरपीत्र खा लेते हैं इन सबोंके अभ्यास से स्वयं मलप्रवाह की जा
 सकति है यह जाती रहती है । यह भी याद रखनेके योग्य है कि दस्त जाने
 के लिये दिशा किरते समय बहुत ताकत न दे क्योंकि धातु गर्म निर्बल हो
 सभी वक्त पेशाब के रास्ते से ढरक आता है । इससे दस्त में और भी कष्ट
 जियत आ जाती है । कारण यह है कि जितना ही धातु दीप्त होगी
 उतना ही अग्नि मन्द और दस्त में कष्टजियत आवेगी । जब देखे की पेट
 बहुत भारी है और कई रोज से दस्त सुलासा नहीं हुये तब सोते समय
 कोई ऐसा मुलायम रेषन द्रव्य खा ले कि जिससे सबेरे सुलासा दस्त आ
 जाय इसी हेतु बहुत से लोग सोते समय दूध पीते हैं लेकिन न चाहिये ।
 क्योंकि जितनी धातुत्पादक द्रव्यादिक हैं उनको खा पीके न सोना चा-
 हिये, हेतु यह है कि पचता नहीं; जब न पचा तो मल अधिक पां पतला
 अवश्य ही होगा, इससे अग्न्यादि आशय तथा बीर्य निर्बल हो जाता है ।
 मुलायम रेषन यह है, उष्ण प्रकृत वाले को जैसे कि शरपत इमिली गुल-
 फंद गुलाब गुलफंद सेवती गुलफंद अगिलतास मुरता हड़ अमृत हरीतकी
 इत्यादि । शीत प्रकृत वाले को जैसे कि लवण पंचक यवक्षारादि चूर्ण पं-
 चसकार चूर्ण कोष्ठबहुरि चूर्णादि जिनका मुखआ आगे लिखा है, इन द-
 वाइयों को सोते समय खा लेने से सबेरे सुलासा दस्त आ जाता है ।
 प्रायः हिन्दूस्तानी लोग जो दिशा जाने के समय शिर में झंगोला बांध
 लेते हैं और दिशा के समय घेराते नहीं ये दोनों कर्म उत्तम हैं । इनको
 अवश्य करना चाहिये क्योंकि शिर बांधने से मलाशय में गर्मी पहुच कर
 दस्त नाक आता है और सूक रहिने के समय से मल अपान वायु प्रेरित
 निराश्रय त्रिबली मार्ग हो निकलता है त्रिबली मल मार्ग को कहिते हैं
 जिसमें शंस की तरह तीन बल है तीनों का नाम यह है । प्रमाहिनी
 सर्जनी चाहिका इन तीनों शिरा की प्रकृत और गुण जाने कहेंगे यही
 तीनों में से एक ऐसी नाड़ी है कि जिसमें बुद्धि स्थान से संबंध है तब तक
 जल और भुक्तिका से सफाई न कर ले तब तक वह चञ्चल रहती है ले-
 किन पानी के तरायट से स्थिर हो जाती है इससे जब तक हाथ पैर मुंह

न धो डाले तब तक न तो शिर का कपड़ा खोले और न धोले इस का और २ अभिप्राय योगशास्त्र से मालूम हो सक्ता है वह भी आगे कहेंगे ॥

यदि यह कोई शंका करे कि और देश वाले क्यों नहीं शिरमें कपड़ा बांधते और मूक रहिते क्या उनके यह स्नायु नहीं है, परंच यावत् कर्म मनुष्यों के शरीर रक्षक हैं वे सब देश प्रभाव से हैं जैसे कि इङ्गलैण्डवाले प्रायः दिशा फिर के आवयदस्त नहीं लेते कागद से गुदा पोंछ डालते हैं इसका मुख्य कारण हिम प्रधान देश है । क्योंकि अति आढ़ा के कारण पानी छुआही नहीं जाता ॥

दन्त धावन ॥

शीघ्रानन्तर दन्त शुद्ध हेतु ३२ अंगुल की लम्बी और कनिष्ठिका प्रमाण मोटी जिसके बीच में गाँठ न हो ऐसी दातून को करे परंच जहाँ तक हो सके खैर महुआ करंज नीम मखन और मौसली इन्हों की दतून हो यदि शीठ पीपर गिर्ष सेंधा निमक इन सबों के चूर्ण में शहत या तेल मिला दातों में मल कर बाद दातून करे तो दाँतो के बीच में जो मांस बढ़ आता है मुँह की दुर्गन्धि दाँतों से रून का आ जाना और यादी पन यह कभी न हो, दाँत बिलल और अन्न में रुचि हमेशा बनी रहे । अगर किसी समय दातून न मिले तो काष्ठ कोयला और सेंधा निमक बूक कर दाँत मल डाले और जीभ छीलने के वास्ते सेना या चांदी आदि धातु की सुन्दर मुलायम चिकनी धन्याकार दश अंगुल की बनी हो इसके अभाय में दातून फाड़ कर जीभ छील ले यदि उपरीक्त रीति से दन्तधावन जिह्वा शुद्ध कर कभी २ या जब आवश्यक समझें एक छँटाक काली तिल के तेल से कुल्ली कर डाला करें तो मुख का फीकापन दुर्गंध मसफुर का मूजना और दाँत का हिलना बन्द हो और दाँत की जड़ मूय मजबूत हो परन्तु ये लोग जिनका गला तालु, ओष्ठ और जिह्वा का रोग हो एवं मुख सड़ा । तथा खांसी श्वास हिचकी हो या जो म-पेछाता हो ब्यादा नसा खाये हो शिर और कर्ण में दर्द हो, तो जब तक ए बेमारियां न आराम हो जाय तब तक दातून न करे बाद दन्त-

घायन के शीतल जल से सूख नेत्र मुख को धो डाले । दन्त घायन के अलावा यदि मनुष्य दिन में तीन चार भरतवे हमेशा ठंडे जल से नेत्र मुख धोया करे तो उसको नेत्र और शिर की बीमारी कभी न हो ॥

दन्तमञ्जन ॥

सही सुपारीका कोइला १ छंटाक भूजाहुआ तूतिया ६ मासा दोनोंको बूककर दांत मांजने से दांत सूख साफ होजाता है तथा दांतों से रक्त का आना बन्द हो जाता है ॥

प्रतिसारण ॥

फूट, दासहल्दी, धयके फूल, पाड़ी, कुटकी, हल्दी, तेजबल, मोया, लोघ इन सबों को बराबर भाग ले चूर्ण कर जीभ और दांत के जड़ में बारंवार मल कर छार गिराने से दन्त पीड़ा रक्त आना समूदा मूजन और जलन जल्द जाता रहता है ॥

प्रातःकालकी हवाखाना ॥

दन्तघायन के बाद मनुष्य अच्छा कपड़ा पहिन पैर में जूता हाथ में छड़ी ले सूर्योदय के पूर्वही किसी अच्छे मगीचे या स्वच्छ मैदानमें कि जहां मल मूत्र आदि बुरे पदार्थों की दुर्गन्धि न हो । वायु सेवनार्थ वहां जाय न बहुत जल्दी चले न बहुत आहिस्ते समगति से वहां टहिले । परन्तु बहुत तेज हवा चलता हो या आन्धी गरदा हो तो न जाये । क्योंकि तेज हवा अर्थात् आन्धी गुवाड़े में रहिने से शरीर रुक्त तथा चेहरे की रंगत बदल जाती है और बात श्लेष्म बाले के सन्धियों में दर्द होने लगता है मनुष्य को वहां तक चलना फिरना उचित है कि जब तक पैर न चके क्यों कि बहुत ज्यादा चलने से शरीर में हारारत और कमर में कमजोरी आती है एवं बीर्य भी कुछ निर्वल हो जाता है । जो लोग न घूमते हैं न किसी प्रकार का परिश्रम करते हैं उनका शरीर कफ मेद के बड़ जाने से मोटा और शिथिल हो जाता है । जैसे की महत्त और प्रायः तीर्थों के पंडे

“सुखवातप्रसेवेत ग्रीष्मेशरदिमानवः” ग्रीष्म शरत अर्थात् वैशाख ज्येष्ठ फा-
र्तिक और अगहन इन महीनों में सुखार्थी लोग अवश्य वायु का सेवन
करें ॥

जूतापहिरनेकागुण ॥

मनुष्य को ऐसा जूता पहिरना चाहिये कि जिसकी एही कुछ ऊंची
हो न बहुत ढीला हो न तङ्ग हो । जूते के भीतर किसी तरह का ऐसा
रुलायम चमड़ा लगा हो कि जिससे तलुवे के सूत में उष्णता न पहुँचे ।

जूता पहिरने से पैर में ताकत रहती है, आदमी सुख समेत चल
सक्ता है, पैर का चमड़ा मुलायम रहित है बिनाई आदि किसी तरहकी
बीमारी नहीं होती न काटा और बिच्छू आदि जीवों से भय रहित है
इसलिये जूता चारों आश्रमियों को पहिरना चाहिये और जो प्रायः ब्र-
ह्मचारी आदि जूता न पहिर कर खड़ाऊँ पर चढ़ दिन रात चला करते
हैं उनका मस्तिष्क रुस्त होजाता है और बुद्धि विक्षिप्तों के साथ मिल
जाती है । नग पैर चलने से नेत्र और शिर में गर्मी पहुँच कर शिरोग्रह
आदि अनेक बीमारी होती है ॥

छड़ीलेनेका गुण ॥

मनुष्य को यह भी उचित है कि बिना छड़ी लिये हुये कभी बाहर
न निकले क्योंकि हाथ में छड़ी रहने से दातसे काटने वाले कुशा आदि
और सींग से मारनेवाले गाय भैंस आदि इसी तरह और २ घातक जीवों
से बचने का सम्भव रहित है । छड़ी हाथ में लेने से कमर और हाथकी
कलाई में ताकत रहित है पैर जमीन पर ठीक तौर से पड़ता है और
छड़ी हाथ में रहने से एतना साहस रहित है कि मानों कोई रक्त
अपने साथ है ॥

तेललगाना ॥

मनुष्य को आधघण्टा या एक घण्टा इयाँ साग बहुत है बाद इयाँ

खाने के मृयोदय से लेकर सात आठ बजे भर में तेल लगाना अति गुण कर होता है ॥

शिर में तेल लगाना ।

शिरमें तेल लगाने से शिर सम्बन्धी यावत् रोग हैं सब नष्ट हो जाते हैं । बाल फाले और चिक्कने रहित हैं । आंख कान नाक और मुख घनमें किसी तरह की बीमारियां नहीं होती बाल कम पंफता है और शिर ठंडा रहित है । जो लोग नित्य शिर में तेल लगा शिर से स्नान करते हैं उन की बुद्धि तीव्र होती है और निद्रा सुख पूर्वक आजाया करती है । इस हेतु शिर में तेल रोज लगाना चाहिये ॥

सब प्रकृति वालों के लिये फाली तिल का तेल अति उत्तम है । शिर में गरी का तेल भी फायदा करता है । लेकिन कितने लोग यह जानते हैं कि शिर में गरी का तेल लगाने से नुकसान होता है सो यह भूल है । हां चमेली हिना आदिक तेलों के लगाने से बेशक बाल जल्द पक जाते हैं । कारण यह है कि यह तेल सफेद तिल के साथ घनता है और सफेद तिल बाल को जल्द पकाता और नजला पैदा करता है । एक कारण गरी के तेल न लगाने का और भी है कि गरी के तेल से शिर गन्धाने लगता है । यदि गरी का तेल इस रीति से बना कर शिर में लगावे तो शिर कभी न गन्धावे ॥

गरी का तेल सेर भर बालउड़, सुगन्धवाला, कपूर कचरी, छरीला, आगरमोथा, सुगन्धनन्तरी, सुगन्धकोकिला, पांढरी, महाभारी, चम्पायती, सजेदचन्दन, छोटोलाइची, ए सब एक २ तोला नर कचूर, तेजवल, हाहू, बेर, तालीम, कपूर, लौङ्ग, महीलायची, ए सब चार चार भासा ले सब को अथकचरा कर एक बड़े बोतल में तेल और सब दवा डाल काग से मुछ बन्द कर दश रोज तक दिन को घाग में और रात को ओस में रख दिया करे । बाद दश रोज के यह तेल बिलायटिङ्ग पेपर या सूय अझीन कपड़े से छान दूसरे बोतल में रख दे और रोज शिर में लगाया करे ॥

अमलंक्यादि तैल ।



कच्चे आंवले का रस देा सेर, सेंधा निमक ३ छंटाक गुलेटी पाय भर मुलेटी को अंधकचरा कर सेर भर पानी में एक रात दिन भिगोय रखे दूमेरे रोज गल कर पानी छान ले । बाद सेर भर काले तिल का तेल किसी कलई दार बरतन में ढाल चुल्हे पर चढ़ा उसी में आंवले का रस सेंधा निमक और मुलेटी का पानी भी छोड़ सेंदाग्रि में पचा ले जब देखे की पानी बिल्कुल जल गया तब तेल उतार ले परंच एतना ध्यान अवश्य रखे कि तेल न जलने पाये इस तेल को छान कर रोज शिर में लगाया करै तो उसको शिर सम्बन्धी बिकारोत्पन्न कभी न हो शिर ठंडा बाल काले और चिकना हमेशा बना रहे इसी तेल को अथवा काले तिल के तेल को यदि बाल्यावस्था से दिन प्रतिदिन शिर में लगाया प्रारंभ करै तो जन्म भर तक उसका बाल कदापि न पके । जो हम लोगों की अपेक्षा बंगालियों का बाल अति काल में पकता है सो केवल तेलही का गुण है । यद्यपि और २ कारणों से भी अकाल पलित (नवीन अवस्था में बाल का खेत होना) होजाता है, यथा—

क्रोधशोकश्रमकृतः शरीरोष्माशिरीगतः । पित्तचकेशान
पचितं पलितं तेन जायते ॥ सुश्रुत ॥

(क्रोध) धातु की क्षीणतासे उष्ण प्रकृत हो हर समय अन्तस में गुस्सा का रहिना (शोक) धन पुत्र कलत्रादिकों के नष्ट से अथवा किसी के विरह की चिन्ता में डूबा रहिना (श्रम) झुका पिपासा लगी है पेट गर्मे और चित्त घेवड़ा रहा है परन्तु काम से खुट्टी नहीं मिलती, इत्यादि कारणों से तमाम शरीर की गर्मी पेट में पित्त द्वारा उष्ण भाव हो मस्तिष्क जिसको अंगरेजी में (ब्रेन) कहते हैं उसमें जाके लगने से बाल भी पकता है तथा वही जल नीचे गिरने से नेत्र, कर्ण, दन्त और नाशिका में विकार पहुंचता है, इसी को हिंस्रमत् बाले निजला कहते हैं

तथापि शिर की रुसता से बाल ग्रीष्म पकने का सम्भव रहता है परन्तु उपरोक्त तैल या और बहुत से तैल हैं कि जिनके शिरोवस्ति से अकाश पलित और नज़ला नहीं होता ॥

मनुष्य को तैल आदि द्वारा शिर की रक्षा करना अवश्य कर्तव्य है क्योंकि समग्र शरीर का मूल मस्तिष्क इसी शिर में है, जिसकी ताकत से मनुष्य के चल बुद्धि, विद्या, पराक्रम पुरुषार्थ और आयु की दृढ़ि होती है, इसी की ताकत से स्वामी दयानन्दसरस्वती और के. जयसेन आदिकों ने बड़ी रय्यवता दे हर एक देशों में अपनी र सभाएं जमा गये । इसी मस्तिष्क की पुष्टता से इस समय कारनल अलकट हजारों मस्तिष्क के निर्धल भकुआ हिन्दुओं को चेला मूढ़ रहा है । इस्से इस लेख पर ध्यान दे अवश्य शिर की रक्षा करनी चाहिये ॥

कान में तैल छोड़ना ।

मनुष्य को दूसरे तीसरे दिन कानमें भी तैल जरूर डालना चाहिये क्योंकि "इनुमन्याशिरः कर्णशूलघ्नम् कर्णपूरणम्" सुश्रुत । कर्ण पूरण अर्थात् कान में तैलादिक के डालने से कान का परदा तर रहता है जिस्से ठोड़ी मयूरगलसन्निभ गले के पीछे की शिरा शिर और कान इनमें दद कभी नहीं होता ॥

शरीर में तैल लगाना ।

इसके बराबर शरीर में ताकत लाने वाला दूसरा उपाय नहीं है । "जलसिक्तस्य मर्दुन्ते यथा, मूलेऽङ्कुरास्तरो तथा घातुविशदुर्हिस्नेहसिक्तस्य जायते" । जैसे सूख के जड़ में जल मीचने से सूख का अंकुर बढ़ता है वैसेही शरीर में तैल के लगाने से घातु बढ़ता है । यही कारण है कि जो आयुर्वेद वेत्ता वैद्यगण, घात रोग, कुष्ठरोग, जीर्णज्वर, मधुत रोगों पर विशेष कर तैलही का अधिक गुण दिखाया है यह घात तो मसिद्ध है कि मर्दन करने से तैल सब रोग कूपों के राह से शरीर में घुसकर एक

ही समय सद्य नशों में तथा रक्तादि में कार्य करता है । इसलिये तैल मर्दन करना अत्यावश्य है ॥

शरीरमें तैल लगाने से स्वायु शिरा घमनी और त्वचा कोमल रहित है खाज दाद सेंहुआ फोड़ा फुन्सी आदि त्वचा की बीमारियां स्वप्न में भी नहीं होती हैं शरीर खूबसूरत बली और फुर्तीला बना रहता है ॥

चन्दानादितैल ।

सफेदचन्दन, मोषा, खस, सुगन्धवाला, मुलेठी, कमलगुहा की गरी, छोटोलायची, नागकेशर, मँजीठ, हरदी, दारुहरदी, शिलाजीत, जटामासी, तेजपात, कड्कोल, सरियम, कुटकी, अगर, लींग, केशर, दालचिनी, ए सद्य औषध दे दे तोला छे फूट कर ४ सेर पानी में एक रात्रि दिन भिगोय रखे दूसरे रोज उन्हीं सद्य औषधियों को शिल पर पीस उसी पानी में छान छे तत्पश्चात् डेढ़ सेर काले तिल का तैल किसी कलईदार बरतन में डाल चूल्हे पर बढ़ाय मन्दाग्नि से उक्त जल और पांचसेर दही का तोड़ पचा छे । जब देखे की सद्य पानी जल गया तद्य उतार ठंडा कर छान बोतल में भर कर रख दे । इस तैल को शरीर में मर्दन करने से जीर्णज्वर, उन्माद गर्मी पित्तधिकार, मुख तथा शरीर का पीलापन, बातों का भूल जाना, धातु की क्षीणता और सुस्ती ए सद्य मष्ट हो जाते हैं । यदि पांच चार महीना बराबर इस तैल को लगाये तो मर्दन ऐसा सुख और खूबसूरत हो जाता है कि जिसका कुछ बयान नहीं । यह तैल सद्य फोड़े नहीं बना सकते इसलिये काले तिल का तैल सर्व साधारण को लगाना उत्तम है ॥

निषेध ।

तरुणज्वर्यजीर्णच नाभ्यक्तव्यौकथचन । तथा विरक्तोवा-
तश्च निरुद्धो यश्च मानवः ॥

नपाज्वर, अजीर्ण, अतीसार और बगन वालों, तथा गुदा मार्ग की पिचकारी ले चुका हो एतने मनुष्य तैउ न लगावै ॥

स्नान करना ।

हर एक चिकित्सा ग्रन्थों के देखने से ज्ञात होता है कि जैसा इस आर्य्योवर्त्त में स्नान करने का प्रचार है वैसा अन्य द्वीपों में नहीं । इस का मुख्य कारण यही है कि एक तो और २ द्वीपों की अपेक्षा यह द्वीप सदा ही गर्म है दूसरे ग्रीष्म ऋतु में अत्यन्त उष्ण हो जाता है । तीसरे इस देश में एक २ नदी ऐसी हैं, कि जिन में स्नान या उन के केवल जल पीनेसेही कुष्ठतक आराम हो जाता है । चौथे हमारे भूतपूर्व भारतवर्षीय अधिकांश आत्मगण योगाभ्यासी होते थे इस लिये, उन को बाह्य कर्म (शौचक्रिया) अधिक करना पड़ता था । स्नान करने से न तो वैकुण्ठ मिलता है और न मुक्ति होती है पर, यह स्वास्थ्य का एक अङ्ग है "अद्भिर्गोद्राणि शुध्यन्ति" मनु० इत्यादि बहुतसे वचन हैं कि जलसे केवल १२ प्रकार के मल दूर होते हैं । जैसे कि—

वसाशुक्रमसृङ्गाज्जा मूत्रविट्प्राणकर्णविट । श्लेष्माशुद्रूपि-
कास्वेदी द्वादशैतेनृणांमलाः ॥ मनु०

वसा, बीर्य्य रक्त, गज्जा मूत्र नाक कान इन सबों का मैल और कफ आंशू कीचर पसीना यही १२ मल मनुष्यों के शरीर में होते हैं येही साफ करने के लिये स्नान है । आज कल हमारे श्राव गणों के हृदय से उक्त आशय तो जाता रहा । गङ्गाजी मुक्ति के देने वाली हैं यही निश्चय कर जून फजून नहाय रोग यक्षित हो कितने कष्ट पट शरीरही से मुक्ति हो जाते हैं ॥

स्नान का गुण ।

तन्द्रापपोषणं न तुष्टिदं पुंस्त्ववर्द्धनम् । रक्तप्रसादनंचापि
स्नानमग्नेशदीपनम् ॥ सुश्रुत चिकित्सा स्नान अ० २४

स्नान करने से हर समयका औंधाना और पापोंपशमन अर्थात् मन की शान्ति जाती रहती है चित्त की प्रसन्नता और पुंस्त्व की वृद्धि होती है अग्नि दीपन एवं रक्त का सञ्चालन ठीक रहता है । जब यह सब बातें स्नान करने से प्राप्त होती हैं तो आत्मा भी सब व्याधियों से शान्त हो सकता है इसी लिये आचार्यों ने कहाँ यदि प्रसंग वस मुक्ति प्राप्ति भी कह दिया हो तो कोई असंगत नहीं है ॥

तेल लगा के स्नान करने का गुण ।

शिरामुखैरोमकूपैर्धमनी भिद्यतर्पयन । शरीरबलमाधत्ते
युक्तस्नेहो ऽवगाहनं ॥ सुश्रुत चिकित्सा स्थान अ० २४

तेल लगा के स्नान करने से शिरा मुण्ड (सक्तीली भस्मों का मुण्ड) रोम कूप (रोमों के गह्वे) धमनी (सबसे बड़ी नसें) ये सब पुष्ट होते हैं और शरीर में ताकत आती है । सब मनुष्यों को उचित है कि गर्म ऋतु में अधिक गर्म जल से और जाड़े में अधिक ठंडे जलसे कदापि स्नान न करे "अतिशीताभ्युशीतेष श्लेष्मामाकृतकोपनम् । अत्युष्णमुष्णकालेष पित्तशोणितवर्द्धनम्" सुश्रुत चिकित्सा अ० २४ । शीत काल में अति शीताभ्यु (बासी पानी) में स्नान करने से कफ वायु का कोप होता है इसी प्रकार उष्ण काल में अत्युष्ण जल (आग से या घाम से गर्म किया हुआ जल) के स्नान करने से पित्त रक्त बढ़ता है । यह भी याद रखने के योग्य है कि ऐसा ही जाड़ा से जाड़ा क्यों न पड़ता हो गर्म जल शिर पर कभी न डाले "उष्णेनशिरसःस्नानमहितंचक्षुषःसदा" सु० चि० अ० २४ गर्म जल से शिर से स्नान करना हमेशा नेत्र के लिये अहित है । यदि ऐसा ही किसी को कफ वात की बीमारी घेरे हो तो अलबत व्याधि का बलाघल देख गर्म जल शिर पर दे ॥

निषेध ।

अतीसार, ज्वर कर्णमूल, आतरोग, आघमाग (घेटफूलाहो) अजीर्ण

इन रोगों में और भोजन मैथुन और कसरत के उपरान्त तत्क्षण स्नान न करे । शरीर पसीना युक्त हो । या अति शीतल वायु बहती हो या चदन किसी कारण से गर्म हो तो भी स्नान न करे । जिस पानी में कीड़े पड़ गये हों चास फूस के पड़ने से सड़ गया हो और जिस तालाब या नदी में पाखाने और नावदानों की नालियां लगी हों और पानी उसका चारों तरफ से रुका हो तो उस जल से स्नान न करना चाहिये इलायुल गुरया और तिव्र घूसफो आदि यूनानी किताबों में लिखा है कि चाहे गर्मजल से हो या सर्द जल से हो रोज २ नहाना पट्टों को क्षीण करता है । इसी कारण से बहुत से हिन्दूओं को जोकि सदा नहाते हैं चाहे युवावस्था में स्वभाव की गर्मी से हानि कम मालूम होती हो परन्तु उमर कुछ अधिक बढ़ जाती है तो रगों और गुरदे में निर्वलता देख पड़ती है ॥

(उत्तर) यह लेख नहा भ्रम दायक और हिन्दुओं के तन्दुरुस्ती का मित्र कारक है क्योंकि यूनानी वैद्यक शास्त्र अरब पारस आदि ठंडे मुसकों के प्रकृत के अनुसार बने हैं जहां आभ्यन्तरिक गर्मी और वायु शीत का संघर्ष रहता है यहां अवश्य प्रति दिन का स्नान करना औगुण करेगा । भारतवर्ष में वायु गर्मी हमेशा बनी रहती है यदि लोग स्नान करने का नियम छोड़ दें तो थोड़ेही काल में उनको कोई न कोई रक्त सम्बन्धी बीमारी अवश्य खड़ी हो जाय । हां, बहुत ज्यादा तर स्नान करना बीसे की बाजे २ अधिकावारी हिन्दू गण जी दफे दिशा जाते हैं ते दफे नहाते हैं ऐसा न चाहिये प्रतिदिन नियमित समय पर एक सरतवे स्नान करना उत्तम है । अन्यथा स्नान करने से नालियां संकुचित हो उत्तेजन क्रिया से रहित हो जाती हैं ॥

स्नानकरनेका समय ॥

निरोग पुरुषों के लिये सूर्योदय ने लेकर सात बजे दिन तक स्नान करना लाभदायक है; बिमार और कमजोर मनुष्य को आठ बजे से ग्या-

रह यजे तक में स्नान करलेना उत्तम है । आज कल बहुत से वैद्य लोग दहत ग्रन्थों के अनभिज्ञता से कतिपय ऐसे रोगों में स्नान करना बन्द करा देते हैं कि जिन रोगों में स्नान पथ्य है । यही कारण है कि बहुत से रोगी आरोग्य न होकर और भी उसी में पच जाते हैं । जैसे, रक्तपित्त, यक्ष्मा (तपेदिक) हिचकी, वृष्णा, भूछा, सदात्यय (जो अधिक नशा खाने से हो) उन्माद अपस्मार (मृगी) अस्मरी (पथरी) यह सब रोग पिना स्नान के कदापि निर्मूल नहों हो सक्ते पुराना ज्वर, दाहरोग, उष्णमान (जिसमें बातों का भूलना आदि अनेक उपद्रव होते हैं) सूत्र-कृच्छ्र सूत्राघात (सुजाक) नेत्ररोग, विषरोग, चाहिये कि उक्त रोगात पुरुष और गर्भिणी स्त्री तमान शरीर में तेल लगा के पूर्वोक्त समय में अवश्य स्नान करै । हाल की बात है कि सहज श्राद्धगुरु के एक व्याख की उष्ण बात की बीमारी दो वर्ष से यी हात्तरी दवाइयों में हजारों रुपये खर्च हुये पर विमारी न गई किसी एक महात्माने शिक्षा दिया कि व्याख साहब आप नित्यप्रति गङ्गाजी स्नान करिये गङ्गाही जल पीजिये और उन्हीं का ध्यान रखिये आप की विमारी जाती रहेगी । बाबा जी वैद्यक मतसे रोग और गङ्गा जलका संयोग परिज्ञात करके नहीं कहा था लोक में जैसे प्रसिद्ध हैं उस तरह से कहा था पर व्याख जी उस साधू की शिक्षा मान प्रतिदिन सबेरे उठ गङ्गा नहाने लगे और जल भी गङ्गाही का पीने लगे उनका रोग एकही दो गहीने के आभ्यन्तर में जाता रहा, अब क्यों कर इन मान सक्ते हैं कि गङ्गाजी के स्नान करने से लोगों का दुःख नहीं छूटता । यह जो स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने सत्यार्थप्रकाश के एकादश समुद्रास में आयुर्वेद द्वारा गंगा जी का मयार्थ समालोचना न कर एक बारगी लिखमारा जोकि जल स्थल भय हैं वे तीर्थ कभी नहीं होसक्ते क्योंकि "जनायैस्तरन्ति तानितीर्थानि" मनुष्य जिन करके दुःखों से तरे उन का नाम तीर्थ है अब पाठक गण विचार करें कि ऐसे २ महा यज्ञ विमारियों से बढ़ कर और कौन सा दुःख है यह मिलकुल अनभिज्ञता है कि जल का केवल एक हुमानाही गुण जान लिया और यज्ञ दया धैर्य । जल प्रकरण में गङ्गा जल का गुण लिखेंगे ८

कसरत करना ।

कसरत भी आरोग्यता का एक बड़ा अङ्ग है । हमारे इस देश में कसरत करने की चाल भले आदमियों में अब नहीं रह गई होगी समझते हैं क्या हम को पहलवानी करना है और गद्काफरी या ना आदिक कसरत को तो निश्चयी बदमासी पेसा जान कर उस का नाम तक नहीं लेते, फाल की भी क्या विचित्र गति है, एक समय यह था कि यही हमारे भारत आरुगण उक्त विद्या में ऐसे २ निपुण होते रहे और उनी के प्रभाव से आरोग्यता; साहस, बल, धीर्य और सदा बुद्धि शील बने रहते थे कि जिन की अत्युन्नत विमल कीर्ति रूपी मयूर अब तक अधिकांश विक्षित पुरुषों के हृदय में नाच रहा है यह बात विचार करने के योग्य है कि जिस समय से आयुर्वेदानुगामी धनुर्वेद की अवयवति आरम्भ हुआ तभी से आर्य सन्तान या हिन्दुओं की सौभाग्य प्रभा अस्तमित और भारत लक्ष्मी का अन्तरध्यान हो चला और तभी से हिन्दूगण निर्बलता हेतु मुसलमानों से लड़ते हुये भी पराजित होने लगे और दिन २. निर्दुर्न निरस्तेज और शक्ति रहित होते आये । तभी से आज तक हिन्दुओं की प्राचीन रीति नीति उन्नति आदि सब बातों में ऐसी हेठी पड़ी चली आती है कि जिसका उदाहरण देखलाना अपने यह के खिद्र का प्रकाश करना है । यही धनुर्वेद प्रणाली की आज फल ऐसी अनादृत और लुप्त दशा है कि लोग गवर्नमेंट से प्रार्थना करते हैं कि हम को वालंटियर बनाइये हम आप की सन्ती रूस मनहूस से लड़ कर पूस कर देंगे । हम कहते हैं साफ कर देयें जब तुम्हारी चार कदम चलने से सांस फूलने लगती है, किसी के शरीर से रक्त बहते देख गस आ जाता है, राम लीला मुहरंग संग पहने से दश रोज बाहर नहीं निकलसक्ते दश फोठरी के भीतर रह कर भी शंख नहीं बजा सक्ते, बलिप्रदान में अजा तक का द्वाप से नहीं मार सक्ते, किसी तरे का गुल गपाड़ा सुनतेही ले लोटा पाखाने को दौड़ते है तो क्या तुम वालंटियर बनोगे और रूस को फते करोगे अङ्गरेजों में साठ वर्ष के बूढ़े को भी किसी न किसी प्रकार का

कसरत करते अवश्य ही देखते होंगे, यह कसरतही का प्रताप है जो अद्यावधि भारत वर्ष में नित नये गोरे मुह वाले आकर घमंगजरी मचा रहे हैं और हात्तरी आदि कलईदार घमकीली चीजों को देखा २ कर हिन्दुस्तानियों के तन मन धन को खींच अपनी मुट्ठी में कर लिपा है । अब यह समय ऐसा नहीं है कि आप लोग उनकी मुट्ठी से छुटकारा पाने का यत्न न करें आप लोग सुश्रुतादि ग्रन्थों की आज्ञाचना कीजिये और देखिये कि कसरत के क्या २ गुण उन लोगों ने वर्णन किया है ॥

कसरत का गुण ।

शरीरोपचयःकान्तिर्मांसाणां सुभिक्षता, दीप्ताग्नित्वमना
लस्यं स्थिरत्वं लाघवं मृजा । श्रमक्लमपिपासीप्लाशीतादीनां
सहिष्णुता, आरोग्यं चापि परमं व्यायामादुपजायते ॥ सु०

कसरत करने से तमान शरीर के त्वचा कस जाती हैं वदन खूब सूरत और सुहल हो जाता है, अग्नि दीप्त अनालस्य (सुस्ती न मालुम हो) स्थिरत्वं अर्थात् शरीर बहु काल स्याई रहे हलकी और नुलायन भी बनी रहती है । कसरती मनुष्य मेहनत, पिपास, गरमी सरदी इन सब को सहि सक्ता है और उसको परम आरोग्यता प्राप्त होती है ॥

कैसाहू मोटा से मोटा क्यों न हो कसरत करने से अवश्य उसकी ये ढङ्गी मुटाई कम हो जाती है अतएव कैसाहू दुबला मनुष्य होगा कुछ न कुछ जरूर मोटा हो जाता है । निश्चय है कि बिना कसरत किये शरीर में तप्यारी और ताकत कभी नहीं आसक्ती चाहै यह दिवा रात्रि मोतीही क्यों न खाया करें । अङ्गरेज लोग हिन्दुस्तानियों की अपेक्षा रिष्ठ पुष्ठ बली पराक्रमी विद्वान और एक न एक नये २ कल विद्या के प्रकाश करने वाले दिखलाई देते हैं यह सब कसरत ही का प्रताप है । यदि कोई यह कहै कि हजारों हिन्दुस्तानी लोग ऐसे २ कसरत करने वाले पड़े हैं कि एक अकेला दश अंगरेज को मार के गिरा सक्ता है ले-

किन महा मूर्ख लंठराज क्यों बने रहते हैं ? यह क्यों नहीं विद्वान् और शिष्ट विद्या के प्रकाशक होते हैं, इसका उत्तर यही है कि उनका कसरत मत विद्या से सम्यग् नहीं रहता और पथ्य प्रकरण से ठीक भी नहीं मिलता कारण यह है कि विद्वान् लोग कसरत को बदमाशी पेसा जान त्याग बैठे हैं और मूर्ख लोग इसे जोषिका समझ राज दरबारों में या जहाँ तहाँ खेल कूद के पेट भर लेते हैं । बुद्धि की परिचालना और विद्या की उत्पत्ति करने वाला गुण प्रायः भारत धर्म से जाता रहा कसरत करने वाले को बल रणुगिरि दुर्गम और कठोर स्थल में एवं सत्रुओं से भय कम रहता है । एकाएकी किसी प्रकार की विमारी या घृहापन बहुत जल्द उसे नहीं घेर सकता और अजीर्ण की विमारी तो उसे होती ही नहीं ॥

व्यायामकुर्वतानित्यं विरुद्धमपि भोजनम् । विदग्धमविदग्धं निर्दीपं परिपच्यते ॥

प्रतिदिन का कसरती यदि विरुद्ध भोजन (रोगोत्पन्न कारक) खा लेगा तो निस्सन्देह विदग्ध हो या अविदग्ध हो पर उसे निर्दीप पच जायगा इसी तरे—

वयोरूपगुणैर्हीनमपिकुर्यात्सुदर्शनम् ॥ सु०

अवस्था और रूप करके हीन भी पुरुष कसरत करने से अति रूप-यान् हो जाता है । अपने शरीर की आरोग्यता (हेतु) चाहने वाले मनुष्य बारहो महीना थोड़ा हण्ड मुन्दर और बैठक की कसरत अवश्य करे । बहुत से लोग यह जानते हैं कि बैठक करने से क्षीयत्व (नपुंसक) हो जाता है यह महा भूल है, “हां” बिना लंगोट कैसे बैठक लगाने से पोता बढ़ आने का सम्भव रहता है ॥

कसरती पुरुष को घी दुग्ध आदि बलकर यस्तु हमेशा खानी चाहिये विशेष कर कसरत के उपरान्त बिना कोई ताकत बर चीज खाये प्राणी

पीना वर्जित है । बहुत से लोग कसरत के पहिलेही दूध पी लेते हैं या कसरत किये जाते हैं और दूध या भीजा चना खाते जाते हैं । यह सु-खता है । क्योंकि इसका विधान वैद्यक में कहीं नहीं है—और परित्या से नुकसान पाया गया है । यह भी याद रखने के योग्य है ॥

वयोवलशरीराणिदेशकालाशनानिच । समीच्यकुर्यात्त्या-
याममन्ययारोगमाप्नुयात् ॥ सु०

मनुष्य को उचित है कि अपनी अवस्था यल शरीर देश काल और भोजन देख कर कसरत करे अन्यथा करने से रोगी हो जाता है जैसे की अवस्था तो १० वर्ष की है पर कसरत करना ३० वर्ष वाले की बराबर, यल ५ सेर वीजा उठानेका है मनभर उठानेमें उद्यत है, शरीर तो महा मोटी पर बिना कम एका एकी मलखम आदि (जमनाष्टिक) का कसरत किया चाहते हैं । अति शीतल देश में नही लगा के बतलोटा करना, उष्णकाल में अधिक करना अयोग्य है, खाना तो छँटाक घी भी नहीं डण्ड लगाना पांच सौ इससे अवश्य लयी, लृण्णा, यमन, रक्त, पित्त, भ्रम, खांसी, स्वास और ज्वर आदिक बिनारी होने का सम्भव है ॥

निषेध ॥

रक्तपित्तकृशःशोषास्वासकासक्षतातुरः । भुक्तवान्स्त्रीपुच-
चीर्णाभिमार्तश्चविवर्जयेत् ॥

रक्त, पित्ती, दुर्बल और जो किसी रोग से सूखा जाता हो, दमा, खांसी और घाव से पीड़ित या अति स्त्री प्रसङ्ग करने वाला गरमी, सु-जाक तथा घुमरी युक्त पुरुष और भोजन के ऊपर कसरत न करे ॥

कसरतकरनेकासमय ॥

उत्तम तो यह है कि सवेरे स्नान के उपरान्त यथाशक्ति कसरत कर बाद माघे में चन्दन लगा गायत्री सन्ध्या से निवृत्त हो भोजन करे । इससे

अतिरिक्त समय में भी कमरत कर सकता है पर नागा न होनी चाहिये, नियमित समय पर अवश्य कुछ न कुछ जरूरही कर ले । कमरत कर के उसी वक्त लँगोट खोल डालना, या स्नान कर लेना, या बिना कोई चीज खाये जति ठण्डा जल पी लेना नुकसान करता है । कमरत के उपरान्त आधघण्टा या पावघण्टा टहल के तब कोई काम करे । पाठकगण, यदि आप लोग इस दुर्लभ शरीरको कि जिसके द्वारा पारो पुरुषार्थ की सिद्धि है आनन्द से रखना चाहें तो अवश्य कमरत करें ॥

चन्दनलगाना ॥

यद्यपि आजकल माथे में चन्दन लगाना नव शिक्षित लोगों को पा खण्ड या एक प्रकार का चिन्ह जान पड़ता है परन्तु आयुर्वेद में इसका अधिक गुण लिखा है जो सविस्तार इसे दूसरे खण्ड में लिखेंगे ॥

पैर धोना ॥

यह जो प्रायः हिन्दू लोग बिना पैर धोये भोजन नहीं करते इसे होटल में भोजन करने वाले जेन्टलमेन लोग चाहे घुरा समझें या पसन्द न करें लेकिन यह भी एक उत्तम फल देने वाला कर्म है ॥

पादप्रक्षालनं पादमलरोगश्रमापहम् । चक्षुःप्रसादनं वृष्यं
रक्षोघ्नं प्रीतिवर्धनम् ॥

पैर के धोने से पैर का मल रोग और थकाई जाती रहती है नेत्रमें तरावट शरीर में तैयारी और मन प्रसन्न रहता है । केवल खानेही के समय पैर धोना नहीं बल्कि जब २ आवश्यकता देखे तभी पैर धो लें जैसे कि भोजन के आदि में सूत्रपुरीष के अन्त में कहीं से धूम फिर के आया हो और सोते समय पर जरूर पैर धोना चाहिये पैर धोयके सोनेसे सुख समेत नींद आ जाती है और यह दुस्स्वप्न नहीं देखता ॥

भोजन ॥

यह बात सबको अच्छी तरह से मालूम है कि हम लोगों को भूख और प्यास लगती है और तब खाने और पीने की जरूरत पड़ती है । यदि किसी मनुष्य को कुछ रोज तक कुछ भी खाना न मिले तो इसमें तक नहीं कि यह बहुत दुबला हो के भूख से मर जायगा । इससे यह बात सिद्ध हुई कि भोजनही जीवन का मूल है इसलिये विशेष कर मनुष्य को खाने पीने के नियमों पर ध्यान अवश्य रखना चाहिये क्योंकि जिन का खाना पीना एक मन्त्री हुई तादाद के मसूजिय नहीं है उसे और समस्त जाचरणों से कुछ भी फायदा नहीं हो सकता । यह बात साफ जाहिर है कि ठीक समय पर परिमित भोजन करने से यह भोजन अति गुणकारी होता है जैसा कि सुश्रुत में लिखा है ॥

अहारः प्राणनः सद्यो वल्लहृद्देहधारकः । आयुस्तेजः समुत्साह
क्षुत्वाजीऽग्निविवर्धनः ॥ चि० स्या० आ० २४ ॥

समय का भोजन सदाही प्राण को दृढ़ करता है और बल कर एवं देह धारक है आयुः तेज उत्साह स्वरूप शक्ति पराक्रम और अग्नि को बढ़ाता है । जो लोग समय कुसमय कम जादा पशुवत भोजन किया करते हैं उनके सामने हर समय काल खड़ा रहता है और वेही मनुष्य हैजा आदि बिमारियों से पीड़ित भी होते हैं ॥

हमारे हिन्दुस्तान में हर एक तिथियों में व्रत की परिपाटी ऐसी फैल गई है कि लोग देश काल पात्र न विचार कर एकादश्यादिक तिथियों में उपवास कर एक न एक रोग में ग्रस्त हो जाते हैं । जैसे देखिये ज्येष्ठ शुक्लपक्ष की एकादशी को अन्न खाना कौन कहै जल तक पीना मना है कि जिस ऋतु में एक घड़ी भर जल न मिलने से मनुष्य व्याकुल हो जाता है । तो ऐसी अवस्था में सबके लिये व्रतों की परिपाटी आयुर्वेद सम्मति नहीं है क्योंकि लिखा है कि—

भोजनेच्छाविघातास्या दङ्गमर्दाऽरुचिःभ्रमः । तन्द्रालो-
चनदीर्घल्यं धातुदाहोबलक्षयः ॥ विघातेर्नापपासायाः श्लेष्म
कण्ठास्थयोर्भवेत् । श्रवणस्यावरोधश्च रक्तशोषोद्धिद्यथा ॥

खूब भूख लगने पर भोजन के न मिलने से यदन में हड़ फूटन
होना, अरुचि, शरीर ढीली, नेत्रों में आँप, नेत्र के सामने तिलमिल ना-
लूम होना, रक्त गांसादि सप्त धातुओं में दाह और बल का नाश
होता है । तो भला बतलाइये जिस शरीर से परम पुरुषार्थ की सिद्धि है
वही निकम्मी होगा तो उपवास करनेसे कैसे तुम मुक्ति पा सकते हो गीता
में स्पष्ट लिख दिया है कि उपवास से योगकी सिद्धि नहीं होती । इसी प्रकार
प्यास से, प्यास के रोकने से कंठ और मुख का सूखना, श्रवण शक्ति अ-
र्थात् सुनने की ताकत जाती रहती है । रुधिर का सूखना और हृदय
में दर्द होने लगता है । भावप्रकाश में भी लिखा है कि—

पनीयंप्राणिनांप्राणविप्रलम्बमेव च तन्मयम् । अतीत्यन्तनिषे-
धेन न क्वचिद्धारिवारयेत् ॥

विषय तन्मय यह जल मनुष्य का प्राण है इसलिये जहाँ जल का
पीना अत्यन्त निषेध है वहाँ भी प्यास लगने पर पानी अवश्य पिये क्यों
कि "लुपितो मोह मायाति मोहात् प्राणं विमुञ्चति" प्यास को पानी न
मिलने से विहोशी आती है और विहोशी में प्राण छूटने का सम्भव है
बङ्गाल में एकादशी के दिन विधवा स्त्रियों की यही दुर्दशा होती है ए-
कादशी महात्म के इस वचन से कि "एकादश्यामन्नेपापानि वसन्ति" अ-
र्थात् जितने पाप हैं वे सब एकादशी के दिन अन्न में वसते हैं उस इस
वचन को धर्म का मूल जान उन विधवा अथवाओं को जपरदस्ती उप-
वास कराते हैं । यद्यपि यह व्रतादिक गीता आदि ग्रन्थों के देखने से नि-
रर्थक जान पड़ता है पर इमें मत मतान्तरों के झगड़े से प्रयोजन नहीं है
लेकिन जब हम देखते हैं कि व्रत करते २ गर्भवती का गर्भ गिर जाता है
पुत्रवती का पुत्र बिगार हो जाता है । सद्यो विवाहिता स्त्री लड़के और

युवा पुरुषों को निस्तेज देखते हैं तो हम क्यों कर कह सकते हैं कि एका दृश्यादिकों के व्रत से दुःख नाश हो जाता है ऐसा तो नहीं होता किन्तु चण्डा क्षुधा आदि से दुःख होता है और दुःख पाप का फल है, यत्न तो यह है कि धर्मात्मा पुण्यात्मा और ईश्वर का जानने वाला वही पुरुष हो सक्ता है कि जिगका खाना पीना चलना फिरना आदि इन्द्रियों का आचरण कालानुसार ठीक बना है ॥

भोजन करने का घर सफेदी से पुता हुआ उमदा साफ और पाक स्थान से कुछ दूर पर होना चाहिये यहाँ पर कुछ सुगन्धित द्रव्य रखेहों और नेत्र के सामने विशेष करके भोजन करने एवं सोवने का कमरा बहुत साफ रखना लिखा है । खाने के बख्त यदि माता पिता गिरा वैद्य प्राक कर्ता (खाना पकाने वाला) भोर कुत्ता और घानर इन्हें सामने बैठाव लेवे तो उत्तम है, क्योंकि इन सभी की दृष्टि अच्छी होती है और बहुत गरीब आदमी जिन्हें उत्तम प्रकार का भोजन दुर्लभ है एवं बिल्ली आदि जीव उस समय न रहने पायें ॥



भोजनकेपात्र ।

भोजन के समय घी कांसे के पात्र में रखना उत्तम है, क्योंकि कांस की फटोरी में घृत बिगड़ता नहीं, यही कारण है जो यथा में घृत कांस ही के पात्र में रखना लिखा है । नीठी चीज पीने या चाटने की हो तो चांदी के पात्र में रखे । सूखा मांस (कषाय आदि) रसा दार या सूरया (अखनी) सोने के पात्र में लिखा है । कटु और अस्र आदि की घटनी वगैरः पत्थल की कूँही में ले ॥

दद्यात्ताम्रमयेपात्रे सुशीतं शुण्टितं पयः ॥

पीने के लिये उमदा परिशुन शीतल जल ताम्र पात्र में लेना चाहिये । बहुत लोग जानते हैं कि ताम्र के बर्तन में पानी पीना मने है

सो भूल-दे, मनु ने सिर्फ दूध या सहज आदि सीधी चीज-ताम्र पात्र में रख कर खाना सने किया है, इसका कारण यह है कि उक्त द्रव्यों में ताम्र का यन्त्रिक कारक अंश खिंच जाता है । निर्णय सिंधु में लिखा है ।

गव्यं च ताम्रपात्रे स्थं मद्यतुल्यं घृतं विना ॥

दूध ताम्र पात्र में रखने से मद्य के तुल्य हो जाता है, यदि घृत उस में न मिला हो, इससे स्पष्ट होता है कि घृत उस अंश को खींचने नहीं देता । भोजन के समय मद्य सृष्टिका पात्र में और दही चीनी कांच एवं स्फटिक पात्र में रख कर खाना लिखा है "कुलार्णव, कुलप्रदीप, समयाचार देवीरहस्य आदि शाक्त के ग्रन्थों में लिखा है" कि कांच पात्र कभी जूठ नहीं होता, वैसेही विष्णुपुराणादि वैष्णवी ग्रंथों में शंख की महिमा लिखी है । दाढ़ भात और रोटी इन्हें जरूरी मनोरम खिड़ले पात्र में लेना अच्छा है । उक्त पात्रों के अभाव में उक्त धातुओं की फलई हो, उसके भी अभाव में पत्थर या सृष्टिका का पात्र लेना उत्तम है जितने सूखे पदार्थ हैं उन्हें अपने दहने तर्फ और पानी आदि द्रव्य पदार्थ अपने बांये तर्फ रखना उचित है और दाढ़ रोटी की थाली अपने सामने रखें । चाहिये कि एक गज लम्बी चौकोर बिलस्य भर की लंबी चौकी अपने सामने रख उसी पर सब पात्रों को स्थापन करें ताकि झुक कर खाना न पड़े क्योंकि—

सुखमुच्चैः समासीनः समदेहोऽन्नतत्परः ॥ सुश्रुत,

सुख पूर्वक लंबी छाती और शरीर को सूख सीधी करके भोजन करें क्योंकि झुक कर खाने से पेट दया रहता है, इससे उस समय पक्षाण्ण की घमनी निर्मल रहती है । यही कारण है जो युरोपियन लोग टेबुल पर खाना रख और कुर्सी पर बैठ कर खाते हैं, पर एतद्देशीय नवशिक्षित गण उक्त आशय को तो जानते नहीं इसे अभ्याशी कोटि में गणना कर मछे २ महाजनों के लड़के चोरी छिपा होटल में जाके खाना खाते हैं इससे यदि अपने घर में एक चौकी पर भोजन के समय बरतन सजा और

आप सुख पूर्वक आसन पर बैठ आनन्द से भोजन करे तो होटल से क्या कम राजा मिले, अङ्गरेजोंका अनुकरण भी न हो और महागांसकी परमादी से भी बचे रहें । पर वह साहब जो मुख में चुरट दाग (गिटपिट दोलत साहबी गत चले पतलून जाकट से) उन्हीं यह कय अच्छा लगेगा॥

भोजन करने के पदार्थ न बहुत गर्म हों और न बहुत शीतल पर ताकत देने वाले सुगन्धित मसालों से धूपित हो । और भोजन करने में न तो बहुत जल्दी करे और न अति देर करे, यद्यपि नीति का बचन है-

अचिरंकुराजिन्द्रभोजनेशयनिरणे ॥

भोजन शयन और युद्ध बहुत जल्द करना, पर जल्दी २ भोजन करना बड़ा हानि कारक है ॥

पूर्वमधुरमश्रीयान्मध्योऽम्ललवणोरसौ ॥ सुश्रुत,

भोजन के आदि में मिष्ट द्रव्य जैसे दूध चिनी या रोटी दूध खीर और मालपुआ आदि, मध्य में अम्ल और जगकीन यथा रोटी तरकारी दाल भात और चटनी आदि, अन्त में पीने की यथा साठा आदि पीना लिखा है । पर बहुत काल से आयुर्वेद का प्रचार प्रायः लुप्त हो जाने के कारण मनुष्यों का खाना पीना ऐसा गड़बड़ हो गया है कि लोग इतना भी नहीं जानते कि कौन सी चीज हमें पहले और कौनसी पीछे खानी चाहिये और कौन द्रव्य के साथ कौन सा पदार्थ खाना उचित नहीं है, इसीसे अन्धी तादाद और नियमित समय के भोजन करनेवाले लोग भी प्रत्यह अनेकानेक रोगों में ग्रस्त रहते हैं ॥

अब कुछ भोजन के उन अङ्गों को कहता हूँ जिस से प्रत्येक मनुष्य की स्वस्थता, बल, बुद्धि, पराक्रम बढ़ सकती है । यह सभी जानते हैं कि भूख प्यास लगनेपर खाने पीने की इच्छा सब लोगों को होती है इसलिये उक्त वेगों के रोकने या उनके समय को न्यूनधिक करने से रोग पैदा होता है । भूख मारने से देह और, आंखों में दर्द, अरुचि, अम, तन्द्रा,

दाह, और बल का नाश होता है, जो लोग भूख लगने पर नहीं खाते उनकी अग्नि पहिले तो वातादिक दोषों को नष्ट कर घातु को जलाती है बाद यही जठराग्नि आहार रूपी इन्धन न पाके ठंडी हो जाती है किसी कवि ने कहा भी है ॥

आदौ रूपविनाग्निनीकृशकरीकामस्यविध्वंशिनी । ज्ञानो-
च्छेदकरोत्तपःजयकरीधर्मस्यनिर्मूलिनी ॥ पुत्रभ्रातृकलत्रभे-
दनकरीलज्जाकुलच्छेदिनी । सामांपीडितसर्वदोषजननीप्रा-
णापहारौघधा ॥

अब बतलाइये कीन कह सकता है कि मनुष्य व्रत उपवास करके अर्थ धर्म काम मोक्ष को पा सकता है, इस दुर्लभ शरीर को तो वैश्व काल के मुख में दे शीघ्र ही जीवन से हाथ धो सकता है, जो चारों पुरुषार्थों के साधन की जड़ है, हम यह नहीं कह सकते कि तुम एकादश्यादि व्रत मत करो, करो फिर; करो अवश्य करो; किन्तु प्यारे भ्रातृ गण, भूख लगने पर अवश्य खावे; चाहे कन्दही फल खा के रहे कुछ अन्देशा नहीं, हां खा ना, न पचने से अजीर्ण हुआ हो तो एकादशी पर क्या हसर है आप द्वादशी को भी न खाइये, हम तो वैद्य हैं जिससे आप आरोग्य रहें वही शिक्षा देंगे । विचार सहित आहार करने से दृष्टि, बल, बुद्धि आयु, शक्ति ओज और सुन्दरता की वृद्धि होती है ॥

जो हमने कहा है कि भोजन के आदि में सीढ़ी चीज खानी चाहिये उसका कारण यह है कि जो मनुष्य जितनी देर में भोजन करते हैं उस काल का तीन भाग कर प्रथम में वायु शमन करनेवाली सीढ़ी चीज बीच में अग्निकारी सही और नमकीन और अन्त में कफ नाशक फहुई तीती और कपैली चीजों को प्रीति पूर्वक मन लगा कर भोजन करना चाहिये; जो लिखा है कि फड़ी और भारी वस्तु भी भोजन के आदि में खाना उत्तम है इस लिये कि भोजन काल में जठराग्नि तेज रहती है

इस से कड़ी और भारी वस्तु (रोटी पूरी आदि) खाना जल्द पच जाता है ॥

पहले हम भोजन करने का मकान भोजन के पात्र और किस प्रकार भोजन करना चाहिये कह आये हैं और यह भी दिखलाया है कि ठीक समय पर भोजन करने से क्या लाभ होता है । अब विचार करना चाहिये कि ईश्वर ने हमारे जीवन के हेतु क्या २ वस्तु उत्पन्न किया है और कीम २ द्रव्य के स्थान से हमें क्या २ हानि लाभ हो सकता है । उ-रोक्त सब बातें खास करके उन लोगों के लिये हैं जिनको सब तरफ आराम है । पर विशेषकर समान्य रीति से देश काल आवश्यकता औ दोष विचार करके उसके अनुसार चलना सब को उचित है ॥

अन्न पाक यंत्र ॥

सच्चिदानन्द ज्योति स्वरूप नित्याखण्ड निस्पृह निर्गुण परमात्मा ने जीवधारियों के अभ्यन्तर ऐसे २ सूक्ष्मातिसूक्ष्म नाड़ियों के द्वारा प्राण र-क्तक भोजन पचने और शुक्र वगने का यंत्र बनाया है कि जरा भी सलट कीर होने में शरीरही नष्ट भ्रष्ट हो जाती है । जो कुछ भोजन किया जा-ता है वह पहले प्राणवायु आय कर आहार को आमाशय में ले जाती है वह आहार घट रस में कोई रस क्यों न हो आमाशय में जा मधुर और केना सा हो जाता है बाद यही पाचक पित्त से दग्ध हो खड़ा हो जाता है फिर समान वायु से प्रेरित हो ग्रहणी में पहुँचा है और ग्रहणी से अग्निकोष्ठ में पच कहुआ हो जाता है यदि न पचा तो आंव हो गया और नहीं तो यही उत्तम रस अग्नि के बल से मधुर और धिक्का हो जाता है और यही रस अमृत के समान हो बखिल धातुओं को उत्पन्न कर शरीर को पुष्ट करता है । यदि मन्दाग्नि से अपक्व अर्थात् अच्छे प्रकार से न पचा तो यही रस कहुआ खड़ा हो तावृथ हकार उ-त्पन्न करता है और विष समान हो अनेक उदरादि व्याधि प्रगटकर महत्

केश देता है चाहिये उस अवस्था में समिद्ध द्रव्य के यत्न से धमन कर उस रस को निकाल डाले ॥

यह भी जानने के योग्य है कि जितना खाना खाया जाता है वह सब शरीर के विभागों के बनाने में नहीं काम आता अवश्य कुछ हिस्सा जो फूजूल हैं वदन से बाहर निकल जाता है परं व उन मिश्र द्रव्यों की मूरत में आकर निकलता है जिनमें निमक की चीजें ज्यादा रहती हैं जैसे मल मूत्र । अब आहारसे रस खिंच कर अलग हो जाता है तब सार हीन मल, और जल, रह जाता है उस जल को मूत्र वाहिनी शिरा लेकर बस्ति याने मूत्र की थैली में डाल लिंग द्वारा निकाल देती है और मल को अपान वायु पक्षाशय में छाया त्रिमली अर्थात् गुदा मार्ग से निकाल देती है ॥

बाद इसके फिर यह रस समान वायु (जो वायु अग्निपाशय में रहती है) से प्रेरित (भेजा हुआ) हृदय में जाय रंजित पित्त (रंजक पित्त यह है जो अपनी ताकत से उसी रस को रक्त बना देता है) से पपकर रक्त हो जाता है । यही रक्त सर्व शरीर में स्थिति उत्तम जीवका आधार है और रक्तही वदन के सब हिस्सों को जिन्दा रखता है । रक्त क्या चीज है और किस तीर पर यह शरीर में चलता है और गर्दिस किया हुआ रक्त किस प्रकार उसी हवा से साफ हो जाता है इन सबों का बयान रक्त प्रकर्ण में लिखेंगे ॥

यदि यह रस रक्त न होकर बिदग्ध हो गया तो सहा हो जाता है अब जानना चाहिये कि भोजन किया हुआ द्रव्य प्रथम रस बनके ५ रोज में पित्त की मदद से रक्त हो जाता है, इसी प्रकार पांच ५ रोज में रक्त से मांस, मांस से मेद, मेद से हड्डी, हड्डी से गज्जा और भज्जा से ॥ दण्ड अधिक एक मास में जाके शुक्र बनता है । परन्तु जिसकी जठराग्नि तेज है उसकी हमसे कम दिन में और जिसकी भूख कम है उसको इससे भी अधिक में शुक्र होता है । लेकिन घातु गर्दुक औषध खाने से जल्द

और अधिक शुक्र होता है ।- यद्वायस्था में वायु की अधिकता से रस सूख जाता है इसलिये उस अवस्था में वायु शमन कारक एवं धातुपढ़ाने वाले तर द्रव्य भोजन करना उत्तम है । शरीर में बीर्यही प्रधान वस्तु है इसकी ताकत से जीवधारी गण अनेक प्रकार के काम कर रहे हैं जैसे दूध में घी और ऊख में रस रहता है वैसाही मनुष्य के शरीर भरमें शुक्र है और यही शुक्र स्त्री के देखने, छूने, उसकी घोंघी चुनने, उसका ध्यान करने और मैथुन का आनन्द होने से लिङ्ग के रास्ते निकल जाता है, यही कारण है कि अति मैथुन करने से मनुष्य बहुत जल्द निधन हो जाता है ॥

मनुष्य को अपने खाने पीने का संपन विचार सहित ठीक समय पर रखना उचित है, चाहिये कि जिसमे धातु में हानि न पहुँच कर और दिन प्रति दिन शुक्र की वृद्धि हाँती जाय ऐसा भोजन करे । भूख होने पर यदि भोजन न करे तो अग्नि बीर्य और रक्त को सुखाती है इसलिये भूख लगने पर अवश्य खाये ॥

भोजन करनेका समय ॥

सामान्य तरह से सब चिकित्साओं का मत है कि एक पहर दिन के ऊपर और दो पहर के भीतर और रात के एक पहर के भीतर भोजन करना श्रेष्ठ है; परन्तु रस दाय और मल के पकने पर जब भूख तेज हो आहार करने का यही समय ठीक है लेकिन परीक्षा से देखा गया है कि जिन लोगों के भोजन का समय बँधा है उन्हें उसी समय में जाके भूख लगती है, जो लोग एक दिन रात में एकही बार भोजन करते हैं उन्हें ठीक दोपहर के भोजन करना उत्तम है । याजी २ यूनानी फिदायों में लिखा है कि दो दिन एक रातमें तीन बार से अधिक न खाना चाहिये शायद ऐसा यूनान वाले करते भी हों पर यहाँके मुसलमानोंमें तो ऐसा

नहीं देखा जाता हनारी रायमें तो भोजन का समय दस बजे दिन और १० वा ९ बजे रात को उत्तम है उसमें भी जो कोमल प्रकृति वाले हैं और जिन्हें पढ़ने लिखने आदि की नेहनत अधिक पड़ती है उन्हें मामूली भोजन के अतिरिक्त प्रातःकाल शीघ्र के अनन्तर और सन्ध्या समय या पांच बजे शीघ्र के अनन्तर शुद्धचित्त हो कुछ ताकतवर मोदक या अन्य पदार्थ खाके जल पी लेना बहुत जरूरी है, क्योंकि इससे शरीर का थल अधिक सेहतमंद करने पर भी नहीं घटता पर समय का खयाल अवश्य रखना चाहिये ॥

निषिद्धान्न ॥

जिस अन्न में कुछ स्वाद न हो ऐसा भोजन बाली, जूठा (उच्छिष्ट) और जो खाना बसाने लगा हो, बहुत देर में पका हो या दुरियाय गया हो, शीतलसे फिर गर्म किया गया हो या अच्छी तरह न पका हो और जल गया हो तो कदापि न खाना चाहिये क्योंकि ऐसे २ अन्नों के खाने से विशूणिकादिक रोग होने का सम्भव रहता है, यह भी याद रखने के योग्य है कि भात के साथ मिरका और मुर्गे के मांस के साथ मूली, मूली के साथ दूध या दही के साथ बकुले का मांस न खाना चाहिये क्योंकि उससे कफ में विकार उत्पन्न होता है। दूध के साथ अज्जीर या नींबू या गड़ली और क्यूतर के घबरे के मांस के साथ प्याज का खाना बर्जित है क्योंकि इससे वायु का कोप होता है। सरसों के तेल से भूँजा हुआ क्यूतर का मांस और दूध के साथ तेल का बना पदार्थ कदापि न खाना चाहिये इसमें शीघ्र ही कण्ठ रोग होता है ॥

जो हम लिख आये हैं कि चार दफे भोजन करना चाहिये, अर्थात् मामूली भोजन के अतिरिक्त भी सबेरे और शाम को कुछ मलिष्ट पदार्थ खाना अत्यावश्यक है। और अति लाभदायक शिक्षा में यह भी देखलाया है कि प्रातःकाल उठ कर बाली गुंड बाली पानी पीना अति गुणकारी है। मनु म. पौ. को उचित है कि उक्त जल पान के एक घण्टा बाद

नीचे कड़े पुये पदार्थों में से जो इच्छा हो खाना बहुत जरूरी है पर ऐसा भी न खा ले जिससे कि मामूली भोजन में बिग्न पड़े (खाने की इच्छा न हो या कम खाया जाय) ॥

कुण्डलनी अर्थात् जलेबी ॥

जलेबी का बनाना कुछ कठिन नहीं है, इसलिये बनाने की क्रिया नहीं लिखा इसे घर में औरतें भी बना लेती हैं और बाजार में भी हेलवाइयों की दुकान में प्रत्यह सघेरे ताजी मिल सकती है ॥

गुण ॥

एषांस्तुल्योक्तानाम्नापुष्टिकान्तिबलप्रदा । धातुवृद्धिकरौ
वृष्यारुच्याचेन्द्रियतर्पणी ॥

जलेबी शरीर को पुष्ट (मजबूत) करती है कान्ति (चेहरे पर रौनक) और बल को बढ़ाती है, धातु वृद्धि, वृष्य (सद्यः शुक्रकर) रुचि और इन्द्रियों को तृप्त करती है । परीक्षा करने से देखा भी गया है कि रोज सघेरे जलेबी खाने से बहुत अधिक फायदा हुआ है, लेकिन मन्दग्नि वाले को आंश पैदा करती है, बाजार की अपेक्षा घर की बनी हुई जलेबी बहुत लाभदायक होती है क्योंकि बाजार का खमीर अच्छा नहीं होता, खमीरही पर कुछ कथन नहीं है बाजार के बने पदार्थ सभी खराब होते हैं । इसी से वेद में लिखा है:—

“नापणीमन्नमशीयादिति”

बाजार का पका अन्न न खाना चाहिये । कारण यह कि हेलवाइ लोग प्रायः सड़ा, चुना, बानी, खराब जो कुछ माल बच जाता है उसे भी किसी न किसी ढङ्ग से बेच डालते हैं और बहुत प्रकार का मिलावट कर देते हैं । इसी समय से हर एक मेढानों में लोगों को हेजा हो जाता है ॥

"माखन मिश्री" ॥

दूध मयने से जो ची निकलता है उसी को प्रायः मखन कहते हैं ।
मखन का गुण ॥

“दग्धात्यंनवनीतन्तु चक्षुष्यं रक्तपित्तनुत् । वृष्यं द्रव्यं मति-
स्त्रिगुणं मधुरं ग्राहि जीतलम्”

दूध से निकला मखन नेत्र और रक्त के विकारों को हर लेता है और दृष्य (शुक्रकर) द्रव्य (ताकत घर) अति चिक्कन, मीठी, ग्राहि (दीपन पाचन) और शीतल है । रोज सवेरे माखन और मिश्री के खाने से विशेष कर नेत्र और मस्तिष्क में अधिक बल होता है और इसके खाने वाले को मृगी, उन्माद, मूर्च्छा और शिर की बिमारी स्वप्न में भी नहीं हो सकती । यदि नियम के साथ रोज सवेरे तीन बार महीने तक का-सखास (दमा) और यक्ष्मा (कफज्वरी) वाले को माखन मिश्री खिलाई जाय तो इन निस्सन्देह कह सकते हैं कि बिमारी जाती रहेगी ॥

आंवला का मुरव्या ॥

रोज सवेरे एक या दो रेसा रङ्गित आंवले के मुग्घों में एक चांदी का बर्फ लपेट कर खाने से जेमा कायदा करता है प्रशंसा करना व्यर्थ है । आंवला तीन दोष को नाश करता है ॥

“रक्तपित्तप्रमेहघ्नं परं वृष्यं रसायनं । हन्ति वातं तदस्त्रत्वात्
पित्तमाधूर्यशैत्यतः ॥ कफारुचकपायत्वात् फलंधात्र्यास्त्रि-
दोषजित्”

आंवला रक्त पित्त और प्रमेह का नाशक एवं दृष्य और रसायन (जो यष्टुपस्था न, खाने दे) है विशेष कर आंवला अपने खट्टे अंश से वात को, मीठे और मीठे अंश से पित्त को, रुख और कपाय प्रभाव से

कफ को नाश करता है । जिनको आंवले का मुग्धा और चांदी का चकं
॥ गिल मके वे मुर्फ मृदा आंवले का चूर्ण ६ मामा और मिश्री ६ मामा
मयेरे फांक कर थाहा सा जल पी लिया करें तो भी बहुत फायदा करें ।

गोक्षुर पाक ॥

बड़ा गोक्षुर पाय भर, जायिलो ३ मामा, लवङ्ग ४ मामा, मिर्च १
तेला, कपूर ६ मामा, अकरकरहा ६ मामा, समुद्रगंध ६ मामा, अजवा-
इन ६ मामा, हरदी ६ मामा, आंवला, तज, तेजपात, छोटीलापची, वं-
शमेघन, नागकेशर और तालमराना, एक २ तेला थोड़े भांग ५ मामा,
अफीम २ मामा, गौ का दूध ४ मेर, चिनी २ मेर, बबूल का गोंद ८ तो-
ला, चांदी का चकं २० ताव । क्रिया, सब दवाइयों को भिन्न २ कूट क-
पड़ छाग कर ले पहिले दूध को कढ़ाई में चढ़ा भाप दे जब देा हिस्सा
दूध जल जाय तब गोक्षुर का चूर्ण और अफीम को दूध में छोड़ दे और
पकाता जाय, जब बिलकुल रोया हो जाय तब उसी में पाय भर पी
हाल रोये को सूय भूँज ले, याद इसके गोंद को भी घी में तल ले, फिर
चिनी का समदा चामभी कर उसी में रोया और सब दवा मिला दे
प्रदाम ५० किममि ५० पिस्ता ५० गरी २ तोला, गई चिरौजी २ तोला
इन सबों को भी महीन कतर कर उसी में हाल एक २ छंटाक का लड्डू
बनाले ।

“प्रातस्तेव्यमिदं महौषधवरं रोगौघविध्वंसनं चूर्णोष्ठं
सकलप्रमेहजननं प्रौढांगनाद्रावणम् ॥

नित्य प्रातःकाल एक लड्डू खाने से सम्पूर्ण रोगों का नाश होता
है विशेष कर वायाशीर प्रमेह के नाश करने एवं स्त्री द्रावण और घातु
स्तम्भन में उत्तम औषधि है । और भी बहुत-सी दवाइयां प्रातः काल
खाने के योग्य हैं जिनका बयान फिर कभी समयानुसार करेंगे । प्रिय
पाठकगण ऊपर लिखे हुये औषधियों में जो प्रास हो सके अवश्य प्रातः

काल खाया करिये फिर देखिये भन्द रोज में किया फ़ायदा मालूम होता है ॥

दूसरा भोजन ॥

इसका नियम दिन के एक पहर के ऊपर और दो पहर के भीतर लिख चुके हैं । इस वक्त के भोजन लायक उत्तम यह वस्तु है, मूंग और चर्द की धुली हुई दाल क्योंकि इन दोनों का खिलका ज़हर है कानपुर से लेकर पुर्य में प्रायः लोग अरहर की दाल उपादा खाते हैं हैं लेकिन जहाँ तक परीक्षा करने से ज्ञात हुआ है केवल अरहर की दाल खाना अति हानि कारक हैं इन सबों के गुण आगे प्रकाश करेंगे । चावल दूध, घी, चिनी, मुन्दायन, तरकारी और मांस, किन्तु मांस का शास्त्र विहित खाद्यान्नाद्य की अनुगति आगे देने । इस समय केवल इतनाही दिखलाते हैं कि घिना घी दुग्ध अर्थात् खिलकुल रुखाही भल खाना यदा नियेध है क्योंकि निरा रुत (अरहर चना की दाल रोटी) और रुखा आन्न (चना अरहर और मटर का चरभन) ये पचे हुये गोलाकार हो कर ऊपर का हिस्सा उभका जल जाता है इसे मन्दाग्नि या कोष्ठयद्दु होने का संभव है । दूध भात या दूध रोटी चिनी के साथ रोज भोजन के आदि में खाना शरीर को मोटा और बलवान करता है । दालभात दालरोटी और निचरी के साथ घी खाने से खाना अच्छी तरह हजम हो जाता है पुर्य कोष्ठ पक्किार और मन्दाग्नि का नाश होता है । यह भी याद रखने के योग्य है, जैसा किमी कवि ने कहा है ॥

“अतविहाय भोक्तव्य सहसंज्ञानमाचरेत् । लक्षविहाय दातव्यं कीटित्यन्ना हरिभजेत्”

सर्व माधारण को उचित है कि सैकड़ों ज़रूरी काम को छोड़ भोजन पर भोजन करें क्योंकि भोजन काल के पहले ही खालेने से सामर्थ्य की हानि, सिरमें दर्द और विमूषिका आदि बीमारी उत्पत्ति होने का डर

है इसी तरह भोजन के समय के धिता कर खाने में वायु का विकार, मन्दाग्नि अरुचि अजीर्ण रोग पैदा होता है । सुतरां नियमित समय पर भोजन करना अति लाभ दायक है । कष्ट अर्थात् जहां भोजन किया हुआ पदार्थ एकत्रित होता है उसके चार भाग मान कर दो भाग अन्न-आदि से, १ भाग जल से परिपूर्ण करना और एक भाग वायु के सञ्चार के लिये खाली छोड़ देना चाहिये ॥

भोजन का तीसरा समय ॥

चार पाँच बजे रात को मनस्त द्रव्योपाज्जनादि कामों से निवृत्त हो शीघ्रान्तर शुद्ध चित्त हो पत्तीर जल खया के कोई पुष्ट कारक लच्छू या अधो लिखित में जो मुनासिब समझे खाकर थोड़ा जल पी ले बाद इसके कामोद्दीपन मसाला से पूरित बंगला पाग का एक बौड़ा खा स्वच्छ निर्मल और इतने सुगन्धादिकों से वासित एलका बस्त्र पहन हाथ में छोटी ले मन प्रसन्न और श्रम निवारणार्थ किसी बगीचे में या ऐसे स्थान में एक आध घंटा घूमने के लिये निकल जाय जहां हर एक अपने परम प्रेमियों से मेल मिलाप हो, या किसी उत्तम हवादार दिव्य स्थान में बैठ कर दिख बहलाने वाली किताब देखे या नितार आदि रमणीक वाद्य बजायें या सुने, या अपने परम इष्ट गिरी से बातलाप करे इन व्यवहारों से परिश्रम की जो हगारत है बिल्कुल जाती रहती है, चित्त प्रसन्न और धातु पुष्ट होता है, एवं उस व्यक्त को गजले की भीगारी स्वप्न में भी नहीं हो सकती है ॥

कपिकच्छु (केवाछ) पाक ॥

केवाछ के घोल की गरी ५० दूध ५४ चिनी ५२ ठोटी पीपर, तिर्था जायफल, तज, सेजपात, जयह्नू, छः छः मासा, जायित्री और केसर चार चार मासा, ठोटी लायची, यंशलोचन, पुननंदा, मफेद मूसली, मफेद चन्दन, अगर और अकरकरहा, एक २ तोला, बस्तूरी एक या दो मासा

कपूर ३ ग्रामा, बदाम पिस्ता किसमिम और मुनक्का आधे २ पाय इन सब दवाइयों को अलग २ फूट कपड़ खान कर ऊपर कढ़े हुये गोपुक पाय की तरह इसे तैय्यार कर बादाम आदि मेवा डाल तीन २ तोले का मोदक बना ले प्रत्यह संध्या समय एक लछ्छू याकर ऊपर से पाय आध पाय दूध पी लेने से सब प्रकार का प्रमेह नाश होता है ॥

“तत्रापिचौण देहस्य वलपुष्टि विवर्धनम्”

कैमाहू दुर्बल और बल हीन पुरुष क्यों न हो कुछ काल पर्यन्त इसके सेवन से अवश्य बली और पुष्ट होगा ॥

यदि उक्त पाक न बन सके तो मराने को घी में तल कर चिनी या मिश्री में पाक बना लें । रोज संध्या समय तीन बार तोला खाकर दूध या जल पीले अगर यह भी न हो सके तो सिर्फ पाय या मोधमेर अथावट दूधही पीले क्योंकि उस समय कुछ पर कुछ खाना बहुत जरूरी है ॥

चौथा रात्रि भोजन ॥

यह तो लिखी चुके हैं कि एक घण्टे रात के भीतरही भोजन करना उत्तम है कि । बहुत से लोग ऐसे भी देखे जाते हैं जो १२ बजे रात को आहार करते हैं पर यह बिल्कुल वाहियात है क्योंकि भोजन वास्तविक न परिपाक होने से सखरे दो तीन दफे दस्त आता पड़ता है और कुछ डकार या गले में जलन होती है ॥

अति लाभदायक शिक्षा ॥

शरीर के आरोग्य कारक अनेक विषय ऐसी हैं जिन्हें याद रखने से सर्वसाधारण जन प्रति दिन क्या प्रति मुहूर्त लाभ उठा सकते हैं सुतरां आत्म हितकारियों को उचित है कि निम्नलिखित बातों पर अवश्यमेव ध्यान दें ॥

१ भोजन से उदर को बहुत नहीं भर लेना चाहिये क्योंकि अधिक खाने से यदन वेकार और निकम्मा हो जाता है ॥

२ एक आहार जब तक न पच जाय तब तक दूसरा आहार कभी न करना चाहिये क्योंकि इससे अग्नि का दीपन पायन बल घट जाता है ॥

३ भोजन करके तत्क्षण स्त्री प्रसङ्ग कदापि न करना चाहिये इससे निश्चयही उदर भूण और अपहृष्टि हो जाता है ॥

४ अति भूख लगी हो तो पानी पी कर पेट न भर लें कारण यह है कि जलोदर रोग होजाता है, इसी तरह अति प्यास में अन्न खा लेने से गुणस रोग होता है ॥

५ प्राणी मांस को छः घंटे से कम और आठ घंटे से ज्यादा नहीं सोना चाहिये । क्योंकि छः घंटे से कम सोने में सस्तिष्क में निर्व्यगता और आठ घंटे से अधिक सोने में शरीर में भारी पन और आलस्य प्राप्त होती है ॥

६ शरीर पसीना से आर्द्र हो तो जब तक पसीना न सूख जाय या कपड़े से अच्छी तरह न पोंछ लिया जाय तब तक आकाशी हवा विशेष कर पूर्व की वायु न लगनी चाहिये और न स्वेद युक्त शरीर पर पानीही पड़ना उचित है समय यह है कि इन दोभों कारणों से क्षायुषों में वायु के कोप से दर्द होने लगता है ॥

७ दिस्थान्तेपिवेदुग्धं निशान्तेगीतलंचलं । भोजनान्ते पिवेत्तन्नां किमन्यैर्भेपजैर्नृणाम् ॥

मन्थ्या समय दूध पीना अति लाभदायक है, इसी लिये शास्त्रकारों ने धातु ग्रहक द्रव्य मन्थ्याही को खाना लिखा है और धातु वृद्धिकारक द्रव्यों में दुग्ध प्रधान द्रव्य है ॥

“धातुपुष्टि अन्न वल्लभरन जीर्णार्जुन पूर्यते वाय ।

पय समान औषधं नर्ही जगमें दिया वताय ॥”

८ प्रति दिन सूर्योदय के पहिले कुछ अंचकार रहते में एक घेर या नितनी इच्छा हो जाती जल पीने से मन रोगों का नाश और १०० वर्ष की आयु होती है, और यष्ट क्रिया अर्ध, शोथ, कुष्ठ, मूत्राघात, रक्तपित्त, अक्षपित्त, मेद और उदर, नेत्र, कर्ण, गल गिर रोग एवं यक्षि शूल और त्रिदोष को नाश करता है पर यह भी याद रखने योग्य है कि मोते से उठ कर तत्काल जल न पी ले दश पन्द्रह मिनट ठहर के जल पीना उचित है । उसी काल में नाक से वासी जल पीने से बुद्धि और दृष्टि की दृष्टि एवं जल्द बाल का पकना, स्वरभंग, पीनस, कासश्वासदि अनेक रोग नाश होते हैं ॥

९ भोजन के अन्त में तब अर्थात् गाढा पीने से भोजन अच्छे प्रकार पच जाता है ॥

१० (उदके आत्मनं न पश्येत्) पानी में अपना मुख न देखना पा-
दिये सबम यह है कि दृष्टि रजक मय में वायु का कोष होता है ॥

आयुर्वेद (वैद्यक शास्त्र) के जानने वाले प्रियधर “व्याघ्रशकुनिश्च पतितपापकारिणां नपप्रतिवर्तयं एवंविद्या प्रकाशते नित्यं शोभन्त्यर्थं कानांश्च प्राप्नोति” मन के तथा पाप पशुओं के मारनेवाले (गोघालक नलेख) पक्षियों के मारने वाले तथा पतित (जो हिन्दू इत्यादि हो गया है) और खाद्यान्नाद्य का विचार न रखता हो) और पापियों की औषध न करना इन आवरण से विद्या सफल होती है लेकिन में निवृत्ता बढ़ती है यश होता है धर्म, अर्थ काम और मोक्ष प्राप्त होते हैं ॥ श्रुत

अप्र. कि दूध-घृत उत्तम अस्त्रादिकों से शरीर पुष्ट और बलावान रहता है तो मांस खाने की कोई जरूरत नहीं है । मांस खानेवाले इस को बहुत कुछ समझते हैं और ऐसाही है भी लेकिन विचार करना चा-

हिये कि किस समय पर किस चीज की आवश्यकता होती है। स्वास्थ्य में मांस खाना व्यर्थ है और देखला जन्के हैं कि और २ पदार्थ खा कर के मांस की अपेक्षा अधिक फल पा सकते हैं, तो अच्छे विच्छे में भी पशु का खाना पशुओं का काम है, जग की तुम्हारे खियां चन्द तरह के वस्तु खाने पीने के लिये ऐसे, तैयार हैं कि जिनके खाने पीने से दिन प्रतिदिन बलिष्ठ और पुर्णार्थ हो सकते हो। तो क्यों क्या मांस खाकर बदमाग होते हो। तुम्हारे पूर्व के पुरखे जिनका इतिहास दिन रात गांवा और सुना करते हो। ये तुम से किन घात में कम थे, क्या ये मांसाहारी थे ? कभी नहीं। पिघार करके देखिये भारतवर्ष, चीन, और जापान में करीब ३० करोड़ बौद्ध मत वाले हैं और सब लोग जानते हैं कि यह लोग कुछ कम जोर नहीं हैं और यह भी नहीं है कि इन लोगों की जिन्दगी थोड़े दिन की होती है इस लिये वे प्यारे मांघयगण क्या की हालत को छोड़ जहां तक कम पड़े मांस भक्षण त्याग करो इसमें तुम्हाराही कल्याण है ॥

गरमी के दिन बीत जाने पर हलकें कपड़ों की क्रमशः बदला पाहिये जाड़े के दिनों में शरीर रुईदार और ऊनी कपड़ों से आरोग्य रहता है ॥

जाड़े के दिनों में लोग रात को सयन करने के सकान की कियाइ बन्द रखते हैं चाहिये कि सूख तहके ठठ कियाइ और छिड़कियों को कुल काल तक खोल रक्खा करै क्योंकि सुरास हवा जो रात में एकट्ठी होती है निकल जाती है ॥

गुट्टापान इस देश में जैसा फैला हुआ है और फैला जाता है उसका कारण गुप्त नहीं है विद्वान लोग सभी जानते हैं। जहां तक आयुर्वेद द्वारा अवलोकन किया जाता है गुट्टापान (जो मिर्क नशा करने के लिये पीते हैं) किसी तरह पर गुप्त दर्ज नहीं हो। सत्ता बल्कि अनेक तरह के रोग पैदा हो सकते हैं प्रत्यक्ष है कि इसी की मित्रता गोया अपने-दान के बुझाना है, प्रायः देखने में आया है कि इनके पीते २ कितने लोग वे

कार और पागल हो गये हैं । अति सुरापान से मस्तिष्क का नाश और बहुत से रोग, यक्ष्मा, स्वास और काश पैदा हो जाते हैं और रक्त का कोई उपद्रव उठना तो शङ्काही नहीं है और यह भी है कि जो अति सुरापान से रोग होता है उसे अमाध्यही जानना चाहिये फिर धन्यन्तर भी उसकी चिकित्सा नहीं कर सकते हैं, इसलिये हे व्यापार आतृगण दवा की हालत को छोड़ और किसी तरह पर सुरापान करना उचित नहीं है बाकी बचाना सुरा के प्रकर्ण में करेंगे ॥

बहुत तम्याकू और चुरट को भी पीना न चाहिये क्योंकि इनके अभ्यास से आंत, फुफुन (फेफड़ा) हृत्पिंड (दिल) मस्तिष्क और दांत कमजोर हो जाते हैं । क्योंकि शीतल वायु से दिल की ताकत कायम रहती है और आन्तरिक आशय मजबूत होते हैं इस हेतु दवा के अतिरिक्त तम्याकू आदि का पीना याहियात है ॥

सात आठ बजे रात को एक मरतबे न सो के एकबारगी रात को पढ़ने से और अधिक श्रम करने से बुद्धि तीव्र नहीं रहती इसलिये नियम के साथ दिनही में या तीन चार बजे रातको उठके पढ़ना उत्तम है लेकिन चिमनी या किसी किस्म की तेज रोशनी को आखों के सामने रख कर पढ़ने से नेत्र कमजोर हो जाते हैं इसलिये यदि रातको पढ़ना होता तो नेत्र को बचा कर रोशनी रखें या लम्प पर हरी चिमनी लगावे या चिमनी पर आड़ रख कर पढ़ सकते हैं ॥

जाड़े के दिनों में जो मकान सीढ़ या पानी से तर रहता है उस मकान में बिना अग्नि रखे रहना निषेध है क्योंकि जाड़े के ऋतु में बहुत अधिक सरदी से जलम रहनाही उत्तम है, कारण यह है कि इन ऋतु में अति ठण्ड जल हुआ और सरद आहार आदि के सरदी की अधिकता से उबर खांसी जानघात और अतीसार आदि रोग पैदा हो जाते हैं ॥

बिना जाने यूँसे और परिचा के किसी के हाथ से कुछ चीज विशेष

कर पान का बीड़ा न खाना चाहिये इसी प्रकार मूर्ख वैद्य (भताई) के हाथ की दवा खाना और जहर खाना दोनों बराबर है क्योंकि शास्त्र-कारों ने इस बात का बड़ाही निषेध किया है, कारण यह है कि:—

औपध्योऽमृतकल्पास्तुशस्त्राशनिविपोपमाः । भयन्त्यक्षैरु
पद्धतास्तमादेतौविवर्जयेत् ॥

औपधि जो अमृत के समान हैं वे उन अशिक्षित वैद्यों के हाथ से शस्त्र वंज अथवा विष के समान हो जाती हैं इसलिये मूर्ख चिकित्सकों के हाथ की औपध कभी न खाये ॥

सैहादिष्वनभिज्ञोयःकृद्यासुचकर्मसु । सनिहन्तिजनंजो
भात्कुर्वेद्योन्मृपदापतः ॥

जो वैद्य समयपर पसीमा देना अथवा छेदनभेदन (चीरकाढ़) आदि क्रियाओं को नहीं जानता वह लोभ में रोगी के प्राण को नाश कर देता है और उस हत्या से राजा यापी बनता है क्योंकि उसने अपने राज्य में ऐसे मूर्ख को चिकित्सा करने का अधिकार क्यों दिया ॥

जो वैद्य केवल शास्त्र को जानता है और कर्म को नहीं जानता इसी तरह जो क्रिया को जानता है परन्तु शास्त्र के बोध से रहित है वह वैद्य रोगी को पागल कर देता है जैसे कातर पुरुष रण में पधड़ा जाता है राजा को उचित है कि ऐसे वैद्य को मरवा डाले ! फिर आज कल बहुत से वैद्य ऐसे भी देखने में आते हैं कि कुछ पढ़े लिखे तो हैं पर उनके सत्य (गीतरी मतलब) को बिलकुल नहीं जानते तो बस गनुष्य चाहे सब शास्त्र को पढ़ ले परन्तु बिना अर्थ के जाने वह शास्त्रज्ञ नहीं कहलाता केवल शास्त्रों का भार उठाने वाला है । “यथा खरश्चन्दन भारयाही भारस्यवेत्ता नतुचन्दनम्य” जैसे गधे पर चन्दन लादने से गधा केवल चन्दन के भार को जानता है परन्तु उसकी सुगन्ध को नहीं जानता ॥

सुबह का उठना ॥

अगर आदमी को सबेरे उठना होता तो उसको रात को सबेरे ही सोना पड़ता है । बहुत रात आ जाने पर जो सोते हैं वे सबेरे बिछीना परसे नहीं उठ सकते । अगर वह उठें भी तो कुछ फायदा न होकर बहुत तरह की सरावियां पैदा होती हैं बदन दुपंछा और रोगी हो जाता है, निद्रा भारी मालुम होता है, आंखों में जलन होती है और किसी काम के करने में उत्सह नहीं होता । इसलिये अगर मेर के वक्त चार पांच घंटे बिछीना पर से उठने का नियम करमा हो तो रात को नव दस घंटे सोने का अभ्यास करना पड़ेगा और यही करना उचित है ॥

रात को ज्यादा न जाग कर सोने की आदत लगाने से सुबह को उठ कर अपना काम अच्छी तरह हो सकता है सिर्फ इतना ही नहीं होता पर हमसे बहुत तरह की आफतें, डर और घुरी घुरी घातोंसे भी बचाव होता है । आधी रात के अँधियारे में छिप कर और इसे सुयोग समझ कर बहुत से लोग अपने पैरों में आप कुएहाड़ी मारते और तरक का दूर यात्रा खोजते हैं और अन्त के जन्म भर पछताया करके भी अपने किये हुए घुरे कामों के फल से छुटकारा नहीं पाते ऐसे भी आदमी बहुत से देखने में आते हैं कि जो अपने किये हुए घुरे कामों का फल अपने हाथ के घालों तक फैलाते हैं और उनके विचारे लड़कों को निरपराधी हो कर भी अपने पिता के किये हुए घुरे कामों का फल भोगना पड़ता है । ऐसे तरक के जाने वाले, अपनी ही जिन्दगी में दाग लगा कर सिर्फ आप ही दुःख नहीं भोगते पर इस पृथ्वी पर के बहुत से दूसरे मनुष्यों को भी दुःख मागर में डुबाते हैं ऐसे आदमियों के जिन्दगी पर धिक्कार है ।

भाइयो, तुम कभी भी इस तरह की घुरी घाल मत कबूल करना । हर रोज प्रण करके रात को ९.१० घंटे सोने की आदत लगाओ और मेर के चार पांच घंटे उठो और जन्म भर इसी नियम का पालन करो इस नियम के चलने से शिवाय करके देखो कि जिन्दगी के दिन कितने

बढ़ जाते हैं। एक आदमी भार धजे हर रोज, उठ कर अपना काम शुरू करता है। और दूसरा आदमी छः धजे उठ कर काम शुरू करता है। यदि वे दोनों रात को एकही वक्त सोयें तो ४० बरस के बाद मालूम पड़ेगा कि पहिला आदमी दूसरे से १० बरस ज्यादा बचा। इस तरह हिसाब करने का मतलब यही है कि असल जिन्दगी क्या है? इस बातको अगर अच्छी तरह सोचा जाये तो, व्ययपन का खेल, खान, खाना पीना सोना, आराम धीरह कामों में जो वक्त बीतता है वह छोड़ कर सिर्फ कड़े घंटे जो हगलेग हकीकत में अच्छे कामों में बिताते हैं, उसी का नाम असल जिन्दगी रखने से, भले बानों में, मनुष्य के जीवन का बहुत ही कम वक्त खर्च होता है, यह तो साफही जाहिर है इस तरह हिसाब करने से जो जितना ज्यादा काम कर सकता है उसको उतनाही अपनी जिन्दगी का आदमी कह सकते हैं और इसी लिये उन दोनों आदमियों में एक आदमी दूसरे से दस बरस ज्यादा जीआ ॥

एक बड़े ज्ञानी ने कहा है कि, सुबह दण्डी हवा में कोई ऐसी एक चीज है कि जिससे लाल रून की तेजी बढ़ती है। भरा शरीर तेजस्व होता है, ओंठ लाल होते हैं और बदन मसड़ी जगह से सुधील होती है इसलिये मैं कहता हूँ भाई यदि तुम दीर्घजीवी होना चाहो, शरारत आयागसे जिस तरह निर्मल जलका सेला बढ़ता है उसी तरह अपनी नसों में रून बहै यह चाहते हो तो अपना मिछीना सुबह को तड़के छोड़ो और परिदों की भांति नेहाल हो। कर ईश्वर का भजन करते हुए फिरने को बाहर निकल जाओ। तब यह मालूम होगा कि मनुष्य इस जिन्दगी में कितना सुखी हो सकता है। यदि इस जन्म में मनुष्यों के उपकारका कोई बड़ा काम करना पाड़े यदि अकाल मृत्यु से बच कर बुढ़ापेमें सुख से ईश्वर का भजन करते हुए प्राण देना चाहो, तब प्रण करके गियन के साथ तड़के उठो, सूर्य निकलने के पहिले आलस से भरहुये मिछीना को छोड़ो, घर की रुकी हवा से बाहर निकल जाओ। थोड़ी देर तक साफ और दण्डी हवा खाओ, ईश्वर का नाम ले कर उत्साह के साथ काम में

लगे, सभी तुमको मालुम होगा कि तुम कितनी तरक्की करते हो और कितना काम कर डालते हो तुम अपना काम अपनी तरक्की और पुर्तों देव कर आश्चर्य में आ जाओगे ॥

ऋतु ॥

शरद ऋतु ।

शरदऋतु मघ मुनियेकी सतसे कुआर कार्तिक भिने गये हैं । सुश्रुत में भी इसी प्रकार पहिले ऋतु का वर्णन किया है पर दोनों के एकट्ठा होने और कोप करने और उनके सस के लिये दूसरे प्रकार ऋतु संज्ञा बांधी है जिसको मघ वैद्यक शास्त्रानुयायियों ने अङ्गीकार किया है । ये भादों कुआर की वर्षा कहते हैं और कार्तिक अगहन को शरद ऋतु कहते हैं । यथार्थ में भी दोनों का एकट्ठा और कोप होना आदि इसी प्रकार की ऋतु बांधनेही से ठीक होता है ॥

यह ऋतु मनुष्यों के स्वास्थ्य और शरीर संशोधन में जैसा लाभ दा-यक है सभी जानते हैं । इसी ऋतु में स्नेह, स्वेद, वसन, जुगाय और रक्त मोक्षण (कस्त लेना) उत्तम होता है । इस ऋतु में खाने, पीने का समय अवश्य ठीक २ रखना चाहिये । आजकल प्रायः अन्न मन्द और अजीर्ण द्वारा पेटादिक रोगोत्पन्न होने का सम्भव रहता है क्योंकि “वर्षांमन्वीयतेपित्तं, शरत्काले प्रकुप्यति” वर्षा ऋतु का एकट्ठा हुआ पित्त, शरद ऋतु में कोप करना है । इसी हेतु शारङ्गधर ने विशेषकर १५ रोग अवश्य अल्पाहार करना लिखा है ॥

“कार्तिकस्य दिनान्यष्टौ अष्टौवा ग्रहणस्य च । यमद्रुहा समाख्याता खल्पाहारी सुखीभवेत्” ॥

कार्तिक शुक्ल पक्ष की अष्टमी से अगहन की अष्टमी पर्यन्त यम द्रव्या मंजक दिन है इन दिनों में खल्पाहारी मनुष्य सुख से रहते हैं

इस ऋतु में पित्त सगन कारक आहार विहार करना उचित है । जैसा कि, मूंग, पुराना चावल, जंगली आनवर्गे का मांस, ऊख, मिर्ची का स-रसत, शहत, ताड़ी, गाय का दूध, आदि और जो २ समय के फलादिक हैं अपनी प्रकृति के अनुसार भोजन करें । वृक्ष की खाया, कपूर और स्वेत चन्दन का लेप कुछ चन्द्रमा की सेयां, सुगन्धित पुष्पों की आला, सन्दी और हलका यस्त्र पहिरना, सुग्धादु गीतल तथा निर्मल जल पीना, आज कल प्रायः सभी जल निर्मल हो जाने के कारण पीना लिखा है । परन्तु आंसूद और नदी का जल जैसा गुण दायक होता है घमान करना दृष्य है । लेकिन यह नदी जिसका जल कहीं से रुका न हो न गाय भैंस और घोड़ा आदि पशु यहां धोये जाते हों । जहां मनुष्य स्नान न करता हो धोयी कपड़ा न धोता हो । और शहर गावों के नाशदानों की मेरियां जहां पर न लगी हों । यहां का जल पीना उत्तम है ॥

प्रायः जो नदी हिमालय से निकली हैं या जिसकी धारा बालू तथा पगरीली भूमि में तीव्र गति से बहती है उनका जल अति हलका, निर्मल और अमृत के समान होता है यह पूर्वकाल के सुश्रुतादि वैद्यों ने परीक्षा करके देखी है इसी कारण गंगा जी का महात्म यहां तक बढ़ गया है कि नाम लेने से पाप पलायमान होते हैं ॥

(आंसूद जल की विधि)

प्रातः काल एक घड़ा में जल भर कर घाम में रख दे। और रात्रि को वैसाही रक्खा रहने दे। दूसरे रोज़ छान कर पीने को रख ले। याद नसी प्रकार घड़े को जल से भर कर फिर रख दे। यह जल सूर्य के किरणों से तथा और चन्द्रमा के किरणों से या अधो पतित ओस के अणु सात्वों से शीतल हुआ अमृत के समान हो जाता है । बात, पित्त, कफ, रक्त इनका सम कारक, बल वृद्धि कर, अरुचि दाय, और मन्दाग्नि का नाशक एवं नेत्रों को अति लाभ दायक है ॥

निषेध ।

खटाई, गर्म चीज, स्नान, मदिरा, दही, अलसी, तेल, ज्यादा नमकीन वस्तु, दिन का सोना, घाम ब्रत करना, रात्रि जागरण, मैथुन । क्रोप और जो २ पित्त के बढ़ाने वाली वस्तु हैं सेवन करना । सद्य वैद्यों ने शरद ऋतु में मना किया है इस मूल पर कार्तिक और अगहन के जितने पर्व हैं सब उत्तम भोजन विशिष्ट हैं । जैसे दियाली, अन्नकूट, आवृद्धितीया, रामपूर्णिमा, देव उठानी एकादशी को भी यहाँ सब प्रकार उत्तम फल फूल भोजन करते हैं । वर्षा रितु का उत्पन्न चीजें विष्णु को पहिले समर्पण की जाती हैं । इसका कारण यही है कि वर्षा ऋतु में सब औषधियां निरस और बिदाह करने वाली रहती हैं वे शरद ऋतु में रस युक्त और बलवती हो जाती हैं और आजही काल की संग्रहीत औषधियां साल भर गुण दापक रहती हैं । यह भी एक प्रधान कारण है कि यनियों के यहाँ की औषधियां कुसगम के संग्रहीत होने से रोगों पर अपना मयार्थ गुण नहीं दिखाती ॥

हेमन्त ऋतु ।

शीघ्र और माघ महीने को हेमन्त ऋतु कहते हैं । आज कल अग्नि की तीव्रता से भोजन मवायत पच कर उसका रस शीघ्र खिंच तणाम तरीर में पहुँच जाता है "तस्मात् स्निग्धं तदाहितम्" शु० हमने स्निग्ध पदार्थ अर्थात् घी दुग्ध आदि अधिक हित करता है । यही कारण है जो हम ऋतु के राने पीने में प्रायः आयुर्वेद ग्रंथकारों ने स्निग्धी स्निग्ध लिया है और प्रत्यक्ष भी है कि कैसाहू निर्बल वर्षों न हो जाड़े में अवश्यही कुछ अधिक खाने लगता है । हम निस्सन्देह कह सकते हैं कि इस ऋतु में जो गर्भुष्य संयम सहित विशिष्ट धातुत्पादक द्रव्य भोजन करते हैं उनका बल एक वर्ष तक कदापि नहीं घटता । इस ऋतु के राने योग्य पाक ॥

मूसली पाक ।

मूसली सफेद देहली की ५। गौ का दूध ४ सेर, घी पाय भर, चीनी २ सेर, जायफल, लौंग, केशर, सेांठ, पीपर, मिर्च जावित्री ए सम छः २ मासा छोटी लायची, त्रिफला तअ, तेजपात, जटाभासी और नाग केशर ए छ जीर्जे एकरेताला । केवांछ का बीज, धनियां और मंगलाचन दे। २ तोला, पहिले सब दवा को अलग २ कूट कपर छान कर ले । दूध को एक कड़ाही में डाल भौंटावे जब देखे कि तीन हिस्सा दूध जल गया एक हिस्सा बाकी है तब मूसली के चूर्ण को उसी में डाल सूख घोंट ले जब सूख गाढ़ा होना के मानिन्द हो जाय तब उसी में घी डाल खोये को सूख भूँजे जब नहक उठने लगे और रवा उसका बिघर जाय उतार ले । बाद चीनी की गाढ़ी चामनी बना उसी में खोया और सब दवा को मिला ऊपर से बादाम की गरी आधपाय पिस्ता आधपाय चांदी का चकं २० डाल आधी २ छँटाक की गोली बना ले प्रातः और सायंकाल एक गोली खा के ऊपर से पाय भर गौ के दूध पीने से अघश्य प्रमेह आदिक रोग आराम हो बल धीर्य बढ़ता । वैद्यक शास्त्र, में हर एक पाकों के गुण यहां तक लिखा है कि खाने वाला कामदेय से अधिक रूप और दृढस्वति से भी अधिक विद्वान हो जाय परञ्च परिजा लेने से ज्ञात हुआ कि जिस तरे द्रव्य स्त्रियों में कधियों की तरंगे चुनीं हैं उसी प्रकार यह भी है ॥

रतिवल्लभाख्य दृढत्पूंगीपाक ॥

दक्षिणी चिकनी सुपारी डेढ़पाय, गौ का दूध ५ सेर, चिनी ढाईसेर, घी पाय भर, छोटी पीपर, जायफल, जावित्री, तेजपात, शोंठ, लौंग, केशर, गजपीपर, कचूर, मेघी, छ २ मासा । छोटी लायची, गुलसकरी, मरियारा के जड़ का छाल, दालचीनी, खस, सुगन्धवाला, मेथी, त्रिफला, मंगलाचन, शतावर, केवांछ का बीज, मुनक्का, तालमखाना, बड़ा गोखुरा खुदारा, तीसुर, धनियां, सूखा कसेरु और सिद्धाड़ा, मुलेठी, बरै, जटा-

साभी, भौंक, सफेद मूत्राली, असगन्ध, मिर्च, चिरौंजी, सेनर का बीज, क-
मलगट्टे की गरी, स्वेत चन्दन, और लाल चन्दन, पृथक् पृथक् एक एक तोला
कस्तूरी, शुद्ध कपूर, अनवेधी मोती, गुलाब के अर्क की घांटी चार रसमात्रा,
बदाम की गरी और पिस्ता बाघ २ पाय, चांदी का वर्क २० सेनेका वर्क
५ सव दवाइयों को अलग २ कूट कपरखान कर पूर्वोक्त रीति से पाक
बना सभी में सब औषध डाल आधी २ छंटाक का मोदक बना दोनों स
नय एक २ लड्डू खा ऊपर से पायभर दूध मिश्री मिला के पिये । कुछ
दिन बराबर इसके खाने से बीर्य अधिक बलवान हो जायत्व गढ़ हो
जाता है । और जिन मनुष्यों का बीर्य प्रमद्व में न रुकता हो तो इतनी
औषध और मिला दे । अकरकरहा १ तोला, शुभद्रशोष, पोस्ता का दागा
और धुनी हुई भांग ४ २ माघा दूध का सोधा गुभा धतूर का बीज
४ माघा ॥

हेमन्तऋतु का पथ्य ॥

घी, दूध, भांघ, चर्द, मिश्री, कण, मद्य (बलकारक अर्क) और रित
के जल इत्यादि प्रकृत के अनुसार खाये शरीर में तैल गर्दन, कमरत स्त्री
प्रसङ्ग, अग्नि का सेवन पटे मकान में सोना गर्म जल का पीना इत्यादि
इस रितु में वैद्यों ने उत्तम लिखा है तथापि पाठक गणको इस बात पर
अपश्य प्रतिक्षण दक्षचित रहना चाहिये कि कौन सी बातें हमारे लिये
बलप्रद हैं और कौन सी नहीं, यथा स्त्री प्रसङ्ग चाहे जो रित हो प्रति-
दिन करना हांथी करीये बलवान को भी नटिया मसान कर मुद्दों के
कोटि में कर देता है । यदि ऐसाही अति कामी हो तो इस रितु में भा
ठमें रोज प्रसंग कर सक्ता है नहीं तो वही वेदानुसार भास २ में उत्तम है
“आगकातापना” चाहे जाड़ासेजाड़ा क्यों न पड़ता हो पित्तप्रकृत वाला और
जिसको खून की बिमारी हो कदापि न चाहिये । अतिकास तक घागमें
रहना किमिरित में अच्छा नहीं है क्योंकि “आतपस्वेदमूर्च्छांश्च पित्तवृणा
क्षयः शून्यः, दाहं विप्ररक्षणं कुप्येदेतां कायाध्ययो हति” आदा घाग में रहने
से पसीना शिर में गरी रक्त पित्त विषाण ओंकाई घुमरी शरीर में जलन

और चेहरे का रंग काला पड़ जाता है, इन सबों की शान्ति छाया से होती है ॥



वसन्त ऋतु ॥

पाण्डुगुण और चित्त नहीने को वसन्त कहते हैं हेमन्त ऋतु का सञ्चित कंप आनकल कोष करता है । इस ऋतु में कसरत करना, शान्त सवेरे हवा खाना, चिनी का सरयत आदि शीतल पदार्थों का सेवन करना बहुत फायदा करता है । परन्तु सबसे बढ़कर इस ऋतु में क्रीडा करना और जुलाब लेना उत्तम लिखा है और देखा भी गया है कि अर्द्धाब्द जुलाब होने से शरीर हलकी और चित्त प्रसन्न हो जाता है । पर अंतःकरणपशू किसी की बनाई हुई कड़ी जुलाब ले लेना विनकुल चाहियत है । कारण यह है कि जुलाब का पच जाना या तादाद से जादा दस्त का आ जाना शरीर को नाश कर डालता है । चरक, सुश्रुत और यागभट्ट इनका मत यह है कि बिना स्नेह पी आदि निकली बीज पी के नाड़ियों के मल को फुलाना (स्वेद) फूले हुये नाड़ियों के मल को पसीना के द्वारा बाहर निकलना (वसन) पित्त को ऊर्ध्व मार्ग से गिराना (जुलाब लेना उत्तम नहीं है । यूनानी हिकमत में लिखा है कि घनैर मुज्जिस (दोष पकाए गये) के सुस्वहल न लेना चाहिये । डाकूरी में इसका कुछ विचारही नहीं है, इसी से डाकूरी जुलाब यथार्थ गुण नहीं करता इस लिये हम आपलोंगों के उपकारार्थ दो बार साधारण २ जुलाब लिखे देते हैं कि जिनमें सेवाय फायदा के हानि नहीं है ॥

मुज्जिस हकीमी ॥

खीरा ककड़ी का बीज १॥ तोला, गुणयनप्या, गुणनीलोकर, गुलाब का फूल और काजू ये सब एक २ तोला, मुलेठी ८ भासा, उन्नाय १४ दाना आलूबखारा २० दाना, लसेड़ा २० दाना मुनक्का १५ दाना, सब दवा को

तब एमिड डाल शीघ्रही पी जाय । सोड़ा एमिड अंगरेजी दवा खाना में तो एक के आठ देना पड़ता है पर मौदागरे के यहाँ सोड़ा एक पीण्ड (आधसेर) ३॥ का और टाटारिक एसिड ४ औंस (आधपाव) ३॥ का मिलता है । एवं शीतल जल या बर्फ का पानी फायदेमन्द है, बर्फ का गुण प्रणाम अङ्क में लिख चुके हैं बहुत से लोग जानते हैं कि बर्फ की तामीर गर्म है जंघ-गरम है तो लोग जाड़े में क्यों नहीं पीते और शीत की बिमारियों में क्यों नुकसान करता है जानना चाहिये कि जो शीतल परिशुत जल (फिल्टर वाटर) का गुण है वही बर्फ का रहा यह कि ज्यादा ठण्डक की वजह से जल की अपेक्षा बर्फ का बिपाक किञ्चित अधिक गरम है ॥

दिन को तःस्थाने में या पटे हुये सफाई में और रात्रि को ओस में शयन करना गुण दायक है । दिन को शयन करना सेवाय इस ऋतु के और ऋतों में वर्जित है ॥

सर्व्वर्त्तुपुट्टिवास्त्रापः प्रतिसिद्धोऽन्यत्रयीष्मात् प्रतिपिहेष्व
पितुं वातुष्टस्त्रीकपितक्षत क्षीणमद्यनित्ययानवाहनध्वक्स्त्री
परिग्रान्तानामभुक्तावतां मेदःस्निदकफरसरक्तक्षीणानामजोर्ण
नांचमुहूर्तं (घटिकाद्वयं) दिवास्वपनमप्रतिसिद्धम् सु० गा
रीरवा अ० ४ ॥

निषेध में भी घालक, बटु, स्त्री क्षीणित कोड़ा से पीड़ित, घातुक्षीण वाला शराबी, घेड़े हाथी आदि की मयारी में या रास्ते का थका, भूखा, मेद पसीना रक्त और रक्त करके क्षीण और जिम्मे अजीर्ण का भना रहता है तो ये लोग दिन में दो चढ़ी सो सकते हैं ॥

दिवास्त्रापः प्रकोपाच्च कासस्त्रासेप्रतिश्यामशिरो गौरवाङ्ग
मर्हाऽरोचकाज्वरान्निदौर्वल्यानिभवन्ति ॥

दिन के सोने से मनुष्य को खांसी, स्यास, जुकाम शिर में भारीपन अंग में दर्द, अरुचि, उबर और शरीर दुर्बल हो जाता है ॥

रात्रावपिजागरितवतां वातपित्तनिमित्तास्ता एवोद्वेगा भवन्ति तस्मान्नजागृत्याद्रात्रौ दिवास्वप्नञ्चवर्जयेत् ॥

यही रोग रात के जागने से घात पित्त करके होता है इसलिये दिन के सोचना और रात के जागना वर्जित है—ऐसाही यदि जति जरूरत रात के जागने की पड़े तो (रात्रावपिजागरितवतांजागरितकाशादहुंमिप्यतेदिवास्थप्रः) चाहिये कि जितना कालतक रातको जागे उसका आधा दिन को शयन करे ॥

यह भी सद्य पर विदित है कि और ज्ञतों की अपेक्षा इस ज्ञतु में चण्ण प्रकृत वाले को अधिक श्लेश मिलता है अतएव सन्हीं के कल्याणार्थ कुछ औषध लिखे देते हैं ॥

छः मासा बिहीदाने को डेढ़पाव जल में एक मृत्तिका पात्र में भिजा कर रात को ओस में रखदे, सबेरे सूख गलकर लुगाव निकाल लेव याद उसमें एक तोला मिश्री डाल पहिले एक या दो आंवले का सुरङ्गा खा कर ऊपर से यही बिहीदाने का मरघत पी जाय । इसी प्रकार सबेरे भिजो कर किसी ठण्डे मकान में रखदे शाम को उक्त प्रकार सेवन करे । इसी प्रकार दो महीने बराबर पीने से शान्त दाह, एलदिल, पुगरी, समलयायु, निरंगी और बातों का अधिक विस्मृत होना जाता रहता है ॥

अन्यच ।

खीरा ककड़ी का बीज, घनियां, काहू का बीज, कुलफा, कासनी, गुलाम का फूल और सेवती का फूल दो २ तोला खस सफेद चन्दन का बुरादा कमल गद्दे की गरी, सौंफ, मिर्च एक २ तोला खोटी छायाची छ मासा सम को अधिकचरा कर दो दो तोले की मात्रा बना छे एक मात्रा को पावभर जलमें रात को भिजो सबेरे सूख गल करे खान कर दो तोला

चिनी छोड़ पी जाय, इसी प्रकार दोनों समय पीने से अधिक फायदा करता है ॥

पेटे का मुरब्बा ।

पेटे का गूदा दो सेर चीनी दो सेर, पेटे के टुकड़े २ बना कर बांस की गुदनी से गोद कर चूने के पानी में घड़ी भर डाल रखें फिर सफा पानी से धो कर किसी तांबे के बरतन में थोड़े से पानी में डाल कर जोस दे जब पेठा जाधा गलजाय उतार पानी से निचोड़ ठंडा कर लें । फिर घूरे की चासनी पकी कर उसमें उन टुकड़ों को डालकर थोड़ी देर तक जोस दे जब शीरा उनमें भरजाय उतार कर ठंडा कर लें । जब देखे शीरा बहुत पतला हो गया है तो उसमें से पेटे को निकाल चासनी को थोड़ी और गाढ़ कर उसमें फिर पेटे को डाल देय बाद इसके सकेद जीरा, धनियां, तेजपात इलायची छोटी, मिर्च, बंनलोचन दो दो तोला, जीर चांदी के बर्त २० सों को धूर्ण कर मिला अमृतघान में रख दे । इसको शान सवेरे खाने से रक्त पित्त ज्वर, ज्वरी प्यासीखांस, कासादि रोग छूट जाते हैं विशेष कर धातुहीन वाले को अधिक फायदा करता है ॥

ईश्वर ने मनुष्य के आरोग्य रहने के हेतु समय २ घर अनेक प्रकार के फलफलादिक उत्पन्न किया है चाहिये कि मनुष्य अपने निजाज के मुआफिक देख अवश्य थोड़ा बहुत रोज २ फलों को खाया करें इसलिये हम समय के फलों का भी कुछ गुण लिखे देते हैं

हिनवाना ।

इसमें कुछ निमक का भी अंश है सुख बीजवाले में कृष्ण बीजवाला हिनवाना उत्तम होता है, (गुण) दूसरे दर्जे का शीतल है इसका विपाक गर्म है धातु को क्षीण करता है और पित्त बहक एवं कफ वायु का नाशक है और कफ सांसी वाले को अधिक फायदा करता है ॥

खरबूजा ।

चतुर्थ श्रेणी में ठण्डा है, (गुण) वायु पित्त का नाशक एवं दिशा पेशाब साफ लाने वाला है विशेष कर सुष्णक वाले को अधिक फायदा करता है ॥

बेल ।

विशेष कर ग्रहणी और आमशूल को नाश करता है लेकिन बड़े बेल की अपेक्षा छोटा बेल किञ्चित्त गर्म है इसका और शीघ्र पचजाता है लेकिन स्वाद में कटु है ॥

फालसा ।

द्वितीय दर्जे का शीतल है स्वाद में कपाय और अम्ल है परस्पर पकने पर मीठा हो जाता है और खाने में भी मीठा ही फालसा गुण दायक होता है (गुण) दिल का चढ़कना घुमरी पियास अन्तर्दाह रुधिर की गरमी, गरम ज्वर (मात पित्त ज्वर) घातु क्षय इन रोगों को आराम करता है विशेष कर चीनी के साथ इसका शरबत बड़ा फायदा करता है ॥

प्राचट ऋतु

आपाढ़ और आयण महीने को प्राचट ऋतु कहते हैं ग्रीष्म ऋतु का संघम (संग्रह) वायु इस ऋतु में कोप करता है । इसलिये ब्राज कल वायु शमनकारी आहारादि करने से वायु बलहीन हो जाता है । घी, दूध, इत्यादि भोजन एवं यदन में सही लगा के कसरत करना अधिक फायदा करता है ॥

आम ।

इस ऋतु में ईश्वर ने मनुष्य के खाने योग्य एक उत्तम फल आम का

ऐसा उत्पन्न किया है जिसका प्रमंशा करना व्यर्थ है हम तो जानते हैं स्वर्ग में भी इससे बढ़कर फल न होता होगा । वैद्यक में आंम के गुण अधिक लिखे हैं, इसमें कुछ सन्देह नहीं है कि आंम के अर्थात् में अनेक प्रकार के गुण भरे हैं ॥

आंम का फूल ।

इसे छाया में सुखा चूर्ण कर घराघर की मिट्टी गिला इ मासा के अंदाज दोनों समय जल के साथ खाने से अंत्यार, प्रमेह कफ पित्त, अरुचि रुधिर एवं दृष्टि रोग आराम होता है । परन्तु केवल वायु दृष्टि रोगी को कम फायदा करता है ॥

आंम की गुठली ।

इसे आंम की गुठली के भीतर की गरी का चूर्ण, खांड या दही के साथ खाने से अमन अंत्यार और पेट का दाह हर लेता है ॥

आंम का पत्ता ।

आंम के मुलायम नमीन पत्ते के चूर्ण से कफ पित्त का नाश होता है, हमारे हस्तक संगल में इसका बन्धनवार बना कर चरमें बांधने से गृह की शोभा और देवता तक प्रसन्न होते हैं ॥

आंम पेशी अर्थात् अमचूर ।

इसका स्वाद खट्टा और कसायला है पर खाने से दस्त रोक और कफ वातको नाश करता है ॥

आंम की खटाई ।

यद्यपि खाने में कुछ घातु में विकार पहुंचाती है, पर छगाने से खजुली विशेष कर शकरी के मूत्र से या और कोई फदकीले जानघर के छु जाने से शरीर में जायला सा पड़ जाता है यह शीघ्र ही आराम होता है ॥

लंगाने की तरकीब ।

आंग की पुरानी खटाई २ तोला ढांक के पत्ते की द्विपुत्री १ तोला मिर्च १० दाना सबको महीन पानी में पीस वाद सी पानी का धोया हुआ घी छटांक घी में फेंट दोनों समय लगावे और एक मरतये रोज नौब के पानी से धो डाला करै ॥

आम का छाल ।

आम का अन्तर छाल २ तोला कुचल कर पावभर जल में रात को भिगा जोष में रखदे सवेरे नलकर खान २ मास शहद डाल ७ रोज पीने से रक्त पित्त अर्थात् मुख से या दस्त से या दोनों रास्ते से पित्त के साथ छेहू का गिरना अवश्य जाता रहता है ॥

अम्रातक अर्थात् अमावट ।

इसे इस तौर पर बनाते हैं कि पके आंग के रसको किसी काष्ठ या पत्थर आदि पिकने पात्र पर फैला के घाम में सुखायें, ऐसे कई बार सुखा २ के जमाता जाय उसीको अमावट कहते हैं । अमावट को लोग कई तरह से खाते हैं, इसका गुण, रेषक रुधिकारी, हलका और पाचन है एवं खर्दि विपासा और मात पित्त का हरने वाला है ॥

कच्चा आम ।

कच्चा आम बहुत सड़ा रुखा त्रिदोष और रुधिर में विकार उत्पन्न करने वाला है इसके कच्चा आम खाना अच्छा नहीं, लेकिन इसी आम से जब दूसरा पदार्थ बनता है तो उसका गुण औरही हो जाता है जैसे आचार आदि । आम का आचार तेलहा और नुनहा एवं आम का मुरखा और आम का सिरका यह सब लोग बना सकते हैं और इन चीजों का खाना भोजन के मध्य में उत्तम होता है खाली पेट आचार खाना अच्छा नहीं है ॥

सास ।

यह अंगरेजी आचार है और अंगरेजों में इसका खर्च अधिक रहता है, पाने की तरकीब यह है कि हरे आम की छिली हुई फांकी आधसे तमक ५। चिनी ५। = डीला अदरक ५। किसिम ५। लाल मिर्चा आधी छटांक निखालिस सिरका ५।। सिरके में सब चीज को घीम कर किसी बरतन में भर मुख बन्द कर १५ या २० रोज तक घाग में रखे फिर उस को निचोड़ कपड़े में खान बोलत में भरले और जब किसी खानेको मजे दार करना हो तो उसमें से दस पांच बूंद डाल दे ॥

आम की जेली ।

तरकीब यह है कि दो सेर कच्चे आमों को छील के गहरी कतरले डेढ़ सेर पानी में इतना पकावे कि यह सूख गलजाय, जब देखे कि आधा पानी रह गया है उतार ले और धीले रंग के फलालेन के कपड़े में जिस प्रकार कुसुम बुआया जाता है उसी प्रकार खाने वाद टपकाये हुये अर्क के बराबर मिश्री या चिनी डाल घासनी पकाले और चिनी के बरतन या धीड़े मुख की बोलत में भर कर जमावे यह यह मजेदार चीज है खाने से मन प्रसन्न हो जाता है ॥

आम की चटनी ।

क्या आम छीला हुआ एक सेर शक्कर १ सेर तमक ५। लाल मिर्चा ५। अदरक ५। सूखा सुदीना ५। सिरका ५। सब चीजों को सिरका में महीन पीस किसी आचार के बरतन में पांच छ रोज घाग में रखदे बाद खाने के काम में लावे ।

आम का पाक ।

पपके और सीठे आम का रस १६ सेर मिश्री ४ सेर ची १ सेर तीनों को एक कलईदार डेग में डाल घूँहे पर चढ़ाय मन्दागि से पचावे जब

सूय गाढ़ी यासगी हो जाय तब उत्तार शीतल कर उसमें यह दवा डाले मिर्च, धनिया, सफेद जीरा, तेजपात, दालचिनी, नागकेशर, छोटी लायची, बंसलोचन, अकरकरहा, यह सब दो २ तोला छोटी पीपर, लौंग, और जायफल यह सब एक २ तोला केशर ६ मासा कस्तूरी १ मासा चांदी का धक ३० साथ सहत ५। सब दवा को पीस उक्त घासनी में तिलाप अमृतघान में रसदे । एक छटांक सबेरे और एक छटांक शाम को खा, के ऊपर से दूध पीने से शरीर पुष्ट और स्वास कास आदि आराम होता है पक्का जान खाके ऊपर से दूध पीना अति गुणकर होता है ॥

जल ।

मनुष्य, पशु पक्षी कीट पतङ्गादि सभी जीव पानी की इच्छा रखते हैं और ईश्वर रचित द्रव्यों में से जल यह वस्तु है कि जिसके बिना जल भर जिन्दगानी नहीं रह सकती इसी तरह जीव से अन्य जड़ पदार्थ वृक्ष जला गुहम, वृणादि यह भी जल के बिना ब्याकुल हो जाते हैं और जल न पाने से शीघ्रही समूल नष्ट हो जाते हैं, इसी से वैद्यक में जल का प्रधान भाग जीवन रक्षक है "पानीयं प्राणिनां प्राणविश्वमेव च तन्मयम्" आहार के बिना तो कुछ काल प्राण रक्षा हो सकती है परन्तु जल के बिना जीवन रक्षा बड़ीही कठिन है । यह तो जल का अभाव हुआ, जल के प्राप्ति समय में भी यदि कुटित या मिथ दूषित जल मिला तो भी जीवन का बिनाशही समझिये, क्योंकि ऋतु के विपर्यय अर्थात् शीतकाल में गर्मी और वर्षा काल में शीत होने से एवं अन्य २ कारणों से भी जल मिश्रित होते हैं और बगड़े जल के व्यवहार से शरीर में अनेक रोग हो जाते हैं ॥

यह तो सभी जानते हैं कि भूख मारने की अपेक्षा प्यास मारना कठिन काम है । पर क्यों कठिन है और प्यास क्यों लगती है ? इसका कारण यह है कि शरीर में जो चैतन्यता है वह रुधिर से है और वही रुधिर निरन्तर संपूर्ण शरीर की शिरा (भेड़न) और मूल २ सायुगों

(नभं) में दीरा करता है सो इमी गति के हेतु में रुधिर का जठ्रीय ग्रंथ कग हो जाने से घन हो जाता है तब उस गति को समंजस करने के लिये रुधिर में फिर जन्तम बढ़ाना चाहिये, यम इमी क्रिया से रक्त में सुनही पहुँच कर मनुष्य को प्यास मालुम होती है । यह तो सिर्फ स्वाभाविक प्यास है इसमें भिल और २ कारणों में भी रक्त का जलांश कम होने से तृष्णा लगती है । यथा, थूँह के अधिक गिरने से पमीना निकलने रोने और आंसू बहाने में एवं गर्म और अधिक सार पदार्थ के खाने से इसी तरह सोच, क्रोध, पिन्ता, कसरत और रास्ता चलने से जल पीने की इच्छा होती है ॥

सघी प्यास लगने पर पानी पीना अच्छा है परन्तु बहुत सी जगह अपय्य भी है चैने रात्रि में उठि २ के पानी पीना नजला पैदा करता है, फल आदि जैसे खर्जूर, तर्बूज आनरूद खीरा कल इत्यादि अनेक प्रकार के ऐसे फल हैं जिन्हें खाकर ऊपर से जल पी लेना खांसी और अजीर्ण रोग होने का डर है और बच्चों के लिये तो बहुत ही मना है, इसी तरह मैथुन और कसरत करने के उपरांत, बहुत मेहनत या रास्ते का चका हो तो पानी न पी ले क्योंकि इससे नाड़ियाँ निस्तेज हो जाती हैं । दगने हिकमत की किताब में यह लिखा देखा है, मनुष्य को उपचित है कि मैथुन (स्त्री प्रसंग) के उपरांत जल पी लिया करे, बीय्ये नागिन्द ची के है और समान जिस्म में रहता है यस्त मैथुन के गर्मादत पाकर वह पतला और चलायमान हो जाता है सो जल पी लेने से फिर यह गाढ़ा और ठंडा हो जाता है । पाठकगण, वैद्यक शास्त्र में मैथुन के उपरांत जल पीना अति हानि दायक लिखा है परीक्षा से यहाँ तक सिद्ध हुआ है कि यदि मैथुन के तत्क्षण उपस्थि को जलसे न धोकर ठंडा से पीछ लिया करे तो उत्तम है कारण यह है कि उस समय वह स्थान अति उष्ण रहता है इससे जल शीघ्रही भीतरी नसें में जाय उसे निबल और निस्तेज कर देता है मैथुन के उपरांत क्या २ करना चाहिये उसे मैथुन के प्रसङ्ग में लिखेंगे ॥

अति दुधा में बिना कुछ भोजन के जल पी लेना अपय्य है अर्थात्

अग्निमन्द हो के उदर रोग होता है । एक दिन में कई गगह का जल पीना चाहिये जिस कुये या नदी या तालाब में छोटे २ कीड़े पड़ गये हों या कूड़ा करकट के गिरने से पानी सड़ गया हो या जिस कुये के समीप सड़ास हो तो उसमें का पानी न पीना चाहिये ॥

आज कल के रोगों के देखने से मालूम होता है कि मनुष्यों को स्वच्छ जल पीने को नहीं मिलता है सैकड़ों प्रकार के रोग मनुष्यों अष्ट जल पान और दुष्ट वायु के सेवन से होता है, सब से उत्तम जल नदी का है सो नदी के जल पीने वाले भी प्रायः म्रियारही रहते हैं, इसका भी समय बड़ी है, एक तो नदी और तालाबों में अनेक अस्वास्थ्य कर द्रव्यों के साथ जल ऊपर से बहकर जा मिलता है, दूसरे नदियों में गलीज कूड़ा और मुर्द, अप्रगले मुर्द, और जले हुये मुर्दों की राख हा-ली जाती है, तीसरे जिस घाट से पानी पीने के लिये लेते हैं वहीं या उसके थोड़े ही दूर पर लोग नहाने धोते औ जानवरों को गहलाते हैं और धोबी कपड़े धोते हैं, चौथे आज कल प्रायः उन घाटों में जहां कि लोग नहाने धोते और जल पीते हैं तमाम शहरों के नाबदानों का पानी बह कर जाता है । इसी तरह अनेक विधों से कुएं का भी पानी मि-गड़ जाता है, जैसे कुयों के समीप सड़ास और मेरियों का होना पानी को गन्दा करता है, कुवों में मुँहेर का न होना जिस्से बरसात का मैला पानी चला जाता है, बाजे २ कुवों के पास जानवरों का पानी पिछाने और सहक छिड़कने के हीद बने हैं उन हीदों का गन्दा पानी सूक्ष्म २ सूराखों से होकर कुयों में रसा करता है; फिर कुयों का मुख खुले रहने से पास के वृक्षों के पत्ते उड़ कर उसमें गिरते हैं और भूस चुइस छिपकिली वगैरह जानवर भी गिर पड़ते हैं फिर अन्तर कुवों की जगह पर लोग नहाने और गलीज कपड़ा ऐसे ढंग से पछाड़ते हैं कि तमाम छींटा फुल में जाता है, उक्त सब कारणों से कुयों का पानी गन्दा हो जाता है ॥

ध्यान देकर देखने और परीक्षा-लेनेमें ज्ञात हुआ है कि भारत वर्ष में यात पैत्तिक ज्वर, बिभूचिका, रक्त आमातिसार, स्त्रीपद (हाथीपांव)

और अणुवृद्धि (पीते का मूलन) गलछा, जादि और भी बहुत से रोग हैं जो विशेष कर जलही के दोष से होते हैं ॥

भोजन के मध्य में प्यास लगने पर घूंट दो घूंट जल पी लेना अच्छा है परन्तु श्लेष्म प्रकृत वाले को जहां तक हो सके भोजन के अन्त में जल पीना उत्तम है । भोजन में एक रस के अन्त और दूसरे के प्रवेशमें (जैसे नींठा खाने के बाद नमकीन पदार्थ का खाना) पूर्ण रस को जिह्वा से छुड़ाने के हेतु यदि लप्या हो तो एक घूंट जल पी ले नहीं तो सिर्फ जल से कुंजा कर डाले क्योंकि "विशुद्धरसनेतस्मै रोचतेऽन्नमपूर्यवत्" इस तरह करने से जिह्वा शुद्ध रहती है और जो २ पदार्थ खाये जाते हैं उनका यथार्थ स्वाद मिलता है । जो लोग भोजन के सकल अधिक जल पीते हैं उनका पेट बड़ जाता है और अग्नि मन्द हो जाती है । भोजन के बीच में थोड़ा जल पीने से अग्नि तेज होती है अन्त में पीनेसे अंग पुष्ट और ताकतवर होता है । भोजनके कुछ देर बाद बारम्बार थोड़ा २ जल पीने से शीघ्रही आहार पच जाता है ॥

जलका नाम ।

जल, पानी, सलिल, नीर, कीछाल, अंबु, जाप, बार, बारि, तैय, पय, उदक, जीवन, अमृत और चरस यह पंद्रह जल के मुख्य नाम हैं "पयानाम तथागुणः" जैसा नाम है वैसाही जल में गुण भी हैं ॥

सर्वसाधारण जलका गुण ।

धूमरी अम आंख के सामने अधियारा का होना, प्यास, तंद्रा (आंख जपा रहना) यमन अजीर्ण और अति निद्रा को दूर करता है एवं थल को बढ़ाता है तर्पण, हृदय को हित और रस का कारण तथा अमृत के समान जीवन है ॥

तालाव के जलका गुण ।



उत्तम भूमि में हमेशा जिसमें जल बना रहता है वह तड़ाग (तालाव) कहलाता है । तालाव का जल स्वादु में कषायल पाक में कहुआ और वायु का बढ़ाने वाला एवं मूत्र और बिष्टा के बांधने वाला होता है और रक्त पित्त को नाश करता है । यही कारण है कि जो तालावके जल पीने से अजीर्ण हो जाता है और स्नान करने से शरीर खजुवाने लगता है, समझ है कि यदि अङ्गदेश वाले यदन में तेज द्रवी मल के स्नान न करें और अधिक तेज न खांम तो उनकी जीयन ही कठिन हो जाय क्योंकि वहां तालावही में लोग नहाते धोते और वही का जल पीते हैं याद रखना चाहिये कि चापत किसी समय पर सेवाय तालाव के दूसरा जल पीने को न मिले तो अवश्य औषधियों के द्वारा जल शुद्ध कर लेना उचित है ॥

बावली ।

पत्थरों या ईंटों की सीढ़ियां जिस चीड़े कुये में नीचे तक बसाई जाती है उसको बापी (बावली) कहते हैं जो बावली का जल खारा होता है तो पित्त को वृद्धि कर शीत वायु को नाश करता है और सी-टां होने से कफ, कृत और वायु पित्त का नाशक होता है ॥

कुआं ।

जो जमीन में सफड़ा मोल और गहिरा खोदा जाय जिस में की पानी निकल आए चाहै पक्का हो या कच्चा उसे कूप (कुआं) कहते हैं । जो कुयों का जल मीठा हो तो हलका और त्रिदोष नाशक एवं अग्नि और बल का वृद्धि करने वाला और मनुष्यों को अति हितकारी होता है और खारा होने से अग्नि मन्दादि अनेक रोग का करने वाला होता है ॥

धुमरी, जी मघलाना, धुमां सा हकार आमा, यमन और-रक्त पित्त इन रोगों में जरूर ठंडा जल पिलाने से उपकार होता है ॥

शीतल जलका निषेध ।

पञ्चली की दर्द में शीत युक्त वायु रोग में गर्ले के दर्द में, हिचकी में, उदर शोथ और नवीन उवर में शीतल जल न देना चाहिये ॥

अति जल पीनेका निषेध ।

अरुचि जुकाम सन्दाग्नि कीड़ मधु प्रमेह (जिस भूत पर मच्छी छै ठती हैं) कोड़ा, उदर रोग उवर और नेत्र रोग इन रोगों में जल बहुत ही थोड़ा २ पीना योग्य है और बहुत जल एक बारगी पीलेता तो किसी अवस्था में सेवाय हानि के लाभदायक नहीं होता, क्योंकि उपादा नि-
कृदार जल के पीने से अन्न का परिपाक नहीं होता और जब अन्न ही नहीं पचा तो बिनारी न पचनेमें या कोई नवीन बिनारी खड़ी होजाने में क्या असम्भव है । अनुप्य को उचित है कि जठराग्नि के बढ़ाने के लिये थोड़ा २ जल आरम्भार पीये । प्रायः देखने में आया है कि अज्ञान लोग रोगियों की चित्त छेदे गी भी जल पिला देते हैं सोचना चाहिये क्योंकि "उत्तानशयनेपेयंकाश्यंमग्निदेपकत् । आसदक्षिणपार्श्वेनपिबेत्तोयंमुखा सह" उत्तान सोये जल पीने से दुर्बलता और सन्दाग्नि आदि दोष बढ़ता है यदि और दहिने करवट जल पीने से आरोग्य लाभ होता है ॥



अदभुत ।

बहुत सी तरकीबें ऐसी हैं जिनकी करामात से एक प्रकार का ति-
लस जान पड़ता है । पर तिनका ओंठ पहाड़ही है जब तक उम तत्व की लोग सम्पूर्ण रूप से नहीं जानते तब तक उन्हें अवस्था मालुम होता है, जहां जानगये फिर क्या यही कहेंगे याह तिनका ओंठ पहाड़ ॥

पानी से सूखा बालू निकालना ।

साफ किया हुआ बालू या भाभूजे का बालू या पत्थर को कूट कर पड़ छान कर तीनपाय लेवे । एक छटांक मेंम को गला उसी बालू में डाल ऐसा मल दे कि मोम बिलकुल न मालूम हो, बाद किसी बरतनमें भर कर रखदे । जब किसी को दिखलाना हो तो एक चौड़े मुह का बरतन (जिसमें बन्धी मुट्ठी अंच्छी तरह आ जा सके) ले पानी भर दे । पहा पर घोड़ी चालाकी चाहिये बालू को मुट्ठीमें भर मुट्ठीको उक्त पानी के अन्दर ले जाय चुपचाप बालू को रखदे कि बालू की पिण्डी न फूटने पावे ऊपर से पानी को गन्दलो दे ताकि लोनों को मालूम हो जाय कि बालू पानी में मिल गया तब हांप को पानी से निकाल सबको देखा दे फिर पानी में हांप डाल आहिस्ते से उसी बालू की पिण्डी उठा कर या हर लाय सबके सामने मुट्ठी के एक कोने से बालू झरझरा दे ॥

बिना आग के आग बल उठे ।

होरो पुटास और चिनी दोनों बराबर ले एक में मिला दे किसी कागदार सीसी में रखदे, जब किसीको दिखलाना हो तो घोड़ी सी वही दूधा निकाल उसमें किसी ठण्ड से एक बिन्दु गन्धक का तेजाब डाल दे, उस तेजाब के डालतेही बल उठेगा ॥

अदृष्टाक्षर ।

अगर चूने से सफेद कागज पर लिख कर सुखादो तो कुछ न पढ़ा जायगा, परन्तु जल में डालने से अग्न अक्षर सफेद देख पड़ेगे ॥

दूसरा ।

पूर्वोक्त प्रकार दूध से लिख कर सुखावे, पानीमें डालनेसे नीले रंग के अक्षर देखने लगेंगे ॥

तीसरा ।

नीसादर, नीबू या पिपाज या लहसुन के रससे सफेद कागज पर लिख कर सुखा ले, आंघ दिखाने से सुखे रंग के अक्षर देख पड़ेंगे ॥

चौथा ।

मदार के दूध से हथेली में लिख कर सुखा ले कुछ भी न मालुम होगा, जब दिखलाना हो तो थोड़ी सी राख लेकर हांघ में मल ले सय काले रंग के अक्षर देखने लगेंगे ॥

मोम की बत्ती आपी आप वालने की विधि ।

एक मोमबत्ती के सिरे पर कार्बोस (यह एक दवा है हड्डियों के खार से बनती है) मद्य में घिस कर लगादो फिर रख छोड़ो देखाने के समय एक बिज्जीर की छड़ी एक तरफसे गरम कर बत्ती के ऊपर मारो और कहो जल उठ तो यह बत्ती खुद मखुद जल उठेगी ॥

बिज्जीर की छड़ी में यह सुधीता है कि यह गरम भई मालुम नहीं होती है ॥

वरतनपर चांदीचढ़ानेकी सहज विधि ।

चांदी का बर्त ५ मून्नी फिटकिरी १५ रत्ती नीसादर १५ रत्ती सेंधा नमक १५ रत्ती तीनों को खरल कर किसी जीशी में रख दे जिस वरतन पर चांदी चढ़ाना हो उसे सूय मांजि कर चमका ले याद रखी पीछर से सूय मल दे, पर यह कलई कच्ची है ॥

पीतल तांबा आदि वस्तुओंके साफकरनेकी रीति ।

छोटी २ चीजें जैसा कि घड़ी के पुरजे चैन और वस्तुहों उन्हें चिमटी से थोम नाइट्रिक एसिड में डुबो शीघ्रही पानी में बुझा देय घसकने लगेगा ॥

कांच की चीजों का बराबर तोड़ना ।

गिलाश शीसा या मोतल बगैरह जहां से तोड़ना हो वहां रीती से जरा निशान करदे फिर एक छोड़े की सलाई सूख गरम करके उसपर फेरें तो ठीक बराबर जगह से यह टूटेगी ॥

दूसरी तरकीब ।

जहां से तोड़ना हो उस स्थान को थोड़ी सी इस्चिपटें या निही के तेल में घुत का होरा तर करके बांध दियासलाई से जला दें जब थल कर घुत जाय तो वहां पर जरासा पानी डाल दें ठीक उसी जगह से टूटेगी ॥

ऐने पर कलई करना ।

जिस कदर बड़ा ऐना हो वतनाही बड़ा साथ शीसे की पत्ती जो पत्तियों को दूकानों में मिलती है सेंगले एक चिकने पत्थर पर कि जिसमे बाल समान भी कहीं रेखा नहीं हो क्योंकि जो कुछ करामात है यह पत्थरही में है जकसर कलई करने वालों के पास पत्थर बहुत संगदा रहता है । उसी पत्थर पर पन्नी को फेला दे और उसके ऊपर थोड़ा पारा (जितने में कि संगस्त साथ में फैल जाय) डाल कपड़े की मोटली से चारो तरफ फैला दे उस ऐने को ले एक तरफ से उसी पन्नी पर सरका दें और उठा ले यह पन्नी शीसे को अच्छी तरह धोती लेगी और मुख दीखने लगेगा । इसकी

कारखाना देहली और कलकत्ते में बहुत है और इस काम के करने वाले प्रायः मुसलमान हैं यहां भी दो तीन मुसलमानों की दुकानें हैं चाहिये कि हमारे एक जाध हिन्दू भाई भी दुकान कर लें ॥

तांबे के डेकची आदि पर कलई करना ।

जिस बरतन पर कलई करना हो उसे इटकोहरा (पक्की ईंट का रवादार चूर्ण) और इमिली या आंम की खटाईसे सूख मांजे ताकि जरा भी नैला न रहे और बरतन घमकने लगे, तब उसे अग्नि पर रख सूख गर्म करे (ऐसा गर्म हो कि उसमें रांगा छालने से गल जाय और फैलाने से फैल जाय) तब उस गरम बरतन में रांगा छाल घम के गलायले, याद इसके बरतन के चारो तर्फ नौसादर की बुकनी छोड़ कपड़े से गले गुंये रांगे की जहां तक कलई करना हो आहिस्ते में चारो तर्फ जोर देय बस बहुत उत्तम रवेत और घमकदार कलई हो जायगी । इस काम के करने वाले सिर्फ मुसलमान ही लोग हैं और मुसलमानों के अतिरिक्त हमारे हिन्दू भाई विशेष कर कायस्थ और काश्मीरियों के यहां तो अवश्य ही कलईदार बरतन रहता है और कलईदार बरतन कहीं निषेध भी नहीं है और न वैद्यक मत से कलईदार बरतन में खाना पकाना बना है पर हिन्दू लोग अपने खाने पीने का बरतन मुसलमान को नहीं छुलाते इस लिये हर एक शहरों में एक दो हिन्दुओं की दुकान होनी चाहिये ॥

जरमन सिलवर ।

३ भाग दस्ता धातु, दो भाग तांबा और तीन भाग निकेल यह भी एक प्रकार चांदी की आकार धातु है और बड़े २ खीदागरों के यहां मिलता है उक्त तीनों धातुओं को एकत्र कर गला देने से जर्मन सिलवर बन जाता है ॥

पुटीन ।

आलमारी याफस और कियाड़ आदि के दराज या सांस को बन्द करने के लिये पुटीन तैय्यार की जाती है इसके बनाने की बहुत सी तरकीबें हैं परन्तु सर्व साधारण कार्य के लिये यह उत्तम है । पहिले थोड़ा सा टीनी का तेल अग्नि पर सूख पका ले बाद उसे अग्नि पर से उतार शीतल कर ले, अन्दाज नाफिक जितने में तेल घन हो जाय छिलने की खरी बूक कर मिला दे और एक काष्ठ पर रख एक लोहे की द्योड़ी से सूख पीटे की पीटत २ अति कोमल हो जाय तब काम में लावे ॥

दो द्रव्यों के संयोग से अद्भुत पदार्थ का बनना ॥

असंख्य द्रव्य ऐसे हैं कि जो एक दूसरे के साथ मिल जाने से अति आश्चर्यित और बहुत से गुण गमित पदार्थ बन जाते हैं जैसे घूना और नीसादर । इन्हें भिन्न २ सुझने से नाक की कुछ भी कष्ट नहीं साधुम होता पर इन्ही दोनों को एक में मिला देने से इसमें ऐसा एक प्रकारका तेज उत्पन्न हो जाता है कि लोग उसको नाक के पास तक नहीं ले जा सके अंगरेजी में इसीको "इमेनिया" कहते हैं । परन्तु यह लोग इसको बड़ी सफाई के साथ तैय्यार करते हैं । नीचे लिखी हुई रीति से मिलाने में भी वैसाही तेज और यही फायदा होता है परन्तु इसकी तेजी थोड़े ही काल में जाती रहती है । खाने का घूना शुद्ध हुआ और नीसादर दोनों सम भाग में एकत्र कर किसी कागदार सीमी में बन्द करले । यदि कोई आदमी किसी कारण से वेहेरा हो गया हो या शीत से दांत बैठ गये हों तो इसके सुझातेही होश में आ जाता है । जिस स्त्री को भूत प्रेत चुड़ैल लगेहों और बड़े २ झाड़ फूंक वालों से भी न फूलती हो तो इसके सुझा देने से खीरन तोबा करने लगेगी और कहेंगी मैं कलनियां बन जाती हूं अब भूत प्रेत चुड़ैल सब भय जायगे । परन्तु यह भी याद रखना चाहिये कि तीन मिण्ट से अधिक देर तक किसी को न सुझावे

और बालकों को किसी अवस्था में न सुझानी चाहिये । एवं उस आदमी को भी न सुझाये जो किसी नशा के खाने से बेहोश हो गया हो । एक विशेष बात परीक्षाओं से और भी सिद्ध भई है कि जो बिहेश रोगी इस के सुझाने से होश में नहीं आया तो फिर उसका होश में आना बहुत कठिन है ॥

उन्हीं उक्त दोगों पदार्थों से पानी भी बनाया जाता है जिसको अंगरेजी में "एमोनिया वाटर" बोलते हैं और उसी अर्कको स्प्रिट के साथ मिलाने से स्प्रिट एमोनिया" कहलाता है और मोल लेने से अंगरेजी दवा खाने में ॥) का एक औंस (ढाई तोला) मिलता है ॥

लेकिन यही अर्क यहां भी तैयार हो सकता है । उसकी तरकीब यह है कि नया चूना एक सेर पानी में मिगा दे और दूसरे एक बासन में आधसेर नीसादर को तीन सेर पानी में मिला के जोश दे जब खूब गर्म हो जाय तब उसीमें चूने का पानी भी डाल दे बाद ठंडा हो जानेके उस पानी को आइस्ते से थोरा २ चढ़ेल ले फिर उसी थोरे पानी को डेग में भर धीमी आंच से आधसेर अर्क टपकावे । इसका सादा २० ग्रिन्दु से ६० ग्रिन्दु पर्यन्त है । सूखों रोग में और सांप के काटने में डाक्त्री पिकित्ता की यह प्रधान औषधि है आध घंटे पर उक्त विमारी में इस दवा के पिलाने से शीघ्रही फायदा होता है । एक तोला एमोनिया वाटर को ६ तोला सरसों के तेल में मिला के गले के सूजन से अधिक फायदा करता है । नीसादर और चूना इन दोनोंका गुण अलग २ भी अनेक रोगों पर है लेकिन येद्वययोग इसका गुण बहुत कम जायते हैं ।

हैजा ॥

इस विमारी का नाम सुनते ही सगय शरीर के रोग राड़े हो जाते हैं और देह भर २ कांपने लगती है । हां ।। ईश्वर ने फिरे २ एक २ रोग कराल महाकाल के समान मनुष्य के इस छोटे से जीव के हरणार्थ उत्पन्न किया है कि जिसके चंगुल में फँस कर इस असार संसार में पल

भर, को पादस्थिति करना दुष्कर हो जाता है। आज कल प्रायः देखने में आता है कि हमेशा ऐजे का राज्य किसी न किसी देश में बना ही रहता है। फिर विशूचिका (ऐजा) महाराजों की कृपा कंटाक्ष रोगियों पर ऐसी रहती है कि यदि रोग प्राप्त काल में सद्बैद्य या डाक्टर न मिला जट पट घास कर डालती है। पीछे एक भी किसी की दाल गलाई नहीं गलती। चाहे अमृत का चढ़ा क्यों न हाथ में लिये हो बस कर मल २ कर रोना और कहना कि एय अमुक डाक्टरी दवाखाने की दूरी सीसी पिलाई जाती तो जरूर बच जाता समय चूक फिर दवा प्यताना। इस बيمारी के सव्यन्ध में बिलायत वालों ने कई मतये आंदोलन किया और बड़े २ मध्य एडोपेयिक तथा हेगियोपेयिक डाक्टर मद्योद्यों से अनुसंधान किया कि कोई ऐसा उपाय या औषध प्रकाश की जाय कि जिससे संक्रामक रोग अर्थात् विशूचिकादिक रोगों की उत्पत्ति बहुत कम हो और इससे मरने न पायें। इसके उत्तर में डाक्टरोंने भेलाभांति से परीक्षा करके कहा है कि सेवास नपाई और धूम द्वारा दूषित विष वायु का निराकरण। एवं रोगियों के मल मूत्र द्वारा रोग न फैलने पायें और उपाय नहीं है। प्रत्यक्ष भी है कि आज तक किसी वैद्य डाक्टर और एकीन द्वारा कोई ऐसी निश्चय उपाय नही पधि न निकली कि जिससे रोगी बचही जावे और यही औषधि देश विदेश गांध गैबई जहां वैद्य डाक्टर गुलर के फूल हैं सर्वत्र बटवा दी जाती कि जिस से रोगी इस महामारी के पद से लतगदैन न होने पाते ॥

एंग निस्सन्देह कह सक्ते हैं कि जैसा आज कल संक्रामक रोग (जो रोग छुईलूत और बदमू से फैलते हैं) किसी न किसी स्थानमें बनाही रहता है। ऐसा उपद्रव पूर्व काल में कभी न था। इसका मुख्य कारण यही है कि जगले जमाने में यहाँ जंगल इस कदर थे कि जिससे वह दूषित वायु जो मनुष्यों के स्वास द्वारा निकलता है सब धुतादि खींच लेते थे इनसे हवा साफ बनो रहती थी। दूसरे दुष्ट और निपिह गांसा दारी बहुत कम थे इससे मनुष्य के शरीर से दूषित वायु भी नहीं निकलती थी। विवेचित भया है अधिक गो गांसादि दूषित गांसाहारी

मनुष्यों के शरीर से जो पसीना निकलता है वह निहायत बदबूदार होती है जिससे कि जहरीली वायु (मलेरिया) होने का सम्भव है । यदि कोई यह कहे कि अगले जमाने में जब कि बहुत जङ्गल या उन जंगलों में लाखों दुर्गन्धित जानवर शेर भेड़िया रहते थे और हजारों गौ भैंस आदि जीवों को खाते थे और नांस छड़ियां वहीं पड़ी सड़ा करती थी कि जिससे बड़ा भयानक दुपित वायु उत्पन्न होता था तो उसमें क्यों नहीं संक्रामक बिमारियां पैदा होती थीं ? मत्स्य है पर ईश्वर ऐसा दयालु और सर्व शक्तिमान है कि उन जङ्गलों में अकस्मात् अंधड़े के वेग से परस्पर बांस आदि वृक्षों की डालियां रगड़ जाना से अग्नि लग जाती थी और वहां के जानवर दूसरे जंगल में भाग जाते और बहुत से वहाँ जल जाते थे ॥

तीसरे इस आर्य्यावर्त में मुर्द भी सेयाप जलाने के फेंके या गाड़े नहीं जाते थे । आज कल गाड़े जाने के बजे से लकड़ों बिगड़ा जमीन बिगड़ गई और उस जमीन की हवा बिगड़ कर लोगों के शरीर में रोग उत्पन्न किया और यही हवा भूत प्रेत पिशाच के नाम से प्रसिद्ध हो पड़े २ बिद्वानों की बुद्धि को भी बिगाड़ दी ॥

चौथे आज कल प्रायः गांधों के निकासों में मरे हुये जानवरों की हड्डियों का ढेर लगा रहता है जो सड़ा कर हवा गन्दी कर डालती हैं । पांचवे हर एक शहर के बाहर थोड़ेही दूर पर बंजुलसों के मैलों का गड्ढा भरा रहता है कि जिसकी दुर्गन्धि आधे २ मील तक जाती है और रेंट सपरा आदि पकावे भी जहाँ लगे रहते हैं कि जिनमें हड्डी और बहुत सी निकम्मी बदबूदार चीजें पड़ती हैं और वे लपक के साथ न जल कर केवल चारोओर धुआंकारी मचावे रहती दे कि जिसकी दुर्गन्धि मनुष्य को असक्त रहती है ॥

उठें पूर्व काल में यज्ञ होम अधिक होते थे जिससे कि वायु में सुगन्धित पदार्थों के परिमाण मिल कर हवा हमेशा स्वच्छ रहती थी । यद्यपि अब सगर्ह का बन्दोबस्त अच्छा है पर उपरोक्त रीति से न होने

के कारण दिन २ संक्रामक रोगों की वृद्धि होती जाती है और इस पर गवर्नेमेंट भी ध्यान कम देती है ॥

इस प्रकरण के उठाने का मुख्य अभिप्राय यह है कि हमारे पड़े लिखे देशी गण सचेत हो आधुनिक बाह्य सफाई ही में न भग्न रहें अपितु विनायती सम्पत्ताही पर न लट्ठू रह कर अपने पूर्वजों की सत्-क्रियाओं को भी देखें सुनें और हमारे आयुर्वेद से हैजा आदि संक्रामक रोगों से बचने के नियमों को याद रखें और हैजा प्राप्त होने पर जब तक अच्छा सत घेद्य या देश कालज्ञ हकीम हात्तर न आ जाय तब तक उसके रोकने का उपाय करता रहे । क्योंकि बहुत से स्थान ऐसे हैं कि जहां कोई भी चिकित्सक नहीं है यदिही भी तो कोस दो कोस पर जब उसे एक आदमी बुलाने को गया और घेद्यराज न मिले कहीं चिकित्सा करने गये हैं जब वह आदमी यहीं ठहर गया कि घेद्य जी को संग ले के चलें उधर जति काल होने से दूसरा भी आदमी चला तब रोगी और घबराने लगा । चिकित्सक को जाते २ पांच चार घंटा या इस्से भी कुछ अधिक काल लग गया तब तक में रोग चतुर्गुण हो रोगीही इस असार संसार को परित्याग चला । इस लिये वह रोग ही न होने पाये ऐसा उपाय सर्वदा करना चाहिये, वह उपाय सब से मुख्य सफाई है जिसके घेद्य हाकुर और हकीम सब प्रकार के चिकित्सक खराग मानते हैं ॥

सफाई ॥

१ मकान की आंगनाई कुछ बड़ी हो जिसमें धूप और हवा आ सके नावदान एक कोने में और पक्का हो जिससे पानी कढ़ाके से निकल जाया करे ॥

२ पाखाना यदि सफाया अर्थात् गहिरा कुप सा हो तो हर महीने में दो तीन सेर खारी निमक या चूना या रेह गहरी डाला करे और पाखाना या सुह्दी हो तो पंद्रहमें रोज कारबोलिक के पानी या चूने के पानी से धुला दिया करे ॥

३ आंगनाई में या दरवाजे में दुर्गन्धित गंदीली चीज़ या ऐसी चीज़ जिस से भी सचलाने का सम्भव हो न पड़ी रहनी चाहिये ॥

४ सद्यः अमीर गरीब को उचित है कि दरवाजे पर या जहाँ उचित समझें वया शक्ति यदि फुलवारी लगाने की शक्ति न हो तो फूलों के गमला छोड़े बहुत अवश्य रखें । यह जो तुलसी का पेड़ हमारे यहाँ बड़ा पूजनीय है यह हमी अफाई का प्रधान अङ्ग है । इस पर दुर्गन्ध आकर्षण की शक्ति अधिक है इससे इसको घरमें अवश्य रखना चाहिये ।

५ चाहिये कि लगान गकान घूने से पुता रहे परंच भोजन करने और सोने का घर तो निश्चयी पुता रहना चाहिये और रसोई का घर गीघर और पिंहीर से पुता रहना चाहिये और रसोई के घर में बैठकर भोजन न करे । इसी कारण गहूर्त चिन्तामणि ने रसोई बनाने का घर अग्नि कोण में और भोजन का घर पश्चिम दिशा में लिखा है ॥

६ जय कपड़े से धू आने लगे तो बिना धुलाये उसे कदापि न पहिने ॥

हैजा न होनेका उपाय ।

यह तो सभी जानते हैं कि हैजा हमेशा एक न एक देशमें बनाही रहता है पर विशेषकर ग्रीष्म (बैशाख जेष्ठ) और यस्मन्त (फाल्गुण चैत्र) ऋतु में हैजा होने का सम्भव रहता है । और यह भी सबको विदित है कि एक प्रकार की विषदूषित वायु फैलती है तभी अजीर्ण द्वारा यह रोग होता है । हमारे कहने का तात्पर्य यह है कि ग्रासकाल पर इसका रोग कना दुस्ताप्य है इसलिये मनुष्यको चाहिये कि इसके चक्रुल में न फँसने का उपाय हमेशा करता रहे पर उपरोक्त महीनों में तो अवश्यही अपने संजमों को ठीक रखे । क्योंकि यह रोग उन्हीं को होता है जिन्हें यह परिज्ञान नहीं है कि हमें किस समय क्या आचरख और कौन द्रव्य भक्षण करना उचित है और कौन नहीं । और जो व्यक्त परिमित भोजन

करते हैं विशेषतः आयु के हितहित विषय में खूब अभिज्ञ है यह प्रायः इस रोगमें आक्रान्त नहीं होते ॥

१ बहुत गर्म स्थान में रह कर एक बारगी शैत्य स्थान में न चला जाय और न बहुत ठंड पदार्थ भोजन करले ॥

२ अतिशय जल पान, कभी अल्प कभी जादा, कभी कम पका कभी जादा पका या यासी द्रव्य भोजन, दिशा पेशाब का रोकना, दिवानिद्रा रात्रि जागरण, प्रभृति त्याग करे ॥

३ दश ग्यारह बजे के उपरान्त रात को न जागे क्योंकि रात के जागने से प्रायः हैजा हो जाता है ॥

४ अत्यंत विरेचक औषध, तेल की यन्ती हुई पकौरी आदि गर्मघीज शरीर आदि अधिक नशा न खाये ॥

५ शाम सवेरे घंटा आध घंटा शुद्ध वायु का सेवन करना और नीत बाद्यादिकों से मनमें विनोद रखे ॥

६ हैजा के प्रादुर्भाव समय में प्रतिदिन एक बार तेल का शरबत पीना या ठंडई के साथ रत्ती दो रत्ती भांग घोंटकर प्रतिदिन सन्ध्या समय पीना उत्तम है ॥

७ कपूर सूँघे और कपूर का पानी २ तोला दोनों समय पी लिया करे अथवा जल के घड़े में एक छोटी सी डली कपूर की डालदिया करे क्योंकि कपूर के सेवन से हैजा नहीं होता, परन्तु इस विषयको लोग बहुत कम जानते हैं । बिलायत के प्रसिद्ध डाक्टर रिङ्गर साहय चिकित्सा विधान में लिखा है कि गरमी के दस्तमें (हैजेमें) कपूर से बढ़कर दूसरी औषध नहीं है ॥

८ बहुत सकेत फोठरी में रात को मुखः दाँप कर न सोये और न किसी अधिक तङ्ग बैठक में दश घीस आदमी को सङ्ग लेकर बैठे ॥

९ जिस स्थान में हैजा उठा हो यह स्थान त्याग दूसरे जगह को चला जाय और हैजे का नाम सुन कर कदापि न डरे ॥

१० घरमें प्रत्यह शाम सबेरे गंधक या दशांग या धूप या गुग्गुलुकी धूनी अवश्य दिया करै क्योंकि इससे विष दूषित वायु का निराकरण हो जाता है यही कारण है जो पूर्वजनों ने व्यवस्था दिया है कि गृहस्थ लोग घर में ठाकुर रखे और शाम सबेरे धूप दीप दिया करै । अंगरेजी डाक्टरों ने अच्छी तरह परीक्षा लिया है कि हैजा वाले रोगियों का मल आदि फूप तालाब नद्यादिकों के जल के साथ मिल जाने से यह रोग शीघ्र ही चारों तरफ फैल जाता है । यदि हैजावाले का मल इधर उधर न फैला जाय और यस्त्र आदि तालाब नदी फूप आदि स्थानों पर न धोये जाय तो निश्चय है कि यह विमारी चारों तरफ न फैले, चाहिये कि किसी एक काल में गढ़ा खाद उसमें काष्ठ कोयला डाल उसी में मल फेंके और ऊपर से चूने का पानी या कार्बोलिक एसिड का पानी छुड़ा दे इससे मल का दाय दूर हो जाता है । और मल को पहले घूना या क्षोराइड भास लाईंग के जल से धो कर तब तालाब आदि में या घोंसी को धोने को दे । जिस घर में रोगी हो उस घर को धूप आलकतरा या गंधक के धुंवा से दूषित करे और उसी मकान के एक कोने में कार्बोलिक एसिड की एक सीसी का मुह खोल कर रख दे । इससे रोगी को प्रापदा और देश का उपकार दोनों होगा ॥

विष वायु दूषित गृह ॥

इन्फेक्टेडचेम्बरस । जिस समय ज्वर, हैजा, माता आदि रोग द्वारा देश भर ग्रसित हो जाय, या कोई गृहस्थ में परिवार उक्त रोग में ग्रसित हो कोई तो मर जाय, कोई, आराम हो और कोई २ फिर उसी रोग में ग्रस्त हो दुर्बल बना रहे तब निश्चय जानना चाहिये कि उस देश या उस घर की वायु विष से दूषित है, तब अगर उस देश के मृत्युक गृहस्थ अपने २ घर में या फक्त रोगी के घर में निम्न लिखित धुंवा देवे तो निश्चयी उक्त महाकराल रोगों से छूट जाय ॥

सोरे का धुंआ देना ॥

सोरा १ छटांक, गन्धक का तेजाय आधी छटांक । एक बड़े पात्र में या गमले में गरम जल भर कर उसके बीच में एक बरतन इस प्रकार से रखें कि उसके भीतर जल न जाने न पावे । बाद उस बीच के बरतन में सोरा डाल ऊपर से बूंद २ गंधक का तेजाय टपकाना आरम्भ करें इससे धुंआ निकलने लगेगा । एक छोटे से घर में धुंआ करने के लिये केवल एक पात्र बहुत है, यदि बड़ा घर हो तो उसी तरह दो पात्र स्थापन करें और जिस घर में रोगी हो उस घर में तो अवश्य धुंआ देंगे लेकिन धुंवे का पात्र रोगी के समीप न रखें किन्तु थोड़ी दूर पर रखें ॥

इस धुंवे को पहले पहल श्री युत डाक्टर कारमर्चकेल स्मिथ साहब ने प्रकाश किया था । जिस समय सन् १७८२ ई० में बिलायत के बिनचेस्टर नगर में उक्त रोग द्वारा बड़ी बड़ी थी तब समय इस धुंवे से बड़ा भारी उपकार हुआ और इसी पर गवर्नमेंट ने उक्त डाक्टर को पचास हजार रुपया पुरस्कार दे कर राज चिकित्सक का पद अभिषिक्त किया । उसी समय से आज तक हर एक चिकित्सक गण बराबर इसे काम में लाते जाये और इससे विशेष उपकार देखा गया है ॥

हैजे को संस्कृत में विधूषिका, अंगरेजी में कालरा, यंग भाषा में उलाउठा और तन्त्र शास्त्र वाले इसीको महाभारी की बिलारी कहते हैं डाक्टरी में मेलिगेनेट आदि कालरा बहुत प्रकार के हैं जिनका बयान आगे लिखेंगे । प्रथम हज " बङ्गस्कालरा " का बयान करते हैं जो देश विदेश सर्वत्र फैला है ॥

इस हैजे का विवरण और लक्षण ॥

आरम्भार कि और पाकस्थली एवं जाति में दृढ़ हो । परन्तु अधिक समय होने से पेटकादृष्ट बन्द हो जाता है । दस्त पल्ला पीत वर्ण और

मल सहित एवं अजीर्ण द्रव्य युक्त और अवशेष में कुछ हांघ सहित भी होता है । जिह्वा कंटक नहीं और नाड़ी मन्द २ गति एवं कधी गतिहीन भी हो जाती है । पियास अत्याधिक और किसी २ रोगी को हिचकी भी आने लगती है हांघ पैर शीतल समय शरीर या ओठ और हांघ पैर के नाखून तो अवश्यही नील वर्ण हो जाते हैं । सम्पूर्ण शरीर में ऐंठने और हांघ पैर के नस खिंचने लगते हैं । उक्त लक्षण युक्त रोगी ऐसाही कोई भाग्य इस बच जाता हो नहीं तो २४ घंटे के भीतर अवश्यही मर जाता है ॥

चिकित्सा ॥

रोगी को किसी प्रकार की गोली चीज खाने न दे, जिसमें ताकत आये ऐसी चीज खिलानी चाहिये । जैसे ब्रांडी या पोटावाइन के साथ अरारोट का गांड़ मिलाके पिछाना उत्तम है । और इस दवा को देवे ॥

१ चाकनिकुत्तर ५ औंस । टिञ्चरहाईभासऐनाई दो ड्राम । पिपर-मेन्ट याटर १ औंस सब को एकत्र कर एक २ औंस के अंदाज दिन में चार पांच दफे या जैसा रोगी का बलाबल देखे सेवन करावे ॥

अगर देखे कि रोगी बिल्कुल बलहीन हो गया है और नाड़ी गतिहीन एवं स्थान भ्रष्ट चल रही है, शरीर या हांघ पैर पाला के समान है, तब निम्न लिखित उष्ण कारक अर्क पिलावे ॥

व्यवस्था ॥

ऐरोमेटिक एमोनिया १ ड्राम । सलफिठरिक ईथर आधा ड्राम । टिञ्चर कारबेन कम्पोंड ४ ड्राम, ब्रांडी १ औंस, लड्डेनम १ ड्राम, केम्फर याटर ५ औंस । एकत्र कर एक बीसी में १२ दाग (भार्क) बना उसी में अर्क भर दे, एक २ दाग आध २ घंटा या एक २ घंटे पर देवे जब देखे कि दो तीन मात्रा दे चुके और कुछ फायदा नहीं आलुन होता तब

सोरे का धुंआ देना ॥

सोरा १ छटांक, गन्धक का तेजाय आधी छटांक । एक बड़े पात्र में या गमले में गरम जल भर कर उसके बीच में एक बरतन इस प्रकार से रखें कि उसके भीतर जल न जाने न पायें । याद उस बीच के बरतन में सोरा डाल ऊपर से सूँढ़ २ गंधक का तेजाय टपकाना आरम्भ करें इससे धुंआ निकलने लगेगा । एक छोटे से घर में धुंआ करने के लिये केवल एक पात्र बहुत है, यदि पड़ा घर हो तो उसी तरह दो पात्र स्थापन करें और जिस घर में रोगी हो उस घर में तो अवश्य धुंआ दे-वे लेकिन धुंवे का पात्र रोगी के समीप न रखें किन्तु थोड़ी दूर पर रखें ॥

इस धुंवे को पहले पहल श्री युत डाक्टर कारमचैकेल स्मिथ सा-हय ने प्रकाश किया था । जिस समय सन् १९८२ ई० में ब्रिगायत के बिनचेस्टर नगर में उक्त रोग द्वारा बड़ी गरी पड़ी थी तब समय इस धुंवे से बड़ा भारी उपकार हुआ और इसी पर गवर्नमेंट ने उक्त डाक्टर को पचास हजार रुपया पुरस्कार दे कर राज चिकित्सक का पद अभि-प्रेत किया । उसी समय से आज तक हर एक चिकित्सक गण बराबर इसे काम में लाते जाये और इससे विशेष उपकार देखा गया है ॥

हैजे को संस्कृत में विशूचिका, अंगरेजी में कालरा, बंग भाषा में चलाउठा और तम्र शास्त्र वाले इसीको महाभारी की बितारी कहते हैं डाक्टरों में मेलिंगनेस्ट आदि कालरा बहुत प्रकार के हैं जिनका बयान आगे लिखेंगे । प्रथम हम " बङ्गस्कालरा " का बयान करते हैं जो देश विदेश सर्वत्र फैला है ॥

इस हैजे का विवरण और लक्षण ॥

आन्त्रार के और पाकस्थली एवं आंत में दर्द हो । परन्तु अधिक प्रसंग होने से पेटकादर्द बन्द हो जाता है । दस्त पतला पीत वर्ण और

मल सहित एवं अजीर्ण द्रव्य युक्त और अयशेष में कुछ आंघ सहित भी होता है । जिह्वा कंटक गर्ह और नाड़ी मन्द २ गति एवं कधी गतिहीन भी हो जाती है । पित्तास अत्याधिक और किसी २ रोगी को हिचकी भी आने लगती है हाथ पैर शीतल समग्र शरीर या जोठ और हाथ पैर के मांसून तो अयश्यही नील वर्ण हो जाते हैं । सम्पूर्ण शरीर में ऐठन और हाथ पैर के नस खिंचने लगते हैं । उक्त लक्षण युक्त रोगी ऐसाही कोई भाग्य बस बच जाता हो नहीं तो २४ घंटे के भीतर अयश्यही मर जाता है ॥

चिकित्सा ॥

रोगी को किसी प्रकार की गीली चीज खाने न दे, जिसमें ताकत आये ऐसी चीज खिलानी चाहिये । जैसे ब्रांड़ी या पोतवाइन के साथ अरारोट का गांड़ निलाके पिलाना उत्तम है । और इस दवा को देखे ॥

१ चाकनिक्सचर ५ औंस । टिञ्चिदाईभासऐगाई दो ड्राम । पिपर-मेन्ट वाटर १ औंस सब को एकत्र कर एक २ औंस के अंदाज दिन में चार पांच दफे या जैसा रोगी का बलाबल देखे सेवन करावे ॥

अगर देखे कि रोगी बिल्कुल बलहीन हो गया है और नाड़ी गति क्षीण एवं स्थान भ्रष्ट चल रही है, शरीर या हाथ पैर पाला के समान है, तब निम्न लिखित उष्ण कारक अर्क पिलावे ॥

व्यवस्था ॥

ऐरोमेटिक एमोनिया १ ड्राम । सलफिउरिक ईथर आधा ड्राम । टिञ्चर कारबेन कम्पीड ४ ड्राम, ब्रांड़ी १ औंस, लडेनम १ ड्राम, केस्कर वाटर ५ औंस । एकत्र कर एक बीसी में १२ दाग (भार्क) मत्ता उसी में अर्क भर दे, एक २ दाग आध २ घंटा या एक २ घंटे पर देखे जब देखे कि दो तीन मात्रा दे चुके और कुछ फायदा नहीं मालूम होता तब

बीस २ गिनट पर देना शुरू कर दे । तब भी यदि हाथ पैर में गर्माहट और नाड़ी तेजी के साथ न चलने लगे तब पैर की एड़ी और हाथ की खोलाई पर राई का पलस्तर रख दे । पलस्तर लगाने का प्रयोजन यह है कि इसके द्वारा गर्मी उत्पन्न हो नाड़ी चलने लगे ॥

वैद्यक मत से हैजा ॥

पीछे हम हैजा न होने का उपाय लिख आये हैं, पर अब हम आयुर्वेद द्वारा संक्षेप से हैजे का निदान और चिकित्सा लिखते हैं । वाश्या है कि पातकमण अवश्य इस छेड़ानुसार रोगियों को अकाल काल से बचा धन्यवाद देंगे ॥

आज कल हैजे की अधिकता से विशेष कोई लक्षण दिखलाने की जरूरत नहीं है क्योंकि मूर्ख से भी मूर्ख तक जान जाते हैं कि इसे हैजा हो गया है ॥

हैजेका लक्षण ॥

मूर्च्छातिसारौवमथुःपिपासा शूलभमेदिष्टन जृम्भदाहाः ।

वैवर्ण्यकम्पौ हृदयेऽनुजंथ भवन्तितस्यां शिरसश्चभेदः ॥

तेहीशी, दस्त पतला, बारंबार के होना, पिपास, शरीर में छँठन घुमरी, कल न परे, जँभुयाई, दाह, शरीर का रंग बदल जाना, देह का पता हृदय और शरीर में दर्द होना । विशेष करके कि दस्त पेट और शरीर में छँठन पेशाब का न होना, पिपास की आधिपत्यता अवश्य होती है ॥

साध्य लक्षण ॥

यदि धीरे २ सप्ताह घटता जाय विशेष कर बमन । रोगीको पीछा निद्रा आ जाय शरीर गर्म बना रहे एवं रोगी तीन चार रोज बच जाय

और घात कण का कोई उपद्रव न उठे तो यकीन है कि रोगी अवश्य बच जायगा ॥

असाध्य लक्षण ॥

हाथ पैर में छूँठन ज्यादा हो, स्वर मज्ज और बल घट गया हो, भीतर दाह ऊपर शीत हो । रोगी को कल न पड़े, पेशाब न उतरे नारे पिपास के गले में कांटे पड़ गये हों, सांस कम आवे या सांस लेते में गला खर २ मोटे हुबकी आवे और नाड़ी रुक-२ के चलें तो रोगी का जीना बड़ा कठिन है ॥

चिकित्सा ॥

इस रोग की चिकित्सा नामा प्रकार की है विशेष कर डाक्टरों में इसकी बड़ी तूल के साथ चर्चा है, परन्तु जिस प्रकार की चिकित्सा से अधिकांश लाभ देखा गया है प्रयत्नतः उसीको कहते हैं । इसके परे और भी वैद्य डाक्टरों के मतानुसार से कीमती औषध देने से क्या लाभ हुआ है यह भी प्रकाश करने ॥

जहां तक हो सके फीरन के दस्त बन्द करें । इसीमें की राय है कि हीजा शुरू होतेही के दस्त न बन्द करें कुछ दूषित मल निकल जाने दे ? पर इन कहते हैं कि तत्क्षण बन्द करना उचित है क्योंकि हीजे के दस्त बन्द करने में रोगी का पेट नहीं फूलता । बाद इसके पेशाब खोलने और शरीर में ताकत लाने की उपाय करें ॥

हीजे की प्रधान औषध केवल यह है । अफीम, पारद, कपूर, प्रांही, चीक, गुलाब, पुदीना, यर्ज ॥

विशूचिकान्तक बटी ॥

सिगरस सकसूदा बांदी एक तोला को १२ ग्रहंर कागजो नींबूके रस

में खरल कर छाया में सुषा ले बाद इसके चिमरख के बराबर अफीम ले दोनों खरलमें हाल पानीसे घोंट कर बाजराके बराबर गोलियां बनाले । यह बटी हेजे में रामबाण या गुण दिखाती हैं; और पाठक गणों से म-विनय प्रार्थना करते हैं कि जहां तक हो सके बटी को पुनर्पार्थ दिया करें ॥

अनुपान ।

चाहिये कि हेजा शुरू होतेही यह गोली खिला दी जाय, रोगी गोली को मुह में रख पानी से उतार जावे न दांत से कुचले और न जीभ से टुपलये । यदि गोली उसी समय की से गिर जाय तो दूसरी गोली पानी में चील कर पिछा दे, गोली के पचतेही कै दस्त बन्द हो जायगा अगर गोली पच जाय और दस्त न बन्द हो तो ३ घंटे के बाद एक या दो गोली जैसी ताकत देसे खिला दे । फिर भी न बन्द हो तो १० घंटे तक गोली न दे पिपास और यमन-रोकने की उपाय करे अर्क सौंल ५, अर्क पुदीना ५, अर्क गुलाब ५, अफूर का पानी ५०॥ आधी छंटाक, बर्त की पानी ५। इन सबों में जो मिल जाय एकत्र कर एक २ तोला दूध २ मिन्ट पर बराबर पिलाता जाय, इससे भी कै न बन्द हो तो थोड़ी राई पानी में पीस आठ अंगुल लंबा चौड़े कागज पर लेप कर घेंट पर रख दे जब सूख जलन होने लगे तब निकाल डाले, जब देखे कि रोगी के हांघ पैर में ऐंठन ज्यादा है और बदन बहुत ठंडा है नाड़ी की गति अति मन्द है तो उक्त रीत्यानुसार राई हांघ पैर की कलाई पर रख दे । और केवल तारपीन का तेल हांघ पैर में मालिश करना प्रारंभ कर दे जब तक कि ऐंठन मिट कर नाड़ी सूख तेजी से न चलने लगे ॥

उपोंही दस्त बन्द हो उसी वक्त येजाय खोलने की चेष्टा करे । कलमीसोरा ३ तोला, देसू का फूल २ तोला दोनों को पानी में पीस टिकिया बना पेड़ पर रख दे और आध २ घंटे पर बदलता जाय और पन्द्रह २ मिन्ट पर मार्बेट्रिक इपर का दूध २ बूंद थोड़े से पानी के

साथ या दश २ दाना शीतल चिनी की चुकनी घोड़े से पानी के साथ बराबर देता जाय जब तक कि पेशाब साफ न आने लगे ॥

अति क्षुधा लगने पर साबूदाना गिन्नी के साथ दे या मूंग की मुंठाया, खिचरी दे ॥

आध्यात्मिक शक्ति ॥

परम पिता परमेश्वर ने हमारे आत्मा की रक्षा और उसके आध्यात्मिक कार्य साधन के लिये आत्मा के साथ २ एक प्रकार की सूक्ष्म विद्युत् भी दी है जिसके गूफी लोग "नूरेइन्सान" और यूरपीय बिद्वान, आहिल कहते हैं । यह विद्युत् शीतल, प्रकाश युक्त और मृत्तमाणी होती है । जिस प्रकार आत्मा अपनी मानसिक इच्छा द्वारा अपने बाह्य शरीरक अंगों को हिलाता, होलता अपने काम में लाता है वही प्रकार इस विद्युत् को भी जिधर चाहता है फैलाता और उससे अनेक प्रकार के कार्य साधन करता है । इस विद्युत् द्वारा आत्मा बाह्य इन्द्रियों के बिनाही जितनी दूर चाहे देख सकता सुन सकता है और अपनी इच्छा प्रकाश कर सकता है । यह विद्युत् ऐसी सूक्ष्म है कि कोई पहाड़ दियार आदि उसे रोक नहीं सकता है उनके भीतर से निकल आती और आत्मा दृष्टि आदिक शक्तियों को दूर २ फैला देती है । इस विद्युत् का और कोई शब्द नहीं मिलता लाचार विद्युत् कहना पड़ा इसी के द्वारा योगी जन अद्भुत शक्ति सम्पन्न होकर एक स्थान पर बैठ कर देश देशान्तरों को आन्तरिक दृष्टि से देख सकते हैं । इसी विद्युत् के विषय में आज कल "चियो सोफिटी" कुछ कहने और लिखने लगे जिसे लोग उनकी दुग में घुमे जाते हैं और उनके चेले मनते जाते हैं यह वास्तव्य की बात नहीं है । संसार में यद्यपि कोई मनुष्य एक सुख शरीरक अङ्ग को ही किसी ऐसे कार्य में लगाना शुरु करे, जिसे और लोग नहीं कर सकते, तो सब हैरान होकर उसके पीछे

में खरल कर छाया में सुखा ले बाद इनके विमरख के बराबर अफीम ले दोनों खरलमें डाल पानीसे घोंट कर बाजराके बराबर गोलियां बनालें । यह बटी हैजे में रामबाण ना गुण दिखाती हैं; और पाठक गणों से सविनय प्रार्थना करते हैं कि जहां तक हो सके बटी को पुनर्पार्थ दिया करें ॥

अनुपान ।

चाहिये कि हैजा शुरू होतेही यह गोली खिला दी जाय, रोगी गोली को मुह में रख पानी से उतार जावे न दांत से कुचले और न जीभ से दुपलावे । यदि गोली उसी समय के से गिर जाय तो दूसरी गोली पानी में घोला कर पिला दे, गोली के पचतेही के दस्त बन्द हो जायगा अगर गोली पच जाय और दस्त न बन्द हो तो ३ घंटे के बाद एक या दो गोली जैसी ताकत देखे खिला दे । फिर भी न बन्द हो तो १० घंटे तक गोली न दे पियास और घमम रोकने की उपाय करै अर्क खैंक ५। अर्क पुदीना ५० अर्क गुलाब ५० अफूर का पानी ५०॥ आधी छंटाक, घर्क का पानी ५। इन सबों में जो मिल जाय एकत्र कर एक २ तोला दश २ मिन्ट पर बराबर पिलाता जाय, इससे भी के न बन्द हो तो घोड़ी राई पानी में पीस आठ अंगुल लंबा थोड़े कागज पर लेप कर घेंट पर रख दे जब सूख जलन होने लगे तब निकाल डाले, जब देखे कि रोगी के हांघ पैर में ऐंठन ज्यादा है और बदन बहुत ठंडा है नाड़ी की गति अति मन्द है तो उक्त रीत्यानुसार राई हांघ पैर की कलाई पर रख दे । और केवल तारपीन का तेल हांघ पैर में मालिश करना प्रारंभ कर दे जब तक कि ऐंठन मिट कर नाड़ी सूख तेजी से न चलने लगे ॥

उपरोही दस्त बन्द हो उसी वक्त पेशाब सोलने की चेष्टा करै । कलमीसारा ३ तोला, टेपू का फूल २ तोला दोनों को पानी में पीस टिकिया बना पेडू पर रख दे और आध २ घंटे पर बदलता जाय और पन्द्रह २ मिन्ट पर भाईट्रिक इयर का दश २ बूंद घोड़े से पानी के

साथ या दश २ दाना शीतल चिनी की चुकनी चोढ़े से पानी के साथ बराबर देता जाय जब तक कि पेशाब साफ न आने लगे ॥

बलि क्षुधा लगने पर साबूदाना गिन्नी के साथ दे या मूंग की सुछाया सिरिही दे ॥

आध्यात्मिक शक्ति ॥

परम पिता परमेश्वर ने हमारे आत्मा की रक्षा और उसके आध्यात्मिक कार्य साधन के लिये आरमा के साथ २ एक प्रकार की सूक्ष्म विद्युत् भी दी है जिसके मूफ़ी लोग "नूरेइन्सान" और यूरेपीय बिद्वान, बाहिल कहते हैं । यह विद्युत् शीतल, प्रकाश युक्त और मुक्तागामी होती है । जिस प्रकार आत्मा अपनी मानसिक इच्छा द्वारा अपने माया शारीरक अंगों को हिलाता, होलता अपने काम में लाता है उसी प्रकार इस विद्युत् को भी जिधर चाहता है फैलाता और उससे अनेक प्रकार के कार्य साधन करता है । इस विद्युत् द्वारा आत्मा माया इन्द्रियों के बिगाही जितनी दूर चाहे देख सकता सुन सकता है और अपनी इच्छा प्रकाश कर सकता है । यह विद्युत् ऐसी सूक्ष्म है कि कोई पहाड़ दिया बगैर उसे रोक नहीं सकता है उनके भीतर से निकल २ जाती और आरमा दृष्टि आदिक शक्तियों को दूर २ फैला देती है । इस विद्युत् का और कोई शब्द नहीं मिलता लाचार विद्युत् कहना पड़ा इसी के द्वारा योगी जन अद्भुत शक्ति सम्पन्न होकर एक स्थान पर बैठ कर देश देशान्तरों को आभ्यन्तरिक दृष्टि से देख सकते हैं । इसी विद्युत् के विषय में आज कल "पियो सोकिए" कुछ कहने और लिखने लगे जिसे लोग उनकी दुग में घुमे जाते हैं और उनके चेहे घनते जाते हैं यह आश्चर्य की बात नहीं है । संसार में यद्यपि कोई मनुष्य एक सुच्छ शरीरक अङ्ग को ही किसी ऐसे कार्य में लगाया आरंभ करे, जिसे और लोग नहीं कर सकते, तो मग हीरान होकर उसके पीछे

दीधने लगते हैं । थियोमोफ़िट्ट लोगों ने इस पुरातन विद्या का अभी तक एक छेड़ भी नहीं जाना है । और न यह जानने के लिये प्रयत्न ही करते हैं । उन लोगों ने तो केवल रूपयाँ कमाने और भारतवासियों को मूर्खने के लिये ही यह थोड़ा सा तमासा मेक्सिकीजम आदिक सीख लिया है । जिसने हमारे भोले भांसे देश वासी अंतर्वासि होकर उनके गीत गाते और अपने परिचय की कगारूँ में आग लगाते हैं । मेरे प्यारे भारतवासियों यह तुम्हारे ही देश की विद्या है जिसने अब "गिमां कीं जूती गिमां की चांद" का खेल हो रहा है । जिस प्रकार हम यद्यपि एक हाथ उड़वाणों की भाई पड़ा या खड़ा रहने दें, और उसने कुछ काम न लें, तो थोड़े से काल में यह जकड़ कर किसी काजता नहीं रहता है । अगर कोई अच्छा घेंटा मिले और किसी भीपधि या यत्न द्वारा उसे सुधारे, तो यह कुछ काम देने लगे तो सम्भव है । इसी प्रकार अनेक समय में हम लोगों ने अपने आप दादा के आध्यात्मिक साधन को छोड़ कर हम अद्भुत वैश्वरीय शक्ति को बेकार कर रक्खा है जिसने अब हम साधारण रूप से भी उसे किसी काम में नहीं ला सकते हैं । और यद्यपि किसी को उसका उध गाल भी साधक देखते हैं, तो गुलाम बनने, उसकी जूतीं साँझ करने, और अपना तन मन अर्पण करने का तत्पर हो जाते हैं । इसमें संदेह नहीं कि हम इस महान शक्ति को रो कर बहुत दुर्बल और दुखी हो रहे हैं । और जब तक इस अपने साधन की ओर दृष्टि न करेंगे, तब तक हमारी दशा सुपर न, सकेनी । यही तो योग का मूल है । आज कल हमारे भारत वासी यह समझते हैं कि इसको साधन करने के लिये, साधारण त्याग करना पड़ता है । और संसार से बिदेगी होकर मन में रहना होता है । नहीं भाई, यह सारा खेल संसार के पवित्र उद्देश्य के पूरा करने के लिये ही है । परमेश्वर ने यह गुन्दर संसार त्याग करने और उससे मुंह मोड़ने के लिये नहीं बनाया है । हाँ, अत्याचार, फुसंस्कार आदि अपशय त्याग करना पड़ता है क्योंकि जब तक आत्मा पवित्र न हो, यह विद्वुत्त निर्मल नहीं होती, और न अपना कार्य कर सकती है । यदि लोगों की

इच्छा होगी, और यह अपनी आध्यात्मिक शक्ति को जानना और उसे अपने कार्य में लगाना चाहेंगे, तो मैं यथा शक्ति उनको ऐसा उपाय और साधना बतलाने में प्रस्तुत हूंगा जिसे यह इस शक्ति को लाभ करके अनेक प्रकार का आनन्द पावेंगे । मैं तो यही चाहता हूँ कि मेरे देश वासी इन शारीरिक इन्द्रियों पर ही भरोसा करते न रह जायें क्योंकि एक समय ऐसा आयेगा जब यह शरीर न रहेगा और आध्यात्मिक इन्द्रियों से ही काम लेना पड़ेगा यद्यपि अभी से इसका सीखना आरंभ न करेंगे तो मृत्यु के पश्चात् अंधे छूटे की दशा में रहना पड़ेगा ॥

आध्यात्मिकशक्ति साधन ॥

आज मैं लोगों की इच्छा देख कर कुछ आध्यात्मिकशक्ति के रहस्य का उपाय वर्णन करना आरंभ करता हूँ । यदि भारत वासी सज्जन पुरुष शान्ति लाभ निमित्त इसको सीखना और अपने जीवन में इसका अनुष्ठान करके आनन्दित होना चाहेंगे तो मैं धीरे-धीरे कुछ यथाशक्ति प्रकाश करूंगा । यह तो मैं जानता हूँ कि आज कल हमारे देश वासी युक्ति, तर्क ज्ञान आलोचना, संदेह, यादी, और सांसारिक गोलमाल से अशान्त और थकित हो कर एक प्रकार की नूतन पिपासा योग साधने की प्रकाश कर रहे हैं । इसी लिये किसी मनुष्य में लेश मात्र भी आध्यात्मिकशक्ति देख कर मोहित हो जाते हैं । यहां तक कि धन और प्राण भी अर्पण करना स्वीकार कर बैठते हैं । जिसका कि मैं पहिली बार कुछ वर्णन कर चुका हूँ ॥

आप जानते हैं जब एक वस्तु पर किसी प्रकार का रंग चढ़ जाता है, तो उसपर दूसरा रंग चढ़ाना, या उसकी अपनी पहली अवस्था में लाना कठिन होता है । पहिले उस रंग को रगड़ कर साफ करना पड़ता है । इसी प्रकार जब हमारी प्रकृति ही बदल गई है, हमारा रंग ही दूसरा हो गया है, तब हमारे आत्मा की प्रकृति शक्ति का प्रकाश पाना या उसको असली रूप का मिलना कठिन देखाई देता है ।

सारा कार्य विश्वास द्वारा ही चलता है, खाना, पीना, उठना, बैठना, सोना, जागना, याजिज्य, व्योपार सभी विश्वास बिना नहीं हो सके हैं। हमारे आपस में विश्वास न होने के कारण हमें एक दूसरे की सहायता नहीं करते, एक दूसरे का उपकार साधन नहीं करते, इसी लिये दाम धन कर दुःख भोग कर रहे हैं, देश विनाश हो रहा है। आप कहते हैं कि यह तो और ही कुछ कह रहा है, जिस विषय पर कहना है और जिसके लिये हम अपेक्षा करते हैं, यह तो नहीं कहता है। महा राज जब तक भूमि ठीक नहीं होती, उसमें योग्य होने से कुछ फल नहीं होता है ऐसे छोटे मोटे चुटकले जिनको पिओसफिट लोगों में देखते हैं, और जिनके कारण आप मोहित हो रहे हैं, वह तो दो दिन में जा सकते हैं। यह तो याजीगर के आत्म के वृत्त हैं, आज हैं कल नहीं। मैं तो आप के हृदय भूमि ऐसा चेड़ लगाना चाहता हूँ कि जो सर्वदा हरा भरा रहे और उत्तम से उत्तम फल देकर आप को आर्य्य पुत्रों की ठीक सन्तान बना दे। चमड़ाइये नहीं, आप को कुछ बहुत कम उठाना नहीं पड़ेगा थोड़ा ही हृदय भूमि का जंगल काट कर भाग लगाना होगा—केवल अपने हृदय की प्रकृति अवस्था में लाना होगा, शताब्दी जंगल साफ करना होगा। इसी लिये मैं आज आप से इतनाही कहना चाहता हूँ, कि प्रकृत विश्वास क्या है (जिसे आप को विदित हो जावेगा, कि आप के ऊपर कैसा रंग चढ़ा हुआ है) और उसके उज्जल करने की रीति क्या है। प्रकृत विश्वास ही आत्मदर्शन का मूल है, जब तक आप अपने आत्मा को देख ही नहीं सकेंगे, तो उपकी शक्ति का ज्ञान, उसकी वृद्धि या उसके कार्य साधन करना कैसे सम्भव हो सकेगा ?

यह तो स्पष्टरूप से जाना जा सकता है, कि जिसे लोग विश्वास कहते हैं वह प्रकृत विश्वास नहीं यह तो केवल आपस के संस्कार हैं। इस बात का प्रमाण यही देख लीजिये, कि वह भ्रम से जन्मीत नहीं है। जब तक भ्रम है तब तक यही जानना चाहिये कि प्रकृत विश्वास नहीं मिला और जब तक प्रकृत विश्वास प्राप्त नहीं। तब तक योग की

घात कहना ही निरर्थक है । योग के पथ में चलने के लिये सर्वत्र ही यह लौकिक संस्कार परित्याग करना और प्रकृत विश्वास दृढ़ना होगा । प्रकृत विश्वास योग पथ की पहिली सीढ़ी है ॥

प्रकृत विश्वास का लक्षण अपरिहार्यता और अनतिश्रमणीयता ही है । जिस विश्वास को किसी बल द्वारा हटा न सकें, हजार २ विरोधी युक्ति से उसे हिला न सकें, वही प्रकृत विश्वास है । दर्शन शास्त्र में इस को ब्रह्म विद्या और आत्मप्रत्यय बोलते हैं । जिसके विपरीत कुछ भावना करदी नहीं सक्ते वही आत्म प्रत्यय, वही प्रकृत विश्वास है । क्यों जी देखो तो सही आप में भी कुछ है, घुटकुलों को देखकर तो मोहित हो जाते हो । किन्तु पहिले इस विश्वास के लाभ करने के लिये प्रस्तुत हो । तब मैं आगे कहूंगा, नहीं तो बस सलाम । बाकी दूसरे राह में देखो ॥

लड़कों की पसुली की विमारी ॥

एक तो वैद्यक शास्त्र की ऐसे ही दुर्दशा हो रही है दूसरे जो कुछ भी यह अपढ़ ज्ञान नकली वैद्य और चांडाल औरतों के नारे और भी मत्थानाश हो रहा है । यह तो सभी जानते हैं कि युवा गनुष्यों के अपेक्षा बालकों के रोगों का नाड़ी के द्वारा यथार्थ ज्ञान कर लेना बड़ा दुर्कर है, क्योंकि समान आदमी नाड़ी के अतिरिक्त अपने सग्न स्रोतों को कद भी देता है । बालक विचारा न तो बोल सके और न अपने आभ्यन्तरिक सुख दुःख का ध्यान कर सके यह सिर्फ माता के आधीन रहता है चाहे माता नारे या जिलायें । घावो शिखा, गर्भ रक्षा, बाल पोषण और स्त्री पुरुष व्यवहार आदि विद्या जो स्त्रियों को पढ़ना अत्यावश्य है यह तो जाता रहा अब तो केवल गङ्गा नहाना, मंदिरो में जा के कपा मुनना पति रोके तो चूल्हा और घर के बरतन फाड़ना, फलनियां के शिरे बलिराजा आवधै, फलनियां तो दुग्धा माया का पूजत

यों और फलाने बाबा जी तो ऐसे हैं कि जन्म के यांकु को लड़का देते हैं यही कुसङ्ग और कुसंस्कार रह गया । यही कारण है आजकल स्त्रियों के अति प्रचण्ड होने का क्या इस्तिफार है कि बिना महानायाकी आज्ञा पर के गर्द फुल कर तो सके, जहां बालक बीमार हुआ और नून के स्वामी जी बोले कि लाओ किसी सतवैद्य या डाक्टर को दिखलावें तहां फुट घुटुक उठों कि कुछ जानंत युक्त है। कल चखिटिया की माई आई रही सो देख लिहेम है । फिर क्या पूछना है ओढ़ चढ़िया तैय्यार हो गई । हमारे इस देश के स्त्रियों को ऐसा टोना टागरका दृढ़ विश्वास पड़ गया है कि जहां देखो अच्छे २ घर की स्त्रियां बालकों को भगन में दवाए और हाथ में घोड़ी सी बड़न्ही की रोक लिये महजित के दरवाजे खड़ी हैं । प्रायः देखने में आता है कि बड़े सघेरे बड़कों पर सड़क बटोरने वाले हलालखोर आदि हाथ में झाड़ू लिये लड़कों को भ्जार रहे हैं । बड़े आश्चर्य की बात है कि अंगरेज और अफ़्ग़ालियों के ऐसे सूय सूरत और साफ़ लड़के जिनको दाढ़यां मोर्दों में लिये सड़कों पर टहलाया करती हैं, कि जिनको अच्छे और बुरे लोग सभी देखते हैं उनके लिये न कहीं टोना न टागर और हमारे इस देश वालों के लड़के जिन की नाक यह रही है । नक्खियां भिन भिना रही हैं, यदन में मैला कुचैला कपड़ा पहना है तैल चमोके चिपड़ों की लहबीज गले में गुंपी हैं लहसुन और होंग की दुगन्धि देह से निकल रही है, घर के बाहर नहीं आने पाते परंघ टोना उन्हें रोज़ लगता है ॥ ..

जब देखिये एक तो अति काल तक बालक का मुख ढांप कर मोद में दवा रखने से बीमारी होती है, दूसरे टोने के भय से, लड़कों को बस फंदर मैला कुचैला धमाये रहती हैं कि जिससे अकस्मात् एक न एक रोग उत्पन्न हो रहता है, तीसरे जो मांसाहारी गर्भो सुजाक वाले सैकड़ों मुसलमानों के मुंह की भाफ और थूंक कि जिसकी पीठार बालक की मां के मुख तक जाती है, कि जिससे रोग होने का सम्भव पैदा, डाक्टर, इकीम सभी कह सकते हैं । चौथे हलालखोर आदि गोषों के कपड़े झाड़ू और टोकुरों की दुगन्धि, पांचवे माता का सीन बजे राखि

से उठ गङ्गा जमुना का नहाना, एकादशी, मङ्गल और एतवार का व्रत अन्न और रस पदार्थों का जून कजून भोजन, उठे बिना जाने यूँसे सेंहुड़-के पत्ते का अकंतक पिला देना, इत्यादि हग कहां तक कहें हजारों अनाचार हैं । "माता यदि विप दद्यात् पिता विक्रयते सुतं, राजा हरति सर्वस्वं शरणं कस्य जायते" । माता ही बालक को यदि विप पिला दे पिता बेध ढाले राजा सब छीन ले तो फिर वह किस के शरण में जा सकता है ॥

अब कहिये इस प्रकार बालकों को रखने से कौनकर जीवन रक्षा हो सकती है यदि छोट पोटा बच भी गये तो सभी निर्बलता के कारण बल धीरे धीरे बुद्धि तथा सक्ति उत्तमता अनुसरण उपलब्ध कदापि न होगी । इसी समय से इस देश बालों के लड़कों की सेवा सीखा नहीं होती बालक और भी जस २ उमर बढ़ती जाती है तब २ और भी मोटी होती जाती है ॥

यह जो पंखुली की बीमारी आज फल प्रसिद्ध है और सूर्य से बिद्वान तक यही कहते हैं कि इस लड़के की पंखुली चल रही है । इसको खूब गर्म चीज खिलाओ और पेट पर गर्म दवाईयों का लेप करो । परन्तु आज तक किसी ने इस विषय पर ध्यान न दिया कि असल में यह बीमारी क्या है और इस बीमारी का हाल किसी ग्रन्थ में भी है या नहीं । हग नहीं जानते इस बीमारी का प्रकाशक कौन वैद्य डाक्टर इकीन है जो हर एक औरत मर्द के मुँह से पंखुली चली २ सुनाई देती है । इसी भेड़िया घसान से लगान भारतभर्य तहस महस हो गया इसी प्रयाग नगर में एक से एक वैद्य धन्वन्तरि बने हजारों रुपये खसोट रहे हैं पर इसकी आलोचना आज तक किसी ने न की । ये जो व्याप्य रहित पराधीन बिचारे हजारों लड़के प्रति दिन अकाल कालग्राम होते जाते हैं इसका प्रतीकार किनी प्रकार हो सकता है या नहीं इसी रोग का हवाला यदि किसी समय कोई प्रथम श्रेणी के यूरोपियन डाक्टर लिख कर गवर्नमेंट में भेज देगा और जैसे माता की बीमारी रोकने के

लिये टीका का प्रकाश हुआ है उसी प्रकार इसका भी टीका या औपध लगाने अपवा बिलाने का दुष्म निकल आवेगा तो अन्त में निरुद्यगी लोग लड़कों को लेके भीतर भागेंगे और यही कहेंगे कि सरकार हमारे साथ अन्याय करती है ॥

निस्सन्देह कह सकते हैं कि "पसुली-चली" इस नाम की बिमारी का लेख समस्त वैद्यक के ग्रन्थों में नहीं है पर अत्याश्चर्य इस विषय पर है कि पढ़े लिखे वैद्य लोग भी झूठाका कह देते हैं कि इसकी पसुली चल रही है । हिकमत के ग्रन्थों में कहीं २ पसुली के रोग का यत्र ऐसा लिखा है पर निदान ठीक २ नहीं मिलता । किसी २ देश वाले इसी रोग को हद्दा हद्दा भी कहते हैं । इस रोग की दवाइयां प्रायः लोहार बड़ई डोम चमार कमाई तक बना करके बांटा करते हैं कि जिनसे हजारों लड़के बिपारे काम आ जाते हैं । इसका संशोधन बिना राजाकी दूध पड़े कदापि होना सम्भव नहीं है । अथ हन पाठकगणों के अवलोकनार्थ प्रथमतः बालकों के उन समग्र रोगों का वर्णन करते हैं जो प्रायः लड़कों को हुआ ही करते हैं और जिनका वैद्यक के ग्रन्थों में प्रमाण भी मिलता है । सुश्रुतादि सिद्धान्त ग्रन्थों के देखने से ठीक मालुम होता है कि सेत्राय पूतना आदि बाल ग्रह के और जो रोग ख्यान के होते हैं वगैरे बालकों के भी, पर शाङ्गधर आदि छोटे २ ग्रन्थों में पूतना के अन्यत्र बहुत से बालकों के रोग लिखे हैं कि जिनके लक्षण अद्यावधि बालकों में पाये जाते हैं और उसी प्रकार की चिकित्सा से रोग आराम भी हो जाता है । पूतना आदि बालग्रह जिनका ख्यान ग्रहग्रन्थों से छोटे ग्रन्थ तक सभी में पाये जाते हैं, और जिनका लक्षण कुछ २ बालकों में भी मिला जाता है पर चिकित्सा उनका सेवाय झाड़ू फूंक टोटका उतारा के और नहीं है परन्तु ग्रन्थकार ने जिस मतलब से टोटका आदि लिखा है उनका गूढ़ अभिप्राय कभी प्रकाश करेंगे । क्योंकि यहाँ सब से पहिले हमको यही कहिना पड़ता है कि जब तक कुपथ्य से माता के दूध में विकार उत्पन्न नहीं होता तब तक बालक कदापि रोगग्रस्त भी नहीं होता । जिन स्त्रियों के दूध में मात का विकार अधिक हो जाता है

उस दूध पिये बालक का लक्षण यह होता है । दिन प्रति दिन दुबला होता जाय, दस्त दूसरे तीसरे रोज हो, पेशाब करते कांरो और कम तारे और गिन्मिनाता रहे ॥

पित्त दूषित दूध पीने से दस्त पतला कटा सा पीला या हरा हो, मुह से कटा दूध भी फेंक दे, शरीर गर्म रहे, मुह पर से कपड़ा फेंक दे, और कभी २ पसीना भी आ जाय सूख गर्म चमरे ॥

कफ सम्बन्धी दुष्ट दूध के पीने से मुह से सार बहे, हर समय भी-चाया करै और उबकाय ॥

बालकों की हांकी जिसको लोग पसुली की बिमारी जानते हैं और घड़का जिसे औरतें ऊपेट कहती हैं इस बिमारी में लड़के खेलते २ एक-एक आंग उलट देते हैं और चेहरे का रंग बदल जाता है गालूम होता है कि खतम हो गये मगर जब मुह पर पानी छिड़का जाता है और घदन में हवा लगती है तो फिर होस में आजाते हैं लेकिन यहां की स्त्रियां तो निस्सन्देह इस बिमारी को बढ़ाई घड़ी का नारमिंदी टोना जान उसके और भी चारो तरफ से हांप अजवाइन और गिर्ब की धूनी दे कर फौरन मार डालती हैं । प्रिय पाठक गण, दूध में बिकार उत्पन्न होने का सूत्राय (प्रथम लक्षण) यह है कि आठ दस रोज के पे-स्तारही ये बालक की ना के पेट में आगसा जलने लगता है या पेट करोने, लगता है यदि उसका उपाय तरक्षण कर दिया जाय तो न साता का दूधही मिगड़े और न लड़का बिमार हो ॥

उसका उपाय यही है कि जब धात्री (दूध पिलानेवाली स्त्री) के पेट में आग मल उठे या पेट करोने लगे तब पाय भर गी के दूध में एक तोला मिश्री मिला के पिया देय या मिश्री का सरयत पिला देय या और कोई ठंडी चीज तिला के पानी पिला देय । इसी प्रकार यत्न जलन उठने के कर दिया करे तो कदापि बालक बिमार न हो । सब को उचित है कि यह बात अवश्य अपनी २ स्त्रियों को जिनका दूध

बालक पीता है। मिरा दे कि जब उनके पेट में आग सा जलने लगे या पेट फटने लगे तो उक्त उपाय में निवारण कर लिया करे। क्योंकि "अग्र मोची मदा सुखी" पहले ही मोच लेने में मनुष्य सदा सुखी रहता है। ऐसा कौन सा मनुष्य है जो यह न जानता होगा कि "गृहे रत्नानि बालके" बालक गृह का एक रत्न है और जिनके गृह में बालक नहीं हैं वह घर धन के समान है, एक पुत्र के लिये लोग लाखों रुपये खर्च कर डालते हैं देवी देवता पीर पैगम्बर मनाया करते हैं यहां तक कि मै स्त्री पुत्र्य दिया राखि इसी शोच में पड़े रहते हैं और कहते हैं कि हे ईश्वर हमको एक लड़का चाहे लँगड़ाही लूना दे लोग अपुत्री तो न कहेंगे। अब विचार करने का स्थल है कि ऐसा अमूल्य पदार्थ कि जिसके द्वारा पितर तक स्वर्ग जाने की भाशा रखते हैं, वह केवल माता की अज्ञानता से कुछ मात्र में एक साधारण बिमारी में बिचारे अकाल काल प्राप्त हो जाते हैं। हां। "पुत्रशोक महाकष्टम्" ऐसा कौन सा पाषाण हृदय होगा जो आद मर जाने पुत्र के महा शोक समुद्र में डूब कर अस-ह्न कष्ट को न प्राप्त होगा ॥

यह जो पशुली की बिमारी आज कल समस्त भारत वर्ष में फैली है खास कोई ऐसी बिमारी नहीं है कि जिसमें लड़के मरही जाय। यह केवल रोग के अनभिज्ञता से लोग धन में पड़े उलटी पुलटी औपंध करके बालकों को मार डालते हैं। पाठक गण प्रयत्नतः जब हम सिपं आयुर्वेद के दो चार छोटे मोटे ग्रन्थ देख चिकित्सा करना आरम्भ किया था उस अवस्था में हमारी भी यही दशा थी कि प्रचलित गोलियां जो कि लोग अब तक बनाकर लड़कों को दिया करते हैं हम भी देते थे, पर ईश्वर की करुणामय दृष्टि से शीघ्र ही हम को सुश्रुतादि ग्रंथों के अयलोकन द्वारा इस बिमारी का अनुमान हो गया और दोहरे चार लड़कों पर आजमाने से पूर्वोक्त कुपथ्य जनित रोग निवारक नहीपथि भी उपलब्ध हो गई। उसी समय से आज तक कोई दश हजार लड़के ऐसे २ आराम किये होंगे कि जिसे लोग पशुली की दवा खिलाते और करवाते मार चुके थे एक परिज्ञा और देखा है कि जब जति गर्भ दया

देते देते बालक के अन्धन्तर गर्मी इस कदर बढ़ जाती है कि बगल में ज्वर मापक तापमान यंत्र (थर्मामीटर) के लगाने से पारद सी नम्वर तक बढ़ जाता है तो फिर उसका बचना बड़ा कठिन हो जाता है ॥

उक्त रोग का लक्षण यत्न ।

माता के सिद्धि दूध के पीने से बालक के पक्षाश्वस्य वायु कुपित हो पित्त के साथ मिल जाने से छाती का कफ सूख जाता है तब प्राण वायु के अवरोध से स्वास गत वायु का गमनागमन कुछ कम होने के कारण बालकों को एक प्रकार की हांपी पैदा होती है तब पेट उसका जति कोमलता के कारण उछलने लगता है उसी को छोम पसुली की विमारी जानते हैं ॥

यह रोग दो प्रकार से होता है एक वायु पित्त के कोप से दूसरा केवल वायु से, पहले का लक्षण यह है कि पेट बहुत अधिक न उछले दस्त पतला हो, पेशाब बहुत गर्म और कम बतरे, गले में कफ का घुर-घुराहट हो या न भी हो पियास से भौंठ चाटे और पानी के तरफ जादा रुजू हो, कपड़ा मुह पर न रख सके और कभी २ घबड़ा कर दूध भी न पिये, दूसरे का लक्षण जो सिर्फ वायु से होता है यह यह है कि नल के सूख जाने से दस्त न हो, पेट बहुत उछले, मूत्र जति उष्ण हो और कम मूते और गला सांय २ करे या गले में कफ थोले, नाशिका का छिद्र सूख जाय स्वास मुससे जाये और कुछ पेट भी फूल जाता है ॥

पसुली की विमारी की अनभूत महौपधि ।

जो रोग सिर्फ वायु पित्त के कोप से होता है कि जिसका लक्षण ऊपर लिख चुके हैं, उसका उत्तम उपाय यह है कि पहिले उसका दस्त इस औषध से गाढ़ा और कम कर दे । देन की गरी मूखी ६ मासा,

पुराने आंस के गुठली की गरी ४ मासा देनें को महीन' पूर्ण कर ४ मासा मिश्री मिला सब को ६ मासा कर पानी के साथ दिन में ६ भरतये करके पिला दे । या केवल खेल का मुरदा दे २ मासा करके दिन में ४ भरतये पानी में घोला कर पिला दे । एकही दो रोज में दस्त गाढ़ा और कम हो जायगा । बाद दो रोज के पांच रं दाना शीतल चिनीकी चुकनी दे २ घंटे पर पानी के साथ देकर पेशाब की गर्मी भी छांट दे । जब देखे कि इसका दस्त और पेशाब साफ होता है मिर्चा गले में कुछ कण का चरघराहट बांकी है तब कार्बोनेट आफ सोडा या साफ किया हुआ नज्जीखार ६ रत्ती मिश्री ४ रत्ती देनें को मिला ४ भाग कर पानी के साथ दिन में ४ दफे पिला दे । ऊपर लिखी हुई मात्ता दे। वर्ष से ऊपर वाले बालकों के लिये है, उससे कम उमरवाले बालकों को आधा मात्ता देना चाहिये और उमकी माता को गर्म चीजों से परहेज करावे ।

दूसरा जो केवल वायु से होता है उसमें पहिले दस्त जुलावा करावे यह यह है कि सोडा ३ रत्ती, गुलकन्द गुलाब ४ मासा पहिले गुलकन्द को पीड़े से पानी में घोल गल कर छान ले तब उभी में रोड़ा डाल पिला दे । इसी तरह दिन में ३ या चार भरतये पिलावे । यदि इससे एक रोज में दस्त न आवे तो दूसरे रोज मधेरे दही का तेल २ मासा तारपिन का तेल २ चिन्दु पीड़े से दूध में मिला के पिला दे । बाद दस्त साफ आने के पूर्वोक्त रीति से शीतल चिनी पिला पेशाब भी साफ कर दे । यदि लड़का कुछ खाता पीता हो तो उसे सुद्ध की मुलायम खिचरी या साबूदाना दूध मिश्री के साथ दे । निस्सन्देह बालक पांच मात रोज में आराम हो जायगा ॥

आशा है कि हमारे प्रिय पाठक गण इस लेखानुसार उपाय कर बालकों को अकाल काल के मुख से यथाय इसका आन्दोलन अवश्य करेंगे । क्योंकि जीवदोन के समान दूमरा दान नहीं है और न जीव रक्षा के बराबर संसार में कोई उपकार है । लिखा भी नन्दपुराण में ॥

“अप्येकं नीरुज्जीकृत्य व्याधितं मेघजैर्नरः । प्रयाति ब्रह्मवदनं कुलसप्तक
संयुतः” जो मनुष्य एक भी रोगी को औषध द्वारा निरोग करता है वह
सात कुल सहित ब्रह्म लोक को जाता है “कपिलाकोटिदानाद्दि यत्कलं
परिकीर्तितम् । तत्फलं कोटिगुणितं मेकातुरधिकित्सया” एक कोटि क-
पिला गौ के दान में जितना फल है, उसका कोटि गुण फल एक रोगी
की चिकित्सा में है पाञ्चमख्यः “दीर्घंती ग्रामयस्तं ब्राह्मणं गामयापि वा,
दृष्ट्वापि निरातंकं कृत्या स ब्रह्महा शुचिः” पुरातन कठिन रोग ग्रस्त ब्रा-
ह्मण या गौ को रास्ते में देख उसका रोग छुटा देने में ब्रह्म हत्या का
पाप छूट जाता है । पुरा काल में एही भूमण्डल मध्य में मनुष्यों के क-
ल्याण एवं देह रक्षार्थ निमित्त अनेक महर्षि यहु यज्ञ द्वारा अनेकानेक
द्रव्य तथा शारीरिक परीक्षा कर अपर्युं वेदान्तर गत आयुर्वेद नामक प्र-
तिष्ठित शास्त्र मिल्यात किया तद्वारा अद्यपर्यन्त दयावलम्बी प्राज्ञ वैद्य
सर देश काल के अनुसार प्राची मात्र का दुःख हरण करते आये । अत्र
काल से समुद्र तुल्य आयुर्वेद शास्त्र का शंका समाधान एवं समालोचना
न होने से प्राय छुप्त ही हो गया ॥

धातु शिक्षा ।

यद्यपि पण्डित इसके लिखने का अभिप्राय यह है कि उत्तमोत्तम स्वा-
स्थ्य सभी को लाभ हो सकता है जिसके पूर्वांश महर्षि का उद्योग जन्म
से पदा गमाधान ही से किया जाय, क्योंकि “हिम्नो मूढे नीय पत्रं नशात्वा”
इसके जड़ का मजबूत होना अत्यावश्य है । और यह सभी जानते हैं
कि बालकों के मोतरी पीड़ा का हाल जानना हर एक का काम नहीं
है ? वेदाय रोग-वीर्यों के जिन्हें आयुर्वेद का पांचवा अंग कीर्णभृत्य
नामक तंत्र में सूच्य अभ्यास हो पर इस बात का महा रोद और अत्यंत
शोक है कि हमारे इस देश के वैद्य लोग शुश्रूतादि आयुर्वेद के अमृत
सरोवर में स्नान न करने से यह तंत्र बिलकुल नहीं जागते इसी से

अपकीर्ति और अपयश का टीका लगाये फिरते हैं कि जिसमे हवरे के नहाने वाले (धर्मकार कर्मोंहर) भी चिनाते हैं । बाल-निषित्ता पर ध्यान देना बच्चों को क्या गृहस्थ मात्र को भी उचित है । बालकों की अवस्था तीन भाग में विभक्त है ॥

पहली शिशुता, जोकि जन्म से दो वर्ष पर्यन्त जब तक कि दूध के समय दांत न निकल आयें ॥

दूसरी कुमारता, अर्थात् दो वर्ष से सात आठ वर्ष पर्यन्त जब तक कि दूध के समय दांत गढ़ कर उहराक दांत सब न आजाय ॥

तीसरे केशोर, जो कि कुमारता घीतने के उपरांत पन्द्रह सालह वर्ष पर्यन्त की अवस्था गिनी जाती है ॥

अब हम शिशु संज्ञक बालक की जन्म समय से लेकर जब तक कि दूध के समय दांत न निकल आयें पूरी और परिश्रित चिकित्सा लिखते हैं । पाठक गण अपनी २ स्त्रियों को इसे अवश्य पढ़ायें ॥

स्नान ॥

जन्म हुए बालक को उसी समय स्नान कराना अच्छा नहीं । प्रायः स्त्रियां ठंडे पानीसे भी नहयातीं या धो डालती हैं; पर इस्से उपकार न होकर और अगहित होता है जैसा कि आंख और फेफड़े में जलन दुःत्यादि । परंश अति गरम जलसे भी नहयाना उचित नहीं है क्योंकि इस्से भी रक्तके अति कोमलता से बच्चे के शरीर में ददोरा या दागा २ सा निकल जाता है । इसलिये केवल पानी को जरासा धिकाले जैसा कि जाड़ेमें प्रातःकाल में फूपका जल उष्ण होता है । आजकल जन्मतुष्ट को दाईं लीग सायुन लगा के नहलाती हैं पर याद रखना चाहिये कि सायुन बच्चे के आंखमें न जाने पाये । इस प्रकार नहयाना उततम है कि

एक किमी पात्र में शीतगर्भ जल भर जन्मतुष्ट बालक को सूष नह्वाना कर तन्मास मेल साफ करदे क्योंकि जो धात्री हर से अधिक जल में न नह्वाना कर ऐसाही धोना के रहने देती हैं। इससे मेल जम कर त्वचा में अनेक प्रकार के रोग हो जाते हैं। धत्त्वे को नह्वाने के बाद बहुत कोमल क पड़े के टुकड़े से आहिस्ते २ रगड़ के चमड़े का मेल पांछ लेना चाहिये ताकि कुछ गर्भ के मेल का अंश न रहजाय ॥

एक घार प्रातःकाल बालकों को शिर से पैर तक रोग नह्वाना चाहिये। बहुत सी औरतें जानती हैं कि बालकों को रोग २ नह्वानेसे सर्दी और कफ खांसी हो जाती है ? सो भूल है, यत्कि चाहे आठवें न ह्वाने, से बिसक बालक बीमार हो जाता है। ऐसा देखने में भी आया है रोग २ जल द्वारा सफाई न रखने से बालकों के शिर में मेल जम कर फुन्सियां निकल आती हैं जिसे वैद्यक में उपशीर्षक (चांडचूद) कहते हैं इसी प्रकार गुदा में मेल जमकर गुदपाक (दिशाकेजगह घाय) और कान के पीछे मेल जमकर कनकटी हो जाती है। हां इतना अवश्य करना चाहिये कि जन्म समय में या जाड़े के ऋतु में बालक को स्नान कराया मुलायम कपड़े से बहुत शीघ्र तन्मास शरीर पोंछ ले बाद इसके धात्री अपने हाथों को आग में सेंक ले ताकि फिर ठंड़े २ हांप बालक के शरीर में न लगने पावें, इस प्रकार करने से अवश्य बालक बलिष्ठ होता जायगा। हमने प्रायः देखा है कि गरम ऋतु में भी स्त्रियां धात्रीशिक्षा की अनभिज्ञता से दो २ घंटे तक जन्मतुष्ट बालक को आगसे सेंका करती हैं। दो नह्वाने के बाद यदि बालक किसी कारण से कश और आशक्त देख पड़ता हो तो उसके नह्वाने के पानीमें तनिकसा संधानिमक डाल देने से लड़का बली होता जायगा ॥

जिस दङ्ग से बच्चों को नह्वाना लिखा है यदि वैसाही प्रति दिन स्नान कराया जावे तो अवश्य बच्चा नाना प्रकार के दुःखों से बचा रहेगा इसी से प्राचीन वैद्यवरों ने यह यथार्थ गुण जान संस्कृत में जल का नाम

जीवन (जिलाने वाला) कहा है वास्तविक वायु के नीचे जलही जीवों के जीवन का मूल है बिना जल जीवगण का प्राणधारण कदापि नहीं हो सक्ता । ठीक समय के स्नान से रोगदोष दूररहते हैं नाड़ियां सतेज और शरीर बलिष्ठ होता है । एतद्देशियों के लिये ऐसा उत्तम और कीर्त पदार्थ बलदायक नहीं है इसमें हे बच्चों की माता यदि भीति पूर्वक नि-
 भय बांधके नित्य बच्चों को स्नान कराती जाओगी तो अवश्य बालकोंकी स्वास्थ्यता दिन २ बढ़ती जायेगी इनमें कुछ भी संशय नहीं है ॥

स्तनपान का वयान ॥

जो स्त्री दो एक बार बच्चा पैदा कर चुकी हैं वह जन्मतुए बालक को थोड़ा ठहर के स्तन का दूध अवश्य पिलावे । वज्रतेरी गर्म भिजात वाली स्त्रियों के एक दो रोज स्तन में दूध आता नहीं, उस अवस्था में जब देखे कि दो एक बार बच्चे के मुखमें स्तन दिके चुभलाने से भी दूध नहीं निकलता तब लाचार हो गाय या बकरी के दूध में भाधा गर्म पानी और जरासा रवादार चिनी डाल कर पिलावे । वाद इसके ऐसा उपाय करे * जिससे माताके स्तन में यीघ्रही दूध आजाय क्योंकि जन्मतुए को कुछ रोज तक ऊपर का दूध या किसी प्रकार का खाना खिला कर रखने से बच्चा वज्रत दुर्बल और कमजोर हो जाता है ॥

पर यह बात वज्रत याद रखने के योग्य है कि बिना पानी मिलाज्जभा दूध बच्चे को कभी न पिलावे क्योंकि निखालिस दूध वह हजम नहीं कर सकते । फटा २ दूध की करने लगते हैं और उन्हें घनपचा दस्त आने लगता है और घेठ के दूद के मारि रें, रें किया करते हैं ऐसी हालत में न सुझ पड़ा तो लड़के खतमही हो जाते हैं ॥

* दूध में दो तोला मक्कावर पका थोड़ी सी मिथी डाल कर पिलाना या चार मास तालमखाना के घूण की फंकी फंका कर ऊपरसे दूध पिलाना, सोम प्रकृत वाली को दो पीपर दूध में पकाकर पिलाना ॥

जो बच्चा दूध पीने में इच्छा न करे अथवा वह पीने चाहता है और पीते नहीं वगैरह तो भट किसी अच्छे चिकित्सक को बुला के देखा लेना उचित है कि बच्चे को जीभ किसी दूसरे स्थान से जुड़ तो नहीं गई जो वह दूध नहीं पी सक्ता । यदि जुड़ी हो तो अति सूक्ष्म अस्त्र से उसे चीर कर अलग करदे जिससे कि बच्चा सुख से दूध पीने लगे ॥

यह तो सभी जान सकते हैं कि जहां लड़का पैट के बाहर ज़भा और मां का दूध पिया तहां जखर ही पाखाना फिरेगा लेकिन जब देखि कि जन्तुषा अपनी मां का दूध पीने पर भी दस्त नहीं फिरा और एक या दो रोज बीत गया है तो अवश्य है कि लड़के को एक मासा चंडी के तेल में जरा सा सड़त मिला के चटाई या दूधमें घोलकर पिलादे क्योंकि दो तीनदिनतक पैट में पुराना मल रहने से सुख जाता है और उसी से बच्चे को धगुस्टकार रोग हो जाता है जिसे लोग जमुहा दबाना कहते हैं । ऐसा भी दिखने में आया है कि बच्चे को दस्त आरहे हैं और जज़भा दबा लिया है ? कारण यह है कि आज कल धर्मो विद्या के न जागने से स्त्रियों को देश काल का परिचानता तो जाती रहो परंपरा की अधाधुंध बातें याद हैं, जैसे सोहर ऐसे घर में करना जो घर मकान भर में सब से खराब संकेत अधियारा और कोने में पड़ता है । हवा खुर में भी न जा सके इस तरे मकान बन्द उस पर भी दिन रात राई और जहसुन की धूनी प्रकृती यदि अति गर्म प्रकृति वाली भी हो तो भी उसे झोंका झोंक साठोरा और अजवाइन दिया जाता है । उपरोक्त कारणों से दग्ध ज़भा माता का दूध जहां बच्चे ने पिया यौग्रही दस्त पतका और पेयाव अति गर्म अदहने सा होने लगा, वस शिर में गर्मी पहुंच ताखु (जिसकी ताकत से लड़के दूध पीते हैं) सुख जवड़े का नश खिंच कला बैठ जाता है । इसे भी जज़भा दबाना कहते हैं, और भी बहुत से कारण हैं जिससे यह रोग होता है पर इस देश के मुख्य लोग सेवाय भाड़ फूंक के और जान्ते ही नहीं । फिर यह रोग ऐसा हत्यारा है कि जिस लड़के को होता है उसकी जागही ले के होंडता है । और में इसी रोग से हजारों लड़के मरते हैं । पाठक गण यह अमोख्य बातें आपही पढ़ कर न रखदे प-

रुच को खिन करके स्त्रियों को अशुभ पड़ा। फिर दृष्टिसे स्त्रियां धात्री कम में कैसे चैतन्य हो जायगी कि आप को ४) विजिट दिके भी किसी नेम साधव को न बुलाना पड़ेगा ॥

फिर भी कहा जाता है कि माता को उचित है कि नित्य नियम पूर्वक बंधन से बच्चे को दूध पिलावे क्योंकि प्रायः ऐसा भी देखने में आया है कि बच्चों को मां निरोग रिष्ट पुष्ट और स्तन का दूध बेकार रहित है तो भी बालक बीमार ही रहता है कारण यह कि दूध पिलाने की रीति नहीं जानती ॥

चेत करके देखने बायें दोनों स्तनों का माता पारी २ बच्चों को स्तन पान करा दिया करें यह न ख्याल करें कि स्तन कुड़ाने से बालक रोने लगेगा क्योंकि वैसा न करने से सायत किसी स्तन में दुग्ध इकट्ठा हो जम गया तो प्रौरन वह दूध स्तन में किसी न किसी प्रकार का क्लेश उत्पन्न कर सक्ता है ॥

बाजो २ स्त्रियों का यह हाल है कि किसी रोज लड़के को तो दिन भर दूध ही पिलाया करती हैं और कभी आलस्यवश दिन में प्रकृत दो तीन दफे पिला के रहने देती हैं इससे अनपेक्ष होकर लड़के को अवश्य पेट की बीमारी हो जाती है, इस लिये दूध पिलाने का वक्त बांध रखना चाहिये, जैसा कि लड़के को प्रथम महीने में दिन भर में आठ दफे और रात को दो तीन दफे से ज्यादा दूध नहीं पिलाना चाहिये इसी प्रकार ज्यों २ बच्चों कि आयु बढ़ती जाय अर्थात् पांच छः महीने के बाद चार २ घंटे का नियम बांध दे। अक्सर धात्री लड़कों को नौद से उठा के दूध पिलाने लगती हैं या बच्चा सो रहा है और आप चुपचाप उसे दूध पिलाये जाती हैं यह आदत बहुत ही खराब है, और ज्यादा रात बीते पर भी दूध न पिलाना चाहिये, बांद एक पहर के अथवा ग्यारह बारह बजे के बाद अवश्य

रायेंगे या रात को बच्चा से जरा दूर लड़के को सुलावें ताकि वह मृत मानता दुग्ध न पिये दूर २ सुलाने से मेरा मतलब यह नहीं है कि दूसरी कोठरी या दूसरे पलंग पर ॥

एक आदत और भी यहां की स्त्रियों में देखी जाती है कि जैसे ही रसोई पकाय भांघ से बाहर जावें उसी समय दुग्ध पिलाने लगती हैं या किसी के साथ लड़ रही हैं और दुग्ध पिलाती जाती हैं ऐसा न चाहिये क्योंकि उस समय उनका दुग्ध बिल समान हो जाता है ॥

याद रखना चाहिये कि जब माता को कोई बीमारी हो या तबियत गुस्से या रोच से परेशान हो या व्रत उपवास किये हो तो लड़के को उस समय मा का दुग्ध न पीने देना चाहिये क्योंकि उस दुग्ध के पीने से बालकों को अनेक प्रकार की बीमारी हो जाती है ॥

प्रसूता का शरीर सबल और स्तन दुधार हो तो चार मास पर्यन्त बच्चे को कोई अन्य जहार देने की जरूरत नहीं है यदि सागने के दो दांत निकल जायें तब मा के दूध के सिवा साबूदाना या पुराने चावल का भात दूध के साथ देने से कुछ हर्ज नहीं होता और मा का दूध अभी छुड़ाना उचित है जब लड़के का समय दांत निकल जावे, किसी कारण से मा के स्तन में दूध न होता हो या मा सूतिका ज्वर आदि रोगसे ग्रस्त हो तो चाहिये कि दूध पिलाने को कोई अन्य धात्री रखले या दूध पिलाने वाली सीसी से पिलाये, पर दूध गाय या बकरीही का होगा उचित है और बाजे २ लोग लड़कों को गदहों का दूध पिलाते हैं, लेकिन दूध में पानी जरूर मिलाना चाहिये और जैसे २ लड़के की उम्र बढ़ती जाय ऐसे पानी का हिस्सा भी कम करता जाय, पानी सिर्फ इस लिये बढ़ाया जाता है कि दूध पतला हो जाय जिससे कि लड़के को आसानी से पच जावे और सबेरे का दूध तीसरे पहर को और तीसरे पहर का दूध शाम को न पिलाना चाहिये ॥

जब बरखा छः सात महीने का हो जाय तो उसे मा के दूध के

रंच कोयिन करके स्त्रियों को अग्रस्थ पड़ाइये । फिर उखिये स्त्रियां धात्री कम में कैसे चैतन्य हो जायगी कि आप को ४) विजिट दैके भी किसी मेम साइव को न बुलाना पड़ेगा ॥

फिर भी कहा जाता है कि माता को उचित है कि नित्य नियम पूर्वक वंधेल से बच्चे को दूध पिलावे, क्योंकि प्रायः ऐसा भी देखने में आया है कि बच्चों की मां निरोग रिष्ट पुष्ट और स्तन का दूध वेकार रहित है तो भी बालक बीमार हो रहता है कारण यह कि दूध पिलाने की रीति नहीं जानती ॥

चेत करके दहिने बायें दोनों स्तनों का माता पारी २ बच्चों को स्तन पान करा दिया करें यह न ख्याल करें कि स्तन छुड़ाने से बालक रोने लगेगा क्योंकि वैसा न करने से सायत किसी स्तन में दुग्ध इकट्ठा हो जम गया तो फौरन वंश दूध स्तन में किसी न किसी प्रकार का छेद उत्पन्न कर सकता है ॥

बाजी २ स्त्रियों का यह हाल है कि किसी रोज लड़के को तो दिन भर दूध ही पिलाया करती हैं और कभी आलस्य वश दिन में एक दो तीन दफे पिला के रहने देती है इससे अनपच होकर लड़के को अग्रस्थ पेट की बीमारी हो जाती है, इन लिये दूध पिलाने का वक्त बांध रखना चाहिये, जैसा कि लड़के को प्रथम महीने में दिन भर में आठ दफे और रात को दो तीन दफे से ज्यादा दूध नहीं पिलाना चाहिये इसी प्रकार ज्यों २ बच्चों कि आयु बढ़ती जाय अर्थात् पांच छः महीने के बाद चार २ घंटे का नियम बांध दे । अग्नर धात्री लड़कों को नौद से उठा के दूध पिलाने लगती हैं या वधा हो रहा है और आप सुभर २ उसे दूध पिलाये जाती हैं यह आदत बहुत ही खराब है, और ज्यादा रात बीते पर भी दूध न पिलाना चाहिये, बाद एक पहर के अथवा ग्यारह बारह बजे के बाद अवश्य

रायेंगे या रात को बच्चा से जरा दूर लड़के को सुलावें ताकि वह मृग-
मानता दुग्ध न पिये दूर २ सुलाने से मेरा मतलब यह नहीं है कि दूसरी
कोठरी या दूसरे पलंग पर ॥

एक आदत और भी यहां की स्त्रियों में देखी जाती है कि जैसे
ही रसोई पकाप आंच से बाहर जाईं उभी समय दुग्ध पिलाने लगती
हैं या किसी के साथ लड़ रही हैं और दुग्ध पिलाती जाती हैं ऐसा न
चाहिये क्योंकि उस समय उनका दुग्ध थिय समान हो जाता है ॥

याद रखना चाहिये कि जब माता को कोई बीमारी हो या तथि-
यत गुरुसे या सोच से परेशान हो या अत उपवास किये हो तो लड़के
को उस समय मा का दुग्ध न पीने देना चाहिये क्योंकि उस दुग्ध के
पीने से बालकों को अनेक प्रकार की बीमारी हो जाती है ॥

प्रभूता का शरीर समल और स्तन दुग्धर हो तो चार मास पर्यन्त
बच्चे को कोई अन्य अहार देने की जरूरत नहीं है यदि सामने के
दो दांत निकल जायें तब मा के दूध के सिवा साबूदाना या पुराने चावल
का भात दूध के साथ देने से कुछ हर्ज नहीं होता और मा का दूध
तभी छुड़ाना उचित है जब लड़के का अमग्र दांत निकल जावे, किसी
कारण से मा के स्तन में दूध न होता हो या मा सूतिका प्वर आदि
रोगसे ग्रस्त हो तो चाहिये कि दूध पिलाने को कोई अन्य धात्री रखले
या दूध पिलाने वाली बीबी से पिलाये, पर दूध गाय या बकरीही का
होना उचित है और बाजे २ लोग लड़कों को गदहों का दूध पिलाते
हैं, लेकिन दूध में पानी जरूर मिलाना चाहिये और जैसे २ लड़के
की उम्र बढ़ती जाय जैसे पानी का हिस्सा भी कम करता जाय, पानी
सिर्फ इस लिये बढ़ाया जाता है कि दूध पतला हो जाय जिससे कि
लड़के को आसानी से पच जाये और सबेरे का दूध तीसरे पहर का
और तीसरे पहर का दूध शाम को न पिलाना चाहिये ॥

जब बच्चा छः मास नहींने का हो जाय तो उसे मा के दूध के

जलाया संवारी खाना (दाल भात रोटी) आदि भी थोड़ा २ खिलाना प्रारंभ करदे और पुराने महीन चावलका भात और दूध खिलाना बच्चों को अति लाभदायक होता है, परन्तु यह सांघ कर खिलाना बहुत जरूर है । बहुत सी औरतें बच्चों को जबरदस्ती ज्यादा खाना खिला देती हैं इस वास्ते कि लड़के मोटे तांजे हो जाय, ऐसा समझना गलत भूल है, क्योंकि जितना पच सके उतनाही खिलाना अच्छा है । जियादे खिलाने से लड़के का पेट निकल जाता है, गला पतला और देखने में लड़के दशाहीन मालुम पड़ते हैं, इस लिये कम और दिन रात में सिर्फ तीन या चार दूध खिलाना उत्तम है, और यह बात भी याद रखने के योग्य है कि जब तक लड़का दशमर्ष का न हो जाय बिना दूधके खाना कभी न देना चाहिये, कोई २ दूध न देकर सांस का जून बच्चों को पिछाते हैं परन्तु यह बच्चे के पक्ष में पण्य नहीं कहा जा सकता क्योंकि सबसे पेट में जल (खटा रस) उपजता और पेट फूलता है, और छांट भी हो जाती है, एवं कभी २ पेट में पीड़ा और गरीब भी उठने लगती है । लेकिन दूध भी बनेक गायों का या गाय बकरी भैंस का एक में मिला के देना अनुचित है सिर्फ एक ही गाय या बकरी का दूध देना चाहिये । जिस दोहनी में दूध दुहा जाय अथवा जिस पात्र में दूध रक्खा रखा कर उसको चेत करके देख लेना चाहिये कि भीतर मैग तो नहीं जगा है । मैल जमे और बिना जाग के सँके दोहनी में का दूध शीघ्रही पेट में जाके कटकर दहीवा हो जाता है । सांझ सवेरे दोनों घेला नित्य दुध के टटका दूध उसमें जरासी मिश्री और कसिकाभर निमक डाल कर भात के या रोटी के साथ या ऐसाही पिछा देना बच्चोंको बड़ा फायदा करता है । मिश्री से सांस पुष्ट होता है और जोन से पचने की शक्ति बढ़ती है और पेट में कीड़े नहीं पड़ने पाते ॥

बच्चों को अधिक मीठा और फल फलहारियोंसे रूय परहेज करना चाहिये । यहां के औरतों की मान है कि जहां लड़का रोया फूट उसके हाथ में मीठा या कुछ फल का चीज धँसा देती हैं यह नहीं जानती पीछे हमको गिर पर हाथ घर कर रोना होगा ॥

मीठा खिलाना दांत के हक में बहुत खराब है और इससे शीघ्रही शुखंटी (मिठया) रोग हो जाता है कि जिस बिमारी से आज कल भारत-वर्ष के असंख्य लड़के मितारे अकाल कालवास होते जाते हैं, इस रोग का लक्षण और औपच ज्ञाने लिखेंगे । फल फलहारियों से लड़कों के पेट में बीमारियां हो जाती हैं ॥

लड़कों को कपड़ा पहिनाना ।

जहां लड़का पैदा हुआ उसी वक्त से यहां की धातु शिजा हीन स्त्रियां बच्चे को शिर से पैर तक ऐसा ढांप रखती हैं कि जिसका कुछ बचान नहीं, यहां तक कि गर्म ऋतु में भी रुईदार या फलालैंग के कन-टोप से हर समय शिरको ढांपे रहती हैं । परन्तु इससे बिराह छोड़ कुछ भी गुण नहीं हो सकता । साधारण रुई के कपड़े के टुकड़े की अपेक्षा फलालैंग अथवा अन्य किसी गर्म कपड़े के टुकड़े से बच्चे का पेट बांधे रखना ठीक है । कारण यह है कि बच्चे का पेट दन्दाया रहता है जिससे उसको सुख और स्वस्थता मोघ होती है और घृत्र आदि के द्वारा जो यह भीग भी जाता है तो भी नाभि कन्धनी नहीं भीगने पाती, परन्तु उस भीगेहुये को अलग कर दूसरा पहिना देना उचित है । परन्तु याद रखना चाहिये कि उसे बहुत कस के न बांधें क्योंकि कसके बांधने से अंतरी का काम ठीक न नहीं होने पाता विशेष करके यदि अंतरीका कुछ दुख बच्चे को हो गया तो आरोग्य करने में यही कठिणता पड़ती है ॥

बहुत लम्बे कपड़े के द्वारा बच्चे को लपेट रखना या अनेक कपड़ों में खूब ढांप रखना बिलकुल चाहियात है, सिर्फ एक ऐसे साफ और सु-छायम कपड़े से बच्चों को ढांके रहना चाहिये ताकि मच्छर आदि न काटें न तेज वायु बहुत शरीर में प्रवेश करे और छाती पेट एवं पांख सर्वदा ढांके रहना चाहिये पर शिर नेत्र मुख नाशिका और कर्ण (कान) खुला रहना उत्तम है । जो लड़का जन्मही से रुंध हो या खोंखी आती हो तो जाड़े और वर्षा के दिनों में फलालैंगका टुकड़ा उसे उढ़ाये रहना बहुतही अच्छा है ॥

जब देखे कि कपड़े मैले हो गये हैं या पेशाब करने से भीज गया है और न उतार कर दूसरा साफ कपड़ा पहिराया उचित है क्योंकि भीजा या पसीना खाया हुआ कपड़ा बरत्ने के देह पर पड़ा रहने न पाये ॥

शिर खुला रहे ऐसा सुन कर बहुत से लोग शङ्कित होंगे उन्हें चाहिये कि विशेष कर गर्म ऋतु में मोटे कपड़े की, टोपी या कनटोप न पहिना के पतली चूत के कपड़े की टोपी पहिनाया करें, क्योंकि मोटी टोपी या कनटोप पहिना रखने से भाये में गर्मी पहुँच पसीना चुचुका जाता है बाद खड़ी पसीना शीतल हो फिर उसी गर्म भाये में खुल्ल हो जाता है उसी गर्मी शर्दी के योग से बरत्ने की नाक बहने लगती है ॥

जिन घरमें लडके रहते हों वह घर खूब साफ और हवादार होगा उचित है । रात को लडके गर्मी से रोयें तो उन्हें पक्का झल कर हवा देनी चाहिये । जब चौदह पन्द्रह रोज के लडके हो जाय तो उन्हें गीद में बाहर ले जाकर हवा खिलानी चाहिये, पर यहां की दुष्ट स्त्रियों के मारे लडके बिचारे ज्यों बाहर नहीं निकलने पाते हैं, जहां कोई भी बाहर ले चला यहीं जाय र कर दीड़ी खबरदार बाहर न ले जाओ जलनियां बड़ी टोनहाइन है देखते टोना लगाय देह । हे ईश्वर दयानिध भारत वर्ष से कम यह कुसंस्कार दूर होगा ॥

दांत निकलना ।

बच्चों को दांत निकलने के समय भी बड़ी तकलीफ होती है, प्रायः पतङ्गीय अशिक्षित स्त्रियां दांत आने के पूर्व की अनेकानेक उपद्रवों को टोना और नजर सगुन बस झाड़ू ही फूक के भरोसे में यह कर बालकों के जीवन से हाथ धो बैठती हैं, दांत निकलने का समय सब बालकों का एक सा नहीं होता, किसी को तो सातवें आठवें महीने में दूध के दांत निकलने लगते हैं, कभी ऐसा देखा गया है कि तीस चार मास के भीतरही बच्चों का दांत निकलना प्रारंभ हो गया है । आज तक देखने में नहीं आया पर सुना है कि बाजे बरत्ने घेठ ही से दांत

लिये जाये हैं । अस्तु पर ऐसा बच्चा बिरलाही कोई जन्मता होगा और यह भी कह सकते हैं कि पेट ही से उत्पन्न दांत शीघ्रही ऊँर भी जाता होगा । किसी २ वर्ष के एक दो बरस इससे अधिक वर्ष होने पर भी दांत नहीं निकलते केशवों के जवानी पर दुग्ध का दांत निकलता है किसी डाक्टरों पुस्तक में लिखा है कि फ्रांस देश में एक युद्धिया के दुग्ध के दांत पचासी वर्ष की अवस्था में निकले थे, किसी २ ग्रंथकारों का कथन है कि केशवों के जन्म पर दांत ही नहीं निकलते ॥

बालक के दन्तोत्पन्न का शुभाशुभ फल भी कई एक ग्रंथों में लिखा है, जैसे, यदि बालक दांत समेत जन्मे तो उसका जन्म राक्षसका मानना और उससे अनेक जीवों का लेश पहुंचे और माता को शीघ्र ही नाश करे । प्रथम द्वितीय और तृतीय मास में बालक के दांत निकले तो पिता का नाश करे चाहे वह पिता भूम्य के समान तेजस्वी क्यों न हो पर वह बालक घन ममान है निश्चयही पिता का प्राण हरै । चतुर्थ मास में दन्तोत्पन्न होने से निज आता को नाश करता है । पञ्चम मास में मामा को और षष्ठम मास में माता पिता के घन का नाशक है । अगर सातवें मास में बालक के दांत निकले तो अवश्यमेव दासत्व का प्राप्त (किसी का सेवा टहल करने वाला) हो । अष्टम, नवम, दशम, एकादश, द्वादश, त्रयोदश, और चतुर्दश इन सहीनां में दांत के निकलने से बालक सीमाग्य युक्त अनेक सुखों के भोगने वाला होता है, निपिह मासों में दन्तोत्पन्न होने का शान्ति भी ग्रंथकारों ने लिखा है पर उसके लिखने की कोई आवश्यकता नहीं जान पड़ी ॥

दुग्ध के दांतोंकी संख्या १० ऊपर और १० नीचे मिला कर २० होती है । तिगमें बीच वाले साम्हने के चार २ दांतों को राज दन्त और उनके पास के एक इधर एक उधर इस क्रम से दो २ दांतों को कुक्कुर दन्त (भेदन दन्त) कहते हैं और दोनों तरफ के दो २ दांत इसी प्रकार नीचे ऊपर मिला के दांतों की चौगड़ (पियन दन्त) के दांत कहते हैं । उनके उत्पत्ति का क्रम प्रायः यही देखने में आया है कि पहले नीचे की बाढ़

ऊपर के दांत के मध्य का देा २ दांत सम और बाद इसके पहिले ऊपर अनन्तर नीचे के निकलता है इस क्रम में प्रायः दो वर्षों में समग्र दांत निकल जाते हैं । दांत निकलने के समय अन्तर बर्षों को ऊपर, खांसी और दस्त पतला होने लगता है । अब देखे कि उक्त विमारियां दांत के यजे से हैं और दांतों की जड़ का मांस फूला एवं छूने में गर्म और पीड़ा बोध होता है मस्कुल के उस स्थान को जहां पर दांत बंधे रहते हैं सूक्ष्म छूरी से चीर देना चाहिये । लेकिन ख्याल रखना चाहिये यदि मस्कुल फूला और गर्म न तालुन होता हो तो कदापि न चीरे और न अँगुली से दबाये क्योंकि यहां कि स्त्रियां चिरा न देकर प्रायः अँगुली से फूले हुए मस्कुल को दबा देती हैं ताकि पसड़ा कटकर दांत आसानी से निकल जाये पर इससे चीर देना कहीं अच्छा होता है ॥

दांत निकलने के समय बच्चा जो चीज हाथ में पांभता है उसे मुह में डाल के मस्कुल के नीचे दांतों की जड़ में रख पांभने लगता है । लेकिन यह वस्तु कड़ी हुई तो अपने दूरे से दांत जल्द जाने में अधिक बाधा करता है इससे छोटी और कड़ी कोई वस्तु भूल कर भी लड़के को न दे थायद छोटे से गले ही में चला जाय, सब से उत्तम यह है कि एक रघर का गेंदा या कङ्कण बना कर बच्चे की कलाई में पहिराय दे ताकि उसी को धारम्भार मुह में डाला करे । एक बात और भी देखने में आती है कि प्रायः लड़के दांत निकलने की दशा में अपनी अँगुलियां अँगूठा मुह में डाल पिया करते हैं । सो उसे न छुड़ाना अच्छा है, कारण यह है कि एक तो दांत निकलने की व्याधा शांत रहती है, दूसरे दांत निकलने में हित होता है, तीसरे मुह से लार बहने लगता है, उस अवस्था में लड़कों के मुह से लार बहना बहुत अच्छा होता है । यद्यपि अधिक लार बहा करने से बच्चे की छाती पर का कपड़ा भीग जाता है, परन्तु लार के बहने से तालू जोड़े रहते हैं और आहार की पचन शक्ति बढ़ती है लेकिन बच्चे के मां को यह भी बर्धदा ख्याल रखना चाहिये कि लड़के का मुह तो नहीं आ गया जो लार अधिक बहता है, क्योंकि मुह जाने का लार सियाय हानि के कुछ भी कायदा नहीं दे

मक्ता, यदि हो तो निम्नलिखित उपायों से शीघ्र ही बच्चे के मुह को आराम करना अत्यावश्यक है । जो अधिक ज्वर बढ़ने से बारम्बार बच्चे की छाती और छाती पर का कपड़ा भीग जाया करता है; उसे चेत कर के पोंछ लेना और भीगा कपड़ा उतार के सूखा कपड़ा पहिना देना उचित है ॥

एतद्देशीय बच्चों को दांत निकलने की दशा में नाना प्रकारके रोग घेर लेते हैं और उन रोगों से हजारों बच्चारे लड़के मर जाते हैं । कारण यह है कि एक तो यहां कि अपढ़ स्त्रियां जन्मतेही से बच्चे को अफीम लिखाना शुरू कर देती हैं कि जिसे दांत आति पीड़ा और जलन के साथ निकलना है । दूसरे चाहे लड़का मर जाय पर मुसकुर कभी न चीरने देंगी, तीसरे टोना टागर पर ऐसा दूढ़ बिस्वास पड़ा है कि सिर्फे झरवाने ही के भरोसे में बच्चे को खतम कर डालती हैं ॥

माता के दुग्ध विकार से प्रायः बच्चों का मुह आजाता है, सो दो प्रकार का है जो बच्चे के मुख में सफेद मलाई सी जमी और पटी, २ वी देख पड़े यह मुख आस है लौकिक में इसे सफेद मुहा कहते हैं इसमें मुह से लार बहुत बढ़ता है और जो बालक के मुख में लाल २ दाने या छाले पड़ जाय उसे मुख पाक (लालमुहा) कहते हैं ॥

चिकित्सा ।

सफेद कत्था इ मासा, शीतलचिनी १० दाना, कपूर १ रत्ती तीनों को पानी में पीस अँगुली से मुख के भीतर लेप करै ॥

पीपल का छाल और पल्ल दोनों सुखाय बराबर ले कूट कपड़ खान कर २ रत्ती के अन्दाज दिन में ४ दफे सहत के साथ पटाने से बच्चों का मुखआस आराम होता है ॥

सरियन, लोच, तिल, मुलहठी, चारो को छः २ मासा ले पाय भर जल में काय कर, उसी काय में रुई भिगा २ बच्चे का मुख दिन में दो

या तीन दफे पोछ लिया करे इसके मुख पाक शीघ्रही मिट जाता है । लेकिन बच्चे की मां को परहेज आवश्यक करना चाहिये । दन्त चिकित्सा आगे लिखेंगे ॥

अब सिर्फ यह बात कहना है कि कभी दांत निकलने के समय बच्चों की देह में जा बजा खास कर कानों के पीछे छोटी २ फुन्मियां या खाज उभरती है परन्तु एकाएक किसी जीपघ को लगाकर अराम करना हानि कारक है, उस स्थान पर कोई जीपघ लगाने की जरूरत नहीं है सिर्फ नीम के पानी या माखुन से रोज २ घों देना काफी है और कभी २ जगसा देही का तेल दे के कोठा साफ कर देना चाहिये, इस आपही निश्चय हो जावेगी ॥

बच्चों को हवाखिलान ।

अत्यन्त छुट पनही से चाहिये कि बच्चे को नित्य गोद में ले कर शीतल सघरे घर के बाहर किसी स्वच्छ स्थान में जा निर्मल और आरोग्य कारक वायु का सेवन करावे । कितने रोज के लड़के को बाहर लि जाकर हवा खिलाना चाहिये ? यह बात देश काल और ऋतुओं के स्वभाव से मातुम हो सक्ता है । जैसे गर्मी के दिनों में प्रातःकाल और संध्यासमय पन्द्रह बीस रोज के बच्चे को भी गोद में लेजाकर बाहर हवा खिलाना उत्तम है परन्तु जाड़े और बरसात में इतनी अवस्था वाले को बाहर ले जाना अच्छा नहीं है ॥

जब बच्चा तीन चार महीने का हो जाय तब तो नियमही प्रतिदिन दोनों समय बच्चे का पांव अच्छे कपड़े से ढांप तोप के गोद में लेके बाहर किसी उत्तम स्थान में घुमा ले जाना लड़कों को जीवन रूपी धृक्ती जड़ में अभूत का सींचना है । प्रायः देखने में आया है कि जहां बालकों को गोद में लिया बालक खुद प्रसन्न हो बाहर ले चलने के लिये चेष्टा प्रकाश करता है और बाहर ले जातेही बच्चे बहुत मुस्तुष्ट और प्रफुल्लित

देख पड़ते हैं । जिस दिन बड़ी ठण्डी हवा चलती हो या गरदा गुबार हो तो बच्चे को कदापि न ले जाना चाहिये ॥

प्रायः हिन्दुस्तानी गँवरदल मर्द और औरतें छहकों को गोद में लेना मिलफुल नहीं जानती हैं और न अँगरेजों के छहकों की गोद में लिये हुए देख शिक्का होती है । यहां कि जो बेषकूक मजदूरिन या खुद बच्चे की माता बच्चे की जांच पाड़ अपने कमर पर बिठा कर ले चलती हैं बल्कि वही को गोद में लेना जानती हैं, इस प्रकार गोद में लेना छहकों के स्वास्थ्य में बड़ा हानि पहुंचाता है, यहां तक कि फीते के नीचे की नस में जति रगड़ पड़ते २ वही जुवा अवस्था में क्लीष्टत्व का रूप दिखलाता है ॥

बचपन ही से अङ्ग का प्रचालन स्वास्थ्यता के लिये आवश्यक है, यही कारण है कि ईश्वर ने बच्चेको जन्मतेही से उनकी प्रकृत हाथ पैर सकेलने और फेकने की करदी है । सबको उचित है कि चेत करके बच्चों को एक छोटे खटोले या चीरस जमीन पर गुलगुला और चांफ बिछौना बिछा उतान लिटा दिया करे, तब देखिये बच्चा कैसा हर्षित और प्रफुल्लित हो हाथ पैर ऐंथता और फेकता है और खिल खिला कर हंसता है कि देखतेही बनता है, उक्त क्रिया (परिचालन) से बच्चे की आन्तरिक प्रेरियां बढ़ती हैं और पीठ की रीढ़ एवं हाथ पांय अच्छा बलाग होता है और विशेष बात यह है कि बच्चे का खाना हजम हो जाया करता है ॥

देखिये ईश्वर की कृपा से प्रथमतः बच्चे अनायास स्वभाव ही से बकियां चलने लगते हैं और फिर स्वभावही से क्रमशः कुछ शान्त खड़े भी होने लगते हैं बाद चलने फिरने की शक्ति हो जाती है भगवान ने जो कुछ चमत्कारी और प्रवीणता किया है सब धन्य है कितनी स्त्रियां बच्चों को बकियां चलने से रोकती हैं इस लिये कि कपड़ा मैला हो जायगा यह नहीं जानती कि बकियां चलने से बच्चों की जांच, हाथ पांय और नस नस रोज बरोज बली होते जाते हैं ॥

यह भी स्त्रियों को जानना अवश्य है कि जब तक बच्चे की पीठ का हाड़ (रीढ़) मजबूत न हो जाय और लड़के कुछ थाम कर खरब न सके होने लगे तब तक प्यार से बच्चे को बहुत मक्ककत्तोरे और न खड़ा करने की चेष्टा करे, प्रायः बच्चों को नादान स्त्रियां दोनों हाथ में पकड़ के नंदे के समान ऊपर उछाल कर लोक लेती हैं यह महज नादानों है क्योंकि इस तरह पर बच्चा मगभीत हो जाता है और जन्तु (हँसिया) एवं रक्त के चक्र में व्यतिक्रम पड़ जाता है और दूध पिलाने के बाद भी बच्चे को न मक्ककत्तोरेना चाहिये ॥

बच्चे के लेटे रहने का स्थान या कोठरी को न तो चारोतर्फ से ढपा रहना चाहिये कि जिस्से एक बारगी वायु का आना जाना बन्द होजाय और न ऐसाही सोल रखे कि शीतल युक्त वायु सगस्त घर में भर जाय चेत करके बच्चों के लिये एक ठोटीसी मसहरी अवश्य बनवा डे ताकि लेटे हुये बच्चे को मसा मच्छर आदि जीव न काट सकें, यह भी प्रायः देखने में आया है कि सेल उपटन के बाद लेटे हुये बच्चों के खटोले पर अकसर चाँटी चढ़ जाती हैं इसलिये मसहरी के चारो पाये के नीचे चार प्रत्यल की कूड़ी में पानी भर कर रख देना उचित है ताकि कोई जीव जन्तु बच्चे की खाट पर न चढ़जाय, बाकी दूसरे खण्ड में देखो ॥

वीर्य ।

यह बात प्रगट है कि प्राणी मात्र के लिये आरोग्य और स्वस्थ रहने का मुख्य कारण वीर्य की ताकत है, जिसका वीर्य क्षीण स्वल्प या शुष्क हो जाता है वह अवश्य किसी न किसी रोग में ग्रस्त हो शीघ्रही मृत्यु के कराल मुख में प्रवेश करता है या सदैव के लिये किसी न किसी कठिन रोग में लिप्त हो गृहकार्य देवकार्य और विद्या के पठन पाठन आदि सतकार्य से रहित हो पूर्ण आयु भर उसका जीवन निष्फल एवं दुःखदाई हो जाता है । यह सभी जानते हैं कि सगान्यता से वीर्य सम्पूर्ण शरीर में रहता है पर विशेष कर वीर्य वीर्योश्मय और स्त्रियों

के शुद्ध रक्त में रहता है यदि उनमें क्षीणता हुई तो शीघ्रही शरीर का नाश हो जाता है । कैसे परम शोक का स्थल है कि मनुष्य इस धीर्य को तुच्छ और अमर समझ कर नष्ट और धिक्कर करने में कुछ भी शंका नहीं करते और कुसंग वध हस्त मैथुनादि या वेश्या गमनादि विषय में लिप्त हो थोड़ेही काल में अपने जन्मांत सुख परम पीठप और मान बहाई को भी हाथ से रो बैठते हैं । बुद्धिमान को उचित है कि दुपा धीर्य कभी न नष्ट करें यत्कि जहां तक हो निरन्तर इसके दृढ़ करनेहीं की चेष्टा में रहें क्योंकि धीर्यही शरीर का भूल है, धीर्य ही के बल से शरीर में तेज पराक्रम सौंदर्यता और विद्या प्राप्त होती है ॥

कितने भयानक रोग भाग्य देह में घुस कर शरीर को नाश करते हैं ज्ञान न होने के कारण मनुष्य अकस्मात् कितनी विपदा में गिरजाता है, कोई नहीं कह सकता । जानकर भी कितने आदमी हैं, जो ऐसी विपदा के भय से सतर्क हो कर उनसे बच सकते हैं ?

यास्तविक में मनुष्य यह कह कर कि हम इनसे नहीं बच सकते हैं, पग पग में रोग यन्त्रणा और मन की यातना आदिक शारीरिक मानसिक अशेष क्लेशों में फँस कर दुःख भोग करते २ इस जीवन की लाशा को समाप्त कर देता हैं । तो भी जो मनुष्य विचार शील और पतुर होता है, वह सतर्क रह कर और जहां तक हो सकता है इन सारे पापों से बच कर अनेक सुख के साथ जीवन निर्वाह करने में अवश्य समर्थ होता है ॥

जैसाही हो, पाप तो अनेक प्रकार से संचलित होताही रहता है, किन्तु मनुष्य इस पाप या अनिष्ट का कारण सर्वत्र नहीं जान सकता है । जानने की सामर्थ्य भी हो तो भी यह समझ कर कि हम नहीं जान सकते, मनुष्य अनेक प्रकार के पापों का भागी बनजाता है । इस लिये इसी अज्ञात या अज्ञान पाप के विषय में ही आज कुछ फटना चाहते हैं ॥

अतिशय स्त्री संसर्ग करने में शरीर घीरे २ टूट फूट जाता है, दस्त

मैथुन करने से भयानक अनिष्ट होता है, भारी खाना खाने से उदरामय (पेचिस) उत्पन्न होती है, बहुत पढ़ने चिन्ता और शोक आदि के करने से मनोवृत्ति और विचार शक्ति बहुतही निस्तेज हो जाती है, इत्यादि ऐसे २ पापों और उनके कारणों को बहुत लोग जानते हैं और जान कर यथा शक्ति उनसे बचने की चिन्ता करते हैं किन्तु पर-स्त्री निषेधक चिन्ता और देहस्थशत घातु को तेज करनेवाले बहुत कारणों से मनुष्यों का जो अनिष्ट होता है, उसे किसने आदमी जानते हैं । नहीं जानते यही समझ कर हम आज अलक्षित पाप या अनिष्ट के विषय को साधारण मनुष्यों के उपकारार्थ कहना चाहते हैं ॥

महात्मा चरक ने कहा है ।

रसद्वजौ यथा दधिन् सर्पिस्तैलं तिले यथा ।

सर्व्वानुगतं देहे शुक्रं संस्पर्शने तथा ॥

तत् स्त्री पुरुषसंयोगे चेष्टा सङ्कल्पपीडनात् ।

शुक्रं पच्यते स्थाना ज्वल माद्र्मात् पटादिव ॥

हर्षान्तर्यात् सरत्वाच्चपौच्छिल्याद्गौरवादपि ।

अनुस्रवन भावाच्च द्रुतत्वान्मासुतस्य च ॥

अष्टाभ्य एभ्य देहेभ्यः शुक्रं देहात् प्रसिच्यते ।

अर्थात् जैसे ऊख में रस, तिल में तेल और दधि में घी सर्व्वत्र अनुगत भाव से विद्यमान रहता है । वैसेही शुक्र घातु भी सर्व्वत्र देह में अनुगत भाव से रहकर चर्म में अधिक रहता है । यही शुक्र स्त्री पुरुष के संयोग चेष्टा संकल्प और पीड़न द्वारा भीगे यस्त्र से जल की नायी अपने स्थान से गिर जाता है । उसी तरह हर्ष द्वारा यह शुक्र भी जल मूत्रमूत्रादिर भारी पञ्चल और घलायमान हो कर देह से निकलने लगता है ॥

इन्हीं सारे महात्माओं के वाक्य के अनुवर्त्ती हो कर पुरातन काल से ही हिन्दू शास्त्रों में शुक्र धातु के अव्यहित रखने के लिये बहुत से उपदेश पाये जाते हैं । आयुर्वेद तो है ही है, उनके सेवाय वेद पुराण स्मृति, अनुसंहिता आदिक जिस किसी शास्त्र को खोला देखोगे-सारे शास्त्र में ही स्त्री पुरुष के विषय में किसी २ सुन्दर युक्ति और उपदेश हैं । किसी वयस और किसी अवस्था स्त्री पुरुष का विवाह उचित है । स्त्री पुरुष के कैसे संयोग से अच्छी सन्तान उत्पन्न हो सकती है, पुरुष के शुक्र और स्त्री के आर्तव में कैसा दोष हो जाने से सन्तान नहीं होती अथवा विकृत सन्तान होती है, और दूषित शुक्र और रक्त के संशोधन का उपाय हम जितना कुछ जानते हैं उन सब बातों के विषय में शास्त्राकार कुछ न कुछ आन्दोलन कर गये हैं । इन में शारीरिक सम्बन्ध हेतु वैद्यक शास्त्रों में अच्छी प्रकार वर्णन किया गया है । वास्तविक में वैद्य शास्त्रकार लोगों ने इस विषय में जो २ मूल्य २ तत्त्व का अनुसन्धान कर गये हैं, उसकी तुलना में हम लोग आज कल के चिकित्सक गण कोई नई बात नहीं जानते हैं, क्यों नहीं जानते इस बात को हम धीरे २ बतावेंगे कुछ ही हो, वैद्यकशास्त्र में शुक्रधातु को सर्व्व प्रकार अवल रखने के लिये बहुतही उपदेश हैं ॥

शुक्रांतस्माद्विशेषिण रक्ष्यमारोग्य मिच्छता ।

अर्थात् आरोग्य या सुख की अभिलाषा करनेवाले लोग शुक्रधातु की सर्व्वदा रक्षा करते हैं । क्योंकि शुक्र विशुद्ध न रहने से ननुष्य पुरुषत्व या पौरुष से हीन हो कर एक प्रकार सारे सुखों से मञ्चित हो जाता है * ॥

* चाहे कोई हमारी इस बात को यहाँ न माने किन्तु जो पुरुष स्त्री संसर्ग नहीं करता, या जो स्त्री संसर्ग की शक्ति नहीं रखता वह सारे सुख समीप से वंचित रहता है । अतएव वहाँ पर हमारे वक्तव्य का औरही ग-और उद्देश्य है । वह अवश्यही अपने पाठकगणों को किसी न किसी समय बतावेंगे ।

यह तो शास्त्र की बात हुई । अब हम इस बात की आलोचना करना चाहते हैं, कि आज कल के हिन्दू लोग इन शास्त्र की बातों पर कहाँ तक चलते हैं । किन्तु आलोचना क्या करें, जिस हिन्दू धर्म की दोहाई देकर, जिन शास्त्रकारों के वाक्यों की श्रेष्ठा प्रतिपादन करके आज हम इन सारी बातों का आन्दोलन करते हैं, पर अपशोष, क्या उन बातों के कहने को हमें स्थान मिला है ? कौन हिन्दू सन्तान इस गम्भीर वाक्यों के मर्म को जान कर इसपर काम देगा ? हम यही नहीं कहते कि कोई नहीं सुनेगा । हम कहते हैं कि दो एक सनुष्य को इस सारी बात पर ध्यान देना असम्भव हिन्दुओं में न सुनने के ही बराबर है ॥

जो है, हम शुक्र धातु के दूषित नीर नष्ट होने के कुछ न कुछ कारण बतला ही देते हैं ॥

जो इन सारे कारणों में सबसे पहले बाल्य विवाह आदिक कितने एक सामाजिक दोष हमारे सम्मुख खड़े हो जाते हैं, किन्तु हम कहते हैं कि हमारे देश में इस समय बहुत से लोग पूर्ण जीवन अवस्था में भी विवाह करके इन सारे दोषों से नहीं बच सकते हैं क्योंकि जब बीबीस बरस के बलिष्ठ भारोग्य बालक का आठ दश या ग्यारह बरस की कन्या से विवाह हुआ उसी दिन से उस जवान बालक का इस लड़की के साथ विवाह करने के कारण शारीरिक अनिष्ट होना शरारत हो जाता है । देश की रीति अनुसार वह जवान उसी दिन से उस दुग्ध पोष्य बालिका को जवान स्त्री समझने लगता है । उस बालिका के साथ उनका सहवास तो होने ही लगता है । इसके विधाय कोई २ आदमी पशुवत् व्यवहार करने से भी नहीं हटते इस सहवास से जो अपकार होता है उसे चाहे कोई समझ न सके किन्तु विचार करने से इसका अनिष्ट तो अवश्य ही जान सकेंगे । कह चुके हैं कि इस सूक्ष्म अनिष्ट के विषय पर आलोचना करना इस ग्रन्थ का प्रधान उद्देश्य है । यह तो हमने पहिले कह दिया, कि जैसा तिल में तेल नीर कस में रस

अनुगत भाव से विद्यमान रहता है, शुक्र धातु भी ठीक वैसाही शरीर में विद्यमान रहता है । तिल या ऊख के पेरने से जैसे तिलका तेल और ऊख का रस एकट्ठा हो कर निकल आता है, शरीरस्थ शुक्र धातु भी ठीक वैसा ही स्त्री पुरुष के संयोग, चेष्टा संकल्प और रगड़ से भाँगे वस्तु से जल की तरह अपने स्थान से गिर जाता है । तिल या ऊख को पेर कर उसी समय उसको न निकाल लें तो थोड़ेही दिनों में गूट्ट हो जाता है । देह का शुक्र धातु भी चाहे किसी कारण अपने स्थान से हट जावे यदि उसी समय बाहर न हो जाय तो दूषित हो कर नाना विध रोग उत्पन्न करता है । अब देखना चाहिये कि नाना कारणों से मनुष्य का धातु अपने स्थान से हिल जाता है या नहीं । कोई पर स्त्री विषय की चिन्ता कर के कोई अपनी बालिका स्त्री के साथ प्रत्यह संसर्ग में ही रहकर कोई शुक्र के उत्पीडक या स्थान भ्रष्ट करने वाले कर्म करके, शरीरस्थ शुक्र धातु को यहां से वहां करके दूषित करते और नाना प्रकार के रोग कमाने में कभी नहीं चूकते हैं । यह तो सूक्ष्म जनिष्ठ की बात हुई अर्थात् इस सारे पूर्वोक्त कारणों से शरीरस्थ शुक्र धातु अपने स्थान से हटाता है या नहीं और हट कर कोई विशेष जनिष्ठ करता है या नहीं, यह केवल सूक्ष्म चिन्ता के बिना ऐसी वैसे बातों से समझाना कठिन है । कुछ ही हो, शुक्र वेग को रोकने या उसे स्थान से हटाने से केवल अदृश्य अपकारही नहीं होता । इसके बिया कोई एक बाहरी रोग भी उपस्थित हो जाते हैं जैसा कि वैद्य शास्त्र में लिखा है ॥

मेढ्रे वृषणयोः शूल मङ्गमर्द्दी हृदिव्यथा ।

भवेत् प्रतिहते शुक्ले विवस्व मूत्रमेवच ॥

अर्थात् शुक्र के उपस्थित वेग के रोकने से पुरुष के अङ्ग और कोष में तीव्र वेदना हड़ फूटन और हृदय में वेदना, और मूत्ररोग हो जाता है । फिर कहा जाता है कि जो अनेक समय बालिका स्त्री के साथ बिना संसर्ग के रहते हैं उनको भयानक प्रमेह और धातु का रोग हो जाता है । परन्तु इसी अवस्था से घीरे २ एकशीरा और कोरगह आदिक

कठिन व्याधि भी उत्पन्न हो जाती हैं । और शुक्र धातु की इस अवस्था में धीरे २ बौर्य होन हो जाने में कोई सन्देह ही नहीं है ॥

यहां पर यह बिचार करना पड़ता है कि यद्यपि देह में सब से श्रेष्ठ शुक्र धातु में पद २ पर जो दोष उत्पन्न हो जाने की सम्भावना है, उसे कितने मनुष्य जानते हैं और जानकर भी कितने लोग इन दोषों से बचने की चेष्टा करते हैं । हमारा यहां तक विश्वास है, यहां तक हम कह सकते हैं कि देह में इस प्रकार शुक्र धातु के उत्तेजित होने से भीतर और कभी २ बाहर भी बहुत सा अनिष्ट होता जाता है ॥

अनेक प्रकार से सिद्ध हो सक्ता है कि हिन्दुओं की देही के अव-
नति का यही कारण है । विस्तार हो जाने के भय से हमने इस पर और कुछ अधिक नहीं लिखा । जितना कुछ हमने लिखा है उसे पढ़ कर अनेक पुरुष इन दोषों से यथा शक्ति बचने की चेष्टा करेंगे । कुछ ही हो, इसके पीछे जो हम स्त्री पुरुष संसर्ग के विषय में लिखेंगे उसमें इन सारी बातों का भी अन्वेषण करते जायेंगे ॥

स्वप्न दोष चिकित्सा ॥

आज कल यह रोग भी छोटी २ अवस्था वाले पुरुषों में अधिक तर फैला हुआ है । आगे के जमाने में इस बिमारी का कोई नाम भी नहीं जानता था और न ग्रहस्थलों में इसका कहीं निदान और चिकित्सा है जब से बाल विवाह होना आरंभ हुआ है तभी से इसका भी जड़ जमा है, इसके अतिरिक्त रोगियों कि अधिकता, मूर्खता और विषयाओं का भ्रम, भारत के घन का होम खसम जोर में जूती जुतवुल और आर्यावर्त की कुदशाओं का प्रघार यह सब बाल विवाह ही से हुआ है अभी क्या कुछ दिन बाद देखियेगा कैसे २ फटार बहादुर पैदा होंगे कि शायद मिलस्त ॥ कुछ ऊंचे हां सेर आपसेर बोक्ता उठाने और मील आपमील चल भी सके ॥

स्वप्नदेाप कई कार्यों से होता है एक तो अकाल में हस्तमैथुनादि
अनेक संसर्ग से भीर्य का पतन होना, दूसरे तरह बेतरह की चिन्ता, ती
सरे विषयसक्तों की सङ्कति, चौथे मंग चरस चखडू शराब में दिनरात मस्त
रहना, पांचवे अपनी स्त्री को देख गुस्सा करना और ना धाप से कहना
कि हमें खर्चा देओ नहीं तो परदेश चले जायंगे, छठे ना धाप की हांठ
ससुर तुम्हार बियाह करदिया गीना करदिया मेहर का लैके रहौ पैदा
करी खाव । और भी बहुत से कारण हैं जिन्हें भीर्य देाप के मसंग में
कहिंये ॥

चिकित्सा ॥

सफेद मूखली २ भाग, मसालाकी ठुरी ३ भाग, तालमसाला ४ भाग,
इन तीनों दवाइयों को ले कर फूट कपर छान कर सब की जाधी मिथी
मिला छ २ मासे की पुड़िया बना ले शाम सवेरे एक पुड़िया मुहमें रख
पाय भर गी के दूध से सतार जाये इसी प्रकार ३ महीने बराबर खाने से
स्वप्न देाप अवश्य बन्द हो जाता है । परन्तु गर्म बीज और नशा बगैरह
से पहरेज करना होगा ॥

बहुत से अजान लोग रात को सूय सल लँगोट बांध के सोते हैं
ताकि शयाय न हो लेकिन इससे और भी होता है । किसी मनुष्य की
रात के लँगोट बांध के न सोना चाहिये सबस यह है कि रात्रिको नूत्र
की पैली में मूत्र का अंस अधिक हो जाता है पेशाब लगने पर ओखस
यस यदि रुठ कर पेशाब न किया और सो गया तो अवश्य स्वप्न हो
जायगा ॥

अँगरेजी दवाइयों की समालोचना ॥

पाठक गणों के स्मरणार्थ कुछ हाक्करी औषध का भी गुणागुण प्र-
काश करते हैं कि जो आज कल सर्वसाधारण में प्रचलित हैं, पर लोग

ज्वर एवं हैजा रोग में यदि शरीर हिमाङ्ग हो जाय तो निम्न-लिखित औषध मर्दन करने से यथेष्ट उपकार होता है ॥

जायपाल का तेल १ हुआम, केम्पर लिनिमेन्ट २ औंस, तारपीन का तेल १ औंस एकत्र कर हाथ पैर में मालिस करै ॥

ऐल सिनेगन दालचिनी का तेल । यह भी तैल हरिद्रा वर्ण होता है । इसके प्रायः अजीर्णादि रोगों में देते हैं मात्रा १ बिन्दु से ३ बिन्दु पर्यन्त है । इसके भी यदि रुई के काहे में मोर कर दन्त छिद्र में रखे तो दन्तक्षत शीघ्र आरोग्य हो ॥

अभिनिवेश चित्त से ध्यान देकर देखते हैं तो कतिपय अंगरेजी औषध ऐसे देखे जाते हैं कि जिनका गुण कथित रोगों पर यथार्थ लक्षित होता है पर उनकी वनाघट ऐसे ढंग से है कि जिसकी व्यवस्था देखते ही पुराने लोग घृणा करने लगते हैं । जैसे कि मलहम कोई अंगरेजी मलहम ऐसा नहीं है कि जिसमें सुभर की चर्बी न पड़ती है ॥

आइन्टमेन्ट (मलहम) आफ आइओडिन कम्पौण्ड इस मलहम का रंग किञ्चित् रक्तियु वर्ण होता है और ॥) का एक औंस (आधो छटांक) अंगरेजी दवा खानों में गिलता है । गलगण्ड, गण्डगाला, यकृत (लीवर) स्त्रीहा (स्त्रीन), कर्णमूल स्त्रीक गला और बगल की गिल्टी एवं कोप शिरा का सरतपन इन सब रोगों पर उक्त मलहम के मर्दन करने से शोषण क्रिया द्वारा चाहे रोग समूल नष्ट न हो परन्तु उपरोक्त रोगों का चेष्टि होना शीघ्र ही दूरी भूत होता है ॥

आइओडिन २० ग्रेन (१० रत्ती) रेक्टफाइड स्पिरिट १ हुआम (३० रत्ती) मूकर चर्बी २ औंस (एक छटांक) एकत्रित कर घोंट ले पूर्वोक्त रोगों पर थोड़ा २ अंगुली से या किसी दूसरे पदार्थ से लेकर दिन में दो तीन बार मर्दन करे ॥

आइन्टमेन्ट आइओडाइड आफ पुटैस इसका गुण उपरोक्त मल-

हृग के सदृश है । विशेषतः इसमें यह है कि बालक के यकृत मीठा और अशुंदादि रोग में थोड़ा २ मालिस करने से अधिक फायदा करता है । इससे जलन आदि नहीं होता ॥

आइन्टमेन्ट आफ जिङ्क यह स्वेत रक्त का मलहम है । स्त्री-के स्तन का घाय । शिर के घाय दाह रोग स्तन और जिस घाय में पानी सा पुगपुगाता है इस मलहम के लगाने से घाय शीघ्र शुष्क होता है और नेत्र के पलक पर इसका लेप करने से नेत्र दाह और सोते समय पलकों का चपक जाना जाता रहता है ॥

✕ अफसाईड आफ जिङ्क ॥० या १ ड्राम ऐल रोजमेरि ५ बिन्दु शुगर की चर्बी १ औंस एकत्रित कर लिन्ट वा कपड़े की पट्टी कतर उसपर स लहम लगा घाय पर लगा दे ॥

आइन्टमेन्ट येगाडेना इसका गुण नैदना निवारक है ॥

शरीर के चाहे जिस स्थान में दर्द हो इस मलहम के मर्दन करने से अवश्य फायदा होता है । यह मलहम केवल एकघट घंट बेना होता और सुगर की चर्बी से घनता है ॥

आइन्टमेन्ट सलफर कम्पौंड गन्धक का मलहम । यह मलहम साज की बिनारी को बहुत शीघ्र आराम करता है । पहिले खजुरी के घाय को गरम पानी और सायुन से सूय पो छोले बाद यह मलहम लगावे । इस मलहम को इस तरे घना ले । साफ गन्धक ६ ड्राम, फिट्करी २ ड्राम सारा १० घेन, कोमल सायुन ६ ड्राम, ऐलवर्गेमेन्ट ५ बिन्दु, सुगर की चर्बी २ औंस इन सब दवाइयों को एकत्र कर सरल में सूय पोर्ट ले ॥

याकी दूसरे खपट में देखो



सूचीपत्र ॥

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
मङ्गलाचरण	१	मापन निग्री	३६
प्रस्तावना	२	आंखला का मुखवा	"
मुख्य प्रयोगजन	३	गोसुर पाक	३७
शीघ्र प्रकर्ण	"	दूसरा भोजन	३८
दन्तधावन	८	भोजन का तीसरा समय	३९
दन्त मञ्जनादि	१०	केवाख पाक	"
प्रातःकाल की हथ्या खाना	"	रात्रि भोजन	४०
जूता पहिरने का गुण	११	अति लाभदायक शिक्षा	"
छड़ी लेने का गुण	"	सुयह का उठना	४६
तेल लगाने का गुण	"	शरद ऋतु के गुण	४८
शिर में तेल लगाने का गुण	१२	आमृद जल की विधि	४९
काम में तेल छोड़ने का गुण	१४	हेमन्त ऋतु	५०
शरीर में तेल लगाने का गुण	"	सूमली पाक	५१
चन्दनादि तैल	१५	रतियक्ष्म पाक	"
खान करने का गुण	१६	हेमन्तऋतु का पथ्य	५२
तेल लगाके खान करने का गुण	१७	यमन्तऋतु	५३
खान करने का समय	१८	मुल्लिस और जुलाय	"
कसरत करने का गुण	२१	हाकरी जुलाय	५४
कसरत करने का समय	२३	ग्रीष्मऋतु	५५
चन्दन लगाने का गुण	२४	पेठे का मुखवा	५८
पैर धोने का गुण	"	प्राष्टऋतु	५९
भोजन	२५	जाम के सघोह का गुण	"
भोजन के पात्र	२७	जाम की जेठी	६२
अन्नपाक यंत्र	३१	जलप्रकर्ण	६३
भोजन करने का समय	३३	जल का नाम	६६
निपिदुग्ध	३४	संसाधारण जल के गुण	"
जलेबी का गुण	३५	तालाय के जल का गुण	६७

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
बावली के०	"	की विधि	८१
कूप के०	"	हैजे की दवाइयां	८३
यमुना नदी के०	६८	आध्यात्मिक भक्ति	८७
गङ्गा नदी के०	"	आध्यात्मिक शक्ति साधन	८८
रोगकारक जलका परिधान	"	लडकों की पसुली की बीमारी	८९
अति शीतल जल का गुण	"	पसुली रोग के लक्षण	८७
शीतल जल का निषेध	६९	अनभूत दवा	"
जादा पानी पीनेका निषेध	"	भातु शिक्षा	९९
अद्भुत	"	बालकों का स्नान	१००
पानी से मूत्रा बालू निकलना	७०	स्नान पान कराने की विधि	१०२
बिना भाग के भाग जल उठे	"	लडकों का कपड़ा पहिनाने की	
कई डङ्ग से अक्षरों का उड़ जाना	"	विधि	१०७
मेाग की बत्ती बिना जलाये जल		लडकों के दांत का बधान	१०८
उठे	७१	मुख पाक की चिकित्सा	१११
घरतनों पर चांदी चढ़ाना	"	बच्चों को दवा खिलाना	११२
घरतन साफ करने की विधि	७२	बीर्य्य प्रकरण	११४
सीसे (ऐने) पर कलई करना	"	अति बीर्य्य निकलने से रोग	१२०
घरतनोंपर रांगेकी कलई करना	७३	स्वप्न दोष	१२०
जरातन सिलवर बमाने की विधि	"	स्वप्न दोष की चिकित्सा	१२१
पुटीन य०	७४	अङ्गरेजी दवाइयों की	
दो चीजों के मिलने से चमत्कार	"	समाखीचना	१२४
हैजा प्रकरण	७५	मुजाक की दवा	"
हैजा पपों होता है	७६	अङ्गरेजी तेल और मलहमों का	
सफाई	७८	वधान	"
हैजा न होने का उपाय	७८		
पर से सराय दवा निकालने			



आरोग्य दर्पण ॥

“द्वादश प्रज्ञों का एकजिल्द”
द्वितीयखण्ड ॥

जिसमें भोजनान्त में मुरा घोने से लेकर गर्भाधान पर्यन्त^{५३८}
कर्म, अति लाभदायक शिक्षा आदि अनेक विषय
पूरित पण्डित जगन्नाथ शर्मा राजवैद्य ने
लोकोपकारार्थ रच कर प्रकाश किया ॥

आयुर्वेदाक्त औषधालय

जानसेनगञ्ज

प्रयाग

“धार्मिकयन्त्रालय में मुद्रित हुआ”

सिधाय ग्रन्थकर्ता के किसी को ठापने
अथवा भाषा अदल बदल
करने का अधिकार
नहीं है ॥

द्वितीयावृत्ति १००० साह सेप्तम्वर सन् १८८४ मूल्य १॥

सूचीपत्र ।

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
आचमन	१	सनयानुसार पुष्पों का धारण	
भोजनान्त में कर्म	३	करना	२१
भोजनान्त में शयन कर्म	४	ऋतु योग्य पुष्प	२१
सामवाश्य शयन कारण	४	पुष्पों को धारण करने की विधि	२१
भोजनान्त में स्मरण	५	पुष्पों के विशेष गुण	२२
तथा अन्यद्य मर्जित	७	खड़ाऊं	२३
ताम्बूल (पाण) के २७ गुण	७	सायं संध्या कलं	२३
पाण त्याग्य अंग	८	रात्रि में भोजन	२४
पाण में घूना आदि लगाने का		मद्यपाण	२४
प्रमाण	१०	विधि युक्त मद्यपाण का पक्ष	२८
पाण खाने का समय	११	अविधि मद्यपाण	२८
अमीरी छटका	१२	निद्रा विधि:	३०
गरीबी छटका	१२	शय्या विचारः, शिव शास्त्रे	३०
संध्या समय का कर्म	१३	शयन में दिशा का विचार	३१
पीशाक	१३	दीप काष्ठः	३२
छाता का गुण	१७	दीप का मुख	३३
पायतामा या मोजह	१७	उत्तम दीप लक्षण	३३
पगड़ी	१८	पुरुष दीप निर्माणे दीपः	३३
भूषण	१८	छाछटेन का गुण	३४
पंचरत्नानि	१८	पंखा	३४
रत्न धारण के गुण	१८	दिशा भेद से बाहर के द्वे का	
पुष्प धारण के गुण	२०	गुण	३५

सूचीपत्र ।

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
आचमन	१	समयानुसार पुरुषों का धारण	
भोजनान्त में कर्म	३	करना	२१
भोजनान्त में शयन कर्म	४	ऋतु योग्य पुष्प	२१
बामपाश्वर्य शयन कारण	४	पुरुषों के धारण करने की अवधि	२१
भोजनान्त में स्मरण	५	पुरुषों के विशेष गुण	२२
तथा अन्यस्य यजित	७	वह्नाङ्ग	२३
ताम्बूल (पान) के २७ गुण	७	सायं संध्या काल	२३
पान त्याग्य अंग	८	रात्रि में भोजन	२४
पान में चूना आदि लगाने का		नद्यपान	२५
प्रमाण	१०	विधि युक्त नद्यपान का काल	२८
पान खाने का समय	११	अविधि नद्यपान	२९
अमीरी छटका	१२	निद्रा विधि:	३०
गरीबी छटका	१२	शय्या विचारः, शिखर शास्त्रे	३०
संध्या समय का कर्म	१३	शयन में दिशा का विचार	३१
पौशाक	१३	दीप काष्ठः	३२
छाता का गुण	१७	दीप का मुख	३३
पायतामा या मेजह	१७	उत्तम दीप काल	३३
पगड़ी	१८	पुरुष दीप निर्माणपणे दोषः	३३
भूषण	१८	छालटेन का गुण	३४
पंचरत्नानि	१९	पंखा	३४
रत्न धारण के गुण	१९	दिशा भेद से बाहर के द्रव्य का	
पुष्प धारण के गुण	२०	गुण	३५

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
कोन की दशा का गुण	३५	त्रिदोष लक्षण	३३
अंजन	३५	उपद्रव	३४
सुरमा लगाने की विधि	३६	मसूरिका (छोटी नाता)	३४
आंख दुखने का लेप	३६	धर्म पीड़िका नाता	३४
रत्नांधी अंजन	३६	अवाध्य लक्षण	३५
आदर्श (आइना)	३७	नाता की चिकित्सा	३७
प्रसाधनी (कंधी)	३७	शीतला की टीका या छाप	३८
शयन विधि	३७	(लिखन)	३८
शयने आवश्यक कर्माणि	३८	टीकालगाने के साधारण लक्षण	८०
नैपुन विधि	३८	आयुर्वेद	८१
गर्भाधान के पूर्व स्त्री पुरुष को		आयुर्वेद की परंपरा	८१
अवश्यकीय कर्मे	४१	भरुआज मुनि	८२
घृत	४४	वरक मुनि	८२
अति लाभदायक शिक्षा	४४	धन्वंतरि	८३
कामभानुर के लक्षण	४६	नाड़ी ज्ञान	८३
स्त्री त्याज्य	४७	प्रधान चतुर्दश नाड़ी	८५
शुक्र दोष	४८	दशमायु	८५
गर्भिणी गमन निषेध	४८	नाड़ी स्पर्श विधि:	८५
पृष्ठ के जल छेनेका सहज उपाय	६०	प्रकृत्यानुसार नाड़ी	८६
अहिंसा परमा धर्मः	६५	मृत्यु नाड़ी लक्षण	८७
घात शिक्षा	६८	रोग रहित अपमृत्यु नाड़ी का	
बालकों की सांसी की दवा	७०	लक्षण	८७
साधारण लक्षण	७१	हाकूरी मतानुसारेण नाड़ीज्ञानं	८८
अथ विस्फोटक	७३	रोगपरीक्षा	८८
बड़ी नाता का स्वरूप	७३	जिह्वा परीक्षा	८८

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
सूत्रपरीक्षा	९०	कफ कोपकारक वर्ग	"
सूत्र लेनेकी विधि शिवसंहितासे	९०	श्लेष्म कोप के लक्षण	"
गल परीक्षा	९१	कफ प्रकृति के लक्षण	१०३
घर्ण परीक्षा	९२	हाकूरी मतसे कफप्रकृतिके लक्षण	"
स्पर्श परीक्षा	९२	रक्त प्रकृति के लक्षण	१०४
जातंघ परीक्षा	९२	विचित्र प्रकृति	"
स्वप्न परीक्षा	९३	श्लेष्म कोप शृङ्गादि द्वारक वर्ग	"
दूत परीक्षा	९४	वैद्यक से	१०५
अशुभ सूचक दूत	९५	लक्षण	१०६
शरीर लक्षण	९५	बीर्य्यज देय	१०७
वातक्षय के लक्षण सु० अ० २५	९६	रक्त सञ्चालन	१०८
वात दृढ़ि के लक्षण	"	अन्भूत औपधियां ।	
वायुकोप के लक्षण	९७		
वात प्रकृत के लक्षण	"	खिपाय	१११
हाकूरीमतसे वात प्रकृतिके लक्षण	"	दूसरा अंगरेजी	११२
शृङ्ग तथा कोप वायु शमन	"	तीनरा	११३
कारक वर्ग	९८	चीघा	११४
पित्त	"	शलाघरि चूर्ण धातु पुष्टि पर	"
पित्तक्षय के लक्षण	९९	लिङ्ग स्थान करने का लेप	११५
पित्त दृढ़ि के लक्षण	"	तिना	"
पित्त के कोप करनेवाले वर्ग	"	पातालयंत्र से तैल निकालने	"
पित्त कोप के लक्षण	१००	की विधि	"
पित्त प्रकृति के लक्षण	"	चिकित्सा सम्मिलनी से ध्यामंग	"
हाकूरी मत से पित्त प्रकृति	"	की औपध	११६
के लक्षण	"	हिंसाएक चूर्ण	"
शृङ्ग तथा प्रकोप पित्त के शमन	"	ताकतवर शराय	११७
कारक वर्ग	१०१	छासादि तैल	११८
कफ	"	श्रीतांमलादि चूर्ण	११९
कफक्षय के लक्षण	१०२	सदिगादि घटों	"
कफ दृढ़ि के लक्षण	"	पुराणज्यरे पथ्यम्	१२०

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
अधारयटी	१२१	दूसरी पिचकारी	"
सुधामागर जर्फ	१२३	कुप काटने की पिचकारी	"
एकद्व पाक	"	सुगाक पर जलून	१३८
अफीम खानेवालों के लिये		कामेत्पादक बटी	"
अफीम पाक	१२४	खाने की बिधि	१३९
भांग का पाक	१२५	लवणभास्कर घूर्ण	"
बनाने की बिधि	"	खाने की बिधि	१४०
कामेत्तेजक घूर्ण	१२६	दृढ़तृ हिंवादि यटी	"
मदर रोग की अपूर्व औषध	१२८	खाने की बिधि	"
काछे साँप के काटने का इलाज		कमिगाशक घूर्ण	१४१
बी० बी० से	"	"मास" गांव की दवा	"
कस्तूरी की पहिचान	"	अंगरेजी काली रोशमाई	१४२
कस्तूरी की उत्पत्ति	१२९	दुधरी, तीसरी, चौथी बिधि	"
कस्तूरी का गुण	१३०	द्वन्द्वलेख काली गीली स्याही	१४३
सुगनाभ्यादि बटी (कस्तूरी की		योगदत्ताय वा. यद्युग स्याही	"
गोली)	"	दरी स्याही	"
बनाने की बिधि	"	लाख स्याही	१४४
केशर की पहिचान	१३१	सुनदरी स्याही	"
सफेदचन्दनके तेलका पहिचान	१३२	जातश्यामी	१४५
अंगरेजी इनली की चटनी	"	कुछेल बनाने की सद्गुण उपाय	"
गांग की चटनी	१३३	कुलकी की धरम	१४६
सुगाक की दवा	"	पर के सुर्ष लायक घोड़ी बी	
पिचकारी की दवा	१३६	साधुन	१४७
पिचकारी सभ प्रकार के		इन्द्रलेख यात्रा की सगाछापना	"
सुगाक की	१३७		

* इसमें दृष्टि दोष से अंगरेजी को जगह "अंगरेजी" रूप मया, आशा है कि पाठकगण सुधार लेंगे ॥

आरोग्यदर्पण द्वितीय खण्ड ।



आचमन ।

चिकनाहू छुटाने के लिये भोजन के उपरांत घने के बेसन से हाथ मुंठ गल कर जल से धो डालना उत्तम है । कितने लोग साबुन से भी धोते हैं, बिलायती साबुन तो बेशक अनेक जागहों के चरबी आदि बुरी वस्तु से तैयार होता है किन्तु देशी साबुनमें कोई बुरे पदार्थ नहीं हैं (चूना, सज्जी, गरी के तेल आदि वस्तुओं से बनता है जिसके बनाने की क्रिया भी आगे लिखेंगे) तथापि लोक मिन्दित होने से त्याज्य ही उत्तम है ॥

यदि कोई महाशय सफाई के लिये देशी साबुन का इस्तेमाल करें तो कोई हर्ज भी नहीं है ॥

भोजनांत में मुख धोने के समय चाहिये की जो कुछ दांतोंकी संधि में चिखट लगा हो उसे आइस्ते से लकड़ी तिनका (खरचा) से या सेाने और चांदी के सूक्ष्म मुर सलाई से निकाल कर कुझी कर डाले, क्योंकि भोजनके उपरांत कई कुझों के करनेसे, कफ, तृष्णा, मुखका सूखना, नाश हो मुख की शुद्धि होती है । भोजन के उपरांत कितनी कुझी करे इसमें प्रमाण है ।

कुर्याद्वाद्दशगण्डूपान्पुरीषोत्सर्जनेततः । सूत्रोत्सर्गेतु
चतुरो भोजनान्तेतुषोडशः ॥

शीघ्रके अनन्तर मनुष्य को १२ कुझ करने और चिर्क सूत्र परित्याग में ४ कुझ और भोजन के उपरांत मुख धोने के समय १६ कुझ करने चाहिये । बहुत से अमीर लोग जाड़े के दिनों में रात्रि के भोजनान्त में

गरम जल से कुझी करते हैं अगर किसी को सन्देह हो कि करना चाहिये या नहीं ? यह भी शंका दूर किये देते हैं ॥

सुखोष्णोदकगरुडूपः कफारुचिमलापहः । दन्तजाड्यहर-
द्यापि सुखलाघवकारकः ॥

सुखोष्णोदक अर्थात् सड़ने लायक गरम जल से जाड़े के दिनों में कुझी करने से कफ, अम्लपि, मुख का मैल, दाँतों का ठंडा होना नाश हो के मुख हलका होता है किन्तु गरम दिनोंमें बितारीके अलावा गरम जल से कुझा करना नहीं चाहिये, और सुमिये जो आप लोगों को जानना बहुत जरूरी है । प्रायः आप लोगों ने घेद्यों के मुख से सुगा होगा कि कल कलहरी खा के ऊपर से जल नहीं पीना चाहिये इन कहते हैं जल पीना तो निषेध हो है आचमन भी नहीं करना चाहिये क्योंकि जिह्वा के नसें के द्वारा जल गलेमें जाके खांसी आदि रोग उत्पन्न करता है, बिशेष कर निम्नलिखित चीजों को खाके तो सभी कुझा न करै ॥

द्राक्षादीनि फलानीचून् पयोमूलघृतंदधि । ताम्बूलमौ-
षधं पत्रं हविर्भुक्तापि नाचमेत् ॥

मुनक्का से लेकर कच्चे कल, ऊख, (पौंड़ा) दूध, मूत्र (शकरफंद आदि) घृत, दही । पान का बीड़ा, औषध, पत्र और हविष्यान्न पदार्थ को भोजन करने पर आचमन भी नहीं करना चाहिये क्योंकि इन चीजों को खाके ऊपर पानी पीने से अथवा कुझा करने से श्वासकास आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं ॥

यदि किसी अन्न की कण दाँतों के संधि से न निकले तो मनु जी के लेखानुसार उसे पबित्र या दाँतों के समान पबित्र जान कर छोड़ देना चाहिये क्योंकि ताकत करके निकालने से दाँत कमजोर और

सांस युक्त हो जाते हैं । उसी अवस्था में जल से आंखों को धोने से दृष्टि में बल और ज्योति बढ़ती है इसमें भी बचन है यह कोई न कहे कि सम्पादक महाशय के जो जी में आता है उड़ाते जाते हैं ॥

आचम्यजलयुक्ताभ्यां पाणिभ्यांचक्षुषीस्पृशेत् । भुक्त्वापाणि-
तलेघृष्ट्वा चक्षुषायदिदीयते ॥ अचिरेणैवतद्वारि तिमिराणि-
व्ययेहति ॥

आचमन करके अर्थात् मुख धोके भीजे हुये दोनों हाथों से नेत्रों को पीछे छेप, दूसरा बचन है कि भोजन के बाद मुख धोके भीजे हुये अपने दोनों हाथों को रगड़ कर नेत्रों को पीछे छेपने से वह जल बहुत जल्द नेत्र रोग को नाश करता है तात्पर्य यह कि भोजन के उपरान्त पुष्पा वगैरह करने के उपरान्त नेत्र मुख अवश्य धो डाला करे ॥

भोजनान्त मे कर्म ।

भुक्त्वा शतपदं गच्छेत् बामपार्श्वे तु संविशेत् । शब्द रूप
रसान् गन्धान् स्पर्शां च मनसः प्रियान् ॥ भुक्त्वावानुपसिवेत्
तेतान्नं साधु तिष्ठति सु० सूत्र स्यान् अ० ४६

भोजनके बाद अनुप्य को अत्यावश्यक है कि सौ कदम टहलके गति कोमल शय्या पर भार्य करघट लेट रहे, उस समय शब्द अर्थात् शाना आदि गने।हर ओलने वाली चिड़ियों की आवाज सुनना, रूप (तस्वीर वगैरह) देखना, रस (पान आदि) वस्तुओं का रस चूषना, गन्ध (इतरादि का सूंघना) स्पर्श (रुई से भरे हुये कोमल तकियों पर हाथ फेरना) इत्यादि जिससे मन प्रसन्न हो, सेवन करने से भोजन किपा हुआ अन्न यथार्थ पच जाता है, बाद, बीच पच्चीस निमट के फिर, दहिने करघट १०

मिन्नट छेद कर उठ खड़ा हो। भोजन के परे शत पद चलने से अन्न स्व-
स्थ और आयु की वृद्धि होती है, दीढ़ने वाले के पीछे भीत दीढ़ती है,
टहलने के बाद किञ्चिन्मात्र पलंग पर छेद रहने से अङ्ग पुष्ट होता है ।
भोजन के बाद बैठने से पेट में सखी, तोंद और तंद्रा बढ़ती है ॥

अन्य मत से भोजनान्त में शयन क्रम ।

श्वसागच्छौ समुत्तानस्तान्द्विः पार्श्वेतुदक्षिणे । ततस्तुद्धि-
गुणान्वासे पश्चात्सुप्याद्यथा सुखम् ॥

अर्थ—भोजनान्तर की कदम डोल कर जाठ स्वास पर्यंत चित छेद
जावे फिर सोलह श्वास दहनी करवट सेवे, फिर ३२ श्वास निकले इ-
तनी देर तक बाँहें करवट सेवे पीछे अपनी इच्छानुसार चाहिये जिधर
की करवट सेवे ॥

वामपार्श्व शयन का कारण ।

वामदिशायामनलीनाभेरूर्ध्वोस्तिजंतूनाम् । तस्मात्तुवाम
पार्श्वेशयीत मुक्त प्रपाकार्यम् ॥

अर्थ—बाँहें तरफ नाभी के ऊपर जगि स्थान है, इणी से भोजन
करे हुये मनुष्यके अङ्गके परिपाकार्य बाँहें करवट शयन करनी चाहिये ।

अथ शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध इन पाँचों को भोजनान्त में
जो वैद्यकों ने मनुष्यों के लिये सेवन करना हितकारी लिखा है उसका
कारण दिखलाते हैं ॥

स्वास्थ्य के विषय में एक बिलायती, हाकूर का लिफवर हमने एक
किताब में पढ़ा है, उसमें लिखा है कि भोजन के बाद चित सेना उत्तम

है, किन्तु उन्होंने ने यथार्थ कारण नहीं दिखलाया कि क्यों उत्तम है लेकिन इतना तो हमने भी अनुभव किया है कि चित्त सेने से आत्मा को आनन्द अधिक मिलता है ॥

शब्द—उत्तम गान और बाजा एवं मने। हर चिहियोंकी बोल चित्त की विश्वसता, शोक और चिन्ता को हर लेता है । स्पर्श—त्वचा में कोमलता यथार्थ रक्त संचालन और मीत पैदा करता है । रस गंध—पान इलायची की स्वाद और इतर आदि की सुगंधि सेवन करने से भोजन का जल स्वस्थ और सुख प्राप्त होता है । रूप—तरबोरों के देखने से दीर्घ एवं काम की वृद्धि और मन प्रसन्न होता है ॥

भोजनान्त में स्मरण ।

हमारे हिन्दू मत में भी कोई २ बातें किसी स्थलमें चाहें वे शारीरक हों, चाहे धार्मिक ऐसी लिखी हैं कि जिसे सुन कर इङ्गलिशोंय विदेशीय जन को कील कहै एतद्देशीय आज कल के नव शिक्षित गण चकित हो झूठ २ कहने लगते हैं, किन्तु हम कहते हैं कि हमारे भूत पूर्व ऋषिगण चङ्कवाज नहीं थे उन्होंने तो कुछ लिखा है वरुं भीतरी मतलब अवश्य गंभीर है किन्तु हम लोग बिद्या हीन होने से नहीं समझ सकते हैं तो सिधाय झूठ के और क्या कहेंगे ? हमारे वैद्यक शास्त्र तथा अन्य ग्रन्थों में लिखा है कि भोजन के उपरान्त निम्नलिखित महात्माओं को स्मरण करने से भोजन किया हुआ अन्न अच्छी तरह पच जाता है ॥

अगस्तिं कुम्भकर्णं च शनिं च बड़वानलं ।
आहारपाचनार्थाय स्मरेद्भोमञ्चपञ्चमम् ॥ शर्पातिं च मुकन्यां च च्यवनं शक्रमश्विनौ ।
भुक्तमात्रः सरयस्तु चन्द्रस्तस्य न हीयते ॥

अगस्तिमुनि (पार्वती जी के खिलाने से भी न अपनाते) कुम्भकर्ण (भोजन करने में प्रसिद्ध ही थे) शनिधर (यह प्रसिद्ध हैं) बड़वानल

(समुद्र मंथन) और पञ्चम भीमसेन महाराज (छाने और घल देना में प्रसिद्ध) इन पाँचोंको जो भोजन के उपरान्त स्मरण करके पेट पर हाथ फेरता है भोजन किया हुआ अन्न उसका निर्विघ्न पच जाता है । शर्पाति, सुकन्या, रघुपति, इन्द्र और अंशुवर्मा कुमार जो मनुष्य भोजन करने के उपरान्त उक्त पाँचों के स्मरण कर नेत्रों को भीजे हुये हाथों में थोड़ता है, उनके नेत्र कभी नष्ट नहीं होते ॥

भोजन के बाद अग्रिम शब्दों के सुनने, रत्नागिरि वस्तुओं के देखने और बहुत हँसने से अन्न गिर जाता है ।

इस स्थल में थोड़ी सी बात और कहने की जरूरत है जो आरोग्य दृष्टिकोण लोगों के लिये निश्चायक उपयोगी है वह यह है कि भोजन के उपरान्त जब तक भोजन पच कर पेट कुछ चलाका न हो दूसरा भोजन न करे और न कुछ फल फलहरो खावे यहाँ तक कि बहुत पेट भरके पानो भी न पिचे, हाँ भोजन के उपरान्त पौडि का चूसना और पियास होने पर थोड़ा २ करके कईवार जल पीने से लाभ है किन्तु उपरोक्त कर्मों से बलीर्ण होने का खौफ रहता है । लिखा भी है:—

अत्यम्बुपानाद्विपमशनाद्वा संधारणात् स्वप्नविपर्ययाच्च ।

कालेऽपिसाध्यं लघुचापि भुक्तमन्नं पाकं भवति नरस्य ॥

अधुत जल पीना, विपम भोजन अर्थात् पूर्व कृत भोजन के अपरिपक्व मेंही फिर भोजन कर लेना, सब मूत्र के वेग का रोकना, दिन में सोना रात में जागना और बिना भूख या भूख मार कर या समय पर बाध देर की जगह छँटाकही खा के रह जाना इन्हीं के प्रकार के कुर्वयम से अजीर्ण अग्नि मंदादि रोग पैदा होते हैं, ईर्ष्या, भय, क्रोध, लोभ, राग, द्वेष और शोक युक्त हो कर भोजन करने से आहार का पाक उत्पन्न न हो अजीर्ण हो जाता है, भोजन के बाद पन्द्रह २ मिनट में दो तीन बार थोड़ा २ जल पीना बहुत फायदा करता है । अगर भोजन के

परे शिर में भारी पन जति निद्रा, घड़कन और आलस्य मालूम है। तो मिश्री के सरयत में ज़रासा नीबू का अर्क डाल कर पी जाय या पीढ़े की गंढेरी चुहे ॥

तथा अन्यच्च वर्जित ।

अयनंच।शनंचाति नभजिन्द्रवाधिकं । नाग्न्यातपौनस्रवनं
नयानंनापिबाहनं ॥ व्यायामंच व्यवयंच धावनंपानमेवच ।
युहंगीतंचपानंच मुहूर्तभुक्तवांस्त्यजेत् ॥

भोजन करने के उपरांत दो तीन घड़ी तक जब तक भोजन कुछ पच न जाय गिन्तलिखित कामोंको न करे, जैसे—घोर निद्रा, पुनः भोजन करना, द्रव अर्थात् अत्यन्त पतले पदार्थों का पीना, आंच के सामने या घाम में रहना जल में तैरना या वज्रत स्नान करना, रास्ता चलना, घोड़े दायी आदि सवारी पर बैठना, कसरत करना और स्त्री गमन करना, दौड़ना, वज्रत चलना कुश्ती लड़ना, गाना और पढ़ना आदि कर्म न करे क्योंकि इन सब क्रमों से भोजन का परिपाक नहीं होता ॥

तांबूल (पान) के २७ गुण ।

तेज, गरम, रोचक, कपाय, तीता, क्षार और हलका है, रक्त, पित्त, और मुह को साफ, कान और सुन्दरता बुद्धि, कफ, दुर्गन्धि छार, पंछा, हनु, दांत और जीभ का मल, गल रोग, खात व्याधि और श्म के नाश करता है गया पान भीठा, कपैला, भारी और कष्टकारी चाय के बराबर है । पुराना पान थोड़ा कहुआ हलका और कफ नाशक है । पका हुआ मफेद पान अधिक गुण दायक है । बङ्गला पान कहुआ, दस्तावर, पाचक, पित्तकर और कफ नाशक है और देशावर बङ्गला के अपेक्षा कुछ कम गमे और भीठा है ॥

सुपारी—भारी, शीतल, कूखी, कपैली, मोह (शिर में चक्कर) मद (नशा) कफ और पित्त नाश एवं हाडों के घस्यन को दीला करने वाली है, सब से उत्तम सुपारी जिसके बीच में सख्खी हो, कच्ची सुपारी कफ और अग्नि मन्द करने वाली होती है । बेहतर होगा कि पान के साथ खाने के लिये एक रोज़ पूर्व ही पकी सुपारी को महीन कतर कर गुठाय या चन्दन के अकंठ में न हो तो सिर्फ पानी ही में भिगा रखे तथा दक्षिणी (चिकनी) सुपारी पान के साथ खाना बहुत ही फायदा करती है ॥

कत्या—कफ और पित्त सन्तान कारी है । खैरसे हजारों साधारण २ बिमारियां जायाम होती हैं जिसका बयान जगने करने । खैर बहुत प्रकार के हैं परन्तु खाने और दवा के काम में सिर्फ दोही अर्थात् कण्ठ खदिर (काले रंग का खैर जो उक्त नामक वृक्ष के आन्त्यान्तरिक काष्ठ के जलीय सार से प्रस्तुत होता है, पांडु खदिर (पपड़िया खैर) जो ग्यान्धिर नामक वृक्ष के पत्र एवं तरुण शाखाओं के अग्र भाग के जलीय अंश से तैय्यार होता है । सिंहपुर एवं भारत समुद्र तट द्वीपों में बसाया जाता है । कण्ठ खैर की अपेक्षा पांडु खैर उत्तम होता है । एतद्देशीय व्यापारी लोग सभी खैर में डूँटा पत्थर मिलाते हैं इससे बगियों के पहां का खैर बिना साफ किये हुये कभी न खाना चाहिये ॥

चूना—वायु और कफ नाशक है, याकी बयान हाक्करी प्रकरण में देख ले । पान, सुपारी कत्या और चूना मिलजाने से बहुत रंग का मन प्रसन्न करने वाला पदार्थ बन जाता है कि जिसके खाने से सुन्दरता, मुष्ट शुद्ध, सुगन्ध और त्रिदोष शांत होता है । पान के साथ प्रातः काल में सुपारी, मध्याह्न में खैर और रात में चूना अधिक खाना चाहिये, पान की हण्डी और फुनगी निकाल कर खाना उचित है और इसके तीन पीठ पीक कर शेष रस खाने से अमृत समान गुण होता है क्योंकि "आदीवि-पोषमपेयं द्वितीयं मेदि दुर्जरं, तृतीयादि तु पातव्यं सुधातुल्यं रसायनम्"

पान के त्याज भेद ।

आयुरग्रे यशोमूले लक्ष्मीमध्येव्यवस्थिता । तस्मादयं तथा
मूलं मध्यंपर्णस्य वर्जयेत् ॥ पर्णमूले भवेत्ब्याधिः पर्णाग्रे पाप
संभवः । जौर्णपत्रं हरत्यायुः शिराबुद्धि विनाशिनौ ॥

ऊपर इसे लिख आये हैं कि पान की जड़ तथा अग्र भाग और मध्य
शीर्ष के सब खावे, उसे दिखलाते हैं । पान के अग्र भाग में आयु का नाश
मूल में पत्र और मध्य में लक्ष्मी (शोभा) की बाध रहती है । इस कारण
पान का मूल मध्य और अग्र भाग त्याग करना क्योंकि पान के मूल मध्य
करने से शरीर में रोग उत्पन्न होता है । अग्र भाग सेवन से (पाप) मन
में श्लानि और बहुत तथा बासी पान खाने से आयु का नाश तथा शिरा
युक्त (जो पान के बीच में लकीर होती है बिना चबके निकाले) खाने से
बुद्धि का नाश होता है ॥

पान में चूना आदि लगाने का प्रमाण ।

गुच्छार्धं चूर्णकं चैव तत्समं खदिरं मतं । माषैकं क्रसुकं
सर्वे कर्पूरादिगणं च यत् । मिश्रितं पूगतुल्यं स्यात्ताम्बूली मान
मीरितम् ॥

ढोम प्रायः पान खाने का शौक रखते हैं, परन्तु पान लगाना नहीं
जागते इसी से पान नुकसान करता है । चूना और खैर आध २ रत्ती
लगावे । सुपारी का कसरन ६ रत्ती चर और कपूर, छींग, छोटी छायची
आदि का चूर्ण सब मिलाके छः रत्ती रहे इस रीतिसे पान का पीड़ा घ-
टाना चाहिये और बीड़े में दो पान से कम न रहे क्योंकि ठीक चूना
रहने से पान का पीक अत्यन्त रक्त वर्ण और सुपारी अधिक होने से

रंग का नाश होता है । पान में चूना अधिक लगाने से मुख दुर्गन्धि करने लगता है । निम्नलिखित चीजों के सहित लगाने से बीड़ा जामकेदार और सुगन्धित होता है—जैसे पान सुपारी खैर चूना धनाई तगाकू छोटी लायची जावित्री फंकेल जायफल कस्तूरी लींग कपूर और केशर इन सहित बना बीड़ा मनुष्यको मदीम्नत आनन्द से आनन्दित करता है ॥

यमुत से लोग पान न खाके सिर्फ सुपारी चबाया करते हैं । जैसे रीवां आदि प्रदेश के लोग पत्तीखो खाते हैं धर्म सम्बन्धी ग्रन्थों में पान रहित सुपारी खाने का यमुत कुछ निषेध किया है ॥

अनिधाय मुखिपर्थं पुगंखादति योनरः । दशजन्म दरिद्रः
स्यात्ततश्चाधो गतिं व्रजेत् ॥

पान के बिना जो मनुष्य केवल सुपारी खाता है वह दश जन्म दरिद्री हो नर्क को जाता है, इसमें संदेह नहीं केवल सुपारी खानेसे मुख फीका जिह्वा कठोर शिर में कमजोरी और बुद्धि धन होता है और भी बचन है ।

बिनापर्थंमुखेदत्वा गुवाकुंभचयेद्यदि । तावद्भवतिचा-
ण्डाली यावद्गङ्गानपश्यति ॥

बिना पान के जो मनुष्य केवल सुपारी खाता है वह जब तक गंगा जी का दर्शन न करे पायछाल रहता है, यह बचन धर्मशास्त्र का है वैद्यक का नहीं और धर्मशास्त्रों में ऐसे २ बचनों को देने का मुख्य प्र-
योजन त्रापियों का यह है कि लोग उस काम को अवश्य त्याग देय ।
जैसे:—

वाचस्पतौ—तांबूलंविधवास्त्रीणां यतीनां ब्रह्मचारिणाम् ।
तपस्विनांचविप्रेन्द्र सर्वपुण्यहरं स्मृतम् ॥

विषया स्त्री, यती, ब्रह्मचारी और तपस्वी याने संन्यासी आदि के शरीर का पुण्य पान खाने से नाश होता है । वैद्यकशास्त्र में विधि युक्त पान खाने को किसी के लिये निषेध नहीं किया है, उक्त लोगों को जो धर्मशास्त्र पान खाने से रोकता है मुख्य तात्पर्य यह है कि एक तो पान खाना शृङ्गार है दूसरे काम की बृद्धि होती है इसी लिये निषेध किया है अगर जितेन्द्रिय लोग सिर्फ़ मुख शुष्य पान खावें तो कोई हर्ज नहीं है ॥

मूत्र की हासत और मल त्याग करने के पीछे पान न खाना चाहिये । बहुत पान खाने से मुख, जिह्वा, नेत्र, केश दांत और कान में विकार एवं पित्त, वायु, रक्त और शोथ (घातुक्षय) रोग की उत्पत्ति तथा बल और क्षुधा का नाश होता है । स्नान भोजन और जल पीने के उपरांत या कहीं से थका आया हो पान खाना अच्छा होता है । "न नेत्रकोपे न च रक्तपित्ते क्षतेनवाप्ते न विषेनशोपे" आंख रोग रक्त पित्त घाथ या फोड़ा फुन्सी, उष्ण वायु, विष और शोथ रोगों में पान खाना नुकसान करता है ॥

ग्रंथान्तर मत से पान खाने का समय ।

रसोऽसुप्तोत्थितोऽस्नाति भुङ्क्ते वन्ते च संगरे । सभायां विदुषां राज्ञां कुर्यात्ताम्बूल चर्वणम् ॥

स्त्री संभोगके समय, शयन से उठ कर स्नान पूजनादि से निवृत्त हो के, भोजन के उपरांत, घनम के अर्पण दन्तधायन करके, कुशती और पुद्ग में राजा एवं पण्डितोंकी सभामें इतनी जगह पान खाना उत्तम है ।

तमाल पत्र—जहां तक परीक्षा से देखा गया है दवा के अतिरिक्त तमालू खाने से नुकसान करता है, भारत में बिरछाही कोई ऐसा मनुष्य

निकलेगा जो तमाकू न खाता हो, न अधिक मही ज़रासा पान ही के साथ खा लेते हैं, अधिकश्रमशीर लोग ऐसे हैं जो सिर्फ पान के साथ तमाकू खाते हैं, तमाकू खाने से दांत, आंख और मस्तिष्क निर्यत्न एवं बुद्धि मन्द पड़ जाती है चाहे जो हो यह भी प्रायः देखनेमें आता है कि किसी वस्तु की भावत पड़ जाने से हानि देख कर भी लोगों से नहीं छोड़ा जाता । पढ़िछे तो तमाकू किसी अवस्था में खाना लाभ नहीं यदि खाने की ऐसाही इच्छा हो तो चाहिये कि निम्नलिखित रूप से तमाकू बनाय छे और जरा सा पान में रख कर खावे ॥

अमीरी लटका ।

पाश्चात् अष्टे तमाकू के पत्ते को ३ सेर पानी में रात को भिगा दे सवेरे उग पानी को फेक दूसरा पानी उतगाही निकटार डार दे फिर रात को यह पानी फेक उतगाही और पानी छोड़ रात भर रख छोड़े पुनः सवेरे उग पानी को फेक तमाकू छुछा छे । यदि सब तमाकू को महीन कतर कर सेरगर मुलाय के बर्क में धीनी आंच से पका छे जब छेड़ पाय बर्क बाकी रह जाय तो सूय मलकर खान छे और फिर उसे धीनी आंच में पकाना शुरू करे जब सिर्फ एक छंटाक रहिजाय तो चतार छे और शफेद चन्दन का बुरादा ६ भासा अकरकरहा ६ भासा छोटी छापची काँदागा १ तोला जायबल ६ भासा जायब्री ३ भासा लैंग ६ भासा केशर ५ भासा कपूर ३ भासा कङ्कोल ४ भासा कस्तूरी ४ रत्नी चांदी का बर्क २० ताव सब को महीन घूंक उक्त बर्क में चोट चर्द के बरामर गोली बना छे और पान के साथ एक गोली खावे । गरमी के दिनों में लैंग जायब्री जादि वस्तु का मात्रा कम कर दे ॥

गरीबी लटका ।

१ पाय तमाकू के पत्ते की गरमी पूर्व क्रियानुसार पानी में भिगा

कर निकाल दालें घाद सुलाय के महीन कतर से कुटी हुई धनिया १ तोला, छोटी छायाची १ तोला, चिकनी सुपारी २ तोला, लौंग ६ मासा, फायफण ६ मासा, केवड़े से आसित खैर १ तोला, सब को महीन कतर समान पत्र में मिला छिन्नी में रख दे और जरामा पान में छोड़ लिया करे । कैसाहू उगदा तमाकू क्यों न बनी हो भोजन के उपरांत पान के साथ भी न खाना चाहिये ॥

संध्या समय का कर्म ।

शरीर आरोग्य रखने के निमित्त मनुष्य को उचित है कि द्रव्योपा-
जनादि कामों से निवृत्त हो कर चार पांच बजे संध्या को शीघ्र के अन-
न्तर (अन्तर होना है जो दिन रात में सिर्फ एक दफे शीघ्र जाते हैं परन्तु
दोनों समय शीघ्र जाना बहुत अच्छा है) हाथ पैर और मुख धो कर अन्न
निवारणार्थ और यतौर जलखवा के घोड़ा सा बल बहुत मोदक या
पाव आधसेर अघावट दूध में एक तोला शहत और तोला भर मिर्ची
डाल कर धी जाणा चाहिये घाद एक पान का घोड़ा खा के ऋतु के
अनुसार मसूर धारण कर पूर्वोक्त कपमानुसार किसी बगीचे में या जहां
मन प्रमद हो गया खाने के हेतु जाय या किसी दिव्य स्थान में बैठ कर
एवं वृद्धि करने वाली पुस्तकों को देखे या अपने इस मित्रों से बातोंलाप
करे इत्यादि कर्म से अन्न, आलस्य और मन की उदासीनता नष्ट हो कर
चित्त प्रसन्न, धातु एवं मायु की वृद्धि होती है ॥

पौशाक ।

मसूर धारण करने से जो कुछ ऊपरी सजावट है वह तो बर्हे है
विशेष बरसे शरीर की रक्षा है । आगे समय में इस देश नियासियों के
सिर्फ पौशाक यह ये जैसे चीत (घोटी) अङ्गुरता (अंगरखा) उष्णीष (प-
गड़ी) और दोपट (दुपटा) जय से मुसलमानों का राज हुआ तब से सं-

सर्ग, बच भाव्य गण भी करता, फतुही, नीमस्त्रीन, पापजामा, साफा, एका, इत्यादि पहनने लगे । अंगरेजी राज होने से औरही बाल बदल गई जिसे देखिये जाकट कोट पतलून ही में मस्त हैं, इसी प्रकार दूसरे के राज होने पर वैसाही बस्त्र धारण करने लगीं नका मुकसान पर बिलकुल ध्यान ही नहीं ईश्वर ने मनुष्य को बुद्धि दी है कि जिसने समस्त पदार्थों के हेतु यथार्थ प्रकृति जान कर अपने लाभ के स्वार्थमें लावे । हे प्यारे भाव्य भाइयो! मेरी मत मनो अपने हित अहित वस्तुओं पर ध्यान दो जो वस्तु श्रेयकारी चाहे स्वदेशीय हो या विदेशीय हो पहण करना और हानि कारक वस्तुओं को सर्वदा तिरप्कार करना बुद्धिमानों का काम है ॥

प्राचीन ग्रन्थों के देखने से जाना जाता है कि पूर्व समय में इस देश वाले काले कपड़े नहीं पहनते थे क्योंकि सब स्थलों में श्वेताम्बर, पीताम्बर, रक्तांबर और विलाम्बर, शब्द पाये जाते हैं । वास्तव में पीशाक देश काल के अनुसार होना चाहिये अति उष्ण देश या गरम श्रतु में श्वेत या सफेदी रंग का शीतल और महीन बस्त्र धारण करने से मेघा, छुत्ति, शीतलता की प्राप्ति और गरमी की निवृत्ति होती है और सर्वांग में श्वेताम्बर धारण से यश, आरोग्यता, शोभा, आनन्द वृत्ति, काम और प्रीति होती है विशेष कर वर्षाकाल में तो अवश्य श्वेताम्बर धारण करना चाहिये । क्योंकि लिखा भी है ॥

शीतकालेतुक्कीयं कषायधर्मवासरे । वर्षासुश्वेतवस्त्रं स्या
देववस्त्राणि धारयेत् ॥ शुक्लान्तुशुभदं वस्त्रं शीतातपनिवारणं ।
न चोष्णान् च वा शीतं तत्तु वर्षासु धारयेत् ॥

शीत काल में या ठण्ड मुल्कों में रेशमी कपड़ा पहिनना, गरमी में गेरुवा बस्त्र और वर्षा काल में सफेद बस्त्र धारण करना चाहिये । सफेद

घस्त्र का गुण आयुर्वेद के जानने वालों ने इस प्रकार कहा है कि सफेद घस्त्र शीत और गरमी दोनों को निवारण करता है, न यह गरम है और न शीतल है इसलिये शीत गरम समान गुण विशिष्ट वर्षा काल में सफेद ही घस्त्र पहिनना लाभदायक है ॥

अति शीत देश या ऋतु में वायु और कफ समन करने वाली छाल्टी, टसरी, रेशमी और पशमीना श्वेत या सुख रङ्ग के कपड़े पहिनना उत्तम है ॥ क्योंकि ।

कौशियंचित्रवस्त्रं च रक्तवस्त्रंतथैव च । वातश्लेष्महरंतत्तु
शीतवासीविधारयेत् ॥

रेशमी कपड़ा, रंग विरंग के रंगे हुए कपड़े और लाल घस्त्र कफ वात को नाश करता है और शीतकाल या देश में प्रायः शीतवायु का जोर रहता है इसलिये शीतकाल में जहाँतक हो रेशमीही घस्त्र पहनने चाहिये कोई २ टीकाकार चित्र घस्त्र के स्थान में ऊनी घस्त्र, बजात, लोई, धुस्ता चाल, कम्बल आदि का ग्रहण किया है ॥

आयुर्वेद विद्वानों ने कपाय घस्त्र की बहुत कुछ तारीफ की है इस को पवित्र, शीतल पित्त का नाश करनेवाला लिखा है । घर्मे के रंगों में सन्यासियों के लिये जो कपाय (गुरुया) घस्त्र धारण करने को लिखा है सिर्फ आरोग्यतार्थ, क्योंकि कपड़ा पहिनने न पहिनने से मुक्ति लाभ नहीं है, और न किसी को तर्कही में जानो पड़ता है अपियों ने उसके फायदे पर लक्ष्य करके घर्मशास्त्रों में इसलिये लिख दिया है कि हटात लोग उसे ग्रहणही करें । कपाय घस्त्र एक तो जल्द मीठा नहीं होता, दूसरे उसमें पसीने का बिकार नहीं होता, तीसरे जहाँ जल मिले पछार डाले बहुत जल्द साफ हो जाता है, सायुन बगैरह नहीं खोजना पड़ता, चौथे चतुर्थांशन का चिन्ह है ॥

चाहे गर्म अतु हो या सर्द जात्र कल जिसे देखिये सभी काळे कपड़े पहनते हैं एक यह भी देश में अधिक रोग फैलने तथा निरन्तर रोगी बने रहने का एक मूल कारण जान पड़ता है ॥

क्योंकि काळे कपड़े पहनने से रस, रक्त और धीर्यमें अधिक गर्मी पहुँचती है, कारण यह है कि और २ पदार्थों की अपेक्षा काशी पदार्थ से उष्णता अधिक निकलती है इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि एक चीकोन टीन का पात्र बनाओ उसके एक ओर काला रङ्गो, दूसरी ओर सफेद कागज बिपका दो तीसरी तर्फ शीशा और चौथी ओर केवल टीन रहने दो फिर उस पात्र में गरम जल भर मुख ढाँप दो और परमानेटर जिसे गरमी शरदी मापी जाती है उसके निकट चरो जब टीनकी ओर उसे लाओगे तब डिगिरी कम हो जायगी, शीशे के सममुख करीसे पारा ऊपर की चढ़ेगा, कागज के सामने करने से अधिक ऊँचा होगा और काळे रङ्ग की तर्फ ले जाने से सब से अधिक पारा ऊँचा हो जायगा इन्हे स्पष्ट है काळे तर्फ से उष्ण जल की गर्मी अधिक निकलती है । इस लिये जाड़े के दिनों को छोड़ और अतों में तो काला कपड़ा पहिरना अवश्यही नुकसान करता है क्योंकि काळे कपड़े में सूर्य का तेज अधिक प्रवेश करता है इससे शरीर की उष्णता बाहर ज्यादा निकलती है यही कारण है कि उष्ण देश के मनुष्य काळे और हिन देश के गौर होते हैं । यदि कहे कि यूरोपियन लोग तो प्रायः कालेही कपड़े सब दिन पहिनते हैं उन्हें नुकसान क्यों नहीं करता ? कारण यह है कि ये लोग अति शीत देश के रहने वाले हैं । बड़े अपसेस की बात है कि अंगरेज लोग हिन्दुस्तानियों के खाल पल्लन की एक भी अनुकरण न किया और हिन्दुस्तानियों ने यहाँ तक नकल किया कि मिलकुल नकल बन गये अर्थात् बिना दुम के लंगूर हो गये चिक्कार है ऐसे मनुष्यों को जो निष्कलंकित अपने देश के प्राचीन रीतों को त्याग देते हैं ॥

छाता का गुण ।

वर्षानितरजोधर्म हिमादीनांनिवारणम् । वर्ष्यञ्चद्रुष्यमौ
जस्यं शङ्करंक्षधारणम् ॥

छाता धारण करने से नङ्गल नेत्र को हित, उत्साह, बल और सुख प्राप्त वर्षा, धूप, हवा, धूल और शीत से रक्षा होती है । बिना छाता के ग्रीष्म काल के धूप में चलने से उ्वर हैजा आदि अनेक रोग होते हैं ॥

इसी प्रकार जाड़े के दिनों में रात्रि में भी छाता लगाना जोस का अघाव होता है क्योंकि जाड़े के दिनों में रात में अथ अधिक सरदी पड़ती हो बिना छाता के घूमने से जुकाम खांसी और उ्वर जिसे शारदीय उ्वर कहते हैं होता है । यही कारण है जो बिलायत आदि सरद मुलकों में रात्रिमें भी सर्वसाधारण लोग छाता लगाके बाहर निकलते हैं ॥

आजकल आर्योधर्त में जिस के हाथ में देखिये बिलायती छाता मौजूद है, मौजूद क्यों न रहे, बिनापती छाते में जो रूप रंग खीजियानापन है कभी हिन्दुस्तानी छाते में जा सक्ता है इसीसे यिक्की भी अधिक है, हम ने एक सम्वाद पत्र में पढ़ा है कि प्रति वर्ष बिलायत से हिन्दुस्तान में ३ करोड़ रुपये का छाता जाता है । भारतवर्ष में एक से एक घगघान राजा पड़े हैं किसी सपूत से यह नहीं मनपड़ता कि छाता बनाने का कल हिन्दुस्तान में खोल दें कि जो करोड़ों रुपये इस के जरियेसे बिलायत जाता है यहीं रहे । खैर इसको हम कहां तक रोयेंगे हमारा काम आरोग्यता के विषय में शिक्षा देना सो देते हैं । गरम दिनों में हरे रंग का छाता लगाना रुधिर और नेत्रों के लिये हित है और काले रंगका छाता जाड़ों के दिनों में रात्रि को लगाना लाभदायक है ॥

पायतावा या मोज़ह ।

पूर्य काल में यहां पायतावे का व्यवहार कहीं न था अब सभी लोग

इसे पहनते हैं । रात में पायलाया पहन कर किसी ऋतु में न सोना चाहिये, जूता और मेज़ह दोनों पहने हुये राह से चल कर जब कहीं स्थिर बैठना हो तो उस समय सर को मुला रखना चाहिये । जिस के पैर के तलुवे में जलान हो या ज्वर हो उसे मेज़ह पहनना निषेध है परन्तु सर-सांन या उम्माद की बिनारी में जब सर पर भीमा कपड़ा रक्खा जाता है उस अवस्था में मेज़ह इस लिये पहिना देना उचित है कि चायत कम-जोरी से आंग दूद या शीत न आजय ॥

पगड़ी ।

उपशीर्षकान्ति कृतकेश्य रजोत्रात कफापहम् । लघुतच्छ
स्यते यस्मा दगुरु पित्ताग्नि रोगकृत् ।

पगड़ी पहनते से शोभा, बालों की रक्षा और कण का नाश होता है परन्तु थोड़ी देर तक पगड़ी सर पर रखनी चाहिये सुतरां देर तक धारण करने से पित्त और नेत्र रोग होता है या बहुत छलकी पगड़ी बांधे ॥

परन्तु दक्षिणी ब्राह्मणों को इसका ध्यान भी नहीं देा देा और तीन न सेरकी पगड़ी हर समय घिर पर धरे रहते हैं ।

भूषण ।

विधि के पाप स्वर्ण और जवाहिरों का भूषण यथा योग्य पहनने से सुन्दरता सन्तोष, बल, पुष्टी, शोभा, जोष जंभिमान, प्रीति और घन की सद्भि, पाप अमंगल यह दृष्टि दोष और दुःखम का नाश होता है । आर्य ग्रन्थों के देखने से ज्ञात होता है कि प्राग् के समय भारत में आभूषण पहनने की रीति अधिक थी प्राप्तीय की कहते हैं, कि रामराज में ऐसा मनुष्य कोई न था कि जिस के कान में स्वर्ण कुण्डल और स्वर्ण मकुट न हो तब समय चोर डाकू का नाम भी न था क्योंकि सब आर्यगण सम्प-

न ये जय से स्त्रियों का राज हुआ साथ ही साथ चोर दुष्ट हांकूओं की भी दृष्टि हुई, इस में शक नहीं कि आभूषण धारण में प्रत्यक्ष उपरोक्त गुण पाये जाते हैं परन्तु आज के समय में उक्त गुण के परिमर्तन में यहां तक अद्यगुण देखने में आता है कि नित नित हजारों जन लूटे और असंख्य बालक मारे जाते हैं ॥

हमारे शिघार में उपरोक्त गुण लाभार्थ पञ्चरत्न में जो लाभ है तत् अहित सिर्फ एक अंगूठी धारण करना युवा पुरुषों को हानिकर नहीं है ॥

क्योंकि गहना पहिने के कारण कितनी जान जाती है छिपा नहीं है विशेष कर लड़कों को तो कभी गहना पहिनाना नहीं चाहिये ॥

पंच रत्नानि ।

नीलकं यच्चकंचेति पद्मरागश्च मौक्तिकम् । प्रवालश्चेति विज्ञेयं पञ्चरत्नं मनीषिभिः ॥

अन्यच्च—सुवर्णं रत्नतं मुक्ता राजावर्तं प्रवालकम् ॥

नीलक, हीरा, पद्मराग, मोती और मूंगा यही पञ्चरत्न हैं, दूसरा सुवर्ण, चांदी, मोती, राजावर्त और मूंगा व्याभावे सिर्फ सुवर्ण लेना ॥

रत्न धारण के गुण ।

सह दृष्टि हरं पुष्टि करं दुःखप्र नाशनं । पापदोर्भाग्य शसनं रत्नाभरण धारणम् ॥

अंगूठी आदि में रत्नों को गह के पहिने से मूर्खोंदि गवघटों की क्रूर दृष्टि का नाश, शरीर में बलाघान, घुरे स्वप्नों का नाश, मन की शानि और दुर्भाग्यता नाश होती है (गवघटों के रत्न यह हैं) मूर्ख का मायिक मणि, चन्द्रमा का मोती, मंगल का मूंगा, बुध का पद्मा, शु-

हस्सति का पुखराज, शुक्र का हींग, शनि का नीलग, राहु का गोमैंद, और केतु का वैद्यूर्य, जो यह सब खराब दृष्टि हो उन्हींका रवधारण करने से वो प्रसन्न होते हैं ।

पुष्प धारण के गुण ।

सुपुष्पाणि सुगन्धूनि नित्यं शीर्षं प्रधारयेत् । सुगन्धि पुष्प
पत्राणां धारणं कान्तिकारणम् ॥ आयुष्यं वृद्धिदं पुष्पं मल-
ज्मी कलि नाशनम् ॥

सुन्दर सुगन्धित गुलाब, चमेली बेला आदि के पुष्प अथवा सुगन्धित पत्रों को शिर पर धारण करने से उन फूलों से माला आदि बना के गले आदि अङ्गों में पहिरने से रूप योग्य प्रफुल्लित होता है, जोकाहे; बालस्य, उदाशीलता और शरीर के दुर्गन्धि का नाश होता है । नेत्रों में तरावट; दाह जलन का नाश और भग प्रसन्न होता है ।

जातीपुष्पं तथा बेला जाम्बजं कुटजं तथा । पाटलञ्च व-
हत्पुष्पं वकुलं चम्पकं तथा ॥ श्रीखण्डञ्च गौलालं कस्तूर्या
सह धारयेत् । मन्दार मरुवञ्चैव नीलात्पल कुमुदतं रक्तोत्पलं
यूधिकाञ्च कुपूरैः सह धारयेत् ।

इस श्लोक का अर्थ यह है कि चमेली, बेला, नारंजी, (कुटज) कु-
रेया वा इन्द्रजय का फूल, गुलाब, कूजा, नीलसिरी, चम्पा, और गुलाला
इन पुष्पों के हार आदि गहनों तथा पंखियों में कस्तूरी को सफेद च-
न्दन में घिस के उन पर सूब छिरक कर पहनने से अथवा पुष्पों के पं-
खियों की हवा खाने से जितने प्रकार के रोग हैं सब शमन होते हैं इसी
प्रकार मन्दार मरुआ, नील कमल के फूल, कुई (नीलोपर) लाल कमल
और जूही इन पुष्पों की अस्तुओं पर कपूर जल छिरक के धारण

से भी समस्त रोगों का शमन होता है । विशेष कर घुमरी, हौल दिल, उन्माद, प्रमेह, क्लीबत्व, मस्तिष्क की निर्बलता और मन का धिकार तो बहुत शीघ्र नाश होता है ॥

समयानुसार पुष्पों का धारण करना ।

ज्ञान करने के पहिले चमेली की माला पहिनना, ज्ञान करके जूही और बेल के फूल का धारण करना और तेल लगा के केतकी के पुष्प का धारण करना उत्तम लिखा है और कमल के पुष्पों को जब इच्छा हो काम में ला सकता है ॥

ऋतु योग्य पुष्प ।

अर्थात् गरमी के दिनों में धारण करने लायक पुष्प यह हैं । पीली चमेली, कुन्द, रैबाड़ी, चन्दन के फूल, बेल पुष्प यह सब रस और बल में समान हैं, यह सब त्रिदोष नाशक हैं इस लिये हमेशा धारण करने के योग्य हैं परन्तु गरम दिनोंमें ज्यादा फायदेमन्द हैं ॥

जाड़े के दिनोंमें या जिस देश में हमेशा जाड़ा पड़ता है उन देशोंमें केतकी, नीलसिरी, कमल, गुलाला और चम्पा लाभदायक है ॥

क्योंकि ये पुष्प शीतघात के हरने वाले और तासीर में कुछ गरम हैं इसलिये इन्हें शीत काल में धारण करने से अधिक लाभ होता है ॥

वर्षा काल में—बेल, महुआ, नील कमल, गुलाब, पांछर और चन्दन के पुष्प ए सातदिन हैं, त्रिदोष नाशक, स्वच्छ नेत्रों में ठंडक देने वाले और धिर को पुष्ट करते हैं ॥

पुष्पों के धारण करने की अवधि ।

जाई का फूल छ पहर तक गुणवान रहता है बाद बेकाम हो जाता है । नेवारी का फूल चार घड़ी, कमल पुष्प तीन रात, केवड़ा ५ पांच रात,

गुलाब है। रात, चमेली आधीरात तक, चमपा १ दिन, जूझों ४ घड़ी, वंशन्ती, मौलसिरी, चन्दन और योषर्ण इतने पुष्प जब तक अच्छे मालूम हों धारण करे। मन्दार, चरुया, देवना, पांड़र, इतने पुष्प जब तक संग्रहित रहें धारण करना चाहिये ॥

पुष्पों के विशेष गुण ।

त्रिदोषशमनीजाती महादाघ विनाशिनौ। सुगन्धं दोष समनं गौलालं पुष्पमुच्यते ॥ पित्तद्विगदश्चैव चक्षुष्यश्चोत्पल- स्मृतम् । श्लेष्मवात प्रशमनमुष्णवीर्यं च निर्मलम् ॥ पुष्पाणां प्रवरश्चैव केतको पुष्पमुच्यते । ईषदुष्णं सुगन्धश्च सुगौतं दृष्टि- दायकम् ॥ शिरोभ्रम विनाशहं शतपत्रं तु शोभनम् । अधार्यं मल्लिका पुष्पं दृष्टिभानि करंपरम् ॥ चपकं वात शमनं चक्षुष्यं विगदं शुभम् । पाटलं च महागौतं श्लेष्मवात प्रवर्धनम् ॥ मन्दाग्नि पित्त दोषघ्नं कर्णव्याधि विनाशनम् । पाटलं धारयेद्यस्तु सम्पद्या स समन्वितम् ॥ ज्वर मूर्च्छा पिपासाघ्न मायुष्यन्दाह नाशनम् ।

जाहौ का पुष्प त्रिदोष नाशक और महा दाह का शान्त करने वाला है, गुलाले का पुष्प यति संग्रहित और दीपों को शमन करता है। कमल का पुष्प वात कफ नाशक नयनों का हित पित्त हर्ता लघु, वीर्य कुछ गर्म और निर्मल होता है। केतको पुष्प सब पुष्प में उत्तम है कुछ लघु संग्रहित शीतल और दृष्टि को बढ़ाने वाला है, मस्तक भ्रम को नाशक शत पत्र है। चमेली का पुष्प दृष्टि को हानि कारक है यतः इसे न धारण करे, चमपा का पुष्प वात नाशक नेत्रों का हित और शुभ है। पाटल पुष्प शीतल कफ वात का शान्तक मन्दाग्नि पित्त के दोष और कान को पीड़ा को दूर करता है। जो

मनुष्य पाटल पुष्प को धारण करता है वह धनी होता है ज्वर दाह प्यास मूर्च्छा को दूर करता है और वायु बद्धक है पाटल गुलाब का भी नाम है ।

खड्ग ।

भोजन के पहले और पीछे खड्ग पंचमने से काम आयु और नेत्र को दित है अधिक पंचमने से दृष्टि को हानि होती है ॥

दिशादि गणों को उचित है कि पूर्व खण्ड कथनानुसार समस्त कर्मों से निवृत्ति हो। की सूर्यास्त समय में पश्चिम या उत्तराभि मुख बैठ की सायं संध्या को उपासना करें ॥

सायं सन्ध्या फलम् ।

बोधायनः ।

यदुपस्थकृतं पापं यच्च येनि कृतं भवेत् । सायं संध्या मुपस्थाय तेन तस्मात्प्रमुच्यते ॥

जो मनुष्य राग द्वेष छोड़ भौतर या जलादि से बाहर पवित्र एवं एकाग्र चित्त हो प्रसन्नता पूर्वक सायं संध्या तथा ईश्वराराधन कर्ता है वह पर्वत के समान दुःख और महा पापों को भो काट डालता है और जो मनुष्य प्रातःसायं संध्या और परमेश्वर को स्तुति प्रार्थना नहीं करता वह कृतघ्न मूर्ख और महा पापी है उस का अमूल्य जीवन का दिन व्यर्थ जाता है और भो लिखा है ॥

मरीचिः—संध्या येन न विज्ञाता संध्या येनानुपासिता । जीव मानो भवे च्छूट्टो नृतः श्वा चाऽभिजायते ॥

दक्षः—संध्या होनाऽशुचिर्नित्यमनर्हः सर्व कर्मसु । यदन्यत्कुरुते कर्म न तस्य फल भागभवेत् ॥

मनुः—नतिष्ठति तु यः पूर्वां नोपास्ते यस्तु पश्चिमाम् । स साधुर्भियहिष्कार्यः सर्वस्यादिव कर्मणः ॥

मरीचि महाराज कहते हैं । जो संध्या कर्म नहीं जानता और न संध्या का यन्दना करता है वह जीवन मात्र शुद्ध हो के याद मरने के कुत्ता के योनि में जन्म लेता है । दस जी कहते हैं कि जो द्विजाति संध्याकर्म को नहीं करता वह हमेशा अपवित्र और सब उत्तम कामों से बहिर्भूत रहता है । संध्याकर्म के अतिरिक्त जैसे गङ्गा नहाना एकादश्यादि व्रत करता है उसके फल का भागी नहीं होता । मनु का वाक्य है कि जो प्रातःकाल की संध्या नहीं करता और न सायं संध्या का उपाशक है वह द्विजादि सम्पूर्ण कर्मों से छुट जाता है इसलिये सायं संध्या और प्रातःकाल की संध्या अवश्य करे जो वैदिक मंत्रों से न कर सके वह सिर्फ ईश्वरका ध्यान और प्राणायाम करे ॥

ज्ञानसन्ध्याजपोहिमः स्वाध्यायोदेवतार्चनम् । यस्मिन्
दिनेनसैन्यन्ते स्रयासदिवशीन्द्रयाम् ॥

मिताक्षरा का वचन है कि ज्ञान सन्ध्या जप होम और देवता का पूजन जिस दिन नहीं करो मनुष्य का यह दिन व्यर्थ जाता है सन्ध्या कर्म का विधान आध्यात्मिक श्रौत के प्रकरण में लिखेंगे ॥

सन्ध्या काल भोजन करने से रोग, मैथुन करने से गर्भ का विगाड़, सोने से धन का, विद्या पढ़ने से आयु का नाश और राह चलने से भय होता है । शशि, शोभना राखी काम और आनन्द देनेवाली है बन्धियाली से भय भूल और दिशा खम होता है । निर्मल और शीतल वायु शरीर में लगने से (विशेष कर गर्मी के दिनों में सन्ध्या समय) ज्वर और दाह रोग का नाश होता है ॥

रात्रि में भोजन ।

रचौचभोजनंकुर्यात् प्रथमप्रहरान्तरे । किञ्चिदूनंसमग्री-
याहुर्जरंतत्रवर्जयेत् ॥

मनुष्य को उचित है कि रात्रि में एक प्रहर के भीतर अर्थात् ९ या १० घंटे भरमें भोजन कर लेवे क्योंकि अधिक रात जाने पर भोजन करने से अजीर्ण होने का डर है और रात्रि में कुछ कम भोजन करना यानि जितनी भूख हो। उसकी चीयाई आहार छोड़ देवे और जितनी चीजें देर में दृजग होने वाली हैं उन्हें रात्रि में कभी न खावे। कारण यह है कि रात का भोजन न पचने से शीघ्र अजीर्ण हो जाएगा आदि रोग उठ खड़े होते हैं। यह बात याद रहे कि अगर रात्रि के भोजन से अजीर्ण हुआ हो तो दिन में दो बार भोजन न करे क्योंकि रात्रि के अजीर्ण में दूसरे दिन भोजन करने से मन्दाग्नि रोग होता है, यदि अत्यन्त भूख लगे तो बहुत हलकी और शीघ्र पाकी द्रव्य भोजन करे ॥

मद्य पान ।

आज कल हिन्दुस्तान में भी शराब पीने की लोगों को अधिक आदत पड़ गई है। कितने लोगों की इसके पीछे जान जाती है छिपा नहीं है क्योंकि शराब और विष में कोई भेद नहीं है। (येविषस्यगुणाः प्रोक्तास्तेष्वनद्ये प्रतिष्ठिताः) जितने गुण विष में शास्त्रकारोंने कहा है वे सब मद्य में भी विराजते हैं। यद्यपि आयुर्वेद तत्त्व दर्शियों ने मद्यपान में अनेक गुणभीदिखलाया है और उसे स्वभाव में अम के समान कहा है तथापि अयुक्त प्रमाण से विषा भया मद्य मनुष्य को शीघ्र हनन करता है। जैसे अन्न प्राणियों का प्राण है परन्तु वेप्रमाण खाया हुआ अन्न मनुष्य को शीघ्र मार डालता है। लिखा भी है ॥

प्राणाः प्राणभृतामन्नं तदयुक्तं दिनस्त्वसून्। विषं प्राणहरं तच्च युक्ति युक्तं रसायनम् ॥

अन्न यह जीव मात्र का प्राण है लेकिन वेमन्दाज भोजन किया अन्न प्राण नाशक होता है। विष यद्यपि प्राण नाशक है परन्तु युक्ति से सेवन किया भया विष भी अमृत के तुल्य रसायन होता है।

तथापि जहां तक हेा वकै बिष का त्याग करना ही शिष्ट जनों का काम है क्योंकि सांप का पकड़ने वाला यद्यपि अपनी मंत्र की ताकत से सांप को पकड़ता है लेकिन यह भी सिद्धान्त है कि सांप पकड़ने वाले की मृत्यु सांप ही के द्वारा होती है । इसी प्रकार शराब पीनेवाले पाहे वे विधि से विधे वा अग्निविधि से अन्ततो गत्या उनकी मृत्यु मद्य ही के द्वारा होती है । यह कथन कंवल इसारा कल्पना मात्र नहीं है बल्कि इसी विषय में बिलायत के आयुर्वेद वेत्ताओं तथा बिज्ञान शास्त्र के वेत्ताओं ने अनेकानेक व्यवस्था दी है जिसे पाठकगणों के अवलोकनार्थ नीचे प्रकाश करते हैं ॥

प्रोफेसर निस्टन ने लिखा है "मद्य (शराब) एक प्रकार का विष है । रघु शास्त्र और घनस्पति शास्त्र में यही स्थान अर्थात् यही उपनाम श्रेष्ठ है । पीनेवालेकी मात्रा अनुकूल यह भीष अपना प्रभाव दिखलाता है अथवा बिलम्ब में अर्थात् अकस्मात् भीष प्राणघात करता है वा धीरे धीरे" ॥

डाक्टर मुनरो का कथन है "मद्य के विषय में प्रत्येक लिखने वालों ने लिखा है कि यह निद्रा कर विष है अर्थात् घोर से प्राण घात करने वाला है" ॥

डाक्टर छीज का बयान है "मेडीरियामेडिका (धैर्यक ग्रन्थ) सम्पूर्ण ग्रन्थकार अब सहमत हैं कि मद्य उद्भिज जियों में सब से घलघान और मृत्यु कारक विष है" ॥

डाक्टर गार्डन ने लिखा है "तीक्ष्ण मद्य से अधिक बलवान विष प्राप्त होना कठिन है" ॥

प्रोफेसर सेवाल का कथन है "मद्य मनुष्यों के स्वभाव और उसके विभागों पर तथा पावन शक्ति पर विष का प्रभाव उत्पन्न करता है और उदर में दग्ध उत्पन्न कर देता है । जिसका फल यह होता है कि अनेक

प्रकार के ग्रण और कृच्छ्र रोग हो जाते हैं और उदर के चारों ओर की त्वचा कड़ी हो जाती है और अन्त में मांस ग्रन्थि, मांसासृद्ध और दूसरे इन्द्रिय सम्यन्धी विकार उत्पन्न हो जाते हैं" ॥

हाफूर योमैनस कहता है कि "मद्य जितने काल तक उदरमें ठहरता है वह पाचन शक्ति का समय से प्रबल शत्रु है" ॥

हाफटर पेगोरी का अर्थ है "मद्य उदर के लिये समय से हानिकारक वस्तु है" इसके पीनेसे कुछ दिनों के पश्चात् कलेजे में रक्त संवय हो जाता है फिर अन्यान्य पदार्थोंकी वृद्धिसे, कलेजेके कहीं मोटे कहीं छीन होने के कारण, मद्यप मनुष्य अपना साधारण नित्यका कार्य करनेमें सर्वथा असमर्थ हो जाता है जिससे न तो पित्तप्राव होता है और न रक्त वृद्धि होती है । धीरे २ दूसरे विकार उत्पन्न होकर एक प्रकार का रोग जिसको अंगरेजी में "जिन्ड्रन्कर्स लीवर" या "आमनेल्ल लीवर" कहते हैं हो जाता है । मद्यप रक्त के रुकने से अत्यन्त दुखदाई पीड़ा सहित जलोदर रोग हो जाता है जो प्रायः असाध्य रोग है । पुनः शरीर में अनेक प्रकार की नित्य नई पीड़ाओं का भोग कर मद्यप रोगी निराश हो मृत्यु का आश्रय लेता है ॥

प्रोफेसर सस का वर्णन है " कि मैं ने आठ मनुष्यों के कलेजे की परीक्षा ली थी जो कि मद्य के अधिक अभ्यासी होने के कारण मृत्यु के अस्तगत हुए थे । उन सब के कलेजे के दशा में तनिक भी अन्तर न था" ।

हाफूर लिटल जान, जो कि एडिनबरा में सर्व साधारण की स्वस्थता का द्रष्टा (निगदयान) और पुलिस सज्जन था, लिखता है "मैं ने जहां तक परीक्षा की मद्यपों के कलेजों का रोग-सहित पाया । मद्य के न्यूनाधिक मात्राऽनुकूल रोग की दशा भी वैसीही थी" ॥

मिटर ब्रान्गन कहते हैं चाहे जितना न्यून मद्य पीने का अभ्यास (बादत) क्यों न हो परन्तु मद्यप यह हैजा पैदा करता है और मद्यप को यह हैजा पैदा हो जाय तो असाध्य बनाता है" ॥

हाफूर स्वाण का कथन है "न्यूयार्क के अस्पताल में २०४ हैजे के रोगियों में केवल ६ मनुष्य ऐसे थे जो मदिरा नहीं पीते थे" ।

डाक्टर एलिस् ने पार्लियामेंट सम्मन्धिनो एकसभा में कहा था "मादक
द्रव्य मुख्य कर के मद्यपान अधिक विक्षिप्तता का हेतु है क्योंकि मिडल सेक्स,
के पागल खाने में २८ विक्षिप्त (पागल) एक वर्ष में उन में १८ मदिरा पीने
वाले थे ॥

एडनबरा के राजल रासाइल के डाक्टर "स्त्रे" का कथन है "मद्यपान
विक्षिप्तता (पागलपन) का मुख्य कारण है । १८० विक्षिप्त जिन के रोग का
कारण ज्ञात हो गया था उन में पचास मद्यप थे" केवल यही रोग नहीं
प्रायः मद्यपी को अनेक रोग ज्ञात करते हैं जो मदिरा के कारण असाध्य हो
जाते हैं ॥

मद्य का प्रभाव केवल मद्य पीनेवाले पर नहीं समाप्त होता किन्तु एक
दूसरे के पथात् पर्यात् उस को सन्तति भी वैसी ही होता जाते हैं । डाक्टर
होव, एक प्रसिद्ध अमेरिका निवासी, लिखता है कि दो सौ विक्षिप्त मनुष्यों में
से जिन का रोग निदान विहित हो गया था ४५ ऐसे थे जिन के माता पिता
मद्यप थे ॥

डाक्टर कारपेन्टर कहता है "सभी पूर्ण विश्वास है कि जिन जो मद्य
के अभ्यस से उत्पन्न हो जाते हैं उन को सन्तति को भी पंही कष्ट भोगना
पड़ता है" ।

न्यूयार्क प्रिंटाके का कथन है "मद्यप को सन्तान अवश्य मद्यप होती है",

अब बुद्धिमानों को विचार करना चाहिये कि बिलायत आदि जो
एक प्रकार का अति हिंस्र प्रधान देश है कि जहां मद्यपान अधिक
हानिकर न होना चाहिये, जब वहां के लोगों को नुकसान करता
है तो यह आर्यावर्त जहां एक प्रकार की सख्ता आध्यात्मिक लो
गों के अन्तर्ग में गर्मी बनी रहती है वहां मद्यपान क्यों न हानि
कर होगा ? अवश्य होगा यही कारण है जो भारत में प्रति दिन
कोढ़ियों की वृद्धि होती जाती है ॥

विधियुक्त मद्य पान का फल ।

विधिना मात्रया काले दितै रन्नै र्यथावलं । प्रहृष्टो यः पि-
बन्मद्य तस्य स्यादमृतोत्तमम् ॥ स्निग्धैः सदन्नैर्मासैश्च भक्ष्यैश्च

सह सेवितं । भवेदायुः प्रकर्षाय वलाया पचयाय च ॥ कास्य-
ता मनसस्तुष्टि स्तेजा विक्रम एव च । विधिवत्सेव्यमानेतु
मद्येसन्निहिता गुणाः ॥

जो मनुष्य विधि पूर्वक मात्रा सहित भोजन के साथ अपनी ताकत के अनुसार प्रसन्न चित से मद्य पीता है वह मद्य अमृत के समान गुण करता है । उत्तम बनाया धिकने जल (ताजा घृत पड़ा दाल भात आदि) और मांस (सूरबा कसाब आदि) और मसाले खानों के साथ पिया गया सराब आयुः (उमर) बल और शरीर का बढ़ाने वाला होता है । मद्य बहुत द्रव्यों से सिंचा हुआ समदा सराब, अन्दाज से विधि पूर्वक पिये तो उस के पीने से रूप की सुन्दरता, मन का चन्तोप, शरीर का तेज और पराक्रम बढ़ता है, यदि मद्यपान न करे तो अति उत्तम है ॥

अविधि मद्य पान ।

निर्भक्त एकान्ततएव मद्यं निषेव्यमाणं मनुजैर्न नित्यं ।
उत्पादयेत्कष्टतमान्विकारा नापादयेच्चापि शरीर भेदम् ॥
क्रुद्धेन भौतेन पिपासितेन शोकाभितप्तेन बुभुक्षितेन ।
व्यायामभाराच्च परिक्षतेन वीगावरोधाभिहतैश्चापि अत्य-
न्तसुखावततोदरेण साजीर्णभुक्तेन तथाऽवलेन । उष्णाभि-
तप्तेन च सेव्यमानं करोति मद्यं विविधान्विकारान् ।

जो मनुष्य बिना भोजन अर्थात् खाली पेट में सराब पिया करता है । याने गिलास पर गिलास टकीसे जाना है और उसके ऊपर कुछ खाना नहीं खाता उस के शरीर में अति कष्ट असह्य रोग होते हैं और उसे वह मनुष्य मर जाता है । जो मनुष्य क्रोध के ऊपर, मय युक्त, पियास शोचग्रस्त में, भूखे पेट और भेदगत क्रिये मद्य पर, बोझ उठाने के उपरान्त, कहीं से थक के आया हो,

हस्त मूत्र खुलासा न हुआ हो, या पेट में पित्तजमा हो या रुद्ध पन्न खाये हो जैसे वज्ररा आदि, अजीर्ण से पेट भरा हो, अति धूप का तपा या गर्मी से व्याकुल हो उस के ऊपर सराव पीने से वह शरीर में अनेक प्रकार का रोग उत्पन्न करता है। इसलिये जिसे मद्य पीने को लत पड़ गई है बिना पिछे चैन नहीं या जो कभी २ मनप्रसन्नार्थ सराव पीने को बाधित रखते हैं। वे रात्रों में भोजन के साथ ही एक छंटाक या इस से कुछ कम पी सकते हैं परन्तु अति गरम ऋतु में वह भी निषेध है। और सब नियम भोजन करने के बंधे हैं जो दिन के भोजन प्रकरण में लिखे हैं। भोजन करने के दो अथवा एक घड़ी के बाद उत्तम प्रसंग पर सोना आरोग्य कर है ॥

निद्रा विधिः ।

नित्यामन्त जगदीश्वर ने मनुष्यों को क्या जीव मात्र को दिन कृत परिश्रम आश्रय रात में सोने से का नियम बना दिया है। सुख पूर्वक रात्रि में सोने से परिश्रम से उत्पन्न आत्मस्यादि जितने उपद्रव हैं वे सब शान्त होती हैं। रात में जागने से, या किसी विषय से, अथवा किसी रोग के कारण से रात में नींद न पड़ने से चालस्य, आँप, शिरदरद, पीकाई और अजीर्ण आदि अनेक रोग खड़े हो जाते हैं। इसलिये मनुष्य को उचित है कि हजारों जङ्गरी कानों को छोड़ रात में अवश्य सोवे परन्तु छ. अथवा सात घंटे से अधिक न सोना चाहिये ॥

शय्याविचारः, शिल्पशास्त्रे ।

चतुराशीतिपर्वाणि दैर्घ्येणपरिकल्पयेत् । षष्ठङ्गुलानि विस्तारं मञ्जुकण्डस्तमेस्मितम् ॥ एवंशय्याविधातव्यं सर्वेषां शयनाचिता । मानाधिक्येदरिद्रः स्थान्मानहीनेसुखक्षयः ॥

भाषार्थः—साढ़े तीन हाथ की लम्बी ढाई हाथ चौड़ी और एक हाथ ऊँची ऐसी शय्या होनी चाहिये इससे बड़ी दरिद्र और छोटी सुख

क्षय करनेवाली है । बिष्णु पुराण में लिखा है कि न बहुत बड़ीही और न छोटी एव न मैली कुचैली हो और सटमल जिसमें न हो यह शय्या सुख की देनेवाली होती है । उत्तम पलंग पर सोनेसे त्रिदोष नाश होता है । तोषक पर सोने से वायु और कफ नाश हो रक्त दृढ़ होता है । परंतु गरम ऋतु में सूती गलीचे पर सोने से बहुत फायदा होता है । जमीन तथा काठ की चौकी पर सोने से बात पित्त का कोप होता है ॥

सुश्रुत—उपरोक्त लक्षण युक्त पलंग बल, पुष्टि प्रीति नींद और बुद्धि को बढ़ाने वाला त्वचा को मुलायम भांस और रक्त को मुनासिब अन्दाज से अंग में पहुंचाने एवं अस वायु और कफ रोग का हटाने वाला है । मार्कण्डेय का वचन है कि भीगी, गन्ध, उत्तर शिर और जिसमें स-सहरी न हो ऐसे पलङ्ग पर न सोये । गार्ग्य ऋषि कहते हैं शून्यालय, स्पृशान, पीरहा, शिवालय, मातृ वेभनि (मातृ वर्ग की निज कोठरी में) गोशाला, धान्याशय आदि स्थानों में, पलाश, आंच, जामुन इनके नीचे, अपरीक्षित स्थान और धिजुली से दग्ध स्थान में आरोग्य के चाहनेवाले जन कदापि न सोयें ॥

शयन में दिशा का विचार ।

मार्कण्डेयः—प्राक्शिरः शयनेविद्याङ्गन आयुश्च दक्षिणे ।
पश्चिमे प्रवक्ता चिन्ता हानिमृत्यु रथोत्तरे ॥

गार्ग्यः—स्मरहे प्राक्शिरः शिरो प्रवाशुर्ये दक्षिणाशिराः ।
प्रत्यक्शिरः प्रवासितु न कदाचिदुदक् शिरा ॥

बिष्णुपुराणे—प्राच्यांदिशि शिराशस्तं यास्यायमथवानृप ।
सदैवस्वपतः पुंसो विपरीतं तुरोगदम् ॥

मार्कण्डेय का वचन है कि पूर्व शिर में सोने से विद्या, दक्षिण में आयु की वृद्धि पश्चिम में चिन्ता और उत्तर में मृत्यु प्राप्त होती है । गार्ग्य कहते हैं अपने घर में पूर्व शिर, खसराज में दक्षिण शिर और यात्रा में पश्चिम शिर कर के सोना परन्तु उत्तर शिर कभी न सोवें ॥ वि० पु० में लिखा है पूर्व शिर सोना शुभ है ॥

विपरीति सेने में रोग होता है । और भी इसी प्रकार बहुत से ऋषियों के वचन पाये जाते हैं तथा परीक्षा से भी जाना गया है कि उत्तर धिर सेने से अवश्य दुस्स्वप्न आदि होती २ कोई न कोई रोग भी हो जाता है इससे उत्तर धिर कभी न सेना चाहिये ॥

करवट सेने से बल, हठेया वित सेने से मजला और छाती पर छाया रख कर सेने से दुस्स्वप्न होता है ॥

घण्टा धिर को और जंघो और पैर की तर्फ नौची होगी चाहिये एवं चारों पाधों के तले जल युक्त चार कूंडों रहनी चाहिये ताकि चोटों आदि कोई कृमि घण्टा पर चढ़ न जाय ॥

सेने का कमरा रमणीय, सुगन्धित योभा युक्त सुखद (तसवीर वगैरह) वस्तु से युक्त एवं छाड़ने में गुलाबी, बर्षा काल में श्वेत और गरमी में हरे रङ्ग से पोता होना चाहिये ॥

सेने समय निम्नलिखित पदार्थ खाट के समीप अवश्य रख लेंगे ।

उपानही वेणुदण्ड मम्बु पान्नं तथैव च । ताम्बूलादीनि रम्यानि समीपे स्थापयेद्गृही ॥

जूतों का जोड़ा या खड़ाज, बांस का सोंटा या कोई हथियार हो, जल भरा पात्र और पान कायची अंतर आदि मन प्रसन्न कारक रमणीय वस्तुओं को मनुष्य मात्र सेने समय अपने पास अवश्य धर लेंगे ।

दीप कालः मरीचिः ।

रवेरस्तं समारभ्य यावत्सूर्योदयो भवेत् । यस्यतिष्ठेद्गृहे-
दीप स्तस्य नास्ति दरिद्रता ॥

सूर्यास्त से लेकर जब तक सूर्योदय न हो जिसके घरमें दीपक जलता है यह दरिद्र नहीं होता है एक तो यही प्रत्यक्ष है कि घोर का भय कम रहता है । दीपक का मुख पूर्व होनेसे आयु, उत्तर मुख होनेसे धन की वृद्धि पश्चिममुख होनेसे दुःख और दक्षिण मुख होनेसे हानि होता है ॥

दीप का मुख ॥

प्रत्यङ्मुखोदुःखदोऽसौ हानिदोदक्षिणामुखः ॥

मरीचि का वचन है कि पश्चिम और दक्षिण मुख दीपक हानिकारक होता है कांतिवीर्य तन्त्र में लिखा है कि मनुष्ठान में प्रत्यङ्मुख-दीप स्थापन करना पाहिजे इससे स्पष्ट हुआ कि गृह में सर्वदा उत्तर और पूर्व मुख दीपक रखना उत्तम है ॥

“उत्तम दीप लक्षणम्” सुदर्शने ॥

नेत्रह्लादकरः सार्चि दूरतापविवर्जितः ।

सुशिखः शब्दरहितो निधू मोनातिद्विखका ॥

नेत्रों को हर्षकारक, दूर तक जिसकी तेजी न जाती हो अर्थात् ठण्डी रोमनी हो सुन्दर गुल, घूम तथा शब्द रहित हो और टेम न अति ऊँच और न दीर्घ ऐसा दीप मनुष्य की आरोग्य पद होता है । दीपक की बत्ती सूत या जन आदि बखी की न होनी पाहिजे सर्वदा कपास की बत्ती और रनेह में से घृत या तिल तथा सरसों का तैल दीपकमें जलाना वैद्यक का मत है परन्तु प्राक कल जहाँ देखिये ठाकुरदारे से लेकर पाखाने की कोठरी तक करे-सन ऐल (मिट्टी का तेल) और बिलायती चिमनी जलती हैं । इसमें संदेह नहीं कि एक लैम्प जला देने से कमरा भर चमक उठता है परन्तु चिमनी की तीव्र चमक नेत्र की ज्योति को मन्द करती है । पिछले समय में सौ वर्ष के उबकी भी चमकी की हाजत नहीं होती थी अब सोलह वर्ष के छोकड़ों की बिना चमका राह नहीं सुझता यह सब कारण प्राचीन व्यवहारों के त्याग का है । आरोग्येषु जन को उचित है कि आवश्यकीय कार्य के प्रतिरित्त सर्वदा चरी चिमनी जलाया करें ॥

श्लेष्म प्रकृति वाले के शयन गृह में रात भर दीप का जलना लाभदायक है और वातपित्त प्रकृति वाले की हानिकारक है ॥

“पुरुषस्य दीपनिर्व्वारणेदोषः”

यह बात प्रायः सभी जानते सुनते होंगे कि पुरुष को दीपक बुताने में दीप होता है इसीसे स्त्रियां पुरुष को दीप बुताने भी नहीं देती हैं ॥

दीप निर्व्वापणात्पुंसः कृष्माण्डच्छेदनात् स्त्रियः ।

अपिरेणैव कालेन वंशनाशो भवेत् ध्रुवम् ॥

पुरुष को दीपक बुझाने से और स्त्रियों को पेटा के चीरने से वंश क्षय होता है अर्थात् वीर्य तथा रज कुछ काल में वंशोत्पादक चीन हो जाता है । यदि कोई आधुनिक मतावलम्बी पाठक कहे कि यह किसी तन्त्र या पुराण की गप्प है ? तो उसका उत्तर यही है कि कुछ दिन वैद्यक शास्त्र की पढ़ाई खर्च पड़ा जाती रहेगी ॥

लालटेन का गुण ॥

मनुष्य को चर्चित है कि यदि अंधियाँ रात में कहीं जाना हो तो लालटेन अवश्य ले लें क्योंकि मार्ग में सर्पादि जन्तुओं और भ्रू का भय नहीं होता है ॥

पढ़ा ॥

दयामय पिता जगदीश्वर ने मनुष्यों के रक्षार्थ निर्वाणु की अवस्था में व्यजन (पढ़ा) बना दिया है पड़े की हवा दाह, सूँछाँ, पसीना और यकावट दूर करती है । ताड़ के पड़े की हवा त्रिदोष प्रमन करने वाली है । वांस की पड़े की हवा गरम और रक्तरोग पैदा करती है । चबरा, कपड़ा, मोर के पंख और बेंत के पड़े की हवा प्रकृति के सम अधिकारी, तर, सुख देनेवाली, ऊँचर, दाह, सूँछाँ, पसीना, जेकली और बात, पित्त प्रमन करनेवाली होती है विविध कर मसा मच्छड़ आदि दंशन करनेवाले जीवों से क्षेप नहीं होता, भोजन करते समय में भी पड़े से वायु दिये जाय कि जिसमें मक्खी आदि जीव भी भोजन पर न बैठने पावें क्योंकि मसा मच्छड़ आदि के काटने से रक्त रोग और भोजन पर बैठ जाने से हैजा आदि रोग होता है कारण यह है कि उक्त जीव गाय, गीर, कुत्ता आदि अनेक जीवों के विकार रक्त को पान करते हैं और वही रक्तयुत उल्लेख मनुष्य के कोमल शरीर में काटते हैं इससे रक्त रोग होता है । और भोजन के द्रव्य पर बैठने से हैजा आदि अजीर्ण रोग होता है । ऊँचर आदि किसी किस की बीमारी क्यों न हो जिस तरह घास खगने पर जल का निषेध नहीं है उसी प्रकार गर्मी खगने पर पड़े की हवा का निषेध नहीं है । जो मनुष्य बाहर की हवा से परहेज कर निरन्तर कपड़े के पड़े की हवा में रहते हैं उनकी वायु और आरोग्यता सदा बढ़ती है ॥

“दिशाभेद से बाहर के हवे की गुण” सुश्रुते ।

पूर्व की हवा भारी, गरम, मीठी (क्योंकि फलों में मीठे रस पैदा करती है) चिकनी, तर करनेवाली दाढ़ और वायु रोग के बढ़ानेवाली पित्तरक्त लवा दीप, बवासीर विष, कास, सन्निपात ज्वर, दमा, घामबाट रोगीत्यन्त करनेवाली है परन्तु मिह्नती (कसरती आदि) और धातुक्षीण वाली को हित करती है ॥

दक्षिण की हवा मीठी, हलकी, ठण्डी बल और हृद् बढ़ानेवाली पित्त और रक्तरोग नाशनी है ॥

पश्चिम की हवा तेज और सुखानेवाली हलकी वायु बढ़ानेवाली बल, मेद पित्त और कफ को नाश करती है । उत्तर की वायु—चिकनी, मीठी, ठण्डी कोमल बल और दीप बढ़ानेवाली है ॥

“कोन की हवा का गुण”

पूर्व और दक्षिण कोण की हवा कखी और दाढ़ पैदा करती है । दक्षिण और पश्चिम कोने की हवा ठण्डी है । पश्चिम और उत्तर कोने की हवा कड़वी, तीती और वायु बढ़ाने वाली है । उत्तर और पूर्व कोने की हवा कड़वी और वायु रोगकारी है । हवा की उत्पत्ति, स्वरूप, वजन, ताकत और हवा से क्या २ वस्तुयें तैयार होती हैं यह सब पदार्थविद्या से ज्ञात हो सक्ता है मिलनप्रकरण में इसे भी लिखेंगे ॥

“अध्वन”

प्रति दिन आँखों में सुरमा देना हित है । परन्तु लोग इसे शृङ्गार या प्रसभ्यता, जान कम काम में लाते हैं । हमारी यह सम्मति है कि दूसरे तीसरे दिन दृष्टि के बढ़ाने के लिये आँखों में अध्वन अवश्य लगा लिया करें ।

“पक्ष्मलं विशदं कान्त मममोञ्ज्वल मण्डलम्,

नेत्रमध्वन संयोगाद्भवेच्चाभल तारकम् सुश्रुते”

नेत्र में अध्वन लगाने से पलकों के मूल नष्ट हो नेत्र का फैलाव सुन्दरता श्वेत मण्डल और कृष्ण तारा मल रक्षित रहता है ॥

वैद्यक में यह भी लिखा है कि हेमन्त और शिशिर ऋतु में दीपहर के समय ग्रीष्म और शरत् में प्रातःकाल, वर्षा में संध्या समय, परन्तु जबतक आकाश साफ हो और अधिक गरमी न हो, वसन्त ऋतु में जब इच्छा हो आँखों

में सुरमा लगाना उत्तम है। परन्तु सामान्य विधि से सुबह या शाम को लगाना चाहिये। निषेध—बहुत सर्दी, गर्मी, हवा, मेघ धिरेद्धये, रात में जागरण, वमन, शिर में खान, और भोजन करके और नवज्वर रोग में सुरमा लगाना मना है ॥

“सुरमा लगाने की विधि”

शाम सुरमा जो सिन्धु पर्वत से आता है बाज़ार में बर्तियों की दुकानों में मिलता है याध पाव लेकर आग में गरम करके तीन २ बार गीघृत में चिफला के ज्ञाय में, शहद में, बकरी के दुध में, भंगरा के रस में बुझा ले, तब साफ पानी से खूब धोकर साफ करके दर्पाय शुद्ध कपूर मिलाय खूब मझौन चूर्णकर किसी कागदार बीसी में रख लेय, यदि पूर्वोक्त द्रव्यों में शीघे की भी पिघला करके तीन २ बार पीसकर सलाई बना ले तो अति उत्तम है, न होसके तो साधारण शीघे की सलाई से पूर्वोक्त लेखानुसार आंखों में अच्छन लगाने से आंख की जलन, कीचड़ आना, खुजलाहट, पानी बहना, दर्द, हवा और घाम का बिचार जाता रहता है ॥

आंख दूखने का लेप ॥

छांटी हरै, सेंधा नमक, गीस, और रसवत इन चारों को सम भाग ले पानी में मझौन पीस किछिभाज गुनगुना कर सीती समय या जब इच्छा हो पत्तकों पर लेप कर देय शीघ्र ही आराम होगा ॥

रतौंधी का अञ्जन ॥

रसवत, हरदी, दास हरदी, शमेली और नीम के पात सबको बराबर ले गीवर के रस में घोट गीली बना ले दोनों समय पानी में घोट अञ्जन करे तो नियय रतौंधी छुट जाय परन्तु शिर में शमेली के तेल को लगा कर खान करे और दुग्ध आदि तर और शीतल चीज खावें ॥

अति त्रौघ, पीक, रुदन, स्त्री प्रसङ्ग करने से, अति सूक्ष्म तथा चमकीली वस्तुओं के देखने से, नङ्गे पाँव चलने से घाम तथा आँस में रहने से, मदिरा आदि नशों के अधिक सेवन से, गरमी के रोग से, सामर्थ्य से अधिक पढ़ने लिखने से मनुष्य जल्दी ही दृष्टिहीन वा अल्पदृष्टि हो जाता है ॥

जमेमा आंखों में अच्छन लगाने से, शिर में तेल दिकर खान करने से, निरन्तर वीर्य की रक्षा करने से दिन में तीन बार घेर और मुख के घेने से मूँग, लाख घान, जौ घी, दूध मुनक्का, भांवला, केला, भांगरे को

साग, बनसुर्गा, हिरण, ककुआ, काला तीतर इनके मांस और जिन २ चीजों के खाने से दिल और दिमाग में ताकत पड़ती है, उन सबों के खाने से सर्वदा रमणीय शीतल मकान में रहने और सुखपूर्वक निर्विघ्न रात में सोने से मनुष्य दृष्टिहीन नहीं होता ॥

आदर्श (आईना)

लोग कहते हैं कि रात में आईने में मुख देखने से मुख में भाई पड़ती है परन्तु यह बचन हमें किसी ग्रन्थ में नहीं मिला, दर्पण देखने का कोई काल नियत नहीं है मनुष्य को इच्छा होने पर हर समय देख सकता है। आईने में मुख देखने से मङ्गल, शोभा, बल, पुष्टि और आयु बढ़ती है ॥

प्रसाधनी (कच्ची)

इसका भी अनियत काल है आवश्यक होने पर मनुष्य बालों को भाड़ सकता है, चाबनूस या मैसे को सोंग को कच्ची चक्की होती है। कच्ची से रोज बालों को साफ करने से बालों का मैल और कीड़े नाश होकर शोभा बढ़ती है लेकिन एक बचन भी है ॥

शरीर शुद्धिं निर्वर्त्य कृतशौच विधिन्तरः ।

केशपात्रे प्रकुर्वीत प्रसाधन्यादि शोधनम् ॥

शौचानन्तर नहा भी के संध्या से निवृत्ति हो कच्ची से बालों को साफ करे क्योंकि बाल भाड़ने से बाल टूटते हैं और बाल टूटने से हिलातिगण अशुच होजाते हैं (ऐसी धर्मशास्त्र की आज्ञा है) तो बिना स्नान किये संध्याकर्म निषिद्ध है इसलिये संध्या से निवृत्ति होके तब बालों को भाड़े ।

एक स्थल में लिखा है कि कच्ची से बालों को सवारना कायस्थादि वर्णों के लिये है, ब्राह्मणादि के लिये नहीं क्योंकि ब्राह्मणों को सर्वदा मुण्डन या बद्धत कोटी २ बाल रखने चाहिये, खैर इसका खण्डन तो हम नहीं करते किन्तु बाल रहने पर कच्ची से बालों को साफ करना सब वर्णों के लिये आयुर्वेद का मत है ।

अथनविधि ।

उपानहौवेणुदण्ड मम्बुपात्रं तथैवच । ताम्बूलादीनि र-

न्यानि समीपे स्थापयेद्गृही ॥ नार्दवासाश्च नग्रश्च शून्येभ्यस्तत्र
खेऽग्नयिः ॥

सोते समय पलंग के समीप पहिरने का लूता या बिलपर अथवा खड़ाजें
बिस्तार के नीचे पलंग पर डण्डा, लाठी या कोई हथियार, पलंग के पास
किसी तिपाई पर खच्छ जल और बोड़ी आदि रमणीक वस्तुओं को अवश्य
रखलेवे । किन्तु भीगे कपड़ों पर तथा नम होकर, अकेले घर में, अरीर में
तैलादि मईन करके, उच्च स्थान अर्थात् बिना आड़ के चबूतरा, घटारी
अथवा मदान आदि पर न सोवे ॥

“अयने आवश्यक कर्माणि” मार्कण्डेयः—

रात्रिसूक्तं जपत्सत्वा देवाश्च सुखशायिनः । नमस्कृत्वा
व्ययं विष्णुं सप्ताधस्थं स्वपेन्निशि ॥ दक्षः—निद्रा समय मासाय
तांबूलं वदनात्यजेत् । पर्यङ्कात्प्रमदां माला त्पण्ड्रं पुष्पाणि
मस्तकात् ॥

सोते समय के जरूरी काम मार्कण्डेय जी इस प्रकार लिखते हैं कि वेदीक्त
रात्रिसूक्त पाठ करके अथवा विष्णु भगवान और देवताओं को स्मरण करके
अयन करे । दक्ष जी कहते हैं कि निद्रा प्राप्त समय मुख से पागको घूंकदेय,
माथे का चन्दन और पुष्पों का माला वगैरह भी गले से दूर करदेय ॥

तात्पर्य यह है कि पलंग के पास लूता रहने से सूत्रादि त्याग करने के
लिये पहिरने के काम आता है । अस्त्र रहने से दुःखप्र का नाश और शत्रु का
भय नहीं रहता, जल और पान आदि रखने से रात्रि में मुख पीने आदि
और बोड़ी खाने में काम आता है, भीगे कपड़ों पर सोने से पड़ दई होने
लगता है, नम सोने से खप्रादि दीप तथा दुःखप्र होता है, तैलादि लगा के
सोने से चोटी आदि पलंग पर चढ़नेका भय और कपड़ा मैला होता है, बिना
आड़ उच्च स्थान में सोने से गिरने का भय रहता है ।

जगत्पिता जगदीश्वर को स्मरण करके सोने से अड़ों की रक्षा और चम
खोगों का कर्ज भदा होता है, मुख में पाग का बीड़ा रखकर सो जाने से उस
के कण श्वाश्वद्वारा गले में जाके खाँसी उत्पन्न करता है और गले में पुष्पोंके

माखा आदि पचिन कर सोने से पतझादि कृमि आ लिपटते हैं ।

प्रायः ऐसे लोग हैं जिन्हें सोती समय जल पीने की आदत है कितने लोग रात में कई बार उठ के जल पीते हैं, परन्तु नुकसान करता है जिन्हें रातकी घ्रास अधिक लगे वे शीतलधीनी चावकर सोवा करें तो लप्सा न लगे ॥

मैथुन विधि ।

पूर्वरात्रे व्यतीते तु सगच्छे द्रुतिमन्दिरं ।

पादौ प्रचालयत्पूर्वं पश्चाच्छय्यां समाविशेत् ॥

जय प्रहर भर रात्रि व्यतीत होजाय अर्थात् १२ बजे के उपरान्त जब मनुष्य रतिमन्दिर अर्थात् स्त्री के पास जावे तब जाकर प्रथम पैरों को धोय पोंछ कर तब शय्या पर बैठे ।

जिस ग्रन्थ की देखिये रात ही में मैथुन करना सिख होता है तिसमें भी मध्याह्न को छोड़ दे अर्थात् ११ । १ । २ और ३ बजे रात के अभ्यन्तरमें मैथुन श्रेष्ठ है । एकान्त, रमणीक, सुगन्ध शोभा और सुखद वस्तु युक्त सजे कमरे में चिड़ियों की सुरीली गान सुनते हूय, बदन में सुगन्ध फूक इतर लगा कर और उत्तम भूषण वस्त्र धारण कर और बलकारी द्रव्य हलका भोजन करके इलायची, केसर, कस्तूरी आदि सुगन्ध द्रव्य युक्त पान चावते हूय कामबाण से व्याकुल प्रीतियुक्त पुत्रार्थी पुरुष पूर्वोक्त उत्तम शय्या पर स्त्रीप्रसङ्ग करे ॥

ऋतुवती स्त्री को भी चाहिये कि उत्तम २ वस्त्र, आभूषण और अञ्जनादि सर्वाङ्ग शृङ्गार कर परस्पर प्रीति में मग्न बिकना और थोड़ा भोजन किये काम में व्याकुल आनन्द सहित पतिके सह रति करानेकी प्राप्त हो ॥ परन्तु:-

अति दृढार्या दीर्घरोगिण्या मन्ये वा विकारेणोपशृङ्खायां,
गर्भाधानं नैव कुर्वीत् । पुरुषस्याप्येवं विधस्य तएव,
दोषाः सन्भवन्ति ॥

अति बुढ़ापा (५० वर्ष से उर्ध्व) दीर्घरोगिणी अन्य विकार युक्त जैसे अकामा अङ्गहीना आदि स्त्रियों में गर्भाधान न करे इसी प्रकार पुरुष को भी जानना । जैसे बृद्धत भोजन किये, अघोर, अवस्त्र, चुषा, लप्सा, व्यथा । और मलादि वेगयुत, वालक, बूढ़ा, रोगी और कामवेग रहित पुरुष से (यदि उत्तम सन्तान की इच्छा रखती हो तो) कभी गर्भाधान न करावे ॥ और भी ।

पञ्चविंशे ततोवर्षे पुमान्गारी तु प्रोदये ।

समत्वागतवौष्णौ तौ जानीयात्कुशलोभिप्रक् ॥

सुश्रुते सूत्रस्थाने अ० ३५ ॥

शरीर की उत्पत्ति वा चवनति की विधि जैसे वैद्यक शास्त्र में है वैसे अन्यत्र नहीं, किन्तु समय और कैसा सोजना करके मैथुन करने से कैसा बालक उत्पन्न होगा और पशुसं पराक्रम, तेजवान, विद्यावान् आदि गुण युक्त पुत्र हमलोग कैसे उत्पन्न कर सकते हैं ये सब वैद्यक-शास्त्र में विधान हैं इस लिये विधिप्र कर गर्भाधानादि संस्कारों के करने में वैद्यकशास्त्र का आश्रय अवश्य लेना चाहिये । देखिये सुश्रुतकार परम वैद्य (जिन्हेंका प्रमाण सब विद्वान् लोग मानते हैं) गर्भाधान का समय कमसे कम १६ वर्ष की कन्या २१ वर्ष का पुरुष अवश्य हो, जितनी सामर्थ्य पच्चीसवें वर्ष में पुरुष के शरीर में होती है उतनी सामर्थ्य १६ वर्ष में कन्या के शरीर में होजाती है इसलिये वैद्य लोग उस अवस्था में दोनों को समवीर्य वाले जानें । उक्त अवस्था से न्यून समय में कभी गर्भाधान न करे क्योंकि ॥

उन प्रोदय वर्षाया मप्राप्ताः पञ्चविंशतिम् ।

यथाहते पुमान् गर्भं कुचिस्थः स विपद्यते ॥ २ ॥

जातो वा न चिरञ्जीवेज्जीवेद्वा दुर्बलेन्द्रियः ।

तस्मादत्यन्तं बालार्या गर्भाधानं न कारवेत् ॥

सुश्रुते शरीरस्थाने ॥ अ० १० ॥

१६ वर्ष से कम अवस्था की स्त्री में यदि २१ वर्ष से कम अवस्था वाला पुरुष गर्भाधान करता है तो वह गर्भ उदर में ही बिगड़ जाता है, पल्लो-गता यदि उत्पन्न भी हुआ तो चिरजीवी न होगा, कदाचित् जीवे भी तो अत्यन्त शरीर का दुर्बल और रोगी हो इससे अत्यन्त बाला याने १६ वर्ष की अवस्था से कम अवस्था की स्त्री में कभी गर्भाधान न करना चाहिये ॥

वाक्यविवाह और न्यून अवस्था में गर्भाधान की का यह फल है कि लाखों पुत्रहीन हैं और जोते लाते हैं, बाबा जी के यन्त्रविभूति से घन का भी सर्वस्व नाश और दुराचार की वृद्धि मान्य का नाम ले ले फिर पीट कर रोना दृष्टि-

गोधर होरहे हैं यह क्या झूठी बात है एक २ स्त्रियों के दूध २ लड़कें हों और एक भी न जिये ॥

प्रथम तो परस्पर चमोति होने के कारण गर्भधारण ही नहीं होता यदि इन्ध्या ग्री तो गर्भ ही गिर जाता है या भरे लड़के पैदा होते हैं राम २ रटते पैदा भी हूयें तो माता भवानी को दोषी कर भीषण ही फिर जर्हा के तर्ह ही चले जाते हैं । हे आर्य्य भाइयो ! यदि आपलोग अपने कुछ का दीपक उत्तम सन्तान सुन्दर सधील बुद्धि बल पराक्रम युक्त श्रीमान् पूर्ण चन्द्रकला के समान प्रदीप्तिमान चाहते हो तो (गौरीद्याहियाखोकां बैकुण्ठं रोहिणीं द्दौ) इस लालच को त्याग और अपोमानन्दन पाधा पुरोहितों के जटपटांग कथा से बचिरे वन अवश्यमेव सोलहवें वर्ष की कन्या का २५ वर्ष के पुत्र के साथ विवाह करो इससे न्यून में कभी मत करो यही देश की उत्पत्ति देश का श्रीमान् और देश का सुधार करनेवाला कर्म है ॥

“गर्भाधान के पूर्व स्त्री पुरुष को आवश्यकीय कर्म”

पुरुष को उचित है कि एक मास पर्यन्त ब्रह्मचर्य्य से रहे और बात पुट भीषधि तथा धी दुग्ध आदि बलकर पदार्थ का अधिक सेवन करे, विशेष कर जिस दिन गर्भाधान करना हो “सर्पिः स्निग्धः सर्पिः क्षीराभ्यां आख्योदमंभुक्ता” पुराने चावल के भात में गोघृत, गोदुग्ध और मिथी मिला कर चयवा खीर भोजन करे ॥

स्त्री को भी चाहिये कि उत्तम आहार भोजनकर एक मास ब्रह्मचारिणी रहे विशेष कर ॥

“ऋतौ प्रथम दिवसात् प्रभृति ब्रह्मचारिणी ।

दिवा स्वप्नाञ्चनाश्रुपात स्नानानुलेपना ॥

भ्यङ्गनख च्छेदन प्रधावन हसनं कथनाति ।

शब्दश्रवणाव लेखनानि लायासान्परिहरेत्”

रजोदर्शन (मासिक चर्मा) के प्रथम ही दिन से ब्रह्मचारिणी दिया स्वप्ना (दिनको सोना) आंखों में चक्कन लगाना, रीना, स्नान, शरीर में तेक और चबटन का लगाना, नख कटाना, हसना, ब्रह्म वक्ताद करना, गम्भीर शब्द सुनना, गन्ध से जमीन लिखना, तेज हवा और मेहनत त्याग करे क्योंकि ॥

दिवास्वपन्त्याः स्वपशीलोऽञ्जनादम्बो रोदनादिकृतदृष्टिः ।

स्नानानु लेपनादुखः शीलसौला स्यङ्गात् कुष्ठौ ॥

नखापकर्त्तनात् कुनखौ प्रधावनाच्चंपलो हसनाच्छ्राव ।

दन्तौष्ठतालजिह्वःप्रलापी चातिकथना दतिशब्द श्रवणा ॥

इधिरोऽवलेखनात् खलतिर्मास्ता यास सेवना दुन्मत्तो ।

गमौ भवन्तीत्येव मेतान् परिहरेत् ॥ सुश्रुते शा० अ० २ ॥

दिन के सोने से चपशील (पापाणहृदय) अञ्जन लगाने से चम्पा, रीने से बिल्वत दृष्टि (ऐंवाताना) स्नान और चवटन लगाने से दुःख युक्त तैल लगाने से कीड़ी, नख कतराने से कुनखी (एक प्रकार का कुट है) दौड़ने से चञ्चल, हँसने से काळा दांत ओष्ठ तालु जिह्वा और आन तान बकने वाखा, अति बोलने और शब्द श्रवण से बधिर, प्रुष्ठी लिखने से दुष्ट और अति वायु सेवन तथा परिश्रम करने से चम्पत्त गर्भ (लड़का पैदा) होता है इसलिये उक्त बातों को रजो युत स्त्रियां अवश्य त्याग करें ॥

वैद्यक के अतिरिक्त पुराणों में भी रजो युक्त स्त्रियोंको छूनेतक का निषेध है और प्रथम दिवस में चाण्डाली, दूसरे दिन ब्रह्मवातिनी और तीसरे दिन रजकी (धोविन) संध्या लिखा है, कारण यह स्पष्ट होता है कि जिससे चर्म-वती तीन दिन सबसे भिन्न ऐकान्त स्थल में बांध करे "न रहे बांध न बाँधे बाँसरो" तब अवश्यमेव रजोयुक्ता उक्त बातों से बच सकती है । केशा भानन्द होता है जबकि हमसोम पूर्व ऋषियों के रचोद्भवे ग्रन्थों के अभिप्राय को पूर्ण रूपसे जान जाते हैं आज कल के सिर्फ अंगरेजी दूके हुए नवजवानों को अभिप्राय तो सूझ पड़ता नहीं कीट पतलून को भ्रम में भ्रष्ट कष्ट दिते हैं कि हमारे पूर्व ऋषिलोग तो बेवकूफ थे ॥

दर्भं संस्तर शायिनीं करतल शरावणार्ण न्यतम

भोजनीं हविष्यं अरहञ्च भर्तुः संरक्षेत् ।

ततः शुद्धस्नानार्ता चतुर्थेऽह्न्यहतवाससमलंकृतां ॥

कृत मङ्गल स्वस्ति वाचनां भर्तारंदर्शयेत् ॥

भावायः—कुशे की चटाई पर सोवे, हाथ में या पंख में रखकर खीर भोजन करे और तीन दिन पति से बची रहे, चौथे दिन स्नानकर मलिन वस्त्र त्याग सुन्दर चम्बर तथा आभूषण धारण कर कल्याणकारक वेदमन्त्र पढ़ के पतिका दर्शन करे । पतिही का क्यों दर्शन करे इसमें क्या हेतु है ।

पूर्वं पश्ये हतु स्नाता यादृशं नरं मङ्गना ।

तादृशं जनयेत् पुत्रं भर्तारं दर्शये दत्तः ॥

ऋतुस्नाता अर्थात् मासिक गर्भा से शुद्ध होके जिस रूप रङ्ग के पुरुष या स्त्री को देखिगी तादृश रूप पुत्र अथवा कन्या को उत्पन्न करेगी इस कारण भर्ता ही को देखना उचित है ।

प्रथम हम दिखला चुके हैं कि ऋतुस्नाता मारो "भर्तारं दर्शयेत्" यह बात बहुत सत्य और परीक्षित है कि सम्भवतो अपनी इच्छानुसार और या श्याम सुन्दर रूप होलभुत भोभायमान सन्तान उत्पत्ति कर सकती है, यह कीर्ति कल्पना वा स्वप्न नहीं है किन्तु पूर्ण सत्य यथार्थ है कि उत्तम संतान करने का मुख्य हेतु यथोक्त बधू वर के आचार तथा आचार पर निर्भर है । भाग्य के भरोसे जो और अज्ञान मित्रा में पड़े हैं वे तो अवश्यही इसे मिथ्या कल्पित कहानियाँ जानेंगे । जो २ विद्यायें मनुष्यको माता और मनसे सम्बन्ध रखती हैं यद्यपि इसका अङ्कुर यही भारतवर्ष है परन्तु आज योरूप आमेरिका आदि अन्य हीरो के विद्वान और तत्त्वदर्शियों के शिर और हारहा है वे भी इसी बातको मानते हैं कि सन्तान का स्वस्वपवान् बलवान् बुद्धिमान और तेजवान् होना माता के आधीन है प्रायः देखा भी गया है कि माता पिता गौराङ्ग और स्वस्वप वाले हैं परन्तु लड़के बदर्शक और कालेङ्ग हैं । अत्यन्त बाध्या-वस्था में गर्भाधान करने के कारण बालक गर्मही में बिगड़ जाते हैं वा उत्पन्न हुये और मरगये अथवा गर्भाधानही नहीं होता उस अवस्था में पुरुष अपने वीर्य (यह प्रकर्ण आगे लिखेंगे) और स्त्री रजको शुद्ध करे । स्त्री जब देखे कि रजस्रला होने के समय में १२ । १३ दिन शेष रहे तो दोनों समय सिर्फ खीर भोजन करे और ऋतु समय में आस्त्रोक्त रीति (आगे कहेंगे) से गर्भाधारण किया करे तो अवश्य उत्तम सन्तान होवे, यदि इस प्रकार करने से भी दो तीन ऋतुकाळ व्यर्थ जाय अर्थात् गर्भाधान क्रिया निष्फल होयाने गर्भास्थिति न हो तो निम्नलिखित घृत की बनाकर स्त्री पुरुष दोनों सेवन करें और मध्य

मांसादि तमोगुण भोजन तथा ऋतुकाल से अतिरिक्त मैथुनादि कुत्सितविहार त्याग करे, जिस प्रकार योगी अपने तन मन और घन को योगाभ्यास में लगा देते हैं, मुक्ति के प्रार्थी शरीर को भी विष्णुमें अर्पण कर देते हैं, विद्यार्थी गण द्रव्योपार्जन तथा सम्पन्नता में प्रशंसा प्राप्तार्थ विद्याध्ययन में दत्त चित्त से कटिबद्ध होजाते हैं उसी प्रकार उत्तम सन्तान चाहने वाले भी सिद्ध बाबा आदि सुटेरों की आशा छोड़ घृत दुग्धादि पावल गृह आदि जिससे अंतःकरण की शुद्धि वल पुरुषार्थ आरोप्यता और बुद्धि प्राप्त होती है भोजन करे, ब्रह्मचर्य से रहे और यथाचित काल में अपने स्त्री का समागम करे। जैसे अन्य २ पदार्थों को उत्कृष्ट करने की विद्या है वैसेही संतानको उत्पत्ति करने की यही वैद्यक विद्या है चाहे कि इस पर लोग अधिक ध्यान देवे क्योंकि इसके न होने से भारत की उन्नति होना सम्भवा असम्भव है ॥

घृत ।

आमा हल्ली ४ तोला हल्ली, श्वेत चन्दन, मुरा, कूट, जटामासी, मोरवेल (यह नाम दक्षिण में प्रसिद्ध है) शुद्ध मिलोजीत कपूर मोथा यह सब दो २ तोला से कूट कपरछान कर ठाई सेर गी के दूध में मिलाय एक गूलरके काष्ठ पुष्प में दही जमादेय और प्रातःकाल गूलर की को मथानी से मथ करके उसमें से मक्खन निकाल उसकी ताय करके उसमें केसर, जायफल, छोटी लायची दो २ मासा करतूरी ४ रत्ती मिला के नित्य प्रातःकाल दो २ तोले के अण्डोल से दोनों जने खोर चयवा भीठे भात के साथ मिला के यथासुचि भोजन करे, इत्यादि और भी कामदेव घृत वृद्धफलादि संतानोत्पादक घृत लिखे हैं किसी श्रेष्ठमित्रकुवर से स्वप्रकृत्यानुसार बनवाकर सेवन करें। स्वामी हयानन्द भी अपने संस्कारविधिमें उक्त घृत लिखा है और यह कहा कि यदि उक्त घृत सेवन से भी दो काल व्यर्थ जाय तो तीसरे महीने में ऋतु समय जब आवे तब पुष्प नक्षत्र युत ऋतुकाल दिवस में जिस दिन गर्भाधान करना हो (पुष्प नक्षत्र रहे) प्रथम प्रातःकाल उपस्थित होवे प्रथम प्रसूता (विधवा) गी का दही दो मासा और यव के दानों को सेक के पीस दो मासा ले दोनों को एकत्र करके पत्ती के हाथ में दिके उससे पति पूछे "किम्पिबसि" इस प्रकार तीन बार पूछे और स्त्री भी अपने पति को "पुंश्वनम्" इस वाक्य को तीन बार बोल के उत्तर दिये और यव युक्त दही को पीजाय, इसी रीति से पुनः २

१ बार विधि करना तत्पश्चात् मूलाङ्गुली वा श्वेत फलकी भंडकटाई (कण्टकारि) पौष को जल में महीन पीस के उसका रस कपड़े में छान के पति (पुरुष) पत्नी के दाहिने नाक के छिद्र में मिश्रन करके और पति निम्न लिखित मन्त्र से जगन्नि यंता परमात्मा की प्रार्थना करके यथोक्त (पूर्वोक्त लेखानुसार उत्तम चाभूषणादि धारण कर प्रसन्नचित्त हो) ऋतुदान करे यह सूत्रकार का मत है ॥

ओम् यमोपधौ त्रायमाणा सहमाना सरस्वती ।

अद्या अहंष्टहत्याः पुत्रः पितुरिव नामजगभम् ॥

सुश्रुतकारका भी मत है “लब्धगर्भायाश्चैतेष्वहःसुलक्षणा वटशुद्धा सहदेवा विश्वदेवाना मन्वतमंघीरेणाभिपुत्र्यन्ती चतुरो वा विन्दून् दद्याद्दक्षिणे नासापटे पुत्रकामायै न वामे कन्यावेत्”

पूर्वोक्त प्रकार सुलक्षणा वटशुद्ध (वरगद्ग के वृक्ष का सुगन्ध) सहदेवा विश्वदेवा (वृटी है) और भी जितने समान गुणकर दुधार वृक्ष हैं चाय से ख़तुर कर उसका दूध तीन या चार बिंदु दक्षिण नासा में दे खीं चलाय और यूँके न “पुत्रकामायै” कहने का मुख्य प्रयोजन यह है कि उक्त वट दुग्धादि दक्षिण नासा पुट में देने से पुत्र और वामगाया पुट में देने से कन्या उत्पन्न होगी, बाभट्ट में भी लिखा है कि लक्षणा वृटी वा वट जटा प्रथम व्याई गौ के दुग्ध में घोंट खीं ऋतुकाश में तीन बार वृन्द वामगाया से चढ़ाय जाय तो नियय कन्या उत्पन्न होगी और भी अनेक उपाय सन्तानोत्पादक की हैं जिन्हें चांगी कहेंगी ।

स्त्री सामाजिक रीतिसे प्रति मास ऋतुकाश रजस्वला होती है जिसदिन रजोवर्धन होता है उस दिन से १६ दिन तक प्रसङ्ग करने की अवधि है उसी को समय और ऋतुकाश भी कहते हैं इसके बाद गर्भ नहीं रहता, इसके जाननेवाले चतुर व्यभिचारी पुरुष तथा व्यभिचारिणी स्त्रियाँ जो शुभ रूपसे एक प्रकार का समन्वय रखते हैं वे अवश्य १६ दिन त्याग के प्रसंग करते हैं कारण यह कि गर्भाधान होने का मय नहीं रहता है ।

प्रायः पञ्चान विधवायें जो अपने पातिव्रत पति तथा पिछायाख से अनभिज्ञ हैं वे कामबाण से व्यथित हो श्रीमन्मही परपुरुषमें रत होजाती हैं फिर क्या खानमैयुन के समान क्षणमात्र की आनन्द अन्तिम दुःख की सीमा नहीं

(लोमों पर विदित है कि आज कल ज़फ़ारों गर्भापात होता है संस्य मयही के जन्मतुष्टे बालक दरिया, सण्डास और गर्दोंमें फेंके जातेहैं) उन घबलाओं को यह बात अवश्य याद रखना चाहिये कि उक्त १६ रात्रियों के बाद दिन रात आनन्द में मग्न रहने से भी गर्भाधान नहीं रहता ॥ उपरोक्त १६ रात्रियों में प्रथम की तीन रात्रियों में कदापि प्रसङ्ग न करना चाहिये क्योंकि उन तीन रात्रियों में स्त्री के शरीर में से एक प्रकार मलौन स्थिर निकलता है जो कोई इन रात्रियों में प्रसङ्ग करते हैं उनका बल बुद्धि तेज और चायु का नाश होजाता है तथा गर्भ स्थिति नहीं रहता क्योंकि—

“नचप्रवर्त्त मानेरक्ते वीजं प्रविष्टगुणकरन्भवति

यद्यानया प्रतिस्रोतः पुषिद्रव्यं प्रक्षिप्तं प्रतिनव

वर्त्तते नोर्ध्वङ्गच्छति तद्रूदेवद्रष्टव्यं”

बहते ज़रूर रक्त में प्रसङ्गद्वारा प्रविष्ट वीर्य गुणकर नहीं होता अर्थात् खून के साथ वीर्य भी बह जाता है जैसे बहते जल में कोई उतरानेवाली वस्तु के फिकने से तत् स्थानमें ठहर नहीं सकती। रात्रिगणना इसलिये है कि दिन में ऋतुदान का निषेध है।

श्री स्वामी दयानन्द जी ने संस्कार विधि में गर्भाधान के प्रकरण में और चिन्मनलाल मु० त० तिखड़र ग्राहजहाँ पुर निवासी ने एक छोटी सी पुस्तक गर्भाधान विधि की बनाई है उसमें लिखा है कि रजोदर्शन से ४ रात्रि तक प्रसङ्ग निषेध है, खैर स्वामीजी ने तो मनु का प्रमाण दिया है भला उक्त सुदर्शिस जो प्रथम चार रात्रियों का निषेध किस स्त्र में देखा है यह भी क्या भूगोल का पढ़ाना है वैद्यक सम्बन्धी व्यवस्था जो बिना तत्विषयक शास्त्र ज्वलोकन के करता है उसे ग्रहणचनन का पाप होता है। वाग्भट्टादि सिद्धान्त आयुर्वेदीय ग्रन्थों में चतुर्थ दिवस का निषेध कहीं नहीं लिखा है बल्कि चौथे दिन गर्भाधान का विधान लिखा है यथा सश्रुते।

तीन रात्रि त्याग कर चतुर्थ रात्रि में गर्भाधान करने से सम्पूर्ण अंग युक्त दीर्घायु मन्तान होती है, अन्यथा।

इसलिये ऋतुवती तीन रात्रि पति का संग त्याग करै, अन्यथा।

“विकल्पेवञ्चतुर्थ्यां षष्ठ्यामष्टम्यां दशम्यां द्वादश्याचोपे

यादिति पुत्रकामः”

पुत्र उत्पन्न करनेवाले चौथी, छठवीं, दसवीं और बारहवीं रात्रि में गर्भाधान करें ।

**“अतः परं पञ्चम्यां सप्तम्यां नवम्यामेकादश्याञ्च स्त्रीकामः,
त्रयोदशी प्रभृतयो निन्द्याः”**

कन्या की इच्छा करनेवाले पांचवीं, सातवीं, नवीं, ग्यारहवीं रात्रि में प्रसन्न करें, तेरहवीं रात्रि से सोलहवीं अर्थात् अंत की चार रात्रि निषिद्ध है ।

पहिले कह चुके हैं कि स्त्रियों का मासिक तीन ही दिन रहता है चौथे दिन से गर्भाधान की रात्रि होती है और सम रात्रियों में पुत्र तथा विषम रात्रियों में गर्भाधान रहने से कन्या होती है किसी २ का मत है कि गर्भाधान के समय में यदि स्त्री रजसाधिक्य वाली हुई तो कन्या होगी शुक्ल अधिक हुआ तो पुत्र होगा जो रक्त और शुक्ल समान हुये तो नपुंसक लड़का पैदा होगा । गीरखपुर से एक महाशय लिखते हैं कि गर्भाधान में लिखा है कि ४ दिन धर्मवती स्त्री को त्याग करे और आप आरोग्य दर्पण में चौथे दिन गर्भाधान की विधि देते हैं और आज कल प्रायः ऐसा दिखने में भी आता है कि ४ ५ दिन अथवा किसी २ का तो आठ २ दस २ दिन तक रक्त बन्द नहीं होता तो उस अवस्था में किस तरह प्रसंग मनुष्य कर सकता है क्योंकि गर्भ रक्त नहीं सकता तो प्रसंग करना व्यर्थ है । दूसरे ज्योतिष शास्त्र में लिखा है कि अमृत २ शुभ दिन नक्षत्र आवे तब गर्भाधान करे यदि उत्तम मुहूर्त न मिले और गर्भाधान का समय प्राप्त है तो इसमें क्या करना योग्य है ।

कृपा कर इसका उत्तर अवश्य दीजिये ?

(उत्तर)—प्रकृष्टावस्था और जिसका जैसा बल है उससे अधिक अथवा कम रक्त जाना और तीन दिन से अधिक दिन तक रक्तयाव बना रहना रोग समझा जाता है । रक्त दर्शनमात्र दिखलाई दे या घेठ में अधिक दर्द होकर एक रक्त का गांठ गिर पड़े या सिर्फ एक ही दो दिन रक्तयाव होकर बन्द हो जाय अथवा मास से और दो चार दिन बढ़कर धर्म हो तो जानना चाहिये कि रक्त क्षीणता से रक्त सूख गया है उसका उपाय यह है कि अनार दूत्यादि रक्तोत्पादक द्रव्य खिलाकर रक्त को वृद्धि करे और तीन दिनों के ऊपर कई दिन तक रक्तयाव होना तथा पांच चार दिन मास पूर्ति को रक्त जाय

तभी रक्तथाव होजाना रक्त की जथाता जानना चाहिये, जब तीन दिन से अधिक दिनतक रक्तथाव होते देखे तो शीघ्र ही चोपध द्वारा उसको बन्द करने की चेष्टा करे। जितनी चोपधियाँ रक्तप्रदर की हैं वे सब संस्रवस्था में काम-देसती हैं। ज्योतिष शास्त्र में सिर्फ गणितमात्रमाननीय है प.युर्वेद वित् चिकित्सिकगण आवश्यक कार्यमें मुहूर्तादि फलित ज्योतिषकी नहीं मानते।

दत्तात्रयो आदि कई ग्रन्थों में वंध्या की कफित्वा तथा निदान इस प्रकार से लिखे हैं कि एक समय पार्वती जी ने शिव जी से प्रश्न किया कि महाराज बाण स्त्रियों के गर्भ ही नहीं रहता सो क्या कारण है। शिव जी बोले कि स्त्री लोग छः दोषों से वंध्या होती हैं उनमें भी कोई स्त्रियोंको तो जन्मावधि संतान नहीं होता अर्थात् जन्मबंध्या होती है, किसीके होते हैं और मर जाते हैं उसे मृतबंध्या कहते हैं, किसीके सिर्फ एक संतान होकर बन्द होजाता है उसे काकबंध्या कहते हैं, सक्त बंध्याये निम्नलिखित ६ दोषों से होती हैं प्रथम फूल (गर्भाशय) के मध्य में वायु भरजाती है। २ फूल के ऊपर मांस बृक्ष होजाता है। ३ फूल में कृमि होजाते हैं। ४ फूल वायुवेगसे शीतल होजाता है। ५ पुष्प दग्ध होजाने से। ६ पुष्प छलट जाता है, केचित् भूतदोष और ७वाँ अष्टम कर्मदोष मानते हैं। फूल में दोष प्राप्त होने का मुख्य कारण बालविवाह है। स्त्री पुरुष में परस्पर अप्रीति और असमय मैथुन है। हिाटी स्त्रीको जो बड़ा पुरुष मैथुन करता है तो भी फूल जल जाता है। लक्षण-मासिकधर्म के बाद जब पुरुष रति करचुके तो पूछे कि तुम्हारा कौन पद्म दृष्टता है जो स्त्री घे कहे कि शरीर कांपता है तो जानना कि फूलमें वायु है, कटिमें दर्दकहे तो मांसवृद्धि जानना, पित्तुरियों में दर्द बतलावे तो फूल में कृमि जानना। छाती में दर्दकहे तो शीतल मांस व्याध में फूल दग्ध और जाँघोंमें दर्दहोना कहे तो जानना कि फूल छलट गया है। यदि कहीं दर्द न हो तो जानना कि पूर्वजन्म का दोष है।

जब देखे कि स्त्री के गर्भाशय का फूल जल गया है तो समुद्रफल, सेधा नीन और किष्किमात्र लहसुन तीनों को महीन पीस रुई के फाड़ा में करके भग में रख दे अगर जलन-मालुम हो तो निकाल डाले इसी तरह तीन दिन करे सोये दिन स्नान करके पति का सङ्ग करे निश्चय है कि गर्भाधान अवश्य होगा। फूल में हवा भर गया हो तो हींगकी काले तिल के तेलमें पीस रुई

में तर कर भग में तीन दिन रखने से होय नाश होता है । यदि फूल में मांस बढ़गया हो तो काखा जीरा, छाथी का नाखून और रेंडी का तेल तीनों को महीन पीस रुई में तर कर भग में रखे तीन दिन पर्यन्त चौथे दिन पुरुष का सङ्ग करे । ३ फूल में कौड़ा लगा हो तो चड़, बहेरा, कायफल तीनों को सा-
दुन के पानी में महीन पीस रुई के फाहा में तर कर भग में रखे तो कृमिनाश हो गर्भ रहे । ४ फूल भीतल होगया हो तो बघ, स्याह जीरा, अमगन्ध तीनों को चौकिया सुहागा के पानी में पीस फाहा तर कर तीन दिन पर्यन्त भगमें रखने से आराम होता है । ५ यदि गर्भाशय छलट गया हो तो कस्तूरी और केसर दोनों को पानी में पीस गीली बनाय भग में राखि । चतुर्थ दिन स्नान पति का सङ्ग करे आशा है कि आधान रहेगा ॥ ६

एक महाशय चकारी बाग से पत्रद्वारा निम्नलिखित बातें पूछा है उसेभी इसी स्थल में पाठकगणों के अवलोकनाय प्रकाश करते हैं वह यह हैं १३ रात्रि से १६ अन्त की रात्रि क्यों निषिद्ध है यदि इन रात्रियों में आधान हो-
जाय तो उसका क्या फल होगा । दूसरा अगर आधान के प्रारम्भ ही से स्त्री हो मास पर्यन्त रोगात्त रहै तो उसकी पिकित्ता होनेसे बालक को कुछ हानि होता है या नहीं (उत्तर) मासिकधर्म के स्थानान्तर स्त्रियों के गर्भाशय (पुष्प) का मुख खुल जाता है और प्रायः ओष्ठय रात्रि पर्यन्त खुला रहता है तत्प-
श्चात् रक्त का मेल उसमें पुनः संश्लिष्ट होना आरम्भ होता है इस कारणसे उस अवस्था में आधान नहीं रहता यदि किसी कारण वशात् रह भी गया तो निर्वल सन्तान होनेका तथा गर्भ गिरजानेका भी सम्भव है । एक बात परीक्षा से यह भी देखा गया है कि जिस स्त्री का मन पति से रुष्ट अथवा क्रोधित रहता है जब तक मन प्रसन्न न करेगी आधान न रहिगा और जिस स्त्री का मन परपुरुष पर लगा रहता है उसे भी निज पतिसङ्ग से प्रायः आधान नहीं रहता जब उस परम प्यारे का संग होगा औघ्र ही आधान रह जायगा । या पुरुष स्वयं गर्भाधान के दिनों को किसी कारण से त्याग कर अथवा विदेश से आया हो और ऋतुवती का दिन भी गत होगया हो तो भी गर्भाधान हो-
सक्ता है । आधान रहने का दिन भी नियत तभी होगा जब सिर्फ मासमें एक ही बार प्रसङ्ग करेगा । गर्भिणी स्त्री यदि किसी रोग में ग्रसित हो और उ-
सका यत्न न कियाजाय तो उसी रोग से गर्भ में बालक दुःख पाकर मरजाता

तभी रक्तयाव होजाना रक्त की जणता जानना चाहिये, जब तीन दिन में अधिक दिनतक रक्तयाव होते देखे तो शीघ्र ही शीघ्र ही उसको बन्द करने की चेष्टा करे। जिसनी शीघ्रिया रक्तप्रदर की है वे सब उस शयस्या में काम-देसती हैं। ज्योतिष शास्त्र में सिर्फ गणितमात्रमाननीय है य. युर्विद वित् चिकित्सिकरण आवश्यक कार्यमें मुहूर्तादि फलित शंगकी नहीं मानते।

दत्तात्रयो आदि कई ग्रन्थों में वंध्या की किकित्सा तथा निदान इस प्रकार से लिखे हैं कि एक समय पावतो जी ने शिव जी से प्रश्न किया कि महाराज बाण विषयों के गर्भ ही नहीं रहता सो क्या कारण है। शिव जी बोले कि इसी लोग छः दोषों से वंध्या होती है उनमें भी कोई स्थियोंको तो जन्मावधि संतान नहीं होता अर्थात् जन्मबंध्या होती है, किसीके होते हैं और मर जाते हैं उसे मृतबंध्या कहते हैं, किसीके सिर्फ एक संतान होकर बन्द होजाता है उसे काकबंध्या कहते हैं, उक्त वंध्याये निम्नलिखित ६ दोषों से होती है प्रथम फूल (गर्भाशय) के मध्य में वायु भरजाती है। २ फूल के ऊपर मांस बृद्ध होजाता है। ३ फूल में कृमि होजाते हैं। ४ फूल वायुवेगसे शीतल होजाता है। ५ पुष्प दग्ध होजाने से। ६ पुष्प छलट जाता है, केचित् भूतरोध और ७ वां अष्टम कर्मदोष मानते हैं। फूल में दोष प्राप्त होने का मुख्य कारण बाणवि-वाह है। स्त्री पुरुष में परस्पर अप्रीति और असमय मैथुन है। हाटी स्त्रीको जो बड़ा पुरुष मैथुन करता है तो भी फूल जल जाता है। खच्चण-मासिकधर्म के बाद जब पुरुष रति करचुके तो पूछे कि तुम्हारा कौन पद्म दृष्टता है जो स्त्री ने कहे कि शरीर कांपता है तो जानना कि फूलमें वायु है, कटिमें दर्दकहे तो मांसवृद्धि जानना, पित्तुरियों में दर्द बतलावे तो फूल में कृमि जानना। छाती में दर्द कहे तो शीतल माय व्याप में फूल दग्ध और जांघोंमें दर्दहोना कहे तो जानना कि फूल छलट गया है। यदि कहीं दर्द न हो तो जानना कि पूर्वजन्म का दोष है।

जब देखे कि स्त्री के गर्भाशय का फूल जल गया है तो समुद्रफल, सेधा नीन और किष्किमात्र खहसुन तीनों को महीन पीस रुई के फाड़ा में करके भग में रक्ष दि अगर जलन-मालुम हो तो निकाल डाले इसी तरह तीन दिन करे सोये दिन स्नान करके पति का सङ्ग करे निश्चय है कि गर्भाधान अवश्य होगा। फूल में हवा भर गया हो तो, हींगको काले तिल के तेलमें पीस रुई

में तर कर भग में तीन दिन रखने से दोष नाश होता है । यदि फूल में मांस बढ़ गया हो तो काखा जीरा, हाथी का नाखून और रेंडो का तेल तीनों को महीन पीस रुई में तर कर भग में रखे तीन दिन पर्यन्त चौथे दिन पुरुष का सङ्ग करे । ३ फूल में कौड़ा लगा हो तो चड़, बहेरा, कायफल तीनों को सा-वुन के पानी में महीन पीस रुई के फाहा में तर कर भग में रखे तो कृमिनाश हो गमं रहे । ४ फूल घोटल होगया हो तो बच, स्याह जीरा, असगन्ध तीनों को चौकिया सहागा के पानी में पीस फाहा तर कर तीन दिन पर्यन्त भग में रखने से आराम होता है । ५ यदि गर्भाशय छलट गया हो तो कस्तूरी और केसर हीनों को पानी में पीस गीली बनाय भग में रखे । चतुर्थ दिन स्नान पति का सङ्ग करे आशा है कि आधान रहेगा ॥ ६

एक महाशय चफ़ारी बाग से पत्रद्वारा निम्नलिखित बातें पूछा है उसे भी इसी स्थल में पाठक गणों के अवलोकनाय प्रकाश करते हैं वच यच हैं ११ रात्रि से १६ अन्त की रात्रि क्यों निद्रिष है यदि इन रात्रियों में आधान हो-जाय तो उसका क्या फल होगा । दूसरा अगर आधान के प्रारम्भ ही से स्त्री हो मास पर्यन्त रोगात्त रहे तो उसकी पिकित्ता होनेसे बालक को कुछ क्षेप होता है या नहीं (उत्तर) मासिकधर्म के खानाम्तर स्त्रियों के गर्भाशय (पुष्प) का मुख खुल जाता है और प्रायः थोड़ा रात्रि पर्यन्त खुला रहता है तत्प-श्चात् रक्त का मेल उसमें पुनः संचित होना प्रारम्भ होता है इस कारणसे उस अवस्था में आधान नहीं रहता यदि किसी कारण वशात् रह भी गया तो निर्बल सन्तान देनेका तथा गर्भ गिर जानेका भी सम्भव है । एक बात परीक्षा से यच भी देखा गया है कि जिस स्त्री का मन पति से रुष्ट अथवा क्रोधित रहता है जब तक मन प्रसन्न न करेगी आधान न रहेगा और जिस स्त्री का मन परपुरुष पर लगा रहता है उसे भी निज पतिसङ्ग से प्राय आधान नहीं रहता जब उस परम प्यारे का संग होगा शीघ्र ही आधान रह जायगा । या पुत्र स्वयं गर्भाधान के दिनों को किसी कारण से त्याग कर पथवा विदेश से आया हो और ऋतुवती का दिन भी गत होगया हो तो भी गर्भाधान हो-सक्ता है । आधान रहने का दिन भी नियत तभी होगा जब सिर्फ मासमें एक ही बार प्रसङ्ग करेगा । गर्भिणी स्त्री यदि किसी रोग में ग्रसित हो और उ-सका यत्र न किया जाय तो उसी रोग से गर्भ में बालक दुःख पाकर मरजाता

है, अथवा तत्परोक्ष प्रसिद्ध उत्पन्न होगा इसलिये बीमार गर्मिणी स्त्री की चिकित्सा सत् वेद्य द्वारा अवश्य करावे । गर्मिस्थित होने न होने के अनेकानेक कारण हैं फिर भी कभी प्रकाश करेंगे । चारोम्बदपण के प्रथम पक्ष से जो प्रातःसूक्ष्माणाधारस्य शयनाति पर्यन्त यावत्कर्म से क्रमशः प्रकाश कर स्त्रीप्रसंग के प्रकरण में ऋतुदान की भी व्यवस्था अपनी स्वल्प बुद्धानुसार साधारणतौर पर गाथ गये, विश्वभर पाठक गण को यदि किसी स्थल में कुछ भ्रमदायक अथवा अशुद्ध देख पड़े तो कृपाकर स्वयं शुद्ध करलेंगे और हमें पत्रद्वारा सूचित करें ताकि प्रकाशित होनेवाले पक्षों में छप जाया करे ।

आगे हम में कुछ स्त्री प्रसङ्ग के विषय में लिख चुके हैं फिर भी उची विषय को उठाते हैं पाठक गण उसे फाल्गुण मास का प्रसुषा ज्ञान हँसे न उसके तात्पर्य को समझें कि सम्पादक क्या कहता है । आज कल देखा जाता है कि भारत के तीन भाग मनुष्य पर स्त्री गमनादि में रत हैं । इसमें शक नहीं है कि स्त्रीप्रसङ्ग में चर्चा सुख है परन्तु क्षणमात्र के लिये पुनः अधिकांश आयु ऐसे दुःख से काटना पड़ता है कि जिसकी सीमा नहीं, मेरी यह राय नहीं है कि अपनी स्त्री से भी गमन न करे, मेरा तात्पर्य वैशा आदि गमन पर है । क्योंकि आज कल ऐसे ही मनुष्यों की संख्या अधिकतर है । उनमें भी कई भाँति के लोग हैं जैसे किसी का चित्त किसी गृहस्थ स्त्री के प्रेम में फँसा है और उचीके पीछे लोकलज्जा त्याग पागल बना फिरता है इस कोटि में मुसाद बेरागी और महंत आदि भी ब्रह्मत हैं और इन्हीं लोगों के कारण से वछे २ आदिमियों के घर के कामकाज करनेवाली चाकरनियाँ कुटनी बन गई हैं । यह कोई असत्य बात नहीं है जिनका चित्त गृहस्थियों में अटकता है वे उसके मिथने के लिये अनेक तोड़फोड़ के उपाय रचते हैं । दूसरे वैश्यागामी इनमें केवल मूर्ख ही नहीं हैं बल्कि अधिकांश ऐसे पढ़े लिखे मनुष्य इस दुष्कर्म में लीन देख पड़ते हैं कि जिनपर अनाथ भारत की उन्नति निर्भर है लेकिन जब वे ही सारहीन होते जाते हैं तो भारत की उन्नति होचुकी । तीसरे मुदामैयुन करनेवाले इस कोटिमें सुखलमान और रामफटाका वाले अधिक हैं ।

अपनी स्त्री से भोग करने से जो चर्चा होती है उससे सतोगुण अधिक चर्चा पर स्त्री गमन करने से होती है कारण यह है कि जब पर स्त्री गमन करने की इच्छा होती है तो उसके साथही काम इतना प्रबल हो उपस्थित

होता है कि जिस कदर स्त्रीगमन में वीर्य पात होता है उससे कई अंश अधिक शुक्र पर स्त्री संग में निर्गत होजाता है । धातु निकल जाने का यह बहुत ठीक कारण है कि जैसी इच्छाकी प्रबलता होती है उसीके अनुसार वीर्य भी खर्च होजाता है । (प्रश्न) पर स्त्री के साथ शौचही कामोत्तेजित और अधिक वीर्यपात क्यों होता है ? (उत्तर) अपनी स्त्री नित्यः समीप रहने से वीर्य प्रबल इच्छा नहीं होती जैसी पर स्त्री से होती है । इसका कारण यही जान पड़ता है कि नित्यः चित्त लगे रहने से और दूरसे कभी कभी चक्षुद्वारा दृष्टि संग करने से निरन्तर कामाग्नि सुखी करती है वस प्रकृतात् प्राप्त होजाने पर शौचही प्रति कामोत्तेजित हो अधिक वीर्य निकल जाता है । (प्र०) किसी २ को पर स्त्री प्राप्त होने पर भी कामोत्तेज नहीं होता क्यों ? (उ०) उसका कारण यह है और बड़तेरों को यह होता है कि स्पर्श करते ही कपड़े में शुक्र निर्गत होजाता है । इत्यादि कारणों से प्रतीर को बड़ा ही अपकार होता है इस स्थिति पूर्णविस्था में प्रवृत्ततापूर्वक विवाह कर उसीसे आनन्द करना चाहिये । (प्र०) यह सब बातें स्त्रीय स्त्री में क्यों नहीं होती ? (उ०) उसका कारण यह है कि अनायास की किसी हुई वस्तु पर कोई अधिक चिन्ता नहीं करता क्योंकि वह तो मन की चलायमान होतीही मिल सकती है । दूसरे पर स्त्री के प्रेम में अनेक प्रकार के शोक चिन्ता भी उत्पन्न होती है क्योंकि जिसके पानेमें कष्ट है अर्थात् जो वस्तु शौच नहीं मिलसकती है उसके विषय में स्वभावता अधिक चिन्ता उपस्थित होती है यहाँ तक कि उसी फिक्क और गममें कितनों का अन्त जल छुटजाता है कितने लोकलज्जा कुटुम्ब का मोह छोड़ देय देशान्तरों को भग जाते हैं अनेकानेक यातना भोग करते हैं इससे पर स्त्रीगमन में कुछभी सुख नहीं है । (प्र०) बाह्य आप क्या कहते हैं पर स्त्री में जो सुख है उस सुख का हाल वही जानसक्ता है जो एक बार भी अपनी रम्य सरोवर प्राणधारी के प्रेमरूपी भँवर में चक्र खाया है "वन्दर क्या जाने अहरह का स्वाद" मला कन्दर्पविद्याहीन पुरुष इस सुख को जान सके हैं कभी नहीं ? (उ०) इस बातको हम भी मानते हैं कि सुख अवश्य मिलता है परन्तु यह सुख सग लोगो के अमसे जान पड़ता है नहीं तो वास्तवमें दुःखके प्रतिरिक्त सुखका लेशमात्र भी नहीं है क्योंकि पर स्त्री गमन करने में पहिले तो यह भय लगा रहता है कि क्या देख न

ले अथवा कोई सुन न ले इत्यादि इन्हीं चिन्ताओं से शरीर दग्ध होजाता है तो फिर जहाँ ऐसी चिन्तायें वर्तमान हैं वृद्ध चणकालीन सुख क्योंकर सुख देसता है कभी नहीं क्या तुमने रावणादि पर स्त्रीगामियों का वृत्तान्त कभी नहीं सुना है तो चणकालीन सुख के लिये जन्मपथ्यन्त दुःखका भोगना मूर्खी का काम है । इस लिये बुद्धिमान लोग पर स्त्री को "मातृवत्पारदारं पु" माता कहा है । (प्र०) अच्छा वेष्ट्यागमन में तो दोष नहीं है क्योंकि न तो वह किसी को स्त्री है और न उसमें किसी प्रकार का मय तथा चिन्ता होती है किन्तु रूपके का खर्च है ? (उ०) वेष्ट्यागमन में उससे भी अधिकांश वीर्य का नाश है क्योंकि शुक्राश्रयमें विषयसमय शुक्र सदा प्रस्तुत नहीं रहता, जिस समय मन में काम विषयकी चिन्ता उपस्थित होती है स्त्री को स्वयं अथवा पालिङ्गन का उद्योग कियाजाता है उसी समय वीर्याश्रय में धातु का चाना प्रारम्भ हो जाता है अर्थात् जिसके साथ जिसका मन जितना ही अधिक चलायमान होता है उतना ही शीघ्रता से शुक्र प्रस्तुत होकर निर्गत होता है तो पर स्त्री वा वेष्ट्यागमन से मन में जैसी भारी चञ्चलता उपस्थित होती है वैसी हर समय की मिलनेवाली अपनो स्त्री प्रति उद्योग करने से भी वैसी चञ्चलता कदापि नहीं होती है तो वर यही जान लीजिये कि जिसके ऊपर मन अधिक दो-लता है उसीके साथ अधिक परिमाण शुक्र भी निर्गत होता है और अधिक वीर्य के निकलने से शरीर और मन भी अधिकतर निर्वल एवं निस्तेज हो जाता है । दूसरे वेष्ट्यागमन से उपदंश (गरमी) और मूत्राघात (सजाक) वद (वाघी) भगन्दर आदि रोग उत्पन्न होते हैं जिसमें दुःख से अतिरिक्त लोकनिन्दा भी होती है । जैसे एक बड़े आदमी के पुत्र के गरमी निकली किसी वैद्य ने पारद संघटित औषध खिलादिया कि जिससे उसका मुंह आ गया उससे थूका न आया तो उसने अपने बाप से कहा कि बाप थूका नहीं जाता है उसके पिता ने उत्तर दिया कि बेटा तुमको जहान थूकता है एक तुमसे न थूका गया तो क्या झूठा । तो देखिये वेष्ट्यागमन से घन शरीर लोक-लज्जा सबका नाश होजाता है । वेष्ट्यागमन के विषय में मृच्छकटिक नाटक में यह बड़ा ब ठीक लिखा है ॥

इह सर्व्वस्व फलिनः कुल पुत्र महादुमाः ।

निष्फलत्वमलं यान्ति वेश्या विहग भक्षिताः ॥

अयं हि सुरत ज्वालः कामाग्निः प्रणयेन्धनः ।

नराणां यत्र ह्रयते यौवनानि धनानि च ॥

अर्थात् कुलवालों के पुत्ररूपी बड़े लड़के जो सब प्रकार से फल फूल सत्ते हैं वह वैश्यारूपी पत्तियों करके भक्षण किये झड़े निष्फल हो जाते हैं यह कामरूपी अग्नि जिससे सुरत अर्थात् स्त्री सङ्गरूपी ज्वाला उठती है और वह प्रीतिरूपी लकड़ी से जलती है ऐसी अग्नि में मनुष्यों का रूप तथा धन खाया हो जाता है । किसी कवि ने कहा है ।

सोरठा-यह तन हरियर खेत, तरुणो हरियो चरि गई ।

अजहँ चेत अचेत, अधपेटचरा वषाय ले ॥

फिर जो मनुष्य वैश्यामें लगे रहते हैं उनको कामाग्नि तथा धनानि निरन्तर दग्ध करती है कारण यह है कि वह आज एक वैश्या पर आश्रित हैं और उसी की चिन्ता में लगे हैं फिर उसके मिलते ही न झई कि उससे भी बढ़कर खूबसूरती में एक दूसरी दृष्टि पड़ी, वह अब उसकी चिन्ता में लगे इसी प्रकार निरन्तर दृष्टि नहीं होती और यावत् यौवन इसी दुःख से काटते हैं इससे वैश्यागमन को विद्वानों ने निषेध ही किया है । एक वैश्यागामी राजा को एक पण्डित हमेशा निन्दा करते थे कि तुम वैश्या के पाप से इस लोक में दुःख भोगकर नरक में जाओगे । एक दिन राजा ने अपनी वैश्या से कहा कि आज रातको तुम पण्डित के घरमें जाओ और पण्डितके साथ किसी तरह रमण करो तो पण्डित फिर हमारी कभी निन्दा न करे । राजा की आज्ञा पाय वैश्या अपना शृङ्गार कर सब सजकर पण्डित की ओर गई और कहने लगी कि महाराज आज कृपाकर मेरे साथ गमन करिये । पण्डित जो ने वैश्या से कहा कि अच्छा तुम अपने शरीर के वस्त्रको उतार कर अलगधर कर नग्न हो जाय, वैश्या नग्न हो गई, पण्डित जो उसे नीचे से ऊपर तक निहार कर कहा कि जो २ वस्तु हमारी पण्डिताइन के हैं वही तुम्हारे में भी हैं उसे अधिक क्या तुम में है जो हम तुम्हारे साथ रमण करें तो यह मूर्खों का काम है जो अपनी स्त्री को त्याग वैश्या गमन करते हैं । वैश्या ने राजा से जाके यह सब वृत्तान्त सुनाया, राजा को ऐसी लज्जा आई कि वैश्यागमन करना छोड़ दिया यह बात बहुत सब और परीक्षित है कि वैश्यागमन में

मिवाय हथ्या वीर्य नष्ट करने के और कुछ भी गुण नहीं है क्योंकि पुरुष
 वेश्या को प्यार करते हैं और वेश्या रूप्य को प्यार करती है तो परस्पर प्रीति
 न ठहरी तो जहाँ परस्पर प्रीति नहीं वर्धा सुख कहाँ । अनेक पुरुषों के सङ्ग
 से वेश्या का कामानन्द नष्ट होजाता है सिर्फ मनके मोहने वाली ऊपरकी जो
 कुछ सफाई और बनावट है वही देख लीजिये जिन महाशयको इस बातका
 विश्वास नहीं किसी सत्य बोलने वाली वेश्या से कसम धरा के पूछो कि जैसे
 पुरुष को तुम्हारे साथ प्रसङ्ग करने से आनन्द होता है वैसाही तुमको भी होता
 है या नहीं तो वेश्या कहेगी कि चढ़ती जवानों में भायद चन्दरीज कभी २
 होजाता या भव तो सिर्फ रूप्य का आनन्द होता है प्रथम तो वेश्यागमन में
 परस्पर आनन्द नहीं, दूसरे जब वेश्या को बुलाते हैं अथवा उसीके घर जाते
 हैं तो रूप्ये वस्तुल करने तथा नित्यः अप्राप्ति जान चार पाँच बार प्रसङ्ग
 करते हैं, तीसरे जब घातु में ऊष्णता पङ्कष जानेके हेतु स्तम्भनप्रति जाती
 रहती है तो अफीम, चण्डू आदि नशा पीने लगते हैं जिसमें वीर्य और भू-
 जल भुग खाक होजाता है, चौथे जब पाँच रूपया न रहा तो घरकी वस्तु तथा
 औरत का गहना तक लेकर देघाते हैं, पाँचवें गरमी सूजाक से पीड़ित हो
 वेद्य, डाकरी के पाँच होड़ते हैं अन्त में आप भी नरक भोगते हैं और अपने
 कुटुम्ब को भी भोगाते हैं । शेष तीसरे खण्ड में ॥

अति लाभदायक शिक्षा ॥

केवल पुरुष विषयक मनुष्य को उचित है कि बाद प्रसङ्ग के अवश्य दुग्ध
 पिये, सबसे उत्तम तो यह है कि जिस रात्रि में स्त्रीप्रसङ्ग करना हो पूर्वही से
 मिथीयुत अधावंट दूध रक्खा रहे और मैथुन के उपरान्त उठकर हाथ सुह
 धोय दूध पी ले इससे मैथुन की हारारत जाती रहती है, वीर्य में किसी
 प्रकार का दोष नहीं उत्पन्न होता है । यदि रात्रि में दुग्ध लाभ न हो तो
 उचित है कि प्रातःकाल भौष दन्तधावन के बाद आध सेर टाटक गौ के दुग्ध
 में मिथी डाल पीजाय, मैथुन के सबेरे यह भी करना योग्य है कि उस दिन
 काले तिल का तेल शरीर में मर्दन करके स्नान करे और दुग्ध भात मिथी या
 खीर या मोठा भात भोजन करे और होपहर के दो तीन घण्टे तक शयन करे
 इस क्रिया से मनुष्य कभी वीर्यहीन निर्बल पुरुषत्व रहित न होगा ।

मैथुन हमेशा रात्रि में एक बार करना उचित है सिर्फ वर्षाकाल में जब

कि आकाश अभयुक्त है और हिमऋतु में दिनमें भी मैथुन करसक्ता है परन्तु एक बार ।

वेद की पाठा तो यही है कि मनुष्य मासान्धमें स्वकीय ऋतुवती स्त्री के साथ गमन करे, मनु का भी वचन है ।

ऋतुकालाभि गामीयात् स्वादर निरतःसदा । ब्रह्मचर्यैव भवति यत्र तच्चाश्रमे वसन् ॥

जनेषा जो मनुष्य अपनी ही स्त्री से प्रसन्न और ऋतुगामी होता है वह रहस्य ब्रह्मचारी के सह्य है । जो मनुष्य वृथा वीर्य नष्ट न करके निरन्तर उसकी स्थिरता रखता है वही पुत्रप ब्रह्मवान्, तेजस्वी और सम्पूर्ण उत्तम कार्यों का करनेवाला होता है, अन्यथा वीर्य नष्ट करने से प्रायु पट जाती है और अनेक प्रकार के रोग होते हैं, विशेष कर रहस्य को तो अवश्य ही अपने वीर्य की स्थिति और भोजन ह्रादन इस प्रकार रखना चाहिये कि वीर्य कभी खर्च में भी नष्ट न हो कारण यह है कि जितना ही वीर्य पुष्ट होगा उतना ही उनके लड़के अत्युत्तम रूप, लावण्ययुक्ति पुष्टि, बल और पराक्रमयुक्त होंगे ।

महर्षियों की उचित है कि अपनी स्त्री से प्रेम, प्यार और प्रसन्न करे उसके ऐसा वर्त्ताव रखे कि वह सर्वदा प्रसन्न रहे । क्योंकि ॥

सन्तुष्टो भार्यया भर्ता भर्त्राभार्या तथैव च ।

यस्मिन्नेव कुले नित्यं कल्याणं तत्रैव ध्रुवम् ॥

जिस कुल में स्त्री से पुत्रप और पति से पत्नी अच्छे प्रकार प्रसन्न रहती हैं उसी कुल में सर्वसौभाग्य और ऐश्वर्य निवास करते हैं । जहाँ कलह एवं दानों में अप्रीति रहती है वहाँ ही दोर्भाग्य और दारिद्र्य बाध करता है इससे स्त्री का प्रसन्न रखना विद्वानों की श्रेय है क्योंकि स्त्रियों को दुःख न हो, ऐसा मनु लीका भी वचन है ।

शोचन्ति यामयो यत्र विनश्यत्याशु तत्कुलम् ।

न शोचन्ति तु यत्रैता वर्द्धन्ते तद्वि सर्वदा ॥

जिस घर में स्त्री शोकातुर होके दुःख पाती है वह घर वा कुल शीघ्र ही खलानाश होजाता है और जिसमें स्त्रियाँ आनन्द से प्रसन्न और प्रसन्नता से मरीझी रहती हैं वह घर और कुल सर्वदा बढ़ता है । हे आर्यकुलामिमा-

नियो यदि आपत्तोग सर्वे मन से देश का कल्याण एवं उन्नति चाहते हैं तो वेष्टाओं के बाहरी जालमें फँसकर ग्रहणियों को शोकातुर मत करो उन्हें के साथ भोग विलास करो, उन्हें की अच्छे २ आभूषण और वस्त्र पहिनाओ फिर देखो तुम्हें कैसा आनन्द मिलता है, देख करके भी क्या शस्त्र बने है यह सोमाय्य संग्रहों का किस्से है ? हे ईश्वर दवानिधे हमारे आर्य माइयों को भी वृद्धि दे ।

मनुष्य पति कामातुर होने पर जाड़े के दिनों में तीसरे दिन, गर्मी में पन्द्रहवें दिन और वर्षाकाल में जब मेघ की गर्जना हो मैथुन कर सक्ता है क्योंकि स्त्रीप्रसंग की इच्छा हो तो कामके वेग की न रोकना चाहिये क्योंकि काम के वेग की रोकने से प्रमेह और मूत्रकृच्छ्रादिक बीमारियाँ, यकृत, शिथिलता और पुंसपल की हानि होती है, इससे कामातुर होने पर प्रसङ्ग करना उचित है ।

कामातुर के लक्षण ॥

चित्त घबड़ाय, कहीं मन न लगे, बिना इच्छा ही किये उपस्थेन्द्रिय बली एवं कठोर हो प्रसन्न योग्य स्त्री को देखतेही समस्त शरीर सन्न होजाय और मूर्च्छा की प्राप्ति हो तब जानना चाहिये कि यह कामातुर है उस अवस्था में उचित है कि पूर्वोक्त नियमित दिनों में अवश्य मैथुन करे । कोई यह प्रष्टा करे कि यदि उस अवस्था में स्त्री गर्भिणी या रोगार्ति हो तो ? दूसरी स्त्री से गमन करे, (प्रश्न) "मातृवत्तरद्वारेण" इत्यादि अनेक आस्त्रकारों के वचन हैं कि पर स्त्री गमन न करना (उत्तर) दूसरी स्त्री से तात्पर्य है रोग रहित वेष्टा अर्थात् कामातुर होने पर यदि स्त्रीय स्त्री गर्भिणी या रोगग्रस्त हो तो नियोग या वेष्टागमन करलेना कोई दोष नहीं है कारण यह है कि यदि उस अवस्था में स्त्री लाभ न हो तो शारीरिक दशा में हानि पड़ने सक्ती है (प्रश्न) ऐसा मत कहे वेष्टा महापापशीला होती हैं उनके स्वर्गमात्रमें मनुष्य पापी होजाता है, पुनः "आयुः क्षतिर्वैफल्यता युपहास्यता च निन्दार्थं हानि लपुता विगतिः परजेति" वेष्टागमन से आयुकी नाश निष्फल वीर्य पतन, हँसी जोकनिन्दा, द्रव्यनाश और हलकई एवं पूर्वमें उत्तम गति नहीं होती (७०) यह सामान्य वचन उनके लिखे हैं जो, अहर्निश उसीमें लिप्त रहते हैं, आपद कालमें नियोग या वेष्टागमनमें पाप नहीं है क्योंकि ईश्वर की सृष्टि क्रमानु-

कूल स्त्री पुरुषका स्वाभाविक व्यवहार सुकही नहीं सक्ता सिवाय वैराग्यवान् पूर्ण विद्वान् योगियों के । नित्यप्रति स्त्री के साथ एक पलंग पर सोना भी निषेध है क्योंकि वीर्य मानिन्द घी के है जिस प्रकार घृतपिण्ड अग्निताप से द्रव होजाता है तिसी प्रकार मनुष्यका वीर्य भी स्त्री के समागम पर्यात् सिर्फ अन्न सार्य ही ही द्रवीभूत हो व्युत्त होजाता है । स्त्री से अन्तग रहने वाले पुरुष चिरायु और बली होते हैं और वे एकाएकी बृद्धत शीघ्र बुढ़ापा नहीं होती, उत्तम है कि जिस दिन प्रसङ्ग करना हो एक पलंग पर प्रयत्न करे ॥

स्त्री त्याज्य ॥

नित्यलिखित द्रव्योंके साथ मैथुन करना शास्त्रमतसे कदापि न चाहिये, जैसे रजस्वला, अकामा (जिस स्त्री का काम चैतन्य न हो) मल्लिना (मैली कुचैली) अप्रिया, वृद्धा, रोगयुक्ता, अद्रुहीना (लँगड़ी लूली, अन्धी आदि) : गर्भिणी, योनिरोगयुक्ता पर्यात् जिसके गर्मी, सजाक, या प्रदर की बीमारी हो, गुरुपत्नी, यक्षुपत्नी, कफोरिणी और जिसमें कल छिद्र हो, ऐसी स्त्री से रति नहीं करनी चाहिये क्योंकि रजस्वला के संग से दृष्टि आयु तेज और गर्भकी हानि होती है और रजस्वला के संगसे जो सजाक की बीमारी होती है उससे मगन्दर रोग होता है और आराम नहीं होता, वृद्धा के साथ आयु का नाश, गर्भिणी के सङ्ग से भ्रूणहत्या या गर्भपीडा, रोगिणी के सङ्ग बल का नाश, हीनाङ्गी, मल्लिना, वैरयुक्ता, अति दुबली, बन्ध्या और अकामा के संगसे धातुहीन रोग और मन मलीन होता है ।

दिवा प्रभात लगा हो उसे रोक कर मैथुन करने से, प्रसंग में वीर्य के रोकने से और चित्त से कर पर्यात् स्त्री को ऊपर बैठा कर प्रसंग करने से बृद्धा पथरी की बीमारी होती है ॥

ऊपर लिख चुके हैं कि स्त्री को ऊपर बिठाकर विपरीत रति करने से बृद्धा पथरी की बीमारी होती है-यही नहीं परन्तु इससे और भी अनेक अपद्रव होते हैं यथा संश्रुते शारीरक दो अध्याये ॥

ऋतौ पुरुषवहापि प्रवर्त्तेताड्गनायदि ।

तत्र कन्या यदि भवेत् सा भवेन्नर चेष्टिता ॥

ऋतुवती नारी यदि पुरुषवत् पर्यात् पुरुष नीचे और स्त्री ऊपर बैठे कर

प्रसंग करे और यदि गर्भ रहजाय और जो कन्या उत्पन्न हो। तो उस कन्या की चेष्टा पुरुषकी भी होती है याने उसका बोलचाल पोशाक आदि सब पुरुष के से होंगे और यह भी सम्भव है (जैसा कि कभी २ सम्वाद पत्र द्वारा सुना जाता है) मूख डाढ़ी में बाल आदि हों ॥

योभार्याया मृतौ मोहा दङ्गनेव प्रवर्तते ।

ततः स्त्री चेष्टिताकारो जायते पण्ड संज्ञितः ॥

जो पुरुष मदान्तता से स्त्री की नाई नीचे होकर प्रसंग करते हैं उसे उत्पन्न पुत्र खण्ड अर्थात् जनाना होता है उस छड़के के सम्पूर्ण व्यवहार स्त्री का सा होता है जैसा चटकना, मटकना, लहंगा पहिनना आदि दुर्गुण । यदि कोई यह कहे कि दोनों स्त्रियों के समिप्राय तो एक ही से हैं याने पुरुष ही नीचे रहा तो फल भिन्न क्यों हुआ ? तात्पर्य यह है कि स्त्री बिना प्रेरणा के मदसे मूर्च्छित हो पुरुषवान् चेष्टायुत हो गमन करे तो निश्चय है कि रजसाधिक्य से कन्या ही उत्पन्न होगी और उसके सब आचरण और कुछ आकार भी पुरुष के से होंगे । उसी प्रकार पुरुष को भी जानना ॥

अभ्यन्तर परीक्षा करनेसे निश्चय हुआ है कि हैजा आदि संक्रामक व्युत्पत्ता रोगों से तत्काल मृत्यु तथा निरन्तर रोगी बने रहनेका मुख्य कारण वीर्यकी अशुद्धता है । यह तो सभी जानते हैं अथं धर्म काम और मोक्ष की प्राप्ति इसी देखसे होती है इसलिये देखकी रोगसे रहित और सुखी रखनेका उपाय करना सर्वसाधारणकी उचित है वे उपाय क्या हैं कि विहिताचरण और पथ्य सेवन का परिचान ? विहिताचरण कौन है ? आयुर्वेदके मत से विवाह स्त्री प्रसन्न आदि । आज कल के लोगों का ध्यान इन विषयों पर बिलकुल नहीं है और स्त्रीप्रसन्न में क्या हानि और लाभ है और किस प्रकार करना चाहिए इसे तो बहुत ही कम लोग जानते होंगे यह कहते हैं “कोक पड़े बिग रति करे सो नर पशु समान” हम कहते हैं पशु तो अच्छे हैं सिर्फ रतिशास्त्र नहीं जानते गर्भोत्पादन की सामर्थ्य तो रहती है उनका सम्भोग प्रायः सफल होता है और आज कल के मनुष्य रतिशास्त्र न जानने के कारण वीर्य क्षीण ऐसे हो गये हैं कि जन्म भर नपुंसक और अपुत्री कहलाते हैं अन्त में न यह लोक सधे न परलोक अन्ततोगत्वा किसी न किसी रोगमें ग्रस्त हो अकाल काल ग्रस्त हो जाते हैं । इसलिये बुद्धिमानों की उचित है कि वीर्य की रक्षा अवश्य करें ।

चरक मुनि कहते हैं जिस प्रकार अन्नादिक बीज बहुत पुराना होने या फटा रहने से तथा जल से भीगने या कीड़ों के खाने या भागमें भुन जाने से बिगड़ जाता है फिर वह जमता नहीं तैसेही मनुष्यों का वीर्य भी घास बि-
रुद्ध व्यवहार से। और अनुविहित रति होने से सन्तान योग्य नहीं रहता
यह अविचार राजा बाबुओंमें अधिकांश पाया जाता है जो बनिता और पुंयत्नी
के चर्म सङ्गर्षण को मुख्य राजसुख समझते हैं जब वीर्य रहित होजाति है
तो अन्त में बाबाजी की विभूति दूढ़ते हैं ॥

शुक्रदोष ॥

निम्नलिखित कारणों से शुक्र अवश्य दूषित होजाता है । अतिशय स्त्री
प्रसङ्ग, अति कसरत, असात्म्य सेवन, अर्थात् प्रकृति विरुद्ध आहारादि, अकाल
(रजस्वला) प्रयोजि (योजि भिन्न अन्यस्थान शुद्ध आदि तथा हस्तमैथुन)
गमन, इच्छा प्राप्ति में मैथुन न करना, अति खूखा कटु, कसैला, लवण, अन्न
और गरम चीज के सेवन से, अति वृद्धावस्था होने से, शिस्ता, शोक, भय, क्रोध
बहुकाल व्याधियुक्त रहने से मलमूत्र अवरोध एवं क्षयादि कारण से वायु
कफ वीर्य बहनेवाली नधों में प्राप्त होके, शीघ्र ही वीर्य को दूषित करते हैं
सो दूषित शुक्र ८ प्रकार के हैं ।

फिण्युक्त १ पतला २ सूखा ३ बदरङ्ग ४ पूति (दुर्गन्धि युक्त) ५ बहुत चि-
कना ६ दूसरी धातुपट्टि अर्थात् रक्त आदि धातु से मिला हुआ यह ७ प्रकार
घाठवां चवसादि याने ग्लानिकारक है, तन्मध्ये फिणिल पतला शुष्क और पि-
च्छिल वायु दूषित है इन धातुओं से गर्भ उत्पन्न नहीं होता है और पित्त
दूषित शुक्र नीला दुर्गन्धि युक्त अति गरम होता है और धातुच्युत समय लिङ्ग
मार्ग में जलन होती है, श्लेष्मा द्वारा रुद्धमार्ग शुक्र अतिशय चिकना होता है ।
अधिश स्त्रीप्रसंग से चोट लगने से चय से वेग रोकने से अति कुपथ्य करने से
बहुधा कटके रक्तयुक्त या गठीला २ वीर्य लिङ्गमार्ग में रुक के कटसे निक-
लता है इसलिये चाहिये कि मनुष्य वीर्यरक्षा में निरन्तर तत्पर रहें ॥

गर्भिणीगमन निषेध ॥

गर्भिणी सप्तमास्यासादुपरिष्ठादिशेषतः ।

निषिद्धात्वष्टमेमासे मैथुनं न समाचरेत् ॥

गर्भिणी स्त्री के साथ सहवास करना तो सर्वथाही निषिद्ध ऋषियों ने किया है परन्तु सातवें महीने से विशेष कर मैथुन करना निषिद्ध है । जैसे ऋतुस्नाना स्त्री से सम्भोग न करने से एक बालहत्या का पाप होता है वैसेही पूर्ण गर्भावस्था में प्रसंग करने से एक बालहत्या का पाप होता है ॥

वर्षाऋतु में छपटन और तेल मर्दन करना, शरीरमें माटी लगाकर कसरत करना, जूप का जल और दुग्ध पीना, घोड़े की सवारी करना वज्रत प्रायश्चर्य करता है । पूर्वकी हवा खाना, पानी में वज्रत भोगना, घाममें फिरना वज्रत खड़ा और शीतल भोजन, रोज २ मैथुन, दिन में सोना और नदी का जल पीना कदापि न चाहिये । जिनका प्रण जगेशा गंगा जल ही पीनेका है उन्हें भी उचित है कि यावण भादों ही महीना न पियें क्योंकि वर्षाकाल में वन, पर्वत, बाग इत्यादि स्थलों से सड़े मीस खता पत्तो और भी अनेक प्रकार का मैला पड़कर नदियों में आता है इससे वर्षा में नदी का जल विष समान होकर अनेक रोगों को उत्पन्न करता है, इसी लिये आर्यकारों ने लिखा है कि समुद्रगामिनी नदियों को छोड़कर सब नदियां वर्षाऋतु में रजस्रला होती हैं स्नान उनका जलसेवन उसी प्रकार निषिद्ध और हानिकारक है जैसे ऋतुवती स्त्री का सेवन—वर्षा में आकाशपतित घारा जल अमृत समान गुण करता है क्योंकि वर्षाकालमें आकाश की वायु अत्यन्त शीतल होनेसे वहाँ की निर्मल जलीय वायु संशुद्ध है वह हिम होकर ठट्टि के आकार भूतल में गिरता है अतएव वह जल पयोपतित होताही पूर्ववत् निर्मल व्यवस्था (परिष्कार जल) को प्राप्त होता है यह जल भमके से खिंचे हुए जल से भी उत्तम जल है इसलिये उक्त जल वर्षाकाल में पीना विशेषकर रोगियों को अति गुणकारी है ॥

“ठट्टि का जल लेनेका सहज उपाय”

एक अच्छे साफ बड़े कपड़े को ७ । ८ हाथ के ऊँचे बाँध चार कोनों पर गाड़ उसीके ऊपर कपड़े को बाँध देय और बीचमें कपड़े के ऊपर एक साफ ईंट रख और उस कपड़े के नीचे ठीक बीचमें एक मिट्टी का कलश या तिपाई पर रखदेय वह भीड़ही ठट्टि के जल से भर जायगा । परन्तु प्रथम २ । ३ पल की ठट्टि पड़े उसे वायुस्थूल “मैला” वा नाना रोगकृत जल त्यागदे उसके बाद निर्मल जल ग्रहण करे यह जल सिर्फ दो या तीन दिन तक काममें आसक्ता है ।

किसी कार्य की ज्ञानि वा उपयोग निष्फल होने से कौन ऐसा मनुष्य है जिसके चित्त में सद्विच्युत न होती हो, मनुष्य पर कीमती आपत्ति क्यों न पान पड़े कभी धैर्यहीन न होना चाहिये, मनकी सर्व्वदा-आनन्द में रखने वाला मनुष्य आयुष्मान होता है और उसके शरीर की शोभाजि कभी दग्ध नहीं करसक्ती है बृद्धिमानों का मन सर्व्वस्व नाश होने पर भी कभी शोक समुद्र में नहीं डूबता वे लोग परिणाम देखकर कार्य्य सिद्धि होने का उपाय करते हैं ।

मनुष्य की यह भी उचित है कि जैसे होमक धीरे २ बाल्मीक (बाँधी) को बनाती है वैसे ही उपकारो जीवों को भीड़ा न देकर पर जन्म के सुखाय धीरे २ धर्म का सहाय करे । क्योंकि:—

नामुत्रहि सहायार्थं पिता माता च तिष्ठतः ।

न पुत्र दारं न ज्ञाति धर्म स्तिष्ठति केवलः ॥

परकीक में न माता न पिता न पुत्र न स्त्री न जात भाई सहाय करसक्ती हैं किन्तु एक धर्मही सहायक होता है । विचार करने का स्थल है कि मनुष्य अनेक उपाय (मिथ्या भाषणादि महा पाप) करके पदार्थ खाता है और सब कष्टान्द आनन्द से भोग लगाते हैं चैन करते हैं, परन्तु हाथभागी नहीं होते किन्तु अधर्म का कर्त्ता ही दोष का भागी होता है, फिर देखिये मरने पर मृतक शरीर की बन्धुवर्ग ले सगान में जा डेढे के समान भूमि में ढिाड़ कर पीठ दे बिमुख हो। चले जाते हैं कोई उसके साथ जानेवाला नहीं होता किन्तु एक धर्म ही उसका संगो होता है, जाय वे कैसे नर हैं जो ऐसे सच्ची परम मित्रको त्याग करदेते हैं । क्या वह नहीं जानते हैं कि मनुष्य अकेलाही जन्म और मरण की प्राप्ति होता है और आप ही धर्मका फल सुख तथा अधर्म का फल दुःख भोगता है ॥

महाभारत के उद्योग पर्व में लिखा है कि मनुष्य कभी निकम्मा और आलसी न बने । सुख, लाभ, मान, बढ़ाई आदि पा के कभी हर्ष में मग्न न हो और न दुःख, ज्ञानि, अपमान और निन्दा सुनके रज्ज और क्रोध करे क्योंकि अति हर्ष और शोक से शीघ्रही शरीर में रोग होजाता है ।

गृहस्थाश्रमियों को उचित है कि निम्न लिखित मनुष्य से सदा बचे रहें कभी उसका आदर न करें जेसा कि मनुजो ने कहा है ॥

गर्भिणी स्त्री के साथ सहवास करना तो सर्वथाही निषिद्ध ऋषियों ने किया है परन्तु सातवें महीने से विशेष कर मैथुन करना निषिद्ध है । जैसे ऋतुस्त्राता स्त्री से सम्भोग न करने से एक बालहत्या का पाप होता है वैसेही पूर्ण गर्भावस्था में प्रसंग करने से एक बालहत्या का पाप होता है ॥

वर्षाऋतु में उपटन घोर तेज मईन करना, शरीरमें माटी लगाकर कसरत करना, दूध का जल और दुग्ध पीना, बड़े बड़ी सवारी करना वज्रत फायदा करता है । पूर्वकी हवा खाना, पानी में वज्रत भोगना, घाममें फिरेना वज्रत छूना और शीतल भोजन, रोज २ मैथुन, दिन में सोना और नदी का जल पीना कदापि न चाहिये । जिनका प्रण जनेया गंगा जल ही पीनेका है उन्हें भी उचित है कि यावण भादों हो महीना न पियें क्योंकि वर्षाकाल में वन, पर्वत, वाग इत्यादि स्थलों से सड़े मांस लता पत्तों और भी अनेक प्रकार का मैला बहकर नदियों में आता है इससे वर्षा में नदी का जल विष समान होकर अनेक रोगों को उत्पन्न करता है, इसी लिये शास्त्रकारों ने लिखा है कि समुद्रगामिनी नदियों को छोड़कर सब नदियां वर्षाऋतु में रजस्वला होती हैं खान उनका जलसेवन सभी प्रकार निषिद्ध और हानिकारक है जैसे ऋतुवती स्त्री का सेवन—वर्षा में आकाशपतित धीरा जल अमृत समान गुण करता है क्योंकि वर्षाकालमें आकाश की वायु अत्यन्त शीतल होनेसे वहां की निर्मल जलौय वायु सञ्चित है वह हिम होकर वृष्टि के आकार भूतल में गिरता है अतएव वह जल अधोपतित होतेही पूर्ववत् निर्मल व्यवस्था (परिष्कार जल) को प्राप्त होता है यह जल भभके से खिचेहुए जल से भी उत्तम जल है इसलिये उक्त जल वर्षाकाल में पीना विशेषकर रोगियों को अति गुणकारी है ॥

“वृष्टि का जल लेनेका सहज उपाय”

एक अच्छे साफ बड़े कपड़े को ७ । ८ हाथ के लंबे बाँस चार कोनों पर गाड़ उसीके ऊपर कपड़े को बांध देय और बीचमें कपड़े के ऊपर एक साफ डूँट रख और उस कपड़े के नीचे ठीक बीचमें एक मिट्टी का कलश तिपाईपर रखदेय वह शीघ्रही वृष्टिके जल से भर जायगा । परन्तु प्रथम २ । ३ पल जो वृष्टि पड़े उसे वायुस्थ धूल “मैला” वा नाना रोगजनक जान त्यागदे तिसके बाद निर्मल जल ग्रहण करे यह जल सिर्फ दो या तीन दिनतक काममें आसता है ।

किसी कार्य को ज्ञान वा उद्योग निष्फल होने से कौन ऐसा मनुष्य है जिसके चित्त में उद्विग्नता न होती हो, मनुष्य पर किसी प्रकार अपात्ति क्यों न आन पड़े कभी धैर्यहीन न होना चाहिये, मनको सर्वदा आनन्द में रखने वाला मनुष्य आमुष्मान होता है और उसके शरीर को श्रीकामि कभी दग्ध नहीं कर सकती है बुद्धिमानों का मन सर्वस्व नाश होने पर भी कभी शोक समुद्र में नहीं डूबता वे लोग परिणाम देखकर कार्य सिद्धि होने का उपाय करते हैं ।

मनुष्य को यह भी उचित है कि जैसे हीमक धीरे २ बाल्मीक (वाँगी) को बनाती है वैसे ही उपकारो जीवों को पीड़ा न देकर पर जन्म के सुखार्थ धीरे २ धर्म का सहाय करे । क्योंकि:—

नामुत्रहि सहायार्थं पिता माता च तिष्ठतः ।

न पुत्र दारं न ज्ञाति धर्मं तिष्ठति केवलः ॥

परलोक में न माता न पिता न पुत्र न स्त्री न जात भाई सहाय कर सकते हैं किन्तु एक धर्मही सहायक होता है । विचार करने का स्थल है कि मनुष्य धर्मक उपाय (भित्ति भाषणादि महा पाप) करके पदार्थ खाता है और सब कुटुम्ब आनन्द से भोग लगाते हैं चैन करते हैं, परन्तु शेषभागी नहीं होते किन्तु अधर्म का कर्ता ही दोष का भागी होता है, फिर देखिये मरने पर मृतक शरीर को बन्धुवर्ग ले आगान में जा डेढे के समान भूमि में ढाड़ कर पीठ दे बिमुख हो चले जाते हैं कोई उसके साथ जानेवाला नहीं होता किन्तु एक धर्म ही उसका संगी होता है, जाय वे कैसे नर हैं जो ऐसे सही परम मित्रकी त्याग करदेते हैं ! क्या वह नहीं जानते हैं कि मनुष्य अकेलाही जन्म और मरण को प्राप्त होता है और आप ही धर्मका फल सुख तथा अधर्म का फल दुःख भोगता है ॥

महाभारत के उद्योग पर्व में लिखा है कि मनुष्य कभी निकम्मा और आलसी न बने । सुख, लाभ, मान, बड़ाई आदि पा के कभी हर्ष में मग्न न हो और न दुःख, ज्ञानि, अपमान और निन्दा सुनकर रक्त और क्रोध करे क्योंकि अति हर्ष और शोक से शीघ्रही शरीर में रोग होजाता है ।

रघुस्थानमियों को उचित है कि निम्न लिखित मनुष्य से सदा बचे रहें कभी उसका आदर न करें जेसा कि मनुजो ने कहा है ॥

पापखिन्नो विकर्मस्वान् वैडाल इति कान् ग्रथान् ।

हेतुकान् वक्रवृत्तीन् वाङ् मात्रेणापि नार्पयेत् ॥

(पाखण्डो) भीतर तो कण्ठ की कतरनी, दिखानेको लपरसे भेग बनाये है। जैसे कि आज कल कितने ईसाई, सन्यासी वने लोगी की भ्रष्ट करते हैं और कसाई भिखा सूत्र धारण कर ब्राह्मणों के भेग से सैकड़ों गोभों की ले जाते हैं, (विकर्मस्य) जैसे विद्वान् ब्राह्मण लोग आज कल लोभ में ईसाइयों की संस्कृत पढ़ाते हैं, अपने धर्मखण्डन की व्यवस्था देते हैं, (वैडालवृत्ति) जैसे विलार छिप और स्थिर रहकर ताकता २ भ्रष्ट से मूर्ख को पकड़ मार अपना पेट भरता है वैसेही आज कल सोना चांदी बनाने वाले और लड़का वाला देनेवाले बाबा जी लोग रकम लूट २ कर मक्का छड़ाते हैं । (वठ) अर्थात् इठौं दुराग्रही अभिमानी पाप जाने नहीं औरों का कहा माने नहीं जैसे हमारे निरक्षर सरयूपारी ब्राह्मण (हेतुक) कुतर्की व्यर्थ बकनेवाले जैसे आज कल के स्वधर्म हीन सिर्फ अंगरेजी बूके दिहातियों के ढीकड़े और स्वार्थ-परायण कोई २ सम्पादक गण जिसे चार पैसा मिले वीसाह कर्म भ्रष्ट अत्यंत क्यों न हो उसको तारीफ करने और काशी आदि ब्राह्मणों की कहें कि वे मूर्ख हैं (वक्रवृत्ति) बकने की प्रवृत्ति सभी जानते हैं वैसे आज कल के बेरागी और खाखी आदि बेला मूढ़ कुल छिद्र से लाखी रूपये ठग लेते हैं गांव खरीदते हैं, मुकद्दमा खड़ते हैं, गो भस्मों की मालपुवा खिछाते हैं ऐसीका सत्कार बाणीमात्र से न करना चाहिये ।

मनुष्य को सचित है कि रोज़ सबेरे उठकर माता पिता को प्रणाम करे कोई अतिथि विद्वान् सन्यासी को अथवा अपने कुल जाति के किसी बृद्ध को देखे तो अवश्य प्रणाम करे क्योंकि ॥

अभिवादन शीलस्य नित्यं ब्रह्मोपसेविनः ।

अत्वारितस्य वर्द्धन्ते आयुर्विद्या यशोवत् ॥ (१) मनुः

... जो मनुष्य सदा नम्र सुशील विद्वान् और ब्रह्मों (माता पिता आदि) की सेवा करता है उसकी आयु विद्या, कौर्त्ति और वल ये चार सदा बढ़ते हैं, यह भी चाहिये कि वैर बुद्धि ढीढ़के सब मनुष्यों से मेल मुलाकात और सदा मधुर सुशीलता युक्त बाणी बोले परन्तु कलौ दुष्टों का साथ कभी न करे क्योंकि

जिस तरह काजल की कोठरी में जाने से दाग लग जाता है वैसेही दुष्टों के साथ में धर्मग्र पुरुष भी पापयुक्त होजाते हैं ॥

नाग्निमुखेनोपधमेन्न शान्नेत्तैतच्चस्त्रियम् ।

नाभेर्ध्वप्रक्षिपे दग्धौ नचपादौ प्रतापयेत् ॥

अधस्तान्नोपदद्याच्च नचैन मपि लङ्घयेत् । मनुः आ० ४

अग्नि को मुख से न फूँकना (अग्निक्षण सहकर नेत्र में जाने से तथा कपोलों का रक्त जल जा जाने से नेत्ररोग होजाता है) अग्नि में बिछा आदि अपवित्र वस्तु न डालना (वायु विष दूषित होजाती है) पाँव न तपाना (अति जाड़े के दिनों में भी पादको अग्नि में न तपावे इससे पाद दाह रोग होता है) नङ्गी स्त्री की न देखना (वैराग्यवान पुरुष भी कामी होजाता है) पलंग के नीचे अग्निको न रखना (प्रायः देखने में आया है कि खटिधि में आग लग गई है) अग्नि को न लङ्घन करना और न पाँव से छूना (इससे निश्चय पेटों में अग्निया बराहो होजाती हैं) नख से पृथ्वी छिखना फिर को हमेशा रक्ष रखना, वस्त्र रहित पलङ्ग पर सोना सूर्योदय और सूर्यास्त में सोना, हँस २ कर भोजन करना मलिन वस्त्र धारण क्रिधे रहना घृत दुग्ध रहित रुच पदार्थ भोजन करना इत्यादि आरोग्य द्रष्टुं जन सदा त्याग करें । वज्रत दिन जीने की इच्छा करनेवाला मनुष्य कपाट खोल कर न सोवे, बड़े गृह में भी अकेला न सोवे, रजस्वला स्त्री से माधण न करे, रात को अकेला मार्ग में न चले, न वज्रत काजलक पर्वत में वास करे, कांसके पात्रमें पेर न धोवे, फूटे पात्र में और जिस पात्र में मन की प्रसन्नता न हो उसमें भोजन न करे, अति भोजन न करे, दिशा प्रेषाव न रोकें, बिना परीक्षा लिये एका एकौ किसी मनुष्यपर विश्वास न करलेय, विशेषकर रातको बिना खाने जल कभी न पिये भाँग वूटी और पान माता पिता मित्र टहलू आदि से अतिरिक्त पुरुषके हाथ से कभी न खावे, जिससे एक बार शत्रुता हुई हो उसे कभी अपना मित्र न जाने, केश भञ्ज हाड़ फूटा टूटा माटों के पात्र का टुकड़ा, बेनगर भूसा इन सर्वोपर न खड़ा रहे, बानर, न्योरा, बिल्ली और भेड़िया आदि दुष्ट जीवों की न पाले, कोप से अपने शिर और केश की प्रहार न करे, छपवास भी न करे, भोजन के उपरान्त बार.बार, शर्ष रात्रि को और जो जलाशय जाना नहीं गया है उसमें स्नान न करे ॥

सम्र बढ़ाना चाहे तो भोग कम करे, जिसके निकल जाने में इतना सुख है उसके रोकने में कितना सुख होगा यह बात बिरले ही पुरुष जान सक्त है। अगर चाहे कि बीमार न पड़े तो पेट भर न खाय और छाती की हमेशा रक्षा करें। इच्छत के साथ रहना चाहे तो ऋण न ले और न किसीसे प्रस करे, यह चाहे कि जो सुख से कई वही हो तो झूठ न बोले। दुनिया का मजा चाहे तो सेहनत करके विद्या पढ़े। अगर चाहे कि हमारे कोई शत्रु न हो तो क्रोध न करे। दुनिया में सबसे मित्र बनना चाहे तो मोठा वचन बोले परन्तु सत्य बचन हो। यदि चाहे कि हमेशा आरोग्य रहे कभी किसी रोगमें ग्रस्त न हो तो आरोग्यदंष्ट्र में प्रातःस्नानाचारभ्य श्रयनान्त पथ्यन्त जो कर्म मनुष्यों के लिये लिखे हैं उन्हें काम में लाये। अपना चाँख और जिह्वा की निरन्तर अपने वश में रखो। अपना कपड़ा और अपना शरीर पवित्र रखो प्रति दिन रात्रि की सोने के लिये जब पथ्येष्ट पर जाओ तो जो कुछ तुमसे दिन में किसी क्रिष्ण का चत्कर्म्म हुआ हो तो ईश्वर से माफ़ी माँगे और प्रार्थ करो कि पुनः ऐसा न करेंगे। यदि कोई चत्कर्म्म तुमसे हो तो भूल जाओ क्योंकि उसका स्मरण रखना अभिमान उत्पन्न करता है किसी की मज़ी में आकर अपने विपक्ष से बढ़कर काम मत करो नहीं पछताओगी। जो भेद कहने योग्य न हो उसकी कभी अपने मित्र से भी न कहो। अगर किसी से किसीका भला होता हो तो भाँजी मत मारो और पक्ष बनके न किसीसे मिलो क्योंकि इससे बढ़ कर दूसरा पाप नहीं है। जब किसी पुरुष से और कोई पुरुष बात करता हो तो तुम कभी उनके बीचमें न बोलो क्योंकि लोग तुम्हें भूर्ख समझेंगे भूर्ख-की यह बड़ी पक्षिधान है जो बिना पूछे बोल चठता है। जिस समय कोई पुरुष कुछ खा रहा हो तुम कभी उधर न देखो। जिस मार्ग में तुम्हारे पिता पितामह चले हैं उसी मार्गमें तुम भी चलो परन्तु जो सत्पुरुष पिता पितामह रहे हों, अगर दुष्ट रहे तो कभी उनकी राहपर मत चलो भूत पूर्व आर्यों के मार्ग पर चलो क्योंकि धर्मात्मा पुरुषों के मार्ग में चलने से दुःख कभी नहीं होता। विद्या पढ़ने का शोक रखते हो तो दुष्ट विप्रयी जनों का संग, महादि नसे का सेवन और वेष्ठागमनादि असत् व्यसन त्यागकरो यदि होसके तो यथाशक्ति अन्न वस्त्र और पुस्तकादिसे "विद्याधियोंका उत्कार करो इससे बढ़कर संसार में और पुण्य नहीं है" "विद्यादानात् परं दानं न

भूतो न भविष्यति" जल, अन्न, गौ, पृथ्वी और सुवर्ण आदि मर्त्यलोकमें जितने दान हैं इन सब दानोंमें विद्या का दान अति श्रेष्ठ है यह जो आज कल राजा महाराजा सेठ साहूकार आदि प्रति दिन बुद्धि बल पराक्रमहीन होते जाते हैं क्यों ? विद्यादान न देकर कुपात्रों को दान देने से, कुपात्र कौन हैं ? महन्त, वैरागी, चंग्रेष्ठा और तीर्थों के पण्डे । किसी मित्र से जो वस्तु उसकी आवश्यक की जो जहां तक बने मत भागो । और पुण्य वही मनुष्य कहा जा सकता है जो विपत्ति के समय सन्तोष करे, हाथ न करता फिरे ॥

अहिंसापरमोधर्मः ॥

इसे ऐसा मत मानो कि यह सूखे, तृथीक और गोजरों से भर जाय, खाट के खटमल और वस्त्र के चोलड़ों के मारने में भी दया लगी, व्याघ्रादि दुष्ट जीवोंके मारनेको हिंसा नहीं कहते, उपकारी जीवों की रक्षा (गोरक्षा) में जहां तक हो धन लगाओ और परिश्रम करके गोरक्षिणी समा स्थापित करो ।

आज कल के नवयुवकों ने यह एक सरल उपाय सोच लिया है और अपने तईं ऐसा बांध लिया है कि बिना उसके घड़ी भर भी उनका काम चलना कठिन है देखिये जब उनकी प्रसङ्ग में रुकावट (स्तम्भन) नहीं होती तो भी घड़ी कोई ऐसी भीषण खा जेने का अभ्यास डाल लेते हैं जिससे उनकी मनो-वाक्या पूर्ण हो कितने लोग वीर्यस्तम्भन के लिये केवल गांग पथवा मद्य ही नहीं पीते किन्तु अफीम गांजा चण्डू भी सेवन करने लग जाते हैं और उन वस्तुओं का अपने तईं ऐसा बन्धन और नेह लगा लेते हैं कि जिनका छूटना लग्न पर्यन्त असम्भव होजाता है यही दूमा विपैली वस्तुओं की हैं जैसे कुचला, बचनाग, संखिया, धतूरा आदि ॥

विपैली वस्तुओं में कोई तो सज्जिया सेवन करते हैं, कोई कुचला, कोई बचनाग, कोई धतूरा आदि वस्तु सेवन कर अपने शरीर का राजा जो सम्पूर्ण पुरुषार्थ का दिनवाला है उसको क्षणिक सुख के लिये अनुचित रीति से हार हार कर डालते हैं ।

कितने लोग बाबा जी के गण्डे पथवा तावीज पर ही अपना जीवन सम-भक्त हैं, कितने वैद्य जी की गोली पर ही अपना पुरुषार्थ मानते हैं, कितने मनुष्य तेल पथवा सेपन (तिला) पड़ी आदि से सामाविक चण्ड हैं वरुं की बिगाड़ देते हैं परन्तु यह उनके सम्पूर्ण उद्योग और उनकी मनोवाक्या नि-

फल और निःप्रयोजनीय है यद्यपि उनकी उस समय औषधि पचवा नशीली वस्तु सेवन के बल पर कुछ यथेष्टता जान पड़ती होगी और वैसा होना भी स्वाभाविक है कारण यह कि नशीली वस्तुओं का स्वाभाविक गुण प्रत्येक नशीली पचवा और दूसरी औषधि के बल से उस समय थोड़े काल पर्यन्त कुछ वीर्य रुक जाय तो कोई बड़े पायर्थ की बात नहीं है पायर्थ ही क्या जब अपने बल से कोई काम प्रत्यक्ष न हुआ तो दूसरे के बल से पचवा साधारण से कितने दिन तक काम चल सकता है। अरुण रहे कि उपरोक्त उपायों से सिवाय ज्ञान के लाभ कुछ भी नहीं है, लाभ उन लोगों को कुछ है जिनका जीवन संपूर्ण नहीं तो साधा अवश्य बीत चुका हो उनके लिये स्वयं वैद्यक शास्त्र में उक्ति युक्ति लिखी है और उन मनुष्यों को लाभ भी उपरोक्त प्रकार से दृष्टिगोचर होसकता है जिसमें किसी प्रकार की ज्ञान नहीं जानी, परन्तु आज कल के नवयुवकों को उपरोक्त उपायों से लाभ केवल शून्य है अनन्तर ज्ञान ही ज्ञान है ।

प्रथम यह कि नशीली पचवा बिपैली पचवा दूसरी वस्तु जो वीर्यस्तम्भन के लिये खाई जाती है उससे जबतक उसका गुण रहता है तब तक तो सुख मालूम होता ही है यह सब कोई जानते हैं परन्तु उसमें विचारना चाहिये कि जबतक नशा (तरङ्ग) मनुष्य में रहती है उसकी गर्मी से धातु स्थान का सम्पूर्ण वीर्य पिघल कर मूत्र की थैली में इकट्ठा होरहता है और ज्यों २ प्रसङ्ग करिये त्यों २ वह पिघलता ही है और यैलीमें भी सब धातु पानी की हो रहती है और जहां नशा का बल, किञ्चित् भी घटा तहां इकट्ठी जमी हुई धातु शीघ्र ही बाहर निकल पड़ती है फिर क्या जब बार बार प्रसङ्ग करने पर जितनी धातु गिरती है उतनी यदि एक ही प्रसङ्ग में वीर्य निकल जाय तो फिर शरीर का बल, नेत्रों की ज्योति, भूख आदि कम न हों तो फिर क्या हो । और यह भी प्रत्यक्ष है कि उपरोक्त प्रकार जिस मनुष्य ने अपने तर्क बाँध लिये हैं उनकी परीक्षा भी उपरोक्त वर्णन के अनुसार हो गई है अतएव मनुष्यमात्र को विशेष कर नवयुवकों को उचित है कि वीर्य स्तम्भन के लिये ऐसा भ्रष्ट अभ्यास कभी डालने का साहस न करें उनको चाहिये कि प्रथम ही से वे अपने अमूल्य शरीर के राजा का रक्षण करने में प्रालस्य छोड़ दे जिससे पीछे पड़ताना और हाथ न मलना पड़े और यदि उनकी किसी वि-

श्रेष्ठ कारण से अधिक गुष्टता की आवश्यकता हो तो शास्त्रोक्त बाजीकरण आदि रसायन क्रिया का सेवन सदैवों के उपदेश और सम्मति से करना उचित है ।

जो चाहे कि हम किसी के फन्दे में न पड़ें तो प्रत्येक विषय की भीमांसा करने का अभ्यास उत्तम करो और प्रत्येक मनुष्य का सल पहिचानो । आनन्द से अपना जीवन काटना चाहे तो बिना विचारे कोई काम न करो “अग्रशीची सदा सुखी” प्रथम सोचकर काम करने वाला सदा सुखमें रहता है ।

“शुष्क वैरं विवादञ्च न कुर्व्यात् केनचित् सह”

बिना प्रयोजन के वैर और झूठा बकवाद किसीसे मत करो इसमें लोका-निन्दा और अपने को भी लज्जाप्रद है । जब तक जिसकी परीक्षा न कर लो कदापि उसका सह न करो जिस प्रकार स्वर्ण की चार परीक्षा हैं ॥

“निघर्षणं क्षेदनं ताप ताडनैः”

घिसना क्षेदना ताप देना और पीटना तिस प्रकार मनुष्य की भी चार परीक्षा करले ।

“कुलेन शीलेन गुणेन कर्मणा”

कुल शील गुण और कर्मसे यदि चेत उक्त चारों में पूर्ण परीक्षा होजाय तब उससे प्रीति मिलाप करना उत्तम होगा । सत्कर्म में जितना दोषके परि-श्रम करो जैसे गोरक्षा घनायालय इत्यादि । अपनी प्रतिष्ठा चाही तो जब सभा में तुम कोई बात कहो, सममाण कहो ।

युवावस्था के दिन बड़े भयाङ्क हैं, इनको सत्कर्म करना परम पुण्यार्थ है और जो युवावस्था में सत्कर्म नहीं करेगा वह फिर वृद्धावस्था में क्या करेगा, यह भूखों का कथन है कि हम वृद्धावस्थामें धर्म करेंगे । किसी मनुष्य से त्वौरी सदा कर बात मत करो चाहे वह मित्र हो चाहे शत्रु जब तुम्हारी वेशी प्रकृत पड़जायगी तो घर एक से लड़ना पड़ेगा । मित्रों की सहायता और माता पिता की प्रतिष्ठा एवं धन पर हो भरोसा मत रखो वेदादि सत-विद्या तथा कार्य कालिक विद्याध्ययन कर अपने लिये भी उच्चता सम्पादन करो । विद्या से मनुष्य की बुद्धि बढ़ती है और यश का प्रकाश होता है । एवं अनुभव उसका दृढ़ होजाता है जो लोग विद्या के अनुरागी हैं उन्हें बाह्ये कि नित्य संध्या के समय यह सोचें कि आजके दिन कितनी गई बातें निश्चय

भई । इस प्राण से विद्या मत सीखो कि जिससे केवल द्रव्य वा सांसारिक सुख निनेगा वरञ्च अपनेको मनुष्य और बुद्धिमान बनाने के लिये विद्या सीखो यदि संसार में अपनी कौत्ति चाहे तो सन्तानको विद्या और विनय सिखाओ धन्य है उनको माता पिता को जो अपने शरीर पर अनेक क्लेश सह कर भी सन्तानों को विद्या पढ़ाते हैं, वह कुल धन्य और वह सन्तान बड़ा भाग्यमान है जिसके माता पिता विद्वान् हैं क्योंकि जितना माता से सन्तानों को उपदेश और विद्या का लाभ होता है उतना किसी से नहीं, बड़ों का वचन है कि माता जन्म से लेकर सन्तान में जबतक पूरी विद्या न हो सुशीलता का उपदेश करै। सुश्रुत का मत है कि माता पिता गर्भाधान के कुछ मास पूर्व ही से और माता गर्भाधान के पश्चात् भी मादक द्रव्य, मद्य, दुर्गन्ध लहसुन मान्सादि, खूब बुद्धि नाशक पदार्थों को छोड़ के जो चान्ति, चारोग्य, बल, बुद्धि, पराक्रम और सुशीलता को प्राप्त करे जैसे दूध, मिष्ठान्न आदि अष्ट पदार्थों का सेवन करै कि जिससे रजवीर्य भी शीघ्र से रक्षित होकर अत्युत्तम गुणयुक्त हो। प्रत्यक्ष है कि जैसा जिसका रजवीर्य होता है वैसी ही सन्तान उत्पन्न होती है ॥

धातुशिक्षा ॥

प्रथम खण्ड की भाँति से ॥

पक्षिसे बच्चे को उवा खिलाना अंगका परिचालन और बच्चे के प्रयत्नस्थान आदि या वयान कर चुके हैं। अब जो निम्नलिखित बातें हैं उनपर स्त्रियों को अवश्य ध्यान देना चाहिये ॥

बच्चे की कोठरी में प्राण या दीपक इस ढंग से रखना चाहिये कि जन्मतुष्ट की प्राण उसकी ज्योति पर चमकने न पाये क्योंकि जन्मतुष्ट बहुरात्र चमकीली चीजों को इकट्ठा लगाने देखने लगते हैं इससे प्राण सम्बन्धी रोग होने का डर रहता है और गर्म प्रसृत में अर्थात् चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ और आषाढ़ इन चार महीनों में बच्चे की कोठरी में प्राण कभी न रखे क्योंकि कोठरी अति गर्म होने से बच्चे की देह में लाल २ दाग पड़ जाते हैं ॥

बच्चे को प्यार करना चुम्मा लेना हो तो ठीक बच्चे के मुख के सामने अपना मुख रखना चाहिये प्रायः गँवरदल स्त्रियाँ या पुरुष पीछे या बगल में से भट्ट बच्चे का मुख थाँम अपनी तरफ कर चुम्बने लगती हैं इससे बच्चों में दर्द और ऐंठावना हो जा सकता है ॥

जबतक बालक बर्ष डेढ़ बर का न होजाय कभी चक्केले सुलाभा न चाहिये क्योंकि निरे बचपन की बय में विशेष कर जाड़े के दिनों में दूसरे की देख का दम्द (ताप) न पाने से सुखपूर्वक नौद बच्चे को नहों आती, जो स्त्री वद्वत बेहोश होती है। अर्थात् सो जाने पर यह न मालूम हो कि मैं कहाँ पड़ी हूँ और न जगाने से जल्द जागी उसे चाहिये कि एक हाथ की लम्बी और कलाई की बराबर मोटी तकिया सेती समय बीच में रख के ताकि बच्चे का हाथ पैर न दबाया जायः देखने में आया है कि बाबा २ स्त्रियोंके अलमस्त और अवैत सोने से बच्चे बिचारे नौचे दबकर मरगये हैं ॥

ऐसी २ दुर्घटनाओं का कारण मूल में इस टिप्पणी पट्ट का दोष है क्योंकि इतनी छोटो अवस्था में सन्तान होने लगते हैं कि माता खुद अपने ही शरीर की संरक्षण में अज्ञान रहती हैं तो फिर वह बालक का सम्भाल और देख भाल क्या कर सकती हैं ॥

बच्चे का मुख सेती समय कपड़े आदि से भूलकर भी ढका रहने न देना क्योंकि उस अवस्था में शुद्ध वायु श्वास के द्वारा फिफड़े के भीतर जाना वद्वत उचित है अगर मच्छड़, दंश आदि कीटों के काटने का डर हो तो बच्चे को मसहरी के भीतर सेटाये या मुखपर जालदार कपड़ा डाल दें । निद्रा लगती समय चेत करके बच्चों के बदन का कपड़ा मुझ करके गर्दन पर का तो अवश्य ढौला कर देना उचित है ॥

जो बालक आरोग्य होता है वह दूध पीने के अतिरिक्त समय में भी सोया ही करता है । इसमें कुछ शक नहों कि अधिक सोने से बालकों के शरीर में बलाधान और स्वस्थता प्राप्त होती है और अच्छे हृदयपट्ट बलवान लड़के को भी कुछ काल अच्छी तरह नौद न लगनेसे दुर्बल और रोगी होजाते हैं इसो लिये अच्छा उपाय न करके यहाँ की बाण्डाल स्त्रियाँ नौद पाने के लिये बच्चों को अफीम खिलाते लगती हैं जिससे कि बच्चा और भी दुर्बल हो रों २ करने लगता है और अन्त में उस मूर्खा माता के मुख में कालिख लगा यमा-लय को बला जाता है, इस बात का अनुभव किसको न हुआ होगा ? अच्छे पढ़े लिखे लोग तो अवश्य ही कहेंगे कि इस बच्चे को मृत्यु अफीम ही से हुई है । यद्यपि बालकों को अधिक कालतक सोया रहना वद्वत ही उत्तम है परन्तु किसी कारण वय अगर बच्चे को जल्द नौद न आती हो तो नौद लग

जाने के मतलब से कुछ चोपचिप आदि देना अनुचित है कारण यह है कि प्रकीर्ण या पेट में पौड़ा से बच्चे को सुखनिद्रा नहीं लगती अतएव नींद लगती न देख के पेट-साफ कर देना अत्यावश्यक है ।

निम्नलिखित बातें बच्चेवाली स्त्रियों को अवश्य याद रखना चाहिये । जैसे सन्तान के भयन का खटीला उद्भूत होता न होके फरहरा होना चाहिये । बाँबी बच्चे का मुख अपने पेट में दबा के न सुलाये क्योंकि ख़ास रुक जाने का डर है, ऐसा हुआ भी है । बालक पेटकीर्ण (मुँहके बल) न होने पावे बच्चे को चित्त या कर्बवैट सुलाना उत्तम है ।

माता अपने सोने के पूर्व अवश्य याद करके देख लिया करें कि बच्चे का मुँह कपड़े से फँसा तो नहीं है । बच्चे के शिर के नीचे एक गद्दी भी चित्त मुलायम तकिया ज़रूर होनी चाहिये परन्तु ऐसी बड़ी बेदली न हो कि कहीं दबाव आदि के कारण उलट कर बच्चे के मुँह पर आ पड़े जिससे ख़ास रुकने का डर है, चारमा से तीन बार नहीने तक बराबर रोख़मर्मा माता को उचित है कि बालक के मल मूत्र को देख के जान लिया करें कि वह मल मूत्र जैसा होना चाहिये वैसा ही है वा कुछ अन्तर है यदि कुछ अन्तर अर्थात् मूत्र कम करता या मूत्र करते कौशता या मूत्र में चित्त गर्माहट होखे मल अधिक और पतला फटा २ वा दुर्गन्धियुत या एक दो रोज़ होता हो न होखे तो तुरन्त उधका उपाय करें ॥

बालकों की खांसी की दवा ।

चत्तीस, नागरमोथा और मुलेठी इन तीनों की बराबर से कूट कर खूब महीन चूर्ण करले माथा बाँबी रत्तीसे १ रत्ती पर्यन्त है, बालकों की अवस्था मासिक माथा बना शब्द के साथ दिन में ४ बार चटाने से लाभ होता है यदि बालक न चाट सके तो पहिले शब्द में मिला बाद माता के दुग्ध में घोल कर पिहा दे, डाक्टर लोग प्रायः इषीकाकुषाना शब्द के साथ चटाने को देते हैं और खिचिया कर डोमर्स पौडर भी कभी २ दे देते हैं लेकिन बालकों के हकमें यह दोनों चोपचिपों हानिकारक हैं इषीकाकुषाना और हमारे देसी मदार की लड़ की छाँल का चूर्ण, गुण में दोनों बराबर हैं और डोमर्स पौडर में चप्पीम और इषीकाकुषाना आदि वस्तुयें मिली हैं, पर आज कल के लोग डाक्टरों की वचनान्तरि का अवतार मान लिया है ॥

श्रीतला ।

बहुत से रोग हैं जिनका यत्र यथायं न होने से वह रोग बढ़ कर प्राण हरण करता है परन्तु हैजा और श्रीतला की बीमारी यह तो यंत्ररहित रोगी को भीघड़ी यमालय पङ्खा देती है ।

इस रोग का भी आदि कारण विष दूषित वायु है, देखा जाता है कि ऋतु के परिवर्तन में जिस तरह फसली ज्वर या हैजा एक के होते ही नगर भर में फैल जाता है उसी प्रकार श्रीतला का भी स्वभाव है जहाँ एक को निकली तो उसके हेलगेल से और को भी सद्वशा के निकल पाती हैं वैद्यक में श्रीतला को मसूरिका और बिस्फोटक रोग भी कहते हैं और बङ्गालमें इसे वसन्त कहते हैं, यह रोग प्रायः लड़कों के अधिक होता है अच्छी तद्बीर और औषधि न करने से हजारी लड़के बिचारे बिना मौत के मर जाते हैं । देखा गया है पर अफसोस यहाँ के अज्ञान हिन्दू लोग सिर्फ देवी देवता के भरोसे रह कठिन माता में भी दवा नहीं करते, कहते हैं देवी नाराज हो जायगी वस इसी अज्ञानता से असेस्य लड़के अकाल काल ग्रस्त होते जाते हैं, बङ्गधा नेत्रहीन या काने होजाते हैं और बहनों के हाथ पैर लुप्त या टूट्टे होजाते हैं ।

भारत सरकार को तरफ से टीका लगाया जाता है और एतद्देशीय लोग अपनी बुद्धि विहीनता के कारण इससे डरते हैं परन्तु यह कोई नई बात नहीं है प्राचीन लोगों की ज्ञानी सुना जाता है कि इस देशमें भी पहिले (जब सरकार की तरफसे टीका लगाना नहीं जारी हुआ था) माली बगैर टीका लगाते थे और उसे बड़ा लाभ होता था ।

साधारण लक्षण ।

विष दूषित वायु स्वस्थ शरीर में प्रवेश करने से प्रथम तीन चार दिन बालक को ज्वर आता है मुख सुखंरहता है प्यास लगती है बाद शरीर में एक प्रकार छुद् २ फुन्सियाँ निकल पाती हैं और छः सात रोज में मवाद मर पाता है और फुन्सियाँ बड़ी होजाती हैं किसी २ को भयानक ज्वर भी बना रहता है रोग साध्य रहने से रोगी पन्द्रह सोलह दिन में आरोग्य हो जाता है यह रोग एक जन का है बार नहीं होता और किसी २ को दोबार हुआ भी है ।

१—साधारण श्रीतला की बीमारी में औषध न देय यदि कोई उपद्रव जैसे कि अधिक ज्वर, बहुत रोजा, बदन आचना नौद का न आना बारम्बार

चौक छठना या अनर्थक बकना इत्यादि हो तो अवश्य शोषक करना चाहिये ।

२—रोगी को खूब ठण्डे भोजन में रक्खे और दरवाजों में खस या जवासे की टट्टी लगा दे और कुछ नीम की टेरिया बांध दे क्योंकि इस रोग में शीतल उपचार एवं निम्बपत्र का बभनवार बांधना अति हितकर है, लिखा भी है:-

शीतलासु क्रियाकार्य्या शीतलारक्षयामह ।

वध्नियान्निम्ब पत्राणि परितेभवनान्तरे ॥

शीतला रोग में रक्षा के अर्थ सब शीतल हो उपाय करना और घर को भीतर शीतरक्षा नीम के पत्ते बांधना उत्तम है दरवाजे में एक चौद पानी से भर कर रख दे और दरवाजा पानी से हर समय तर रक्खे ।

३—रोगी का बिछौना सफेद और बज्जत सुलायम हो एवं मैला चीने पर ओछा हो बदल देना चाहिये ॥

४—जिस घर में रोगी हो वहां अग्नि और तेज रोशनी न रहनी चाहिये यही कारण है जो शीतला देवी को पूजनमें ज्वन नहीं करते परन्तु:-

कृमिपात भयाद्यापि धूपयेत्स्मरलादिभिः ।

विष दूषित वायु के निराकरणार्थ एवं बहती हुई माता में कृमि न पड़े इस वास्ते राल लोबाग वगैरह का धूप कभी २ रोगी के और समस्त घर में दूत रहना अति उत्तम है ।

५—कोई कतुथ सुखं बस्त्र धारण कर, पान खाकर, माथे में लाल टीका दे के या लालवस्तु ले के रोगी के बरह में न जाय, कारण यह कि ऐसे रोगी की आंख में सुख वस्तु की चमक न पड़नी चाहिये ।

६—यदि रोगी बालक, माताका दुग्ध पीता हो तो उस माताको हिमं मूंग की दाल जवा या गीहूं की रोटी, पुराने चावल का भात और गो का दुग्ध खिलाना चाहिये खेत या हरा वस्त्र पहिरे बहुत थम, क्रोध और उपवास न करे प्रतीक में तेज न लगाने कारण यह कि कदाचित् बच्चे की देह में तेज लग जाय क्योंकि:-

क्षूर्याद्वृण विधानञ्च तैलादीन् वर्जयेच्चिरम् ।

इस रोगमें लेशा जोड़े का विधान है वेशा हो उपचार करना परन्तु तैलादिकों का बहुत दिन वधाव रखना चाहिये ।

७—जब तक शीतला की बीमारी न आराम हो घर में पूरी कचौरी बरा मसाले दार कलिया आदि व्यंजन न बने न मद्य का प्रचार हो क्योंकि भोजन तलने की शब्द एवं गर्म मद्य से रक्त कोप को प्राप्त होता है ।

अथ विस्फोटक ।

(बड़ी मात का कारण)—यह रोग, अति खट्टा तीक्ष्ण (मिर्चा) गर्म दाह-कारक, (धिरका) चार (दाई) द्रव्य के खाने से अजीर्ण से धूप में रहने से, ऋतु के विपरीत होने से (जाड़े में गर्मी और गर्मी में जाड़ा) वातादि दोष कुपित हो चर्म में घुस यह रक्त को दूषित करके अथानक विस्फोटक रोग को उत्पन्न करते हैं, यह रक्त कुपय्य धाव न किया तो माता को न हो के दुग्ध पीने वाले बच्चे को बड़ी रोग होता है परन्तु प्रायः देखने में आया है कि बच्चे को मस्त्रिका अर्थात् छिटी माता अधिक निकलती है ।

बड़ी माता का स्वरूप ॥

अग्निदग्धानिभास्फोटाः सज्वरारक्त पित्तजाः ।

क्वचित्सर्व्वत्र वा देहे विस्फोटा इति ते स्मृताः ॥

जैसे कि भाग से जले के फफोले होते हैं वैसे ही फफोले देह में एक जगह अथवा समस्त देह में रक्त और पित्त के बिगाड़ से ज्वर सहित पड़ जाते हैं अर्थात् को बड़ी माता कहते हैं । वाताधिद्वय में गिर दई फफोलों में दई और कुछ कालापन ज्वर प्यास और जोड़ों में दई होता है ॥

पित्ताधिक्य में ज्वर, दाह, चट्ट दई पिपासा फफोलों का जलद पकना बहना और रक्त में पीला एवं काण होता है । कफाधिक्य में की, अस्थि फफोलों में खाल और रक्त में पाण्डु, वेदना रहित और वज्रत दिनों में पकता है हृन्मज में २ दाप के संचय मिलते हैं ॥

त्रिदोष लक्षण ॥

जो विस्फोटक त्रिदोषज होता है सो दोष में गहिरा, किनारे सँवे कठिन अथपका दाहयुत ललामो लिये, छपा, बेधनो, अति सूच्छा, पीड़ा, ज्वर,

प्रलाप कम्पन और भ्रमकी इन लक्षण युक्त उक्त रोग बहुत कठिन होता है अर्थात् यत्र न होने से रोगी मर जाता है। रक्ताधिक्य और पित्ताधिक्य दोनों का लक्षण एक है ॥

उपद्रव ॥

द्विक्वाश्वसोऽरुचिस्तृष्णा अङ्गसादोऽहृदिव्यथा ।

विसर्पज्वरहृत्तासा विस्फोटानामुपद्रवाः ॥

जो विस्फोटक रोग त्रिदोषजन्य होता और ज्वरकी श्वास, पित्तास अङ्ग प्रियिल हृदय में पीड़ा, विसर्प (फफोले फटजाय लासा सरीखा पानी बहने) ज्वर और जो मचलाता है। तो असाध्य जानिये, इस अवस्था में अच्छे वैद्य का काम है। विस्फोटक की चिकित्सा, छोटी माता का बयान और टीका लगाने का प्रकरण आगे लिखेंगे ॥

मसूरिका (छोटी माता)

इसका भी आदि कारण वही है जो बड़ी माता का है। मसूरिका के पूर्व रूप में ज्वर, खजुरी, शरीर में ऐंठन, अरुचि, भ्रम, लवण में सूजन, अङ्ग और नेत्र लाल होते हैं। प्रायः छोटी माता सरसों या राई के सरीखे होने निकल कर पांच ही बार दिन में मुर्झाय जाती है। दोषों के अधिक कोप होने से अपने २ दोषानुसार मसूर के सदृश सुखं पीले रूखे शीघ्र वेदना युक्त कठिन एवं देर में पकने वाले होते हैं त्रिदोष में नीले रंगकी चिपटी बीष में गहरी बद्धत काल में पकने और पीव बहने वाली होती है ॥

चर्मपीडिका माता ॥

ये माता औषधि के योग्य नहीं होती हैं। इसमें कण्ट का अवरोध, तन्द्रा प्रलापादि अनेक उपद्रव होते हैं। एक रोमान्तिका नामक माता होती है। ये रोमहिद्र समान लंबी लाल रङ्ग की होती है।

और भी अष्टधातु गतादि मसूरिका के लक्षण हैं परन्तु ग्रन्थ बढ़ाने के भय से सम्पूर्ण नहीं लिखा जा सकता ॥

असाध्य लक्षण ॥

प्रवाल (मूंगा) सट्टय लाल, जामुन सरीखे काली, अलसी के फल के समान तथा लोहे की छाल के सट्टय होने से कठिन चिकित्सा समझनी चाहिये । जिस माता के निकलने में खांसी, झुबकी, बेहोशी, तीव्र ज्वर, प्रत्याप देहनी, मूर्च्छा, दृष्ट्या, दाह, घुमरी, मुख नाकसे रक्त गिरना, नेत्र अति लाल कण्ठ में धुरधुर शब्द, खांस और अति उष्ण हो तो जानना कि यह नियय मर जायगा ॥

मसूरिकान्तेष्टोफः स्यात्कर्परेमणि बन्धके ।

तथासफलकेवापि दुर्चिकित्सः सदाशयः ॥

माता के अन्त में किड़नी, पड़वा अथवा कन्धे में सूजन आवे तो असाध्य ही समझना ।

शास्त्र से प्रतिरिक्त परीक्षित असाध्य लक्षण--कई साल की परीक्षा से नियय हुआ है यदि माता के आदाम होने के बाद तीव्र ज्वर, अति प्यास, चांफो, गले में दृढ़ दस्त पतला हो यदि उस अवस्था में सदैव दारु यथायं चिकित्सा न होगी तो नियय है कि उसके वक्तु (जीवर) में शीघ्र भी घटती जा जायगी और आयुर्ध्व नहीं कि किसी न किसी रंग में रक्त जमकर फीड़े होजाय । जत्र रोगी की पानी पीने में क्रोध होगा अर्थात् प्यास हो परन्तु लल समीप जाते ही अनिच्छा प्रकट करे तो ब्रह्मर है कि तीन चार दिन में रोगी मरजायगा । सन् ८० में यद्गत से लड़के सक्त कारण से मरे हैं, डाक्टर लोग द्रिश्य चिकित्सा न जानने के कारण रोगियों की दृष्ट्या की अद्वारेष्टो द्वा द्द के और भी गड़बड़ सड़बड़ कर डालते हैं अन्त में भी नहीं जान सक्ते हैं कि इस रोगी की मृत्यु का कारण ठीक क्या हुआ उन्हें अपने स्वार्थ साधन से काम चाहे भारत बने वा बिगड़े, रहे हकीम भी उनसे माता की बीमारी में यद्गत कम सहायता ली जाती है सो भी हिंदुओं के यहाँ धिलकुल ही नहीं और जिस किष्क के वैद्यों का आज कल प्रचार है वे लोग न तो किसी गुरु के द्वारा शिक्षा पावे न उस शास्त्र का भर्मे बूझें कि जिनसे इन महा कठिन रोगों की जानकारी और उनके आरोग्य करने की योग्यता प्राप्त हो-

शक्ति दक्षिणा या फीस देकर टीका लगवाती थी वही सब चट्टरेछी टीका वालों को गोदनहरा के नाम से कह कर ऐसी छुणा रखती है कि सब लोग थोड़ा २ चन्दा करके टीकावालों को इस लिये राजी करते हैं कि वे उनके बालकों की टीका न लगावें । इसमें विशेष कारण टीका से परहेज करने का यही है कि टीका के परिष्को में अधिक सुसज्जान होते हैं यदि अच्छे परिष्कृत पड़े लिखि हिंदू विशेष कर ब्राह्मण टीका के काम में नियत किये जाय तो यह काम पूर्णरूप से प्रचलित होजाय नहीं तो रंगीझूठे कागज सकारि देख लिया करे कारवाई कुछ औरही होती है जिसको हम जानते हैं ।

हमारे विचार में टीका दिखाना बहुत अच्छी बात है पर जिनसे न हो- सके १५ संख्या के लेखानुसार रोग आ यत्र करो और माता पूज जाने के बाद कभी भोखा मत खाओ तुरन्त भूषल औषध द्वारा अवस्थानुसार (भीतल चीनी का चूर्ण १ । २ रत्ती दो २ घण्टे में जल के साथ पिलाओ) आभ्यन्तरिक ज्वरता साफ करके तत्पश्चात् कुछ दिन पर्यन्त जैसे सरबत बनार, सरबत सन्दल, सरबत बनप्पा, सरबत नीलीफर, सरबत चन्दाय, चर्क गुलाब, चर्क धनिया, चर्क कासनी, या कासनी के पत्तों को कूट कर रस निकाल लिये या फाड़ के उसमें मिथी डालकर पिखावे, रुधिर के साफ करनेमें इसके बराबर दूसरी औषध नहीं है परन्तु कासनी के पत्तों को खोना न चाहिये क्योंकि उसका पसर जाता रहता है ॥

माता की चिकित्सा ।

उपद्रव रहित माता में सेवाय बाध यत्र के औषध न करना चाहिये । यदि ज्वर हो तो स्नान न करना बहुत दूबा में न रखना, कभी २ माँग का चूर्ण देह में लगा देगा । माता के प्रारम्भ में तीन दिन दोनो समय दो तीन दाना कासीमिर्च के साथ रुद्राक्ष को बाँधी पानी में घोट कर पिखावे जब देखे कि माता का छोर नहीं घटता है पिलाना बन्द कर देय । यदि माता सम- डुती हुई न देखे तो एक दो बदाम को पानी में भिगा कर देय । छिछला निकाल पानी में घोट कर पिला देय या ऐगही पिला देय, दिन में दो तीन दफे देने से बेठी हुई माता जल भर जाती है ।

अगर रोगी बालक बहुत रोवे और अपने हाथों से देह खलुवावे और बदन नीचे तो पोरेने के सूखे दो या एक फल को कुचन कर एक मही के पाच में रोंत की मिठा दे और सबेरे खूब मल कर जान ले और जरा ची मिथी मिला कर पिला दे इसी प्रकार सबेरे भिजोंवे तो घाम को पिलाये ।

बाले बच्चों के पैर के तलुवा और हथेरी में भी माता निकल आती है जिससे की तलुवा अधिक जलता है बाहिये कि बांवल के धोवन से दिन में कई बार तलुवे को सौंभ दें ।

पाक काल में सब मसूरियों की वायु सुखाता है तब उंचण (तंदी प्रोष) देना बाहिये, मुख मुलेठी, मुनक्का, मीठा बनार और मिथी संयुक्त दुग्ध फाड़ के उसी का पानी पिलाना इससे जलदी पकती है और वायु भी कोप नहीं करता परन्तु पाक देख लेना । अगर वायु कोप से पेट में दर्द पेट फूलना यशोर ऐंठन या कम्पन हो तो किञ्चित् सेंधव नोम युक्त मांसरस के साथ कुछ मीजन देना, थोड़ी ची बिजयधर को लकड़ी और खैर, सेर पाध सेर पानी में गरम कर छाग ले और वही पानी पीने की दिय और बाबदस्त जीने के लिये भी उसी जल को रखे । मुख में छाले पड़ गये हों या मधून २ फुन्धियां (माता) निकल आई हों तो जाई के पत्ते, मजीठ, दासहल्ली, सुपारी, चां-वला और मुलेठी इन सबकी सम भाग के ११ हिस्से जल में छाथ कर कुत्तो करावे यदि अति बालक हो तो खेत खैर सुपारी दोनों को पानी में पीस पीस कर दिय ।

दगा पूर्ण और मुलेठी की पानी में घोट, उसे अधिक पानी में घोल कर रोज २ सस जल से रोगी की पांखों की सौंभने से नेत्र गाय या फूली बादि पड़ने का भय नहीं रहता । यदि माता मज्जती हों तो बड़, पीपर, पाकरि, गूलर और आम इनकी छाल या पंखों को खुम्क पूर्ण कर सुरकावे, किसी किसी का मत है कि जड़ली कण्डों की राख बुरकाना अति लाभदायक है । माता में कृमि न पड़े इसलिये कभी २ राख खोवान बादि की घुनी देना भी उत्तम है । अगर माता के फोड़े दूषित हो जाय तो घी से ही जोक लगावा कर रक्त निकलवा दे ॥

श्रीतला की टीका वा छाप (लिम्फ)

पूर्व में यह बात लिख चुके हैं कि पूर्वकाष्ठ में माली लोग टीका लगाते थे उसी का अनुकरण अब सरकार की ओर से होता है, इसमें यह नहीं कि टीका लगाने से माता का जोर घट जाता है और टीका लगाने में बच्चे को कुछ क्षय भी नहीं होता है परन्तु अज्ञान वश लोग इससे डरते हैं सरकार की तरफसे भी प्रथम हिंदुस्तानी के रीयानुसार टीका लगाया जाता था वह यह था कि बच्चे के हानेमें से जरासा चिप लेकर गलाफा (नस्तर) की नोक से आरोग्य बालक के बांह में चर्म के अभ्यन्तर प्रवेश कर देते थे वस जब चावला पड़ गया तो उसी का चिप लिया या जब दांता मुरझाय गया तो दिउली को उतार कर उसमें जरा सा पानी डाल महीन घोंट लेई सा बना टीका के काम में लाते थे और अब भी कितनी जगह इसी तरह से टीका लगाया जाता है परन्तु प्रायः देखा गया है कि टीका लगाने पर भी कालान्तर में माता निकल आती है ।

पचासो वर्ष गत हुआ होगा कि डाक्टर जेनर नामक एक अंगरेज ने गायन टीका का प्रकाश किया अर्थात् गोधों के थनों पर जो दाने निकलते हैं उसके चिप से टीका लगाना प्रचार किया और उसका नाम "वैक्सिनेसन" रक्खा अब अधिकतर सर्वत्र उसी से टीका लगाया जाता है और इस बात के लिये सरकारी कानून हो गया है कि जब बच्चा कुछ सयाना हो जाय तो उसके मा बाप उसे अवश्य टीका लगवा दें और बाज २ यह कहते हैं कि सिर्फ मुम्बई के लिये सरकारी कानून है अन्य देशों में ऐसा कानून नहीं है परन्तु गवर्नमेण्ट की ओर से टीका लगानेवाले हिंदू मुख्तयान दोनों जाति के लोग नियत हैं और जो कोई इच्छा प्रकट करे कि हमारे बच्चे को टीका लगा देओ तो वे नियमित लोग धर्मार्थ टीका लगा दें और २ हीपों में इसका अधिक प्रचार है । विलायतमें एक भी लड़के ऐसे न निकलेंगे कि जिनके टीका न लगाया गया हो, इसमें शक नहीं कि टीका लगाने से बहुत अधिक लाभ देखा गया है और हिंदू लोग जो प्रायः चरसे डरते हैं, कई कारण हैं प्रथम तो यह कि देवी अप्रसन्न होगी । दूसरे अप्रिचितों में पूर्वहीसे यह ख्यालात लगे है कि सरकार अपने मतलब (जिसकी बाह्म से दूध निकलेगा उस बच्चे

अंगर रोगी बालक बहुत रोवे और अपने हाथों से देह खज्जवावे और बदन नोचे तो पोस्ने के सूखे हो या एक फल को कुचल कर एक मट्टी के पात्र में रात को भिगा दे और सुबह खूब मल कर छान ले और जरा सी मिथी मिला कर पिला दे इसी प्रकार सुबह भिजोवे तो शाम को पिलाये ।

वाजे बच्चों के पैर के तलुवा और हथेली में भी माता निकल आती है जिसे भी तलुवा अधिक जलता है चाहे कि चावल के धोवन से दिन में कई बार तलुवे को सौंघ दें ।

पाक काल में सब मसूरियों को वायु सुखाता है तब हंघण (तरबोपध) देना चाहिये; गुचं मुलेठी, मुनक्का, मीठा पनार और मिथी संयुक्त दुग्ध फाड़ के उसी का पानी पिलाना इसे जल्दी पकतो है और वायु भी कोप नहीं करता परन्तु पाक देख लेना । अगर वायु कोप से पेट में दर्द पेट फूलना और ऐंठन या कम्पन हो तो किञ्चित् सेंधव नीम युक्त मसूर के साथ कुछ भोजन देना, थोड़ी सी बिजयशार को लकड़ी और खैर, सेर साध सेर पानी में गरम कर छान ले और बड़ी पानी पीने को देय और आबदस्त लेने के लिये भी उसी जल को रखे । सुख में छाती पड़ गयी हो या महीन २ फुन्डियां (माता) निकल आई हों तो छाई के पत्ते, मजीठ, दासहल्ली, सुपारी, चावल और मुलेठी इन सबको सम भाग के १६ हिस्से जल में छाछ कर कुल्लो करावे यदि शक्ति बालक हो तो खेत खैर सुपारी दोनों को पानी में पीस लेप कर देय ।

दगापूर्ण और मुलेठी को पानी में घोट, उसे अधिक पानी में घोल कर रोज २ सस जल से रोगी की आंखों को सौंघने से नेत्र नाश या फूली चादि पड़ने का भय नहीं रहता । यदि माता बहती हो तो बड़, पीपर, पाकरि, गूलर और आम इनको छाल या पत्रों को खुसक पूर्ण कर चुरकावे, किसी किसी का मत है कि चड़ली कण्डों की राख चुरकाना शक्ति लाभदायक है । माता में कुमि न पड़े इसलिये कभी राख खोवान चादि की धूनी देना भी उत्तम है । अगर माता के फोड़े दूधित होजाय तो शीघ्र ही जीक लगावा कर रक्त निकलवा दे ॥

श्रीतला की टीका वा छाप (लिम्फ)

पूर्व में यह बात लिख चुके हैं कि पूर्वकाल में माली लोग टीका लगाते थे उसी का अनुकरण अब सरकार की ओर से होता है, इसमें शक नहीं कि टीका लगाने से माता का जोर घट जाता है और टीका लगाने में बच्चे को कुछ क्रोध भी नहीं होता है परन्तु अज्ञान बच लोग इससे डरते हैं सरकार की तरफसे भी प्रथम हिंदुस्तानी के रीथानुसार टीका लगाया जाता था वह यह था कि बच्चे के दानेमें से ज़रासा चिप लेकर थलाका (मस्तर) की नोक से आरोग्य बालक के बांह में चर्म के अभ्यन्तर प्रवेश कर देते थे वह जब घावला पड़ गया तो उसी का चिप लिया या जब दाना सुरभाय गया तो दिखली को उतार कर उसमें ज़रासा पानी डाल महीन घोंट लीई सा बना टीका के काम में लाते थे और अब भी कितनी जगह इसी तरह से टीका लगाया जाता है परन्तु प्रायः देखा गया है कि टीका लगाने पर भी कालान्तर में माता निकल जाती है ।

पचासी वर्ष गत हुआ होगा कि डाक्टर जेनर नामक एक अंगरेज ने गायन टीका का प्रकाश किया अर्थात् गीर्षों के घनों पर जो दाने निकलते हैं उसको चिप से टीका लगाना प्रचार किया और उसका नाम "वैक्सिनेशन" रखा अब अधिकतर सर्वत्र उसी से टीका लगाया जाता है और इस बात के लिये सरकारी कानून हो गया है कि जब बच्चा कुछ सयाना होनाय तो उसको मा धाप उसे अवश्य टीका लगवा दें और बाज २ यह कहते हैं कि सिर्फ मुस्लिमों के लिये सरकारी कानून है अन्य देशों में ऐसा कानून नहीं है परन्तु गवर्नमेण्ट की ओर से टीका लगानेवाले हिंदू मुसलमान दोनों जाति के लोग नियत हैं और जो कोई इच्छा प्रकट करे कि हमारे बच्चे को टीका लगा देओ तो वे नियमित लोग चर्मार्य टीका लगा दें और २ हीपों में इसका अधिक प्रचार है । विधायक में एक भी लड़के ऐसे न निकलेंगे कि जिनके टीका न लगाया गया हो, इसमें शक नहीं कि टीका लगाने से बहुत अधिक लाभ दिखा गया है और हिंदू लोग जो प्रायः सरसे डरते हैं, कई कारण हैं प्रथम तो यह कि देवी अग्रमन्न होगी । दूसरे अशिक्षितों में पूर्वहीसे यह ख्यालत जमे है कि सरकार अपने मतलब (जिसकी बाह से दूध निकलेगा उस वच्चे

को सरकार लेगी) से टीका जारी किया, सम्भावितता जो ज्ञायं मुसलमानों से छूने में घृणा करते हैं वे किस तरह अपने बच्चों को उनसे टीका लगवाना पसन्द करेंगे कभी नहीं । प्रजावत्सल सरकार यदि इत्तपित्त से बच्चों को पारोप्य प्रदान करेगा चाहे तो अवश्यमेव इस काम में सिर्फ ब्राह्मण ही भरती करे इससे फिर हिंदूमात्रको परहेज न होगा ॥



टीका लगवाने के साधारण नियम ॥

१—जितना शीघ्र बच्चे को भीतला कराल खपी परिष्ट से बचा लेने का उपाय पूर्व ही से करना अति उत्तम है । यदि बालक पारोप्य और सबल हो तो दोही मासको अवस्थामें टीका दिला देना कोई अंधेरा नहीं है क्योंकि बच्चे की अवस्था जितनी ही अधिक होती जायगी उतनी ही टीका का स्थान हाथों से गिलार बिलार छानने का उद है और एक बार छाप लगा देने के बाद यदि सात वर्ष बीतने पर फिर टीका लगवा दिया जाय तो माता निकलने का खटका अल्प पर्यन्त न होगा ।

२—खूब सावधानता से टीका (प्रथम ही जाँच लेय कि इस सूची से किसी रोगी बच्चे तो नहीं गिरे गये हैं इत्यादि) लगाना उचित है, टीका देने के दो तीन दिन बाद तीन चार दिन तक बहुधा बच्चों की भीमा ज्वर, मुह भुय्य, रात में अल्प निद्रा और किसी २ को दस्त पतला बंरा रहता है छः सात दिन बाद टीका के चङ्ग और गरि उमड़कर लाल हो जाता है और भीठी २ टपक भी होती है परन्तु तीन चार दिन के बाद पाप आराम हो जाता है औषध करना उचित नहीं है ।

३—जिस में बच्चे टीका के स्थल को न मलने पावे इस लिये उनके पंजा या कुरता की याँही ढीली रखनी चाहिये, टीका के स्थानमें सूजन और दर्द विषेप मालूम हो तो उसके चङ्ग और नारियल का तेल या मक्खन या घी लगा दे, टीका सूख जाने पर पपड़ी को हाथ से न उखाड़े चापही चाप सूख पर गिर जाने दिय पाकी का बचाव रखना लाभ दायक है ।

आयुर्वेद ।

यह अथर्व वेद का उपांग है । जैसे ऋग्वेदादिकों के उपांग घनुर्वेदादि हैं । ब्रह्मा जी ने सृष्टि के पूर्वही एक सङ्ग्रह अध्याय युक्त एक छल श्लोक आयुर्वेद बनाया, प्रथम, एकही भाग था मनुष्यों का अल्प आयुष्य बुद्धि, पराक्रम तथा बीर्य हीन देख ऋषियों ने निम्नलिखित नामोंसे साठ भाग कर दिया ॥

१-शल्य (अस्र चिकित्सा) २-शालाक्य (मस्तिष्क सम्बन्धी रोगों के छक्षण और शांति) ३-कायचिकित्सा (ज्वरादि रोगों का शमन करना) ४-भूत-विद्या (यंत्र मंत्र वज्र दानादि उपाय) ५-कीनार भृत्य (दाश रक्षण, धात्री, शिक्षा) ६-अगदतंत्र (विष पीड़ित मनुष्यों की चिकित्सा) ७-रसायन तंत्र (शीघ्र बुढ़ापा न होने की विधि) ८-बाजी करण तंत्र (बीर्य वृद्धि तथा स्त्री समानता में अति आनन्द उत्पन्न होने के उपाय) इसी को आयुर्वेद का अष्टांग कहते हैं, जिन्हें विस्तार सहित जाने लियेंगे ॥

आयुर्वेद की परम्परा ।

प्रथम ब्रह्मा जी ने आयुर्वेद को प्रगट कर दक्षप्रजापति जी को पढ़ाया, दक्षप्रजापति जी ने यह विद्वान् मूर्य के पुत्र अश्वनीकुमार को पढ़ाया, यह महाशय वैद्यक के यह भारी पण्डित हुये, एक समय ब्रह्मा का शिर भैरव ने काट लिया था अश्वनीकुमार ने जोड़ दिया, तब से नीर प्रतिष्ठा हुई और यज्ञ में भाग पाने लगे । देवासुरसंघाम में दैत्यों से घायल हुये देवताओं का घाय तुरन्त अच्छा कर दिया, इसी विद्याके बल से इन्द्र का भुजस्तंभ, पूषा के गिरे दांत, मग देवता के फूटे नेत्र और चन्द्रमा का समरोग अच्छा कर दिया । भृगुवंशी स्वयंभुवशपी जांत के अंधे और अति बृद्ध हो गये थे अश्वनीकुमार ने उन्हें एक ऐसी

भीषण का जल बनाय स्नान करा दिया कि यह अति सुन्दर कमल के समान नेत्र युक्त मने। हर रूप १६ वर्ष के युवा हो गये, अश्वनीकुमार से पढ़ कर इन्द्र ने आत्रेय मुनि को पढ़ाया, आत्रेय बड़े भारी वैद्य हुये जिन्होंने ने आत्रेयसंहिता नामक ग्रंथ रचा और अग्निवेश, मेघ, जातूकर्ण, पराशर, हारपाणि और हरीत को आयुर्वेद पढ़ाया, वे सब महाशय भी अपने २ नाम की संहिता और ग्रंथ रचते भये जैसे अग्निवेश रचित अ-
जूननिदान, और हरीत रत हारीतसंहिता आदि ॥

भरद्वाज मुनि ।

भरद्वाजसंहिता के देखने से ज्ञात हुआ कि एक समय हिमालय के चन्द्रिकटवर्ती स्थान में बड़े २ तेजस्वी स्वाध्याय में तत्पर ऋषिगण पर-
स्पर विचार करने लगे कि धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष का मूल यह शरीर है और इसमें रोग होने से जप, तप, स्वाध्याय, धर्म ब्रह्मचर्य आदि सब नष्ट हो जाते हैं यहाँ तक की निरन्तर स्व शरीर रक्षा की चेष्टा रहित होने से शीघ्र ही कालप्रप्त होगा पड़ता है इसलिये शरीर का पालन मुख्य कर्तव्य है ऐसा सुन सब की तरफ से भरद्वाज मुनि इन्द्र लोक में गये वहाँ इन्द्र से आयुर्वेद का मूल तत्त्व प्राप्त कर लौट आये उन्होंने ने जापयोग के अनेक ऋषियों को आयुर्वेद पढ़ाया और भरद्वाज संहिता नामक ग्रंथ ग्रंथ बनाया ॥

चरक मुनि ।

यह महाशय आत्रेय मुनि के पुत्र हैं इनका दत्तान्त इस प्रकार लिखा है कि जय भगवान ने मत्स्यावतार ले वेदों का उद्धार किया सभी भयस्था में उक्त मुनि ने सांगोपांग आयुर्वेद पढ़ कर रोगार्त मनुष्यों के कल्याणार्थ मर्त्यलोक में अवतार किया और चरकसंहिता नामक एक ग्रन्थ बनाया इनको लोग शेष का अवतार भी कहते हैं ॥

धन्वन्तरि ।

पुराणों से जाना जाता है कि धन्वन्तरि का जन्म समुद्र से हुआ है एक समय इंद्र ने भारत के प्राणी मात्र को रोगातुर देख धन्वन्तरि से कहा कि आप मनुष्यों के कल्याणार्थ काशी के राजा का तन धारण करें तब धन्वन्तरि जी ने इंद्र से पट्ट कर के काशी के राजकुल में जन्म ग्रहण किया और दिवोदास इस नाम से प्रसिद्ध हुये, यह महात्मा बाल अवस्थाही से विरक्त थे। अनेक तपश्चर्या में प्रवृत्त हुये परन्तु ऋषियों ने इनको काशी के राज्यपद पर बैठाया, सत्त काशीराज बड़े भारी वैद्य हुये । कुछ काल के पश्चात् विश्वामित्र ने अपने पुत्र सुश्रुत से कहा कि हे गुरु दिवोदास काशी के राजा साक्षात् धन्वन्तरि हैं तुम काशी में जाओ। वगसे आयुर्वेद अध्ययन करके लोकका उपकार करो, सुश्रुत पिता की आज्ञा स्वीकार कर एक सौ ऋषियों के पुत्रों को साथ ले काशी में गये और अष्टांग आयुर्वेद अध्ययन कर सांगोपांग समस्त ऋषि पुत्रों को पढ़ाया और वैद्यों के उपकारार्थ सुश्रुतसंहिता अपने नाम का ग्रन्थ रचा, यद्यपि मनुष्यों के विविध कल्याण एवं देह रक्षार्थ अनेक ग्रन्थ पृथ्वी तथा में विख्यात हैं परन्तु सुश्रुत जीना निदान शारीरिक और वाक्त्र निकृत्ता आदि विषयों में अद्यांगण्य और माननीय है ऐसा दूसरा नहीं इसके अध्ययन से वैद्यक मन्त्रालयी समस्त शंका निवृत्त हो जाती हैं ऐसा लिखा है कि जिन वैद्यों का सुश्रुत नहीं जाता वे चार हैं और राजा से मंत्र दण्ड पाने योग्य हैं ॥

नाडीज्ञान ।

आयुर्वेदाभ्युपगो (वैद्य) को अत्यन्त रोग के पहिचान के लिये नाडी ज्ञान अवश्य होना चाहिये क्योंकि बिना नाडीज्ञान के रोग की साध्या-उपाध्य परीक्षा और रोगी के जीने मरनेकी अवधि नहीं नाछूट हो सकती

जैसे वैद्यकशास्त्र में जाननेवाले को विशेष कर नाड़ी को ज्ञान, हाकूर को विशेष कर जिह्वा और आंख की पहिचान, हकीम को विशेष कर मूत्र परीक्षा में चित्त अधिक देना चाहिये । इसलिये विचार है कि अब हम अपने पाठकगणों को संक्षेप से वैद्यक के संपूर्ण अङ्गों का मतला दें कि जिससे वे अपनी और अपने कुटुम्ब मातृ की चिकित्सा कर लिया करें किसी मूर्ख वैद्य या बाबाजी के धोखे में जाकर घन और प्राण दोनों न गंवायें ॥

जीव धारियों के स्थूल एवं सूक्ष्म सब साढ़े तीन कोटि नाड़ी हैं वे समस्त नाड़ी नाभि मूल में बंध ब्रह्म ऊर्ध्व और अधस्विति हैं । एही सब नाड़ियां आपस में एक के साथ एक मिलकर इस शरीर के ऊपर भाग में जाल के समान बन्धी हैं जिसे अंगरेजी में (सेस्यूलारटिखु) कहते हैं अर्थात् एक प्रकार जाल सदृश जित्नी । इसी प्रकार मनुष्य के देह में साढ़े तीन कोटि रोग भी हैं और रोग (बाल) की उत्पत्ति नाड़ियों की मल से है वे सब नाड़ी मुख द्वारा घर्मे (पसीना) बिन्दु श्राव होता है । नाड़ी तीन नाम से प्रसिद्ध है १ घननी से २४ हैं भोजन का सारभूत रस इन्हीं नाड़ियों के द्वारा बहान होता है इसमें इसे रस बाहिनी नाड़ी कहते हैं । वे नाभि मूल के १० नाँवों के गर्ह हैं यात मल मूत्र, शुक्र, और अन्न रस नाँवें पशुपाना उनका काम है १० ऊर्ध्व गानी हैं वे शब्द रस गंध स्वांस जंभाई उच्चारण और तृणा शक्ति इन सब का अपनी शक्ति से ताकत देती हैं और दो २ तिर्यग (टेंढ़ी) वे के फैली हैं । नाभीके मध्य में सुषुम्ना नामक एक बड़ा नाड़ी है जिनमें कि संपूर्ण नाड़ियां जोड़के सगान लिपटी हैं । दूसरी का नाम शिरा (भेदन) है वे सात ही हैं यह रक्त को बहान करती हैं इसमें रक्त बाहिनी कहलाती हैं । तीसरे का नाम स्रापु जिसे अंगरेजी में (नर्भ) कहते हैं मुख्य नी से हैं इनका काम है पसीना को बाहर करना और उसी मूल छिद्र द्वारा लेपन तैलमर्दन आदि पदार्थ शरीर में प्रवेश करते हैं ॥

प्रधान चतुर्दश नाड़ी ।

हेहा १ पिङ्गला २ सुषुम्ना ३ सरस्वती ४ मारुणी ५ पूषा ६ हस्तिजिह्वा ७ यशस्विनी ८ विश्वोदरी ९ कुहू १० शङ्खिनी ११ पद्मस्वनी १२ मलम्बुषा १३ गांधारी १४ यही चतुर्दश नाड़ी हैं—तिनमें से १० नाड़ी निम्नलिखित १० वायु के साथ दशेन्द्रियों के मार्ग में बहान करती हैं ॥

दश वायु ।

प्राण १ अपान २ समान ३ उदान ४ व्यान ५ नाग ६ कूर्म ७ कूकर ८ दिवदत्त ९ घनंजय १० यही १० वायु इडा प्रभृति दश नाड़ियों में संचार करते हैं । नाभिका के वाम भाग में इडा, दक्षिण भाग में पिङ्गला और ब्रह्म रंध्र में सुषुम्ना है इसी तरह वाम नेत्र में गांधारी, दक्षिण में हस्तिजिह्वा, दक्षिण कर्ण में पूषा, वाम कर्ण में यशस्विनी, मुख में मलम्बुषा, कण्ठ और गुदा द्वार में शङ्खिनी इस प्रकार दश द्वार को आयुध कर के दश नाड़ी स्थिति हैं ॥

नाड़ी स्पर्शन विधिः ।

वेद्य रोगी के कूर्पर (कलाई) भाग को अपने वाम हस्त द्वारा हवा की और दक्षिण हस्त की अंगुलित्रय उस के अंगुष्ठ मूल में आयुगति विशिष्ट नाड़ी को सर्वथा परीक्षा करे वेद्य का कर्तव्य—वेद्य यौवानन्तर प्रातस्संध्यादि कर्म में निवृत्त हो मुख पूर्वक आसन पर बैठ एकाग्र चित कर रोगी को मल मूत्र त्याग कराके नाड़ी का स्पर्शन द्वारा परीक्षा करे । पुरुष के दाहिने और स्त्री के बायें हाथ की नाड़ी देखे । इसका कारण यह है कि “स्त्रीणा मूढं मुखं कूर्मं पुषां पुन रधो मुखः” स्त्रियों के नाभि में कूर्म (जो एक प्रकार की लहत् नाड़ी है) का मुख ऊपर और पुरुष के अधोमुख है इस से स्त्रियों के वाम नाड़ी द्वारा शरीर के मुख दुःख का ज्ञान होता है और पुरुष के दाहिने हाथ के अंगुष्ठ की छड़ में जो नाड़ी चलती है प्रथम वायु की दूसरी पित्त और तीसरी कफ की जानना । वात की नाड़ी सर्प और जोक इत्यादि ज्ञान-

वरों की भांति तिरछी बांकी चाल से चलती है । पित्त कि कौशा हिरन और मेढक आदि की तरह फुदकती-झुई चलती है । कफ की नाड़ी चंम और कबूतर की नाई धीरो चाल से चलती है जब रोग दों विकारों से होता है तो नाड़ी की चाल भी दों दोंधों से मिश्रित हो जाती है जैसे वात और पित्त के विकार से जब रोग उत्पन्न होगा तो नाड़ी की चाल भी सर्प और मेढक की चालों से संयुक्त रहैगी इत्यादि और भी जानना । सन्निपात अर्थात् तीनों दोंधों के मिश्रित होने से नाड़ी की गति तीतर और बटीर की चाल चलती है । ज्वर के कोप में नाड़ी गरम और जलदी २ चलती है । काम और क्रोध में नाड़ी वज्रत जलदी, भय चिन्ता और भोक को नाड़ी क्षीण (धीरी) मन्दान्नि और धातु क्षीण वाले को नाड़ी अति धीमी चलती है । रक्त विकार वाले की नाड़ी गरम और भारी तथा आमोतिघार, आदि उदर व्याधि वाले को नाड़ी लाई ज़ये भैंसा के समान धीरी और भारी चलती है । अग्नि दीप्त वाले की नाड़ी जलकी और जलदी, आरोग्य, सुस्थ की नाड़ी चलवती भूख की नाड़ी चपल और भोजन किये ज़ये की नाड़ी स्थिर चलती है ॥

प्रकृत्यानुसार नाड़ी ।

वात प्रकृत वाले को नाड़ी क्षिप्र और सूक्ष्म गति होती है, पित्त बांकी की तप्त दीर्घ और अति शीघ्र वाहिनी होती है, कफ वाले की भांरी और धीमी गति होती है । परन्तु सिर्फ नाड़ीही के भरोसे न रहें; रोगों की अवस्था बलावल आदि जपरी-दशा को देख लें जैसे कि दुर्बल, धातु क्षीण, दीर्घ रोगी और सुजाक वाले की नाड़ी अति धीमी चलती है, और कफ वाले की भी धीमी चलती है पित्त वाले और कठिनाहारे की नाड़ी एक सी होती है, किसी कारण से जब मनुष्य के शिर पर गरमो चढ़ जाते हैं तो वह विज्ञेय हो जाता है उस अवस्था में भी नाड़ी धीमी चलने लगती है, वेद लाग भोत की नाड़ी जान रस देना आरम्भ कर देते हैं सुतरां रोगी शीघ्र ही यमपुर को गमन कर जाता है वस उस समय अवश्य शोधक यंत्र (लेंक्स) आदि का अनुसन्धान करलेगा उचित है । इसी से प्रायः सर्वाङ्ग लक्षणों से अनभिज्ञ वेद धोका खाजाते हैं ॥

प्रातःकाल में नाड़ी स्निग्ध मयी, मध्याह्न में चण्णा, सायंकाल में बेग-वती और रात्रि में बेग रहित होती है यह स्वभावज गुण है ॥

मृत्यु नाड़ी लक्षणम् ।

जिस रोगी की नाड़ी चण में बेग से गमन करे और चण में धीमी हो के बन्द हो जाय तो जानना कि सात रोज के अभ्यन्तर में इसको मृत्यु अवश्य होगा ॥

आभ्यन्तरिक अतिशय दाह से यदि नाड़ी शीतल एवं अति मन्दगत हो तथा भीतर शीत होने से जिगकी नाड़ी चण्णा और बेगवान हो जाती है उसकी मृत्यु निश्चय होती है ॥

जिसकी नाड़ी की गति ऐसी मन्द हो जाय कि देखने से बिल्कुल पता न लगे चाहे वह रोगी की इन्द्रियां सब चैतन्य हो बैठने उठने की शक्ति भी बनी हो परन्तु वह तीव्र प्रहर में अवश्य मृत्यु को प्राप्त होगा, ऐसा हम ने कई एक रोगियों को देखा है ॥

पतिराःसन्धितोक्षेदो नष्टशुक्रसंयतोभवेत् । शाम्यतेचिस्मय-
स्तस्य नक्षिन्मृत्युकारणम् ॥

(पतिरा) वंश स्वान से गिरा हो, सन्धियों (जोड़ों) में चोट लगी हो, नष्ट शुक्र अर्थात् योर्ग रहित एतादृश मनुष्यों की नाड़ी मृत्यु सङ्ग होती है, परन्तु मृत्यु का कारण न जानना चाहिये ॥

रोग रहित अपमृत्यु नाड़ी का लक्षण ।

शरीर में कोई रोग नहीं है और किसी कारण से मृत्यु हो रही है तत्समय नाड़ी सन्निपात सङ्ग हो जाती है ॥

डाक्टरीय मतानुसारेण नाडीज्ञानम् ।

कल्पकाल में एक निमिष्ट में नाड़ी की गति १४० बार होती है, तत् ऊर्ध्व एक वर्ष पर्यन्त आरोग्य बालकों की नाड़ी १३० बार चलती है, उनके ऊपर द्वितीय वत्सर पर्यन्त एक निमिष्ट के मध्य में ११० बार चलायमान होती है, द्वितीय वर्ष के ऊपर तृतीय वर्ष पर्यन्त १८० बार गति विशिष्ट होती है, त्रि वर्ष के ऊपर सप्त वर्ष पर्यन्त एक निमिष्ट में ९० बार, तिसके ऊपर १४ वर्ष तक ८४ बार और चतुर्दश वर्ष के ऊर्ध्व त्रिंशत् (३०) वत्सर पर्यन्त ८० बार तथा पंचाशत् (५०) वर्ष पर्यन्त एक निमिष्ट में ७५ बार नाड़ी प्रकंपमाना होती है, पचास वर्षके ऊपर अश्वी वर्ष पर्यन्त स्वरूप्य मनुष्यों की नाड़ी की गति ६० बार चलती है तत्पश्चात् वयः और अवस्था क्रम करके उत्तरोत्तर नाड़ी की गति क्षीण होती है, उक्त अवस्थाओं में यदि उक्त संख्या से अधिक नाड़ी की गति हो तो गरमी जानना और न्यून हो तो शर्दी जानना चाहिये । डाक्टरी विद्या में नाडीज्ञान का प्रकर्ण विस्तार पूर्वक नहीं है इसी कारण डाक्टरों के नाड़ी द्वारा रोग का पथार्थ ज्ञान नहीं होता है ॥

रोग परीक्षा ।

पूर्व में नाड़ी द्वारा रोगों की परीक्षा तथा साध्य/असाध्य जानने की रीति लिख आये हैं परन्तु सिर्फ नाड़ीही देखने से रोगों का पथार्थ ज्ञान नहीं होता इसलिये नेत्रादि अष्टांग परीक्षा भी संक्षेपसे लिखता हूँ जाशा है कि पाठकगण अवश्य इसे अवलोकन करके हमारे परिश्रम को सुफल करेंगे ॥

नेत्र परीक्षा—मात रोग वाले के नेत्र रुध्र भटरीला तथा रक्त वर्ण और कुछ भीतर को दबे हुये और तीव्र उधरादि रोगों में एकटकी लगाये देखते हुये होते हैं और मात प्रकृत मनुष्य की आंख प्रायः तेजाविशिष्ट हो

लक चज्यल और पुतली कृष्ण वर्ण होते हैं । पित्त रोग वालेके नेत्र पीत जयवा लाल रक्त सदृश किम्बा हरे रंग के होते हैं दाह युत और दीप देखने में घटेश होता है, पित्त मिजाज वाले जन की आंखों में लाल २ छोरे नेत्र बड़े कटीले और तारे अधिक कृष्णवर्ण होते हैं कफ कोषमें नेत्र विच्छन्न हर समय में पानी भरा सा रहे श्वेत मन्दज्योति और तेज हीन होते हैं, इस प्रकृत वाले की आंखें प्रायः श्वेत और जलवान होती हैं मिश्रित दोषों में मिले चुले रंग होते हैं और त्रिदोष (सन्निपात) में सब रंग मिल जाते हैं परन्तु रक्त वर्ण अधिक होते हैं । कनल रोग में नेत्र पीले हरदी के समान, हलीनक में हरे, मीह ज्वर में कुछ नीले, ज-साध्य तपेदिक (यक्ष्मा) में श्वेत दूध के समान अधिक रक्त श्राव और हिजे में रक्तिन धूम्रवर्ण एवं भीतर की घेठे डुपे होते हैं । हृदयग्रंथ की सूत्र और पित्त की क्रिया में व्यतिक्रम होने से उदररोग होता है । ज्ञान रोग में पलक घन्द करने में कष्ट होता है, निरगरीरोग में पलक कम्यत, फुसर मस्तिष्क और हृदयके रक्तारोध से नेत्र फटे से बड़े हो जाते हैं, उभय नयन रक्त समान लाल होनेसे मस्तिष्क (शिर) में खून जम जाने का बोध होता है, शिर में अधिक रक्त उरण हो जाने से, सन्यास रोग (इस रोगमें मनुष्य मरजाता है) में एवं अहिकेन द्वारा विषाक्त होने से नेत्रों के तारा संकुचित (सिकुड़) हो जाते हैं ॥

जिह्वा परीक्षा ।

वात रोग में जीभ सागवन के पत्र की सदृश खरखरी सखी और फटी सी होती है पित्त में लाल किम्बा घूमर वर्ण होती है, कफ दोषसे लिपी पीदी और श्वेत रंग होता है, मिले दोषों में रंग मिला रहता है परन्तु सन्निपात में कुछ कालो हो जाती है, दोषों के कम कोष से जिह्वा का ज्ञान भी कम होता है । रक्ताधिक्य दाह वसतः जिह्वा उष्ण और लाल वर्ण एवं हिजा सूखा और खास रुक जाने में भीतल, कंठ के भीतर घनि दाह

होने से कृष्ण वर्ण, यकृत घ्रीक्षादि आभ्यन्तरिक यंत्र की पीड़ा से मरण समय जिह्वा घाव युक्त होता है। आरोग्य पुरुष की जिह्वा चनेया गोली और गुलाबी रंग लिये होती है ॥

मूत्र परीक्षा ।

जो मनुष्य रात में पथ्य भोजन किया हो और प्रातः काल जल न पिया हो एवं प्रसंग मद्य पाणादि किसी प्रकार का कुपथ्य रात में न किया हो तो उसके मूत्र की परीक्षा वज्रत उत्तम हो सकती है क्योंकि रात में कुपथ्य करने और प्रातःकाल जल पीने तथा मूत्र को अधिक काल तक धर रखने से प्रकृति विलीन मूत्र का रंग हो जाता है रोग का साध्याऽसाध्य तथा प्रकृति की परीक्षा नहीं हो सकती है और यद्यपि परीक्षा न करने वाले वैद्य को अश्वघ्नन का पाप होता है, कहावत है "वैद्य चूके रोगो भारे वक्रौल चूके सुभक्ति" इस लिये वैद्य को दत्त चित्त से मूत्रादिकों की परीक्षा करना चाहिये ॥

मूत्र लेने की विधि शिवसंहिता से ।

जब चार घण्टो रात बाकी रहै रोगो को उठाय के किसी स्वच्छ सफ़ेद काँच को सौरी में पहिली और पिछली थोड़े से धार को अलग कराय बीच की चार मात्र उसी सौरी में कराय काग से तंतच्छण सौरी का मुख बन्द कर-दिय क्योंकि हवा लगने से भौ प्रभाव का रंग बदल जाता है। बाद उस सौरी को धूप में रख कर वर्ण आदि की परीक्षा करै। सिर्फ वात रोग से मूत्र नीलता युक्त लाल रङ्ग होता है, परन्तु स्वभाव की अति गरमी से भी उक्त प्रकार का रङ्ग हो जाता है, पित्त से पीलापन लिये लाल, कफ से फ़िन युक्त चिकना और खेतवर्ण होता है, रक्त विकार में रक्त सङ्घम और सन्निपात में कुछ कृष्ण वर्ण हो जाता है, रस धातु अपक्व रहने से मूत्र। काली किम्वा विजोरे के रस तथा पागो के समान हर समय होता है। ज्वर की अधिकता से प्रायः मूत्र पीला और पुराने रोग में लाल हो जाता है। वात ज्वर में केशर के समान पीला पित्त

ज्वर में स्वच्छ पोला और कफ ज्वर में गाढ़ा तथा सफ़ेद रंग होता है । तीव्र सन्निपात ज्वर में मूत्र प्रायः कृष्ण वर्ण हो जाता है और वही असाध्य समझा जाता है । विशूचिका में मूत्र रुक जाता है मूत्र कृष्ण (सुजाक की प्राग्रूप) में जलन के साथ बूंद २ मूत्र होता है । बद्धमूत्र जिसे मूत्रातिशार भी कहते हैं उसमें मूत्र निर्मल ठंडा गन्ध और दृढ़ रक्षित सफ़ेद दिन रात में बद्धत बार होता है औघ्र चिकित्सा न करने से वही सोम रोग हो जाता है अर्थात् परीर के रसादिक अंग जलवत हो सर्वदा निरन्तर मूत्र मार्ग द्वारा बहा करता है । मूत्र कृष्ण मूत्रा घात (सुजाक) अञ्जरी (पयरी) प्रमेघ और स्त्री के प्रदर आदि रोगों में तो अवश्यमेव मूत्र परीक्षा करना वैद्यों को अतिशये है । हर एक व्यक्ति को उचित है कि प्रति मास में निज मूत्र परीक्षा द्वारा बीर्य का दोषा दोष अवलोकन कर लिया करें क्योंकि परीक्षा द्वारा जहां तक सिद्ध हुआ है । वर्तमान समय में अधिकांश लोगों के मूत्र द्वारा घात जाता है पर उन्हें इस बात का आग नहीं है । उसको तरकौब यह है कि प्रातः समय पीप के पूर्व ही एक स्वेत कांष को सोपी में मूत्र कर सोपी में काग बन्द कर किसी जगह रख दिया । संध्या समय या दूसरे रोज प्रातः समय उस मूत्र युत सोपी को उठाकर उजियाली की तर्फ देखि यदि घात जाता होगा तो अवश्य मूत्र के अधोभाग में सफ़ेदा वालाई या या रुई के भुजा या या दाना बिभिष्ट मटिमेले रंग का कुछ पदार्थ जमा हो दिख पड़ेगा ॥

मल परीक्षा ।

वात रोग में मल (दस्त) बंधा भया, धूस वर्ण और छटा होता है पित्त में पीला और पतला, कफ में स्वेत गाढ़ा और यक्षुत होता है दो दोषों में मिश्रित और तीनों दोषों के मिल जाने में दस्त काला, कम और कुछ उष्ण होता है । अति काला, अति पीला, अति स्वेत और अति लाल दस्त से जानना कि विमारी बढ़ी है रोग असाध्य होने का हर हे वैद्यों को उचित है कि उदर सम्यन्धी रोगों में अवश्य मल ही परीक्षा करें । आमवात में दस्त कम होता है पेट फूला रहता है, अति-

सार में अति पतला मल युक्त, हैजामें पानी के समान पतला मल रहित और ग्रहणी रोग में कच्चा अन्न सहित दस्त होता है, जिसके पेट में ऊम (केचुआ आदि) हो जाते हैं उसका भी दस्त पतला होता है परन्तु उसका जी भी मचलाता रहता है ॥

वर्ण परीक्षा ।

घात रोगी अर्थात् जिन्हें वायु दोष से रोगोत्पन्न हुआ हो उसका शरीर रुखा, रंग धूमक, रोग वृद्ध में किञ्चित पीला होगा, पित्त रोगी का शरीर पीला तेल लगाया सरीखा, कफ रोगीका शरीर चिकना और स्वेत रंगका होता है मिश्रित रोगों में मिश्रित रंग जानना । फिस्सी फिस्स का रोग क्यों न हो अधिक दिन बना रहने से शरीरका रंग पीला हो जाता है ॥

स्पर्श परीक्षा ।

वायु दोष से रोगी का शरीर शीतल, कफ से शीतल और चिप-चिपा तथा पित्त से उष्ण होता है मिश्रित दोषों में मिश्रित जानना, ज्वर चाहे जिस दोष से हो परन्तु शरीर उष्ण ही होगा ॥

आर्तव परीक्षा ।

स्त्रियों के द्वादश वर्ष वयस से ५० वत्सर पर्यन्त प्रतिमास में जरायु से योनि पथ द्वारा रज का रक्त निर्गत होता है स्वाभाविक मासिक रक्त का वर्ण शशा (सरगोस) के रक्त के समान अथवा लाही के रंग के भांति होता है विशुद्ध मासिक रक्त यदि बस्त्र में लग जाय तो धोने से छुट जाता है । प्रति मास के अन्त में चिकनहट, दाह, शूल बर्जित तीन दिवस स्थायी न बहुत अधिक न अति न्यून निःश्रुत आर्तव निर्दोष जानना, उपरोक्त प्रकार नियमित समय में मासिक न होने ही से स्त्रियों

को शारीरिक तो मानसिक विविध कष्ट दायक रोग उत्पन्न हो जाता है मानसिक की शुद्धता से स्त्रियां आरोग्य प्रसन्न चित्त सब अङ्गों में बलवती बनी रहती हैं अतएव स्त्रियों के आर्तव का अनुसन्धान सर्वदा करना अत्यावश्यक है ॥

स्वप्न परीक्षा ।

यद्यपि यह बात बहुत सत्य है कि जाग्रत अवस्था में जो कुछ मनुष्य देखता सुनता है तज्जनित भावना निद्रा समय में वही प्रतीत होती है इससे स्वप्न कोई वस्तु नहीं है तथापि स्वप्न का फलाफल भी असत्य नहीं है । जो मनुष्य स्वप्न में देखे कि एक भयङ्कर मनुष्य अंगभंग शिर मुड़ाये छाल काले वस्त्र पहिने हाथमें फांसी या छुरी तलवार लिये किसी को मारता बांधता दक्षिण दिशाको लिये जाता है या चला जाता है, अथवा गद्गल कंट भैंसा पर सवार है, तो स्वप्न दर्शक यदि आरोग्य हो तो रोगप्रसूत होय और रोगी हो तो मृत्यु का प्राप्त होय ॥

स्वप्न में ऊंचे से नीचे गिरा, जल में डूबा, अग्नि में जलता, विपत्ति में पड़ा, जलघर जादि के मुख में लीलता हुआ, दीपक और नेत्रों का नाश दीखे, य तिल या सुरा पिये, पकवान खावे, तिल या छोहा पावे, कुत्ता में गिरे, रसातल में चला जाय, कीचड़ में फंसे, नाचे नंगा हो कर लाल साला शिर पर धारण करे, माता के गर्भ में प्रवेश करे ऐसे स्वप्न देखने वाला आरोग्य हो तो रोगी हो, और रोगी हो तो मृत्यु का प्राप्त हो । रात्रि के प्रथम प्रहर में स्वप्न देखने से उसका फल एक वर्ष में मिलता है, दूसरे प्रहर में देखने से ६ महीने में, तीसरे प्रहर में देखने से तीन महीने में और सूर्योदय बेला में स्वप्न देखने से दश रोज में शुभाशुभ का फल मिलता है । दुस्स्वप्न देखने की शांति शास्त्रकारों ने इस भांति लिखा है, कि दुस्स्वप्न देख कर किसी से न कहै सबेरे स्नान करके वेद का पाठ करे । वेदाध्ययन करने वाले विद्यार्थियों को स्वप्न और

तिल का दान देय तो दुस्स्वप्न नष्ट हो । यदि स्वप्न में देयता तीर्थस्थान मन्दिर राजा जीवित मित्र ब्राह्मण गौ यज्ञ देखे । तथा सैले जलमें पैरते अटारी पर्यंत हाथी और घोड़ा पर चढ़ा दीखे एवं स्वप्न में शत्रु को जीते और स्वेत पुष्प मूत्रम बस्त्र मांस सत्स्य फल इत्यादि अगर रोगी दीखे तो आरोग्य हो, और सुखी दीखे तो घन प्राप्ति हो । जिन स्त्रियों का गमन (प्रसङ्ग) अयोग्य (दुर्लभ) है स्वप्न में उनसे गमन करे, मल लपेटा, मरता कच्चा मांस खाता और जोक भवरी सर्प बिच्छू साखी हस्ते हमते देखे तो उन्नत है ॥

दूत परीक्षा ।

चिकित्सक को इतनी बातों पर अवश्य ध्यान रखना चाहिये कि जो रोगी का मनुष्य बुलाने को जावे तो उसकी चेष्टा, चिह्न, वर्ण, वस्त्र, वाद्य, समय, दिशा, मास, देश तथा देश इत्यादि अच्छे प्रकार देख ले तब रोग आराम करने को जावे, इसी से हमारे भूतपूर्व वैद्यों का यश अब तक दिख्यात है ये लोग इन्हीं लक्षणों से घर बैठे रोगी की दशा और साध्या साध्य बता देते थे ॥

यदि दूत (वैद्य को लेवा ले जाने वाला) सफेद वस्त्र पहिरे हुआ, गौरा स्वरूपवान, स्वजातीय, धीरज, बुद्धियुक्त, आभूषण पहिरे, मङ्गल पदार्थ हाथ में लिये वाय पयादे अथवा बैल घोड़े और पालकी पर सवार मन्तोपी और स्वतन्त्र तथा उपरोक्त लक्षण युक्त मनुष्य वैद्य को बुलाने को जावे तो वैद्य जान लेव कि रोग साध्य है और रोगी आराम हो सक्ता है । और वैद्य भी शुद्ध जगह पर पूर्वाभि मुख शान्ति रूप में बैठा हो । अङ्ग में पसीना युक्त मध्याह्न काल में अग्निमनीपत्य वैद्य के पास जाया हुआ दूत कष्ट रोग के लिये श्रेष्ठ है, परन्तु पित्त रोगके लिये अशुभ जानना तथा रक्त पित्त जलसार, ममेह और संप्रदायी रोगमें जहां

पानी वन्धा होय उस जगह पर दूत का गिगना श्रेष्ठ है, सुन्दर हवा चलते हुयेमें दूत जाया हुआ यातरोगी के लिये श्रेष्ठ है । पित्तरोगके वास्ते सघेरे, कफ रोग के वास्ते दोपहर को और वात रोग के वास्ते अर्धरात्रि को जाया हुआ दूत उत्तम जानना इससे अतिरिक्त अशुभ जानना ॥

अशुभ सूचक दूत ।

बाल, बृद्ध, स्त्री दे। तीन या चार अनुप्य एकट्ठे असम्भ्य पातें कहते नैश्चय्य जानेय अथवा दक्षिण से आते । शस्त्र पापाण मस्म हावृ इनको हाथ में लिये तथा रोगी बहिरे दीन गलीन भूखे पिपासे चके अङ्ग हीन (काने इत्यादि) अधिक अङ्ग वाले (छँगुगनादि) अमित नेत्र विकार वाले (ऐँचाताने) चक्षुर आदि पर सवार कंचेस्वर से बोलते भये पाखंडी छूले बोदे अङ्गवाले तिनका तोड़ते भये जलदी चलो २ ऐसे कहते हुये इत्यादि दूत निन्दित हैं इनके अङ्ग में बीरों को जाना योग्य नहीं है और भी अनेक उद्यम अशुभ दूतों के लिखे हैं ग्रन्थ बड़जानेके भय से नहीं लिखा ॥

शरीर लक्षण ।

बुद्धिमान अनुप्यों को उचित है कि प्रतिक्षण अपने शरीर की समा-लोचना इस प्रकार किया करें कि जिन २ पदार्थों से शरीर स्थित है उन में से कौन २ से पदार्थ कम हो गये हैं कौन २ से बृद्ध हो गये हैं और कौन २ अपने मर्जादा पर हैं अर्थात् सम हैं । शरीर में असंख्य ऐसे २ आशय ईश्वर ने बना दिये हैं कि जिनके न्यूनाधिक होनेही से शरीर नष्ट भ्रष्ट होने का संभव है परन्तु विशेष कर बात पित्त कफ रस रक्त मांस मेद (दही) मज्जा शुक्र घातु पुरीष (मल) मूत्र और पसीना और स्त्रियों के रज इन में जहां एक आघ भी कमजादा हुये कि बिमारीआई इस लिये इनके सम रखने में सर्वदा चैतन्य रहै ॥

प्रत्येक देहधारी के लिये वायु और अन्धन्तर वायु की जरूरत है ऊपर की वायु जीव मात्र को चैतन्य रखती है और भीतर की वायु सब पदार्थों को निज २ स्थानों में पहुँचा देती है क्योंकि ॥

पित्तपंगुकफःपंगु पंगवामलधातवः । वायुनायचनोयन्ते
तत्रगच्छन्तिमेधवत् ॥

पित्त कफ मल मूत्र रस रक्त आदि सातों धातु यह सब लंगड़े हैं वायु जहाँ इन्हें अपनी शक्ति से ले जाती है वहाँ वे मेघ के समान चले जाते हैं इसीसे वायु तीनों दोषोंमें प्रचल है और सुश्रुतगृह्यशय जी ने वायु ही को प्राणियों के स्थित, उत्पत्ति और विनाश का कारण माना है । वायुके प्रधान गुण सूक्ष्म शीतल रुक्ष हलकी और चर है और शरीरके पाँच भागों में पाँच नाम से विख्यात है जयात् जो वायु मलाशय में है उरुता नाम (जपान वायु) है अग्निस्थान में (समान वायु) हृदय में (प्राणवायु) कण्ठ में (उदान वायु) और सब शरीर में (व्यान वायु) रहती है वायु के गूनाधिक तथा कोप से सब विकार युक्त हो जाते हैं और वायु के शुद्ध रहने से सब शुद्ध रहते हैं ॥

वातक्षय के लक्षण सु० अ० २५ ।

वातक्षये मन्द चेष्टताल्पवाक्त्वमल्पशर्पे मूढ संश्रताव । ज्व शरीर के भीतर की वायु कम हो जाती है तो (मन्दचेष्टा) शरीर ढोलो चिथिल और मन उदास रहता है अल्प वचन अल्प शर्पे संज्ञा नाश, अर्थात् याद हास्य कम हो जाती है । पाठक गण ! सेवाय वायु बढ़नेके वायु का कम होना कम सुना होगा ॥

वात वृद्धि के लक्षण ।

वातवृद्धौत्वकपासृथं काश्याकाषर्णं गात्रसंक्षुरणं
मुष्णाकामिता निद्रानाशोल्पवलत्वं गाढवर्चसत्वञ्च ।

वायु के अधिक हो जाने में लंबा कौ पतला कुशला सब शरीर फर-
कना गर्मी की दृष्टि निद्रा नाश या निद्रा चट जाना बल हीन और मल
सूखा एवं थोड़ा होता है ॥

वायु कोप के लक्षण ।

प्रायः वात प्रकृत वाले को कलुषा तीता कषायल रुच्य अन्न (बाजरा
आदि) हिम अन्न (बासो चावल पाटि) और सिरका खाने से उपवास से भय
से कामदेव निकलने से बहुत जल में पैरने से रुधिर निकलने से और वर्षा
काल से अतिरिक्त दिनों में वाटर घेरे रहने से वायु कोप करता है । तब यह
लक्षण होते हैं गिर कनपटी में छाती पीठ को रीर कमर हड्डो और जोड़ों
में दर्द दिग्वा प्रभाव कम होना पेटफूलना और बोलना जी घबड़ावे नींद न
आवे नेत्रों में नशा सा बना रहे शरीर थकी और सूखी रहे इत्यादि उपद्रव
होते हैं ॥

वात प्रकृति के लक्षण ।

गिर के बाल महीन और कम शरीर दुर्बल तथा रुच्य बहुत अकषाद
करने वाला, मन चलायमान और आकाश चारी स्वप्न देखि तो वातप्रकृत जान-
ना इस प्रकृत के मनुष्य विद्वान् आस्त्रार्थ अधिक करता है और (सूखे) डाकू
एवं भागते वाला होता है और शरीर शुद्ध में बड़ा बलवान् होता है आशयल
बहुत कम शुद्ध वायु प्रकृति के लोग दिखलाई देते हैं तांतियाभील निष्का
वर्षा प्रायः सम्वाद पत्रों में रहता है वेशक उसकी शुद्धवात की प्रकृति थी ॥

डाक्टरों मत से वात प्रकृति के लक्षण ।

जिसका शरीर दुर्बला मांसपेशी संपूर्ण कामल औ पतला मुख खूबस्-
रत केश साफ महीन और गलग २ एवं शरीर का रंग किञ्चित् सुर्खी लिये
सफ़ेद ओठ पतला नेत्र उज्जल तेजोविशिष्ट नाड़ी सूखा बेगवान् मन के थोड़ी

सी वेगमें नाड़ी उत्तेजित हो जाय मस्तिष्क सद्यः समस्त स्नायु, पदार्थ गुण विविष्ट हो । स्यात्ताव वदत वदके हो अनुमान श्री कल्पनाशक्ति तौक्षण प्र-
यात् मज्जमून बनाने में एकही हो विषय चिन्ता तथा किसी कार्य के लिये
श्रीघ्नही तैयार हो जाय और सामान्य २ बातों में भी क्रोध अनाय तो उसे
बातप्रकृति जानना । इस प्रकृति वाले को श्रेष्ठ द्रव्य खाने तथा सेवक से
किसी प्रकार को पौड़ा चाहि नहों होतो इसलिये अपनी प्रकृति शुद्ध रखनेके
लिये बात प्रकृति वाला श्रेष्ठद्रव्य को सेवन प्रायः करे ॥

बुद्धि तथा कोप वायुशमन, वर्ग ।

शरीर में तेल मर्दन करना तख्त पर सेना जपरौ तेल चवा का बचा-
ना गीता मार के खान करना फिर में तेल का पुचाड़ा देना, घो, नया चढ़
तिष्ठ गेहूं, मूंग, खाल धान, गुनगुना जल, गेंड़ा, सुपूर, भैंसे, चिरण, सुर-
गा, मंगर, कछुआ, रोहमछलो, आदि, जीर्णों के मांस, गीमूत्र, पियाज, ल-
हसुग, सुनझा, पका आम, आवला, मोठा अनार, कीया, चड़, पका ताड़ का
फल, चिनी गौ का दूध, सैधव तैल, इत्यादि गुण वेदों ने पथ कहा है ॥

पित्त ।

रस का रक्त करना पचाना समर्थ तेज बुद्धि उष्णता कारक पित्त है
सो पांच-भेद से अग्नि कर्म करता है । प्रधान गुण पित्त के गर्भ हैं और
पतला पीला नीला सत्तागुणों एवं रस उसका कटु है तीता है और ज-
लने से खट्टा हो जाता है । शरीर के पांच स्थानों में रह कर पांच कर्म
करने से पित्त का पांच नाम है पाचक, आजक, रंजक, आछाधक, और
साधक जो पित्त अग्नि के स्थान में अल पचाने के लिये रहता है सो
जगिन से भी अधिक तेज और बिफे तिल के समान है किसी २ ग्रन्थों
में लिखा है कि मारी शरीर में अर्थात् एस्ती-कंट आदि जीर्णों के शरीर
में कुछ बढ़ा है परन्तु मनुष्य मात्र के शरीर में देश कालानुसार किञ्चित

न्यूनाधिक तिल के समान है एवं कीट पतंगादिकों के शरीर में रोमाय सम होता है । सो पित्त का नाम (पाचक) है । जो पित्त तेल उपटन आदि जिह्वा में लिपटे हुये पदार्थों को अपनी शक्ति से शोष लेता है उसका नाम (भ्राजक) है । और जो रक्त को रक्त बनाता है उस पित्त का नाम (रंजक) है । जो पित्त नेत्रों में रह कर रूप दिखाता है उसका नाम (जालोचक) है । और बुद्धि तथा चारणा चेतन्य रखनेवाला हृदय निवासी पित्त को (साधक) कहते हैं । पित्त के भी कम जादा और कोप से शरीर नाशक हैजा आदि उपद्रव सहे हो जाते हैं ॥

पित्तक्षय के लक्षण ।

“पित्तक्षये मंदाग्निता निष्प्रभत्वं च”

पित्त के कम हो जाने से अन्तर्ग में मन्द गरमी और प्रभा नाश होते हैं ॥

पित्त वृद्धि के लक्षण ।

पित्तवृद्धौ पित्तावभाषिता सन्तापः शीतकामित्व मल्ल-
निद्रता मूर्च्छा बलहानिरिन्द्रियदौर्बल्य पीतविण्मूत्रनिवृत्तत्वं च ॥

पित्त के बढ़ जाने में शरीर का रंग पीला हो । जलन शीतल पदार्थों का चाहना अल्प निद्रा शिर में घुमरी और आंखों के सामने अंधियारा हो जाना बल हानि इन्द्रिय दुर्बल एवं नेत्र और मूत्र पीलेहों ॥

पित्त के कोप करनेवाले वर्ग ।

तिल शिरसा शरार दही मखली बहुत तेज और गरम द्रव्य अति

सो बेगमें नाड़ी उत्तेजित हो जाय मस्तिष्क सब समस्त स्थायु, पदार्थ गुण विविष्ट हैं। स्वास्वात वृद्धत बढ़के हैं अनुमान भी कल्पनाशक्ति तीक्ष्ण अर्थात् मज्जमून बनाने में एकही हो विषय चिन्ता तथा किसी कार्य के लिये भीष्टही तैय्यर हो जाय और सामान्य २ बातों में भी क्रोध अजाय तो उसे वातप्रकृति जानना । इस प्रकृति वाले को श्रेष्ठ द्रव्य खाने तथा सेवुन से किसी प्रकार को पौड़ा आदि नहीं होता इसलिए अपनी प्रकृति शुद्ध रखनेके लिये वात प्रकृति वाला श्रेष्ठद्रव्य का सेवन प्रायः करे ॥

वृद्धि तथा कोप वायुशमन, वर्ग ।

शरीर में तेज मर्दन करना तख्त पर सेना ऊपरों तेज हवा का बचाना नीता मार के खान करना फिर में तेज का पुचाड़ा देना, घो, गया उड़ तिल गेहूं, मूंग, खाल धान, गुनगुना जल, गेंड़ा, सुपर, भैंसे, हिरण, सुरगा, मंगर, कछुआ, राजमछली, आदि, जौधों के मांस, गीमूत्र, पियाज, लहसुन, गुनझा, पका आम, भावला, मोठा अनार, कीया, चड़, पका ताड़ का फल, चिनी गौ का दूध, सेंधव नैन, इत्यादि गुण वेधों ने पथ्य कहा है ॥

पित्त ।

रस का रक्त करना पचाना समर्थ तेज वृद्धि उष्णता कारक पित्त है सो पांच भेद से अग्नि कर्म करता है । प्रधान गुण पित्त के गर्म हैं और पतला पीला नीला सत्तागुणों एवं रस उबका कटु है तीता है और जलने से खट्टा हो जाता है । शरीर के पांच स्थानों में रह कर पांच कर्म करने से पित्त का पांच नाम है पाचक, खांशक, रंजक, आछोचक, और साधक जो पित्त अग्नि के स्थान में अज पचाने के लिये रहता है सो अग्नि से भी अधिक तेज और निर्मल तिल के समान है किसी २ ग्रन्थों में लिखा है कि मारी शरीर में अर्थात् हस्ती जंत आदि जीमोंके शरीर में कुछ पड़ा है परन्तु मनुष्य मात्र के शरीर में देश कालानुसार किञ्चित

करने से पित्त मिश्रित घनन हाथ पेट एवं पैर में जलन कभी २ खट्टी प्रकार आने लगती है इसलिये उसे उपवास अथवा अधिक काल धिता कर भोजन करना अतीव अकर्तव्य है और अग्नि सेवन अथवा अग्नि के निकट भी न रहना चाहिये । ऐसे लोगों को दुग्ध सेवन अति प्रियस्कर है ॥

वृद्ध तथा प्रकोप पित्त के शमन कारक वर्ग ।

घी, दूध, मिश्री, मक्खन, खोवा, सफेद पुराना चावल, गेहूं, अरहर, चना, मूंग, जौ, मसूर, बासी ताड़, घान का छाया, केला, कटहर, खीरा, मुनक्का, कोमल परधर, कुम्हड़ा, ककरी, करेला, अमर, आवला, कोमल ताड़के फल, छुहारा (औषधवर्ग) लिफला, पित्तपापड़ा, सताधरी, कुटकी, गीप, निसेल, चन्दन, (बिहार) अच्छा शीतल भाग कुवारों का घर केशा और कमल के गभीर पत्तों की सेज कपूर और स्वेत चन्दनका छेप मिश्र का मिलना प्यारी घातें तथा गनोहर रागों का सुगन्ध अच्छे ताब का देखना मन्द पवन जल का छिरकना चन्द्रमा की ज्योत्स्ना और नाना प्रकार की शीतल विधि यह वर्ग पित्ताधिकारियों के लिये पथ्य कहा गया है ॥

कफ ।

संधि बंधन शरीर में स्निग्धता रोपण, पूर्ण बल स्थिरता कारक कफ है पांच भेद से जल कर्म करता है । कफ का प्रधान गुण चिकना भारी स्वेत लसलसा ठंडा और मधुर है । परन्तु बिगड़ जाने पर सुगन्धरा हो जाता है कोई २ कफ को हलका कहते हैं इसलिये कि पानी पर तिरता है । इसका कारण यह है कि कफ स्निग्धता करके पानी में प्रवेश नहीं करता वास्तवमें गुरुही है । आमाशय माया कण्ठ हृदय और संधि इन्हीं पांचों स्थानों में कफ क्रमशः पांच नाम से (क्लेदन, स्नेहन, रसन, अथ-

खटा, क्रोध घाम और ज्वर का भोगन (ग्रत) उपवास और जिन द्रव्यों के सेवन से दाह है। प्रायः इनसे पित्त क्रोषित हो जाता है ॥

पित्त-क्रोष के लक्षण ।

घुमरी अन्तर दाह मुखों दस्त पतला पसीना त्वचा (गर्भ) में जलन जान ताज बकना मुख नेत्र दिशा पेशाव और नख पीले नेत्र में नशा पियास मुख का स्वाद तीता अथवा खटा हो और सगस्त शरीर पके फोड़े के समान हूँ हत्यादि संसर्ग पित्त कोष में होते हैं ॥

पित्त प्रकृति के लक्षण ।

लघु शरीर बुद्धि तीव्र अधिक क्रोध पसीना अधिक शरीरसे निकले स्वेद में अग्नि आदि तेज पदार्थ दीखे अकाल पछित अपात बाल जल्द पकनासा साधारण लक्षण यह पित्त प्रकृत-वाले मनुष्य की जानना ॥

डाक्टरी मत से पित्त प्रकृति के लक्षण ।

जिसका शरीर न अति स्थूल और न अति ह्रस्व । सांस पेशी सकल अधिक सख, सघ मूर्ति; मुख श्री तेजस्वी एवं मुख मण्डल आंतरिक भाव प्रकाशित (दमकता जुमा चेहरा) बाल कड़े और काले नेत्र कृष्ण वर्ण कटीले, शरीर श्याम वर्ण रक्त बाही गाढ़ी अधिक मिस्तृत एवं शरीर के ऊपर भाग में रंग दृष्टिगोचर हो । स्वभाव समका अनेक गुण विशिष्ट क्या शारीरिक क्या मानसिक कार्य में दृढ़ प्रतिष्ठ हो। उसे पित्ताधिक्य अथवा पित्त प्रकृति जानना ॥

इस प्रकृति के मनुष्य को प्रायः पांडु चकृत (लीवर) अजीर्ण रोग हो जाता है शराब आदि नशे की वस्तु सेवन से रक्त प्रकृति के समान स्वभाव हो जाने का सम्भव है । प्रायः इस प्रकृति के मनुष्यों को ग्रत

दस्त खजुरी और अमचि, खाना अच्छा न लगे, जिह्वा में कफ लपटा सा रहे जाड़ा लगे पेट भरा सा रहे मुख का जायका नमकीन और मुख की रंगत मफेद इत्यादि लक्षण होते हैं ॥

कफ प्रकृति के लक्षण ।

मोटी बुद्धि स्थूल शरीर चिकने केश महाबल गौर स्वप्न में जल आदि घस्तुओं का अधिक देखे इत्यादि साधारण लक्षण कफ प्रकृति वाले के होते हैं । शरीर का वर्ण पृथ्वी पर निर्भर है जहाँ जैसा पृथ्वी का गुण होता है वहाँ वैसेही रंग वाले जीव होते हैं आत पित्तादि प्रकृति के अनुसार जो केचित आचार्यों ने शरीरके रंग का वर्णन किया है सो मत्स्य आदि प्रजाओं से मिथु नहीं होता है क्योंकि जैसे मिलायतके मूसा आदि जीव सभी गौरांग होते हैं काश्मीर पंजाब आदि स्थल के भी जग प्रायः गेरे होते हैं मद्राज के लोग मात्र काले होते हैं परन्तु प्रकृति भिन्न २ हैं तब हमसे स्पष्ट है कि स्वभा की रंगत पृथ्वी के गुण से बनती है ॥

डाक्टरों मत से कफ प्रकृति के लक्षण ।

जिसकी शरीर मोटी और गोल नांसपेशी समस्त कोमल बाल नेत्र और शरीर श्याम वर्ण ओठ गेरे रक्त बाही नाही सूक्ष्म और रक्त संचालन अल्प बोड़े शैत्य द्रव्य के सेवन से भी अङ्ग में दर्द होने लगे शरीरक वा मानसिक क्रिया शक्ति श्रुदु अथवा साधूर्य हो इत्यादि उसे कफ प्रकृति जानना ॥

कितने लोगों की सुरादि मादनक द्रव्य के सेवन से रुष्ट पुष्ट होते देखा गया है उसे भी कफ प्रकृति कहना चाहिये कारण यह है कि जिस की कफ प्रकृति है उसे अधिक नशा पान भी प्रयत्नतः हानि कारक नहीं

उम्बन, और स्नेह) स्थित हो शरीर को पुष्ट-रखता है निम्न प्रकार तेल चरबी आदि के संयोग से रस की पहिया चलती है वैसाही कफ के संयोग से शरीर की हड्डियां स्नायु आदि बिना श्रम फिरा करती हैं ॥

कफक्षय के लक्षण ।

श्लेष्मच्छये रुक्षतान्तर्दाह आमाशये तराशयशिरसां । शून्य-
तासन्नि शैथिल्यं तृष्णा दौर्बल्यं प्रजागरणञ्च ॥

कफक्षय में रुक्षता अन्तर्दाह आमाशय अन्तराशय और शिर शून्य माछून हो जोड़ जोड़ ढीले पियास शरीर दुर्बल निद्रा नाश यह लक्षण होते हैं ॥

कफ वृद्धि के लक्षण ।

श्लेष्मवृद्धौ शौक्ल्यं शैथन्यैर्यं गौरवं भवसादस्तन्द्रानिद्रा
सन्ध्यस्थि विश्लेषश्च ॥

कफ के बढ़ने से मल मूत्र नेत्र और श्रंग में सफेदी शरीर में ठंडक और भारीपन, निद्रा अधिक, संधियां शिथिल उबकाई मुख से लार का गिरना ये लक्षण होते हैं ॥

कफ कोप कारक वर्ग ।

दूध दही भारी नया और शीतल भोजन और शीतल जल अजीर्ण भोजन अति खट्टी बस्तु अति बैठना घी तिल मछली दिन के सोना इत्यादि वर्ग कफ को कोपित करते हैं और बसंत ऋतुमें तो अवश्यही ॥

श्लेष्म कोप के लक्षण ।

शरीर भारी त्यचा जोदा शोष आलस्य अधिक निद्रा अधिक गाढ़ा

दस्त, खजुरी और अरुचि, खाना अच्छा न लगे, मिह्र में कफ छपटा सा रहे जाड़ा लगे पेट भरा सा रहे मुख का जायका नमकीन और मुख की रंगत मफेद इत्यादि लक्षण होते हैं ॥

कफ प्रकृति के लक्षण ।

मोटी घुट्टि स्थूल शरीर चिकने केश महाबल और स्वप्न में जल आदि वस्तुओं का अधिक देसे इत्यादि साधारण लक्षण कफ प्रकृति वाले के होते हैं । शरीर का वर्ण पृथ्वी पर निर्भर है जहाँ जैसा पृथ्वी का गुण होता है वहाँ वैसेही रंग वाले जीव होते हैं बात पित्तादि प्रकृति के अनुसार जो केचित् आचार्यों ने शरीरके रंग का वर्णन किया है वो प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सिद्ध नहीं होता है क्योंकि जैसे बिलायतके सूसा आदि जीव सभी गौरांग होते हैं काश्मीर पंजाब आदि स्थल के भी जन प्रायः गौरे होते हैं मद्रास के लोग मात्र काले होते हैं परन्तु प्रकृति भिन्न २ हैं तो इनसे स्पष्ट है कि त्वचा की रंगत पृथ्वी के गुण से बनती है ॥

डाक्टरी मत से कफ प्रकृति के लक्षण ।

जिसकी शरीर मोटी और मोल सांसपेशी समस्त कोमल बाल गेहर और शरीर श्यान वर्ण भोठ गौरे रक्त बाही गाढ़ी सूक्ष्म और रक्त संचालन अल्प थोड़े शैत्य द्रव्य के सेवन से भी अङ्ग में दर्द होने लगे शरीरक या मानसिक क्रिया शक्ति मृदु अथवा साधूर्य हो इत्यादि उसे कफ प्रकृति जानना ॥

कितने लोगों को सुरादि मादक द्रव्य से सेवन से हृष्ट पुष्ट होते देखा गया है उसे भी कफ प्रकृति कहना चाहिये कारण यह है कि जिस की कफ प्रकृति है उसे अधिक नशा पान भी मयमतः हानि कारक नहीं

होता परन्तु कनशः कफ को गट्ट कर के अन्त में शरीर को भी गट्ट कर देता है, इस लिये कफ प्रकृत मिश्रित जन कदापि सादक द्रव्य सेवन न करें । ऐसे मनुष्य को जाड़े के दिनों में और वर्षा काल में कणालेन का कपड़ा पहनना और साग सखेरे चाय पीना चाहिये और अन्न, दधि, माठा, घासी अन्न इत्यादि शैत्य कारक द्रव्य सेवन न करना चाहिये ॥

जिस प्रकार से हमारे वैद्यक शास्त्र में दो दोषों के लक्षण मिलनेसे द्वन्द्व प्रकृति कहा है और तीनों के लक्षण मिल जाने से त्रिप्रकृत कहा है उसी प्रकार डाकूरी में भी कहा है भेद इतनाही है कि हमारे यहां बिफें तीन प्रकृति प्रधान रक्खा है डाकूरी में चार अर्थात् एक रक्त, प्रकृत और भी कहा है जिसे नीचे लिखे देते हैं ॥

रक्त प्रकृति के लक्षण ।

जिसका शरीर स्थूल वा कृप हो बाल कड़े नेत्र नील वर्ण मुख चमकीला सुन्दर गुलाब के पुष्प के भाँति, चमड़ा कोमल और पतला नाड़ी वेगवान भी पूर्ण रक्तवाही नाड़ी त्यरित वेग से रक्त सञ्चालन, मनोवृत्ति सकल शीघ्र उत्तेजित और मन की गति स्थिर ओः चञ्चल हो उसे रक्त प्रकृति कहते हैं । जिस प्रकार खेत में बीज डालने से शीघ्रही अंकुर निकल जाते हैं तद्वत्प नद्यादि पान करने का फल इस प्रकृति वाला प्राप्त करता है और बिचारी स्त्री को पुत्रादिकों से अनाथ कर अगति काला मध्य मेही आप भी देह भाव से विमुक्त होता है । इस प्रकृति वाले को नद्य पान अति भोजन अत्याधिक स्त्री सङ्गम करने से प्रायः सन्निवृत्त प्रलयान दाहरोग और रक्त आधादि रक्तरोग हो जाता है ॥

विचित्र प्रकृति ।

इस प्रकृत के तीन प्रकार के मनुष्य हैं प्रथम—जिसे पारद घटित औषध अल्प परिमाण अर्थात् एक रक्ती भी खा लेने से मुख आ जाता है

अपवा मुख से राख बहने लगता है और उतनाही पारा या उस से कुछ अधिक भी खा लेने से दूसरे को कुछ भी नहीं होता ॥

द्वितीय—कितने लोग संसार में ऐसे देखने में आये हैं कि जिसे म-
खली अजा आदि का सांस फल और शाय पास खाने से अजीर्ण रोग हो
जाता है और किसी २ को जिल्द की बिमारी हो जाती है ॥

तृतीय—और कितने ऐसे स्वभाव के मनुष्य हैं जिन्हें चारक जीषध
अर्थात् अजीर्ण खाने से विरेचक गुण याने दस्त आता है एवं विरेचक
जीषध (एक्सम् मास्ट) के खाने से मादक गुण याने नशा काता है ।
ज्वरग्र जीषध (कुनाइन) के सेवन करने से मुख मध्य में ओ अन्यान्य
स्थान में भी घाय हो जाता है । इसी प्रकार हर एक प्रकृत के लोग हैं
कि एकाएकी अल्पप्र चिकित्सक प्रायः चीन्ह नहीं सक्ता इसी दोष के
परिहार के लिये सरकार ने एक २ पारिवारिक चिकित्सक नियुक्त
कर दिया है ॥

श्लेष्म कोप वृद्धादि हारक वर्ग वैद्यक से ।

ब्रह्म लंघन आंखों में अलून देना स्त्री प्रसंग शरीरमें चमटन और
रोल का नर्दन करना पानी कम पीना दांतून और कुल्ला देर तक करना
हांथी घोड़े की सवारी अधिक कपड़ा पहनना अधिक परिश्रम तथा मार्ग
चलना फुस्ती लड़ना नाश लेना गरम द्रव्य अधिक खाना पुराने घान
साठी के घान चना सूंग कुरची गरम पानी मरु देश के जानवरोंके सांस
राई बैंगन गूलर लहसुन पिआज परवर केले का फूल जमीरुन्द नींबू
कुटकी निसेत शहद का शरबत पीना जरा २ सा मद्य पीना त्रिफला
का सेवन गो मूत्र अच्छा गरम घर इत्यादि गुण कलाधिकारियों के लिये
हित कथा है ॥

लक्षण ।

डाक्टरों मत से यदि उष्णधातु यह प्रकृति भी पित्ताधिक्य प्रकृति के भांति जानना सिर्फ इतनाही फर्क है कि इस प्रकृति वाले मनुष्य के चित्त में सर्वदा (जो स्वप्नवत है) अनेकानेक विषय प्राप्त होने की इच्छा उठा करती है और किसी कार्य की स्थिरता नहीं रहती जिसको चणिक लुझी कहते हैं इस प्रकृति के मनुष्य प्रायः पागल हो जाते हैं और गांजा चरस अफीम इत्यादि मादक द्रव्य सेवन करने से तो पागल होने में कुछ विलम्ब न जानना चाहिये ॥ :

जिसका जैसा शरीर का रूप रंग होता है वैसाही रोग भी उसे होती है जैसे जिसका मुख सुन्दर गाल, दाढ़ विकने और भिन्न भिन्न नेत्र सबुज चाकाय वर्ण नेत्र पलक दीर्घ, और ऊपर का शीठ स्थूल होने से प्रायः गण्ड-माला रोग होता है और ऊपर की समस्त लक्षण युक्त सिर्फ ऊपर की शीठ पतला होने से चयकाय होने का सम्भव है । और छाती दीर्घ मुख भी सुन्दर, शीठ पतला और संधिस्थान की छोटी (गठोलो शरीर) होने से मनुष्य बलवान होता है, और जिसकी छाती छोटी, मुख गाल, ऊपर की शीठ लंब संधि सकल बड़े होने से शरीर दुर्बल और कमजोर होता है ॥

श्री बाबू गिरने अनियमिताचार से आयुक्षय का कारण देखलाया है जो लोग बड़े पादमी हैं अर्थात् धन सम्पन्न हैं खाना पीना कपड़ा पचनना आदि उत्तम है, अनेक नौकर चाकर खी हैं सेवाय नौकरों के क्या शारीरक क्या मानसिक किसी प्रकार का परियम नहीं करते केवल अनर्थ कारी कामों पर मोह एवं बहुविध सुखद सामग्री पान भोजन तथा अहेारात्र सेवना या नाच मुजरा देखना इत्यादि ऐसे मनुष्यों का जीवन थोड़े ही काल में अपने स्थान को त्याग देता है और जितने दिन वषा भी रहता है तो आरोग्य नहीं रहता है । संसार के देखने से पाया जाता है कि खेती करने वालों का सामान्य खाना पीना पचनना रहता है, वर्षा में भीजते हैं ग्रीष्मऋतु में धूप

महते हैं तो भी आरोग्य और दीर्घ स्थायी होते हैं । शरीर तत्त्व चिकित्सक मर्यादों का परोक्षित कथन है कि खित्तिहारों की अपेक्षा बड़े मनुष्यों का जीवन काल अल्प और बड़े आदमियों की अपेक्षा राजा वा राजपरिवारस्थ लोगोंका जीवनकाल अति अल्प होता है । यह शरीर मानिन्द घड़ीकेहि अगर घड़ी बन्द कर रख दिया जाय तो थोड़ेही काल में मरणा लग कर तमाम पुरजे खराब हो घड़ी सत्यानाश हो जाय गो वैसाही इस शरीर से वन के अनुसार काम न लेने से शरीर सत्यानाश हो जाती है परन्तु यक्ति से अधिक काम लेने में वही होता है ॥

वीर्यज दोष ।

जिस प्रकार सन्तान पिता के धन आदि की उत्तराधिकारी (पानेवाला) होता है वैसाही माता पिता के रोगों का भी अधिकारी होता है । जिस के गण्डमाणा, क्षय, काश, खास कुष्ठ गठिया मृगी, लग्नाद वज्रमूत्र गरमो और प्रमेह होती उसके सन्तान के भी वही रोग होगा, कुष्ठदि रोग तो न पुस्त तक होता है, हिताहित विवेक शून्य पुरुष इन्द्रियापभोग में प्रवृत्त हो शरीर का नाग प्रकार के रोगों से असखी करते हैं और जो सन्तान उत्पन्न होता है उसे भी रोग भोगना पड़ता है ॥

अथ रस रक्त मांस मेद पण्डु मज्जा शुक्र पुरीष मूत्र और श्वेद (पशोना)

इन के घट बढ़ जाने की लक्षण । संयुत सूत्र त्याग अ० । १५ ॥

रसक्षये हृत्पीडा कम्पशून्यता तृष्णा च रसीऽति ।
हृदयेऽक्लेदं प्रसिक्छापादयति ॥

आहार पच कर जो कुछ प्रथम शरीर में बनता है उसे रस कहते हैं वह रस कम हो जाने से छाती में दर्द कम्पन अह शून्य और पियास लगती है और बढ़ जाने में वमन और मुख से सार बहता है ॥

ज्ञाणितक्षयेत्वक् पारुष्यमस्त्रशीतप्रार्थना । सिराशैथिल्य-
श्च रक्तारक्ताङ्गाक्षतांसिरापूर्यत्वच्च ॥

शरीर में लोह के कम होने से चमड़ा खुरा खुरा जायका शीत पदार्थ को चाब और नस ढीले हो जाते हैं रक्त वृद्धि में नसें लाल फूली हुई तथा शरीर और आंख भी लाल होते हैं शीघ्र यत्र न होने से लिण्ड की विमारी हो जाती है जैसे सूनन दाब जलन बदन में फोड़े फुगसी शरीर का रंग काला होजाना बात रक्त कोड़ पौलपाव गण्डमाला द्विद दुर्गन्ध यक्षत प्रोक्षा विचर्ष आदि । शरीर में रक्त एक प्रधान वस्तु है डाक्टरों ने अनुमान किया है कि जवान मनुष्य के शरीर में ८ पौंड (४ सेर) से २० पौंड (१५ सेर) पर्यन्त रक्त शरीर विशेष में है । योयुन भलेगटोन साक्षर ने लिखा है कि पुरुष के शरीर में ३४॥ पौंड (१७ सेर) और स्त्री के शरीर में २६ पौंड (१३ सेर) रक्त है । रक्त का वजन जल को अपेक्षा कुछ भारी है रसायन विद्या के जानने वाली विद्वानों ने इस प्रकार तुलना किया है । एक पात्र में जल भरो यदि वजन में १० तोला हो तब उसी परिमित गन्धक का तेजाब भर कर वजन करने से १८॥ तोला होगा और उतना ही तेल भर कर तोले तो सिर्फ ८ तोला (अर्थात् तेल पानी से हलका है यही कारण है जो तेल जल के ऊपर रहता है) इस वजन को अंगरेजी में विशेष वजन कहते हैं । जिस पात्र में जल का विशेष वजन १००० तोला या रक्त होगा उसमें उतना ही रक्त १०५५ होगा विद्या की भी क्या महिमा है यणु से पर्वत तथा जीव से ब्रह्म पर्यन्त कौन सी ऐसी वस्तु है जो विद्या से न जानी जाती हो । जिस प्रकार डाक्टरों ने शरीर को गरमो सरही नापने को ताप माण यंत्र (थर्मोमीटर) निकाला है वैसाही जलेश्व द्रव्य का लघुल गुहल जानने के लिये एक यंत्र बनाया है उसके भी अधोभाग में पारद है और नल में चिन्ह बने हैं तेल जल सुरा रक्त आदि कोई द्रव्य वस्तु हो उसमें डाल तत्क्षण वजन कर लिया जाता है डाक्टरों मत से रक्त के १००० भाग में ३ प्रति गाढ़ी वस्तु (पण्डा) है, १२७ भाग कण है, खर्दवीन के देखने से यह वस्तु वज्रत से

छोटी २ नजर आवैगी इन में से बहुत को सुखरंग को और सफेद रंग की है जो सफेद रंग को चोजें हैं उनको सूरत दरबत बदला करती है और उक्त दोनों कर्णों में और चोंजें भी हैं जैसे नेट्रोजन हैड्रोजन आक्सीजन कायला गन्धक सोडा आदि । ८० भाग लवणांश अर्थात् निमक का अंश है और ७५० जल का अंश है परन्तु शरीर रोगाभिभूत होने से पूर्वाक्त लीज का न्यूनाधिक हो जाता है ।

रक्त संचालन ।

शरीर के मध्य में ऐसा कोई स्थान नहीं है कि जहाँ रंगों के द्वारा रक्त न पहुँचा हो । शरीर के किसी स्थान में सूक्ष्म सूची (सुई) द्वारा बिंदु (छेदन) करने से खूब गाढ़ियों से रक्त पाया जाता है इस से स्पष्ट होता है कि रक्त ही समस्त अंगों प्रत्यंगों को निन्दा रखता है इसलिये पाठकगण को उचित है कि रक्त शुद्ध तथा सम रखने में अधिक दृष्टि करें । रक्त समस्त स्नायु शिराओं से घूम कर दिल में जाता है जिसका प्रतांत बहुत है परन्तु इन स्थल में इन साधारण तीर पर घमान किये देते हैं । आदमी का दिल पाँच छाली से दे। या तीन अंगुल नीचे रहता है (वैद्यक में इसे हृत्पिण्ड अथवा शोषक यंत्र कहते हैं) और किसी किसी का दिल दहिनी तर्फ भी देखने में आया है परन्तु बहुत कम । दिल के गजदीक कान लगाने से आवाज सुनाई देती है । इसी आवाज को डाक्टर लोग ठोकड़ी का चोंगा लगा कर कान से सुनते हैं, दिल से सिर्फ यह धाँस जाहिर है। यत्नी है कि रक्त का गमनागमन कम जादा या रुक तो नहीं गया है क्योंकि दिल व शरीर रोगाक्रांत होने से जो स्वाभाविक शब्द बदल जाता है वह शब्द कैसा है सेवाम शब्द है के दूसरे में सामर्थ्य नहीं है कि कह सके, दिल में से जो शब्द मोघ होता है वह दिल के केंद्रने और निकुड़ने से, कारण यह है कि जो दिल में घूम आता है तब निकुड़ जाता है और फैलनेसे रक्त बाहर निकल जाता

है इसी से दिल एक २ किया करता है । जो रक्त छोटे बड़े रंगों में सं-
 चालन करता है वह रक्त प्रायः १ मिनट में १५० फुट पर्यन्त वेगवान है
 इसी प्रकार जो रक्त मन रंगों से घूम कर दिग में जाता है उसके जाने
 जाने में दिल एक रात दिन में १०००००० एक छत्र बारसे कुछ अधिक बार
 भी संकुचित हो प्रसारित होता है । और जितनों का मत है कि एक
 मिनट में दिल ७० बार कड़कता है तो इस हिसाब से प्रति घण्टा ४,२००
 बार एवं ४ से १ पल लक्ष ८ सौ बार होता है । यह काम पायज्जीवन
 क्या जायतावस्था क्या स्वप्नावस्था सुषुप्तवस्था कोई अवस्था क्यों न हो
 कभी मन्द नहीं होता दिन रात में भाग हृदय से इतना रक्त यद्भिर्गत
 अर्थात् निगल कर रंगों में जाता है कि जिस के सुनने से एक शयन
 मालूम होगा । जयुर्वेद वित विद्वानों ने निरूपण किया है कि जिस श-
 नय प्रायः १३०० तोरा हजार पीछ रक्त हृदय से भाएर हो तब जाके खप
 शरीर में व्याप्त होगा । यदि प्रतिवार मूलाधिक १॥ औंस (४॥) तोला)
 परि तित रक्त हृदय से यद्भिर्गत हो तब १००००० बार में १५१२०० औंस रक्त
 होता है उसे १२ से भाग देने में १२६०० पीछ रक्त होगा । इतना खून
 जो ऊँहा हृदय के भीतर है सो नहीं सिर्फ दिया रात्रि में इस कदर रक्त
 का गमनागमन होता है । डाक्टरों का मत है कि रक्त से रक्त घन प्रपत
 हृदय में जा तब समस्त आशय और नाड़ियों में जाता है और सुश्रुनादि
 श्रयियों का मत है कि “सखत्वापोरसो यकृतस्त्रीहानी रागमुपैति” गल
 नय रक्त यकृत स्त्रीहानी में जाकर रक्तभाय की प्राप्त होता है । श्रीतान्
 पं० भवदत्त शास्त्री जी ने एन से प्रण किया कि रुधिर लाल वर्ण क्यों
 होता है ? (७०) रसायन विद्या से इस प्रकार सिद्ध होगा कि रक्त शय
 पित्त की तेज से पचता है तो कुछ असुभाव की प्राप्त होता है पुनः ग-
 मनागमन की परिश्रम से गर्मे हो कर रक्त लाल वर्ण हो जाता है जैसे
 अंगूर जामुन इंसु आदि का रक्त प्रथम गधुर धूमिल रहता है तीन दिन
 बाद सदा अन्तर्मे तेज और लालरंग हो जाता है सुश्रुनकार ने लिखा है ॥

विस्तृतद्रवतारागः स्पन्दनं लघुता तथा । भूम्यादीनां गुणा
द्येते दृश्यन्ते चाचशोणिते ॥

अर्थात् रक्त में गन्ध ये पृथ्वी का गुण है, गीलापन जल का लालरङ्ग
अग्नि का गुण, घोड़ा पशुन वायु का गुण और लघुता आकाश का गुण
है ये पञ्चभूतके गुण रक्तमें देताईं देते हैं । एक यह बात प्रायः लोगोंके मुँह
से सुनने में आती है कि ४७ वर्ष के पश्चात् रक्त का घनता घन्द होता जाता
है परन्तु आज तक मुझको किसी ग्रन्थ में यह लेख नहीं मिला यदि
किसी महाशय को मिला हो तो कृपा करके मुझे लिखें जति धन्यवाद
दूंगा । स्त्रियों के विषय में तो सुश्रुत का यह बचन मिलता है ॥

रसादिवस्त्रियारक्तं रजःसंज्ञम्पुवर्त्तते । तद्वर्षाद्विशादूर्ध्वं या-
ति पञ्चाशतः क्षयम् ॥

रसही से स्त्रियों का रक्त रज संज्ञक (मासिकधर्म) होता है सो
मारह वर्ष के ऊपर प्रयुति और पञ्चाश वर्ष से क्षय हो जाता है । अर्थात्
रक्त घनता घन्द हो जाता है ॥

अन्भूत औषधियां ।

खिजाव ।

भूजा पुष्पा भाजू फल ६ तोला, संगरानिख (यह तांबे का मेल है
बनियों के दूकानों में मिलता है चिपटाकार टुकड़ा सा होता है वैसेही
लोहे का भी होता है परन्तु तांबे का अच्छा होता है) ६ मासा, मौसा
दर ४ मासा, तूतिया २ मासा, सेंधा निमक २ मासा इन सब को खरल
करके बोटल में रख लेय (भाजू भूंगने की बिधि) चूल्हे पर एक लोहेका
घरतन चढ़ाय उसमें छिद्र रहित भाजू फल को रख नीचे धीमी आंच देय
भाजू फल से धुआं निकलना आरम्भ होगा जैसाही धुआं बन्द हो और न

तब से गिकाण किसी वस्तु से टांप देय जिस से राख न होने पाये रंग काला हो जायगा । "खिजाय लगाने की विधि" लगाने के उः घंटे पूर्व ही घोड़ी सी छाटी हरेँ को कुचल कर एक मिट्टी के वस्तुमें भिजा देय यह लगाने के उसी हरेँ के जल में उक्त घूर्ण को एक लोहे के पात्र में लोहे के टंके से घोंट कर बालों में लगा देय, इसमें बांधने की जरूरत नहीं है दो तीन घंटे बाद धो डाले एकही दफे के लगाने में बाल काले हो जाते हैं यदि कुछ कसर रह जाय तो दूसरे दफे के लगानेसे सूयकाळे हो जाते हैं, इससे बाल कड़े नहीं होते और न जिरद काला होता है ॥

दूसरा (अंगरेजी) ।

यह खिजाय प्रायः अंगरेजी दवा खानों में ठाई रुपयेको मिलता है और युरुश से लगाया जाता है "बनाने की विधि" १ नम्बर—काष्ठिक (यह चांदी और एमिह से बनता है डाक्टर लोग जलाने का काम इसी से लेते हैं) ॥० औंस (१ लोटा) भाप का पानी यह जल डेग ममके से खींचा जाता है । ३ औंस (१ लैटार्क) दोनों को हलकर एकसीसीमें भर काग बन्द कर दो । २ नम्बर सलफिहरेट भाप पुटास ॥० औंस, भापको पानी ३ औंस दोनों को हल कर इसे भी एक सीसी में बन्द करलो "लगाने की विधि" पहिले नम्बर वाली सीसी का अर्क युरुशसे या लकड़ी में रुई (तूली) लपेट कर उसी से पहिले बालों में लगावे, जब सूख जाय तब दूसरे नम्बर वाला अर्क दूसरी रुई या युरुश से लगावे, लगातेही बाल काले हो जायगे परन्तु दूसरे नम्बर वाले कर्क को सूय सावधानी से लगाना चाहिये क्योंकि बगड़े में छू जाने से जिरद काला पड़ जाता है और देर में छुटता है । इसमें सिर्फ जिरद बाल काले होने के और कुछ भी गुण नहीं है यह भी जैसा हमारे देशी खिजाओं से बाल काले होते हैं वैसा इसे नहीं परन्तु आज कल जिसे देखिये उसी से मुह काला करना पसन्द करते हैं ॥

तीसरा ।

भूजा हुआ माजू फल आधपाव हरे छोटी आधपाव तांघे का बुरादा दो तोला, कीसीस, नीसादर, दक्षिणी नीला घोषा, और लवङ्ग एक २ तोला, (माजू फल भूजने की विधि) एक छोड़े की कढ़ाई में काले तिल का तेल इतना रहे की जिसमें माजू फल डूब जाय कढ़ाही को धूल्ले पर घड़ाय आंच दे जब तेल खोल उठे तब माजूफल उसी में डाल देय परन्तु माजूफल छिद्र रहित हो जब माजूफल फट कर उतराय आवे फौरन निकाल ले और एक कपड़े के सले दवाय तेय ताकि उसमें तेल का अंश न रहि जाय, (घनाने की विधि) पावभर सूखे आंवले को अध-कधरा कर एक मिट्टी के घरतन में सेर भर जल में रात्रिको भिगेय स-बेरे जोश देय जब पावभर पानी रह जाय खूब मल कर छानले एक छोड़े के दरल में प्रथम उसी आमले के जल से तांघे के बुरादे को खूब महीन घोंट ले जब बुरादा मानिन्द घुस्में के हो जाय तब माजूफल आदि, स-मग्र औषधियों को फूट कपड़छान कर उसी में डाल दे और घाकी आं-मले के पानी से इतना घोंट की लसलसाहट से लोढ़ा चिपट जाय । (इस स्थल में खिजाय घनाने की परीक्षा मिल सकती है) यदि घोंटते २ लसलसाहट आगया तो जानना कि खिजाय सिद्ध हुआ और जो लस-लसाहट न आया तो जानना कि थिगड़ गया । जब देखै की लस आ गता और खूब घोंट भी गया है एक २ छटांक की यत्ती घना कर सुखा ले, (लगाने की तरकीब) जब लगाने की इच्छा हो पूर्वोक्त लेखानुसार आंवले का पानी घना उसी में यत्ती को घोंट बालों में लेप कर ऐरंड का पत्र अथवा जिस किसी का पत्र चाहे बांध दे बाद तीन चार घंटे के सोल कर धो डाले पहले दफे इसी प्रकार तीन रोज बराबर लगाने से बाल काले होंगे फिर पन्द्रह रोज सिर्फ एक दफे लगाना काफी है इससे त्वचा फासा नहीं होता और न बाल कड़े हों । माजू का खिजाय बस इससे बढ़ कर नहीं है ॥

चौथा ।

नील, केतकी की जड़, केले की जड़, घमरा, पिपावासा, अर्जुनशृङ्ग के फूल, कुसुम के बीज, कालानिल, तगर, कमल का सर्वाङ्ग, लोहचूर्ण, मालकगुनी अनार का छाल, गुर्घ, नील फल का जड़, यह सब औषधें दो २ तोला त्रिफला १ पात्र भांगरे (भृङ्गराज) का रस ढाढ़ं सेर फालेतिल का तेल आधसेर एक लोहे के पात्र में सब औषधियां में तैल आदि से भर कर मुख बन्द कर चारों तर्फ घोड़ेकी लीद दे पृथ्वी में गाड़ दे बाद ४० रोज के निकाल कपड़े में छान अग्नि में पचाय लेय जब रस सब जल जाय, तैल मात्र रहि जाय परन्तु तैल सरा न होने पावे क्योंकि विगड़ जाता है तुरत छान दोस्तल में भर कर रस देय । चौथे २ रोज इस तैल को बाछों में लगावे और तीन चार घंटे के बाद हरे के पानी से गिर धो डाले यह नुसखा सुश्रुत का है हमारा आजमाया हुआ नहीं है परन्तु पूर्ण विश्वास होता है कि असत्य न होगा ॥

शतावरि चूर्ण धातु पुष्ट पर ।

पञ्चाही शतावरि, बड़ा गोसुर, केवाड़ के बीज की गरी, गुलसकरी (गँगेरुमा भी कहते हैं) धरियारा के बीज, तालमखाना और सेनर का नुसरा (एक वर्ष से ऊपर का न हो) इन सब औषधियों को परावर ले फूट कपरछान कर बराबर की मिश्री मिला किसी उत्तम पात्र में रस दे, दोना समय अर्थात् प्रातः काल और संध्या समय भोजन के पूर्व ही १ तोला चूर्ण को मुख में रख पात्र भर कच्चा गी से दूधसे उत्तार जावे, इस चूर्ण के सेवन से केशाहू बीर्य निर्मल और पतला क्यों न हो गया हो मिश्रय गाढ़ा और पुष्ट हो जाता है और प्रसङ्ग करने की अधिक इच्छा होता है, यदि प्रसङ्ग न कर के एक वर्ष पर्यन्त पथ्य सहित इस चूर्णको सेवन करता जाय तो हस्ती के समान बलवान और सत्त वर्ष की आयु प्राप्त हो और उसके बीर्य से उत्पन्न पुत्र सिंह के समान हो ॥

लिङ्ग स्थूल करने का लेप ।

मिर्च, मेन्हा नोन, यही पीपर, तगर, मटकटैया का फल किसी २ देशोंमें इसे भंटा भी कहते हैं । छटजीरा, काळीतिल, फूट, जी, चरद, पीत सरसों और असगन्ध इन सब दवाइयों को बराबर से कूट ऊपरछाग कर शब्द में घोंटें मोली बना ले यह मोली सूखती कम है इसका कुछ घं-
देशा नहीं है । किसी कारण से जैसे फोते के भूजन । नस की निर्मलता से या जति कल्प धातु होने से लिङ्ग दुबला हो जाता है तो कुछ दिन बराबर उक्त मोलीको भेड़ी या बकरीके दूध में चिसकर किञ्चित गुग्गुला कर सोती समय प्रांथ छः मिनट रोज लिङ्ग (अथ नाग छोड़) पर रखने से अथवा कुछ मोटा हो जाता है । और स्त्रियोंके स्तनों पर मर्दन करने से यह भी कुछ बढ़ा और कठोर हो जाता है यह शार्ङ्ग पर घन्यकी दवा है परीक्षा में हो कुछ गुण देख पड़ा यह लिख दिया ॥

तिला ।

यह तिला एक पर्यंत नामक घन्य का है अजमाने से कुछ गुण कर देख पड़ा इससे लिखते हैं । अकरकरहा, गालकहुनी, काळातिल, कपिला गन्दाबिरोजा, जायफर, सूसी जोंक और बीरमहूटी यह सब एक २ तैला से एक छंटाक चमेली के तेल में घोंट कर पाताल यन्त्र से तेल नि-
काल ले और कागदार सीसी में रख दे । रात को थोड़े काल लिङ्ग पर मर्दनकर ऊपरसे मंगलापान प्रांथदेय । इसी प्रकार पन्द्रह बीन रोज बरा-
बर हस्तेगाल करनेसे यदि गौर्य में किसी प्रकार दोष न होगा सिर्फ हस्त मैथुन आदि अप क्रियाओं से नस निर्मल हो स्त्रीवत्त्व (नपुंसक) हुआ होगा तो अवश्य फायदा करेगा ॥

पाताल यंत्र से तेल निकालने की विधि ।

इस यन्त्र को बियक में भूधर यन्त्र कहते हैं । एक आतशी सीसी

(यह सीसी गतिहारों की दुबानों में मिलती है अधिक आंग लग जाने पर भी नहीं फटती और सीसियां फट जाती हैं) दवा भर सीसी का मुख सींक या तार के पुंज से बन्द कर दे और सीसी पर ३ कपरीटी कर सुखा लेय । एक हीदे के पेंदी में सीसी के मुख बराबर छेद करै उनी छिद्र में चली सीसी कर रख दे और हीदे को चूल्हे पर गढ़ा सीसी के पेंदीतक वालू या राख भर ऊपर कंडे की आंग करै, और चूल्हे के भीतर एक दूसरी सीसी पूर्वोक्त सीसी के मुख में मिला कर रख देय मस ऊपर के आंग की गरमाहट से तेल निकल कर नीचे की सीसी में टपकेगा परन्तु आंग पर सूय ध्यान रखना चाहिये जादा आंग होने से तेल जल जाता है ॥

चिकित्सा सन्मिलनी से ध्वजभंग की औपथ ।

विश्व पत्र का रस १ छंटाक, गो घृत १ छंटाक कनल के फूल की एक डंड़ी जला के पीस कर तीनों को एक पीतल के बरतन में मिला कर पी जायै, इसी प्रकार कई रोज प्रातःकाल पीने से नपुंसकपन जाता रहता है ॥

ग्रांड़ी एक तोला, कुचिला आधा दाना, कुचले को ग्रांड़ी में धिक् कर अग्नि में गरम करके रात को पेडू (वस्ति) पर लेप कर ऊपर से पान्थ बांध देय और सबेरे सोल देय इसी प्रकार दो तीन रोज करने से ध्वज भंग रोग (नपुंसक) आरोग्य होगा । सम्पादक का अज्ञाया हुआ नहीं है ॥

हिंवाष्टक चूर्ण ।

सीं०, पीपर, मिर्च, अजमोदा, सेंधा निसके, स्याह जीरा, और सफेद जीरा, यह सब दो २ तोला हाँग को अग्नि में भूँज लेय, सब कूट महीन चूर्ण कर लेय, इसका मात्रा १ मासा से ३ मासा पर्यन्त है ।

भोजन करते समय भोजन करने के पूर्व ही इस चूर्ण को घी में मान पण्डिते कपल के साथ खाया जाय तब भोजन करे तो यथार्थ रूप से भोजनार्थ परिपक्व हो अग्नि वृद्धि होती है ॥

ताकतवर शराब ।

निमी १० सेर, मुनक्का १ सेर, यमूल की छाल आध सेर, आंवला दे। छंटाक, मुण्डी दे। छंटाक, छरीला, जटानासी, अजयाइन, खस, तज, तेजपात, नागरमोथा, नरकचूर, चन्दन सफेद और मेहदी का बीज ढाई ढाई तोला, भूसली सफेद, भूसली स्याह, यहनन सफेद, यहनन सुख, सड़ी लायची, इन्द्रजी, भीक, तोदरी जर्द, और सफेद, यह सब सवा २ तोला, किसनिम पायभर, बदाम पायभर, छोहारा पायभर, मुनक्का पाय भर उक्त सब दवाइयों का अधिकतर कर ५० सेर पानी में (जिस प्रकार से शराब का खमीर सठाया जाता है) भिगा कर सड़ाय लेय जब खमीर सठ जाय तब २॥ सेर गी का दूध और आधसेर संतरे का रस उसी में डाल देग भभके से जिस भांति मद्य खींचा जाता है खिंचवा लेय । इस का मात्रा १ छंटाक से ३ छंटाक तक है जिन गृहस्थों को शराब पीने की शक्त है और सैकड़ों रुपया व्यर्थ अंगरेजी मद्य में गट करते हैं, मि-छायत से आये पुये स्वदेशी भाइयों को जात श्रुत करने में तो शीघ्रही कटिबद्ध हो जाते हैं और आप घर बैठे बिलायत के गामदागका पानी पी रहे हैं, प्यारे आश्रमों रंगे चुह्ने टीकटदार बेलों पर गत आशक हो अंगरेजी शराब पीने से निश्चयी धर्म का नाश होता है यदि आप लोगों को मद्यही पान स्वर्ग की प्राप्ति है तो उक्त शराब को या हम और भी उत्तम २ मद्य आप लोगों के लिये लिखेंगे, अजिष्ट्रेटी या तह सीलदारी में ॥, के कागज पर दरखास्त दे कर किसी कलघार (जो शराब चुभाने जानता हो) से अपने घर पर तैयार करवा लो और संध्या समय भोजन के पूर्वही कभी २ पी लिया करो लोक निन्दा और आचार

भ्रष्ट होगा दोनों से बच जाओगे, पतुर वही मनुष्य कहा जा सकता है जो दोनों छोक की साधना करते हैं ॥

जो जीर्णेश्वर या खांसी ज्वर चौथे दर्जे का असाध्य न जुगा हो, उस रोग में वैद्यों की अनुमति से मालतीसंत आदि रस तथा डाक्तरों की हानि कारक (डाक्तरों जीपथ एतद्देशीय मनुष्यों के स्वभावके विरुद्ध है) जीपधियां न देकर यदि दो मास पर्यन्त निम्नलिखित जीपधों का सेवन करावे तो हम शपथ सहित कह सकते हैं कि निश्चय समूल रोग नष्ट हो जायगा और यह भी कहते हैं कि यदि येत इस्से कुछ उपकार न जुगा तो जान लेना कि यह रोग असाध्य हो गया है अथ भारोग्यता प्राप्त होना दुष्कर है ॥

लाक्षादि तैल ।

लाख (पौपल वृक्ष की लाही) ३ सेर, कालेतिल का तेल १ सेर, दही का तोड़ ३ सेर, सोंफ, असगन्ध, हलदी, दिवदारु, कुठको, मुरा रेणुका, कूट, मुरेठी, सफ़िद चन्दन, मोथा और राधन (यह शरहर के वृक्ष के आकार पीत पुष्प युक्त एक वृक्ष होता है) ये सब एक २ तोला । प्रथम लाही को साफ़ कर १२ सेर पानी में लाही डाल एक बरतन में जोय दवे (उसी लाही में पाघपाव वैर का पत्र, - लोच २-तोला, - सण्णो ६ भासा कुचल कर छोड़ दिय (जिस से कि सर्वांग सब क्लाय में आय जाय) जब तीन सेर जल रह जाय तब पीतल कर छान लेय, तत्पश्चात् एक पीतल या ताँवे की कढ़ाई में उक्त तेल डाल चूल्हे पर चढ़ाय उसी में लाही के पानी और दही के तोड़ तथा सोंफ आदि सब लिखित दवाईयों को भी मिलपर पानी में पीस भाई (गोला) कल्क (लुगदी) कर डाल मन्द आंचये पचाये जब पानी बिलकुल जलजाय (पहचान यह है कि एक लकड़ी ऊपर के तेख में लगा कर आग में छुलाने से चुरचुराहट शब्द न होगा तेल जलने न पावे) और न चूल्हे से नीचे उतार

कढ़ाई के पेंदों में धागी का पुचारा दू गोघृही घीतल कर लेय और छान कर
घीतल में भर काग वन्द कर रखदे । रोज सवेरे गरम ऋतु में ८ बजे जाड़े
में १० बजे एक घंटे तक रोगी के समस्त शरीर में मर्दन कर के यदि रोगी
सबल हो तो ताजे कूप जल से स्नान करादे, अधिक निबल हो तो किंचित
उष्ण जल से स्नान करावे यदि रोगी अनिद्रा प्रगट करे तो न
स्नान करावे तपेदिक के अतिरिक्त इस तेल के मर्दन से त्रिषम अर काष्ठ स्वास
शंग दूर्ध स्नाज दिह दुर्गन्ध छवर हड़ फूटन आदि रुज पाराम होता है एवं
गर्भिणी के शरीर में इस तेल का मर्दन कर प्रत्यह स्नान कराने से गर्भ पुष्ट
हो आरोग्य बालक उत्पन्न होता है ॥

शितोपलादि चूर्ण ।

मिथी १६ तोला बंशलाचन (जिसके भीतर गौला रंग हो) ८ तोला
छोटी पौपर परन्तु प्रथम एक दिन रात पौपर का गीदुग्ध में भिगा रखे
फिर सुखायेय चार तोला छोटी लायची के दाने दू तोला तल १ तोला इन
सब दवाइयों का कूट कपड़ुछान कर तीन २ मासे को पुड़िया बना लेय चाम
सवेरे एक पुड़िया का ग्रहद के साथ चटा कर ऊपर से छटांक या आधपाव
कच्चा गज का दूध पिना दिय, यदि रोगी का पतले हस्त हो तो इलायची
का समूचा भंज कर सब दवा में मिलावे और ग्रहद के स्थान में सरबत अनार
या सरबत गोलिफर दिय और दूध भी न दिय ॥

खंडिरादि वटी ।

खैर ४ तोला सेलखरी (सड़जरोहत) २ तोला कपूर एक तोला इन
तीनों औषधियों का बज्ज के छाल छाथ में घोट चने की बराबर गीलो बना
घाममें सुखायेय, जब खांसीपावे एकगोली मुखमें छाल चूसे । यदि शिरमें
दह या पुसरी होतो हो तो चमेलो के तेल या नारियल के १ छंटाक तेल में
कपूर ४ मासे, बड़ौ लायची के दाने १ मासे शीतलचिनी २ मासे सब को खुद
महीन पीस रोज शिर में मले । अधिक पिपासा हो तो मुख में शीतल चिनी

के दाने या सूखे भावने के टुकड़े मुख में डालडाल कर चुड़की । घेठ में दाघ या जलन बोध हो तो घान के लावे का माड़ बना उस में मिथो मिला कर पिलावै और पीत चन्दन अथवा सफ़ेद चन्दन को पानी में थोड़े से कपूर के साथ घिस कर छाती और घेठ में लेप कर दिये । पुराने ज्वर में दस्त और गीराव का अधिक खाल रखना चाहिये क्योंकि खुलासा दस्त न होने से शिर में गरमी हो का घबड़ाना और खांसो का जोर बढ़ता है तथा दस्त पतला अधिक और दिन रात में कई बार होने से रोगी शीघ्र ही यमालय को गमन करता है और प्रायः मूर्खों की चिकित्सा से मूत्र में जलन, रोध एवं मूत्र द्वारा घात का घाना इत्यादि दोष हो जाते हैं उस पर ध्यान न देने से एक भी औषध गुण कारक नहीं होती । यदि रोगी को दस्त अधिक घाते हैं तो लघु गङ्गाधर चूर्ण या वृद्ध गङ्गाधर चूर्ण दे अथवा बेल का सुरब्बा या दूसरगोल की भूसी में जरा सा मिथो मिला के पानीमें घोल कर पिलावै कोष्ठवृद्ध में अर्थात् दस्त न घाते हैं तो त्रिफला चूर्ण ६ मासा या हड़ का चूर्ण या सुरब्बा सोते समय खिला दिये । या जरा सा चण्डी का तेल दूध में डाल कर पिला दिये मूत्र जल के या कड़क हो तो दध २ दाना शीतलचिनी को चूर्ण कर पानी के साथ दिन में चार पांच दफे पिलावै मूत्र परीक्षा में यदि धातु का घाना स्पष्ट हो तो पूर्वोक्त प्रीतिपलादि चूर्ण के बराबर ताल-मखाने के बीज का चूर्ण मिला अथवा के साथ न चटा के सिरफ़ गौ या बकरी के दूध के साथ देवे ॥

पुराण ज्वरे पथ्यम् ।

अग्नि में ऋजुन लगाना, स्नान, मान सबेरे शुद्ध वायु सेवन, दाह शांत करने वाली औषधियों को छाती और नाचे पर लेप करना जैसे स्वेत चन्दन, पीत चन्दन, कपूर, शीतलचिनी, खस सुगन्धबाला इत्यादि वस्तुओं के। यथोचित न्यूनाधिक ले गुलाब के अर्क में घोट घेठ छाती शिर तथा अन्य अंगों में भी जहां अति दाह (जलन) हो लेप करना अति लाभदायक है । खाने में मूंग तथा जराहर की दाल पुराने चावल

का भात, गेहूं या जव्वे की रोटी एवं कुलंग, हरिण खरगोश अथवा बकरी के गांस का सादा जूस (जिन्हे अरुचि अथवा पहरेज हेवे न साथै) गी तथा बकरी का दूध भयस्त्रन (नवमीत) अथवा ताजा गी घृत. परबल, रामलीकी (कद्दू) नेनुमा भूखी की जड़ और कोमल बीज रहित भांटे की सरकारी (भाजी) परिशुन जल (फिल्टर वाटर) अथवा स्वच्छ गङ्गा जल या अन्य पहली कतरणों का जल । यह सब गण पुराने ज्वर बाछों को सुश्रुत आदि मतों से अधिकार पुराने ज्वर ग्रस्त रोगियों को आराम किया है इसे इन लोकोपकारार्थे प्रकाशित कर देश द्वितीयों तथा चिकित्सकों (वैद्य) से सविनय निवेदन करते हैं कि अवश्य पूर्वोक्त कपिता-नुसार प्राचीन ज्वरग्रस्त रोगियों की चिकित्सा करके मुक्तों चिरबाधित और उपकृत करें । निस्सन्देह कह सकते हैं कि नियतकाल पर्यन्त मैं यदि चर्चोक्त लिखित उपायों से कुछ लाभ प्राप्त न हो तो निश्चय जानना कि अब उस रोगी का आरोग्य होना अति दुष्कर है ॥

अचार बटी ।

हरदी, दारुहरदी, मिर्च, जांवन, शोंठ, इड़, चीता, कूट, पीपर, सेंधानोत, एक २ तोला निम्बपत्र और नींबू परकी गुर्च दो २ तोला मेथा ४ तोला, उक्त सब दवाइयों को कूट कपड़ छान कर शुद्ध जल में घोट कर चने की बराबर गोलियां बना छाया में सुखा ले यह पूर्ण मात्रा है, बालकों की अवस्था देख कर मात्रा घटा लें और बालकों को निर्फे दिन में दो या तीन मात्रा से अधिक न देय इन गोली को दिन में छः दफे अर्थात् दो २ घंटे में जल के साथ खिलाने से नित्य ज्वर अथवा तिजारी बीघिया और मूतिद्वज्वर आराम होता है । इसे पानी में घिस कर भांखों में भांजने (अङ्गन) से भांखों के सामने अंधियारा होता सरी कि दूध से सोते में पलकों का चिपट जाना बकरी के दूध से नवीन फूली

तिल के तेल से रतींधी और केले के पानी के साथ आंखों में लगाने से आंखों से पानी का बहना बन्द होता है । स्वदेशीय मातृदिल भोजन पथ्य है । पाठकगण ! उचित है कि आप लोग अवश्य चूने की बट्टी को तैयार कर रोगियों को आंखों में देवीय औषध के प्रचार देने की यही एक साधारण उपाय है । जिन्हे इस के भी बचाने में आलस्य होवे ॥ का टीकट भेज यहांसे एक दिवस जिन्हें १०० गोली हैं मंगा लेय ॥

ऊपर जो शतावर्थादि पूर्ण धातुपुष्टाधिकार में लिख आये हैं उनमें अनुपात गौ का दूध लिखा है, कितने पाठकगण पत्र द्वारा पूछते हैं कि यदि गौ का दुग्ध लाभ न हो तो किसके साथ सेवन करें ? उत्तर, यदि गौ का दूध न मिले तो भैंस या मकरीके दूधके साथ सेवन करें यदि किसी का दूध न मिले तो भैंस जलही के साथ सेवन करें, रहा यह कि जलके साथ खाने से फायदा बहुत कम करता है । प्रायः ऐसे लोग हैं कि जहां जाठ दस रोज कोई किसी की दवा खाया और फायदा न देख पड़ा और जो देते हैं कहते हैं कि यह तो इनको फायदा नहीं किया बिचार करने का स्थल है क्यों अन्य भर का कोई एक रमिषार में साफ सुभा है दूसरे और २ रोग नाशक औषधियों की अपेक्षा धातु बहुत औषध अधिक काल में गुण करती है कारण यह है कि धातु ४० दिन से कम में नहीं बनता इस लिये कम से कम धातु बहुत औषध ८० दिन पर्यन्त अवश्य खाना चाहिये । कोई रोग नाशक औषध-वर्षों न हो जब तक निम्नलिखित बात-बातों का संयोग न होगा कभी गुण न करेगी अर्थात् देश, काल, अवस्था, प्रकृति, बलाबल, रोग और औषध का पूर्ण रूप से संयोग होनेही से नारोग्यता लाभ होती है यदि ऐसा न होता तो एक ही औषध से समस्त भारत का रोग नाराज होता क्यों हमारे भूत पूर्व वैद्यवर एक २ रोगों के नाशार्थ असंख्य औषधियों का विधान देते । दीर्घ काली रोगियों के दीर्घ काल तक औषध खाने का विधान खुद

वैद्यक शास्त्रज्ञों में लिखा है पाठकगण स्वयं देख लें यह लिखे सर्वसाधारण रोगग्रस्त यन्त्रु लोगों को उचित है कि किसी औषध के सेवनसे यदि किसी प्रकार की हानि न देख पड़े (प्रकृति तथा रोग के विरुद्ध औषध से शीघ्रही नुकसान होता है) तो उन औषध को बराबर सेवन करते जाय जबसे समय पर अर्थात् जिस समय यह औषध रोग से बलवान् होगी निश्चयही गुण करेगी ॥

क्षुधासागर अर्क ।

बदरख का रस ३ पाव, चिरकुमार का रस आध सेर बंगला पान का रस आध सेर, कागजी नीबू का रस ३ पाव, जंभीरी नीबू का रस २ पाव लैंग यही लायची, पीपर छोटी, दालचीनी, कालीमिर्च, जवाखार सज्जीखार, जीरा सफेद, जीरा स्याह, कालामोम, सांभरमोम और सेंधव मोम इन सब औषधियों को नहीन कुनल कर सब रस को एकत्र कर एक यही बीसी में जपवा किसी ऐसे मृत्तिका पात्र में जिस में कि कुछ राज तक पानी भरा गया हो भर पात्र का मुख बन्द कर १५ दिन तक धूपमें रखे बाद उसे कपड़े में छान दोतल में भर कर रख दे और जलरत पड़ने पर पिये । इसका मात्रा ३ मासा से २ तोला तक है इन अर्कों को देनेमें समय अर्थात् मास सबेरे पीने से अग्नि मन्द अग्नीर्ण और अनेक उदर व्याधि नाश होता है परन्तु जिसकी प्रकृति जलितर्मे तथा धातु की कोई किसी की मिताही होगी तो जायदा न करेगा ॥

एरंड पाक ।

बिला हुआ एरंड का बीज आधसेर, दूध ४ सेर, घी घायभर, चिनी ढाई सेर, सोंठ, पीपर, मिर्च, लैंग, छोटी लायची, तज, तेजपात, अस-गन्ध, सोंफ, रासन, तेजबल, शतावर, गदापूर्णा की जड़, खस कपूरकधरी यह सब औषध सब २ तोला जायफल १ तोला जायित्री और केशर

छः २ मासा (पाक बनाने की विधि) पिछले अङ्क में मैं लिख आया हूँ परन्तु साधारण रीति से फिर भी लिखे देता हूँ मयम दूध को कड़ाई में चढ़ाय कर अँटे जब आधा दूध जलजाये तब रेंडीकी गूदी को मिलपर घीस दूध में हाल देय और जीटता जाय जब रोया हो जाय तो जब रोये को घी में भूँज लेय बाद चिनी की चासनी बनाय (जब चासनी ठंडी हो जाय) उसीमें रोया और सगस्त उपरोक्त काफ़ादि औषधियों को फूट कपर छान कर मिला देय । बादाम पिस्ताकी गरी मुनक्का और किस-मिस आध २ पाय ले महीन कतर उसीमें मिला तीस २ तोले का लघूहू बना लेय । सात सयरे एक मोदक खाकर ऊपरसे किस्मिन उष्ण पाचभर गी या बकरी का दूध पीने से गठिया छकवा अङ्ग दर्द पांडु रोग उदर रोग आंत दृष्टि आराम होता है बड़ाभारी गुण इसमें यह है कि कैसा हू कोष्टवद्दु र्पों न हो मोते समय एक मोदक खाकर ऊपर से गुनगुना दूध पी लेने से सयरे नामूली दस्त सूख गुनासा आ जाता है ॥

अफीम खानेवालों के लिये अफीम पाक ।

अफीम ३ तोला, दूध ४ सेर घृत आध सेर चिनी ढाई सेर, तन, तैजपात नागकेशर मिर्च जयङ्ग जायफल कंकोल शकरकरवा सफेद मू-मली स्याह मूसली केवाउका बीज यह सब एक २ तोला शोंठ पीपल जावित्री और केशर छः २ मासा छोटी लायची २ तोला यश्मनोवन २ तोला, मोती अनघेधी ३ मासा कस्तूरी १ मासा चांदी का धर्क ५० ताव (बनाने की विधि) अफीम का मात्रा खानेवाले पर निर्भर है चाहे जितना कम जादा रखे पहिले दूध को अधावट करै तब अफीमको पाती में घोल कर उसी में हाल देय जब दूध रोया हो जाय, घी में भूँज लेय बाद चिनी की चासनी बनाय उसी में रोया और सगस्त औषधियोंको फूट कपर छान कर उसी में हाल देय परन्तु मोती को गुलाब के अर्क में घोंट कर-हाले और सामयिक मेवा आदि हाल के लपने बलाफल के

अनुसार माला बना ले एवं हर एक मोदकों पर चांदी के चकं लपेट देय और दोनों समय अथवा एक समय दूध के साथ सेवन करे यह सर्द ऋतु का नुसखा है गर्म ऋतुओं में गर्म चीजों का निकाल डाले यदि अफीम खाने वाला उक्त विधि से पाक तैय्यार कर सर्वदा खाया करे तो कभी बीर्य्य हीन और दृढ़ न हो । इस मोदक के खाने से शीत युक्त खांसी दन्ता प्रमेह अतीसार और सर्वाङ्ग वायु नाश होता है और बीर्य्य स्तम्भ होता है प्रायः लोग गले के लिये अथवा रोग नाश के लिये अफीम खाने वा थण्डू पीने लगते हैं परन्तु उसका अन्तिम फल यह होता है कि रोग नाश तथा मजा न मिल के और रोग दृढ़ि हो जाता है ममय शरीर की भाङ्गियां संकुचित हो जाती हैं, स्मृति क्षान् बुद्धि अष्ट और कुछ काल में मनुष्य निकम्मा हो जाता है इससे उचित है कि केवल अफीम न खा के अफीम पाकही बनाकर खाये और फिर कुछ रोज के बाद छोड़ दिया करे ॥

भांग का पाक ।

भांग के खानेवाले भी आज्ञा दुनियां में कम न निकलेंगे । भांग के खाने से कुछ ऐसी हानि नहीं है कि शरीर नष्ट अष्ट हो जाय जैसा की अहिमेन के खाने में होता है रहा यह कि शीत मिजाज वाले को कुछ घादी करता है उचित है कि शीत प्रकृति के लोग जाड़े के दिनों में संध्या समय भांग का पाक बना कर खायें । भांग १ पाय, गौ का दूध ५ सेर, घी आध सेर, तज, तेजपात नागकेशर काली मिर्च सूबा असगंध गदापुर्ना की जड़ केवाळ का बीज सरियारा की जड़ कीट्टाटोंटीकी जड़ ककई की जड़ सब एक २ तोला लौंग शोंठ पीपूर जायफल जायित्री और केशर छः २ मासा छोटी लायचीयंशलोचन और सीक, दो २ तोला ।

बनाने की विधि ।

पहिले भांग को तीन चार पानी से खूब धो कर सुखा लेय, दूध

को कढ़ाई में हाथ औरों लथ आधा दूध रह जाय भांग को सूय गहीन चूर्ण कर उसी में हाल खोवा कर लेय, खोवा को उसी घी में भूँज चीनी की चासनी बना उसी में खोवा और समस्त जीपधियों को कूट कपर छान कर मिला अपने घल के अनुभार मोदक बना लेय । सांभ सखेरे जयवा सिर्फ भांग को एक छहछु खा कर ऊपरसे दूध पिये तो प्रमेहादि समस्त धातु का रोग आराम हो । और घल तथा जग्गि की दृष्टि हो । भांग और अभीन पाक विशेष कर उसीको कायदा कर सकता है कि जिसका निजाज शीत का है और उक्त नशा खाने का अभ्यास भी है ॥

कामोत्तेजक चूर्ण ।

सफेद भूमली दिल्ली की, स्याह भूमली, शतावर, सकाकुल निश्री, मालिन निश्री, यह सब एक २ तोला, मद्रिगन दोनों दो तोला, दातरी दोनों दो तोला, इन्द्रजव, सुरवारी का बीज, जावित्री, जायफल, शोंठ और कुलीजन छः २ मासा उक्त सब जीपधियों को जलग २ कूट कपर छान कर एकत्रित कर चार २ गाने की पुड़िया बना ले सांभ सखेरे एक पुड़िया ग्रहद के साथ चाट कर ऊपरसे पाय भर दूध निश्रीयुत पी जाय यदि गर्भ ज़रतु हो तो दूध के परिवर्तन में गाजवां के अर्कमें निश्री गिलाय कर पीना उत्तम होगा । इस चूर्ण को दो मास पर्यन्त सेवन करने से धातुहीन गहीन क्लोवत्य दोष आदि आराम होता है और रति काल में आनन्दता प्राप्त होती है । आरोग्य पुरुषों के लिये वैद्यक शास्त्र में दो भांति के प्रयोग कहे हैं । रसायन और वाजीकरण, इन दोनों का यथायत व्यवहार जागे करेंगे । रसायन किसे कहते हैं "यज्जराय्यातिभि-
प्यग्नि भेषजतद्रसायनम्" जिन् २ जीपधि और उपायों से मनुष्य दृढ (पुढ़ापा) न हो अर्थात् शतर गस्ती वर्ष पर्यन्त संपूर्ण इन्द्रियों कि शक्ति यथायत् बनी रहे उसे रसायन वय स्थापन एवं कल्प भी कहते हैं । र-
सायन प्रयोग बयस के पूर्व जयवा मध्य में आरोग्य जन को हो सक्ता

हे "नाभिश्चुद्धिशरीरस्य युक्तो रसायनेऽभिधिः" रोगी तथा अति धातुक्षीण शरीर रसायन नहीं होता यदि होता भी है तो रोग आराम के बाद एक वर्ष से ३ वर्ष पर्यन्त औषध के सेवन से । बाजीकरण उसे कहते हैं कि "यस्मात्तद्रूपं भवेत्स्त्रीषु हर्षो बाजीकरं च तत्" जो क्रिया और औषधियां स्त्री रति में आनन्द उत्पन्न करे । यह भी अति उपचाय शील को बाजीकरण भी नहीं होता यदि चेत् हे भी तो कुछकाल के औषध सेवन से होगा अन्यथा असम्भव है बाजीकर और रसायन कर अनेकानेक औषध हैं कि जिनके बनाने की क्रिया, खाने की विधि और गुण गुण कर पाठक गण चसत्कृत हो जायेंगे उसे जाने कहेंगे इस स्थान में हम सिर्फ दे। द्रव्य दिखलाते हैं सफेद मूखली (रसायन) और केवाळ का बीज (बाजीकर है) सफेद मूखली दिल्ली की पाय आधमेर ले फूट कपर छान कर तीन २ गांसा की पुड़िया बना ले इसका मात्रा ३ गांसा से १ तोला तक है जैसी जिसकी शक्ति हो। सात सवैरे एक पुड़िया मुख में रख शीघ्रही पाय आध सेर गी के दूध से उतार जावे, घूर्णको टुचलावे न क्योंकि मुखमें बिपट जाता है । यदि इस घूर्ण के खाने से कोष्ठमृदु अशीर्ण आदि उपद्रव न हो। निरन्तर पचा जाय तो जय तक सूप शीर्ष्य मलयाग पुष्ट और चृद्धि न हो। खाना घन्द न करे एक वर्ष तक इसके खाने से शीर्ष्य नष्टायली हो। अनेक स्त्री गमन तथा मलयाग पुत्रोत्पादन करने में समर्थ होता है । बाजीकर मनकेवाळ के बीज को छील गरी नि-काळ घूर्ण कर ले इसका मात्रा ४ गांसा से दे। तोला तक है जैसी शक्ति हो। मात्रा बना लेय सात सवैरे एक मात्रा खा कर ऊपर से निश्रीयुक्त दूध पी जाय जब तक पूर्ण रूप से लाभ न हो बराबर खाता जाय किसी दोष से रति शक्ति क्यों न जाती रही हो अ-वश्य इसे कुछ काल सेवन करने से पुरुषत्व लाभ होगा ॥

प्रदर रोग की अपूर्व औषध ।

रोग बन्दन जटामाभी लोच सप्त पदम केसर नागकेशर बेलकी गरी नागरमेया मोंठ हाहूबैर पाट्टी कुरैया की छाल इन्द्रजय अतीस गुग्गा आंगना रमयत आमकी गुठली की गरी जामुन की गुठलीकी गरी मोषरम कमलगट्टेकी गरी (कमलगट्टेके भीतर बीचमें एक हरीवस्तु रहती है उसे निकाल डाले) मजीठ छोटी लायची अनार का बीज और फूट इन सब औषधियों को दो दो तोला ले फूट कपर छान कर घोटल में रग देय इसका मात्रा ६ मासा से दो तोला पर्यन्त है । (गाने की विधि) दो तोला साफ पुराने चावल को कुचलकर ३ छँटाक जल में भिजा देय और बाद एक घंटे के चलकर उसका पानी छान लेय उसी जल से उपरोक्त चूर्ण की एक मात्रा शिल पर पीट कर १ मासा गहद डाल कर पी जावे इसी प्रकार दिन में तीन अवस्था दो बार पीने से निश्चय है कि १५ दिवस में रोग प्रायशः नष्ट हो जाय । इसी चूर्ण से रक्तश्राव भी बन्द होता है ॥

काले साँप के काटने का इलाज बी० सी० से ।

साँप के पत्ते को चक्री नाखून से उतार कर जमा करलेय और उस में साँप के पत्ते का दूध मिला कर बने को बराबर गीलियाँ बना ले जिसे साँप काटी उसे पाँचे २ घण्टे के बाद एक एक गीली खिलावे ६ गीलियाँ तक साँप के काटी हुए घादमी का मुख मोठा मालूम होगा सातवीं गीली कड़वी मालूम होगी और मरीज अच्छा हो जायगा ॥

कस्तूरी की पहिचान ।

प्रायः लाड़के दिनोंमें नेपालो तथा पहाड़ीमनुष्य नकलीनाभी बनाके पहरों में लाने लोनी से ठग लाते हैं, माघ मास में प्रयाग में सैकड़ों इसी भाँति के ठग लोग आते हैं और घोडा दे के हजारों रुपये ले जाते हैं कुछ

प्रयागही में नहीं ऐसाही हर एक भारीर नेलोंमें होता है और जो जिस वस्तु को पहचानता है वह उसे कभी ठगा नहीं जा सकता है । हिरण के नाभी की यह बहुत उत्तम परीक्षा है कि पांच चार लहसुन के जवे को पत्यस पर मझोग पीस उसी के रस में एक विनस भर तागा तर कर उसे सूची (सुई) में पिरोइ नाभी में छेद कर छोरे का खोंब ले यदि उस नाभी के भीतर प-मिल कस्तूरी होगी तो लहसुन की दुर्गन्ध जाती रहेगी कस्तूरी की सुगन्ध छोरे में पा जायगी "खुले कस्तूरी की परीक्षा" अक्षर ठगशीग कायले पादि वस्तुओं को मझीन रवा कर बाद पसिल कस्तूरी को पानी में घोंट उसी में रवे को तर कर छाया में सुखा लेते हैं इसी प्रकार है। तोन पुट देने से पसिल कस्तूरी की भांति मझकदार हो जाता है वह नेलों में जाके उसे पाठ दस रुपये तोले के हिसाब से बेच पाते हैं । एक साफ पन्नि के पट्टारि पर एक रवे को रख देय और उसके धूम की सुगन्ध लेय यदि पसिल कस्तूरी होगी तो उसका धुवां पादि से धन्त तक मझकदार निकलेगा और नकली होगी तो प्रथम धूम सुगन्ध सक्षित बाद धूम (धुवां) रक्षित अथवा जो वस्तु भीतर होगी उसका मझक बोध होगा ॥

कस्तूरी की उत्पत्ति ।

शुद्ध त्रिहीन नर हिरण के नाभि में चर्म की एक पोटरों सी होती है उसी में कस्तूरी पैदा होता है पहिचान उसको यह है कि जिस हिरण के ना-भी में कस्तूरी रहित होती है वह उसी के मद से चारो तर्फ बनें में पौधों का सूंघता फिरता है, कारण यह है कि उसको नाभि में से जो सुगन्ध प्रगट हो-ती है तो उसे उस सुगन्ध का अपना नाभि में न मान हो कर अन्य वस्तु-ओं में मान होता है । लोग ऐसा कहते हैं कि उस हिरण के जंघा की अस्थि एकही होती है इससे वह बैठ भी नहीं सकता रात को छ्छादिकों में लंठग कर सो जाता है और बेची हिरण बंशी के शब्द को सुन कर प्रसन्न भी होते हैं । अधिक लोग जो सद्योगी हैं, वन में जहां मद युत शृग को दिखा बंशी वजाते हैं और एक टही बांस के टुक में खड़ी कर देते हैं और उस बांस में

डोरी भी बांध देते हैं जब मृग टहो में उठग कर सो जाता है तब डोरी को खौंचते ही टहो गिर जातो है और उसी के साथ मृग भी गिर जाता है वन वधिश मृग का घेठ फार कर कस्तूरी को यैसों निकाल लेते हैं । हर एक गाभी में से ढाई तीन तोले से कम कस्तूरी नहीं निकलतो जिसका मूल्य चालीस पचास रुपया होता है । इस प्रपञ्च का भी अद्भुत चरित्र है जब दो तीग रुपये को खाली में छोटी २ बच्चों को लोग मार डालते हैं तो जिस पशु को घरीर में इस कदर मूल्य निम्नित वस्तु है उसका जीवन कैसे बधकों से बच सकता है ॥

कस्तूरी का गुण ।

इसका स्वभाव क्षति गरम, मातरलेप्त नाशक, धातुलेशक, बाजीकरण क्षमि और मल गर्हक है जाता इसका अर्धु चावल से ४ चावल पर्यन्त है । प्रायः जमीर लोग जाड़े के दिनों में पान में डाल कर खाते हैं, खाने और पीने की तमाकू में इसे डालने से तमाकू बहुत समदा गुण दायक हो जाती है, हर एक पुष्ट दवाइयों में भी इसे डालते हैं । परीक्षा से ठीक जानाजाता है कि शीत निशात्र वाले को रसकी अपेक्षा कस्तूरी अधिक गुण करती है ॥

मृगनाभ्यादि वटी (कस्तूरीकी गोली)

कस्तूरी ६ माछा, जनपेची मोती १ तोला, जावित्ती १॥ तोला, केशर २ तोला, आयकल २ तोला, छोटी छायची के दाने २ तोला अफरकरहा २ तोला, कट्टकाल निच २ तोला कपूर ६ माछा, शुद्ध कुचला १ अपया फुपडे का रास (इस्टकनिया) ४ पायल, सेने का बर्क १० ताव घांड़ी के बर्क २० ताव

वनाने की विधि ।

प्रथम मोती को घोंटने वाले खरल में डाल गुलाब के बर्क में ४

पहर घोंट ले । कुचला सोचनेकी रीति यह है कि एकवरतनमें कुचले को जल में भिगा दे और रोज उसका पानी बदलता जाय २१ रोज के बाद उसे छील उसका दूध निकाल महीन कतर धूर्ण कर लेय, दृष्टिकनिया चाहे अङ्गरेजी दवाखाने से ले लेय, कुचला डालनेसे सिर्फ प्रसङ्गमें स्तम्भन होता है उसे न डाले तो कुछ अनदेश भी नहीं है । सब दवाइयों को खरल में डाल २ तोला गन्ध और गुलाब के बर्तनमें घोंट मटरके परावर गोली बना लाया में सुखाय बीसी में बन्द कर रख देय । इस मट्टी की साखा चौथाई गोली से २ गोली पर्यन्त है जैसा जिनका बल हो साखा बना लेय । संध्या समय एक साखा खा कर ऊपर से दूध मिश्री पीने से बिषय में अति आनन्द और शक्ति बढ़ती है, परन्तु इस गोली के सेवन करने वाला तेल मिर्चा टटाई शाक चरमन बासी अन्न रुत भक्त भाजरा आदि न खावे ची दूध गलाई पुराने चावल का भात सेव सीठा अनाद पीनेकी गड़ेरी आदि अधिक कापदा करता है इससे अतिरिक्त इस गोली के खाने से कासखास यक्ष्मा लकवा गठिया और गण्ठका आदि रोग आराम होते हैं ॥

केशरकी पहिचान ।

यह एक वृक्ष के पुष्प के भीतर का रस है, जैसे धर्रे के पुष्पके भीतर रस होता है इसके वृक्ष काश्मीर में होते हैं । ठग लोग गकली केशर भी बना कर बायसर बेच जाते हैं, वे ठग केशर इस प्रकार बना लेते हैं, जैसे मुद्दे में जो बाल मद्दुश पदार्थ होता है अथवा धर्रे के फूलके उत्तम केशर को पानी में गाढ़ा घोंट कर उसी में तर कर लाया में सुखा लेते हैं इसी प्रकार पाँच चार पुट देने से केशर हो जाता है । असिल केशर की पहिचान यह है रङ्ग जर्दचमेली (किञ्चित् सुर्खी लिये पीतवर्ण) क्षीण सुगन्ध, यज्ञ में हशका स्वाद ॥ किञ्चित् हार और चावल भर केशर २० गिनट तक मुँह में रखने से शिर में गरमी बोध हो इससे विपरीत नकली

जानना । गुण, गरम सुखाद वायु रुफता नाशक शक्ति तथा पलको दृढ़ि करता है । जाड़े के दिनों में प्रायः इसे पान के तथा और खाद्य वस्तु के साथ खाते हैं ॥

सफेदचन्दनके तेलका पहिचान ।

यह तेल बिलायत से भी बन के जाता है और एतद्देशीय इतर बनाने वाले गन्धी लोग भी बना लेते हैं क्योंकि जितने प्रकार के इतर तैयार किये जाते हैं सब में चन्दन के तेल का पुट रहना है और जादेतर चन्दन का तेल सुनाक के रोग में अधिक काम जाता है, परीक्षासे जाना गया है कि सुनाक की बिमारी में और दवाइयों की अपेक्षा चन्दन का तेल अधिक फायदा करता है परन्तु जब असल पदार्थ नहीं मिलता तो गुण न कर अथगुण करता है फिर आज के जमाने में जैसे और २ बातों की तरफ़ी हुई है और होती जाती है वैसीही छल कपट झूठ बिश्वासघात आदि की भी ऐसी प्रवृत्ति हुई है कि कहीं घैर धरम को जगह बांकी न रही और समय के प्रभुवर की रुपासे बढताही जाता है । खैर सफेद चन्दन के तेल की अच्छिल परीक्षा यह है कि एक सूख साफ सफेद कागज पर थोड़ा तेल लगा दूर से कुयले की आंच देखाओ फौरन तेल चढ़ जायगा जरा भी दाग न माखूँ होगा और नकली तेल का दाग बना रहेगा ॥

अरेजीइमलीकी चटनी ।

खिली इमिली २ सेर, मिरचा आधपाय, अदरक खिला हुआ आध पाय, लहसुन खिला आधपाय, दालचिनी १ छंटाक, करन (गरंक्त) एक पाय, किसमिस १ पाय, चिनी १ सेर, निमक ढाई तोला, बिलायती मिरचा अंगूर का १ बोतल (बनाने की बिधि) प्रथम किसमिस और करन को सूख साफ कर पानीमें धो सुखा लेय और इमिलीका थोड़े पानी

में भिजाओ दो घंटे के बाद मल कर बीज फेर सका गूँहा ले लेय बाद इसके लाल निरवा अदरख लहसुन और दालचिनी चारे चीजों को शिल पर सिरका दे कर सूख महीन पीस लेय फिर सब चीजों को मै सिरका धिनी आदि एक कलईदार बरतन में डाल घूँहे पर चढ़ाय मन्दाग्नि में पकाये जम सूख सुगन्ध जाने लगे तब उत्तार लेय और अमृत-प्राप्त या बड़े जुख के शीसे में भर कर रख देय यह चटनी बरसें रहती है, भोजन के समय या जम चित्त चाहे खावै । इस चटनी को छोट साहस्य तक खाते हैं ॥

आंमकी चटनी ।

आंम कच्चा ७ सेर, धिनी साढ़े तीनसेर, सिरका अंगूर का दो दो-तल, लाल निरवा २ छंटाक, आदाम की गरी १ पाव धनिया १ पाव, किसमिस तीन पाव, अदरख डेढ़ पाव, मनक डेढ़ पाव, लहसुन २॥) तोला (बनाने की बिधि) यह चटनी दो प्रकार से बनती है एकमें आंम के कतरे रहते हैं और दूसरा आंम को पीस लुगदीकी जाती है । पहिले आंम को छील महीन कतर शिल पर पीस ले बाद इसके निचा लहसुन धनिया अदरख चारे को शिल पर सिरका में पीस ले और आदाम को महीन कतर ले फिर सब चीजों को एक कलईदार बरतन में डाल घूँहे पर चढ़ाय धिनी आंम से पकावै और करछुल से बराबर चलाता जाय जब देखे कि सूख पक गया महुक जाने लगी तब उत्तार ले और किसी कांच के पात्र में रख ले यह चटनी अति सुखाद अग्निवृद्धि गुण भिशिष्ट होती है यह चटनी प्रायः बनी बनाई औदागरेणों की दुकानों में भी रहती है, और इसे बड़े २ अंगरेज लोग खाते हैं ॥

सुजाककी दवा ।

ऐसा कौन मनुष्य है जो इस रोग में ग्रसित न हो। इसे घेद्यक में

मूत्रकृच्छ्र और मूत्राघात, हिकमत में सुग्राह और हाकुरी में गनेरिया कहते हैं जिसका स्पष्ट लक्षण एवं चिकित्सा लिखेंगे निम्नान से लेकर बताईं तक इसकी औपध जानते हैं परन्तु जिस प्रकार हेजे की औपध आज तक उत्तम नहीं निकली वैसाही इस रोग की भी ॥

शीतलचिनी आधपाव, सेलखरी आधी छंटाफ, कलमी सैरा १॥ तोला, फिटफिरी ६ मासा, नेरु सही ४ मासा, कपूर ३ मासा सब औपधियों को सहीम कूट कपरछन कर तीन २ साने की पुड़िया बना लेय दिन में छः दफे अर्थात् दो २ घंटे पर एक २ पुड़िया मुख में रस दूध पानी या सिर्फ आधपाव पानी से उतार जावै । आठ रोज इस औपध के खाने से पेशाब का जलन और मघाद का आना अवश्य बन्द होगा यदि आठ रोज में मघाद न बन्द हो तो इस औपध को भी खाये और निम्नलिखित पिचकारी भी लेवै, ऐसा देखा गयाहै कि बिना पिचकारीके नहीं आराम होता । नेरु सही २ तोला मेहदी की ताजी पत्ती २ तोला सफेद सुरमा २ तोला रसयत २ तोला इन चारों औपधियों को डेढ़ सेर पानी में सहीन घोंट पकाय लेय जब तीन पाव जल रह जाय छान कर दोतल में भर लेय और दोनों समय इसी की पिचकारी लेवै (पिचकारी लेने की विधि) जब पिचकारी लेना हो प्रथम पेशाब करे बाद एक चौकी पर उकुरु बैठ पिचकारी भर कर लिङ्गमार्गमें देय और तीन निमट तक लिङ्ग का मुह बन्द करे ताकि शीघ्रही जल गिर न जाय जब पिचकारी ले चुके तो आध घंटा तक पेशाब न करे इसी भांति तीन दफे सवेरे और तीन दफे शाम को लेय पांच ही बार रोज में मघाद बन्द हो जायगा यदि इससे फायदा न हो तो यह पिचकारी लेवै ॥

विफला पाव भर नींब की पत्ती आधपाव घनियां एक तोला सफ़ीम ६ मासा सब दवाइयों को अधकचरा कर डेढ़ सेर पानी में रात को भिजा दिय और जोर दिय जब आधा पानी रह जाय छान कर दोतल में भर लेय पूर्वोक्तानुसार आठरोज तक पिचकारी लेने से अवश्य फायदा होगा । पावः

लोग यह प्रज्ञा करते हैं कि पिचकारी लेने से मूलमार्ग का छिद्र बड़ा हो जाता है ? पिचकारी लेनेसे मूलमार्ग बड़ा नहीं होता परन्तु अधिक पिचकारी लेने से पोते में पानी उत्तर आता है ॥

अगर पेशाब रुक २ होता है या मूलमार्ग में कुछ पड़ गया है तो इस शोध का सेवन करे । कच्ची फिटकरी १ तोला कड़ावचिनी २ तोला रेवचिनी १ तोला कल्का, चोरा १॥ तोला छोटी लायचो के दाने १ तोला सब दवाइयां कूट कपर छन कर चार २ मासे को पुड़िया बना ले बाधसेर गो का दूध और सेर भर पानी दोनों मिला एक मतिजा पात्र में रख दे और उसी के साथ दे २ घंटे पर एक २ पुड़िया खाय । पथ्य मूंग को खिचरो इस प्रकार तीन दिन सेवन करने से मूलमार्ग निरन्तर साफ हो जाता है । सुजाक रोग प्रायः तीन कारणों से होता है आतमक स्वप्न, दीप और वेष्ट्यागमन परन्तु आजकल वेष्ट्यागमन से यह रोग होती हुए अक्सर देखा जाता है जब लोग वेष्ट्या के पास जाते हैं तो उस समय यह नहीं जाना जाता कि इस के सुजाक है, परन्तु जब लिङ्ग धानि में पहुँचता है तो अतिगर्म अग्नि के स्पर्श से मालूम होता है बाधिये कि मनुष्य उसी समय उसके अलग हो जाय तो उत्तम है नहीं तो दो तीन दिन के बाद मूलमार्ग में दर्द और पीब आने लगती है । इसे मैं प्रथमही स्पष्ट कर चुका हूँ कि एक शोध प्रत्येक व्यक्तियों को लाभ कदापि नहीं पहुँचा सकता है । थोड़े रोज हुए कि एक स्त्री जिस की उमर २५ वर्ष की थी दो वर्ष से स्वेत प्रदर रोग में ग्रसित थी जिसने हर एक डाक्टर चिकीमां को दवा की परन्तु कुछ लाभ न हुआ अन्त में हमारे पास आई दो मास पर्यन्त मेने भी अनेक शोध दवा उसकी विक्रिता किया कुछ फायदा न हुआ तब एक आधारेण शोध बना कर दिया कि उखे घड़ १६ दिवस में आराम हो गई । सकरकन्द और रतासु दोनों को मचीन कतर छाया में सुखा कूट कपर छन कर एक २ तोले की मात्रा बनाले, हर एक मात्रा में ६ मास मिथी और तीन मास वरगद का दूध मिला मुख में रख पाव भर गो के कच्चे दूध से उतार गावे इसी प्रकार दोनों समय १६ दिवस पर्यन्त सेवन करने से समूल रोग नष्ट दिखा गया ॥

किसी किसी को स्वप्न दीपसे भी सुजाक का रोग हो जाता है सब यज्ञ है कि स्वप्न में काम बिलास प्राप्ति होने पर जहां वीर्य संकलित हुआ और न बांख खुल जाती है इस से वीर्य बाहर निकले से रुक कर सुजाक हो जाता है इसप्रकार से जिसे सुजाक हुआ हो उसके लिये यह औषध लाभ कारी है, दो तोला पलचो को रात में पाधसेर जल में भिगा दे और सुबे उसे खूब मलकर लुभाव निकाल कपड़े में छान दो तोला चिनो मिलाकर पों जाये और गर्म चीजों से पहरेज करे पांच बार रोज में चाराम हो जाय गा अगर इसके फायदा न हो तो इसे पिसे खीरे ककड़ी के बीज ४ तोला पलचो ४ तोला गीबुज ३ तोला मिर्चोदना ३ तोला बबुल का गींद ३ तोला घनिया ३ तोला इसरीला २ तोला चावला सूखा २ तोला सब दवाईयों को मधकचरा कर १० पुड़िया बांध ले एक पुड़िया रात को पाधसेर जल में भिगादे सुबे खूब मल छानकर एक तोला चीनो मिला पीजावे इसो प्रकार सुबे भिगावे तो साम को मल छान कर चिनो मिला पिसे नियय है कि सात आठ रोज में विलकुल जाता रहेगा । अगर आठ रोज में पूर्ण चारोग्यता लाभ न हो तो यह दवा भी पिसे जावे सो निम्नलिखित पिचकारी भी लेवे । षड् बहेरा चावला तीनो बराबर पावभर ले मधकचरा कर रात को सेरभर पानी में भिगा दे प्रातः काल उसे छान एक मासा नौलायोद्या खूब मद्योन पोंस मिला दे फिर इसकी चार पांच दिन तक दोनों समय पिचकारी लेवे अवश्य फायदा करेगा । खाने को मूज को दाल गेहूं को रोटी पुराने चावल का भात चौ गौ का दूध उत्तम है । एक सुजाक भी इसी प्रकार का हो जाता है जैसे कि मफूम आदि स्थान को औषध खाकर एक रात में तीन बार बार प्रसन्न करे और चर बार बाद मैथुन के प्रभाव न करे तो वीर्य की थोड़ी बिंदु लिङ्ग के छिद्र में जम जाती है और सुबे तक घाव कर देतो है । यह सुजाक बिना पिचकारी के चाराम नहीं होता ॥

पिचकारी की दवा ।

नौलायोद्या मीली फोड़ी दोनों अग्नि में भूज कर छः २ मासा

विलायती नील एक तोला तीनों को सूय महीन पीस दो सेर जल में घोंट कर बोतल में भर लेय अन्दाज के माफिक दोनों समय पूर्वोक्तानुसार पिचकारी लेवै । और उपरोक्त औषध का सेवन करै । अगर पेशाब में जलन अधिक हो तो यह औषध का इन्द्री जुलाव लेवै । शीतलचिनी, फलनी सेरा, सफेदजीरा और छोटी लायची यह सब दवा एक २ तोले सय को महीन पीस छान कर १६ पुड़िया बना ले दो २ घण्टे पर एक २ पुड़िया मुख में रख दूधपानी से उतार जावै इसी प्रकार दिनभर में पांच छः दफे पीवै और धोई भूंग की दास और पुराने दाल का भात खावै सूत्र जलन जाती रहेगी ॥

पिचकारी सब प्रकार क सुजाक की ।

रसघत फिटकिरी सफेदसैर और कपूर दो २ मासा सफेदसुरमा एक तोला इन सब औषध को आधसेर जल में घोंट कपड़े में छान दोनों समय पिचकारी लेवै तो सब प्रकार की सुजाक आरम हो ॥

दूतरी पिचकारी ।

स्यानजिह्वा (फुत्ता कां जीभ) एक, उसे अग्नि में जलाय कोयला कर ले तूतिया १ रत्ती, रसकपूर १ रत्ती, सफेदसैर ५ रत्ती, उक्त सय औषधियों को पावभर पानी में घोंट दोनों समय पिचकारी लेने से असाध्य सुजाक भी अच्छा हो जाता है ॥

कुराकाटने की पिचकारी ।

मनुष्य के शिर के बाल दो तोला प्रथम उसे कतरनी से सूय महीन कतर ले और एक घाय भेड़ी अथवा घकरी के दूध में इतना खरल करै कि एक दिल हो जाय बाद दोनोंसमय पिचकारी लेवै । जो पुराना सुजाक

होने से लिङ्गेन्द्रिय के भीतर मांस ग्रन्थि पड़ जाती है जिसके वजे से मूत्र रुक जाता है और सर्वदा एक प्रकार का दर्द हुआ करता है । इस रोग को डाक्टर लोग इस्टिफर अर्थात् मूत्रमार्ग छोटा हो जाना बतलाते हैं ॥

और जिसकी दवा सेवाय सलाई के अन्य नहीं है यह रोग इस पिचकारी से आरोग्य होता है । एक दो रोज इस पिचकारी के लेनेसे कुरा फट जाता है पहचान यह है कि मूत्र मार्ग से सून निकलेगा, बाद दो रोज के निम्नलिखित पिचकारी लेवे ताकि चाय सूख जावे आधपाव त्रिफला, रसवत १ तोला सफेदसैर ६ मासा मुरदाशंख ६ मासा नींबू और इमली की पत्ती एक २ छटांक सब दवा को फूट कर रात को तीन पाव जलमें भिगा दे सवेरे जांस देय जब आधसेर जल रहजाय सूय मल कर छानले और देनेां समय चार पांच रोज तक पिचकारी लेवे ॥

सुजाक पर अंजन ।

गो के मछड़े का एक सींग पुरानी रुई में लपेट कर बत्ती बनावे और कोरे दीपक में रख कर उसमें रेड़ी का तेल भर देवे फिर उसे जला दे और उसके ऊपर एक कच्ची मिट्टी का पात्र रख कर काजल पारे और उस काजल को दोनों समय जांखों में लगाया करे खटाई और घादी पदार्थों से पहरेग करे तो सब प्रकार का सुजाक नश्वर हो ॥

कामोत्पादक बटी ।

जायफल १ तोला, अकरकरहा १ तोला, सफेदचन्दन १ तोला, क-
झोल १ तोला, कोटीछायची १ तोला, जावित्री, केशर, अफीम, लौंग,
सोंठ, दक्षिणी लज्ज, तेजपात, नागकेशर, और शुद्ध भांग ये छः २ मासा
भी भांग का अक्षक, शुद्ध चिमरख, शुद्ध काला धतूर का बीज और क-
पूर तीन २ मासा, कस्तूरी २ मासा इस्टिकनिपा (कुचलेका सप्त) अंगरेजी

दवाखाने में मिलता है २ रत्ती । प्रथम अजीम और सिमरस को मरगद के दूध में घोट ६ छुहारे का पेट चीर समका बीज निकाल उसीमें दोनों को भर होरे से कस कर बांध दे जिसमें कि सन्धि न रहे बाद इसके १ पाय मरगद के दूध में खूब पका ले फिर छुहारे को निकाल होरा जलग कर सुखा लेय बाद इसके उपरोक्त औषधियोंको कूट कपरछाग कर पुस्ते के दुपट्टी १ छटांक (पुस्तेका फल बीज समेत अघकघरा कर १ पाय पानी में गन्दाश्रि से घसाय ले जब एक छँटांक पानी रह जाय गल कर छान ले) में छेहारे के घोट चर्द की बराबर गोली बना लेय । इनारे औषध-चालय में भी तैयार हैं जिनकी इच्छा हो ॥ टिकट भेग ४० गोली मंगालें ॥

खानेकी विधि ।

यह घटी पूरी मात्रा है कमजोर को आधी गोली देना उचित है, शब्दा समय १ गोली खाकर ऊपर से अधावट वायार दूध में ६ मास शब्द छोड़कर पी जाय, इससे प्रसङ्गमें दूनी तेजी और स्तम्भन होता है । शीत वायु के कोष से उत्पत्ति रोग प्रमेद शरीर का दर्द, गठिया, शङ्ख का जकड़ जाना, प्रसाधात (लकवा) बहुमूल खांसी स्वास उक्त विधियार इस गोली के खाने से बाराज होता है । यदि पांच चार रोज के सेवन से उपरोक्त रोगोंमें कुछ उपकार न होता जानना चाहिये कि यह मिगारी सूग की गरमी से है । अगर गोली दोनों समय खिलाना चाहिये ॥

लवणभास्कर चूर्ण ।

सैकड़ों गरतवे बाजनाया है । समुद्र लवण (खारा नमक) ८ तोला कालानगक ५ तोला बिहनेन या अवाखार, सेन्धानाग, घनियां, पीपर पिपराभूत कालाजीर, तेजपात नागकेशर सालीस और असवेत देरतोला मिर्च जीरा सफेद और सोंठ एक २ तोला, अगर का मुठा दाना ४ तोला

लायची छोटो ५ मासा दांभनिनी ५ मासा । इन सब दवाइयों को कूट कपड़छान कर दोनल में भर रख दे या नीयू के अर्क में घोट करवेछी की बराबर गेली बना ले, घूर्ण की अपेक्षा बटी में अधिक गुण एवं घूर्ण दोहे महीने में गुण रहित हो जाता है और बटी अपे पर्यन्त गुणदायक रहती है ॥

खानेकी विधि ।

गुल्म, मंघइली और उदर सूजनमें नी के पाठे के मज्जा देना चाहिये अर्थात् १ मासा दवा मुल में रख पाठे से उतार जावे । गिलही, बांदी, बवासीर, कविजयत्, आभातिभार, बलगमी, रांभी, और स्वांस के रोग में यह घूर्ण गरम जल या शराब के साथ खाना सभित है । इसका मात्रा १ मासा से ३ मासा पर्यन्त बालक को आधा मासा या जैसा बलाबल हो देना चाहिये ॥

बृहत् हिंवादि बटी ।

हींग, जवाहार, मज्जीरार, (सोडा) सेन्थानोन, कालानोन, बिह-
नोन, छोटी पीपर, पिपरामूल, चीता, मिर्च, कपूर, धनियां, इमिली, दु-
धियाबज, अजमेदा, पुइकरमूल, मोठ, करझ नी गरी, जीरा, स्याह, बर-
पाठी, इन सब दवाइयों को एक २ तोला ले हींग को भुझ ले बाक सब को कूट कपड़ छान कर कागजी नीयू के अर्क में घोट करवेछी घेर की बराबर गेलियां बना ले ॥

खानेकी विधि ।

हृदय और गले की जलन एवं बिभूचिक्का (हैजा रोग) रोग में अर्क गुलाब के साथ, पेट के फूडन (पेट भरासा मालूम हो) अंत बृद्धि और

आंन रोग में सौंफ के अंक या क्वाथ के साथ, पिलही वायुगोला, उदर शूल और हिचकी रोग में गरम जल और मन्दाग्नि में सिर्फ साधारण जल के साथ दिन में दो, तीन या चारगोली खाना चाहिये अगर रोग प्रबल न हो तो सिर्फ दो। दफे अर्थात् सांन सवेरे खाना काफी है। परीक्षा से ज्ञात हुआ है कि इस गोली के खाने वाला मनुष्य चाहे जहां का जल पिये उसे हैजे की बिमारी न होगी इससे उचित है कि हर एक गृहस्थ थोड़ी २ इस गोली को अपने पास अवश्य रखे ॥

कृमि नाशक चूर्ण ।

रैवचीनी मायभिरंग और कबीला इन तीनों को बराबर ले महीन चूर्ण कर लो मात्रा १ मासा से ३ मासा पर्यन्त मान सवेरे कांक कर ऊपर से पाच आधपाच गी का कच्चा दूध पी लेने से थोड़े ही दिनों में सगस्त उदर व्याप्ति कृमि (केचुना यमीरह) नष्ट हो जाते हैं ॥

प्राप्त ।

प्रिय महाशय !

इस मेरी बिमारी औषधि को भी अपने अमृत सागर तुल्य ग्रन्थ में स्थान दीजिये ॥

सोठ, सौंफ, जङ्गीदड़, इन तीनों पदार्थों को सग भागले एक भाग भूग डाली और दूसरी कच्चा रहने दे कूट कपड़छान कर सतगी ही कच्ची सांड मिला कर आधा तैला या कुछ ऊपर मात्रा बना शीतल जल के साथ भोगन के बाद या अन्त में खा ले तो आंव निरना या आंव से रून का गिरना अवश्य बन्द हो जायगा ॥

पंडित रघुनाथ एक० ए० कृष्ण

धरेंडी काठेज

अंगरेजी काली रोशनाई ।



गाजू फल को पानी में भीटा कर उसमें कीसीस गिलाने में उसका रंग काला हो जाता है और जिटकिरी गिलाने से और भी उत्तम होगा और गाजू फल को भीटाते समय किञ्चित् मात्र लौंग डाल देनेसे स्याही बिगड़ती नहीं है इस क्रिया में गाजू फल १ पाय जल डेढ़ सेर आधा जल जलजाय, कीसीस एक तोला जिटकिरी ६ मासा, लौंग ६ मासा उत्तम होगा ॥

दूसरी विधि ।

इस महेड़ा जांचला इन तीनों पीजों को धराधर ले अपकवरा कर छोड़े की कढ़ाई में चतुर्गुण जल में डाल भिगा दे दूसरे रोज जांच दे जय आधा जल रहि जाय त्रिकला की बीयाई कीसीस डाल पांच पार दिन इसी तरह रहने दे माद खान काम में लावे ॥

तीसरी विधि ।

गाजूफल का घूर्ण २ पींड कीसीस ५ पींड मथूल का मोंद ४ पींड पानी १२ ग्यालग क्रियाशेठ अथवा आलकतरे का तेल २ हुआ ॥

चौथी विधि ।

गाजू फल १२ पींड कीसीस ४ पींड मोंद ३॥ पींड पानी १८ ग्यालग । ऊपर लिखी दो प्रकार की स्याही में जो पानी का भाग लिखा

है उसमें से चार भाग का तीन भाग अर्थात् तीन हिस्से पानी में पहिले गाजूफल को आग पर एक घंटा चढ़ाना चाहिये और गोंद का जो परिमाण लिखा है उससे दूने पानी में गला के मिलाया होगा याकी चौथाई पानी में कौसीस मिला के सब को एक संग मिला हालना और पीछे से आलकतरे का तेल देना ॥

व्ल्यू ब्लैक काली नीली स्याही ।

कौसीस आधसेर गाजूफल छेड़सेर, पानी दससेर कत्या एक छटांक नीला रंग गाधी छटांक पीछी पुड़िया का रंग (बजार में बिकती है) २॥ ११ती । पहिले गाजूफल को पीस के दससेर पानी में भिगा रखे फिर आग पर चढ़ाओ जब गर्म-हो जाय तब कौसीस और कत्या हाल देय जब देखो की रंग खूब काला हो गया हो तब उतार के छान लो और आठ दश दिन सभी तरह रहने दो फिर दुबरी दूके छान के नीला रंग और पीछा रंग मिला दो ॥

ग्रीनव्लाक वा सबुज स्याही ।

पांच भाग गाजूफल के चूर्ण को २०० सी भाग पानी में मिला आग पर चढ़ाय के जलाओ फिर छान लो फिर पांच भाग कौसीस को चार भाग छोटे के चूर्ण के साथ मिला के उसमें आधा पाइन्ट नील और तीन भाग सलफ्युरिक एसिड (गन्धक का तेजाब) मिला दो । यह स्याही लिखने के समय हरी दिखलाई पड़ेगी फिर काली हो जायगी ॥

हरी स्याही ।

जंगाल १ छटांक, कमआक टारटार (यह एक प्रकार का निसक है अंगरेजी दवा खानों में मिलता है) गाधी जटांक पानी स्यापाय दोनों

चीजों के पानी में मिला के आंगपर चढ़ा दे। जब आधा पानी रह जाय तो छान लेय । यह स्याही बहुत उत्तम होती है कितने लोग इसे जंगाल के समान नीला घोषा भी डालते हैं ॥

लाल स्याही ।

ढांक अथवा पीपल की छाल को जरासा लोच और बेर की पत्ती डाल कर बहुत गुण जल में पकाओ जब चौपाई जल रह जाय ६ मासा किटकिरी डाल दे ॥

दूसरी विधि ।

बहुत लकड़ी एक छटांक, किटकिरी आधी छटांक क्रिमसाफ टार टार आधी छटांक इन तीनों चीजोंमें सेर भर पानी डाल आंगपर चढ़ाओ जब पानी आधा रह जाय तब आधी छटांक ढांक का गोंद मिला दे। जब गल जाय तब पीने चार तोला रेवटी काइह स्पिरिट और पांच मासा भर कचनियल का शर्क मिला दे। यह स्याही बहुत ही सुन्दर होती है ॥

सुनहरी स्याही ।

सेने के बर्क को गोंद के पानी में सूख महीन घोंटो और जरासा उममें रसकपूर मिला दे । इस स्याही से लिख कर किसी चिकनी चीज के घोंटने से बाहर चमकीले हो जाते हैं यही तरीक़ा रुपहली स्याही की भी है इसमें चाहे रसकपूर न मिलाये ॥

आतशबाजी ।

नाम	शोरा	गंधक	कोहना	लोहचूर्ण	लहसुन	तमाकपत्र	गराही
बाखुद	४ तोला	१० तोला	१२ तोला	"	१६ तोला	१६ तोला	आ. तो.
गुलरेश	१२	३	१२	६	"	"	"
नामपाल	१ सेर	१ पाव	३ टांक	"	"	"	"
फलाखार	१२ तोला	२ तोला	८ तोला	तोला ५	"	"	"
घजारा	१०	२	४	५			
करंग	४	४	८	३			
जूही	१४	२	४	५			

गुलरेश (कुलफरी) पहिले शोरा गन्धक और कोयला तीनोंको मिठा के खूब गहरीन पीसे। फिर लोहचूर्ण बाखुद से कुछ मोटा अर्थात् बालू की तरह पीस के मिलाओ और एक इन्ची से दो इन्ची तक के खोल में भर दो। इसकी छुड़ाने से जमीन तक फूटों का गजरा सा दीख पड़ेगा (जूही) यह आतशबाजी बहुत ही सुन्दर होती है इसकी बाखुद खूब न पीन होना चाहिये ॥

फुलेल बनाने की सहज उपाय ।

सबसे पहले टुकने की तरह एक टीन का बरतन बनाओ, जिसके पैंदे में तिनारे की तरह एक सूराख रही और उस सूराख में एक गल बाहर की तरह लगाओ। खूब ताजे और खुशबूदार गुन्नाबके फूलकी पत्तियां ताप के उपरोक्त टुकने में बिछाओ (पत्तियों को पाक बाप इन्ची से छे के एक इन्ची तक होनी चाहिये) फिर उसमें घोड़ा सा तिलका तेल डाल दो जब पत्तियां तेल में अच्छी तरह भीग जाएं तब जिसके ऊपर और एक पाक पत्तियों की लगाओ और तेल डालो इसी तरह जितना तेल समाना होयै उतनीही पाक पत्तियों की लगाते जाओ और तेल डालते

जाओ एक दिन तक तेन में पक्षियों को भीगने दो (एक दिन से ज्यादा नहीं रखना नहीं तो पक्षी सड़के तेल खराब हो जायगा) फिर काफी प्रेस में उस घरतनको रख दयाओ क्योंकि काफी प्रेसमें चीज सूख दपाई जाती है और तेल भी खराब नहीं जाता और नल के नीचे एक घरतन रख दो जब दयाओगे तब सब तेल उस नल के रास्ते में घरतन में चला आवेगा यह तेल बहुत सफ़्त में और बहुत सुगंधदार बनता है इस रीति से सेला चमेली आदि जिन फूल का तेल बनाना चाहो वही बन सकता है जितना ताजा और सुगंधदार फूल होगा उतनाही तेल भी अच्छा बनेगा ॥

कुलफी की बरफ ।

पहले धतूरे के फूलकी तरह घोड़ीसी टीनकी चोंगी बना रखो जिसकी चौड़ाई की तरफ ढकना रहे और पतली तरफ में बन्द रहे यदि मलाई की कुलफी बनाना हो तो दूध को गला के गाढ़ा कर लो और उसे चोंगी में भर के ढकने से बन्द करलो और बाटेकी छेई ढकनेके चारो तरफ लगा दो जिस में ढकना खुल न जाय फिर एक हांडी में बरफ के टुकड़े भरदो और उन चोंगी को उसमें गाड़ दो घरफ के पाप घोड़ासा तनक भी मिला देना फिर उस हांडी का मुख ढांक उसके चारो तरफ कम्बल लपेटो कम्बल में लपेट के ठण्डी जगह में रख दो । तीन चार पंटे बाद दूध जल जायगा । जब घरफ खानी होय तब उसमें से एक चोंगी को निकाल कर उसका ढकना खोलो और दोनों छपेली से पकड़के रगड़ो अब उस में से कुलफी निकल आवेगी यदि नींबू की बनाना होय तो चिनी को पानी में घोलके उसमें घोड़ा सा नींबू का रस मिला देना और दूध की जगह उसी को चोंगी में भर देना ॥

घर के खर्च लायक थोड़ीसी साबुन ।

कार्बोनेट आफ सोडाको साफ जल में डालके सीपका या पत्थरका घूना मिलाओ, जब पानी दूध की तरह हो जाय तब भाग पर चढ़ाओ थोड़ी देर बाद उसमें से पोंछासा निकाओ की २४ घून्ट नाइट्रिक एसिड पानी बोरेका सिजाय डाल के देखो कि उसमें बुलबुला उठता है या नहीं जब बुलबुला नहीं उठे उसी समय बरतन को भाग पर से उतार लोओ और एक दिन तक ठका रहने दो, फिर ऊपर का खार अलग कराओ (परन्तु नावधान रहना जिसमें बहुत हवा न लगे) फिर नारियल का या तिल का तेल या दोनों का तेल मिला कर एक कढ़ाई में रख भाग पर चढ़ाओ जब तेल अच्छी तरह जल जाए उसमें ऊपर लिखी खारका पानी डालते जाओ और चलाते जाओ जिसमें जले नहीं जब गाढ़ी होनी लगे तब पोंछासा नीच डाल दो और चलाते जाओ इसी समय जो सुग्घूकी चीज डालनी हो सो भी मिला दो और उतार लो जब वह जग जाय तब यहस्थ के रोज के खर्च लायक अच्छा साबुन बन जायगा ॥



इंग्लैण्ड यात्रा की समालोचना ।

जब ब्राह्मणों की कौन पूछता है बहुत काल पर्यन्त मे आशा रहते आये कि जब ब्राह्मण लोग मिलायत जाने की व्यवस्था देंगे अन्त में जब देखा कि यह लोग श्रान्त, अदूरदर्शी, स्वार्थी, घबूरा, और ऐसे अहंजीं चित्त के हैं कि कभी स्वयं में भी मिलायत जाने की न कहेंगे और यही लोग हमारी उन्नति के बाधक हैं यदि हम लोग इनके आलों को पहिने ही काट डालते तो अब तक बहुत उन्नति कर लेते । कहने का तात्पर्य यह है कि लाला रोगनलाल भी पैरिटर हो के मिलायत से आये हैं

ने द्वीपान्तर यतीं शत्रुओं से अत्यन्त उपद्रुत हो कर उनके जीतनेके लिये अपने पुत्र भुज्यु को सेना के साथ नावपर समुद्र में भेजा, जब वह नाव समुद्र में बहुत दूर पहुंची तो हवा से टूट गई, तब भुज्यु ने अश्वनीकुमारों की स्तुति की, उन्होंने ने सेना सहित भुज्यु को अपनी नावों पर बिठला कर तीन दिन रातमें पहुंचा दिया । इस्से भी समुद्र यात्रा सिद्ध होता है जिन्हें अर्थ में शंका हो ग्रन्थ देख लें ॥

भविष्य पुराण में भीम युधिष्ठिर के सम्याद में यह कथा लिखी है कि कांचीपुरी में राजसेन नामक एक राजा था उसके देश में देव स्वांगी नामक वेद वेदांग पारंग ब्राह्मण था जिसकी स्त्री का नाम धनवती था उसके सात पुत्र और एक गुणवती नाम कन्या हुई एक दिन कोई भिक्षार्थी ब्राह्मण आया उसने गुणवती को देखकर कहा कि यह सप्तपदी में विधवा हो जायगी सो सिंहल में सोमा नाम एक धोविन है यदि वह तुम्हारे घर आवे तो उसका वैधव्य नष्ट हो जाय अर्थात् विधवा न होय । यह बात कह कर ब्राह्मण तो भिक्षादन को गया, उसकी माता धनवती ने अपने लड़कों से कहा कि जो पिता माता का बात माने यह बहन के साथ सोमा (धोविन) लाने को सिंहल जाय । पुत्राक्षुः ॥

अन्तरादुस्तरःसिंधुः शतयोजनविस्तरः । अशक्यगमनंतत्र नक्षमागमनेवयम् ॥

लड़कों ने कहा बीच में समुद्र बड़ा दुस्तर है, सौ योजनका विस्तार है हम लोगों में सामर्थ्य नहीं है कि यहां जाय, तब देवस्वामी लड़की का पिता बोला कि मैं सात लड़के वाला हो कर भी अपुत्रहूँ, तब छोटा लड़का शिवस्वामी बोला मेरे रहते कौन सिंहल द्वीप में जायगा उस बहिन के साथ वह सिंहल को चला गया यहां सोमा के घरके पास रहा फिर लण भर में सोमा ने दोनों को पार उतार दिया और कांची पुर

पहुंचे । जिस्का दृष्टान्त अब तक मौजूद है कि हिंदुओं में सप्तपदी के पूर्वही लड़कियों को घोबिन के घर सुहाग लेने को भेजते हैं । विचार करिये कि यदि समुद्र यात्रा का निषेध होता तो शिवस्वामी अपने ब्रह्मिन को लेकर वहां क्यों जाता । गर्ग संहिता द्वारिका राख के तीसरे अध्याय में लिखा है कि, आनर्त नाम राजा सूर्य वंश में हुआ जिसके नाम से समुद्र में आनर्त देश है । देवत उसका पुत्र चक्रवर्ती था, उसने कुशस्थली बना कर राज्य किया ॥

योमदु भागवत के अष्टम स्कन्ध के २४ प० में सत्यव्रत राजा से भगवान ने कहा है—कि तुम सब घोषघ और बीज लेकर सप्त ऋषियों के साथ बड़ी नाव पर बैठ समुद्र में अम्बकार में ऋषियों के तेल से विचारोगी ॥

भारत सारे १४ अ० ।

“कृष्णाञ्जुनौ गतौलङ्घा याज्ञीषे घन साधने” ओ कृष्ण और अञ्जुन यज्ञ के घन लेने को लङ्घा में गये । पद्म पुराण के क्रिया विगार में लिखा है तुम दुःख को छोड़ दे, मेरी बात सुनो । समुद्र के पार पक्ष दोप में द्यौ-व्यती नामक पुरी इन्द्र की पुरी के समान शोभायमान है उस पुरी के राजा का नाम गुणाशर है उसकी स्त्री का नाम सुलोला और कन्या का नाम सुलोचना है सो न तुझारे समान सुन्दर और न उसके समान कोई सुन्दरौ है यदि स्वर्ग भोग को इच्छा करना चाहते हो तो उससे विवाह करो ॥

भारत के महा प्रस्थान पर्व का वाक्य है “क्रमेण ते यमुदीराः लौहित्यं खलिष्ठाण्वम्” फिर वे क्रम से लौहित्य सागर (लाल समुद्र) को गये । इत्यादि अनेक प्रमाणों से सिद्ध होता है कि पूर्व समय में लोग किसी दोप दोपान्तर में या समुद्र पार जाना दाय नही समझते थे और अब भी सेवाय एक विनायक के अन्य देशों में जहाज पर बंद के बरानर ब्राह्मण खलिष्ठादि जाते हैं उन्हें कोई जात च्युत नहीं कर सक्ता । योड़े दो रोज डूबे कि मिय के युद्ध में हजारों हिन्दू गये थे, सब पर विदित है कि ब्रह्मा में अब तक हिन्दुओं को

पलटने पड़ी है, चीन के कई बन्दरों में हिन्दू रहते हैं मिरा और कालेपानो
बराबर हिन्दू पाते जाते हैं हाल ही में एक हमारे परम मित्र पं० रामसहाय
डाक्टर जोकि आज कल आगरे में डाक्टरों करते हैं, सकुटुम्ब जहाज पर चढ़
के कालेपानो नामक प्रसिद्ध टापू में जा वहाँ से अपने स्वसुर की जो एक मु-
कद्दमें में कीद कर के भेजे गये थे लाये। कलकत्ते से ६ दिन रात में वहाँ
जहाज पहुँचता है। बिलायत जाने में २१ दिन रात लगता है। उन्हें कोई
भी दीपों नहीं कहान ज्ञात बिरादरी के लोग उन्हें ज्ञात से प्रलग किया है ॥

यह निदिधक वचन सुनिये जिन्हें प्रायः दुरामिमानो पुराने नजीर के
फकोर पोथाधारों जो मूल मंत्र जान सदा जिह्वाग्र में टुघलाते रहते हैं और
जहाँ किसी ने पूछा महाराज बिलायत जाना चाँहि या नहीं ? चौघड़ी त-
म्बाजू चर्चित कट मुखसे जूहरके समान उगल देते हैं ॥

समुद्र यात्रा स्तौकारः कमण्डल विधारणम् ।

इमान्कलियुगेधर्मान् वज्यानाहुमनौषिणः ॥

समुद्र यात्रा करनेवाले का स्तौकार, कमण्डल धारण, इत्यादि धर्मों
का अनुष्ठान कलियुग में वर्जित है। यह सहनारदोय पुराण का वचन है ॥

आदित्य पुराणे ।

द्विजस्याध्वीतु नौयातुः शाधिरास्यापि संग्रहः ।

समुद्र में नाव पर यात्रा करनेवाले द्विज को शुद्ध करके भी ग्रहण न
करना ॥

निर्णय सिंधौ ।

आंगार दाही गरदः समुद्र यात्रो च कुण्डशय कूटकारी ॥

मकान जलाने वाला, विष देनेवाला, समुद्र में जानेवाला, कुण्ड (पिता
के जोते दूसरे से उत्पन्न) के रखनेवाला और कपट करनेवाला ब्राह्मण याद
में भोजन के लिये नियुक्त है इसमें खण्डन मण्डन दोनों के वचने लिख दिये
गये हैं इसमें अधिक प्रमाण मिलना कठिन है बुद्धिमान जिस पक्ष को बली
समझें मानें ॥

आरोग्य दर्पण ।

द्वितीयखण्ड ।

जिसमें

वेद्यादि गमन द्वारा सृष्टा धीर्यक्षय पर पूर्ण दृष्टान्त से
लेकर उपाग सन्तान उत्पन्न करने पर्यन्त सृष्टा अनेक
प्रकार की सिद्धिजीवधियां नित्यकर्म आदि से
पुरित हैं जिसको पं० जगन्नाथ शर्मा
राजवेद्य ने सर्वसाधारण के
उपकागर्थे बनाया ।

आयुर्वेदोक्त औषधालय

जालसेनगञ्ज-इलाहाबाद

"धार्मिकप्रवृत्तिलाय" प्रयाग में मुद्रित हुआ ।

सिवाय प्रत्यक्षतां किन्हींको छापनेका अधिकार नहीं है

द्वितीयवार १९०७] फरवरी सन् १९८८ [... मूल्य १॥

सूचीपत्र ।

विषयः	पृष्ठाङ्कः	विषयः	पृष्ठाङ्कः
वेश्यादिद्वाराचीर्यक्षपपर व्योमस्थान	१	गर्भवती होने का लक्षण	३८
हस्तमैथुन निषेध	८	गर्भपुष्टकारक उपाय	३८
कामशास्त्र रहित गणन निषेध	१२	जोड़ा लड़का होने का कारण	४०
प्रसवेच्छा	१३	नपुंसक लड़का होने का कारण	४१
स्त्री अयस्या विचार	१४	सीगन्धिक नपुंसक	४१
क्रतुपरत्व प्रसङ्ग विचार	१५	कुम्भिक नपुंसक	४१
मैथुन निषेध	१८	ईर्ष्यक नपुंसक	४२
मैथुन में समय	१८	निर्कुण्डित गर्भोत्पन्न	४३
प्रीति वर्णन	२०	स्वप्न मैथुन से गर्भोत्पन्न	४३
नैसर्गकी आदि प्रीति के लक्षण	२१	गूंग आदि गर्भों के कारण	४४
परकीया लक्षण	२३	भगमें बालक के न होनेका समय	४५
गहिरी प्रीति के लक्षण	२४	पूर्वकर्मोत्तोर बुद्धि का होना	४५
परपुंसपरत स्त्रियों के संकेत	२५	अदृष्टि नासिक लक्षण	४६
अलक्ष्य स्त्री	२५	व्यतीत क्रतु में मैथुन निषेध	४७
सहज प्राप्त स्त्री	२६	दीहृद के द्वारा सन्तान के ल०	४८
पतिप्रेम स्त्री के लक्षण	२७	अस्वाभाविक जन्म का कारण	५४
स्त्रीणां वैराग्यहेतु	२८	मासभेद से अश्रुओं का धनना	५५
स्त्री के विगड़ने का लक्षण	२८	आठवां गर्होने का बालक क्यों]	
सम्भोग समय के भेष	२९	नहीं जीता	५७
गर्भोधान विधि	३०	गर्भगतका प्रथम कौन अङ्ग धनता है	५८
उत्तम सन्तान करने की विधि	३१	रसात्म जन्य पदार्थ	६०
क्रतुदान काल	३३	गर्भ में पुत्रादि का पहचान	६१
सन्तानार्थ मैथुन विधि	३५	नपुंसक गर्भ के लक्षण	६१

विषयः	पृष्ठाङ्कः	विषयः	पृष्ठाङ्कः
डाकूरी मत से गर्भ का लक्षण	६२	डाकूरी से शोथ का गुण	१०६
गर्भवती स्त्री के त्याग कर्म	६३	पुटपाक विधि	१०७
योनिरोग	६५	हृदय दर्द पर हिरणपुट पाक	१०८
२० प्रकारके योनिरोग के लक्षण	६६	इन्फिन्डुआ की दवा	१०९
योनिकन्द रोग	६८	अंगगंजीज्वरसे घनने की उपाय	१११
योनिरोगकी चिकित्सा	६९	धीर्य उत्पन्न करनेवाली औषध	११२
योनिरोग पर उत्तम दवा	७०	कामेश्वर मोदक	११५
मासिक धर्म की चिकित्सा	७१	किंगमिग मोदक	११७
योनिभूल की दवा	७२	बान्दरी चूर्ण	११८
बन्ध्या की चिकित्सा	७३	काननर्दनों मोदक	११८
प्रदर रोग का निदान	७५	अफीम प्रकरण	११९
सोमरोग का लक्षण दवा	७६	अफीम का वर्ध	१२०
सूत्रांतिसार	७७	डाकूरीमतसे अफीमका मयान	१२१
चन्दगादि चूर्ण प्रदर रोग पर	७८	हरदी के गुण	१२२
परीक्षित औषधियों	८०	दीपन पाचन आदि नाम	१२४
अश्वक शोधन मारण	८१	हरितिकी का गुण	१२६
स्वेदप्रदर की औषधि	८३	जुलाब	१२८
डाकूरी से सर्पविष की चिकित्सा	८३	आन्धिक कर्म	१३२
सर्पदंश विषप्रकर्ण	८६	प्रातःकाल उत्थात	१३३
वैद्यक से सर्पदंशन की चिकित्सा	८६	उपमीत धारण	१३५
सर्पों की उत्पत्ति	८८	शोचे सृतिका लेपन	१३६
रक्त शुद्धिकारक अर्क	९१	दन्तधावन	१३७
व्रणराक्षस तैल	९२	स्नान	१३८
विषमज्वर पर निम्ब्याद्य चूर्ण	९२	तीर्थ स्नान	१४०
नारायण तैल	९३	भारत के उन्नति का वैद्यक]	
हिमसागर तैल	९४	प्रथमअङ्कदे वसपर व्याख्यान १ से	१६
रूखे का पानी	९५	औषधों की विज्ञापन	१६
तिला	९७	प्रशंसापत्र	२७
यङ्गेश्वर बनाने की विधि	९८		
शोभाग्य शुण्ठीपाक	१००		
अमृतभस्मातक पाक	१०२		
केशरावलेह	१०४		

आरोग्यदर्पण—तृतीय खण्ड ।

वेश्यादि गमनद्वारा वृथा वीर्य्य अपक्षय और शारीरिक हानि पर पूर्ण दृष्टान्त ।

दूसरे खण्ड में मैं हम विषय को भलीभांति दर्शाया चुका हूँ कि जब तक आर्य्यगण हस्तमैथुन वेश्यागमनादि द्वारा वीर्य्य के अपक्षय से नरक्षित न होंगे भारत का कल्याण होना अति दुष्कर है, क्या यह अनुप्य जो अक्षणीय अमूल्यरत्न कृष्टिकारक जीवन मूल को उन्मत्तों के भांति प्रतिदिन निरुप्यही होके ऊसर भूमि में केक रहा है अकाल मृत्यु से बच सकता है ? पुत्र याग, धनधान, विद्वान् और बलवानोंकी कोटि में उसकी गणना होगी ? कभी नहीं । अल्प वीर्य्य ही होने के कारण आर्य्योंवर्त्त का राज्य सुसम्मानों ने ही लिया और असंख्य भौकुआ ऐय्यासों को लीड़ी गुलाम बना के सर्वदा के लिये विचारे मिटे मिटाये कचरे कचराये हिन्दुओं के छाती पर आरा चलाने के लिये इसी भारत में छोड़ गये । सुसम्मानों ने भी जब हाल तरवार जुग्राहों के गले में हाल आप दिन रात वेश्यागमनादि में लिप्त हुये और उधर साहठों के चित्त पर धीरे रस को अंतर्दशा प्राप्त हुई अथवा अंगरेजों के सौभाग्य देवता ने उनके द्वारा रास्ता साफ करा दिया कि बिना प्रयास अकंटक राज प्राप्त हुआ, जिसकी सौ वर्ष से अधिक हो गये कि वीर्य्य रक्षाही के प्रताप से भारत का शासन कर रहे हैं, तो भी कितने अन्धों को नहीं सूझता कि जब तक अंगरेजी विद्या पढ़ किसी बड़े राज्याधिकार में प्रवृत्ति नहीं होते तबतक विवाह नहीं करते क्योंकि अल्प वीर्य्य में बुद्धि विषय्यय रहती है और पूर्ण वीर्य्य की मनीषा शक्ति अनुमति पदार्थ पर झटपट दीहती है ।

देख लो एक पक्षवाले नेडाल कांग्रेस के लिये कटिगद्द हैं दूसरे लोग विपरीत कहते हैं कि यह न होना चाहिये । कांग्रेस वायदा मिलने

देशोपकारक कार्य होते हैं इनमें प्रथम बहुत परिश्रम और दीर्घ धूप करनी पड़ती है और बुद्धि शक्ति जो धीरे के आधीन है यह साध्य होती है कि इस आरंभित कार्य में अवश्य भलाई होगी और इसका अन्तकाल अच्छा होगा सो जो लोग जितेन्द्रिय और धीरे के अपव्यय से बँधे हुए हैं उनकी बुद्धि शक्ति किसी व्यापार अथवा पारमार्थिक कार्य को नहीं रोकती बल्कि और उत्तेजित करती है और स्वार्थ रक्षा के उपरान्त परमार्थ में भी उनका मन उत्सुक रहता है और जो वेश्यादि गमन के द्वारा वीर्य का नाश कर चुके हैं या कर रहे हैं उनका उत्साह दिन प्रति दिन हट और हीन होता जाता है उन्हें आवश्यक स्वार्थ और लौकिक सुख जो लक्ष्म्यता का अन्तिम प्रभोद है चित्त में बसा रहता है उससे उनके मन को अवकाश नहीं मिलता महर्षियों ने जो धीरे बढ़ाने की अनेक औपधियाँ लिखी हैं वह केवल लक्ष्म्य और तुच्छ विषयके लिये नहीं किन्तु मस्तिष्क शक्ति और अखण्डबल धारण और प्रबल साहस की वृद्धिके प्रयोजन से और ब्रह्मचर्य व्रत का भी यही अभिप्राय है कि प्रथम धीरे रक्षा से विद्योपाज्जन होगा पश्चात् गृहस्थाश्रम आदि के प्रबन्ध में निपुणार्ह होगी सो हमारे देश में शास्त्र के विपरीत ब्रह्मचर्य का प्रथमही लोप हो गया, साधारण जनों में तो अस्वाध्याय के विवाह और धीमे नीचे गर्भाधान के द्वारा अल्प धीमेता और मानुषी सृष्टि की दुर्बलता का विस्तार हो गया और धनवान तथा प्रभुता वालों का धीरे वेश्या और व्यभिचारिणियों के हाथ बिक गया यहां तक नीयत पहुंची कि जन्माष्टमी रागनयमी आदि उपासना पर्व में भी वेश्याओं का हाथ माय कटाक्ष मुख्य पूजापचार समझा गया इस साल माघ मेषे में एक नाहक-शाही महन्थ के यहां महीनार भर यही मदन महीपति का डंका वाजता रहा सदैव धार अनिताओं के कटाक्ष से दरबार सरा रहता था धन होने की पूर्णता का प्रमाण इस समय वेश्या ही जिस के विषय भर्तृहरि राजश्रमि ने यह लिखा है—

“वेश्याभीमदनज्वालाकूपेन्यनसनेषिता । कामि भिक्षात्रयन्तेयीवता निधनानिधन” ॥

दोहा ।

गनिका कनिका अगिन की रूप समिध मजबूत ।

होम करत कामी पुरुष धन यौवन आहूत ॥ १ ॥

बुद्धि विवेक कुलीनता तबही लो मन माहि ।

कामवाण की अगिन तन जवलों भभकत नाहि ॥ २ ॥

॥॥ घान् मनु ने भी लिखा है कि पर स्त्री, गमन से बढ़कर आयुर्वल का हरनेवाला कोई नहीं है "यथा-नातः परमनायुष्यं परदारोपसेधनं" कारण यह कि बुद्धि ज्ञान पराक्रम का सुख कारण जो वीर्य है सो उसी के नाश और अपहरण की चेष्टा वेश्या लोग करती हैं जिस प्रकार भेदक औषधियां फुटकी जादि अंतर्द्वियों के मल को दूढ़ २ के भेदन काती हैं ऐसे ही शुक्रतत्त्व को उत्तम करने और बाहर निकालनेकी विविध चेष्टा वेश्या लोग करती हैं लोग उसी को सुख समझते हैं यह नहीं सोचते कि नष्ट नष्ट का प्राण खींच लेती हैं-जैसा किसी महात्मा का वचन है:-

दर्शनात्हरतेचित्तं स्पर्शनात्हरतेबलम् ।

मैथुनात्हरतेवीर्यं वेश्याप्रत्यक्षराक्षसी ॥

भर्तृहरि जी लिखते हैं-संमोहयन्ति, मदयन्ति, विडम्बयन्ति, निर्भर्त्सयन्ति, रमयन्ति, विषादयन्ति, एताः प्रविश्यसदयं हृदयनराणां किं नाम वामनयना न समाचरन्ति ॥

बस बहुत लिखने से शृङ्गाररस के रसिक जन खिन्न होंगे पर क्या किया जाय शास्त्रकारों ने ऐसाही कहा है ॥

सोरठ-गनिका के मृदु ओठ, को कुलीन चुम्बन करै ।

नट भट छिट ठग गोठ, पीकपात्र है सदनको ॥

शङ्काररस के रसिक जन जो चाहें सो समझे हों पर धातुहीनता और विषय लम्पटता दोषसे जो २ अवगुण और घुराड्यां उत्पन्न होती हैं उनकी गधाही अनेक पुराण और इतिहास दे रहे हैं देखिये ॥

“जब गुजोर के राजा को मुसलमानोंने रणमें जीता तो उस फौज के एक प्रधान मुसलमान सरदार खां ने चाहा कि गुजोरकी रानी अंति रूपधती है किसी उपाय से उसके साथ भोग करें उसके मिलनेकी तत्-बीर और बन्धिसँ करने लगा एक दिन सरदार खां स्वयं रानी के महल में जा पहुँचा और अपने नौकर से उस रानीके दासी को बुलाके कहा कि तुम रानी से जाके बोलो कि सरदार खां आप की खातिर सुद मुलाकात के लिये तसरीफ लाये हैं ता. कि आप को दरबार न गुजरे कि हमारी किसी सूरत में तहफोर हुई, अब आप को क्यादः इसरार करना अवस है, अगर अब भी हमारी अरज़ को कबूल न करमाइयेगा तो उस यही समझिये कि आखिर को तो हमारे अखियार में हैं, मगर कोई काम सिलाफ़ मरजी के होनेमें रुक नहीं रह जाता आगे महा-रानी साहिबा को अखियार है । दासी जाके रानी से सब वृत्तान्त सुनाया रानी (शोकमें डूबकर मनही मन में विचार करने लगी) हाय एक तो पतिके प्राण गये दूसरे यह सञ्छाधम मुझे अपनी स्त्री बनाकर रखना चाहता है क्या मुझे योग्य है कि हत्ती वंश में जन्म ले के अपने प्राणप्यारे पति के वध करनेवाले की रमली बन कर जीऊँ प्राण परि-त्याग करना उत्तम है परन्तु आर्यकुल घेरी सञ्छ की भय्या स्वीकार करना अच्छा नहीं दासी से कहा कि खां साहब से कह दो कि रानी आप से व्याह करना पसन्द करती हैं एक रात का अवकाश मिले कल खां साहब रंगमहल में पधारें । दासी ने आके खां साहब से कहा खां साहब अति प्रसन्न हो डेरे में पहुँचे थे कि रानी के महलों से असूत्य जहाज़ आभूषणादि और रँगोले वस्त्र लेकर राजानधी आया और खां साहब से कहा कि गरीब निवाज़ यह शादी की नज़र महारानी सा-हिबा ने भेजा है और निवेदन किया है कि कल आप इन्हीं वस्त्र आभूषणों को धारण करके रंगमहलों में पधारिये खां साहब ने कहा

बहुत अच्छा प्रातःकाल खां साहब गुस्ल कर बस्त्र आभूषण पहन सवारी पर बैठ सहलों में गये रानी आदर पूर्वक सजी हुई मसनद पर बैठाया घोड़ेही देर गुगरा होगा कि सरदार साहब के सकल शरीर में आग सी लग गई और मूर्च्छित हो गिर पड़ा चेहरा नीला पड़ गया नीकरचाकर सब घबड़ा उठे रानी (जब देखा कि पूरा काम हो गया) खां साहब से कहा कि जो होना था सो हो गया यह बस्त्र जो आप पहने हुये हैं धिप से रेंने हैं आप मेरी इज्जत लेनेपर तैयार हुये उसके बदलेमें, मेरी और आप की मृत्यु एक साथ होगी इतना सुनते ही सरदारके गीकरीं ने चाहा कि रानी को पकड़ लें रानी महल पर से कूदपड़ी और प्राण त्यागकर स्वर्गधाम का रास्ता लिया इधर खां साहब भी खेमे में पहुंच कर दोऊत का रास्ता लिया पर स्त्री गानियों का यही नतीजा सबको मिलेगा और मिलता है ॥

पाठकगण को तिनकीड़ी बाबू कलकत्ता निवासी के दुर्भाग्यवशात् छोटी अवस्था में फांसी पानेका हाल याद होगा कि जिसका आन्दोलन समुद्र के आर्षावर्त्त भर के सम्याद पर्वों में हुआ था । तिनकीड़ी नामक एक धनाढ्य बंगाली का पुत्र जिसकी अवस्था सिर्फ १४ वर्ष की थी मद्य के मद्य में क्रोधातुर हो एक वेश्या (जिसे ५ हजार रुपया दे चुका था) को ३५ छूरी मारी जिसके कारण फांसी पाया, यह कोई नई बात नहीं है इसी प्रकार असंख्य आत्मघात रंहियों की बदौलत हुआ करता है क्योंकि वेश्या प्रसङ्गादि से अधिक शुक्र व्यय जनित मन दुर्बल होने से स्वयं आत्महत्या करने की इच्छा कभी रखलवती हो जाती है । हे प्यारे भ्रातृगणों ! पर स्त्री तथा वेश्या को धिप के प्याले के समान दूरही से त्यागकरी और खेमे इन्द्रियजित बनी कि अपनी स्त्रीके अतिरिक्त यदि चेत आप से अप्सरा (परी) भी आपके गमनेच्छा प्रगट करे तो पं० लोलिम्बराज का अनुकरण करो तभी तुम्हारा कल्याण होगा और देश का मंगल कर सकोगे ॥

देक्षिये, दक्षिण श्रीपुर नाम एक नगर या तिरुमें श्रीचन्द नाम एक

राजा रहता था उसी नगर में लोलिम्बराज वैद्य भी रहते थे और वहाँ सकल कला कोलिदा सर्वाङ्ग सुन्दरी रत्नकला नामक बारांगना (वेश्या) भी रहती थी उस वेश्या और उक्त राजा से दोस्ती थी । एकदिन हमीर में राजा ने पूछा, हे लोलिम्बराज ! वेश्यागमनमें क्याफल है ? लोलिम्बराज ने कहा महाराज ! वेश्या महोपाय शीलें होती है "आयुःक्षतिविफलता" आदि अनेकप्रमाण शास्त्रोंमें मिलते हैं इससे वेश्यागमनकरना कोष्टमिद्वान अच्छा न कहैगा । यह बचन सुन राजा सभाजन्यों को दिसर्जन कर अंतःपुर (रत्नवास) में आरतों से जड़ित शय्या पर लेटगया परन्तु हम चिन्ता से कि कौन उपाय से लोलिम्बराज वेश्यागमन करे निद्रा न आती भई, रत्नकला ने पूछा हे स्वामिन आपको नौद क्यों नहीं आती राजा ने कहा जिस उपाय से लोलिम्बराज वेश्यागमन करे यह विधि रची तो हमें नौद आवै । वह हँस कर बोली कि आप चिन्ता त्याग आनन्द से शयन करें, हम कएही इस कामको करेंगी । प्रातःकाल रत्नकला पलङ्ग से उठ अपने गृह में आये निज गृह द्वार को कदली खम्भ बन्दनघाट गन्ध मालय आदि अलङ्कारों से समस्तकन कर संध्या समय दरवाजे पर खड़ीहों लोलिम्बराज की राह जोहने लगी । लोलिम्बराज की सभा में जाने का वही मार्ग था अब आही तो गये, रत्नकला को देख पूछा (कि-मुत्सयमद्य) आज क्या उत्सव है उसने कहा कि त्रिभुवन जननी भगवती का आज पूजन है हमारी इच्छा है आप भी चलिये दर्शन करिये । उसके सीठी बचन को लोलिम्बराज सुन देवी के दर्शनार्थ उसके साथ भीतर गये, दोनों को भीतर गयेहुये देखकर पूर्व शिक्षित दास ने केवाड़ा बन्दकरलिया, लोलिम्बराज भीतर भगवती की मूर्ति को न देख चन्द्र चिन्द्रकावत् पलङ्ग को निरीक्षण कर पूछा कि यहपलङ्ग किसलिये है ? रत्नकला ने कहा सम्भोगार्थ है, हमारी इच्छा थी कि आप को देवी दर्शन के बहानेसे यहां लाकर अपनी कामना पूर्ण करें । लोलिम्बराज ने भक्ति चित्त हो स्वधर्म विचार कर कहा कि मैं वेश्यागमन नहीं करता । ऐसा सुन वह विषादवती हो बोली "स्वागतां च स्त्रियं त्यक्त्वा भूषणहरया मवाप्नुयात्" यह धर्म ग्रंथ का मंत है इसलिये आपको सम्भोग करना उचित है । लोलिम्बराज ल-

जित्त होके धोले कि अच्छा तुम्हारे साथ वाणी करके रति करेंगे शरीर और मन करके नहीं (नैयुन आठ प्रकार का होता है) ।

**स्मरणं कीर्तनं केलिः प्रेक्षणं गुह्यभाषणं । संकल्पो-
ध्यवसायश्च क्रिया निष्पत्तिरेव च ॥**

स्मरण (बारंबार चिन्तन करना) कीर्तन (मुख अङ्गादि और उसके बीच चाल की बारंबार तारीफ करना) केलि (हँसी दिखानी करना) प्रेक्षण (प्रेम से देखना) गुह्यभाषण (गुप्त बात करना) सङ्कल्प (सम्भोग करने की दृढ़ प्रतिज्ञा करना) अध्येसाय (किसी प्रकार प्रसङ्ग-रहित अवश्य करें उसमें परिश्रम करना) और (निष्पत्ति सम्भोग करना) आपियों ने यह आठों को नैयुन ही में गणना किया है । अब लोलिम्बराज तारङ्गूलरस से (भित्त) देवालों में हँसी दिखानी का सम्बोधन सहित रात भर में १२० पद्य युक्त श्लोक बना के लिखवाला । प्रातःकाल राजा के सभामें पहुँचे (राजा तो जानता ही था) पूछा महाराज रात कहाँ रहे (लो०) वेश्या के घर (राजा०) फलस्वामिला (लो०) एक पुत्र हुआ (राजा) वह पुत्र कहाँ है (लो०) उसी के घरमें है जाके देख लो राजा जाके दिवालों में श्लोक लिखेहुये देख परम विश्रमयापन्न होगया और लोलिम्बराज से क्षमा मांगी (लो०) ने कहा इसने तो क्षमा किया परन्तु अब तुम ऐसा कभी किसी विद्वान के साथ न करना । कहने का तात्पर्य यह कि जो लोग अपने असूख जीवन को आनन्द से काटना चाहते हैं वे कभी वृथा बीर्य नष्ट नहीं करते क्योंकि इन्द्रियों की संयमता यही शारीरिक बल है सो इस पर लोग मिलकुल ध्यान नहीं देते ॥

शराजकल वेश्या संसर्ग प्रभृति कारणों से देहमें शुक्र का भाग अत्यंत अल्प तथा दीर्बल्यादि अनेक दोष प्रायः देखे जाते हैं और धातु वृद्धि एवं पुष्ट होने के अर्थ दैह्यों के शरणागत हो अनेकानेक औषधों का सेवन करते हैं । इस तरह औषध सेवन करना असङ्गत है, यह हमें नहीं कह सक्ते हमारे कहने का प्रयोजन यह है कि जब तक मूल विययों की ओर दृष्टि न दी जायगी अर्थात् जिन २ कारणों से उक्त दोष उत्पन्न होते हैं

पहलेही तत् विषय में सावधान न होकर अनर्थक औषध सेवन करने से क्या फल है ? कुछ भी नहीं । कारण यह है कि जैसे कोई धनवान् मनुष्य मूर्खता से वेपरिमाण धन खर्च करने से थोड़ेही काल में त्रिम तरह एक थारगी दरिद्र हो आण रूपी ज्वाला में जलने लगते हैं और येही अप-व्ययी धनवान् स्वयं सावधान न हो के खर्च किया हुआ धन स्वयं न कमानेसे अन्तमें सहस्रों चेष्टा करने पर भी आण परिशोधन तथा सम्पत्ति रक्षा में किसी प्रकार समर्थ नहीं होते और प्रायः देखा गया है कितने आणजाल में अर्जित जन अन्तमें सब कुछ विसर्जनकर दरिद्रों की भांति शाकाश्रम भोजन करके स्वकीय आण शोधन में कटिबद्ध हुये तथापि आशा सम्पूर्ण नहीं देखी गई । इसीतरह वे युवकगण वेश्यागतनादि में वेपरि-माण धातुनष्टकरनेवाले जिन्हें स्त्री प्रसङ्ग तथा संतानोत्पत्ति करनेकी पूर्ण सामर्थ्य थी, परन्तु अपरमित शुक्र नष्ट करते २ अन्त में एकथारगी धातु हीन एवं धातु दीर्घत्व तथा ध्वजभङ्गादि (नपुंसक) उत्पन्न २ रोगा-क्रान्त हो (आणयस्त धनी पुरुषकी नाई) अपार दुःख भोग करते हैं और हजारों औषध सेवन करने से भी तत्पन्नित रोग से नहीं छूटते । इतनाही नहीं बल्कि वेश्या और परस्त्री के प्रेम में कितने समूल अर्थात् तन मन धन कुछ सीमाव्यय सब रसातल को चले जाते हैं—देखिये ॥

लङ्केश्वरी जनकजा हरणेन बाली तारापहारकतया
प्यथ कीचकाख्यः । पाञ्चालिका ग्रहणातो निधनं जगाम
तच्चेतसापि परदार रतिं न कांक्षेत् ॥

जानकी जी के अपहरण से रावण कैसी दुर्दशा के साथ मारा गया, तारा (सुग्रीव की स्त्री) के हरण से बालीकी मृत्यु हुई और द्रौ-पदी के हरण से कीचक का वध हुआ, अतएव बुद्धिमानों को चाहिये पर स्त्री गमन करने की इच्छा कभी मनमें भी न करें और भी देखिये पुरुषराजा उर्वशी अप्सरा की प्रेम रूपी फांसी में फँसकर तहस नहस होगया इसलिये सत्पुरुष इस अमूल्य जीवन को क्षणिक सुख सम्पदतापे विनष्ट करना नहीं चाहते ॥

हस्तमैथुनादि निषेध ।

वेश्यादि गमन द्वारा जो कुछ अनिष्ट इस शरीरको होता है उसे मली भांति दर्शा चुके हैं, वैसेही बल्कि उससे कुछ अधिक हानि और शरीरकी निर्मलता एवं अकाल मृत्यु हस्तमैथुन और गुदामैथुनसे होती है जिसका कुछ २ साल हम आरोग्यदर्पण के द्वितीयखण्ड में लिख भी चुके हैं ॥

इन दोनों कर्मों से लिङ्ग निर्मल, टेढ़ा अथवाग स्तूत और शक्ति हीन हो जाता है । सुन्तेहैं कुरानमें कोई आमत है कि सहस्रदने काहा है कि यदि स्त्री गर्भवती हो और पुरुष को कामकी इच्छा उत्तेजितहो तो वह गुदामैथुन करे, ऐसे पुरुष सखनक काशी आदि स्थानोंमें अधिक मिलेंगे । यद्यपि ऐसे २ अनापार बन्द करनेको हमारी सरकार ने खास कानून जारी कर दिया है परन्तु जो कुसंस्कार बहुत दिनों से सूर्यों के दिश में जमा है एकाएकी छूटना नहा कठिन है । इस स्थल में हमारी राय है कि यदि अपनी स्त्री गर्भवती हो और ६ मास से ऊपर हो उस समय यदि पुरुष अति कामीन्मत्त हो (जिस्में प्रसंग करकेसे रोग होने का सम्भाव है) तो वेद की आज्ञानुसार नियोग करना उत्तम है, अभावे-सति किसी आरोग्य वेश्या से प्रसंग कर लेना अच्छा है परन्तु गुदामैथुन करना पुरुष के लिये किसी हालत में अच्छा नहीं है । यह बात हम निस्सन्देह कह सके हैं कि ऐसे २ दुष्ट कर्म प्रथम हमारे आर्य भाइयोंमें नहीं थे मुसलमानों के राज्यसे इसका प्रचार हुआ है और 'उन्हीं म्लेच्छों' के साथ अधिक संसर्ग होने के कारण आर्य सन्तान यथ भी सफ़ दुर्गुणों में परिपक्व और निपुण हो गये हैं ॥

हस्तमैथुन पहिले भी था प्रायः लोगों के मुख-द्वारा अवण करनेमें आया है कि भगवान् विश्वामित्र ऋषि ने हस्तमैथुनमृष्टि को कियाथा परन्तु प्राचीन सत्ग्रन्थोंमें इसका कोई प्रमाण नहीं पाया जाता, लेकिन धर्मशास्त्र में इसके प्रायश्चित्त का विधान पाया जाता है और प्रायः

वैद्यक के सभी ग्रन्थों में गरमी रोग होनेका ये कारण लिखे हैं (हस्ता-भिघातान्नखदन्त घातात्) हस्तभमिघात् (हस्तमैथुन) नख और दन्त के भमिघात (घाजे २ कुकर्मों लोग लङ्फों के मुख में लिङ्ग डालते हैं) से उपदंश रोग होता है इससे जान पड़ता है कि यह कर्म बहुत काल से प्रचलित है । हस्तमैथुन में लोगोंकी क्यों प्रवृत्ति हुई यह निर्णय करना कठिन है । इतना कह सकते हैं, एक तो पिताके स्वरूप और उष्ण वीर्य का दोष, दूसरे ठीक २ बालकों की रक्षा का न करना, तीसरे शिशुकाल से ही घुरे २ बालकोंका संसर्ग इत्यादि कारणोंसे मुकुलित वीर्यका मुख भ्रमणमें ही खुल जाता है । यस लिंग स्थान में जहां किसी वस्तु का रगड़ लगा सुरसुरी धोच होने से एक प्रकार का आनन्द आना आरंभ हुआ तब उसे हस्त द्वारा शिष्ट का अग्रभाग खोलने और बद्ध करनेकी इच्छा होने लगी । थोड़ेही काल ऐसा करनेसे वीर्य स्खलित हो जाता है । यस जहां एक दफे रक्त क्रिया से अति आनन्द मिला मूर्ख लोग उसीमें लिप्त हो जाते हैं और उसी सुख को अपने इष्ट मित्रों से कह कर उन्हें भी अत्यल्प में गिरा देते हैं, यह नहीं जानते कि यही सुख हमको कुछ काल पाकर सर्वनाश करेगा । शरीर लीन बल वीर्य विहीन रमणशक्ति से दीन और मन मलीन कर देगा, शरीर निस्तैल, बुद्धिका ह्रास शारीरिक और मानसिक स्फूर्ति नष्ट हो जायगी । हमको इस संसारमें जड़ पदार्थकी भांति होकर जीवन काटना पड़ेगा, हमको सन्तानरहित होने से दूसरे के बालकों को देख ललचाना पड़ेगा, जन्मभर वैद्य दहीनोंकी सुसामद करनी पड़ेगी ॥

कुछ दिन हस्तमैथुन करनेवाला बालक युवावस्थामें शुक्र मेह आदि रोगों से ग्रसित होता है । शीघ्र करते समय मूत्र के पहले या पीछे वीर्य का निकल जाना और स्वप्रदोष से भी पीड़ित होना, तथा प्रसंग में वीर्य का शीघ्र पात होना आदि उत्पात होता है । लिंग भी क्रमशः आकार में छोटा और निर्बल हो जाता है । शिर कमजोर, बिचारहीन और नेत्र भी कुछ ज्योतिष्हीन हो जाते हैं । एक अंगरेजी यंत्र है उसके द्वारा तरल वीर्य को देखने से जानागया है कि पतले वीर्य में छोटे २

कमि पड़ जाते हैं जिनका स्वरूप अण्डाकृति मस्तक और लम्बी पुच्छ वाले सूत्रवत् होते हैं ॥

केवल इतनेही लक्षणों पर निर्भर नहीं है, इस नीचवृत्ति क्षुद्र क्रिया हस्तमैथुन से इस शरीर को क्या २ हानि पहुंचती है और उसके द्वारा कौन २ सा दुःख भोगना पड़ता है, लेखनी में ऐसी पूर्णशक्ति नहीं है जो चित्र खींचकर दिखा दे परन्तु उक्त वृणित कर्म करनेवाले युवक गण उपरोक्त लेखोंको ध्यानदेके पढ़ेंगे तो आप ही उनके हृदय में चित्र लिख जायगी और बारंबार अपने कियेहुये दुष्कर्मोंपर पछतावेंगे और आशा है कि बहुतसे लोग जो अज्ञानतावश इस अभूत्यजीवनमूलमें अपने हाथ से कुल्हाड़ी मार रहे हैं चेत जायेंगे, और कितने चेतते भी होंगे । जयसे आरोग्यदर्पणमें हस्तमैथुन द्वारा शरीरनाशक दुरीतसे वीर्यके सत्यानाश करनेका दोष और भविष्यतमें अनेक क्लेश होने का सम्भव दिखलाना आरंभ किया है तब से अनेक चिट्ठियां उन युवकगणों की हमारे पास आई हैं और आती जाती हैं जो अज्ञानतावश होकर इस सत्यानाशी कार्य में लिप्त हो अपने अभूत्य जीवन को कृपा गंवाने में कटिबद्ध थे । वे लोग लिखते हैं : महाशय ! भवदीय रचित आरोग्यदर्पणको जिसमें हस्तमैथुन द्वारा वीर्यपात का दोष दिखलाया है पढ़कर पश्चात्ताप किया और शपथ किया कि आज से अब ऐसा दुष्टकर्म कभी न करेंगे परन्तु महाशय जो मैं इस काम को बहुत दिनों तक करता रहा उस कारणसे मैं इतना दुर्बल हो गया हूं कि मेरे कमर में दर्द रहता है, पढ़नेमें चित्त नहीं लगता, कितनाहू रटते हैं परन्तु याद नहीं होता है, शिर कमजोर होगया है कलेजा कभी धक २ करने लगता है, मन उदास रहता है और बुरे २ ख्यालात् सूझते रहते हैं इत्यादि । इसकी कोई दवा लिखिये या आप के औपचार्य में तैयार हो तो भेषज पारसल द्वारा भेज दीजिये ॥

पाठकगण, वे लोग उपरोक्त लेखों के अतिरिक्त और भी अपनी भीतरी मर्मांको जो निरर्थक वीर्यपात के प्रभाव से उन लोगों को प्राप्त हुआ है लिखकर भेजते हैं, जिसका यथार्थ प्रकाश करना अनुचित जान

नहीं लिखा । इससे जान पड़ता है कि बालकों के दिलपर उस लेखका असर अधिक हुआ है, ईश्वर ऐसाही शरणा नसर मन्त्र के दिलपर पहुंचावे । इस इस लेख को मैं यहीं समाप्त करता हूं । आगे कामशास्त्र के अनुसार स्त्री पुरुषों के लक्षण और जो वेश्यागमन में लिप्त हैं और ऐसे पित्त के हैं कि उनके समझाने में विचारे आरोग्यदर्पणकी क्या ताकत है वे ब्रह्मा के उपदेश को भी न मानेंगे तो भी विवेकियों के उपकारार्थ यथा शक्ति कुछ उलट देता हूं ॥

कामशास्त्ररहित गमन निषेध ।

पाठकगण को याद होगा मैं इस वाक्य को लिख चुका हूं "कोक पड़े बिन रति करै सो नर पशू समान" जो मनुष्य कामशास्त्र के जाने बिना मैथुन करता है वह सद्धिषयक सुख से वञ्चित हो शरीर से भी निकम्मा हो जाता है । हमें यह कहते शोक होती है कि आज भारतके प्राणी गण अत्यन्त रोग ग्रस्त क्यों हो रहे हैं ? कामशास्त्रके न जाननेसे, शायद लोग यह जानते होंगे और प्रायः यह भी कह देते होंगे कि काम शास्त्र तो विषयी पुरुषों का बनाया है । जैसे अपने आनन्द करने के लिये शास्त्रगत ब्राह्मणों ने स्थापन कर लिया है, सो नहीं । व्यभिचारकर्म, परस्त्री गमन और अति विषयसेवन ये तो अवश्य लम्पट और कुत्सित पुरुषों के काम हैं परन्तु रीति पुर्यंक स्वदार गमनादि में कामशास्त्र का ज्ञान बहुत उपयोगी है, क्योंकि कामशास्त्र स्त्री पुरुष के मनोद का ब-ढानेवाला है कि जिसकी क्रिया से उत्तम सन्तान हो सके हैं । अतएव उचित और प्रयोजन मात्र कामशास्त्र का ज्ञान और पाणिग्रहीता धर्म का सङ्गम शिष्ट सम्मत है । यह भी ठीक है कि जो जिसके गुण को नहीं जानता उसकी निन्दाही करता है । कामशास्त्र आयुर्वेद का अंतिम भाग है । अयियों ने जब देखा कि लोग अति कामातुर होकर अज्ञानता से अमूल्य रत्न और जीवन के सर्वस्व बीज को लूटा नष्ट करने लगे हैं उस समय आयुर्वेदको मथकर लोकोपकारार्थ कामशास्त्र एक जुदा शास्त्र ही बना दिया । उसीसे चुन कर पं० कोक जी निज नाम की संहिता

अर्थात् कोक नामक एक ग्रन्थ बनाया, उसके आशय ले और लोगों ने भी छोटी २ पुस्तकें बनाई हैं फिर असपञ्च प्राणियों के समझाने के लिये कोक सार नामक संक्षेप भाषा का ग्रन्थ बनाया है । संस्कृत में पञ्चशायक और अनङ्गरङ्ग नामक दो ग्रन्थ बहुत प्रामाणिक और उपयोगी हैं जिसे चतुर्थ या पञ्चमखण्ड के आरोग्यदर्पण में शाङ्गोपाङ्ग लिखेंगे । जिसमें रतिप्रिय मर नारी के प्रयोजनीय साहित्यों का संग्रह किया है । श्रीपद्मी और लक्ष्मणों के विशेष विवरण जिस देशकी स्त्री की प्रकृति रति क्रिया के जिस अंग में जैसी होती है उसे भी वर्णन कर दिया है । कामशास्त्र में चार प्रकार के स्त्री पुरुषों के लक्षण और स्त्री पुरुषका परस्पर वर्तान, कौन पुरुष किस स्त्री के साथ और जिस अवस्थामें विवाह कर सकता है, सत्य-शीला और दुष्टास्त्रियों का स्वभाव और उनके चरित्र और लक्षणद्वारा पदधान, निज स्त्री को बसीभूत रखने की विधि, कामदेव का वर्णन, स्त्रियों के कौन दिन किस अंगमें काम का वास रहता है, आसन्नविधि, रूप यौवन सम्पन्न बने रहने, सुन्दर सन्तान उत्पन्न करनेकी विधि, स्त्री अपने पति को किस उपाय से अपने बस में रख सकती है, स्त्रियों को शङ्कार करने की विद्या, यंत्र विद्या, तथा शिल्प विद्या सीखनेकी विधि और भीष्मादि पुष्ट करने के अनेकानेक उपाय और औषध लिखे हैं ॥

इस स्थलमें हम सिर्फ संक्षेप से स्त्री पुरुष की परस्पर प्रीति, व्यवहार और सहायस आदि प्रकरणोंको लिखते हैं जिनका बाद रत्नना गृह-स्थानियों के लिये अति लाभदायक है ॥

प्रसंगेच्छा ।

शरीरे जायते नित्यं देहिनां सुरतरुहा । अव्यवाया-
न्मोहमेदोवृद्धिः शिथिलतातनाः ॥

वीर्य पुष्ट रहने से स्त्री के साथ प्रसङ्ग करनेकी इच्छा देहधारियों के नित्यप्रति होती है और गमनेच्छा होने पर न करनेसे प्रमेह (पित्त रोग) मेद (शरीरका मोटा हो जाना) और सम्पूर्ण अंग शिथिल हो

जाते हैं । इसलिये अकस्मात् गमनेच्छा होने से गमन करना मनुष्यमात्र को जरूरी है ॥

किस अवस्थावाली स्त्रीके साथ कौन पुरुष और कैसे समयमें गमन करे सो दिखलाते हैं । यह बात तो सभी को याद रखनी चाहिये कि अपनी अवस्था से अधिक उमरवाली स्त्री के साथ मैथुन कभी न करे ॥

स्त्री अवस्था विचार ।

वालेतिगीयतेनारी यावद्वर्षाणिषोडश । ततस्तुत-
रुणीज्ञेयाद्वात्रिंशद्वत्सरावधि ॥ तदूर्ध्वमधिरूढास्यात्पंचा-
शद्वत्सरावधि । वृद्धातत्परतीज्ञेया सुरतोत्सववर्जिता ॥

सोलह वर्ष की उमरवाली स्त्री को बाला, सोलह से पच्चीसवर्ष तक की अवस्थावाली को तरुणी, पच्चीसवर्षके ऊपर पचासवर्षतक की स्त्री को प्रौढ़ा और पचास वर्षकी अवस्था से उपरान्त उमरवाली स्त्री को शास्त्रकारों ने वृद्धा कहा है । अपनी अवस्था से अधिक उमरवाली स्त्रीके साथ सहवास करना तो निषेध है परन्तु वृद्धा स्त्रीके साथ तो कदापि प्रसङ्ग नहीं करना चाहिये । देखिये ऋषियोंने क्या कहा है ॥

वृद्धोपितरुणींगत्वातरुणत्वमवाप्नुयात् । वयोधिकां-
स्त्रियंगत्वातरुणःस्थविरायते । आयुष्मन्तोमन्दजरावंपुर्व-
ण्वलान्विताः । स्थिरोपचितमांसाश्च भवंतिस्त्रीपुंसंयताः ॥

यदि वृद्ध पुरुषभी तरुण स्त्री (अपनी उमरसे कम उमरवाली युवा स्त्री) से गमन करे तो युवत्व धारण करे, अगर जवान मनुष्य युव्दीस्त्री से गमन करे तो वह भी युव्दा हो जावे । इसलिये वृद्धा स्त्री के साथ कदापि गमन नहीं करना चाहिये । जो मनुष्य सर्वदा तरुण स्त्रीसे भोग करते हैं वे (आयुष्मतः) - जादा उमरवाले (मन्दजरा) अल्पवृद्ध, उत्तम

शरीर, सुन्दर वर्ण, बलयुक्त, बहुत दिनों तक जवान और मांस की सि-
कुहन रहित बने रहते हैं । पाठकगण—हमारे इस लेख को कि तरुणी-
के साथ मैथुन करने से बुढ़ा भी जवान हो जाता है कहीं ठपकर अ-
नर्थ न कर बैठना कि किसी तरुणी स्त्री को देख के उसे प्राप्ति करने की
कोशिश और बंदिसें ठान, कुटिनियों को मालामाल कर दो । यह सब
सहा अधर्म और पाप जनक कर्म हैं, गमन का युक्तायुक्त विधान आगे
स्पष्ट लिखते हैं ॥

ऋतुपरत्व प्रसंगविचार ।

निदाघशरदोर्वालाहिताविषयिणीमता । तरुणी-
शीतसमये प्रौढावर्पावसन्तयोः ॥

गरमी (ग्रीष्म) शरद ऋतुओं में बाला स्त्री के साथ मैथुन करना
विषयेशुकों को अतिलाभदायक लिखा है । जाड़े के दिनों में तरुणी स्त्री के
साथ, वर्षा और वसन्त ऋतु में प्रौढ़ा के साथ गमन करना उत्तम कहा
है । जो अनुप्य विषयी हैं और आरोग्यता भी चाहते हैं वे इसी वचनके
अनुसार स्त्री प्रसङ्ग करें ।

इस पर यह भी शङ्का होती है कि एक पुरुष को ऋतु २ में बदल
बदल कर ४ स्त्रियां चाहिये, सो इसका उत्तर यह है कि यह वचन केवल
एकही पुरुष के लिये नहीं है । तात्पर्य यह कि जिनकी बाला स्त्री है
वे गरमी और शरद ऋतु में प्रसङ्ग करें और जिनकी तरुणी स्त्री है वे
शीत समय में जिनकी प्रौढ़ास्त्री है वे वर्षा और वसन्तऋतु में गमन करें
अन्य ऋतुमें नहीं । बाला आदि स्त्रियोंके साथ गमन करनेका और भी
एक विशेष वचन यह है:-

नित्यंवासेव्यमानाहि वालावर्द्धयतेचलं । तरुणी-
हासंयेच्छक्तिं प्रौढोद्भावयतेजरां ॥

बाला के साथ रीज र गमन करनेसे भी बल बढ़ता है और तरुणी स्त्री से रीज र मैथुन करने से शरीरके बल हानि और प्रौढ़ा के साथ निरन्तर मैथुन करने से बहुत जल्द बुढ़ाई आजाती है ।

बाला स्त्री के साथ गमनकरनेका मुख्यसमय गर्मी और शरदऋतु कहा है सही, पर यदि उसके साथ नित्यही गमन करे तोभी बल को बढ़ावेगी, परन्तु किसके बल को बढ़ावेगी ? तात्पर्य यह कि बली पुरुष के ही बल को बढ़ावेगी किन्तु किसी रोग से क्षीण पुरुष के बलको कभी नहीं बढ़ाय सकैगी और यह भी तात्पर्य है कि केवल बलको तो बढ़ावेगी परन्तु आगन्तुक रोगोंके प्राप्त होनेसे पूर्वोक्त रोगार्तों के रतिनिषेध की ही कोटिमें अपकारी है, इससे उत्तम यही है कि सर्वथा आरोग्यता चाहनेवाले पुरुष बाला के साथ भी उपरोक्त ऋतुओं में ही गमन करें, क्योंकि बीर्यरक्षाही एकप्रधान फल है जो समस्त आरोग्यताका कारण है ।

पाठकगणों के विवेचनार्थ उपरोक्त श्लोक का विशेष आन्तरिक अभिप्राय प्रगट करते हैं । गर्मीमें वाय्वाभ्यन्तर की उष्णतासे और शरदऋतु में पित्तकोप से बीर्य तरल भाव में रहता है और यौवन के बढ़ाव के कारण बाला स्त्रीके रजमें रुकता और तरलता नहीं रहती, इससे भगाशय उष्णभाक् रहित रहता है । इसलिये गर्मी और शरदऋतुओंमें बालाके साथ मैथुन करनेसे बलकी हानि नहीं होती और उक्तऋतुओंके अलावा बाला के साथ मैथुन बलवर्धक है । इससे यह निद्वान्त ठहरा कि बाला स्त्रीही से मैथुन करना सर्व सम्मति है । शीतकाल में बीर्य गाढ़ा और शीतल रहता है, इससे तरुणी के साथ गमन करने से बीर्य अति शैत्यता से सब रास्तेमें कहीं नहीं रुकके बाहर निकल आता है । उसी तरह वर्षा और बसन्तऋतु में बीर्यकी बाढ़ होती है, उस अवस्था में प्रौढ़ा स्त्री के साथ भी गमन करना हानि कर नहीं है । परन्तु यह बात याद रखनी चाहिये कि कोई ऋतु क्यों न हो कम उमर का पुरुष अपने से अधिक उमरवाली स्त्री के साथ गमन करते र अवश्य बलबुद्धि हीन निस्तेज हो थोड़ेही दिनों में रोगग्रस्त हो यमालय की

रास्ता पकड़ेंगे। वैसे ही छोटी उमर की स्त्री: यदि बड़े बूढ़े के साथ गमन करावे तो निस्सन्देह बहुत जल्द प्रदर रोग अथवा खांसी ज्वर (तपेदिक) से पीड़ित हो मर जावेग। भारतवर्षमें अधिक विधवा होने का भी एक प्रधान कारण यह विषय है—प्रायः इस देशमें विशेष कर उत्तमजातों के यहां छोटे २ लड़कोंका विवाह बड़ी उमरवाली लड़कियोंके साथ होता है। और बाजी २ जगह देखनेमें आता है कि पुरुषों के विवाह पर विवाह होते जाते हैं और स्त्रियां मरती जाती हैं, इसके कारण दो हैं, प्रथम तो यह कि जिस पुरुषकी स्त्री मर जाती है उसका दूसरा विवाह वही नव दश वर्ष की बालिका के साथ होता है। पुरुष साठ वर्षका क्यों न हो जाय उसका व्याह दशही वर्षकी कुमारीके साथ होगा। दूसरे बहुत किस्मके ऐसे लोग हैं जो फुलीन नहीं हैं अथवा गरीब हैं वे लोग जवान हो जाते हैं विवाह नहीं होता, जब कुछ धनवान हुये तो धन दे कर छोटी २ लड़कियों के साथ विवाह करते हैं, यही कारण स्त्रियों के मरजाने का है। और योनिरोग तो अवश्य ही होता है। देखिये लिखा भी है ॥

अतिकायगृहीतायास्तरुण्याग्रिडनीभवेत् ।

अति अल्प अवस्था की स्त्री के साथ यदि दीर्घ लिंग वाला मैथुन करे तो उससे उसकी योनि कमल अथवा के माफिक लटक जावेगी सो अग्रिणी रोग है उससे सन्तान नहीं होते ॥

मैथुन निषेध ।

अत्याशितोऽधृतिःक्षुद्धान्सव्यथाहःपिप्राशितः ।

वालोवृद्धोन्यरोगार्त्तस्त्यजेद्रोगीचमैथुनम् ॥

ऐसे पुरुषों के साथ चाहिये स्त्री गमन न करावे—जिसने अत्यन्त भोजन किया हो, धैर्य रहित अर्थात् जल्दीयाज हो जिसके शरीर में ददं हो, प्यासा हो बालक * याने कम उमर का हो, अथवा वह स्त्रीके उमर से बहुत अधिक उमरवाला हो और गरमी जुकाह आदि रोगों से

पीड़ित हो, तो उस पुरुष को मैथुन नहीं करना चाहिये । यदि स्त्री आरोग्यता की इच्छा रखती हो, तो वह भी सक्त पुरुषों के साथ कभी भोग न करे ॥

यदि उपरोक्त लक्षण युक्त पुरुष मैथुन करे तो स्त्री को तो रोगिणी बनाही देगा लेकिन पुरुष को भी शुक्रकी दुर्बलता, वायुका कोप होगा और यदि रोगग्रस्त अवस्था में करे तो रोग की वृद्धि होकर मृत्यु को पशुत जख्म प्राप्त होगा ॥

मैथुन में समय ।

सेवेतकामतःकामवलाद्वाजीकृतोहिमे । प्रकामन्तु-
निषेवेत मैथुनंशिशिरागमे ॥ ज्यहाद्वसन्तशरदोःपक्षाद-
वृष्टिनिदाघयोः ।

अथसुश्रुते--त्रिभिस्त्रिभिररहोरात्रैः समयात्प्रसदां-
तरः । सर्वेष्वर्तुपुधर्मेषु पक्षात्पक्षाद्ब्रजेदबुधः ॥

श्रुतु के अनुसार मैथुन करने की विधि आयुर्वेदविदों ने इस प्रकार कहा है कि हेमन्तश्रुतु में पुरुष आगीकर औषधों को सेवन करके रूप यौवन सम्पन्न स्त्रीके साथ रमण करे, शिशिरश्रुतुमें जब काम का वेग हो मैथुन करे, वसन्त और शरदश्रुतुओंमें कामकी चेष्टा होनेपर तीन २ दिन के बाद गमन करे, वर्षा और गरमी की श्रुतुओंमें पन्द्रह २ दिनके अन्तर में गमन करना चाहिये । शुश्रुत जी भी यही कहते हैं कि सम्पूर्ण श्रुतुओं में मनुष्य को चाहिये कि तीन २ दिनके अन्तर दे के और गरमीके दिनों

* बहुत सी स्त्रियाँ पुरुषों की तरह जैसे पुरुषों को इस बात का बि-
श्वास जमा है कि कमसिम औरत के साथ भोग करने से बल बढ़ता है वैसे
ही स्त्रियों को भी विश्वास है कि लड़कों से मैथुन कराने से स्त्रियाँ बूढ़ी
नहीं होती इससे प्रायः अभिचारिणी स्त्रियाँ कम उमर के सुन्दर बालकोंको
खोज कर मैथुन कराती हैं ॥

में कामोन्मत्त होनेसे पन्द्रहेदिन मैथुन करना चाहिये । कामोन्मत्त होने का लक्षण हमने द्वितीयखण्ड के आरोग्यदर्पण में लिख चुके हैं ॥

रुक्षाङ्गीवहुभोजनाचलमति र्गीतप्रियावातला । शै-
लाम्भोनिधिपार्श्वदेशवनिता प्रायोभवेदीदृशी ॥ वर्षायां-
कुसुमागमेचवहुशः सेव्यापरम्प्रीतिदा ॥

रुखे अङ्ग की अर्थात् स्वेदादि रहित जिनके अङ्ग हो, सूय भोजन करनेवाली, युद्धिनाम् गान जिन्हें अति प्रिय हो और सात प्रकृति के लक्षण मिलते हों एतादृश लक्षण युक्त पर्वतीय और समुद्र के किनारे के रहनेवाली स्त्रियां होती हैं । इन स्त्रियों के साथ वर्षा और अचल जल में मैथुन करने से अति आनन्द मिलता है अर्थात् इन जलधियों में वृक्ष देश की स्त्रियां अति सुख देनेवाली होती हैं । यह जो भारतवर्ष के राजे महाराजे अनेक देश की स्त्रियों से विवाह करते थे यही कारण है किन्हीं २ के सौ सौ दो दो सौ रानियां होती थीं इसका संभव भी यही है कि पूर्व समय के लोग विद्वानों से कानशास्त्र को अध्ययन करते थे ।

गुर्वाहारसुगन्धमाल्यवसना स्निग्धाङ्गरागादिभिः
व्यक्तग्रंथिरहनिशंचसकले गात्रेवहंत्युप्यतां । अम्भोज-
प्रसरारुणोत्तमकरा शीतालयेयसी ॥ सौराष्ट्राङ्गकलिङ्ग-
सिन्धुयुवतीः कामंभवेत्पितला । हेमन्तेशिशिरेनरैरनुदिनं
सेव्यायथाकाक्षया ॥

भावार्थः—उत्तम पदार्थों के सूय भोजन करनेवाली, अंतर, कुलेल, पुष्पों के माला सुगन्धित वस्त्रों के धारण करनेवाली, दिन रात जिन को यही काम, शरीरको सुधारना, पान चाबना, गान गुहना, आभूषणों से अङ्ग को सुशोभित करना इत्यादि जिसकी मांस रेगियां पुष्ट हो, सम्पूर्ण शरीर बहुत खफीक स्या हो, हाथ पैर के तलुए कमल के समान सुख हों और सर्वदा जिसे शीतल स्थान बगोचा नादि प्रिय हो, स्थलित होने से जिसके धातु (रज) से कमल की सी गन्ध आये ऐसी भीमट्ट

देश, अङ्ग देश, और सिन्धु, कश्मीर देश की पित्त प्रकृतिवाली स्त्रियाँ होती हैं। इन देशवाली स्त्रियों के साथ हेमन्त और शिशिर ऋतु में इच्छाभर नैयुन करे, इन ऋतुओंमें यह स्त्रियाँ अत्यन्त सुख के देनेवाली होती हैं।

ज्ञेयंकोकिलकाकलीमृदुरवा नन्दैपिणीशीतला ।

निद्रालुश्चशरीरकोमलतनुः स्निग्धाननाश्लेष्मला ॥ वङ्ग-
श्रीहरकामरूपतरुणी सुस्निग्धकेशोभवेत् । गन्तव्याशर-
दिप्रदिष्टमदना ग्रीष्मेऽपिपुंभिवरैः ॥

मनोरहर, कोकिल, के समान नीठी वस्त्रन बोलनेवाली, जिस की समस्त शरीर शीतल, आनन्द इच्छक (निद्रालु) नेत्र मद से पूर्णित हो प्रति कोमलाङ्गी, स्निग्ध मुखी, गोल गाल भरे, दीप्तवान जिसके मुख के देखतही काम अस्थिर न रहे उसे स्निग्ध मुखी कहते हैं। कफ प्रकृति युक्ता ऐसी यङ्गाल, सिलहट और कामरु देश की स्त्रियाँ होती हैं इनके बाल भी बहुत लम्बे और काले धमर के समान होते हैं। इन स्त्रियों के साथ शरद और ग्रीष्म ऋतु में काम क्रीड़ा करने से जो सुख मिलता है वह इस के समान स्वर्ग का भी सुख धूल है। क्या कोई इस बात का खपदन करसक्ता है? पूर्ण जीवन प्राप्त काल में स्त्री पुरुष स्वतन्त्र प्रेमात्मक हो अर्थात् अज्ञान अवस्था में माता पिता के द्वारा विवाह न हो के जवानी में स्त्री पुरुष दोनों के परस्पर प्रसक्ता पूर्वक विवाह हुआ हो और देशकालानुसार मदीयत्त हो नैयुन करने में अक्षयनीय और जो अद्वितीय सुख है क्या उसकी वराधरी स्वर्ग का सुख करसक्ता है? यदि स्वर्गीय सुख इसी सुख को कहें तो कुछ आश्चर्य्य न होगा।

प्रीतिवर्णनः।

कोकसार के मत में नौ स्त्री पुरुष में चार प्रकार की प्रीति कह आये हैं, यथा: — नैमर्ग की प्रिययत्ना, समा, और लग्न्याम की, इन चारों के लक्षण हम प्रकाश करते हैं और उसके नीचे प्रकाश करने का मुख्य प्रयोजन यह है कि जब तक स्त्री पुरुष में परस्पर प्रीति न होगी तब तक नैयुन का जो पूर्ण आनन्द है वह कदापि लाभ नहीं हो सक्ता। जैसे वैश्यागमन में जिसे हम भलीभाँति आ० ८० के दूसरे खण्ड में दिखला चुके हैं।

नैसर्गकी आदि प्रीति के लक्षण ।

अभ्यासविषयासाध्यादम्पत्योः सहजातुया । सान्द्रानिगडभूताच प्रीतिर्नैसर्गिकीमता ॥

मालाचन्दनभोज्यादीर्विषयैर्वर्द्धितातुया । प्रीतिर्विप्रयजाप्रोक्ता समयोगेसमास्मृता ॥

आखेटदेवपूजादकेलिसंगीतकर्मसु । अभ्यासयोग्यावृद्धियातिसाभ्यासकीमता ॥

(अभ्यास विषय साध्य) पासही विषय है जिसमें कोई तरदुत नहीं ऐसा स्वभावज प्रीति बिबाह होतेही और येही के समान आपस में हो जावे जो छुड़ाने से न छुटे उसको नैसर्ग की प्रीति कहते हैं । यह प्रीति उसी अवस्था में होभली है जब १२ वर्ष से ऊपर उमरवाली स्त्री का २० वर्ष से ऊपर उमरवाले पुरुष के साथ बिबाह हो, अन्यथा नहीं । जो प्रीति माला, अस्तर, मिठाई, वस्त्र, आभूषण, अथवा कोई लालच वस्तु के लेने देने से प्रीति हो उस प्रीति को विप्रयजा प्रीति कहते हैं । समान योगों को करके अर्थात् स्त्री और पुरुष रूप से जीवन से, धन से तथा कुल आदि हर वस्तुओं से समान होने के कारण जो प्रीति भई हो उसे समा प्रीति कहते हैं ।

जब अभ्यास की प्रीति का वर्णन करते हैं । आखेट अर्थात् शिकार खेलने में जो प्रीति हो (इससे मालुम होता है कि पूर्व समय में स्त्रियाँ भी शिकार खेलने जाती थीं अथवा पुरुषही कहीं शिकार को गया हो किसी स्त्री से प्रीति होवे जिसे सकुन्तला और दुष्यन्त की प्रीति) तथा देव पूजन में (जो प्रायः देखने में आता है कि मन्दिरों में नित्य २ देवपूजनार्थ स्त्री पुरुषों के जाने से किसी किसी से परस्पर घड़ी गहरी प्रीति होती है । यहां तक कि देवपूजन छोड़ पुनीस और वकील मुद्दारों की पूजा करनी पड़ती है) केलि अर्थात् काम क्रीडा से (जिसे पुरुष सज

पूँछुट अथवा अशूल या बाँह के ऊपर के बच्चों को धारदार, सुधारना, वालों को आगे के तरफ खिंटकाना, भीहोंको चढ़ाके तिरछी निगाहोंमें देखना, इत्यादि लक्षण परपुरुष के चाहने वाली स्त्रियों में देखे गये हैं । परन्तु यह लक्षण प्रथम प्रेम की सीढ़ी का है जब अधिक प्रेम बन जाता है सिर्फ सहयान करना बाकी रहता है उस अवस्थाके लक्षण यह हैं जैसे—

प्रीतम प्यारेको देखने खसारकर घूकना, बहुत हँसना, या गीतगाना सेन से उतर कर अथवा बिछीने से सरककर पास भा बैठना, गङ्गों को तोड़ना, या जँभाई लेना, गरीब स्त्री है तो कुछ द्रव्य या वस्त्र आभूषण की याचना करना, स्त्री धनधान है तो उस पुरुष से कहना कि तुम्हारे शरीर पर अमुक रहना या वस्त्र बहुत अच्छे लगते हैं क्यों नहीं बनवा लेते हो। अथवा कोई बस्तु या अपनी अँगूठी पहिरने को देना, उसे देख के अपने बालक का अथवा किसी सहेली का मुँह घूमना, या अपने बराबर की स्त्री के साथ हँसी दिखानी करना, काम खजुवाना और पीछे पीछे अपने प्यारे की बड़ाई करना ।

गहरी प्रीति के लक्षण ।

इमांचविन्द्यादनुरक्तचेष्टांप्रियाणिवक्तिस्वधनंददाति ।
विलोक्यसंहृष्यतिवीतरोपाप्रमाष्टिदोषान्गुणकीर्तनेन ॥ त-
न्मित्रपूजातदारिद्रिपित्वंकृतस्मृतिःप्रोषितदौर्मनस्यम् । स्त-
नौष्टदानान्युपगूहनंचस्वेदोऽथचुम्बनाप्रथमाभियोगः ॥

भीठी बघनों का मोलना, धनादि वस्तुओं से सत्कार करना, कैसा हू क्रीप में बैठी हो देखत ही प्रसन्न होजाना, उसके दोषों पर ध्यान न दे के बमेशा उसकी तारीफ करना, उनके मित्रों की खातिरदारी करना और वैरियोंसे अतिद्रोह रखना तथा अपने प्यारेके घोड़ीसी भी सत्कार को बहुत जानना और याद रखना, उसके परदेश में रहनेसे या परदेश जानेके नाम सुनेसे निहायत रुझकरना, दासीका छूना, ओठोंका चुम्बन

और छपटा, लेना और बारंबार पसीने का आजाना आदि लक्षण अधिक दास्ती होने से प्रायः देखने में आते हैं ॥

परपुरुषरता स्त्रियों के संकेत ।

रात्रीविहारजागरोगव्यपदेशपरगृहेक्षणिकाः ।

व्यसनेनात्सवाश्रसंकेतहेतवस्तेषुरक्ष्याश्च ॥

रात में घर के बाहर निकलना, कहीं अपने भाई बिरादरी के घर जावे तो प्रायः दिया जलनेके बाद अपने घर जावे, रतनेमें अदबदाय के और रात भर लागना, रोग के बहाने से पड़े रहना और घीरा हकीम के घर दवा कराने जाना, भोजन न करना, नीच की स्त्री तथा पुत्रियों से घात घीस करना, इधर उधर की घातें पूछना इत्यादि परपुरुषरता स्त्रियों के लक्षण होते हैं, इन स्त्रियों के दूती दूत भी प्रायः नीच जाति के लोग होते हैं, लिखा भी है ॥

भिक्षुणिकाप्रव्रजितादासीधात्रीकुमारिकारजिका ।

मालाकारीदुष्टाङ्गनासखीनापितीदूत्यः ॥

भीख मांगनेवाली, बैरागिनी, टहलनी, बुढ़िया लड़कियां, धोबिन, मालिन, घुरे चालवाली स्त्री, सखी, और नाइन, परपुरुषरता स्त्रियां उपरोक्त स्त्रियों से दूती का काम कराती हैं, इन के द्वारा अपना हाल अपने प्रीतम के पास पहुंचाना और उनका हाल सुना-धोना व स्त्रियां दूती करने में ऐसी पक्की होती हैं कि पतिव्रता स्त्री को भी पर रता बना देती हैं, और कितनों का तो घर कुटुम्बादि पुटाके आगमन के लिये देखा बना देती हैं ॥

अलभ्या स्त्री ।

भर्तृस्नेहवतोदृढैकव्रन्तिप्रेम्णाविहीनाभृशं सेप्या-
भूरिसुतात्रपामरयुतागुर्वादिभीतिस्थिता । प्रायेणार्थवती-

तथापरजनालापेविरक्तासदा निर्लोभाव्यभिचारकर्मणि-
बुधैर्दुःखेनसाध्यास्मृता ॥

जो स्त्री अपने पति में अत्यन्त प्रेम रखती है, या एकही पुरुष में आसक्त हो, हर एक पुरुष के साथ प्रेमहीन हो, ईर्ष्या जिसमें अधिक हो और अधिक लड़केवाली, बहुत लजानेवाली, सास ससुर ज्येष्ठ आदि घर के बड़े पुरुषों से अधिक भय खानेवाली (अर्धवती) इसका अर्थ यह है कि धन की कांक्षा रखती हो । इस अर्थ से यह आपत्ति आती है कि प्रायः स्त्रियां धन की लालच से पर पुरुषरता हो जाती हैं । इसका अभिप्राय यह है कि (अर्धवती) अर्थात् धनवान हो, परपुरुष से वातचीत करने में निरन्तर लज्जित और निर्लोभ हो प्रायः ऐसी स्त्रियां व्यभिचार कर्म में कुटनियों करके नहीं फैसती हैं । उपरोक्त लक्षण युक्त स्त्रियों को देख दुष्ट पुरुष उनके मिलनेकी आशा न रखें, वे अशर्मियों करके प्राप्त नहीं हो सकें ॥

सहज प्राप्ता स्त्री ।

मार्गादिश्रांतदेहांचिरविरहवती मासमात्रप्रसूताग-
र्भालस्याचनव्यज्वरयुततनुकात्यक्तमानाप्रसन्ना । स्नाता-
पुष्पावसानेनवरतिसमयेमेघकालेश्रसन्ते । प्रायःसंपन्नरा-
गामृगशिशुनयनास्वलपसाध्यारतेस्स्यात् ॥

भावार्थः—इतनी स्त्री अलभ्यता उल छिद्रयुक्त कुटनियों को अथवा चतुर, रूपवान्, धनवान् पुरुष को लाभ हो सकती है । जैसे मार्ग से घक गई हो या मार्ग से भूलगई हो • बहुत दिनों की विरहवती या जिसे

* एकदिन एक विधवा लाला हमसे कहनेलगी कि हम सुहरम के नवई तारीखकी १२ बजे रातकी चौक में रोमनी दिखने गये, जहां अधिक भौड़ भौड़ हो दिखा कि एक बहुत हथौन नवजवान किसी अच्छे सुपकमागके घर की ओरत, अपनी संगकी ओरतींसे छुट कर ब्याजुल को दधर चधर धूमरही

अनेक दिनों से पुरुष से समागम न हुआ हो, महीना मात्र की प्रसूता हो गर्भवती (लड़का होने के कुछ मास बाद और-५-६ मास तक गर्भ रहते स्त्रियों को मैथुनेच्छा अधिक रहती है) आलसयुक्ता, नवज्वरवाली, मानहीना, जो बहुत हसनेवाली हो, मासिक धर्म से ज्ञान कर चुकी हो, प्रथम २ यौवन का समझ ठठा हो, वर्षों और बसन्त काल में तथा जिसकी अत्यानन्दा योगिनी हो, ऐसी स्त्री रति के अर्थ बहुत सहज में प्राप्त हो सकती है ।

पतिध्रुकू स्त्री के लक्षण !

नाभिपश्यतिभर्तारं नोत्तरंसम्प्रतीच्छति । वियोगे-
सुखमाप्नोतिसंयोगेचातिसीदति ॥ शय्यामुपगताशेतेवदनं-
मार्ष्टिचुम्बने । तन्मित्रंद्वेष्टिमानञ्जुविरक्तानाभिवाञ्छति ॥

जो स्त्रियां अपने पति को नहीं चाहती उनके लक्षण इस प्रकार लिखते हैं । पतिके सम्मुख न देखना, इसके सोलना कौन कहे पति कुछ कहे अपना कुछ पूछे तो उसकी बात का उत्तर भी न देवे, जब तक पति घर में रहे भुग्न करती रहे और मुख लटकाये रहे और जब पति घर से

है । हमने उसे पूछा कि तुम कौन हो क्यों भटायो फिरतो हो उसने कहा कि हम संग से छूटगयी हैं अब घर कैसे जाय, हमने पूछा कि तुम्हारा घर कहाँ है, उसने कहा समुक्त जगह पर है, हमने कहा कि तुम्हारा घर हम जानते हैं और तुम्हारे बाप से हमसे बहुत मुलाकात है यकी हम तुम्हें तुम्हारे घर पहुँचा दें वह गिड़ गिड़ा के बोको किबड़ो दगायत होगी-तब हमने उसे दो बार गलियों में घुमा के अपने घर पर लाये कहा ठहरो जरा पागो पोले तो धले तुम्हो यकगई दे। यह थोड़ोसो मिठाई खाके पागो पोको पड़जे तो दगकार किया और कहा कि जल्दी चलो हमको घर पहुँचा दो जब हमने इसरार किया और घर से चुम्कार के कहा, और न राजी होगई और मिठाई खाया खुशी से बात बोल करने लगे-मार्गे बहुत दिनों को मुलाकात थी फिर तो कोई उजर उसे न रही उसके साथ हमने सहवास किया और उसे उसके घर पहुँचा लाये ॥

बाहर घला जाये तो बड़ी प्रसन्न रहे और उनके घर में जाने में दुखी हो । पहले तो कभी अपने पति के साथ एक संग पलङ्ग पर सोये नहीं यदि पलङ्ग पर जाय भी, कि तो सो रहे या करघट फिर जाये, अगर पति मुख चुम्बे तो फट गाल पीछ डाले । पति के मित्रों से शत्रुता रखना और पति के साथ उसे चाहे परन्तु वह नराजही रहे ।

स्त्रीणां वैराग्य हेतु ।

कार्पण्यादतिमानरोगविरहोद्गोपादिपारुष्यतो मालिन्यासममज्ञतादिभयतः शोकाद्विरद्रादपि । भर्तृणान्तानुतादिभिश्च पुपः काठिन्यतः शङ्कना दीपाणां च वृथा प्रयान्ति वनिता वैराग्यमुच्चैः सदा ॥

निम्नलिखित कारणों से प्रायः स्त्रियां उदाशील बनी रहती हैं—जैसे अत्यन्त कृपणता से (पति के अधिक सून होने से स्त्री उदास रहती है) अति मान (जादा प्यार करने से ऐसी घमस्मिन् हो जाती है कि हमेशा सानही मटका रहता है) पति के रोगी बने रहने मथवा व्यापार पुनर्पार्थ रहित होने से असम—अर्थात् असमानता से नास्त्य यह कि स्त्री पुरुष उत्तर में, पौवन में, कुल आदि में परस्पर बराबर न हैं । पति की मूर्खता से, (भयतः) साँस सँभुर ज्येष्ठ और पति के अधिक दूर से भी स्त्रियां उदाशील रहती हैं शोक से, दरिद्रता से, पति का देह अत्यन्त दुबला, हड्डीला, तथा अत्यन्त कठोर होने से, अत्यन्त शङ्का युक्त रहने से, और व्यभिचारादि निष्ठा दोष लगाने से इत्यादि कारणों से स्त्रियों के मन में पुरुष की ओर से विरक्तता उत्पन्न होती है ।

स्त्री के बिगड़ने का लक्षण ।

पितृसदननिवासः सङ्गतेः पुंश्चलीभिः प्रवसन्मपि पत्युर्वार्धकं सेष्यता च । वसतिरथ च पुंभिर्दुष्टशौलैस्त्ववश्यं क्षतिरपि निजवृत्तेर्योषितां नाशहेतुः ॥

स्त्रियां नीचे लिखे हुये कारणों से प्रायः बिगड़ जाती हैं—सबंदा पति के घर में रहना (पति के गृह में निहर और परदा रहित रहती हैं) दुष्ट स्त्रियों के साथ बैठना बैठना, उनसे मित्रता रखना, उनके साथ मेले ठेले में जाना, पति के परदेश रहने से, और उन पर किसी का दाव न रहने से, अथवा बुढ़े पति के होने से (भला बतलाइये जो लोग अपने बुढ़ाई अवस्था में बाला के साथ विवाह करते हैं मुमकिन है कि वह बाला पतिव्रता हो ? कभी नहीं । बुढ़ों को चाहिये कि जादा समरवाली विधवाओं के साथ विवाह करें) पति के अधिक ईर्ष्या करने से, तथा ऐसा पुरुषों में बैठ कर हँसी दिखानी करने से निज वृत्ति के लोप होने से स्त्रियां व्यभिचारिणी होती हैं । यह तो अक्सर देखने में आया है कि यदि अति रूपयती स्त्री किसी नीच कुल में अथवा किसी गरीब के घर में होने से व्यभिचारिणी हो जाती है ।

सम्भोग समय के भेष यह है ।

स्नातश्चन्दनलिप्ताङ्गः सुगन्धः सुमनोन्वितः । मुक्तवृष्या-
सुवसनः सुवेषः समलङ्कृतः ॥ ताम्बूलवदनः पत्न्या मनुरक्तो-
ऽधिकस्मरः । पुत्रार्थी पुरुषो नारी मुपेयाच्छयनैशुभे ॥

यह बात हमने दूसरे खण्ड में भली प्रकार दिखला दिया है कि पुत्रार्थी पुरुष ब्रह्मचर्य से रह कर अनु स्नाता स्वकीय स्त्री से सहवास करे । परन्तु उस समय कैसा वेष चाहिये वे लिखते हैं (स्नातः) सुगन्ध तैलादि शरीर में सदन करके स्नान किये हो, चन्दन, कपूर, कस्तूरी आदि सुगन्ध द्रव्यों का लेपन और अंतर लगाये हो, प्रसन्नचित्त, ध्यानीकर भीषणों से दीर्घ्य को बगवान और पुष्ट कर रक्खा हो, सुवासित वस्त्र, आभूषण तथा पुरुषों को चरण कर मसालेदार पान का दीहा चाख, अपनी आनन्द कादम्बिनी में अनुराग युक्त, कामोन्मत्त हो रहा हो, ऐसा पुरुष पुत्र की दृष्टा करके सत्समपलङ्ग पर अपनी स्त्री के पास जाये । जितनाही आनन्द

युत, कामधान ही प्रसङ्ग करेगा विसाही रूप यौवन, बल बुद्धि तेजः सम्पन्न सन्तान उत्पन्न करेगा ।

गर्भाधान विधिः ।

यद्यपि गर्भाधान की विधि दूसरे खण्ड के आरोग्यदर्पण में लिखबुके हैं तथापि वैद्यक मत से इस स्थल में पाठकगणों के उपकारार्थ और भी लिखते हैं । गर्भाधान किसे कहते हैं (गर्भस्याऽधानं वीर्यस्यापनं स्थिरीकरणं यस्मिन् येन वा कर्मणा तद्गर्भाधानम्) गर्भ का धारण याने गर्भाशय में वीर्य का स्थापन करना जिस कर्म से होता है उसे गर्भाधान कहते हैं जैसे बीज और क्षेत्र उत्तम होने और बिधिपूर्वक बीज के बोने और उसे उत्तम प्रकार शीघ्र से अन्नादि पदार्थ मोटे घने और बलवान पैदा होते हैं उसी प्रकार उत्तम बलवान ब्रह्मचारिणी स्त्री पुरुषों के संयोग से सन्तान भी उत्पन्न होती हैं और उसीके साथ यह भी है कि स्त्री पुरुष जिस प्रकार की चिन्ता करे उसी प्रकार सन्तान होना । बृहत्संहिता में लिखा भी है "चित्तेन भावयति दूरगताऽपि स्त्री गर्भं विभर्ति सद्रूपां पुरुषस्य तस्य" मैथुन के समय यद्यपि स्त्री दूर है परन्तु चित्त से जिस पुरुष की चिन्ता करेगी उसीके सद्रूप गर्भ धारण होगा, यही बात शरक से भी सिद्ध होती है "गर्भो पपत्ती तु मनः स्त्रिया यज्जन्तुं प्रजेत तत्सद्रूपं प्रसूते" इससे साधित होता है कि स्त्री पुरुष जैसे पुत्र और कन्या की कामना करें तद्गुण जन पदों का चिन्ता करने से विसाही सन्तान उत्पन्न कर सकते हैं इसीलिये रजोधर्म से ज्ञान करके स्त्री को प्रथम पतिही का दर्शन करना लिखा है ।

उत्तम सन्तान करने की विधि, सुश्रुत से ।

यदि स्त्री ऐसी इच्छा करे कि मेरे श्रेष्ठ पराक्रम बल बुद्धि युत उत्तम मिह के समान तेजस्वी सन्तान उत्पन्न हो तो रजोधर्म के चौथे दिन शुद्ध ज्ञान भर उस दिन से सात दिन पर्यन्त कुछ ज्यों को सहित घृत में मिलाव पदार्थ जिस भी के नीचे हो ऐसी श्वेत गी के दूध में मिलाव, चांदी

अथवा कामे के पात्रमें भर प्रातःकाल नित्य सेवन करे या पुराना साठी का चावल अथवा जौ के पदार्थों को पूर्वोक्त गौ के दही, शहद और घृत अथवा दूधही के साथ भोजन करे, नित्यप्रति सुवासित जल से स्नान करे, केशर, कपूर और सफेद चन्दन गुणाद्य के अर्क में चोट अङ्गुली लेपन करे, सूय मुलायम सेवन वस्तु धारण करे, सुन्दर आसन पर बैठे, सुखद शोण पर शयन करे, सुन्दर सवारी रथ जोड़ीपर चढ़के अथवा उत्तम तुरंग पर चढ़के सास सदैव आरोग्यकर वायु का सेवन करे, काम, क्रोध, लोभ, मोह मात्सर्य रहित रहे, उत्तम सजे हुये कमरे में रहे, हर समय चित्तको प्रमत्त रखे, सुन्दर, स्वरूपवान, चतुर और भीठी बचन बोलने वाली ऐसी सहेली अथवा टहलुइत पास रहे (शब्द) गान या मनोहर बोलने वाली चिड़ियों की आवाज (स्पर्श) सकिया आदि मुलायम पदार्थ बार-बार छूना (रूप) लक्ष्मीर आदि देखना (रस) ताम्बूल अथवा कोई रस की चाटना (गन्ध) अंतर सुंघना इत्यादि सेवन करे, शान्तिशील एवं अनेक चिन्तनों से रहित हो सात दिन तक पति से भिन्न रहे, आठवें दिन शिर से स्नान कर योद्धा शङ्कर कर वेदानुसार संस्कार कर पति के साथ प्रसंग करे निस्सन्देह उत्तम, बली चिद्वाङ्म गर्भ धारण करेनी । पुत्रप को भी चाहिये ॥

ततोपरान्हेपुमान्मासं ब्रह्मचारीसर्पिःस्निग्धः सर्पिः-
क्षीराभ्यांशाल्योदनंभुक्त्वा ॥

एक महीने पर्यन्त ब्रह्मचर्यव्रत धारण करनेवाला पुरुष सायंकाल को शरीर में घृत मर्दन करके सुगन्धित जल से स्नान कर घृत और दूधसे घनाया साठी चावल अथवा पुराने चावलों का खीर भोजन करके स्त्री के पास जाये परन्तु स्त्री खीर न खाके तैल और सरद का भोजन करे ॥

नारीतैलेनमापैश्चसमुपाचरेत् ॥

स्त्री, कालेतिल का तैल और सरद के पदार्थों को तथा (पित्तलैः) रुधिर के बढ़ानेवाले पदार्थों को भोजन करके पति के समीप जावे ।

इस स्थल में यह बात विचार करना बहुत जरूरी है कि स्त्री पुरुष जिस अवस्था में सन्तानोत्पत्ति करें सो हम आ० द० के दूमरे खण्ड में लिख चुके हैं इस स्थल में बाग्भट्ट के मत से फिर भी दिखलाते हैं ॥

पूर्णपोदशवर्षास्त्रीपूर्णविशेनसङ्गता । शुद्धे गर्भाशये मार्ग-
रक्तेशुक्रेऽनिलेऽहवि ॥ वीर्यवन्तं सुतं सूते ततो न्यूनान् वयोः
पुनः । रोग्यल्पायुरधन्योवा गर्भो भवति नैव वा ॥

सोलह वर्ष की स्त्री, बीस वर्ष की अवस्था वाले पुरुष के साथ सह-
वास करने से, शुद्ध गर्भाग्नय और गर्भाशय का मार्ग तथा रुधिर वीर्य
पवन और रुद्धय के शुद्ध होने से स्त्री बलवान पुत्र को उत्पन्न करती है
परन्तु सुश्रुत में १६ वर्ष की स्त्री और २५ वर्ष के पुरुष इसके नीचे अ-
वस्था में गर्भाधान निषेध किया है ॥

अब हमको इस स्थल में पाठकगणों को चेत्त कराना बहुत उचित
है कि जब तक शरीर में कुछ भी रोग रहे मैथुन कदापि न करे और
पुत्रोत्पादनार्थ मैथुन करने की इच्छा तो स्वप्न में भी न लावे क्योंकि जैसे
अग्नि के छोटी सी चिन्गारी पर क्रूसकास डालने से अग्नि प्रज्वलित होती
है वैसे ही योद्वासा भी शरीर में रोग रहने से यदि मैथुन करे तो वह रोग
पर्यन्त के समान बड़ा और बलवान हो जाता है और रोगग्रस्त अवस्था में
पुत्रोत्पादनार्थ प्रसङ्ग करना तो सन्तान को माने आजन्म के लिये रोग
रूपी जेहल में डालना है इसलिये जब तक शरीरको आरोग्य और वीर्य
का खूब पुष्ट न देखे कदापि मैथुन न करे बाग्भट्ट में लिखा भी है ॥

शुद्धशुक्रार्तवस्वस्थं संरक्तमिधुनं मिथः स्नेहैः पुंसव नैः
स्निग्धं शुद्धं शीलितं वस्ति कं ॥

जिस पुरुष का वीर्य और स्त्री का आर्तव (रज) शुद्ध है और शरीर
में कुछ भी रोग नहीं है उस अवस्था में दोनों परस्पर अनुराग युक्त
(स्नेहैः) कलघृत कल्याणघृत आदि से होंसे देहकी छिगंधर, घसन वि-

रेचना द्वारा धातु को भी गाढ़ा एवं स्निग्ध कर सब पुत्रोंमें सेयुन करे ।

ऋतुदान का काल ।

ऋतुकालाभिगामीस्यात्स्वदारनिरतस्सदा । पर्ववर्ज-
व्रजेच्चैनां तद्ब्रतोरतिकाम्यया ॥ ऋतुःस्त्राभाविकःस्त्रीणां-
रात्रयः षोडशस्मृताः । चतुर्भिरितरैः सार्द्धमहोभिः सद्भि-
गर्हितैः ॥ तासामाद्यांश्चतसस्तुनिन्दितैकादशीचया ।
त्रयोदशीचशेषास्तुप्रशस्तादशरात्रयः ॥

मनुजी महाराज ने भी ऋतुदान के समय का विचार अपने ग्रन्थमें इसप्रकार लिखा है कि मनुष्य को चाहिये हमेशा ऋतुकाल में अपनी स्त्री के साथ समागम करे सेवाय अपनी स्त्री के पर स्त्री गमन करने की इच्छा मन में भी न लावे और पुत्रोत्पादन करनेवाला पुरुष पर्व तिथियों को जैसे अमावस्या चतुर्दशी अष्टमी आदि को छोड़के स्त्री के साथ रति कियाकरे स्त्रियों का स्वाभाविक ऋतुकाल १६ रात्रि का है अर्थात् रजोद-
शनके दिन से लेकर सोलह दिन तक ऋतुकाल कहा जाता है । उनमें से ४ रात्रि अर्थात् जिस दिन रजोघर्मे हो उस दिन से लेकर ४ दिन तक प्र-
सङ्गकरना महा निन्दित है और जैसे चार रात्रि निन्दित है वैसाही ग्या-
रहवीं और तेरहवीं रात्रि भी निन्दित है शेषरहे दश रात्रि वेही रात्रियां
ऋतुदान के लिये श्रेष्ठ हैं ।

युग्मासुपुत्राजायन्ते स्त्रियोऽयुग्मासुरात्रिषु । तस्मा-
द्युग्मासुपुत्रार्थी संविशेदार्त्तवेस्त्रियम् ॥ पुमान्पुंसोधिके-
शुक्रेस्त्रीभवत्यधिकेस्त्रियाः । समेपुमान् पुंस्त्रियौवा
क्षीणोऽल्पेचत्रिपर्जयः ॥

पुत्रोत्पत्ति की इच्छा करनेवाले पुरुष युग्म रात्रि अर्थात् रजोधन से छठवीं आठवीं दशवीं और बारहवीं रात्रि इनरात्रियोंमें गर्भाधानकरै परन्तु उत्तरोत्तर रात्रि और भी श्रेष्ठ हैं अर्थात् जैसा छठवीं रात्रि में गर्भाधान करने से बलिष्ठ पुत्र उत्पन्न होगा उससे अधिक बलिष्ठ आठवीं रात्रिमें ऋतुदान करने से होगा उससे भी बलिष्ठ दशवीं रात्रि में होगा इसीप्रकार उत्तरोत्तर श्रेष्ठ जानना । जिनको कन्या उत्पन्न करने की इच्छा हो रजोधन के पाँचवीं, सातवीं, नववीं और ग्यारहवीं रात्रिमें गर्भाधान करै और इसमें भी उत्तरोत्तर रात्रियों को श्रेष्ठ जानना चाहिये । पुरुष के अधिक वीर्य होने से पुत्र और स्त्री के अधिक रज होने से कन्या उत्पन्न होती है । यदि पुरुष के वीर्य और स्त्री के रज दोनों बराबर हों तो लड़का पैदा होगा तो नपुंसक और कन्या घनप्या होगी । क्षीणवीर्य अथवा अल्प वीर्यसे गर्भका न रहना अथवा रहकर भी गर्भ का गिरजाना होता है । सुश्रुत जी भी कहते हैं ॥

**एपूत्तरोत्तरं विद्या दायुरारोग्यमेव च । प्रजासौभाग्य-
मैश्वर्यं बलं चाभिगमात्फलं ॥**

इस बात को हम दूसरे खण्ड में लिख चुके हैं कि रजोदर्श निवृत्ति होने में पुरुष स्त्री के साथ गमन कर सकता है सो तीन दिन स्त्री वर्जित है । चौथे दिन से प्रसङ्ग का दिन गिना जाता है चतुर्थ रात्रि में गमन करने से आयुष्मान् और आरोग्य लड़का पैदा होता है, छठवीं रात्रिमें गमन करने से निस्सन्देह पुत्र उत्पन्न होता है, आठवीं रात्रिमें सौभाग्य यान्, दशवीं रात्रि में ऐश्वर्ययान्, और बारहवीं रात्रि में गमन करने से बलवान् पुत्र उत्पन्न होता है इसी प्रकार कन्या की इच्छा करनेवाला विषम रात्रियों में गमन करै और उत्तर २ वही फल होगा । इसी विषय में योगाह जी भी कहते हैं ॥

**ऋतुस्तुद्वादशनिशः पूर्वास्त्रिंशश्च निन्दिताः । एका-
दशीच युग्मासु स्यात्पुत्रोऽन्यासुकन्यका ॥**

अर्थात् रजोदर्शन से लेकर धारह रात्रि पर्यन्त स्त्री अंतुवती रहती हैं । अब इससे तीन ही दिन अंतुवती रहती हैं यह खगहन हो गया । इसका मतलब यह है कि तीन दिन रक्त आध अधिक रहता है उसमें गमन करना नियेध लिखा है क्योंकि उस तीन रात्रियों में गमन करने से गर्भाधान के रहने के अलावा स्त्री के भगके रुधिरकी गर्मी पुरुष के लिङ्ग द्वारा भीतर जा के रक्त के परमाणुओं को अत्यन्त उष्ण कर गमनागमन में बाधा डालती है और वीर्य को द्रवीभूत करती है वही गर्मी शिर में प्रवेश कर मनुष्य को बुद्धिहीन बलहीन कर देती है । रजो धर्मेवाली से अत्यन्त प्रसङ्ग करने से सूत्रकण्डू, सूत्राघात, भगन्दर और उपदन्त आदि असंख्य रोग उत्पन्न होते हैं इसलिये रजो धर्मेवाली स्त्री के साथ कदापि गमन न करे ॥

यह बात जो वैद्यक शास्त्र में लिखी है कि विषम रात्रियों में गमन करने से कन्या और सप्त रात्रियों में गमन करने से पुत्र उत्पन्न होता है और उसका कारण यह दिखलाया है कि सप्त रात्रियों में स्त्री के रज कम रहता है और विषम रात्रियों में पुरुष के वीर्य कम रहता है परन्तु यह नहीं लिखा कि क्यों कम रहते हैं ? मालूम होता है कि यह सब बात वैद्यकों ने अनङ्ग रङ्ग आदि कामशास्त्र द्वारा परीक्षा करके सिद्ध किया है ॥

सन्तानार्थ मैथुनविधिः ।

पुत्रोत्पादक के अर्थ मैथुन करने की विधि वेद तथा आयुर्वेद में बहुत कुछ लिखी है समिस्तार लिखने में इसका बड़ा भारी एक ग्रन्थ हो जायगा और आजकल ऐसे विद्याहीन बल बिहीन लोग हो गये हैं चाहे वाजन्म पुत्र हीन रहें परन्तु विधिपूर्वक मैथुन कभी न करेंगे । तथापि हम पाठक गणों के उपकारार्थ कुछ मैथुन की विधि लिखते हैं । स्त्री पुरुष को चाहिये कि पूर्वोक्त रीत्यनुसार आहारादि कर्मों से नियत हो सुन्दर आभूषण और सुगन्ध यावित वस्त्र धारण कर दश ग्यारह घंटे

उस अवस्था में मनुष्य को उचित है कि पुनः पूर्वोक्त लेखानुसार स्त्री गमन करे और गर्भ रहने पर गमन कदापि न करे ॥

गर्भवती होने का लक्षण ।

तृप्तिर्गुह्यत्स्फुरणं शुक्रास्त्रावानुबन्धनम् । हृदयस्पन्दनं तन्द्रा तृड्ग्लानिर्लोमहर्षणम् ॥

गर्भ रहजाने का लक्षण यागभट्टमें इस प्रकार लिखा है । चित्तप्रसन्न, शरीर में कुछ भारीपन, कोख का फरकना, वीर्य जो गर्भाशयमें गया है उसका न बहना तथा रक्तस्त्राव भी न होना, कलेजा धक्का करना, नेत्रों पर आलस्य, पियास, खानेपर मनका न चलना और रोमोंका खड़ा होना इत्यादि लक्षण होने से जानना कि यह स्त्री गर्भवती होगई है ॥

गर्भपुष्टकारक उपाय ।

लब्धगर्भायाश्चैतेष्वहःसुलक्ष्मणावटशुक्ला सहदेवा-
विश्वेदेवामन्यतमाक्षीरेणाभिप्लुत्यत्रीं श्वतुरोवापिविंदून्द-
द्यात् दक्षिणेनाशापुटे पुत्रकामानतान्निष्ठीवेत् ॥

जिस दिन गर्भधारण किया हो विशेषकर उसीदिन अथवा तीनदिन के भीतर लक्ष्मणा घूटी या खरगद का गुलगा (कोपल) या पीले फूल की कगही या गुलसकरी अथवा सफेद फूल का खरियारा इनमें से कोई भी एक मिल जाय जिस गी के नीचे बखरा हो और दोनोंका एकही रंग हो उसके दूध में पीस पुत्र की इच्छा रखनेवाली गर्भवती अपने दहने नाशा में तीन या चार बून्द सिञ्चन करे अर्थात् नाश लेवे यदि वह गलेमें उतर आवे तो उसे थूके नहीं (दक्षिणे नाशा पुटे) इस लेख से सिद्ध होता है कि कन्या उत्पन्न करने की इच्छुक गर्भवती याग नाशापुटमें सिञ्चन करे यागभट्ट में लिखा है (पुत्रार्थे दक्षिणेशिंघे द्वानेदुहित्वांस्तया) उपरोक्त लिखेहुये औषधोंमें गर्भधारण के लिये लक्ष्मणा घूटी एक प्रधान औषध

है प्रायः गयाजी की ओर पर्वतों पर तथा उत्तरीय-पर्वतों पर भी मिलती है । लक्ष्मणा का वृत्त यन तुलसी के समान बड़ा और आकृतिमें भी वै-
साही होता है सिर्फ भेद इतना है कि लक्ष्मणा के पत्ते पर घुघु के रुधिर
के समान लाल र छीटे जायजा होते हैं, पुत्रोत्पन्न करने की शक्ति ईश्वर
ने इसी को दी है ॥

लक्ष्मणा को उखाड़ने की शास्त्रोंमें इसप्रकार विधि लिखते हैं कि शरद
श्रुतु में जब लक्ष्मणा फल पुष्पसहित होतों शनिवार के दिन सन्ध्या समय
पथित होके उसके चारों ओर खैर की लकड़ी की चार कीले गाड़ धूप
दीपादि से पूजन कर निमंत्रण करावे जिस समय हस्त मूल या पुष्य
नक्षत्र के सूर्य्य हों उसदिन जाके जड़ी सूटी उखाड़नेका प्रसिद्ध जो मन्त्र है
उस मन्त्र से उखाड़ लावे और पीछे फिर कर न देखे और ऊपर लिखे अ-
नुसार उसके जड़ को दूध में पीस-गर्भवती के नाक में सिञ्चन करे, गर्भा-
धान के न रहने के बहुत से हेतु हैं उन्हें और उसके रहने के
उपाय आ० द० के चतुर्थखण्ड में लिखेंगे । इस समय गर्भके कुछ विकारों
को दिखलाते हैं । जो गर्भाधान विधिपूर्वक किया जाता है उसका फल
यह है ॥

**एवंजातारूपवन्तः सत्त्ववन्तश्चिरायुपः । भवन्त्यृण-
स्याभोक्तारः सत्पुत्राः पुत्रिणोहिताः ॥**

विधिपूर्वक श्रुतुदान करने से कन्या अथवा पुत्र उत्पन्न होता है वे
रूपवान्, सत्वगुणविशिष्ट पूर्णआयु पर्यन्त जीनेवाले, अपने बाहुबल से
पैदा करके खानेवाले, और भाता पिता को सुखदेनेवाले होते हैं और
जो श्रुतुदान अविधि किया जाता है वही गर्भ दोषसहित होता है अ-
र्थात् गर्भ का न रहना, या रह कर गिरजाना, गर्भही में घालकोंका मर
जाना अथवा लँगड़े लूले बेढङ्ग कुरूप नपुंसक सन्तानों का उत्पन्न होना
इत्यादि इसलिये सुन्दर सन्तान उत्पन्न करनेकी इच्छा रखनेवाला अविधि
गर्भाधान कदापि न करे ॥

जोड़ा लड़का होने का कारण

बीजेन्तरवायुनाभिन्ने द्वेबीजेकुक्षिमाश्रिते । यमा-
वित्यभिधीयेते धर्मेतरपुरःसरौ ॥

रज बीर्य्य दोनों मिलकर जिस समय गर्भाशयमें जाता है यदि यह भीतर के वायु से दो भाग हो के रहजाय तो दो लड़का एक साथ उत्पन्न होगा और वह भाग रज बीर्य्य की ताकत या निकदार कम होनेसे हुआ होता लड़के जन्मतही भरजावेंगे । यदि एक भाग पुष्ट और दूसरा भाग अल्प होता उसमें से एक लड़का जीवेगा और एक मर जावेगा । अगर दोनों भाग पुष्ट हों तो दोनों जीवेंगे ऐसा बहुतेरों जगह देखने में आया है यदि उसी रज बीर्य्य की भीतर की वायु बिलकुल विभाग न कर सकी हो कुछ विभाग हुआ हो और कुछ एकही साथ मिला हो तो दो लड़के होंगे परन्तु जुटे होंगे ऐसे लड़के भी कभी २ देखने सुनने में आते हैं । इसीप्रकार तीन चार बालक भी होते हैं, एकहीसाथ पुत्र कन्याओं का उत्पन्न होना रज बीर्य्य के नूत्याधिक पर निर्भर है ॥

कुत्ते बिल्ली आदि पशुओं के जो अनेक बच्चे पैदा होते हैं उसका कारण वही है गर्भाशय में वायु कर के रज बीर्य्य का विभाग होना । एकही समय कई सन्तान होने के विषय में अनुमान से हमको यह ज्ञान पड़ता है कि इस कार्य सम्पादन करने में वायु स्वतंत्र नहीं है । क्योंकि यद्यपि खाली चूहे में वायु है परन्तु उसमें घी सहित पारा आदि वस्तु एकवारगी भर देने से वायु निकल जाता है यदि उसीमें गेहूँ चना आदि भर देतो अवश्य खाली भागों में वायु बँता रहेगा इसी प्रकार गर्भाशय में बीर्य्य रज पूरा मात्रा एकही बार आने से वायु निकल जाता है और बीर्य्य रज यदि गर्भाशय में कईवार कर के आने से बीच में वायु रह जाता है इसी से कई लड़के होते हैं और इसका मुख्य कारण बीर्य्य का बिकार है ।

नपुंसक सन्तान उत्पन्न होने का कारण ।

सुश्रुत जी पाँच प्रकार के षष्ठ (नपुंसक) माता पिता के रज धीर्य दोष से उत्पन्न होने को दिखलाते हैं—जैसे ।

पित्रोरत्यल्पश्रीर्यत्वादासेक्यः पुरुषो भवेत् । सशुक्रः प्राशयलभते ध्वजो द्वायमसंशयम् ॥

गर्भोधान के समय माता पिता के अधिक कम धीर्य होने के संयम से जो गर्भोधान रहता है, उससे जो सन्तान उत्पन्न होता है वह आ-सेक्य नामक नपुंसक कहाँता है उसका लक्षण यह है कि युवावस्था में, दूसरे मनुष्य के प्रसंग करने से जो धीर्य पात हो उस धीर्य को वह आ-सेक्य नामक नपुंसक भक्षण करे तब उसका लिंग उठे ।

सौगन्धिक नपुंसक ।

यः पूतियो नौ जायेत स सौगन्धिक संज्ञितः । स यो निशेक सौगन्धमात्राय लभते बलम् ॥

जिस स्त्री के योनि से सदा जाता हो उसके साथ संभोग करने से जो लड़का पैदा हो वह सौगन्धिक नामक नपुंसक कहाँता है । जब तक यह किसी अन्य पुरुष के लिंग को अथवा स्त्री के भग को न सूचेगा तब तक उसका लिंग चेतन्य नहीं होगा ।

कुम्भिक नपुंसक ।

स्वेगुदेन्द्रह्नचर्याद्यः स्त्रीपुपुम्वत्प्रवर्तन्ते । कुम्भिकः स तु विज्ञेयः ईर्ष्यकं शृणु चापरम् ॥

जो मनुष्य पहले किसी पुरुष से अपनी गुदाभंजन कराये उससे उसका लिंग चेतन्य हो तब वह स्त्री के साथ प्रसंग करने लायक हो उसके कुम्भिक नपुंसक कहते हैं और कोई दूसरा इसका अर्थ इस प्रकार करते हैं कि पहले जो पुरुष अपने शिपिल्लिंग से स्त्री की गुदाभंजन करे

(अधिक प्रसन्नचर्य रहने से जो नपुंसकता होती है उसके दूर करने के यही उपाय है) जब लिंग उदयान हो तब स्त्री के साथ प्रसंग करे आगे ईर्ष्यक नपुंसक का लक्षण सुनियेगा । कुम्भिक नपुंसकके उदपत्तिका कारण पञ्चांशों में इसप्रकार लिखे हैं । गर्भाधान के समय माता के विलोम मैथुन और पिता के असंपर्कीय के प्रभाव से कुम्भिक नामक नपुंसक लकड़ा पैदा होता है एक आचार्य कहते हैं कि गर्भाधानके समय कम रजवाली औरत के साथ अत्यन्त शिथिल बौर्यवाला पुरुष गमन करे और उस पुरुष से उस स्त्री की वृत्ति गर्भात् काम की शान्ति न हो पुनर्बार अथवा दूसरे पुरुष के साथ मैथुन कराने की इच्छा बनी रहे और वह मैथुन न होने पावे बीचही में गर्भाधान रहजाय उससे जो सन्तान होगी वह कुम्भिक नपुंसक होगा ।

ईर्ष्यक नपुंसक के लक्षण ।

दृष्ट्वाव्यवायमन्येपाढ्यवायेयः प्रवर्तते । ईर्ष्यकः सतु-
विज्ञोयोदृग्योनिरयमीर्ष्यकः ॥

ईर्ष्यक नपुंसक उसे कहते हैं जो दूसरे मनुष्य को मैथुन करता देख कर आप मैथुन करने को सद्यत हो और जयतक अन्य पुरुष को मैथुन करता न देखे लिंग कभी प्रसंग करने लायक न हो । ईर्ष्यक यण्ड इस प्रकार जन्मता है कि गर्भाधान के समय स्त्री पुरुष किसी ऐसे कार्य में परायण हो जो सहने लायक न हो शोकातुर हर्ष रहित मैथुन करने से जो पुत्र हो वह ईर्ष्यक संज्ञक नपुंसक होगा ।

स्त्री चेष्टाकार पांशवां नपुंसक का लक्षण और स्त्री यण्ड के लक्षण अर्थात् जिस कारण से स्त्री नपुंसक होती हैं दोनों का दृष्टान्त आरोग्य-दर्पण के दूसरे खण्ड में लिख चुके हैं इस स्थल में हम यह दिखलाते हैं कि उपरोक्त नपुंसकों के बीर्य है या नहीं ।

आसेक्यश्चसुगन्धोचकुम्भीकश्चेर्ष्यकस्तथा । सरेत-
सस्त्वमीज्ञेयांशुक्रः पंडसंज्ञितः ॥ अनयात्रिप्रकृत्यातु-
तेपांशुक्रवहाः शिराः । हर्पात्स्फुटत्वमायान्तिश्चजोद्धा-
यस्ततोभवेत् ॥

आसेक, सुगन्धी, कुंभीक, और ईर्ष्यक इन चारों पंथों में तो वीर्य है परन्तु पांचवांपंथ जो स्त्री कीसी चेष्टावाला नपुंसक है जिसका लक्षण आ०८० के २ खण्ड में लिख चुके हैं उनमें वीर्य नहीं है यदि कोई संका करे कि जब वीर्यवान है तो नपुंसक कैसे हुआ ? उसका मतलब दूसरे श्लोक से स्पष्ट हो जाता है । 'यद्यपि उक्त पंथों में भी वीर्य' नहीं है तथापि ऊपर लिखे हुये चेष्टा करने से जैसे वीर्य भक्षण, योनि सूंघना, गुदाभंजन और अन्य पुरुष का मैथुन देखने से शुक्रनाही शिराहर्ष युक्त होकर फूलती है इसे भी लिंग चैतन्य होता है । यही नपुंसकता दोष स्त्रियों में भी होता है ॥

निकृष्ट गर्भोत्पन्न ।

यदानार्यावुपेयातांवृषस्यन्त्यौकथञ्चन । मुञ्चतःशु-
क्रमन्योन्यमनस्थिस्तत्रजायते ॥

जिस समय दो स्त्री अति कामातुर हो पुरुषके साथ मैथुन न करा के दोनों आपस में मिला कर भग से भग मिलाय कर दोनों अपने २ रज को त्याग करें उस अवस्था में यदि गर्भ रहजाय तो उस गर्भसे बिना हड्डी का लड़का पैदा होगा, उस लड़के का लक्षण यह होगा कि वह अपने हाथ पैर सकेल घटोरे न सके अन्य कोई उसके हाथ पैर को चाहे जिम और झुका दे केश नहीं होगा ऐसे बालक अवश्य कभी २ देखनेमें आये होंगे परन्तु जीते नहीं ॥

स्वप्न मैथुन से गर्भोत्पन्न ।

ऋतुस्नातातुयानारीस्वप्नेमैथुनमावहेत् । आर्त्तवं-
वायुरादायकुक्षौगर्भकरोतिहि ॥ मासिमासिविबुद्धे त ग-
भिण्यागर्भलक्षणम् । कललंजायतेतस्यावर्जितंपैतृकैर्गुणैः ॥

यह सब श्लोक मुञ्चत के शरीर स्थानके हैं । इसका अभिप्राय यह है (ऋतुस्नाता) जो स्त्री रजो धर्म से शुद्ध हुई हो और पुरुष से समा-
गम न हुआ हो यदि वह स्त्री रजोधर्म के चार दिनके बाद और बारह

दिन के भीतर स्वप्न में मैथुन करे और रज, स्थलित हो, जाय तो उस समय उसी रज को वायु लेकर गर्भाशयमें स्थापन कर देता है । यह गर्भ भी गर्भिणी के समान नहींना २ बढ़ता है और उससे कलल भी उत्पन्न होता है परन्तु पिता के लक्षण रहित अर्थात् जो लड़का पैदा होगा वह एक मांस का पिण्ड समान होगा क्योंकि कलल उसी को कहते हैं । इसके अलावा और भी पाप कर्मों से अनेक प्रकारके विकृत स्वरूपवाले स्त्रियों के सन्तान उत्पन्न होते हैं । जैसा कि सुश्रुत में लिखा है ॥

सर्पवृश्चिककूष्माण्डविकृताकृतयस्तुये । गर्भस्त्वेवं-
विधास्त्वेते ज्ञेयापापकृतोभृशम् ॥

सांप, बिच्छू, कुम्हड़े के समान मांस का छोटा-सा ऐसे भयानक स्वरूपवाले, तथा अत्यन्त खराब खराब जंग वाले गर्भ, प्रसूता के पाप करने से होते हैं ॥

गूंगा आदि गर्भों के कारण ।

गर्भावातप्रकोपेण दीर्घदेचावमानिते । भवेत्कुब्जः-
कुणिः पंगुर्मूको मिशिमण एव च ॥

गर्भाशय में वात के प्रकोप से और माता के दीर्घ अपचार से अर्थात् गर्भाधान के बाद गर्भावस्था में घुरे आघरणों से गर्भ में बालक कुब्जा, टेढ़ा, लंगड़ा, गूंगा और मिन्मिन धोलनेवाला होता है । इस स्थल में यह संदेह हो सकता है कि यदि माता पिताही के अपचार आदि दोषों के कारण गर्भ ग्रसित होता है तो पूर्व संस्कार मानना सर्वथा असंगत है-? सो ठीक नहीं है । सुश्रुत ही में लिख दिया है (माधितापूर्वं देहेषु इत्यादि तथा अशुभैश्वपुराकृतैः) तात्पर्य यह है कि पूर्व जन्म के विपिदुर्कर्मों से गर्भाशय में वायु दुष्ट होती है ॥

गर्भ में बालक के मल मूत्र न करने का सूत्र ।

यद्यपि यह संदेह तो सभी को उत्पन्न हो सकता है कि जब गर्भाशय में बालक की सम्पूर्ण इन्द्रियां बन गई और जीव संयुक्त हुआ तो वह

बालक गर्भाशय में दिशा पेशाव क्यों नहीं करता ? गर्भमें बालक को मल मूत्र न करने का कारण यह है ॥

मलाल्पत्वादयोगाच्च वायोःपक्षाशयस्यच । वात-
मूत्रपुरीषाणिनगर्भस्थःकरोतिहि ॥

गर्भ के भीतर बालक के शरीर में मल बहुत ही अल्प होनेसे और पक्षाशय में वायु के भी अत्यन्त कर्म हीन होने से बालक गर्भ में मल मूत्र और वात का परित्याग नहीं करता, इसी प्रकार गर्भस्थ बालक के न रौने का भी कारण समझना ॥

गर्भमें बालक के न रौने का सबब ।

जरायुणामुखेच्छन्नेकशठेचकफवेष्टिते । वायोर्मा-
गनिरोधाच्चनगर्भस्थःप्ररोदिति । निश्वासेच्छ्वाससंक्षोभ-
स्वप्नान्गर्भाधिगच्छति । मातुर्निश्वासितोच्छ्वाससंक्षोभस्व-
प्नसम्भवान् ॥

गर्भाशय के मुख आन्त्रादित होने से और कंठ कफ करके वेष्टित होने से एवं वायुका मार्ग रुके रहने से, गर्भके भीतर बालक नहीं रौता और गर्भ के भीतर बालक का श्वास लेना, होलना, तथा निद्रा आदि क्रिया माता के श्वासादि लेने से होती है, याने माता जो जो श्वासादिक चेष्टा करती है वही गर्भस्थ बालक भी करता है ॥

पूर्व कर्मानुसार बुद्धि का होना ।

भावित्तापूर्वदेहेषुसततंशास्त्रबुद्ध्यः । भवन्तिसत्त्वभू-
यिष्ठापूर्वजातिस्मरानराः ॥

पूर्व जन्म में जिस मनुष्य का जिस विषय में अत्यन्त अभ्यास रहता है वेही गुण वर्तमान शरीर में भी होते हैं । जैसे जिस मनुष्यकी आत्मा पूर्व देह में जिस विद्या करके विशेष तन्मय रही होगी यह मनुष्य वर्त-

मान देह में अवश्य उसी शास्त्र का जानने वाला होगा । इसी प्रकार चोरी, धूर्तता, सम्पटता आदि दुरे कर्मोंका अभ्यास भी वर्तमान देह में तद्दुर्गुण बिशिष्ट अवश्य होगा । पूर्वदेह में जिनके सत्वगुण प्रधान थे वे वर्तमान देह में भी वैसाही गुणवान होंगे, तथा व्यतीत जन्म जाति के स्मरण रखनेवाले भी होते हैं ॥

गर्भाधान स्थितिके पश्चात् जब तक स्त्री पुनः रजोयती देख न पड़े तब तक उसके साथ मैथुन न करे, ऐसा अनेक शास्त्रों में बचन मिलेंगे । दूसरी बात यह है कि प्रथम २ जयतक कन्या ऋतुमती न हो उसके साथ भी गमन न करे और ऋतु होने का समय जो सुश्रुत में लिखा है वही ठीक है ॥

तद्वर्षाद्वादशात्कालेवर्त्तमानमसृक्पुनः । जरापक्वशरीराणां याति पञ्चाशतः क्षयः ॥

भोजन से खिंचा हुआ जो रस उससे उत्पन्न होनेवाला रज (मासिक रुधिर) बारह वर्ष के उपरान्त प्रगट होकर जैसे २ शरीर में रसादि बढ़कर शरीर बढ़ता है तैसे २ रज भी बढ़कर महीने महीने योनिद्वारा प्रवृत्त होता है और जब पचास वर्ष के ऊपर की अवस्था प्रारम्भ होती है तब युद्धापा होने के कारण क्रमशः रज नष्ट होने लगता है और ६० वर्ष की अवस्था होते २ बिलकुल नष्ट हो जाता है । इस स्थल में यह बचन देने का हमारा मतलब यह है कि प्रथम २ मासिक रक्त स्त्रियोंको बहुत कम होता है, यहां तक कि कितनी धमेवती हो जाती हैं और रक्त नहीं देख पड़ता, कई महीनों के बाद कुछ २ मालूम होने लगता है । इस अवस्था में भी मैथुन करना नहीं चाहिये, क्योंकि गर्भ रहजाने से बालक का जन्म अति कष्ट से होता है इसलिये, जबतक सूख खुलासा मासिक होना प्रारम्भ न हो सन्तानार्थ मैथुन कदापि न करे । इसीलिये ऋषियों ने १६ वर्ष की अवस्था वाली स्त्री के साथ सन्तानार्थ मैथुन करने को लिखा ॥

अदृष्ट मासिक लक्षण ।

पीतप्रसन्नवदनांप्रक्रिन्नात्ममुखद्विजां । नरकामां-

प्रियकथांस्त्रस्तकुक्ष्यक्षिमूर्द्धजां॥ स्फुरद्भुजस्तनश्रोणिनाभ्यु-
रुजघनस्फिजं । हर्षैत्सुख्यपरांचापिविद्वद्भुतमर्तोस्त्रियम्

जो स्त्री ऋतुमती होजाय और रक्तस्राव न हो उसके लक्षण सुश्रुत में इसप्रकार लिखे हैं । जिस स्त्री का मुख पीत (यह पीतमुख कान्ति विशेष में जानना) प्रसन्नतायुक्त हो एवं आत्म (देह) मुख और दांत रक्षीलेहों (नरकास प्रिय कथा) मैथुन सम्बन्धी बातें अच्छी लगती हों कोख आंख और बाल विकसित याने कुछ फैले हों, बाहु छाती कमर नाभि पिंडरी जांघ और घूटह जिसके करके एवं प्रसन्न कराने की अत्यन्त इच्छा होती हो तो जानना यह स्त्री ऋतुमती हुई है परन्तु रक्त की असंपत्ता के कारण यह नहीं देख पड़ता ।

व्यतीत ऋतु में मैथुन निष्फल है ।

नियतं दिवसेतांते संकुचत्यभ्युजं यथा । ऋतौ व्य-
तीतेनार्यास्तु योनिः संत्रियते तथा ॥

जैसे फूला हुआ कमल अपने नियत समय में पहुंच कर संकुचित याने सिकुड़ जाता है वीसाही ऋतु के व्यतीत होने पर अर्थात् रजोधर्म होने के १६ दिन बाद स्त्री की योनि (गर्भस्थान) संकुचित होजाती है । उस अवस्था में मैथुन करना निष्फल है क्योंकि वीर्य गर्भाशय में नहीं जाता ।

गर्भवती होने के पश्चात् जो लक्षण होते हैं, पुत्र पुत्री और नपुंसक गर्भ रहने के प्रहसन, गर्भिणी स्त्री के उपचार अर्थात् गर्भयुक्त स्त्रियों को किस प्रकार रहना चाहिये । गर्भ के भीतर कौन महीनेमें बालक के कौन अङ्ग प्रत्यङ्ग यमते हैं इन सबों को आगे प्रकाश करेंगे । इस समय हम हम बात को दिखलाते हैं कि गर्भवती के दुःख होने से यही दुःख भीतर गर्भगत बाल को होता है लिखा भी है ।

दोषाभिघातैर्गर्भियायोयोभागः प्रपीड्यते । सस-
भागः शिशोस्त्वस्या गर्भस्थस्य प्रपीड्यते ॥

घात पितादि दायों करके कोई किस्म की विमारी गर्भिणी को हो और उसे शीघ्र शांत न किया जाय तो यही रोग बालक को हीगा याने बातादि दाय से तथा लकड़ी आदि के प्रहार से गर्भिणी का जो २ अङ्ग दुःखित होता है वही अङ्ग गर्भ में रहने वाले बालक का पीडित होता है । इसलिये गर्भिणी स्त्री को मारना या किसी प्रकार का शोक देना कदापि न चाहिये और जब गर्भिणी दीहदनी होजाती है उस समय स्त्री को अनेक प्रकार के सुख के द्वारा प्रसन्न रखना आयुर्वेद की सम्मति है । दीहदनी उस स्त्री को कहते हैं जिसके गर्भ में ४ महीने का बालक होता है ४ महीने में गर्भस्थित बालक के जीव प्रगट होता है इससे शब्द स्पर्श रूप रस गंध इन विषयों में बालक का मन चञ्चलता है और गर्भ के बालक का जो हृदय है वह मातृगर्भ है इसलिये चतुर्मास के ऊपर वाली गर्भिणी स्त्री दीहद वाली कहाती है इस से गर्भिणी का हृदय मन्तव्य होने से गर्भ में जो बालक होता है उसका भी हृदय सन्तप्त होता है । इसलिये गर्भवती स्त्री का मनोरथ पूर्ण न करना बहुत बुरा है । सुश्रुत जी कहते भी हैं ॥

दौहदयिमांनात्कुब्जकुण्ठिखञ्जजडं वामनं विकृताक्षमनक्षं वानारीसुतजनयति । तस्मात्सायददच्छेत्तत्तदस्यैदापयेत् । लब्धदौहदाहिरीर्यवन्तचिरायुपम्पुत्रजनयति ॥

अगर स्त्री की दीहदेष्टा (दीहद की इच्छा) परिपूर्ण न होवे तो वह स्त्री कुब्ज, लला, जंपंसक, वीना (५२ अङ्गुल का लम्बा मनुष्य) ऐशाताना नेत्रवाला और अनेक रूप रङ्ग रोगवाले आदि ऐसे बालक उत्पन्न करती है । इसलिये चाहिये कि गर्भवती स्त्री जिस २ बात की इच्छा करे (परन्तु वह इच्छा अत्याचारी न हो) उसे अवश्य पूर्ण कर देना चाहिये क्योंकि जिस गर्भवती स्त्री की इच्छा पूर्ण होती है यह स्त्री दीर्घायु और दीर्घ उमर वाला सन्तान को पैदा करती है ।

इन्द्रियायास्तुयान्यानसाभेक्तुमिच्छतिगर्भिणी । गर्भावाधभयात्तांस्तान्भिपगाहृत्यदापयेत् ॥ साप्राप्तदौ-

हृदापुत्रं जनयेत गुणान्वितं । अलव्धदौहृदा गर्भलभेतात्म-
निवाभयम् ये पुयेष्विन्द्रियार्थेषु दौहदेवै विमानता । प्रजा-
येत सुतस्यात्तिस्तस्मिन्स्तस्मिन्स्तथेन्द्रिये ॥

गर्भवती स्त्री के इन्द्रिय को जो जो प्रिय हो, जैसे गान सुनना, उत्तमर गहना वस्त्र पहनने की इच्छा, दिव्य सूर्यादिकों का देखना, स्वादिक द्रव्यों का भोजन, सुगंध द्रव्य का सूंघना, धन उपयम आदि स्थानोंमें हवा खाना आदि, जिस बात की इच्छा प्रगट हो उसके घरवालों को चाहिये कि अवश्य पूर्ण करें, यत्किं गर्भवती स्त्री से पूछते रहें कि आजकल उसकी तर्पयंत किस बात को अधिक चाहती है, उसे पूर्ण करें क्योंकि गर्भवतीके इच्छानुसार कुछ न मिलने से निस्सन्देह गर्भ की विकृति हो जाती है और इच्छा पूर्ण होने से गर्भवती उत्तम प्रकार के सन्तान को प्रसव करती है और अलव्ध दौहृदा गर्भवती के गर्भ को अथवा उसके खुदही शरीर को भय रहता है ॥

शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध यह पांच विषय हैं और उक्त पांचों विषयों के भोग करनेवाली पांच इन्द्रियां हैं कान, त्वचा, नेत्र, जीभ और नाक । अगर गर्भवती स्त्री की जो इन्द्रिय अपने विषय को चाहे और वह न मिले तो गर्भस्थित बालक की भी उसी इन्द्रिय को पीड़ा होगी । जैसे गर्भवतीको गान सुनने की इच्छा हो और वह न सुने तो गान (शब्द) के चाहनेवाला कान है, वह कर्ण न वृत्ति होने से गर्भगत बालक के कान को दुःख होगा इसी प्रकार सब इन्द्रियों के समझना ।

दौहृदके द्वारा सन्तान के लक्षण ।

मुश्रुत शरीरान् अर्ध्याय ॥ ३ ॥

राजसन्दर्शनेयस्यादौहृदो जायते स्त्रियाः । अर्धवन्त-
महाभागं कुमारं सा प्रसूयते ॥१॥ दुकूलपट्टकौशेयभूषणादि
पुदौहृदात् । अलङ्कारैः पिण्डं पुत्रं ललितं सा प्रसूयते ॥२॥ आश्र-

मेसंयतात्मानं धर्मशीलं प्रसूयते । देवताप्रतिमायान्तु प्र-
सूते पार्षदीपमं ॥३॥ दर्शने व्यालजातीनां हिंसाशीलं प्रसूयते ।
गोधामांसाऽशने पुत्रं सुपुष्टं धारणात्मकम् ॥४॥ गवां मांसे-
च वलिनं सर्वक्लेशसहन्तथा । माहिपेदौ हृदाच्छूरं रक्ताक्षं लो-
मसंयुतम् ॥ ५ ॥

जिस स्त्री की इच्छा राजा के देखनेकी हो वह स्त्री धनधान और
पुण्यवान् पुत्रको उत्पन्न करेगी ॥३॥ जो गर्भवती की इच्छा उत्तम २ सूतयस्त्र
अथवा रेशमी वस्त्र (पीताम्बर आदि) पहननेकी हो तो वह निस्सन्देह ऐसे
रूपवान् पुत्र को उत्पन्न करेगी जो उत्तम २ आभूषण और वस्त्रको धारण
करनेवाला हो ॥२॥ जिस स्त्री को महात्मा-अपियों के स्थान देखने की
इच्छा हो अथवा पवित्र देश स्थान में रहने की इच्छा हो वह भ्रमश स-
त्यवादी, दृढ़प्रतिष्ठ सन्तान को उत्पन्न करेगी ॥ ३ ॥ अगर गर्भवती स्त्री
को शेर चीता आदि हिंसक जानवरों को देखने का मन हो तो निस्स-
न्देह वह स्त्री दुष्ट प्रकृतिवाला हिंसक बालक पैदा करेगी । यदि गोह के
मांस (गोह बिछलपड़ा या साड़ाके आकार एकप्रकारका बड़ा जानवर है)
खाने की इच्छा प्रगट करे तो वह स्त्री अनिष्टी और बहुत खानेवाला
बालक उत्पन्न करेगी ॥४॥ गो मांस खाने की इच्छा करनेवाली स्त्री स्नेह
और कठिन दुःखों को भी सहनेवाला ऐसा पुत्र, तथा भैंस के मांस के
खाने की इच्छुक स्त्री किसी से न डरनेवाला महाशूरीर, जिस के
नेत्र भयङ्कर लाल २ और समस्त शरीर में बाल हों ऐसे पुत्र को उत्पन्न
करेगी । इसी प्रकार अनेक खाने पीने के वस्तुओं पर गर्भिणी स्त्री के मन
चलने से वैसाही रंग बिरंग के स्वरूप, प्रकृति, और चाल चलनका पुत्र
पैदा होता है, जिसका सविस्तार वर्णन करने में बड़ा भारी ग्रन्थ हो जा-
येगा, आपूर्वद विद्या के जाननेवाले इसनेही से अनुभव कर सकते हैं ॥

वारोहमांसात्स्वमालुशूरं सञ्जनयेत्सुतं । मार्गाद्विक्रा-
न्तजं घालं सदाग्रनचरं सुतं ॥

जो दो हृदयवाली स्त्री धनशुभ्र का मांस खाने की इच्छा प्रगट करे (इच्छा प्रगट करनेसे मतलब है धारंभार उसी वस्तु की वासना यही रही) तो स्त्री अधिक सोनेवाला बड़ा शूरवीर जोरणसे विमुख नहीं ऐसे रणधीर पुत्र को निस्सन्देह उत्पन्न करेगी । उक्त वाक्यों से जान पड़ता है कि मांस खानेका प्रचार पूर्व में भी अधिक था । और जो गर्भवती स्त्री चलने फिरने की इच्छा अधिक रखती हो वह बहुत चलनेवाला और हमेशा बगल में घूमनेवाला पुत्र को पैदा करेगी । इसी प्रकार बारहसोंग के मांस की इच्छुक, चक्षुष चित्तवाला और तीतर का मांस चाहनेवाली स्त्री हरपीक घालकको उत्पन्न करेगी । यद्यपि इस स्थलमें इसघातको नहीं लिखा कि मांस खानेकी इच्छा करनेवाली किस जातिकी स्त्रियाँ हैं लेकिन यह जाना जाता है कि शूद्र की स्त्रियाँ अथवा मांस खाती थीं बहुत सी स्त्रियाँ गर्भावस्था में नहीं खपरा जादि बीजे खाती हैं और उन्हीं बीजों पर उनका सदैव मन रहता है इसी से ये स्त्रियाँ कुकूप, दुर्बल, दरिद्र, पांडुरोगी, और जिस के पेट में केचुये हो जाय ऐसा संतान उत्पन्न करती हैं ॥

इसमें सन्देह नहीं कि माता अपने गर्भिस्थित बालक पर अपने मानसिक विचार द्वारा बहुत कुछ अच्छा बुरा प्रभाव उत्पन्न कर सकती है, यह तो स्पष्टही है कि गर्भिणियों के चित्त में अकस्मात् भय शोकादि घटने होने से ग्रीष्मही गर्भपात हो जाता है, या बालकको अत्यन्त क्रोध होता है और उस क्रोधका लक्षण उस बालक के उत्पन्न होने पर प्रत्यक्ष हो जाता है । आत्म विद्या के एक महेश्वरी विद्वान् घोषोहाह्म साहब अमेरिका ने दीर्घदिगी के विषय में कई बातें प्रत्यक्ष देख करके लिखा है कि एक स्त्री जब उसका ३ मास का गर्भ था अचानक एक जंगली रीछ के दाँवों को देखकर बहुत डर गई, उसका अन्तिम परिणाम यह हुआ कि उसके गर्भ से बावला लड़का पैदा हुआ और उग्रमान होने पर रीछ के समान खेलता था वह लड़का १४ वर्ष तक जिया ॥

योस्टन नगर में एक गर्भवती स्त्री अचानक एक तोते से डर गई

का ध्यान जिस २ पर पड़ेगा बालक को कोई न कोई अङ्ग उसीके समान होगा । जैसे मैथुन के समय स्त्री जिस पुरुष को ध्यान में लावे बालक रूप रंग में उसी के समान होगा, यहां तक कि कोई व्यभिचारिणी उपपत्ति के साथ व्यभिचार करते समय अपने पति का ध्यान करे तो बालक उसी के सदृश होगा मानो उसका औरम जात बालक नहीं है । यही कारण बालकों के मसे, लांछण, कालेदाग इत्यादि का भी है और उक्त महाशय एक कारण अधिक कामादि का भी कहते हैं ॥

लड़कों को विकृताकार तथा बद्ध सूरत होने का कारण माता का अनेक वस्तुओं पर ध्यान देने का है, गर्भिणियों को चाहिये कि बद्धसूरत मनुष्यों को ध्यान देकर न देखें और अदृश्य वस्तुओं पर इच्छा न प्रगट करें । कदाचित् देख भी पड़े तो उनको ख्याल में न लावें और सदा सुबद्धसूरत तस्वीरें देखा करें ॥

अस्वाभाविक जन्म का कारण ।

यह भी ईश्वरेच्छा से स्त्री पुरुष के सांसारिक और स्वाभाविक नियम उल्लंघन करने का पाप फल रूप है । यह फल स्वाभाविक रूप से उत्पन्न हुये बालक पर होता है क्योंकि विद्वज्जनों का मत है कि माता पिता के पुण्य या पाप का भागी, उनका सन्तान होता है । बालक का बद्धसूरत अङ्ग भंग का होना मैथुन की आधिक्यता और न्यूनता पर निर्भर है जैसे कि मैथुन की आधिक्यता से हाथ पैर में उंगलियों का अधिक होना और मैथुन की न्यूनता से एक हाथ या दोनों हाथों का न होना अथवा उंगलियों का कम होना इत्यादि ॥

स्त्री के प्रकृति विरुद्ध मैथुन कराने से अन्तर अस्वाभाविक बालक उत्पन्न होता है । सन् १६०३ ईस्वी में इङ्ग्लैण्ड देश में एक ऐसा बालक उत्पन्न हुआ था जिसका शिर से कमर तक शरीर मनुष्याकार था और कमर से पैर तक सलीम कूकुर के समान था । विद्वानों के अनुसन्धान करने से जाना गया कि उस स्त्री ने कूकुर के साथ मैथुन कराया था ।

एक स्त्री के विप्रय में लिखा है कि उसने मैथुन के समय अधिक ध्यान से एक हवसी की तस्वीर देखी थी उसका बालक ठीक हवसी के समान हुआ ॥

इङ्गलैण्ड के दूसरा राजा हेनरी के राज्यमें एक स्त्री के लड़का हुआ जिसके दो शिर, दो मुख, चार हाथ, चार पांख दोनों शरीर पीठ के तरफ जुड़े थे, बात करने के समय दोनों मुख एक साथ बात करते थे और दोनों मुख से एकसाथही हँसते और रोते भी थे; यह लड़का कई वर्ष तक जीता रहा लेकिन उनमें से एक तीन वर्ष के बाद मर गया और दूसरा कई दिन तक उस मृतक देहको लेकर जीता रहा लेकिन उसके बोझसे और मृतक शरीर की दुर्गन्ध से वह भी मर गया ॥

सकल मानक एक नगर में एक गर्भिणी स्त्री के मुख पर मांसके एक बिन्दु रक्त के पड़ने से उत्पन्न बालक को देखा गया कि उसके मुख पर एक नसा है । पाठकगण को उपरोक्त लेखोंसे अवश्य मालूम हुआ होगा कि अच्छे और बुरे रूप, स्वभाव के बालक का उत्पन्न होना माता के ध्यान पर निर्भर है यदि उत्तम सन्तान उत्पन्न करने की इच्छा हो तो दीहृदयियों के मनोर्थ को अवश्य पूर्ण करे । क्योंकि दो हृदयवाली गर्भिणी की इच्छा पूर्ण न करने से अथवा ग्यून अधिक मैथुन करनेसे जो सन्तान होगा यदि वह विकृतस्वरूप न होगा तो बालकी बल विद्या बुद्धि हीन अवश्य होगा । इसके पश्चात् हम श्रुत से यह दिखलाते हैं कि गर्भगत बालक के कीन २ महीने में कीन २ अङ्ग बगते हैं ॥

मासभेद से अङ्ग का बनना ।

तत्रप्रथमेमासिकलंजायते । द्वितीयेशीतोष्मानि-
 तैरभिप्रपच्यमानानां महाभूतानांसंघोतीघनःसञ्जायते ॥
 तृतीयेहस्तपादशिरसाः पञ्चपिण्डकानिवर्तन्ते ऽङ्गप्रत्यङ्ग-
 विभागश्चसूक्ष्मोभवति ॥

भावार्थः—जब स्त्री के गर्भाशय में गर्भ रहता है तो पहले महीने में पुरुष का वीर्य और स्त्री का रक्त दोनों समूहित हो कफ रूप कलल (पिण्डाकार) अवस्था को प्राप्त होता है । दूसरे महीने में शीत (कफ) गरमी, (पित्त) और वायु इन्हीं से विपक्ष पञ्च महामूत्रों का शुक्र शोणित्वात्मक जो समूह बंध कुछ घना हो जाता है । तीसरे महीनेमें दो हाथ, दो पांशु, शिर यह पांच पिण्ड एकही समय में पैदा होते हैं सिर्फ पिंडाकारही नहीं बल्कि उसके महीने २ अङ्ग प्रत्यङ्ग भी उत्पन्न हो जाते हैं । जैसे हाथ पैर और शिर यह अङ्ग है और पैरों की उंगलियां तथा शिर के नाक कान ओठ आदि प्रत्यङ्ग कहते हैं । गर्भगत बालक के जितने अंग होते हैं उनमें से कोई माता के जंग से और कोई पिता के अंग से उत्पन्न होते हैं ॥

चतुर्थसर्वाङ्गप्रत्यङ्गविभागः प्रव्यक्ततरोभवति ॥

जो तीसरे महीने में सुप्त अङ्ग प्रत्यङ्ग उत्पन्न हुये वे सब चतुर्थ महीने में अलग २ हो जाते हैं और इसी चौथे महीनेमें बालकका हृदय बनता है इसीसे गर्भिणी स्त्री चौथेमहीनेमें दोहृदयवाली कहाती है परंतु चरक का मत है कि तीसरेही महीनेमें गर्भिणी स्त्री दोहृदिनी होजाती है और चरक महाराज चतुर्थ मास का वर्णन इस प्रकार करते हैं ॥

चतुर्थमासेस्थिरत्वमापद्यते गर्भस्तस्मात्तदागर्भिणी गुरुगात्रत्वमापद्यते ॥

चौथे महीने में गर्भगत बालक (स्थिर) पुष्ट होता है इसी समय से चौथे मास में गर्भवती की शरीर भारी हो जाती है ॥

**पञ्चमेमनःप्रतियुद्धितरंभवति । पष्ठेबुद्धिः । सप्तमे-
सर्वाङ्गप्रत्यङ्गविभागःप्रव्यक्ततरः ॥**

पांचवें महीने में गर्भगत बालकका मन अर्थात् चेतना उत्पन्न होती

लगते हैं । इसी प्रकार गर्भकी भी उत्पत्ति समझिये, गर्भमें सब अणुयय एकही साथ उत्पन्न होते हैं । परन्तु अत्यन्त सूक्ष्म होने के कारण देख नहीं पड़ते जब बड़े और मोटे हो जाते हैं सब अलग २ मालूम होने लगते हैं ॥

बालक के शरीरमें कौन वस्तु मातृज अर्थात् माता से और कौन वस्तु पितृज अर्थात् पिता से उत्पन्न हैं उसे प्रकाश करते हैं ।

पितृज—गर्भस्यकेशमश्रुलोमास्थि नखदन्तसिरा-
स्त्रायुधमनीरेतः प्रभृतीनिस्थिराणिपितृजानि ॥

मातृज—मांसशोणितमेदोमज्जाहृन्नाभियकृत् प्ली-
हान्त्रगुदप्रभृतीनिमृदूनिमातृजानि ॥

पिता के अंश से बालक के शरीरमें शिरके बाल, हाड़ी, मूख, रीम, नख, दांत, छोटे नख, बड़े नख, सब से बड़े नख, और धीर्घ यह उत्पन्न होते हैं, माताके अंश से गर्भमें बालक के मांस, धीर्घ, रक्त, चर्बी, मज्जा, हृदय, नाभि, पिलही, आंत और मलाशय आदि नरम पदार्थ उत्पन्न होते हैं ॥

रसात्मजन्य पदार्थ ।

शरीरोवलंबर्णःस्थितिर्हानिश्चरसजानि । इन्द्रिया-
णिज्ञानविज्ञानमायुः सुखदुःखादिकञ्चात्मजानि ॥

रस की ताकत से गर्भगत बालक के शरीर की छद्दि, बल, स्वरूप और स्थिति अर्थात् गर्भ का ठहरजाना और हानि अर्थात् गर्भ का न ठहरना यह भी रसही से प्रगट होते हैं । तथा नेत्र कर्ण आदि इन्द्रि, प्राग्विज्ञान (गूढ पदार्थज्ञान), आयुः सुख दुःख आदि यह सब आत्मा से उत्पन्न होते हैं ॥

गर्भमें पुत्र कन्या और नपुंसक सन्तान होने की पहिचान ।

यत्रयस्यादक्षिणस्तने प्राक्पयोदर्शनंभवति दक्षिणाक्षिमहत्वञ्चपूर्वदक्षिणंसकृथित्कर्पतिबाहुल्याच्च पुत्राममध्येयेपुद्रव्येपुदौहदमभिधायति स्वप्नेपुत्रोपलभते पयोत्पलकुमुदाम्रातकादीनि पुत्रामान्येव प्रसन्नमुखवर्णाचभवतितद्ब्रूयात् पुत्रमियंजनयिष्यतीति तद्विपर्ययेकन्याम् ॥

जिस गर्भिणी स्त्री के दहिने छाती में प्रथम दूध देख पड़े, तथा दाहिनी आंख कुछ बड़ी मालूम हो, एवं दहना जांच गर्भके भारसे कुछ उठा सा जान पड़े और जितने पुरुष संज्ञक द्रव्य हैं जैसे आम, केला, आमरूद, जनार अथवा चोड़ा हाथी आदि जीवोंमें अभिलाप हो तथा स्वप्न में सफेद कमल, लाल कमल, कुमोदनी और आवड़ा आदि पुष्पिष्ठ याचक पुष्प और फल देखे एवं जिसका मुख सर्वदा प्रसन्न चमकीला रहे तो कहना कि यह पुत्र पैदा करेगी और उपरोक्त बातें सम उलटी होती जानना कि इस स्त्री के गर्भ से कन्या उत्पन्न होगी । योगभट्टजी इतना विशेष कहते हैं "पूर्वतत्पार्श्वचेष्टनी" और लक्षणोंके अलावा जिस स्त्री के गर्भ में पुत्र है वह स्त्री की सम्पूर्ण चेष्टा दक्षिण तर्फ रहे जाने चलेती पहले दहिना पैर उठावे, सोने में भी प्रायः दहने करवट सेवे । इससे उलटी चेष्टा में गर्भगत कन्या जानना चाहिये ॥

नपुंसक गर्भ के लक्षण ।

यस्याःपार्श्वद्वयमुन्नतं पुरस्तान्निर्गतमुदरं प्रागभिहितलक्षणञ्च तस्यानपुंसकमिति विद्यात् ॥

जिस गर्भवती की दोनों कोख ऊंचीसे मालूम हों और आगेकी ओर

पेट बराबर सायिक दस्तूर हो और जो ऊपर लड़की लड़का होने का लक्षण लिखे हैं वे न मिलते हैं तो जानना की इस स्त्री के पेटमें नपुंसक बालक है ॥

यस्यामध्येनिस्त्राणीप्रभूतसुन्दरं सायुग्मंप्रसूयतइति ॥

जिस गर्भिणी स्त्री का पेट बीच में कुछ खाली सा पड़ जाय जैसे जल का पात्र और चारों तरफ ऊंचे हो तो जानना कि इसके पेट में जोड़ा लड़का है ॥

डाकूरीमतानुसार गर्भ का लक्षण ।

इस स्थल में हम संक्षेप से कुछ डाकूरी मत से भी गर्भगत बालक के लक्षणों का प्रकाश करते हैं । पुरुषका शुद्ध यीर्ष्य और स्त्री का रज जब गर्भाशय में जमता है तो वही बारह तेरह दिन के बाद रक्त का एक गोला सा बन जाता है और उसी गोले में कुछ दिन बाद प्रथम दिल बनता है और उसी गोलेमें सम्पूर्ण नरें महीन सूत के समान चारों तरफ फैल जाती हैं । बाद उसके शिर बनता है और बालक के हाथ पैर नाक मुह आदि स्थानों के सब नरें तैयार हो जाती हैं । यदि वही पिण्ड पुत्र है तो तीस दिन में जितने अङ्ग प्रत्यङ्ग हैं सब बन जाते हैं । अगर वही पिण्ड कन्या की है तो वही सब अङ्ग प्रत्यङ्ग पैंतालिसवें दिनमें बनने । चौथे महीनेमें लड़का हो चाहे लड़की बाल नख आदि सब निकल आते हैं । सातवें महीने का पैदा हुआ बालक जीता भी है परन्तु आठवें महीने का जन्मा बालक अवश्य मर जाता है उसका सबब यही दिखलाया है कि ताकत स्थिर नहीं रहती, नवें और दशवें का जन्मा हुआ बालक जीता है ॥

गर्भ में लड़का लड़की होने को पहिचान ।

स्त्री के गर्भ में लड़का रहनेसे पेट दहने तरफ फूला रहता है लेकिन यह भी बहुत अधिक नहीं कम फूला रहता है और वे स्त्री प्रायः

दहिना हाथ जमीन में टेककर उठती है और चलने में भी अक्षर दहिना पैर उठता है । गर्भ में पुत्र के रहने से स्त्रियों के दहनी छाती कड़ी और कुछ सुख हो जाती है । आंख की पुनखी के नीचे जो सफेदी है उसमें जो होरे रहते हैं दहिने तर्फ नीले होजाते हैं और नसें देख पड़ने लगती हैं । कन्या गर्भ में रहने से उपरीक्षं सय लक्षणों को उलटा संग्रहना जैसे पेट का धार्य तर्फ फूलना और अधिक फूला रहना और अक्षर धार्य हाथ जमीन में टेक कर उठना, धाँड़े छाती का कड़ा होना थोड़ी ललाई लिये नेत्र के होरे धार्य तर्फ नीले हो जाने इत्यादि ॥

ग्रीस देश निवासी यूस्टाटल नामक किलासफर कहते हैं कि यह बात हमने कई भरतखे आजमाया है और बहुत सत्य है । गर्भवती स्त्री की छाती से दूध निकाल पानी में डाल दे अगर दूध पानी के नीचे वैसाही धीठ जाय जरूर भी न फैले तो जानना कि इसके पेट में लड़का है अगर वह दूध पानी पर उतराने लगे या पानी के ऊपर फैलजाय तो जानना कि गर्भमें कन्या है और यह बात तो प्रायः देखने में आये है कि लड़का पैदा होने में माता को क्रोध कम होता है लड़की में अधिक ॥

गर्भवती स्त्री के त्याजकर्म ।

भावप्रकाश से ।

अतिव्यवायमायासं भारं प्रावरणं गुरुं । अकालजागरस्वप्नकठिनोत्कटकासनम् ॥ शोकक्रोधभयोद्वेगवेग-
अद्वाविधारणम् । उपवासाध्वतीक्षणीप्रागुसुविष्टं भिभोजनम् ॥ रक्तनिवसनं श्वभ्रुकूपेक्षां मदमामिषं । उत्तानशयनं च चस्त्रियेनेच्छन्ति तत्त्यजेत् ॥ तयारक्तसूतिशुद्धि-
वस्तिमाभासतोऽष्टमात् । एभिर्गर्भः स्त्रेवदामः कुक्षीशुष्यो-
भ्रियेत वा ॥

बहुत प्रसङ्ग करना, अधिक मेहनत करना, भारी बोझ का उठाना, दिगम्बा सोना रातको जागना या समय से न सोना, सकुकरवीठना, शय्या

बहुत देर तक बैठे रहना, जांदा रख करना, जोक करना, डरना या डरने के स्थान में जाना मनमें ग्लानि लाना, दिशा पेशाब लंगा हो और दबा छुटता हो उसे रोकठेना, उपवास करना, और दूर तक पैदल चलना * तेल, मिर्चा, खटाई, अचार, सिंका, आदिंसीका, देर हजम, और कडज करनेवाले पदार्थों का भोजन, लाल वस्त्रों का पहनना ३ मढ़ाड़, आवली और कुयें का झाकना, शराब पीना, मांस खाना, हमेसा बित्त सेना, इत्यादि कुपथ्य गर्भिणी स्त्री को चाहिये कि त्याग करे क्योंकि वस्तु प्राचरणों से प्रायः गर्भ गिर जाता है । तथा फल खोलना, जुलाय लेना, दवा खा के समन करना और आठवें महीने के भीतर वस्ति कर्म अर्थात् पिचकारी से गुदा मार्ग द्वारा मलाशय में दवा पहुंचाना (आठवें महीने में वस्तिकर्म करना लिखा है) इसके अलावा भी जो स्त्री कईवार लड़का जनं बुझी है और उसके जो अनुभव किये हुये पथ्य हैं उनको भी शिष्टा को मानना गर्भिणियों के लिये हित है । ऊपर लिखे हुये कुपथ्यों के करने से गर्भ गिरजाता या गर्भही में घालक मरजाता है इसलिये गर्भिणियों को पथ्य से रहना चाहिये ॥

इस स्थल में स्त्रियों के कुछ उन रोगों का बयान करते हैं जिससे सवध से गर्भ नहीं रहता जैसे योनिरोग, प्रदररोग, आर्तवरोग आदि । जिसमें हम प्रथम योनिरोग को कहते हैं । स्त्रियों के योनि (भग) दो प्रकार का रोग होता है ॥

* हमारे इस देश की मूर्ख स्त्रियां पूरे गर्भ को चारण क्रिधि दो दो चार चार कोस पैदल गड़ा गड़ाने दीखो जाती हैं, गर्भविस्था को कील कूड़े सोपूर में भी एकादमी ऐतवार का व्रत करती हैं जब इन कुपथ्यों से गर्भ गिरजाता है पथ्यवा वाकक उत्पन्न हुआ मरगया तो घर को और मरे हुये पित्रों का श्राप दितो है ॥

३ नाक वस्त्रों के लुकाई की समक नेत्रों के द्वारा भीतर जा के वाकक को नेत्र को गरम करता है इसीक्रिधि समस्त समकोकी चौजे गर्भिणी स्त्रियों का देखना मना किया है ॥

योनिरोग ।

विंशतिर्योनिरोगास्युर्वातपित्तकफादपि । सन्नि-
पाताच्चरक्ताच्च लोहिताक्षयतस्तथा ॥ शुष्काचवामिनी
चैव पण्डोचांतर्मुखीतथा । सूचीमुखीविप्लुताचजातघ्नी-
चपरिप्लुता ॥ उपप्लुताप्राक्चरणा महायोनिककर्णिका ।
स्यान्नन्दाचातिचरणा योनिरोगाइतीरिताः ॥

स्त्रियों के योनि में बीस प्रकार का रोग होता है उनके नाम यह
हैं । घतजा, पित्तजा, कफजा, सन्निपातजा, रक्तजा, लोहिताक्षया, शुष्का,
वामिनी, पण्डो, अन्तर्मुखी, सूचीमुखी, विप्लुता, जातघ्नी, परिप्लुता,
उपप्लुता, प्राक्चरणा, महायोनिक, कर्णिका, नन्दा, और अतिचरणा
यही २० रोग हैं ।

सुश्रुत आदि ग्रन्थों के मत से भी योनिरोग लिखते हैं क्योंकि नाभ
में शार्ङ्गधर से और अन्य ग्रन्थों से कुछ भेद है । सुश्रुतादि में योनिरोग
के नाम इस प्रकारसे लिखते हैं कि उदावृत्ता १ बंध्या २ विप्लुता ३ परि-
प्लुता और घातला यह पांचरोग वायु दोष से होते हैं । लोहिताक्षरा
१ प्रस्रंसिनी २ वामिनी ३ पुण्ड्री और पित्तला यह पांच रोग पित्त
दोष से होते हैं । अरयानन्दा १ कर्णिकी २ चरणा ३ अतिचरणा ४ कर्णला
यह पांच कफ दोष से उत्पन्न होते हैं । पण्डो १ अग्निनी २ महती ३
सूचिकक्षा ४ और त्रिदोषजा यह पांच सन्निपात अर्थात् तीनों दोषों
से है । इसके उत्पत्ति का कारण सुश्रुतमें इस प्रकार लिखा है:-

विंशतिर्व्यापदोयोनेर्निर्दिष्टारोगसंग्रहे मिथ्याचारे-
णतास्त्रीणांप्रदुष्टेनार्त्तवेनच ॥ जायन्तेवीर्यदोषाच्चदैत्रा-
ञ्चतृणु ताःपृथक् ॥

मिथ्याचार अर्थात् लूनकजून खाना प्रकृति विरुद्ध भोजन जैसे
गरम मिठाज है और गर्मही भोजन करना, मिथ्याविहार जैसे दिन राम

मैथुनही करना इत्यादि कारणों से मासिक धर्म का रक्त गरम हो यो-
निरोग उत्पन्न होता है और माता पिता के वीर्य दोष से जिस कन्या
का जन्म हुआ है उसे भी प्रायः योनिरोग हो जाता है ।

उदावृत्ता—जिस स्त्री के मासिक धर्म अति कष्ट से हो, वेहू में
पीड़ा रक्त का गांठ गिरे तो जानना कि उदावृत्ता है ।

वन्ध्या—जिसका मासिक धर्म शुद्ध और ठीक समय में न हो
उसमें गर्भाधान नहीं रहता ।

विप्लुता—योनिरोग में, योनि के भीतर हमेशा एक प्रकारका
दर्द बना रहता है ।

परिप्लुता—योनिरोग में मैथुनके समय योनि के भीतर अधिक
पीड़ा होती है ।

वातला—योनिरोग में मासिक रक्त रुक हो जाने से जैसे कोई
छई छेदे ऐसा दर्द हो । यद्यपि उपरोक्त चारों योनिरोगों में भी वायु
का कोप है तथापि वातला योनिरोग में दर्द अधिक होता है ।

लोहिताक्षरा—जिस योनि के द्वारा गरम २ लोहू दाह सहित
जारी हो उसे लोहिताक्षरा कहते हैं ।

वामिनी—जिस स्त्री की योनि पुरुष के मैथुन के बाद पुरुष के
लिङ्ग द्वारा गिरा हुआ वीर्य और पात हुआ स्त्री की रज दोनों को
बाहर निकाल दे उसे वामिनी योनिरोग कहते हैं ।

संसिनी—जिस स्त्री की योनि अधिक देर मैथुन के होने से,
या लिंग की रंगड़ से बाहर निकल जावे वह संसिनी योनि है, ऐसी
स्त्री के गर्भ रक्षाने से सन्तान बड़े मुस्किल से होता है ।

पुत्रघ्नी—(दूसरा नाम जातघ्नी) जिस स्त्री के मासिक रक्त गर्म

महती—उस योनि को कहते हैं जो बहुत फैली रहे यह भी रोग है ।

मूचिवक्त्रा—जिस योनि की छिद्र बहुत छोटी हो वह स्त्री सिर्फ मूत्र त्याग तो करसके परन्तु मैथुन न करसके यह मूचिवक्त्रा योनि कहाती है ।

यद्यपि ऊपर कहे हुये चारो योनिरोग यातादि दोष से हैं तथापि जिस योनि रोग में तीनों दोषों के लक्षण पाये जाय वह सन्निपातजा योनिरोग कहाता है ।

योनिकन्द रोग ।

दिवास्वप्नादतिक्रोधादध्यायामादतिमैथुनात् । क्षता-
ञ्जनखदन्ताद्वैर्वाताद्याःकुपितायतः ॥ पूयशोणितसंकाशं
लकुचाकृतिसन्निभं । जनयन्ति यदा योनीनाम्नाकन्दस्त-
योनिजः ॥

अत्यन्त दिन के सोने से, अत्यन्त गुस्से में बने रहने से, बहुत अपेक्ष मेहनत कसरत करने से, दिन रात मैथुन करानेसे, योनि के छिन्न जानेसे और नख दांत आदिके लगनेसे, (यदि कोई कहै कि भगमें नखसे चोट लगना तो कोई शक की बात नहीं है क्योंकि मैथुनके पूर्व अक्सर विषयी गण घण्टों उसे अंगुलियों से टटोलते रहते हैं पर दांत कैसे लग सका है ? यह भी कोई शंका नहीं है बहुत से ऐसे विषयी निकलेंगे जो भग को जीभ और दांतों से चाटते है । यहां एक गांठ में धड़े रवेश से उनकी यह आवृत्त थी कि जब तक भग के भीतर जीभ डालकर उसे घंटे दो घंटे खूब न चाटें लिङ्ग प्रसङ्ग लायक न हो) जो भग के भीतर घाय हो उससे यातादि दोष स्वप्रकृत्यानुसार कुपित होके योनिके भीतर पीव और रक्त दोनों को समेट, बड़बड़ के फल के आकार यन्त्रि (गांठ) उत्पन्न करता है उसे योनिकन्द रोग कहते हैं । यह योनिकन्द वाताधिक्य से रूपा और फटा सा, पित्त से ललाई लिये दाहयुक्त जिसके तकलीफ से ज्वर हो कफसे साजयुक्त मोलधरा का और जिसमें तीनों दोषोंके लक्षण मिले उसे सन्निपात से योनिकन्द जानना ॥

योनि रोग की चिकित्सा ।

योनि रोग की चिकित्सा साधारण प्रकार से जो अजसूदा है सुश्रुत संहिता, चक्रदत्त और अनङ्ग रङ्ग कामशास्त्र आदि ग्रन्थोंके मतसे लिखते हैं जो सर्व साधारण अपने काम में ला सकें ।

ऊपर कहे हुये योनिरोगों में कई रोग हैं जो असाध्य हैं परन्तु चिकित्सा सब की हो सकती है और कईबार आराम होते हुये भी देखे गये हैं । प्रायः योनिरोग की दवाइयां इसप्रकार होती हैं, जैसे योनि में बजारा देना, तेल में रुई का कोड़ा तर करके योनि के भीतर रखना, गोली या बत्ती बना के योनि में रखना, पिचकारी देना, दवाइयों का पानी बना के भग को धोना इत्यादि और दवा भी खाने को दिया जाता है ।

जिस योनिरोग में खजुरी बहुत हो और मैथुन करने में गाय की जीभ सरीखी खरखरी मालूम होती हो तो उस रोग में हरदी, दाह-हरदी, और भटकटैया का फूल इन तीनों चीजों का बराबर बजन, छे पानी में महीन पीस लुगदी बनाय योनि में रखे और उन्हीं दवाइयों की धुनी दे इसीप्रकार कई दिन करने से आराम होता है ।

घात करके जितने प्रकारके योनिरोग हैं उनमें गुरच, त्रिकला और दातूनि की जड़ तीनों चीजों का काढ़ा बना के उसीसे योनि को धोना और तगर भटकटैया का फल, फूट, सेंधानेन और देवदारु इन सब औषधों को एक २ छटांक ले कुचल कर ५ सेर पानी में काढ़ा बनावे जब एक सेर पानी रह जाय मलकर छान ले और कढ़ाई में एक पाय काले तिल का तेल छाल उसीमें उक्त काढ़े को छोड़ मन्दान्नि से पचालेवे जब पानी जलजाय तेल मात्र रहजाय शीतलकर छानलेय उसी तेलका काढ़ा दोर योनि में रखे इसी प्रकार जब तक रोग समूल नष्ट न हो बराबर काढ़ा रखता जावे ।

पित्तदोष से जितने प्रकारके योनिरोग हैं उनमें गरम उपचार कभी न करना चाहिये । शीतल दवाइयों को लेय, तथा धोना, और

फोड़ा आदि रखना अत्यन्त फायदा करता है, उसी प्रकार कफ दूषित योनि में शीतल उपचार न करके गरम उपचार करने से लाभ होता है जैसे पीपर, मिर्च, उरद, सोंफ, कूट और सेंधानोन इन सब औषधों को कूट पानी में पीस अंगुष्ठ प्रमाण बत्ती बनाय छाया में सुखायलेय । इस बत्ती को योनि में रखने से कफ सम्बन्धी योनिरोग अथवा आराम होता है ।

योनिरोग पर धातक्यादि तैल, चरकसे ।

धातक्यामलकीपत्रस्रोतो जमधुकोत्पलैः । जम्ब्याम्र-
मध्यकासीसलोध्रकट्फलतेन्दुकैः ॥ सौराष्ट्रिदाडिमत्वग्-
उदुम्बरशलाढुभिः । अक्षमात्रैरजामूत्रेक्षीरेचद्विगुणंपचेत् ॥
तैलप्रस्थापिचुंतस्मात्त्योनीचप्रणयेत्ततः । कटीपृष्ठत्रिका-
भ्यंगंस्तेहंयस्तिचदापयेत् । पिच्छलस्त्रावणीयोनिर्विप्लु-
तोपप्लुता तथा । उत्तानाचोन्नताशूना सिद्धयेत्सरस्फोट-
शूलिनी ॥

धवपत्र, आघले के पत्र, कमलपत्र, कालासुरमा, मुलेठी, जामुन और आम की गुठली, कौशीश, लोध, कायफल, तेंदू का फल या छाया, फिट-किरी, अनार का छाल और गुलर के कच्चे फल इन दवाइयों को सवा २ सेला ले सब को कूट कर ५१॥ एक सेर अढ़ाई पाव बकरी के मूत्र में पीस लुगदी कर एक सेर कालेतिल का तेल कढ़ाई में डाल उसीमें लुग-दी और जितना बकरी का मूत्र है उतनाही गीका दूध भी उसीमें डाल कर धीमी आंच से पकादेवे जब दूध बगैरह जल जाय तेल अकेला रह जाय अग्नि से उतार शीतल कर थोतल में भर के रखदेवे । इस तेल का फोड़ा योनि में रखने से तथा पीठ, कमर, पीठ की रीढ़ में इस तेल के मालिश करने से और इसी की पिचकारी योनि में देने से निस्तन्देह योनि से पीस का बहना, योनि का सूजन और घाय तथा विस्त्रुता, उपस्रता, उत्ताना आदि योनिरोग अति दर्द सहित भी आराम होता है । इस तेल के दवाइयों का सौल भाषा में श्लोक से कुछ फरक है पाठकगण संदेह न करें ।

घूँहे का मांस तेल में पका के उसका फोड़ा योनि में धरने से अथवा सूँसे के मांस के भरता में सेंधा नोन मिला के भग में रखने से निस्सन्देह योन्यश और योनिकन्द रोग आराम होता है लेकिन जयतक रोग समूल नष्ट न हो बराबर उसका फोड़ा रखता जावे ॥

महता योनि की चिकित्सा ।

मदनफलं मधूक कर्पूरं प्रपूरितं कामिनी जनस्य ।

चिरगलित यौवनस्य च वरांगमति गाढंसुकुमारं ॥

मैनफल, मुलेठी, और कर्पूर तीनों को महीन पीस तंजैय के कपड़े में पोदरी बनाय भग के भीतर रखने से अतिफैली तथा ढीली योनि संकुचित और सुकुमार हो जाती है ॥

मासिक धर्म की चिकित्सा ।

यद्यपि इस रोग होने का कारण ऊपर लिख चुके हैं तथापि यह स्थल में इतना कहना जरूरी है कि स्त्रियों के माहवारी का बन्द हो जाना और भी बहुत से कारण हैं—जैसे अत्यन्त गरम प्रकृति होने के समय मासिक रून का सूखजागना उसका लक्षण यह होगा कि शरीर दुबला, शरीर में गरमी मालूम होना और भी जो रून कभी के लक्षण हैं वह भी पाये जाते हैं । चाहिये कि ऐसी अवस्था में पुष्ट और रक्त ग्रहक औषधियां खिला के तब मासिक खोलने की चेष्टा करे । किसी को अति ठंडक पहुंच कर रून गाढ़ा होके जम जाता है इससे भी मासिक रुक जाता है, किसी को योनि में घाघ होके मवाद सूख जाता है उससे या योनि के रोगों के मुख बन्द हो जाने से भी मासिक धर्म का होना बन्द हो जाता है और किसी २ को अधिक मोटेपन से रुधिर निकलने के रास्ते बन्द हो जाते हैं । उक्त कारणों को और प्रकृति को अच्छी तरह देख माल के चिकित्सा करना वैद्य को उचित है ॥

इक्ष्वाकुबीजदन्तीचलागुडमदनफली कण्वयष्ट्राह्वैः ।

सास्नुकुक्षीरैर्वर्त्तिर्योनिगता कुसुमसंजनो ॥

कहुँदू तूम्ही के बीज, जवाल गोटे के दूध की गड़ की छाल, यही पीपर, पुरानागुड़, मेनफल, दारू का कीट (जराय सिंच जाने के बाद जो कीट नीचे हेग में जम जाता है) और मुलेठी इग सब चीजों को महीन पीस घूहर के दूध में चोट छँगुलिया के घरापर बत्ती बना के छाया में सुखाय लेय । इस बत्ती को योनि में रखने से अनास्य रोग अर्थात् मासिक धर्म का न होना आराम होके स्त्री महीने २ ऋतुमती होने लगती है ॥

मालकांगुनी, राई, विजयसार लकड़ी, दुधियाघस, इन सब औषधों को कूट कपड़छान कर तीन २ मास की पुड़िया बना ले शाम सवेरे १ पुड़िया मुखमें रख शीतल जलसे चतार जावे इस प्रकार पांच मात दिन दवा खानेसे मासिक धर्म होने लगता है । अगर इस चूर्णको भी खिलावे और योनि में पूर्वोक्त बत्ती रखे तो बहुत शीघ्र फायदा होवे परन्तु यह चूर्ण गरम प्रकृति वाली को फायदा नहीं करता । गरम निजाज वाली को रून बढ़ाने की चेष्टा करे और योनि में उक्त बत्ती को रखे । जिस स्त्री के मासिक धर्म नहीं होता उसे नित्य मछली कालासिल, चरद और सिरका आदि खाना फायदा करता है ।

योनिशूल की दवा ।

पिचुमन्दरसेनमिश्रितैः पिचुमन्दानिलशत्रुबीजकैः ।
घटितांवटिकाभगान्तरे भगशूलप्रशमायधारयेत् ।

नाँव की निमेली और रेड़ी के बीज दोनों को नाँव के पत्तों के रसों में सूय महीन चोट कर आवला के समान गोली बनाय ले, इस गोली को योनि के भीतर रखने से योनि का दर्द बहुत शीघ्र आराम होता है । इसी प्रकार इन्द्रायण की जड़ और शोंठ इन दोनों को सूय महीन पीस बकरी के घी में चोट योनिमें लेप करनेसे योनि का दर्द तत्काल जाता रहता है । परन्तु जिस स्त्री के योनि में दर्द, गरमी सुजाक आदि के कारण से होगा उसमें फायदा नहीं करेगा ।

वन्ध्या चिकित्सा ।

ऊपर कहे हुये योनिरोग में, और सात प्रकारके योनिफूलमें जो रोग होते हैं जिसके लक्षण आरोग्य दर्पण के दूसरे खण्ड में लिख चुके हैं उन रोगों में गर्भ नहीं रहता, तथा माता पिता के अत्यन्त धीर्य कमजोर हो जानेसे भी गर्भ स्थित नहीं होता, इन सब बातों का विचार करके वन्ध्या की चिकित्सा करना उत्तम है क्योंकि जब तक योनिरोग आदि आरामन होगा गर्भस्थित होना अति दुष्कर है । रत्नावली में वन्ध्या की चिकित्सा इस प्रकार लिखी है ॥

क्वाथेनहयगन्ध्यायाःसाधितंसघृतंपयः । ऋतुस्नाता-
बलांपीत्वागर्भधत्तेनसंशयः ॥ पिप्पलीशृङ्गवेरञ्जमरिचं-
नागकेशरं । घृतेनसहपातव्यंवन्ध्यापिलभतेसुतम् ॥

दो तोला नागौरी असगन्ध को गीके दूधमें पीस लुगदी बनाय एक पाय गी का दूध और एक तोला गी के घृत में पकाय ले बाद उस दूध को कपड़े में छान कर ऋतुस्नान करके पीये दिन यदि स्त्री पिये तो निश्चय गर्भधारण करे । इसीप्रकार छोटी पीपर, सोंठ, मिरच और नाग-केशर इनका ६ मासा पूर्ण घी के साथ ऋतुस्नान के पीये दिन चाटने से वन्ध्या भी सन्तान उत्पन्न करे । गर्भस्थिति के लिये वैद्यक शास्त्र में और भी अनेक दवाइयाँ हैं जैसे सोमघृत, फलघृत आदि जिसका कि वर्णन भा० २० के दूसरे खण्ड में कर चुका हूँ कि जो घृत, स्त्री पुरुष दोनों के दूषित धीर्य को शुद्ध करके विद्वान तथा बलवान गर्भ को प्राप्त करता है ।

दत्तात्रयी में लिखा है कि तीन प्रकार की वन्ध्या होती हैं "जन्मवन्ध्या काकवन्ध्या भृत्यवत्सा च क्वचिरिस्त्रयः" एक जन्मवन्ध्या जिसके कभी गर्भ स्थित न हुआ हो, दूसरी काकवन्ध्या जिसके एक सन्तान हो के फिर गर्भाधान न रहे, तीसरी भृत्य वन्ध्या अर्थात् खड़े हो और मरजायें । और इसकी चिकित्सा भी अनेक प्रकार की लिखी है ग्रन्थ अधिक बढ़ाने के समय से नहीं लिखते हैं । लेकिन गर्भ का न रहना मुख्य धीर्यदाय है

हमने कई बार स्त्री पुन्य के रज धीर्य की परीक्षा करके धीर्य शुद्ध करके औषध खिलाया है गर्भ अवश्य रहा है और पूर्ण मांस में सुन्दर सन्तान उत्पन्न हुआ है ।

पुरुष के धीर्य की परीक्षा इस प्रकार से करै एक फूल के फटेरे में घोड़ा चण्डाल भर देय और उसी में पुरुष अपने धीर्य को हाँटे यदि धीर्य एक बार गी जल के भीतर चला जाय तो जानना कि यह धीर्य गर्भाधान करने लायक है और धीर्य धूँद २ करके पानी पर उतराने लगे या पानी पर फैल जाय तो जानना कि यह धीर्य गर्भाधान नहीं कर सकता । यदि धीर्य न पानी के भीतर ही जाय और न ऊपर उतरावे पानी के बीच में जाके टूट जावे तो जानना कि इस धीर्य से गर्भाधान होगा परन्तु सन्तान नहीं जियेगा । इसी प्रकार रज की परीक्षा करै एक गमले में घोड़े से सोआ के दूध लगा दे और स्त्री से उस दूध की लड़ में पेशाब करावे यदि दूध सुरक्षा जावे तो जानना कि इसका रज शुद्ध नहीं है और दूध जब के तब घटे रहें तो जानना रज शुद्ध है ।

जब देखे कि पुरुष के धीर्य में दोष है तो नीचे लिखी पुष्ट औषध खिलावे जब तक धीर्य शुद्ध न हो ।

चक्रेदू मूसली बम्बई की, तालमखाना का घीज, घीजघण्ट, गुलसफरी, कानराज, मखाना और सेमरका मूसड़ा इन सातों चीजों को घराघर भाग से कुट ऊपरछान कर छः २ मांस की पुड़िया बनाय डेप, सामसधेरे एक पुड़िया मुख में रख पाय भर गी के दूध में २ तोला मिश्री और आधा तोला गी का घी डाल के पी जावे इसी प्रकार जब तक उत्तम बलघान धीर्य न हो दवा घराघर खाता जावे और तेस मिश्री खटाई सराय मांस स्त्री प्रसङ्ग आदि से पहरेज करे ।

स्त्री के रज शुद्ध करने के लिये यह दवा खिलावे । नागीरी असगन्ध, पण्डाहीशतावर एक २ छटांक, यधूल का गोंद ३ तोला, छोटी लायची १ तोला सय चीजों को महीन पीस ऊपरछाने करलेय इसकी मांस ३ भागा से एक तोला तक है सांभ सधेरे दोनों समय गी के दूध से दवा खावे जब तक रज शुद्ध न हो और मद्यमांसादि गरम भोजन, और शोक क्रोध,

पुरुष, समागम आदि से पहरेन करै, जब देखे कि रज पीयें दोनों सूख गइ हैं, पूर्वोक्त विधिके अनुसार गर्भाधानकरै निस्सन्देह सन्तान उत्पन्न होगा ।

प्रदर रोग का निदान ।

स्त्रियों के योनि के द्वारा रक्त, अथवा धातु का जाना प्रदर रोग कहा जाता है, और प्रायः यह रोग ऐसे २ कुपथ्यों से होता है—जैसे प्रकृति के विरुद्ध अधिक कड़ा गरम भोजन करना, शराय पीना, खाने पर तुरत फिर खाना, कच्चे गर्म का गिरजाना, अति मैथुन करना, सवारी पर चढ़ के अथवा पैदल बहुत घूमना, अधिक शोच और सपवास जहाँतः प्रती का रहना, असहन योक्त का उठाना, अधिक चोटसे पीड़ित होना इत्यादि कारणों से वातादि दोष करके चार प्रकार का प्रदररोग होता है ॥

असृग्दरं भवेत्सर्वं सांगमर्दं सवेदनम् । तस्यातिवृद्धो-
दौर्बल्यं श्रमो भूर्छामदस्तृपा । दाहः प्रलापः पांडुत्वं तन्द्रा-
रोगाश्च वातजा ॥

इसका सामान्य रूप यह है कि चारों प्रकार के प्रदररोग में शरीर पैंडता है और खफीक पीड़ा होती है । प्रदररोग के बहुत बड़ जाने से शरीर दुबला हो जाता है, बिना मेहनत किये शरीर खफीकी मालूमहो यह मन हो कि लेटे रहो कुछ काम काम मत करो, शिरमें पुनरी और नेत्र में गरमी मालूम होना, पियास की आधिषयता शरीरमें जलन, जी का चपड़ागा, शरीर की रंगत पीलाई और सजेदी नायल, नेत्रों पर शपकी और भी वायु के अनेक उपद्रव हो जाते हैं ॥

वातादि भेद से लक्षण ।

आमं सपिच्छा प्रतिमंस पांडु पुलाक तोय प्रतिमंस कफा-
त्तु । सपीतनीलासितरक्तमुष्णं पित्ताति युक्तं भृशवेगि-
पित्तात् ॥ रुक्षारुणं फेनिलमल्पमल्पं वाताति वातात्पिशि-
तोदकाभम् । सक्षौद्रसर्पिर्हरितालवर्णं मज्जाप्रकाशं कुण्ठं

त्रिदोषम् ॥ तच्चाप्यसाध्यं प्रवदन्ति तं ज्ञा न तत्र कुर्वीत भि-
पक्चिकित्साम् ॥

भाष्यनिदानसे आतादि भेदों करके लक्षण कहते हैं । जिस प्रदर रोग में कफ का कोप होता है उसमें योनि से, अर्ध की तरह अथवा भात के माह के समान पीला सफेद मिश्रित रंग का या कोदक धान के धोवन सरीखा घातु निकलता है । जिस प्रदर रोग में पित्त का कोप रहता है उसमें नीला, काला, पीला, लाल और अतिगरम घट और घेहु में दर्द हो के योनि द्वारा लोहू निकलता है । वायु दोष से प्रदर रोग में गुलाबी रंग का केत सहित घोड़ा २ कमर और घेहु में पीड़ाहोके अथवा नाभके धोवन सरीखा योनि द्वारा घातु निकलता है और जिस प्रदर रोग में तीनों दोष मिले रहते हैं उसमें जैसे शहद और घी मिल जाने का रंग होता है उस रंग का या हरताण के रंग के समान अथवा सरसी की भांति दुर्गन्धि सहित योनि के द्वारा घात का मवाद निकलता है यह असाध्य है सैकड़ों धार औषध खिला के परीक्षा लिया है कुछ फायदा नहीं होता निस्सन्देह त्रिदोष युक्त प्रदर रोगवाली स्त्री मर जाती है इसलिये बुद्धिमान वैद्य उस प्रदर रोग की चिकित्सा न करे ॥

सोमरोग का लक्षण ।

भावप्रकाश से ।

स्त्रीणामतिप्रसङ्गेन शोकाच्चापि श्रमादपि । अति-
सारकयोगाद्वागरयोगात्तथैव च ॥ आपःसर्वशरीरस्थाः
क्षुभ्यन्ति प्रस्रवन्ति च । तस्यास्ताः प्रच्युताः स्थानान्मूत्रमा-
र्गं व्रजन्ति हि ॥ प्रसन्नाविमलाः शीता निर्गन्धानो रुजाः सि-
ताः । स्रवन्ति चातिमात्रं ताः सानशक्नोति दुर्वला ॥ वेगं-
धारयितुं तासां न सुखं विन्दते क्वचित् । शिरः शिथिलता त-
स्या मुखं तालु च शुष्यति ॥ मूर्च्छा जृम्भा प्रलापश्च त्वक् रूक्षा-
चातिमात्रतः । भक्ष्यैर्भोज्यैश्च पेयैश्च न तृप्तिं लभते सदा ॥
सन्धारणाच्छरीरस्य ताग्रापः सोमसंज्ञिताः । ततः सोमक्ष-
यात्स्त्रीणां सोमरोग इति स्मृतः ॥

जिस प्रकार पुरुष को बहुमुख रोग होता है, और अधिक मूत्र द्वारा घात जाते २ मनुष्य मर जाता है । उसी तरह स्त्रियों को सोमरोग होता है और यह भी ऐसा दुष्कर रोग है यदि प्रारंभमें उपाय न किया जाय तो फिर आराम होना कठिन होजाता है और कुछ दिनोंमें स्त्री गलकर मर जाती है । यह रोग स्त्रियों के ही होता है और इसके होनेका भी कुपण्य वही है जो प्रदर रोग में लिख आये हैं जैसे—अति मैघुन, अति शोथ अधिक मेहनत आदि विशेष यह कि जुलाव के बिगड़ जाने और जहरीली वस्तु के खाने से सम्पूर्ण शरीर का रस रक्तादि तर पदार्थ और जल का अंश अपना २ स्थान छोड़ मूत्राशय में प्राप्त हो के योनिमार्ग द्वारा अनियमित समय में भी निकला करता है । वह जल के समान साफ, रंगरहित, भीतल, जिसमें कुछ भी गन्ध नहीं न किसी प्रकारका दर्द सर्वदा दिया रात्रि निकला करता है । यही बीमारी जब अधिक बढ़ जाती है तब स्त्री रोगको नहीं रोक सकती अर्थात् पेशाब लगनेसे चटते २ कपड़े में भी हो जाता है इसे हर समय धोती भीनी रहती है । इस रोगवाली स्त्री के शिर में दर्द पुनरी, चक्कर, मुखका सूखना, बदन रुखा, शरीर कमजोर, खाने पीने की चीजों से तृप्ति नहीं होना बन्ना रहता है । इस रोग में स्त्रीका रज आदि तर पदार्थ पानी सरीखा बहा करता है तथा उसके छोख होने से स्त्री के सोम रोग होता है ॥

मूत्रातिसार ।

सोमरोगेचिरंजातेयदामूत्रमतिस्त्रवेत् । मूत्रातिसारं
तंप्राहुर्वलविध्वंसनंपरम् ॥

जब स्त्री को सोमरोग बहुत दिनों तक बन्ना रहता है तो जल में उसे मूत्रातिसार हो जाता है अर्थात् बारम्बार और अधिक निकदार से पेशाब आने लगता है और रोकने से रुकता नहीं इससे स्त्री का शीघ्र ही बल नाश हो जाता है और मर जाती है या कोई अति दुष्कर रोग उसके शरीर में हो जाता है ॥

प्रदररोग की चिकित्सा ।

यह सब आयुर्वेद वेत्ताओं का मत है कि जितनी औषधियाँ रक्ता-
तिसार, रक्त पित्त और रक्तज बाधाओं के आराम करनेवाली हैं वे सब चारों प्रकार के प्रदररोगों को आराम करती हैं ॥

परीक्षित औषधियां ।

दारुधरवी, रसवत, चिरायता, कृसा, नागरमोषा, बेलका गूदा और गुह्र, भेलावां इन सब औषधोंको बराबर तोल दो तोला ले अथवा कर एक पाव जल में एक भृत्तिका पात्रमें रात को भिजा देवे सुबेरे जाग्र देवे जध एक छंटाक जल रहनाय उतार शीतल कर के छान लेय और छः सासा मिश्री मिला के पी जाये, इसी प्रकार सुबेरे भिजावे तो शाम को पकाय कर पीये । यह पूरा मात्रा है यदि रोगी कमजोर या उमर कम हो तो मात्रा भी कम कर लेवे । भेलावां की छिपुनी काट कर के फेंक देवे और उसे फाड़ कर बीज निकाल डाले पश्चात् गुह्र कर लेय । खाने को गर्म चीजन देवे ॥

चन्दनादिचूर्ण प्रदराधिकारे ।

चन्दनं नलदं लोध्रमुशीरं पद्मकेशरं । नागपुष्पं च विल्वं
चमद्रमुस्तज्जुशर्करा ॥ ह्रीवैरञ्जैव पाठाचकुठजस्य फलं त्वचं ।
शृङ्गवेरं सातिविषाघातकीचरसाञ्जनं ॥ आम्रास्थिजं युसा-
रास्थितयामीचरसोद्भवः ॥ नीलोत्पलं समङ्गाचसूक्ष्मैला-
दादिमोद्भवं ॥ चतुर्विंशतिमेतानि समभागानि कारयेत् ।
तण्डुलीदकसंयुक्तं मधुना सह योजयेत् । चतुःप्रकारप्रदरं र-
क्तातिसारमुत्त्वणम् ॥ रक्ताशांसिनिहन्त्याशुभास्करस्ति-
मिरं यथा । अश्विनोः सम्मतो योगो रक्तपित्तनिवर्हणः ॥

यह सुख हम औषधपरिचयली से लिखते हैं जिसे अनेक बार अ-
जमाके देखा है जो निस्सन्देह प्रदररोग को आराम करता है । सफेद-
चन्दन जटामासी, लोघ, खस, कमलके फूलके भीतर का केशर न मिलाते
पर कमलगट्टे की गरी, बेलका गूदा, नागरमोषा, मिश्री, दारुधर, पाकी,
कुरैया की छाल, वन्दजव, धैतरासेण्ड, असीस, पयके फूल, रसवत, आम
की गुठलीकीगरी, जामुनके गुठलीकीगरी, मोचरस, नीलकमलका पहाङ्ग न

मिलने पर कलंगहे की गरी, नजीद, छोटी लायची और भगारकाफूल, इन सब चीजों की पीसों को सैयान भाग से कूट कपड़ान कर किसी कागदार पोतल में रखदे । इसे घूर्ण की मात्रा ६ मासा से दो-तीना पच्योत है, इस घूर्ण को चोबल के धोयन और महतके साथ कुछदिन खाने से चारो प्रकार का प्रदरोग रक्तातिचार एवं रक्तम बाधासीर निस्सन्देह आराम होता है जिसतरह सूर्यके प्रकाश से अन्यकारका नाश होता है उसी प्रकार इस घूर्णके सेवनसे प्रदरोग का नाश होता है इस घूर्णको अश्विनी कुमार ने प्रकाश किया है इसे रक्त पित्त का भी नाश होता है । चावल के पोषन की क्रिया यह है कि आधी-छंटाक पुराने चावल को पोड़ा कुचलकर जिसमें दो तीन टुकड़े हो जाय १ पाय लालमें भिजो दे घंटे दो घंटे के बाद सूख भलकर खानलेय और उसमें ३ मासा सहत मिलाके रक्त घूर्ण को मुखमें रख कपसे चावल का पोषन पीजाये, अथवा चावल के पोषन में घूर्ण को घोट खानकर पीजाये इसतरह पीनेसे और भी जल्द कायदा करता है खानेमें गरम चीजों का पहरेज ॥

दो तोला अशोक छल की छाल को दूध में पका के मिश्री मिलाके दोनों समय पीने से रक्त प्रदर आराम होता है उसी प्रकार पके गुलर ली फलों को सुखाय घूर्ण कर मिश्री मिलाय एक तोला के अन्दाज दोनों समय दूध के साथ अथवा पानी के साथ खाने से रक्त प्रदर का कायदा करता है ॥

सफेद चन्दन १ तोला, खस १ तोला, कलंगहे की गरी ३ तोला सीनी की आधसेर चावल के धोयन में दूध महीन घोट छान कर दो तोला मिश्री मिला के दिनभर में कई गरतया करके पीनेसे और केवल दूध चावल मिश्री के भोजन करने से योनि द्वारा सोहू का जाना बन्द होता है । इसीप्रकार पक्का केले की छीनी को दूध में कई गरतया खा कर खानेसे योनि द्वारा सोहू का जाना बन्द होता है ॥

प्रदर रोग में पथ्याऽपथ्य ।

साठी के घान का अथवा पुराने चावल का भात, सूत भसूर और पना की दास, गेहूँ या जव की रोटी, गो या बकरीका दूध, भैंसका घी,

कटहर, केला, चीराई, परवर, पका फुम्मड़ा, कमलकानाल और लौकी की तरकारी । चिरींजी, अदरक, ताड़ का फल, अनार दोनों प्रकार के, छुहारा, सिंघाड़ा, आमला, तारियल, कसेरू, कैसा, ठण्डा जल आदि जितने प्रकार के शीतल पदार्थ हैं सब कापदा करते हैं । (अपघ्न) बहुत नेहमत करना, रास्ता चलना, धूप और आग के सामने बैठना, दिशा पेशाब का रोकना, तमाकूपीना, मद्य मांस खाना, शीश और गुस्सा करना, गुड़ भांटा, तिल, उरद, सरसों, दही, चिरका, अचार, लहसुन आदि जितने गरम और सार द्रव्य हैं सब नुकसान करते हैं ॥

सोम और मूत्रातिसार की चिकित्सा ।

भिन्हीकीजड़, सूखापिंहाक, सूखाआमला, त्रिदारीकंद यहसब चार न तोला उरद का घूर्ण, और मुलेठी दो २ तोला सबको महीन पीस कः २ नासा की पुड़िया बनाय लेय शाम सवेरे एक पुड़िया मुखमें रख पावभर गी के दूध में मिश्री मिला के ऊपर से पीनेसे सोमरोग आराम होता है अथवा कुछ दिन बराबर दूधके साथ परछाहीं शतावर पीने से भी रोग आराम होता है । और ऊपर लिखेहुये चन्दनादिघूर्ण से भी सोमरोग आराम होता है । मूत्रातिसार के लिये यह दवा परीक्षित है ताड़ वृक्ष की जड़, खजूर वृक्ष की जड़, मुलेठी और मिलाईकंद सब को सम भाग छे घूर्ण कर छः नासा के अन्दाज गी के दूध अथवा चावल के घोंघन के साथ दोनों समय कुछ दिन बराबर सेवन करने से मूत्रातिसाररोग आराम होता है इस रोग में भी वही पथ है जो अदररोग के लिये कहा गया है । चित्रों के और रोगों का प्रकरण आरोग्यदर्पण के चतुर्थ खण्ड अथवा पञ्चम खण्ड में लिखा जायगा ॥

परीक्षित औषधियां ।

वैद्यक के ग्रंथों में अम्रक की उत्पत्ति इस प्रकार लिखी है कि जब वृत्रासुर के मारने के लिये इन्द्र ने बज्र उठाया तब उसमेंसे चिनगारियां निकल आकाश में फैलकर पर्वतों के शिखरों पर गिरिं उनसे अम्रक उत्पन्न हुआ सो जहां का पत्तल जिस रंग था वहां उसी रंग का अम्रक तब

अभ्रक मित्रता है परन्तु विशेष कर. चंत्तर के पर्वतों में उत्पन्न अभ्रक में बहुसंख्य और सघों में अधिक गुणवान है ॥

अथ अभ्रक के शोधन मारण की विधि ।

अभ्रक के दो भेद हैं खेताभ्रक और कृष्णाभ्रक, सेा रस बनाने के काम में काला अभ्रक लिया जाता है क्योंकि काले अभ्रकमें पारद है और सफेद अभ्रक में पारा नहीं है । यह काला अभ्रक चार प्रकार का है पिनाक-दुर्-नाग और यज्ञ (लक्षण) पिनाकको आग में डालने से पत्रे मिल जाते हैं, दुर् आगमें डालनेसे नेट्रकके समान शब्द होता है, और नाग को आग में डालने से फुककार देता है ये तीनों अभ्रक खानेसे मृत्यु को देता है और यज्ञ नामक अभ्रक आगमें डालनेसे कुछ रूपान्तर अथवा शब्दादि नहीं होता किष्किन्मात्र फूल जाता है यही अभ्रक खानेके योग्य है इसका भस्म बुढ़ापा तथा मृत्यु का हरनेवाला है ॥

अथुद अभ्रक कोड़, लयी, पांडु, हृदय पीड़ा, पसुरी में दर्द, देह का जकड़ना और अग्नि को मन्द करता है । इसलिये पहले अभ्रक को इस प्रकार शोध लेना चाहिये अभ्रक के राख को छे कोयले के आंच में खूब लाल कर जय देखे कि अभ्रक सुरा हो गया है गौ के दूध में युक्ताय लेय और बाद इसके चीलाई के साग का रस ३ भाग नीबू का रस १ भाग दोनों रसों को एक पट्टल के पात्र में भर उसी में अभ्रक को एक दिन रात भिजा रखे दूसरे दिन जल में धोय हाथ से खूब मल कर उसके पत्रों को भिन्न २ कर देवे तब उसे धान्याभ्रक करे ॥

धान्याभ्रक की विधि ।

उपरोक्त प्रकार से शुद्ध किया हुआ अभ्रक को घाम में सुखाय खरल में सहन फूट लेय जितना कुंटा भया अभ्रक हो उसका चीपाई समुचे घाम छि दोनों को एक कम्बल में बांध तीन दिन रात पानी में धुयो रखे तीन दिन के बाद उसे हाथों से खूब मर्दन करे जिस्से कि अभ्रक मल छन के पानी में निकल आवे और अभ्रकमें जो कंकड़ पत्थर रहता

हे वह घात के साथ कम्बल के पोटरों के भीतर रह जावे । जो अभ्रुक
उन के पानी में आ गया है उसे घीर करके जल वहाय देवे और अभ्रुक
को घात में सुलाय लेय यही अभ्रुक मारण प्रकार में श्रेष्ठ होता है ॥

मारण विधि ।

धान्याभ्रुकको मदार (जहाँ २ इंचे आक और अंकीया भी बोलते हैं)
के दूध में घोंट टिकरी बनाय सुखायलेय बाद उसे मदार पत्र में लपेट
ऊपर कपरीटी कर गजपुट में फूंक देवे इसी प्रकार सात दूके मदार के
दूध में घोंट और पत्र लपेट सगुट कर गजपुट में फूँके बाद उसी तरह
वरगद के जटा के काढ़े में घोंट टिकरी बांध सुखाय बाद ऊपर से कप-
रीटी कर गजपुट में फूंक देवे फिर कुमारीकन्द (घीकुमार) इससे खरल में
घाट आंच देवें इसी प्रकार १०० गजपुट का आंच देवे यह ही पुट का
अभ्रुक अन्य विधि अभ्रुक भस्मों से अति उत्तम बल वीर्य वृद्धि कारक है
तथा सब से उत्तम अभ्रुक भस्म एक हजार आंच का होता है वैद्यक के
अनेक ग्रन्थों में अभ्रुक फूँकने की अनेक विधि लिखी हैं परन्तु वही विधि
सब से उत्तम और सरल है (अमृतीकरण) जिसका अभ्रुक भस्म होता है तनाही
गो घृत से दोनों कालें चूरेहे पर रख इतना आंच देवे कि पात्र के अति
ठण्डा होने से घृत बल उठे जब घृत जल के शान्ति हो जाय तो अभ्रुक
निकाल कांच में लावे ॥

मारितस्य अभ्रुकस्य गुणः ।

अभ्रुकपायमधुरं सुशीतमायुष्करं धातुचिचर्द्धनं च ।
हन्यात्त्रिदोषत्रयं मेहकुप्टं प्रोहोदरग्रन्थिविषकृमींश्च ॥
रोगान् हन्यात् द्रवयति अपूर्वैर्यवृद्धिं विधत्ते । तारुण्याद्व्यं-
रमयति शतं योपितां नित्यमेव ॥ दोषायुष्कान् जनयति
सुतान् सिंह तुल्यप्रभावान् । मृत्योर्भीतिं हरति सुतरां सेव्य-
मानं मृताभ्रम् ॥ १ ॥

यह गुण अमृक मस्म के अनेक ग्रन्थों में लिखे हैं। अमृक मस्म कसैला, मधुर, शीतल, आयुष्य का बढ़ाने वाला और घातु बर्द्धक है सकापात, फोड़ा, घातु रोग, कोढ़, पिलही, मांसग्रंथि, विषदोष, एवं रुमि रोगको नाश करता है, चक्र रोगों के नाश के बाद शरीर को पुष्ट करता है और स्त्रीयों को ऐसा बढ़ाता है कि नित्य सैकड़ों स्त्रियों का संभोग करने को समर्थ होता है और जिनके सिंदू के समान बलवान तथा दीर्घायु पुत्र उत्पन्न करने की ताकत देता है एवं मृत्यु के भी मय से बचाता है। परन्तु यह नहीं लिखा कि कितने दिन के सेवन से संप्रोक्त गुण लाभ होते हैं।

स्वेत प्रदर की औषध ।

औरतों को चार प्रकार का प्रदर रोग होता है तिसमें स्वेत प्रदर अति कठिन रोग है इसमें योनि से कभी २ या सर्वदा निरन्तर गाढ़ा सा पानी निकलता रहता है। एक हलवाइन जिसकी अवस्था २८ वर्ष की थी बहुत दिनों से चक्र रोग में पीड़ित थी प्रयाग में उसने प्रायः छोटे बड़े सभी दकीम वीर्यों की दवा की, परन्तु किसी से कुछ भी फायदा न हुआ अन्त को हमारे औषधालय में आई हमने भी अनेक प्रसिद्ध औषधियां खिलाई लेकिन फायदा न हुआ तब एक साधारण औषध बनाके १ मास दोनों समय खिलाने से रोग समूल नष्ट हो गया तत्पश्चात् सही औषध से कई एक रोगियों को आराम हुआ सो लिखते हैं।

भिंडी (प्रसिद्ध सरकारी) की गड़ सुखा के पाय भर। पिड़ाऊ (सुपनी भी कहते हैं) सूखा हुआ पाय भर दोनों को कपर खान कर उः उः मांस की मात्रा घटा डे, याद भर और के दूध में एक तेरला चीनी मिला के एक पुड़िया मुख में रख उसी दूध से चतार जाये ऐसा ही साम सवेरे खाये, दूध न मिले तो दवा में जरासा मिश्री मिला के पानी से चतार जाये, तेल मिर्चा खटाई आदि गर्म चीजों से परहेज करे।

डाक्टरों मत से सर्प विष की चिकित्सा ।

एमीनेल पाईजन (जीवविष) अर्थात् सर्पोदि जीवों के काटने से

घिय से पीड़ित होना । अगर प्रागल कुत्ता, स्यार प्रभृति सर्पोंदि जहरीले जीव शरीर में जिस स्थान में काटे बहुत ग्रीष्म उसी स्थान के कुछ ऊर्ध्व भाग में कपड़ा या डेरे से सूख कर बांध देवे, बांधने के बाद देखे कि काटे हुये स्थान में आसार थोड़ा होता है कि नहीं और उसी स्थान का बाल उखाड़ने से कुछ बाल उखड़ आता है कि नहीं अर्थात् लोम उखाड़ने से न उखड़े और दंशित स्थान में चुटकी काटने से बंध होय तो जानना की रोगी आराम हो जायगा (धागा बांधने से तात्पर्य यह है कि जो रक्त रोगों के द्वारा चारों तरफ घूम रहा है वह रक्त घिय के साथ मिल कर ग्रीष्मही हृदय में न जाय मिले) तो बहुत जल्द दंशित स्थान को नस्तर अथवा खुरी से छेदन कर फुड़ रक्त निकाल डाले और घाव को गरम जल से धोके जहां तक जल्दी हो सके उसी घाव पर काटिक घिस देवे और एक छोटा गरम करके घाव को दाग देवे लेकिन छोटा ऐसा लाल करे कि उस स्थान का घमड़ा घुर घुराय जाय याद निम्नलिखित औषध को पिलावे ।

लायकर एमोनिया १ । २ ड्राम । ग्रांडी १ । २ औंस । टिचर-ओ-पियाई १ ड्राम । कोफर वाटर ६ औंस । इन सब औषधियों को एकत्रित कर एक गीली में भर १२ घिन्ट लगा दे आचे घंटे पर या आवश्यक जानने पर दश २ मिनिट के अन्तर पिलावे, और रोगी को बैठने किम्बा प्रथम २४ घंटा प्रयत्न सोने न देवे दो समुच्च रोगी के यगल के भीतर हाथ देवे, इधर उधर टहलावे और सर्व का भय रोगी के चित्त से समझा बूझा कर हटावे प्रथात् नीचे लिखे अनुसार एमोनिया लिनीमेंट तैयार करके घाव पर लगावे ।

लायकर, एमोनिया ४ ड्राम, टिचर-ओ-पियाई ४ ड्राम, ओलिभ मा-यल ४ ड्राम, सब को एक में मिला घाव पर और घाव के चारों ओर मर्दन करे । यह मालिश घिच्छू, बरै आदि से काटे हुये स्थान में भी फायदा करता है । परन्तु प्रागल-सियार या कुत्ता काटने में पूर्वोक्त चिकित्सा अवश्य करना उचित है यद्यपि फूकर काटने का जहर जल्दी असर नहीं करता, एक मसाले से लेकर ६ सप्ताह अथवा ७ सप्ताह में अथवा ३ मास से ६

मांस के मध्य में ही रोगी अकस्मात् जलाशय देख के डर जाता है और पानी पीने की शक्ति बिनष्ट हो जाती है और कुत्ते समान भूकने लगता है इस रोग को अङ्गरेजीमें (हाईड्रोफोरिया) कहते हैं । यद्यपि हम इसका वर्णन कुत्ता काटने के स्थल में करेंगे तथापि हमें इस समय इतना कहना बहुत जरूरी है कि स्वान और स्वार दंशित रोगी को पहले खूब तेज जुलाब करा के अल्प परिणाम अफीम खिनामा आरंभ करा देना सब से उत्तम है एवं प्रति दिन शिर से स्नान और शरीर में धोखाधान करना उचित है ॥

मनुष्य सृष्टि को विनाश करने की सामर्थ्य अनेक जीवादि पदार्थों में देखा जाता है सिंह व्याघ्रादि मनुष्य को मार खाते हैं सर्पोंदि दंशन तथा नादक द्रव्य के खाने से । बहुत से वृक्ष ऐसे हैं जिनमें से घास निकल कर शरीर में लगने से मनुष्य मर जाता है परन्तु और जीवों को कम हानि पहुंचती है अन्य २ जीवों में भी आश्चर्यित गुण देखनेमें आते हैं जैसे सर्प के काटने से घीन्धू नहीं भरता और घीन्धू के डंक मारने से सर्प तत्क्षण तड़कड़ा कर मर जाता है । कम मात्रा अफीम के देने से कूकुर नहीं मरते परन्तु उतनाही मात्रा कुबला खिला देनेसे कुत्ते भूंक २ कर मर जाते हैं मन्दर को किसी किसम का विष कैसाहू यस्तु के साथ मिश्रा के देओ कभी न खायगे इत्यादि अनेक तिलिस्म हैं न सालून परमात्मा ने किसे २ अभिप्राय से ऐसे पदार्थों को उत्पन्न किया है ॥

आयुर्वेद में भी विष का दो भेद कहा है, स्थावर और जंगम । वृक्षादि से उत्पन्न विष को स्थावर और सर्पोंदि जन्तित विष को जंगम विष कहते हैं उनमें प्रथम सर्प विष की चिकित्सा और निदान लिखा है । सर्पों की अनेक जाति है तिसमें मुख्य नव जाति है उसमें भी तीन भेद हैं (भोगी) कण वाले सर्प ये घातात्मक होते हैं इनके काटनेमें घात को कोप करके विष चढ़ता है (नखल्ली) जिनके शरीर पर गोल २ चहे होते हैं पित्तात्मक हैं इनका विष पित्तात्मक है विष पित्त विकारकारक होता है (राजिल) उन्हे कहते हैं जिनके शरीर पर रेखा होती है कफा-

स्मक होते हैं कफ विकार सहित इनका काटा हुआ विष चढ़ता है । इसके अतिरिक्त और भी विष युक्त अनेक सर्प होते हैं ॥

सर्प दंश विष देशकाल भेद से असाध्य ।

पीपलवृक्षके नीचे, देवालयमें, बांघीमें, संध्या समय और चौराहे पर काटने से तथा नख और नर्म स्थान में हँसा भया मनुष्य शीघ्र मर जाता है । अजीर्ण, प्रमेही कुष्ठी घायवाला अति-गरम मिजाजवाला बालक बृद्ध और अति दुर्बल को सर्प दंशन करे तो असाध्य जानना । ज्योतिष में लिखा है कि भरणी, मघा, आद्रा अस्लेखा मूल, कृत्तिका यह नक्षत्र और पञ्चमी तिथिमें सर्पसे काटा भया मनुष्य असाध्य होता है ॥

सर्प से काटे हुये विष में आठ वेग (लहर) आता है प्रथममें संताप, २ में देह कांपना, ३ में दाह, चौथे में विहेश हो के गिरना, ५ में मुँहसे फेन निकलना, ६ में स्कन्ध टूटना, ७ में लङ्घीभूत होना और ८ में मृत्यु । प्रायः देखने में आया है कि सर्प दंशित मनुष्य के चाबने से निम्न पत्र की तिक्तता नहीं बाध होती है ॥

आयुर्वेदीय मत से सर्प विष की चिकित्सा ।

हाथ पैर यौगह किसी स्थान में सर्प काटे तो अति शीघ्र उसके किंचित कटु में खूब कसके डोरी से बांध देय और सलाका से दाग दे जहां बांधने की जगह न हो तो दंशित स्थान को खुरी से खीले, लाहे की सलाका खूब लाल करके दाग देय और तूंची आदि से हवा खींचे । एक स्थल में यह लिखा है कि जो सर्प काटे उस सर्प को तुरन्त पकड़ के दांत से काटना अथवा एक मही के डेले को दांत से काटने से जहर नहीं चढ़ता ॥

जय देखे कि जहर समस्त शरीर में फैल गया है तो हाथ पाद और शिरा का घेघन करना कारण यह कि रक्त के निकलने से विष निकल जाता है ॥

या दंशन के चारों ओर तूँबी लगाय के कुछ रक्त निकालना और विष नाशक औषधों का लेप करना दूध पानी पिला के घर घर घात कराने से भी फायदा देखा गया है । जो फणवाले बड़े विषधर सर्प काटा हो तो जो आठ बेग पूर्व में हम कह आये हैं पहले बेग में उपरोक्त चिकित्सा कर फस्त देना, दूसरे में विषघ्न औषधों का घी दूध और कुछ शहद में मिला के पिलाना तीसरे में विष नाशक नश्य और अंजन लगाना, चौथे में दूध पानी पिला के औषध से घनन कराना, पाँचवें और छठवें बेग में शीतल उपचार करना या पिचकारी द्वारा कहा जुलाम देना और सातवें बेग में तेज अंजन तथा मस्तर से मस्तर में काकपद करके रक्त रहित भाँस छीलना, गभिणी बालक और बटु इनके सर्प काटा हो तो फस्त न दे के सटु सपाय से विष दूर करना । बकरा आदि जानवरों के सर्प काटे होय तो मनुष्य के समान रक्त निकालना, घैल और पोहे के दूना, भैंसे और ऊँट के तिगुना और हाथी के चौगुना रक्त काटना चाहिये । जिन मनुष्यों की प्रकृति अति गर्म हो रक्त न निकाल के शीतल उपचार करना ॥

रत्नावली ग्रन्थ में लिखा है कि मेघ की संक्रान्ति के आरंभ में एक मसूर और दो नाँवके पत्र खा लिये तो वर्ष भर उसे विष का भय न हो ॥

कुछ दिन हुए कि मेरे भक्तान में एक ब्राह्मणी टिकी थी एक दिन उसे प्रातःकाल दक्षिण हस्ताकुली में सर्प ने काटा और चल दिया, परीक्षा के लिये निम्न पत्र दिया गया आधे पाय खागईं मुख कंडू न हुआ तब मालूम किया कि बड़ा जहरीला सर्प था खैर, चिकित्सा होना आरंभ हुआ कुछ फायदा न हुआ अन्त में बेहोश होगईं आँठ और नख काले पड़ गये मुख से फेन बहने लगा और मुख जकड़ गया लोगों को यह राय हुई कि रोगी दरवाजे पर लेटाय दी जाय और चारों तरफ गुन कर दिया कि सर्प के ज़ाड़ने एवं दया जानने वाले आवें वैसेही किया गया बड़ी भीड़ लगी कितने ज़ाड़ने फूँकनेवाले आये कोई कान में मन्त्र पढ़के चिल्लाता है कोई जल के छिटे मारता है इतने में पुलिस के दूत, दरोगा साहेब भी आ पहुँचे कहा कि इसे अस्पताल भेजो । उन्हें समझा दिया गया वे भी

बैठ गये, एक मुसलमान जाति का कनाई भी खड़ा सब चरित्र देख रहा था उसने कहा भाई अन्त है अपना २ करतब कर ले तो हम भी कुछ यत्न करें यह कोई न कहे कि हम यत्न नहीं करने पाये, सब लोगों ने कहा भाई सब उपाय हो चुके तुमसे भी जो कुछ करते बने करो उसने कहा अच्छा हम जाते हैं एक बगिये के दूकानमें कुछ सीदा लिया हाथ में मलते हुये आया और कहा कि दो आदमी इसका हाथ पांभी और दो आदमी पैर पांभी, कुछ चुकनी दिया कि उसे पानी में घोल कर पिला देओ, कहने के मुताबिक पिला दिया गया पांच मिनट के बाद कुछ हाथ में लिये या रोगी के नाक में डाल नाक पांभ लिया, रोगी पांच मिनट तक कुछ नहीं सनकी बाद तबफुलाने लगी मियां ने कहा खबरदार ठोड़ना नहीं, चार मिनट के बाद मियां ने कहा अब अब छोड़ दो और मियां ने भी नाक छोड़ दिया औरत उठ बैठी और कहा अब हम अच्छी हैं मियां ने कहा इसे पाय, आघपाय घी पिलाओ आराम होगा, सब लोग चले गये ॥

इसको अत्यन्त चटकता सुई कि यह औषध तबसे जागकर लोकोपकाराने प्रकाश करें । यह तो हमको चिदित होगया था कि यह मुसलमान बगिये के दूकान से नीसादर मेल लिया था परन्तु उसने और किस चीज का मेल किया था मालूम नहीं । एक दिन उस मुसलमान को बुलाया उससे पूछा प्रथमतः उसने बहुत कुछ इनकार किया परन्तु अन्त में कहा अच्छा हम बताये देते हैं इसमें कुछ है नहीं तिनका ओंट पहाड़ है । कहा कि ३ भासा नीसादर प्रथम पानी में घोल कर पिला दे और पांच मिनट के बाद घूना और नीसादर दोनों बराबर वजन में छः छः भासा ले दोनों को एक में मिला पोतरी बना सुंघाये या जरा २ सा दोनों नाक में डाल नाक पांभलेय पांच मिनटमें रोगी उठ खड़ा होगा । पायक गया जब से इस गहौषधि को सुना है कोई सर्प दंशित मनुष्य नहीं मिला कि सरयासरय की परीक्षा करें लेकिन निश्चय होता है कि यह औषध अयश्व सत्य है क्योंकि बिच रोग पर हाकुरी में अमोनिया (घूना नीसादर) प्रधान औषध लिखा है ॥

को पाद दांत निकलता है और इक्कीस दिन में तालू में बिय आजाता है, काटने के समय बिय त्याग देता है परन्तु फिर नयी यैली में बिय एकत्रित हो जाता है पच्चीस दिन का बच्चा सर्प जहरीला हो जाता है और ६ महीने में केषुण त्यागता है ॥

दो सौ बीस पैंर सर्पों के होते हैं परन्तु ऐसे मूढम बाल सदृश होते हैं कि देख नहीं पड़ते चलने के समय निकल आते हैं नहीं तो भीतर पेट में छिपे रहते हैं, इनके शरीर में पशुली और सन्धि (जोड़) यह भी २२० होती हैं । जो सर्प वे समय पैदा होते हैं उनमें कम बिय होता है और वे सत्तर वर्ष से अधिक जीते भी नहीं, जिन सर्पों के दांत लाल पीले पीछे होते हैं वगैरे भी बिय बहुत कम होता है और वे हरपोकने होते हैं ॥

सर्पों के एक मुख दो जीभ बत्तीस दांत और बिय से भरी चार हाड़ होती हैं उनके नाम मकरी, कराली, कालिरात्रि, और यमदूती है । मकरी हाड़ का चिह्न भलि मूख मस्तर रा, कराली काक पादनख समान, कालिरात्रि टकार जस्तर सदृश और यमदूती कुछ गहिराय गिये और सप्त हाड़ों से छोटी होती है, इस से जिसको सर्प काटता है वह तत्क्षण मर जाता है तंत्र मंत्र औषध आदि कुछ काम नहीं करता । सर्पों की हाड़ों में सदा बिय नहीं रहता बिय के रहने का स्थान सर्पों के दहिने नेत्र के समीप है सर्प जब क्रोध करता है तब बिय नाड़ियों के द्वारा दाढ़ में पहुंच जाता है, अक्सर सर्प दबनेसे पुर्य घेरसे भयसे मदसे सुषा से बिय का खेग होने से और अपने बच्चों के रक्षा के लिये जीवों को काटते हैं । जो सर्प काटते ही पेट की ओर चलटा हो जाय तो जानना कि दबने से काटा है, जो घाय भली भांति न दीख पड़े तो भय से, रक्षा की भांति हाड़ लगे तो मद से, दो दाढ़ लगे तो घबहाने से और जिसमें दो दाढ़ लगे एवं घाय में रुधिर भर जाय तो बिय के खेग से काटा हुआ जानना इत्यादि और भी लक्षण इनके काटनेके हैं जिसे फिर कभी लिखेंगे ॥

रक्त शुद्धिकारक अर्क ।

फाल्गुनी की षष्ठ (गङ्गा किनारे कछार में होता है) रसयत, उसया, उन्नाय, मेंहदी का फूल, पित्तपापड़ा (सहतरा) पित्तपापड़ा का बीज, मेंहदी की पत्ती, सीसम का छाल, मुण्डी, छोटागोखुर, बर्ग सरफोसा, सिरसा, यकायन का छाल, गांवना, घहेरा, गुलदगध्वा, सिरसा का छाल और कचनार का छाल ये सब तीन २ तोला बहिनम सुर्ज, श्वेत चन्दन, रक्त चन्दन, और नींबू का फूल दो दो तोला, घुरादा भावनूस जयदा भावनूस का छाल, घबून का छाल, बड़ाहड़, और नींबू का छाल पांच २ तोला अर्क भस्म एकसेर और अर्क कासनी एक सेर इन सब दवाइयों को अधिकतरा कर डेग में एक दिन रात भिजा रखे दूसरे दिन थक यन्त्र द्वारा (डेग भस्मा) चारह सेर अर्क खींच ले ॥

सेवन करने की विधि ।

सबेरे दोपहर और शाम को गर्मात् दिनमें तीन दूधे भाघ २ पाव अर्क पीये और सात या आठ घंटे सबेरे दो तोला मक्खन (नयनील) में ६ मासा उपरोक्त १ लेप का चूर्ण या जिस कदर मुतासिब समझे फेंट कर जहां तक चमके रोग हो छेदन करे और शाध चंदेतन या कुछ कम जितने देर में कि मक्खन विपन्न कर शरीर में भीज जाय याद पोड़ी सी किसी रेत की मुलायम मृत्तिका उसी पर खूब मलकर खान कर डाले और पीछेसे कारयलिक सोप या अन्य साधुनसे मलकर फिर खान कर डाले साधुन न भी मले तो कोई दर्जे नहीं । सेवन के दो चार घंटे याद अथवा सन्ध्या समय उक्त तैल मर्दन के बाद भी खान कर डाले न इच्छा हो न करे (परहेज) तैल मिर्चा सटाई सिरका भांस मद्य स्त्रीमंसक शोष घूप अग्नि गुड़ बैंगन उड़द आदि चीजों का त्याग है, गेहूंकी रोटी, पुराने चावल का भात अरहर या मूङ्ग की दाल गी का दूध पूत मलाई लीकी कद्दू नेनुआ परवर पालकका साग इनकी तरकारी खावे । जब शरीरके दाग या मक्खन या फोड़ा पुन्नी जो कुछ हो मिलजुल निटगाय तो लेप लगाना छोड़ देय सिर्फ तैल मर्दन और अर्क पीना बाय बची

प्रकार एक मास पर्यन्त श्रीयध सेवन करनेसे रोग समूल नष्ट हो शरीर कुन्दन के समान हो जाती है जब देखे कि उपरोक्त श्रीयधों को सेवन करते हुये दश बारह रोज हुआ और कुछ फायदा नहीं जान पड़ता तो कोई उमदा हलका जुलाय या प्रथम खण्ड में लिखे अनुसार हकीमी जुलाय लेके तब श्रीयध सेवन करना आरम्भ करे चमड़े पर लगाने का लेप जो हम ऊपर लिख आये हैं अगर पांच चार दिन उसके लगाने से लाभ न हो तो इस चूर्ण का लेप करे ॥

खदिराद्यं चूर्णम् ।

पपरियाखैर (सफेद खैर) आचपाय, चीकिया सोहागा २ तोला, रांला धूम २ तोला, नैनुआ गन्धक २ तोला, कपूर २ तोला सब को महीन चूर्ण करले । थोड़े से पूर्ण को पानी में खूब महीन घोंट जहाँ तक शरीर में जोड़े फुन्वी या साज हो छेपकर दे और चार घंटे के बाद सायुन अथवा घेसन से मल कर पानी से धो डाले और बदन पोंछ कर २ नम्वर का तेल लगा दे इस प्रकार आठ दश रोज करने से जमे रोग नश्वराम होता है । इस चूर्ण से खाज, सेबुआ, अपरस, और उकयत रोग भी नशीम्य होते हैं ।

त्रयाराक्षस तैलम् ।

पारा, गन्धक, हरिताल, सिंदूर, सैनसित्त, लहसुन, खज्जनाग, और तास का बुरादा ये सब श्रीयध दो २ तोला ले पीली सरसों का तेल एक पाव, एक तास पात्र में उपरोक्त दवाइयों के चूर्ण और तेल डाल ६ दिन तक घाम में रख छोड़े । इस तेल के लगाने से कफ बिकार से दाद, खाज, लालमंडल, नमूर और विषचिंका रोग नश्वराम होता है ।

निम्बाद्यं चूर्णम् त्रिपमज्वराधिकारे ।

निम्बपत्र (नीम के सूखे पत्ते) १० तोला, त्रिकला (हयबहेवा आंघला) ३ तोला, त्रिकटु (शोठ पीपर मिर्च) ३ तोला, अजवाइन ५ तोला, लवण त्रय (कालानीम संधानोन बिहनीन) ३ तोला और जवाखार २ तोला

इन सब दवाइयों को कूट करपरछान कर चूर्ण बना ले । इसका मात्रा आधे मासा से तीन मासा पर्यन्त है । उक्त चूर्ण को प्रातःकाल और संध्या समय सेवन करने से एकाहिक अंतरा-तिजारी और चौथिया ज्वर छूट जाता है, ऐसा कई बार देखा गया है । पथ्य-भूंग की दाल पुराने चावल का भात गेहूं की रोटी और दूध मिश्री ।

नारायण तैलम् ।

काले तिल का तेल १६ सेर, घेल एल की छाल, अंगेय (इसी को भग्निसंघि गनियारी या कहीं २ भरनी कहते हैं) की छाल, (श्योनाक) सोनापाटो (पांहर) नींबू की छाल, गन्ध प्रसारिणी, असगंध, छोटी भट-कटैया, बड़ी भटकटैया, (बग भांटा) बरियारा की जड़ अतिथला, (ककही) गोखरू और गदापूर्णा की जड़ यह सब दवाइयां दश २ पल अर्थात् प्रत्येक औषध डेढ़ २ पाय तीन २ तोला चार २ मासा हुआ । सब दवाइयों को जघकचरा करके ६ गन १६ सेर पानी में रात को भिजा दे सवेरे जोसदेवे जब ६४ सेर जल रहजाय गलकर छानले तैल को कड़ाही में हाल चूल्हे पर चढ़ाय मंदाग्नि आंच से उसमें थोड़ा २ काढ़ा दे के पचावे । जब दो सेर पानी जरने को रहजाय तब इन औषधों का कल्क बनाके उसी में हाल दे सींक, देवदारु काष्ठ, जटामासी, छरीला, दुधियायच, लाल चन्दन, तगर, कूट, छोटीलायची, पर्णी चतुष्टय अर्थात् सरिवन, विधियन, धनवर्दी और धनभूंग, रासना, असगन्ध, सेंधानोन, और गदापूर्णा की जड़ यह सब दवा जाठ २ तोला महीन कूट पानी हाल मिश्रण पर पीस लुगदी बना तैल में छोड़दे और ऊपर से १६ सेर शतावरकारस पचावे, यदि ताजा शतावर मिले तो कुचल कर रस निकाल हाले सूखी हो तो आठसेर शतावर को कुचल कर चौसठ सेर पानी में पकावे, जब १६ सेर जल रह जाय गलकर छान उसे तैल में हाल पचावे, जब थोड़ा जल रहजाय तब नी १ पत्रा मकरी का दूध चौसठ सेर उसीमें पचावे जब दूध मिलकुल जल जाए, दियल तेल गाढ़ रहगया हो तो उतार ले घीतल में भर काग लगा देय । इस तैल के पीने से पिचनारी से और मर्दंग करने से जुंझ सर्वाङ्ग

वायु घोड़ा हाथी और मनुष्य का भी रोग आराम होता है । इसे अतिरिक्त निम्निनत्य, ठोढ़ी अकड़जाना, दन्तरोग, गले का दर्द, जम्ब जिह्वा, अङ्ग का सूखना, पुराने ज्वर से दुर्बल, धातु की क्षीणता, घातन भण्ड वृद्धि, और आंत वृद्धि, इस तेल के मर्दन से निश्चय आराम होता है । हमारी राय में इस तेल को पीना उचित नहीं है ।

हिमसागर तैलम् ।

कालेतिल का तैल ४ सेर, सतायर का रस ४ सेर, पताल कुन्माण्ड का रस ४ सेर, आंवले का रस ४ सेर, सेनर के जड़ का रस ४ सेर, बड़े गोखरु का रस ४ सेर, नारियल का जल ४ सेर, और केले के वृक्ष का रस ४ सेर, गी का दूध १६ सेर (कल्कार्य द्रव्य) लाल चन्दन, सफेद चन्दन, तगर, कूट, मंजीठ, अजर, अटामासी, छरीला, मुलेठी, देवदारु, नख, हर्द, बरियारा, लोध, मोषा, दालचीनी, छोटीलायची, तेजपात, नागकेशर छींग, जावित्री, कसूर, पोई का फल, हरदी यह सब दो दो तोला लेकर पानी में पीस कल बनाय ले प्रथम तेल को भाँच पर चढ़ाय तब कल हाल ऊपर से घोड़ा २ सतायर आदि का रस डालता जाय जब सब अर्क जल जाय सिर्फ तेल मात्र रहजाय तो सतार लेय यह तैल उष्णवायुने नितने रोग हैं जैसे अंग दाह अंग सूखना शरीर से चिमरी का उड़ना लकवा गडिया आदि अनेक रोग आराम होते हैं यह अजमूदा है ।

अन्तर्दाह पर धान्यक हिम ।

प्रातःपर्युषितं धान्यं सलिलं सितयायुतं । अन्तर्दाहं हरेत्पीतुं दुःखं दुर्गार्चनं यथा ॥

रात में मिजाया चमिया प्रातः उसी जल में चिनी मिलाकर पीनेसे अन्तरदाह ऐसा नाश होता है जैसे भगवती के पूजन से दुःख नाश होता है (विधिः) दो तोले चमिये को चाककर पावभर जल में एक मुत्तिका मात्र में रातमें मिजा एक महीन बख से पाल का मुख टाँप ओसमें रख

देवे और सवेरे मशंकर छान ले २ तोला चिनी मिठा के पी जानेसे पेट का जलन कलेजा पक २ करना शिर की घुमरी आदि आराम होते हैं । इसी प्रकार २ तोला त्रिफला मिठा सवेरे चिनी हाल के पीनेसे गले का जलन पेटका हर समय घुड़ २ करना कठज और नेत्र व्यथा आदि विकार शान्ति होता है और आधपाय त्रिफला सेह सेर जलमें रात को भिगाय सवेरे उसके जल से प्रत्यह नेत्र मुख और शिर पीनेसे सनलवायु शिरकी घुमरी नेत्र का जलन घालों का जलद पकना और आतों का भूल जाना यह सब आराम होते हैं और उसे नेत्र और शिर सम्बन्धी रोग कभी नहीं होसक्ता परन्तु त्रिफला में तीनों चीजों को बराबर न लेने चाहिये । एक भाग इड़, दो भाग बड़ेरा और चार भाग आंवला त्रिफला कहलाता है ।

परोक्षित रुसे का जल ।

प्रत्येक बार अजमाने से देखा गया है अवश्य फायदा करता है

जड़ सहित रुसे के एक को छुला ले, जिस प्रकार लकड़ी जलायकर कुइला बनाया जाता है वना ले, रुसे की लकड़ी को जलाय देय जब देखे की सब जल गया धुआं नहीं है यीप्रही उसके ऊपर एक घर्तन ढांप दे ताकि राख न होने पावे । याद उस कोयले को ले एक पानीसे साफ कर एक घड़े में भर दे और घड़े के पेंदी में एक छेद कर कपड़े की बत्ती घना उसी में हाल दे, दो घड़े ताली और भी ले एक के पेंदीमें छेदकर बत्ती घना के हाल दे जिस प्रकार गरम दिनों में शिय की के ऊपर जल टपकाने को चढ़ा बनाया जाता है विसाही दो चढ़ा बनाले और तीनों घड़ों को रखने के लिये लकड़ी का फार्म (जिसा कि अंगरेज लोग पानी छानने के लिये बनाये रहते हैं) बनायाय लेय, उसके ऊपर वाले घड़े में पानी, बीच वाले घड़े में कोयला और सब के नीचे चढ़ा ताली रहे । ऊपर के घड़े से पानी कोयले वाले घड़े में आयेगा और कोयले वाले घड़े से जो पानी टपक कर नीचे गिरेगा वही पानी पीने लायक है । जब प्यासलगे वही पानी पीये और चीये आठवेंदिन कोयला बदल दिया करे इस पानी से किसाह पुरानी खांसी व दमेका रोग हो आराम होता

है; परन्तु काँस, स्वास-रोग में जो पथ्याऽपश्य है उसी पर चलना उत्तम होगा ॥

त्रिकले के स्वरस में ओदी हरदी को रस अथवा निम्ब का रस और शहदे डालकर पीने से कमल रोग नाश होता है ॥

निम्ब पत्र स्वरस-मोक्ष के पत्र का स्वरस १ तोला शहद ३ मांसा दोनों को मिला कर पीने से अनेक प्रकार के चर्म रोगों का आराम होता है । निम्बपत्र रस दो तीन बिन्दु नेत्र में टपकाने से नेत्र की दुरखी कैसाहू पुरानी हो और जोला माड़ा कट जाता है ॥

तुलसी के पत्ती का स्वरस ६ मांसा निर्व का घूर्ण ४ रत्ती दोनों को एकत्रित कर पीने से क्षिपमज्वर (जो ज्वर जोड़ा देके जाता है) आराम होता है, यदि एक समय को पीने में लाभ न दीख पड़े तो दिनमें तीन दफे, पूर्वोक्त प्रकार तुलसी पत्र स्वरस पीने से निस्सन्देह क्षिपमज्वर छुट जाता है ॥

डाकुर लोग भी निम्ब को ज्वराधिकार में प्रायः देते हैं डाकुरी में निम्ब, छाल, पत्र, और तेल भी काम में लाते हैं । क्रिया, बल कारक सङ्कोचक, रुमिनाशक और ज्वर में विलक्षण उपकार करता है । डाकुर फणिस साहय ने इसे सिनकोना बार्क और आर्सेनिक के साथ परीक्षा करके देखा है वे अपने किताब में लिखते हैं कि हमने ६० ज्वरादि रोगी को सिनकोना प्रयोग करके छः दिन के मध्य में ४६ जन को आराम किया और ३८ रोगी को आर्सेनिक प्रयोग से छः दिन में २९ जन को आराम, लाभ पहुंचाया, परन्तु १३४ रोगी को निम्ब छाल प्रयोग से छः दिन के मध्य में १०८ जन आराम हुये, इसके अतिरिक्त रोगान्त दुर्बलता में बल कारक हो-उपकार करता है । अब देशी औषध का गुण डाकुरी औषध से अवश्य अधिक है इसमें सन्देह नहीं रहा ॥

टिंचर आफ निम्ब के बनाने की विधि ॥

निम्ब की भीतरी छाल २१० औंस (११ छटांक)
 परीक्षित घुरा (स्प्रिट घाहेन) १ पीड (माघ सेर)

शोरा का मारारंगा बाधपाय और शुद्धताप की हरताल आध पाय दोनों को सरलमें डाल कागदी नीयू के रसमें एकपहर घोंटा मोला बनाय शराय सस्पुट में यन्दकर गजपुट में फूंक देय, जब शीतल हो जाय मोले को निकाल एक तोला फिर शुद्ध ताप की हरताल दे कागदी के रस में एक पहर घोंट पूर्वोक्त प्रकार सस्पुट यगाय गजपुट में फूंक देवे । इसी तरह प्रत्येक घोर एक २ तोला हरताल दे नीयू के रसमें घोंट १० गजपुट की आंच देनेसे निरुत्य भस्म होगा । निरुत्य भस्म उसे कहते हैं जो मित्र पञ्चक से भी न जीवे ॥

मित्र पञ्चक—घृतसहित गूगल पुंचपी और सोहागा इनको मित्रपञ्चक कहते हैं जिस धातु की कच्ची या पक्की की परीक्षा करनी हो उसकी भस्म में उक्त पांचो वस्तु मिलाय चरिया में धर कर गलाने से कच्ची धातु जी उठती है और जो निरुत्य भस्म है कभी नहीं जीती । जो धातु मित्र पंचकसे जी उठे उसमें शुद्ध आवला सार गन्धक समानभाग देकर चीकु-कार के रस में एक दिन सूख घोंटे और सस्पुट में यन्दकर गजपुट में फूंक दे तो निरुत्य भस्म हो ॥

पूर्वोक्त प्रकार से भस्म किया हुआ रांगा पथ्य सहित कुछ दिनों सेवन करने से संपूर्ण प्रमेह मात्र रोग नाश होता है । ये आपनी शक्ति से दाह पांडु प्रमेह कृमिरोग को नाश कर बुद्धि पराक्रम और कांति को प्रकाश करता है । इसकी मात्रा दो चायल से इरती तक है, सबसे संतान अनुपात है कि शहद के संग घोंट कर कपूर से गी का दूध प्रताशा डाल के पीवे ॥

सौभाग्य शुक्ठीपाक ।

इसे शुद्धाग सोठ भी कहते हैं; यह पाक प्रसूता स्त्रियों के लिये प्रति लाभकारी है । चाहिये कि बच्चा जनने के बाद स्त्रियों को आज-याइन सोठ गुड़ आदि न खिलाय इसी को बना के खिलावे तो बालक भी आरोग्य रहे और धात्रीके शरीरमें किसी प्रकारका रोग भी न हो ॥

शोंठ घैतरा	१॥ पाय	मोघा	१॥ तोला
यकरी का दूध	५ सेर	खस	१॥ तोला
घी गी का	१ पाय	गामोरी असगन्ध	२ तोला
चिनी	२॥ सेर	सफेदचन्दन	१ तोला
दालचिनी	१॥ तोला	काला जगर	१ तोला
तेजपात	१ तोला	लैंग	१॥ तोला
छोटी लायची	२ तोला	शतावर	२ तोला
जागकेशर	१॥ तोला	सफेदमुसली	२ तोला
धनिषां	१॥ तोला	सोंठ	२ तोला
सफेदजीरा	१॥ तोला	पीपर	१ तोला
स्याहजीरा	१ तोला	निर्बं	१॥ तोला
शीफ	१ तोला	जायफल	१ तोला
अकरकरहा	१॥ तोला	सिंचाड़ा	२ तोला
जायित्री	१ तोला	कंकोज	१॥ तोला
बिधारा	१ तोला	अजमोदा	१ तोला
कमलकहे की गरी	१॥ तोला	मुनक्का	१ छंटाक
त्रिफला	२ तोला	किसमिस	२ छंटाक
परिभारा की जड़	२ तोला	अखरोट	२ छंटाक
पिपरासूल	१ तोला	यदाम	१ पाय
चाव	१ तोला	पिल्ला	१ पाय
शीता	१ तोला		

सब से प्रथम सोंठ को कूट कपरखान काछे और दूध को कढ़ाई में
 ढीटावे जब आधा दूध जल जावे उसीमें धुकी हुई सोंठ डाल देवे और
 फरछुलीसे घराघर चलाता जावे जिसमें दूध जले न । जब दूधका खोया
 हो जावे कढ़ाई छूए से सतार लेवे और खोया अलग कर फिर कढ़ाई
 छूए पर चढ़ाय घी डाल दे । जब खूब गरम हो जाय उसीमें खोये को
 सूख भूँज लेवे, बाद साक कढ़ाई में चिनी डाल चासनी बना ले और
 समस्त दवाइयों को कूट कपरखान कर और मेवाओं को साक कतर कर

अति शीत मिजान वालों के लिये ।

केशरावलेहः ।

छोटी पीपर पूर्ण	१ पाय	कचूर	३ मासा
उत्तम केशर	२ छंटाक	शोंठ	८ मासा
गी का दूध	३ सेर	घनिपां	१ तोला
गी का घी	३ सेर	अंसलोचन	२ तोला
मिश्री	२ सेर	चिंघाड़ा	१॥ तोला
तन	१ तोला	कसेक	१॥ तोला
पल्लव	१ तोला	मोषा	१ तोला
छोटी लापनी	२ तोला	मोचरम	१॥ तोला
माणिक्यर	१ तोला	विधारा	१ तोला
लिंग	१ तोला	देवदारु	१ तोला
पिपरामूल	६ मासा	तगर	१ तोला
नीला	४ मासा	जयावन	६ मासा
जायफल	१ तोला	काला अमर	८ मासा
गान्धारी	१ तोला	कमल गठे की गरी	१ तोला
शतावरी	२ तोला	श्री आंव का अम्लक	६ मासा
अमरगन्ध	१॥ तोला	पारदमण्डित कांतीसार	
बड़ा गोशुक्र	१॥ तोला	भस्म	४ मासा

पीपर का पूर्ण और केशर सूकर दोनों को दूध में पचायलेप जब खाया हो जाय घीमें भूजले और मिश्री की चामनी बना ले परन्तु चामनी बहुत गाढ़ी न हो नानिन्द बहुत करहे बाद उसी चामनी में खाया और उपरलिखित दवाइयों को कूट कपरछान कर मिला के चोटले । इसका मात्रा ३ मासा में तोला पर्यन्त है बलानुसार मात्रा बना ले ॥

काश्मीरकावलेह्यायं दुर्बलानां यत्प्रदः ।

क्षीणेन्द्रिया नष्टशुक्रा यत्प्रमांसचिवर्जिताः ॥

अत्राय रहिता नात्र धानुवृद्धि करः परः ।

यह केशर का बखलेह दुर्बलों को बल देने वाला जिम मनुष्यों की इन्द्रियां कमजोर घातुक्षीण या शरीर दुर्बल और बलहीन हों या घट रति शक्ति रहित हो गया हो उन्हें आरोग्य करता है परन्तु ठण्ण प्रकृतिवालों के लिये लाभदायक नहीं होगा ॥

मेरी प्रतिष्ठा पाठकगण को अवश्य स्मरण होगा, ग्रन्थ का नाम सिर्फ प्रमाण के लिये दिया जाता है, विषय चाहे जिस ग्रन्थ का हो बिना परीक्षा के नहीं लिखा जाता ॥

जामुन, आम और आवला इन तीनों द्रव्यों के पत्तियों का रस दो तोला शहद चार मासा मिला कर दोनों समय पीने से बहुत दिनों का भांव लोहू का पड़ना शीघ्र आराम होता है । वैसाही बड़ल के छालका स्वरस शहद मिला के पीने से पतला दस्त गाढ़ा होता है ॥

**आर्द्रकस्वरसःक्षौद्रयुक्तोवृषणवातनुत् । श्वासका-
साऽहचोहन्तिप्रतिश्यायंध्यपोहति ॥**

आदी को कुचल कर समका रस निकाल दो तोले रस में ३ मासा शहद मिला कर पीने से शीत सम्यन्धी कोले (माधनजूब) का सूजन दर्द दना खांसी नाक का बहना आराम होता है आदी और शोंठ इन द्रव्यों का व्यवहार सिवा भारतवर्ष में ही अन्य द्वीपों में नहीं ॥

भार्यावर्त में जाने जाने के कारण कुछ बिलायतमें भी शुष्क आर्द्रक (शोंठ) का प्रसार हो चला है पर बहुत कम और इसके गुण में लिख भी दिया है जिसे नीचे प्रकाश करेंगे पाठकगण को यह भलीभांति मालूम होगा कि आदी और शोंठ यह दोनों एकही वस्तु है गीले कन्दको आदी बोलते हैं सूखे को शोंठ, इसी हेतु से निघंटु में लिख भी दिया है ॥

येगुणाःकथिताःशुद्ध्या स्तेऽपिसन्त्याऽर्द्रकेखिलाः ॥

जो जो गुण शोंठ के कहे हैं वेही सब आदी में भी जानना ॥

आदी का गुण गर्म तीक्ष्ण कटु और पचनेपर कुछ मोठा रुख तथा
घात कफ का नाशक और क्षुधाकर है ॥

भोजनाग्रेसदापथ्यलवणाद्रकभक्षणम् । अग्निस-
न्दीपनं रुच्यं जह्वाकंठावशोधनम् ॥

भोजन के पहले आदी नोन का खाना अग्निदीप्त भोजन में रुचि
जीम और गले में जपटा हुआ कफ साफ होता है । परन्तु निम्नलिखित
रोग तथा समय में आर्द्रक सेवन भावप्रकाश में निषेध किया है ॥

कुष्ठे पाण्डू मये कृच्छ्रे रक्तपित्तत्रणे ज्वरे । दाहे नि-
दाघशरदौ चैव पूजितमार्द्रकम् ॥

कोढ़ पाण्डु बुजाक प्रमेह रक्तपित्त फोड़ा घाय ज्वर और दाह इन
रोगों में तथा गर्मी और शरत् ऋतों में आदी न खाना चाहिये ॥

मेठिरिया मेड़िका से शुंठी का गुण ।

अंगरेजी में शोंठ को जिझुर कहते हैं । क्रिपा, स्याकर उत्तेजक
और वायुनाशक । अग्नि साक्षात् सेवन से पाकाशयने-कलन प्रोथ करता
है । यद्यपि से लारा निस्सरण अर्थात् राल का बहना, और वायु प्रयोग
में चर्मे में उपता प्राप्त होती है । डाकूर टन्यूज का वाक्य है कि लवीन
नेत्ररोग में शोंठ स्थानिक प्रयोग अति लाभदायक होता है । समया तेज
टिझुर जैसे शोंठ का चूर्ण एक भाग और स्पिरिटवाइन दो भाग दोनों
को एकत्रित कर कपाल में मालिश करे तो उससे पञ्चम तन्त्र सम्पूर्ण
उत्तेजित होने से उपकार होता है । पेट फूलन या उदर शोथ घसाल
दर्द में शोंठ का टिझुर पिलाने से फायदा करता है और दस्तावर औ-
षध की उपता दमन के लिये प्रायः शोंठ गिला देते हैं ॥

डाकूर प्यारेरा कहता है कि शिर दर्द में शुंठी का पलस्तर शिर
पर लगाने से बहुत फायदा होता है दांत के दर्द में शोंठ जपया जद-
रण चबाने से राल बहकर दर्द कम हो जाता है । सम्पादक सत-संयकार

का यह भूल बहुत भारी है कि, वक्त गुण प्रकृति विशेष पर नहीं दित-
लाया क्योंकि "यद्वायोपश्यं तत्पित्तस्यावध्यम्" जो औषध वायुनाशक है
अवश्य पित्तघटक या पित्तविद्वेषक होगा, बहुत कम औषध है जो तीनों
दोषों को समन करे । शुष्ठी पित्तरक्त प्रकृतिवाले को लाभकारी कदापि
नहीं हो सकती ॥

**खट्वादिच्छिन्नगात्रस्य तत्कालं पूरितो व्रणः । गाङ्गेरुकी
मूलरसैर्जायते गतवेदनः ॥**

शस्त्र आदि से कटे हुए घाव में यदि अभी समय आइए गुलसकरी
के जड़ का रस निकालकर भरे तो औषधी दर्द जाता रहै । और कोई र-
टीकाकार ने इसी श्लोक का अर्थ इस प्रकार बिना है । शस्त्रके कटे घाव
में यदि बरिधारा के जड़ का रस डाले तो औषधी घाव शुष्क हो जाय,
परन्तु यह ठीक नहीं है । दर्द निस्सन्देह जाता रहता है ॥

पुटपाकविधिः, शार्ङ्गधर से ।

पुटपाकस्य पाकोऽयं लेपाऽस्याङ्गारवर्णता । लेपं च द्वयं-
गुलं स्थूलं कुर्व्याद्वयं गुलमात्रकम् । काश्मरीवटजम्बादिपत्रै-
रावेष्टयत्नतः । पलमात्रो रसो ग्राह्यः कर्पमात्रं मधुक्षिपेत् ॥
कत्कचूर्णाद्रवाद्यास्तु देया कोलमितायुधैः ॥

रोग नाशक तानी औषधी ले उसे शिण पर पीछ मोला बना से
तिसपर सम्पारी, गरुद जामुन इन तीनों पत्तों में से किसी पत्तका पत्र
को न हो लपेट होरे से बांध एक कपरीटी कर ऊपर दो कंगुल की
मुटाई माटी लपेट बाँधे से मोटे कपड़ों के बीच में धर कर फूंक देय कट
ऊपर की मृत्तिका पक जाय • अग्नि से निकाल कुछ शीतल कर कोला

• यहां पर "लेपस्याङ्गारवर्णता" जय ऊपर की मृत्तिका ऊपर
(अग्नि) के समान लाल हो जाय तब मोलेको निकाल ले यह उक्तम कही
है, क्योंकि अधिक ताप से रक्त भी जल जाता है इसी लिये, चिकित्सा
में लिप्त मृत्तिका को अघपका कर लेना चाहिये ॥

तोड़ भीतर की सुगदी छे मोटे कपड़े में धर रूख मलकर रस निचोारि छे यस उसी की पुटपाक कहते हैं । पुटपाक के रस का मात्रा अर्द्ध तोळे से तीन तोला पर्यन्त है और उसमें शहद डालने की मात्रा १० मासा है यदि कोई घूर्ण अर्क आदि मिलाने की क्रिया लिखी होतो आधातोला छाले ॥

कुरैयापुटपाक संघातिसार पर ।

कुरैया एक वृक्ष का नाम है जिसकी खीनी में पन्द्रजव होता है । कुरैया की ताजी आधपाय छाल छे गिल पर रख चावल के धोवन में घोंट कर गोला बना छे और उसपर आमुन का पत्र लपेट सूख से आंध फिर रोहू का आटा खान के लपेट याद दो अंगुल माठी लपेटे और बिनुये कंडे की आंध में पका ले तत्पश्चात् अग्नि से बाहर कर गोला कोड़ ४ तोला शहद छाल दोनों समय पीने से बहुत दिनों का कांठन भी अतीसार रोग आराम होता है । चार तोला रस की मात्रा यह जवान ले लिये है ॥

उसी प्रकार ताजी घेल का पुटपाक तैयार कर ३ मासा मोचरस का घूर्ण मिलीय सातदिन दोनों समय खाने से कष्टसाध्य अतीसार आराम होता है ॥

पके अनार के पुटपाक से भी अतीसार आराम होता है ॥

हृदय शूल पर हिरन शृङ्ग पुटपाक ।

हिरन के सींग को महीन २ टुकड़े कर शराय सम्पुट (दो व्यालीमें बन्दकर) में धर ऊपर से तीन कपरीटी कर घाम में सुखाय १० सेर कंडे के बीच में रख फूंक देय जब शीतल हो जाय सम्पुट से भस्म ले कागदार गोथी में रख दे इसका मात्रा आधा मासा से तीन मासा पर्यन्त है । दो तोला माय के घी के साथ उक्त भस्म दोनों समय पीने से हृदय शूल घाली का दर्द जिसे वेद्यक में उरबल कहते हैं पांच मास दिनों मिलने।

से निश्चय आराम होता है इस अपूर्व औषध से हमने अनेक रोगियोंको आराम किया है ॥

तंडुलजल (चावलका धोवन) विधिः ।

कंडितंतंडुलपलं जलेऽष्टगुणितेक्षिपेत् ।

भावयित्वाजलग्राह्यं देयंसर्वत्रकर्मसु ॥

तीन तोला चावल पुराने चावल को अच्छकचरा कर (चूरा न होने पावे) सवापाव पानी में सत्तिका पात्र में रात को भिजा दे सवेरे मल कर छान लेय । आवश्यक कार्य में एकही घंटे भिजाकर जल लेलेना कोई अनुचित न होगा । यही जल सर्वत्र कर्मों में दिया जाता है ॥

इन्फ्लिउञ्जा ।

अङ्गरेजी बुखार ।

सुगते हैं इस ज्वर का जन्म इटाली में हुआ है इटालीसे रूस, रूस से इङ्गलैण्ड, विजापल से आर्यावर्त में आगमन हुआ है । भारतमें कोई भी ऐसा अनुप्य है जिसे यह ज्वर न हुआ हो । यह एक प्रकार का सार्थ देशिक सर्दी मूलक ज्वर है, सर्दी मूलक से शीतज्वर न समझना, पित्त सम्बन्धी भीतरी गर्मी और ऊपरी सर्दी के संयोग से यह ज्वर जाता है यत्कि न्यूनाधिक तीनों दोष के लक्षण मिलते हैं ॥

कोई का मत है कि यह रोग विशेषकर विष दूषित वायु शरीर में प्रविष्ट होने से यह रोग उत्पन्न होता है । कोई कहते हैं कि (व्यरक-टेरिया) नामक एक सद्भिजाणु के शरीर में प्रवेश करनेसे यह रोग होता है । कोई इस रोग को (स्पर्श श्वाभक अर्थात् छुतहा रोग कहते हैं और कोई कहते हैं कि यह स्पलेरिया से जन्म ग्रहण करता है जो हो चाहे जहाँसे आया हो अब तो समस्त भारतमें घमणजरी सदा राह है बालक पृष्ठ पुत्र किसी को नहीं छोड़ता, जिसको जहाँ ही पाया पर पटका । किसी को दोही चार दिन में छोड़दिया, किसी को सहीनों भुगाया,

सगर कोई ज़राभी घूँ किया तो फिर प्या यगालय का न भेगा तो मैं मरू
तो उसे अथप्रयही बना दिया ॥

इन्फ़्लुएन्ज़ा ज्वर का लक्षण ।

इसका आगमन एक सप्ताह नहीं है । यह प्रकृति अवस्था बलाबल
पर निर्भर है देखने में जाना गया है कि पहले थोड़ी हलारत मालूम हुई
बाद हड्डियों में दर्द शिर भारी हाँप पाँव में ऐंठन, कुछ बमनेच्छा हो
फिर ज्वर तेज हो जाता है । कभी-कभारे घटन में दर्द जुड़ान शारी होके
तब ज्वर आया है ॥

विशेष लक्षण ।

तीव्रज्वर, हाड़ों जोड़ों और शिर में दर्द, हाँप पैर में काटन बिब-
निपा (जी मचलाना) नाड़ी बेगवान, त्वचा में जलन और जिह्वा शुष्क
होती है, कोष्ठबद्ध, या दस्त पतला, नाक बहना, खाँसी, ग्रांथ लाल,
नींद का न आना, अधिक निपासा, घेठ में दाह इत्यादि लक्षण होते हैं
इससे अतिरिक्त प्रलापादि और भी अनेक उपद्रव होते हैं ॥

चिकित्सा ।

प्रथम बलानुसार एक दो अथवा तीन दिन उपवास कराना, तीन
दिन से अधिक उपवास बल हानि कारक होगा और तीन दिन तक
कोई औषध न खावे बाद तीन दिनों के निम्नलिखित काय को दोनों
समय पीवे ॥

धनिपा	२ तोला	मुलेठी	१ तोला
पदमाप	२ तोला	वन्ताय	१० दाना
शाल चन्दन	२ तोला	मुनक्का	१२ दाना
गुलशनप्ता	२ तोला	गुर्ब	२ तोला
हसरान	२ तोला	निम्य खाल	२ तोला

सक सब औषधियों को ले अच्छकघरा कर दमात्रा बना ले, घृतिका
पात्र में एक मात्रा दवा को पावभर जल में हाल मंदगति में पचावे जब

आधपाय से कुछ अधिक जल पचजाय अग्नि पर से उतार शीतल कर छ नासा मिश्री हाथ के पिला देवे इसी प्रकार दोनों समय काढ़ा पिलावे और जब तक भूख न लगे खाने को न देवे । भूख लगने पर प्रथम साबुदाना पानी में पका मिश्री मिला के खिलावे, या मूंग की जूस देवे क्योंकि एकधारागी पेट भर खालीने से दुबारा ज्वर हो जाता है । उपरोक्त काय को पाँच छ दिन बराबर पीने से निस्सन्देह ज्वर गिर दूँ निद्रा नाश अङ्ग वेदना घनन आदि भारान होता है ॥

1. 1111 1111 1111

इन्फ्लुइन्जा से बचने की उपाय ।

इसमें सन्देह नहीं कि यह ज्वर ऋतु के परिवर्तन में सर्बदा हुआ जाता है इसीसे इस ज्वर को ऋतु परिवर्तनीय या कुष्मार कातिक मास में होने से शारदीय ज्वर कहा जाता है रहा कि, जब की यह अधिक और से अथ देशों में एकधारागी फैल गया और यूरोपीय चिकित्सकों ने इसका नाम इन्फ्लुइन्जा रक्खा । उर्दू (हिकमनरी) में इन्फ्लुइन्जा के नामे ओया लिखा है हिन्दी में यहाभारी की बिमारी कहते हैं ॥

इसे बचने की सहज उपाय यह है कि जिस समय ज्वर का आगमन देश में आरम्भ हो निम्नलिखित नियमों को गीघड़ी धारन करने से इन्फ्लुइन्जा के घाप को भी शक्ति नहीं है कि जो उसका एक बाल भी घाका करसके ॥

सब से प्रथम यह है कि जल बहुत विचार के साथ पिये, जैसे अनेक कूपों का जल पीना, तीन चार दिन का रक्खा हुआ जल, खालीपेट या सोते से शीघ्र ही उठकर या फल फलहरी खाके जल पीलीना । कहीं से पका हुआ आके जल पीना इत्यादि त्याग करे । एक कूप या नदी का जल छान के या जल को एक उषाल गर्म करके छान ले उन जल को भोजनान्त में या आवश्यकमें थोड़ा २ पिये । भोजन सवेरे नीचजेके भीतर और रात को आठ बजे करे । सान सात आठ बजे सवेरे गर्म जल से करे भोजन के उपरान्त या संध्या समय कदापि स्नान न करे । यद्यपि में

कोई बन्धन जरूर पहिरे रहे नग्न शरीर न रहे । खानेमें मूंग की दाल पुराने चावल का भात गेहूं जव्वे की रोटी गी का दूध घी लीकी नेनुभा परधर की तरकारी सेंधानेन होना चाहिये ॥

तेल मिर्ची मांस शराब ठंड आलू भाटा बहुत गरम मसाला साग पात इत्यादि भोजन तथा जून कजून भोजन क्रोध शोक मैथुन रात का जागरण यह सब त्याग करे ॥

वीर्य उत्पन्न करनेवाली औषधें और उपाय ।

तत्काल का दुड़ा गी का दूध जंटनी का दूध मिश्री पियाज दोनों बहमन तोदरी अरकी बादाम पिस्ता इन्द्रजी नारियल खड़ीला केशर जेठी-मधु दालचीनी शतावरी अंसगन्ध खूब पका आम को खा के दूध पीना भीठा अन्तार सेव तालमसाला गुलसकरी खालधान ठरद दूध गेहूंकी रोटी मक्खन घी दलाड़े, छोटीलायची सनध पर शीत भोजन मुलापस सेन प्रातःकाल चायु सेवन सुगन्धित तेल जगा के खान करना, और प्रसन्न कारक बिहारों से वीर्य उत्पन्न होता है ॥

वीर्य को गाढ़ा और पुष्ट करनेवाली औषधियां ।

सफेद मूचली स्याह मूचली एक वर्ष के सेमर वृक्ष का मूल सेमर का गोद, गोदवधूल कामराज वीरवन्द मखाना मोचरस पातालकुलड़ा यन्त्रलोचन शतावर कालीतिल अंसगन्ध सिंघाड़ा सालिवमिश्री लसेड़ा कुनीमस्तगी, इत्यादि ॥

हिकमत से प्रसंग की चाहना को बढ़ानेवाले द्रव्य ।

गी का घी गी अथवा भेड़ के दूध में छुड़ाया पका के पीना एकधर्य का बकरे का मांस मुर्गे तीतर बटेर गोरया का मांस मछली बदाम का हेलुना पिस्ता धिलगोजा सानव सक्ताकुल कुनीमन शकरकरहा गोखुल केवाखयीज और बहमन गोंठ तगर कस्तूरीमोती अंगूर नारियलकी गरी गलगम गाजर मूरीकीजह प्याज और इन्हों के घीन किन्दक हठ्युस्तमना युनीदान हाली दारकिनखिल खगखामसफेद गोंठ उसना करकस मस-

यासा मायासुतर जिरजीर सुरंजान फिस्तक हिनयून के बीज इत्यादि लेकिन सिर्फ यही नहीं कि उपरोक्त दो एक द्रव्यही के खाने से विषय चाह बढ़ जाय इसके और भी उपाय हैं जैसा सुश्रुत में बाजीकरण विधि में लिखा है ॥

भोजनानिविचित्राणियानानिविविधानिच । वाचः
श्रीत्रानुगामिन्यस्त्वचःस्पर्शसुखास्तथा ॥

यामिनीसेन्दुतिलकाकामिनीनवयौवना । गीत-
श्रीत्रमनोहारिताम्बूलमदिराःस्रजः ॥

मनसश्चाप्रतीघातोवाजीकुर्वन्तिमानवम् ।

चित्र विचित्र भोजन (दूध खीर मालपूवा मांस रोटी एवं सुगन्धित मनालों से धूपित दाल तरकारी आदि) तरह २ के पीने के पदार्थ जैसे भर्क गुलाब केवड़ा खस पक्के अमर का रस पौड़स इत्यादि । कानों को भाग्य देनेवाले वचन स्पर्श सुख (जिस चीज के छूने में त्यरा का सुख मिले) स्त्री कुशादि चांदनीरात नयवोचना स्त्री मनोहर गान यात्रा पानका यांहा उत्तमशराम पुष्पों की माला और मन का अप्रतीघात अर्थात् जिससे मन को दुःख न हो वह कर्म ये सब पुरुष के बीर्य युक्त और विषय चाह दृष्टि करने वाले हैं ॥

बहुतसे लोग ऐसे धातुक्षीण पुरुष हैं जो सदैव दधर सपर से दया मंगा कर खाया करते हैं परन्तु उन्हें फायदा नहीं करता है और यह अक्षर कहा करते हैं कि हमने सबोंका दयाखाया कुछफायदा न हुआ मय झूठे बिज्ञापन छपते हैं यह नहीं बिचारते कि सधेरा होतेही नेम लकड़ी की फिर पड़ती है दिन में दो घंटे भी आराम नहीं मिलते विषय चाह दृष्टि क्या पत्थर है। भीषण पथ्य के साथ सेवन करने से फायदा करता है ॥

कर्ममधुकचूर्णस्य घृतक्षौद्रसमांशिकं । प्रयुक्तैः प-
यश्चान्नानित्यवेगः स नाभवेत् ॥

मुलेठी का चूर्ण दशमांश, गक्खन या गी का ताजा घृत दशमांश।
शहद पांच मांश इन सबों को एकत्रित कर चाट के ऊपर से गी का
दूध मिश्री छाल कर कुछ दिन पीने से भीर उत्पन्न पच्य रहने से बीर्य
स्त्री प्रसङ्ग करने लायक निस्सन्देह हो जाता है ॥

गरीबी लटका ।

अश्वत्थफलमूलत्वक् शुंगासिद्धंपयानरः । पीत्वा-
सशर्कराक्षौद्रं कुलिंगइव हृष्यति ॥ विदारो मूलकत्कतु घृ-
तेन पयसानरः । उदुम्बरमितं भुक्त्वा वृद्धो पितरुणायते ॥
मापाणां पलमेकं तु संयुक्तं क्षौद्रसर्पिषा । अवलिह्य पयः पी-
त्वा तेन वाजी भवेन्नरः ॥ क्षीरपक्वांस्तु गीधूमा नात्मगुप्ता-
फलैः सह । शीतान् घृतयुतान् खादित्ततः पश्चात्पयः पिवेत् ॥
स्वयंगुप्तेक्षुरकयोः फलचूर्णसंशर्करम् । धारोष्णेन नरः पी-
त्वा पयसानक्षयं व्रजेत् ॥

इन दवाइयों में कोई भी एक बीपय नियमानुसार पच्य सहित
तीन बार महीने निरन्तर सेवन करनेसे निस्सन्देह बीर्य पुष्ट हो साधा-
रण क्षीयत्व नाश होता है ॥

पीपर वृक्ष जो गठीला और जिसमें लाही आदि कोई रोग न हो
उसका फल जड़का छाल दुनगा और भतरखान सब निलाके दो तोला
पाव भर गी के दूधमें पकाय ले बाद छान उसी दूधमें थोड़ा सक्कर शहद
मिला कर पीने से प्रसङ्ग करने का पुष्ट्यार्थ बढ़ता है । या पीपर वृक्षके

फल आदि चारो चीजों को ले छाया में सुखाय कूट कपरखान कर एक २ तोला की पुड़िया बनाले और नित्य सबेरे एक पुड़िया दवा खाके ऊपर से पाच आधसेर गी का दूध मिश्री युत पी जावे ॥

देा तोला ताजा पांतालकुम्हड़ा को शिल पर महीन पीस लुगदी बना लेवे, पाचभर दूध में एक तोला घी और एक तोला चिनी मिला लुगदी मुख में रख उसी दूध से सतार जावे । अगर एकबारमें सब लुगदी न निगला जावे तो देा तीन बार करके उसी दूध से सतार जावे तो कैसाहू बीर्य्य क्षीण क्यों न हो गया हो अवश्य कुछ काल सेवन करनेसे स्त्री का प्यारा बन सक्ता है ॥

उर्द का छिलका दूर कर चूर्ण कर लेय । उर्द का चूर्ण ४ तोला अथवा देा तोला घराबर के घी में चान चाट कर ऊपर से दूध मिश्री पीने से बल बीर्य्य का वृद्धि होता है ॥

गेहूं और केवाळ की बीज देा देा तोला दोनों को आधसेर दूध में मन्दाग्नि से पचावे जब नानिंद खीरके हो जावे देा तोला घी और चार तोला मिश्री मिला के खा जावे तो कभी बीर्य्य क्षीण न होय ॥

धनकेवाळ का बीज और तालमखाना दोनों को घराबर ले चूर्ण कर एक तोला अथवा छ मासा के अन्दाज खाकर ऊपरसे तत्काल दुहा दूध पीने से धातुक्षीण मनुष्य बीर्य्यवान होता है ॥

भांग खानेवाला बीर्य्य क्षीण बल हीन अथवा युद्धापा हो अर्थात् शीतल पदार्थों के सेवन से हानि पहुंचती हो उसके लिये यह मोदक राज प्राण है ॥

कामेश्वर मोदक ।

चूर्णांशंगगनंधनार्द्धविमलं गंधंचकुण्टामृता । मेथी मोचरसोविदारिमुसलीगोक्षुरकंचेक्षुरः ॥ भीरुश्रैवकसेरुकं यमनिकातालांकुरंधान्यकम् । यष्टीनागवलातिलामधुरि-

धानरी चूर्ण ।

जी गवौन प्रमेह की दूर कर योग्य का पुष्ट करता है ।

घनकेवाख के बीज की गरी, तालमखाना का बीज, मफेद मुमली, उटङ्गन का बीज, मोचरम, उटकटेरा की जड़ का छाल, यीजबन्द, बहु-
फल्लो, कमरकम शतावर, समुद्रशोष और सूखासिंघाड़ा सबको बराबर भाग
ले महीन चूर्ण करले हमका मात्रा २ माना से ६ मास तक है चूर्ण की
आधी निम्नी चूर्ण में निला मुख में रख पाचभर गी के दूध में पीनाथी
सिक्त सबेरे अथवा दोनों समय खानेसे निस्तन्देह उपरोक्तगुण होता है ॥

धातु पुष्ट पर मापादि मोदक ।

उरद की धुली हुई दाल का चूर्ण, गेहूं का सत्त, जव का सत्त, यह
तीन चीजें एक एक पाव, साठी चावल का चूर्ण आधपाव, छोटीपीपल
गो दूध में शुद्ध चूर्ण एक छंटाक घी तीन पाव, चिनी ५॥ सेर, प्रथम
सब चूर्णों को एकत्रित कर घी में सूख भूँजे जब सुरखी आजाय और
सुगन्ध उठनेलग्ने अग्नि पर से उतारलेय । चिनी की चासनी बनाय उसी
भूँगा चूर्ण और बदाम पिस्ता किसमिस चिरींजी आध २ पाव कतर कर
हाल दे और एक २ छंटाक का लड्डू बांध ले । सांभ सबेरे एक २ लड्डू
खाकर ऊपर से दूध पीये । तेल भिर्ष खटाई आदि गरम चीजों से यह-
रेज रखे धातु गाढ़ा और पुष्ट हो और शरीरक बल की वृद्धि हो ॥

अथ काम मर्दनो मोदक ।

तालमखाना का बीज, नागरीअसगन्ध, पञ्चाहों शतावर, मुलेटी,
घनकेवाख का बीज की गरी, नागयला और अतिवला के जड़का छाल
उक्त आठों चीजों को एक २ छंटाक ले कूटकर महीन चूर्ण करलेय चार
सेर गी का दूध से कढ़ाई में हाल सुरखे जब एक हिस्सा दूध जल जाय
उक्त आठों चीजों का चूर्ण उसी दूध में हाल दे और बारछल से चलाता
जाय जब दूध खोवा के समान हो जाय अग्नि पर से उतारले, बाद
कढ़ाई साफकर डेढ़पाव घी हाल खोवाको सूख भूँजे जब सुरखी आजाय

और सुगन्धि उठने लगे, दो सेर चिनी की चासनी बनाय उसीमें खोवा और थोड़ा बहुत मेवा मिला के एक २ छंटाक के लड्डू बनाय ले सांभ सँभेरे एक लड्डू खा कर ऊपर से दूध पीने से तृप्त हुआ भी कामदेव उत्पन्न होता है, यह मोदक प्रायः आजमानेमें आया है तीन मास पर्यन्त सेवन करने से यथार्थवीर्य की ताकत कलक उठता है परन्तु गरम चीजों और स्त्री प्रसङ्गादि से पहरेज रखना होगा ॥

गुप्ताफलमोक्षुरकाञ्चबीजतथोञ्चटांगोपयसाविपाच्य ।

खाजाहतशर्करयाचयुक्त पोस्वानरोहप्यतिसर्वगात्र ॥

केवाळ की बीज ६ मासा, बड़ा गोखरू ६ मासा, उदंगन का बीज ६ मासा तीनोंको महीन चूर्णकर १ सेर गीके दूधमें डाल मन्दाग्निमें पचाये जब एक हिस्सा दूध जलजाय अग्नि से उतार ले और शीतल होने पर नयाभी से खूब मथे और ३ तोला बिगो डाल के पीये इसीप्रकार रोज ५ या ६ बजे संध्या समय पीने से बीर्य प्रसंग में अति हर्ष प्रगट करने वाला होता है ॥

अहिफेन ।

भाषामें अफीम और अंगरेजी में (ओपियम) कहते हैं इसकी उत्पत्ति स्थान भारत भूमि है । आज भारत में अफीम खानेवाले बीघाई मनुष्य से कम न होंगे और इसको लोग कई प्रकार से सेवन करते हैं, गोली, घोल के, वशां (यह शब्द हिकमत का है) चणू मदक इत्यादि । भूतपूर्व समय में सिंघाय औषध विधिके भीकिया लोग नहीं खाते थे मुसलमानों के वजे से भारत में आज इसका बहुत कुछ प्रचार बढ़ गया है यहां तक कोई रोग क्यों न हो अथ देखा की नहीं आराम होता है तो अफीम खाने लगजाते हैं, प्रायः बिपयी लोग स्तंभन के लिये और बहुतसे लोग ताड़े भर खाते हैं लेकिन अफीम किस प्रकार किस योग के साथ और कैसे प्रकृतिवाले को खाना चाडिये, यह न जाननेसे अक्सर अफीम खाने वाले निकम्मे और बे काम हो जाते हैं इसलिये हम पाठकगणोंके उपकारार्थ अफीम खाने की कुछ विधि लिखते हैं ॥

अफीम की प्रथम विधि ।

आधी छँटाक अफीम को पाव भर पानी में घोलकर थिलायटिंग-पेपर में अथवा बहुत गन्ध बस्त्र का दो तीन परत करके छान लेवे तत्पश्चात् उसे धूपड़े पर चढ़ाय सन्दाग्नि में पचावे जब सूख गाढ़ा लेई के समान हो जाय अग्नि पर से उतार लेय और बसलोचन २ तोला, छोटी लायची का दाना १ तोला, अकरकरहा ६ मांसा, यहिमनसुख ६ मांसा छोटी पीपर ३ मांसा, कपूर ३ मांसा, जायफल ३ मांसा, जावित्री १॥ मांसा, कस्तूरी ६ रत्ती, चांदीका चक २५ ताव, सोनेका चक ५ ताव सब दवाइयों को चूर्णकर वक्त अफीम में मिला अपने खाने के अन्दाज से गोली बनाले परन्तु केनाहू अधिक खानेवाला हो ३ मांसे अधिक न खावे और सर्व साधारण के लिये आधे मूंग से ले कर चने बराबर गोलीयां बनावे । एक गोली शाम को खाकर ऊपर से पाव भर दूध पका हुआ मिश्री या बत्ताशा डालकर पीने से—शरदी मजला कान के शब्द लकवा कम्पवायु निर्गी कमलवायु सर्वांगदंद मसूढ़ों का सूजन, मुख दुर्गन्धि मुख से नार बहना जिगर की निर्बलता और शीघ्र बीर्य पात हो जाना इत्यादि रोगों को नाश करता है अगर मिजाज बहुत गर्म हो या रक्त आदि का कुछ विकार होवे तो निम्नलिखित रूप से अफीम बना के खावे ॥

अफीम की दूसरी विधि ।

आधी छँटाक अफीम को एक पाव अर्क गुलाब और एकपाव अर्क केवड़ा दोनों को एक में मिला उसी में अफीमको घोल थिलायटिंगपेपर अथवा पूर्वोक्त प्रकार कहे हुये कपड़े में छान अग्नि पर चढ़ाय धोनी आंच से पकावे जब अफीम शब्द के समान गाढ़ा हो जावे अग्नि परसे उतार नीचे लिखे हुये दवाइयों को मिला के गोली यांच लेवे । बसलोचन २ तोला छोटीलायची के दाने १ तोला, मफेदचन्दन १ तोला, खस ६ मांसा, धीतलचीनी ३ मांसा, कपूर ३ मांसा, चांदी का चक २५ ताव सब को महीन पीस रानी में मिला पूर्वोक्त प्रकार गोली बना लेवे इस

गोली को भी खाकर ऊपर दूध पीने से प्रथम बिधि के कहे हुये समस्त रोगों का नाश होता है ॥

डाकूरी मत से अफीम के गुणाऽगुण के लक्षण ।

डाकूरी मत में अफीम से अनेक औषधियां बनती हैं और अनेक रोगों पर अनेक बिधि से दी जाती है । अफीम का प्रत्यक्ष गुण है, मस्तिष्क उत्तेजक निद्राकारक, दर्द नाशक, चकाई को दूर करनेवाला, पसीना लानेवाला और मादक है । योही अफीम खाने से प्रथम उसकी गरमी समुदाय शरीर में फैलकर तब शिर में नशा पहुंचता है और पूर्ण मात्रा अफीम के सेवन से दशही १५ मिनट के बाद माथे में कुछ भारी पन, और शरीर चैतन्य बोध होती है किसी प्रकार दर्द बगैरह हो वह भी हलका हो जाता है, मनोवृत्ति, बुद्धि वृद्धि धर्म प्रभृति आदि समुदाय सामयिक धर्म उत्तेजित और प्रसारित होता है, बात बनानेवाली, बात करनेवाली, और बुद्धि धारण करनेवाली नादियां चलवती होती हैं, साहस, पराक्रम और चातुरी बढ़ती है, अनेक मनोरम पदार्थों का भ्रष्टा चालूम होना और सम्पूर्ण शरीर के जोड़ पुष्ट होते हैं परन्तु मद्यपान से शरीर की संधियां पुष्ट न हो के और शिथिल हो जाती हैं ॥

इस रूप अवस्थाके आध घंटाबाद अथवा बस्से कुछ अधिक काल के बाद निद्रा का समागम होने लगता है वह निद्रा सुषुप्ति के समान स्वप्न हीन ८ । १० घंटा पर्यन्त रहता है बाद अग्नि मन्दतादि उपद्रव होते हैं । अगर नींद लाने के लिये कम मात्रा अफीम खिलाये तो पूर्ण निद्रा न होके अर्द्ध निद्रा होगा और नाना प्रकार के स्वप्न देखेगा परन्तु वह स्वप्न सुन्दर मनेंहर और कहीं २ भय अनेक भी होगा जैसे अति शोचप्रस्त मनुष्य को देख पड़ता है ॥

प्रकृति भेद से अफीम के गुण भी भिन्न देखा जाता है जैसे किसी को अफीम से उत्तेजन क्रिया अधिक हो, किसी को मादकता अधिक हो किसी को कोष्ठबद्ध किसी का कोष्ठ परस्कार हो, कम उमरवाले को अफीम अधिक नशा करता है, रोग विशेष खासकर दर्द रोग में कम

गया होता है, सञ्चित मृत्यु अवस्था में अल्प मात्रा भी अफीम शीघ्र मृत्यु कारक होता है । इपेकाकूजानाके साथ अफीम पसीना खानेवाला और क्लोमिल संचित कोष्ठवद्द का नाशक होता है ॥

अफीम सेवन का अभ्यास करनेमें यदि मात्रा वृद्धि न हो तो शारीरिक अथवा मानसिक कोई विशेष हानि नहीं किन्तु अफीम की यह मोहनी शक्ति है कि प्रथम नियमित मात्रा किसी प्रकार रह नहीं भक्ता क्रमशः अवश्य ही बढ़ता जायगा इसी से अफीम खानेवाला अन्त होने से आलस्य ग्लानि उदाशीलता नेत्रश्राव और जँभुआई आने लगती है जब तक अफीम न खावे ऐसाही दशा रहती है ॥ शेवमये—

हरिद्रा ।

संसार में जिनकी बातें प्रचलित हैं और जो जो वस्तु अथवा द्रव्य दिन रात हम अपने काम में वर्त रहे हैं खापी रहे हैं वे सब किसी न किसी क्षत्रियों का अजसूदा है पृथ्वीभर में ऐसाही कोई देश बचा होगा जहां हरदी काम में न आती हो हम लोग पाक समय तरकारी दाल और मांस में हरदी डालते हैं यह तो माधारण हरिद्रा का व्यवहार है परन्तु हरदी को महत्त उपकारी वस्तु जानना चाहिये । वैद्यक में हरदी को रजनी, गौरी, वरवर्णिनी, वर्णवती, निशा और वर्णविलासिनी कहते हैं । गुण में कड़वी, तेज, सूखी और गर्म है त्रिदोषनाशक त्वचारोग प्रमेह सूजन पांडुरोग फोड़े फुंजी को नाश करती है । राजवर्ण प्रम्य में शोथरोग पर हरिद्रा को पानी में घिस कर लेप करने से शोथरोग नाश होना लिखा है । डाकूर लोग भी आज कल शोथरोग में हरिद्रा का व्यवहार करते हैं । इसमें रुमि नाश करने की एक आश्चर्य्य शक्ति है कि जिसे प्रायः ग्रामीण जन भी जानते हैं बालक के रुमि होने से स्त्रियां अक्सर कच्ची हरदी को गुड़ के साथ खिला देती हैं बंगाल में अनेक स्त्री पुरुष चायुन के तरह समस्त शरीर में लेपन करके खान करते हैं इस प्रान्त में भी विवाह के पूर्व लड़कों को हरदी तैल लगाते हैं इसमें

सन्देह नहीं कि तैल के साथ-अथवा कोई लेपन वस्तुके साथ हरदी को शरीर में लगा के स्नान करने से शरीरका वर्ण उज्ज्वल सुन्दर शोभायमान होता है इसी से हरदी का नाम ऋषियों ने वर्णवती वर्णविलासिनी लिखा है ॥

हाकुरी किताबों को देखिये तो उसमें भी हरिद्रा के अनेकांश गुण लिखे हैं हाकुर नफिस साहब अपनी किताब में चर्म रोग पर हरदी को उत्कृष्ट यहीपथ लिखा है और किसी के मत में बहुमूत्र रोग में हरिद्रा अति उपकारी लिखा है ॥

विलायत के वैज्ञानिक हाकुर लोगोंने ने हरिद्रा के सहायता से एक प्रयोजनीक विषय परीक्षा करने के लिये उपाय निकाला है (टारमेरिक) नामक एक विलायती कागज है उसे हरदी में तर कर लेय अर्थात् हरदी को पानी में सूख नदीन पीस कागजके चारोंतरफ लेपन कर छाया में घासु द्वारा सुखायेय । उस कागज को किसी वस्तु में डालने से यदि वह कागज लाल वर्ण हो जाय तो जानना कि उसमें सार पदार्थ है । हाकुर लोग प्रायः इसी उपाय से औषध अथवा कोई खाने की वस्तुहो, जल और मूत्र को परीक्षा कर लेते हैं कि इसमें सार पदार्थ है कि नहीं । विख्यात हाकुर रईल साहब ने भी हरदी का बहुत कुछ गुण लिखा है हकीमी मत से भी हरदी का गुण पीड़ा शान्तिकारक और प्रमेह रोग का परम औषध लिखा है ॥

वैद्यक में लिखा है कि हरदी के चूर्ण को कच्चे आंवले के स्वरसके साथ खाने से प्रमेह रोग नाश होता है । यह तो प्रसिद्ध है जिस स्थान में चोट लगी हो हरदी को खूने के साथ जल में पीस गरम कर लेप करनेसे दर्द और शोथ आराम होता है । कुछ शारीरकही उपयोगी नहीं है हरदी में और भी अनेक गुण हैं । रोगी भी हरदीही से बनती है हम लोगों के यायत शुभ कार्य हैं सभी में हरदीकी आवश्यकता होती है । हरदी का गुण केवल रोग ही पर निर्भर नहीं है किसी रोगीके लिये विष है जैसे किसी प्रकार पड़ियाल के शरीर में १ हरिद्रा प्रमेह

करने से चड़ियाल शीघ्रही मर जाता है । अन्तर शिकारी लोग गोली के जगह हरदी को भर कर चड़ियाल को मारते हैं । हमने सुना है कि सर्प को हरदी की गन्ध अच्छी नहीं मालूम होती । गुलाब आदि वृत्तों के जड़ में हरदी का चूर्ण डालनेसे फूल में रुमि नहीं लगता । सड़ाघाव भी हरदी से साफ होता है । यही कारण है जो चर्मकार लोग चमड़े के काम में हरदी का अधिक प्रयोग करते हैं । भांग को जरा सा हरदी के साथ घोट कर पीनेसे जहर के समान गंशा करता है ॥

दीपन पाचन आदि नाम ।

वैद्यक के ग्रन्थोंमें बहुत से नाम ऐसे आते हैं जो बिना बुलावा किये कोय देखने से भी बोध नहीं होता जैसे दीपन पाचन समन और मनु लोमन आदि ।

दीपन ।

जो औषध आंव को न पचावे परंतु अग्नि को दीप्त करे तबसे दीपन कहते हैं जैसे (शेंफ) यह शेंफ का विशेष गुण है लेकिन शेंफ अपने साधारण गुण से पित्तघटक एवं ज्वर वायु कफ उदरशूल आंव और नेत्र रोग को नष्ट करता है । आमवात पांडु और ग्रहणी रोग में प्रायः वैद्य लोग (तक्र) नाटा के साथ औषध सेवन कराते हैं यदि तक्र के बदले में शेंफ के अर्क से लवणभास्कार आदि उत्कृष्ट चूर्ण सेवन करावें और पानी की जगह शेंफ का अर्कही पीने को देवे तो बहुत अधिक फायदा करता है । एवं भांग को शेंफ के संग घोट कर पीने से भांग का उष्ण वायु घटके विकार जाता रहता है परंतु जो लोग शेंफ का गुण नहीं जानते शेंफ को शीत कारक समझ कर केवल भांग और मिर्चही घोटकर पीते हैं सो उनकी भूल है इसे भांग प्रकर्ण में लिखेंगे ।

पाचन ।

आंव को पाचन करे और अग्नि वृद्धि न करे उसे पाचन कहते हैं

जैसे (नागकेशर) यह प्रधान गुण है परन्तु नागकेशर खाज, अमन शरीर की दुर्गन्धि और अधिक पसीना आना, इन रोगों को नाश करता है ॥

और किसी दवा में दीपन पाचन दोनों गुण रहते हैं जैसे (चीता) यह गर्म है कटु है शीघ्र, रुमि रोग और बाँदी बवासीर को नाश करता है ॥

समन ।

जो औषध घट गूद करे और घटले मल को बाँध न सके परन्तु घड़े पुये दोषों को समन करे उसे समन कहते हैं जैसे (गुरघ) भारत के सभी स्थानों में गूदुषो मिलसक्ती है और प्रसिद्ध नाम इसका गुर्घ या गिलोय है । यह गर्म और स्वाद में कटु है ज्वर, संक्रियात, क्रमेह, वातरक्त, कोढ़ और पांडुरोग नाशक है मलकर तथा रसायन है । कोढ़ रोग क्यों न हो गुर्घ सब को समन करती है यही कारण है जो घेद्य रोग अक्षर गुर्घ के के स्वरस में औषध देते हैं । इसीको अमृता भी कहते हैं घेद्यक ने इसकी उत्पत्ति यों लिखी है कि जब यानारों की सेना सहित श्री रामचन्द्र जी ने रण में रावण को मारा तब राक्षसों के हाथ से मारे पुये जानरों पर इन्द्र ने अमृत की बर्षा की तो अमृत के प्रभाव से सब यानर सठ खड़े पुये उनसे अतिगिह जो पृथ्वी में अमृत की दून्दें गिरों तिनसे मिलीय उत्पन्न हुई इसी से इसका नाम अमृता पड़ा है ॥

अनुलोमन ।

जो औषध अजीर्ण मलको पचावे और बँधेहुये मलको कोढ़के अर्धो-भाग से नीचे गिरावे यह अनुलोमन कहा जाता है जैसे (दड़या हरि) इसकी उत्पत्ति घेद्यक शास्त्र में दो प्रकार से लिखी है धन्वन्तरि आदि निघण्टों में तो यह लिखा है कि धन्वन्तरि महाराज हाथ में हँरी लियेहुये समुद्र से निकले हैं और इरीतकादि निघण्ट में लिखा है कि एक समय इन्द्र स्वर्ग में अमृत पान करते थे उसमें कुछ दून्द पृथ्वी में गिरा उसी से इरीतकी

उत्पन्न हुई जिसके पृथक् नाम सातप्रकार हैं जैसे बिजया, १ रोहणी, २ पूतना, ३ अमृता, ४ अभया, ५ जीवन्ती, ६ चेतकी, ७ (लक्षण) ॥

(१) जिसका तूथी के समान गोल आकार होता है यह बिजया कहातो है सब प्रकार की हड्डों में बिजया नाम, हड्ड अतिश्रेष्ठ है किसी औषध के प्रकर्ष में किसी हड्ड का नाम खोल के न लिखा हो सिर्फ हरीतकी या हड्ड लिखा हो तो इसी को लेवे क्योंकि ग्रन्थों में इस हड्ड को सब रोगों में देना लिखा है ॥

(२) जो मिनफुल गोल न हो वह रोहणी है, जोड़ा फुन्सी और घाव में कायदा करती है इसीसे इसे ब्रह्मरोपिणी भी कहते हैं ॥

(३) जिसके भीतर गुठली हो लेकिन बहुत मोटी गुठली न हो (छोटी हरे) वह पूतना है इसको प्रलेप आदि में योजन करना उचित है ॥

(४) जिसमें बहुत गूदा हो वह अमृता कहलाती है दस्तावर है रोगन कर्म में इसी को लेना उचित है ॥

(५) जिसमें पांच लकीरें हों वह अभया है नेत्र रोग में अङ्गनाय इसी को लेना चाहिये ॥

(६) पीले रंग की जीवन्ती होती है, नाग लेने के तेल आदि में अधिक गुण दायक है ॥

(७) जिसमें तीन लकीरें हों वह चेतकी के प्रकार की होती है, एक सफेद रंग ६ अङ्गुल की लम्बी से कम मिलती है किसी किसी को उसके देखने छूने या सूंघने से दस्त होता है दूसरी १ अङ्गुल की लम्बी काली होती है ॥

(उत्तम हड्ड की पहचान)—जो हड्ड नवीन चिकना गोल भारी जल में डालने से डूब जाय वह बहुत गुणदायक होती है । (अन्यथा) जो हरे का फल तील में १ तोला ८ सोसा हो उसे भी अति गुणदायक समझना (हरीतकी का साधारण गुण) हरे को चबाकर खाने से अग्निवृद्धि होती है पीसकर खाने से मल शुद्ध होता है, अर्क खोंचकर

पीने से मोटी शरीर दुबली होती है (परन्तु जिसे घातु की विमारी न हो) और भोजन खाने से त्रिदोष का नाश होता है (अन्य प्रकार) हरीतकी भोजन के साथ खाने से बुद्धिबल और इन्द्रियों को चैतन्य करती है । भोजन के पीछे खाने से अन्न तथा पानी के दोषों को दूर करती है (अनुपान भेद से गुण) सेंधव अथवा सोंवर लवण के साथ खाने से कफ दूर करती है, मिश्री के साथ पित्त को और गुड़ के साथ घात को नाश करती है ॥

बाँजे बाँजे लोग हरि की चारों मंजीना खाते हैं उन्हें नीचे लिखित प्रकार पर खाने से अतिलाभ होगा जैसे, अर्थात्सु में सेंधव लवण के साथ, शरदऋतु में मिश्री के साथ, हेमन्तऋतु में शोंठ के साथ, वसन्त में छोटी पीपल के साथ, ग्रीष्म में शहद के संग, और प्रायुष्काल में गुड़ के साथ ॥

निषेध—मार्ग से अति चकित, अति दुबल, रुखा, कमजोर, पित्तेरोग युक्त, गर्भवती, उपवासी और जिस के शरीर से रक्त निकला हो इतने प्रकार के मनुष्य हड़ न खाँय ॥

हरीतकी कल्प में हड़ का बहुत कुछ माहुरम्य लिखा है परन्तु संक्षेप रूप से यह वाक्य प्रसिद्ध है ॥

**श्लोक—यस्यमातागृहेनास्ति तस्यमाताहरीतकी ।
कदाचित्कृपितामाता नोदरस्थाहरीतकी ॥ १ ॥**

अर्थात् जिसकी माता घर में नहीं है उसकी माता हड़ है कदाचित् माता खफा हो जाय पर पेट में पड़ी हुई हड़ कभी कोप को नहीं प्राप्त होती अर्थात् बिहार नहीं उपजाती ॥

अंसन और भेदन ।

जो भोजन किया हुआ पदार्थ अनपच होकर कोठे में लपेटके रह गया हो (जिसे हिकमत में गोटे पर जाना कहते हैं) उसे कोढ़ कर जो अपच नीचे गिरावे उसे अंसन कहते हैं, जैसे अम्लतासका गूदा । यद्यपि

अमिलतासे के गूदे में कुछ जी मसलाना गुण है परन्तु मल फोड़कर नवी गिरानेमें प्रधान औषध है जो मल बातादि दोषसे बँधाही या न बँधा हो या सूख गया हो उसे फोड़ के जो अघोमार्गसे गिराये उसे भेदन कहते हैं जैसे (कुटकी) यह प्रसिद्ध औषध है, गुण में शीतल तीती कहुँ हलकी भेदनी कफ पित्तज्वर प्रमेह श्वान कुष्ठ और रुमि रोग नाशक है और मुख का तीतापन नाश करनेमें भी कुटकी एकही है । बाजे २ और रोग वाले का मुख बहुत दिन तक कटु बना रहता है वह कहुआई कुटकी क्वाप से जाती रहती है जैसा कि लोलिम्बराज कवि ने परिहास पूर्वक कहुआई पन की चिकित्सा बतलाई है और एक श्लोक भी कहा है ॥

ममद्वयविस्मयमातनोति तिक्ताकपायोमुखतिक्तताघ्नः ।
निपीडितोरोज सरोजकोपा योपाप्रमोद प्रचुरप्रयाति ॥

लोलिम्बराज कवि कहते हैं कि मुझे दो विस्मय होते हैं एक यह कि जिसका नाम तिक्ता अर्थात् कुटकी है उसके क्वाप से मुख की कहुआहट दूर हो जाती है दूसरे स्त्री लोगों के कमल के समान कोमल स्तनों के मर्दित होने से उन्हें बहुत अधिक दुर्घट होता है । इसमें विस्मय की बात यह है कि अति तीता तिक्ता से तीतापन का नाश करे और अङ्ग विशेष के पीडित होने से प्रमोद की अधिकता हो इसका कारण "विपस्य विपनीषधम्" दिखलाया है ॥

रेचन (जुलाव)

मल दोषों से विशेष परगया हो या न पका होय या कुछ दिन का सञ्चित हो जो औषध उसे अपने प्रधान गुणसे एकत्रित और पतला कर के नीचे बहावे उसे रेचन कहते हैं जैसे (निशोय) इस औषध पर पाठकगण को अधिक ध्यान रखना चाहिये क्योंकि रेचन कर्म में निशोय अत्यन्त गुणकारी औषध है सुश्रुतमें इसकी बहुत कुछ प्रशंसा लिखी है ॥

सुश्रुत सूत्र स्थान ४४वां अध्याय—विरेचन औषधों में जड़ किञ्चित् जालवर्ण निशोल का (निशोलके जड़का उल) कालों में (कोटीलोचका)

फलों में (हड़) तेलों में (ऐरण्ड तेल) दूधों में शूहर का दूध दस्त लाने में श्रेष्ठ है । निशोत्त का मात्रा एक मास से एक तोला पर्यन्त है, निशोत्त सेंधानोन शोंठ आदि के सङ्ग सेवन करने से वायु का, ऊख के रस या सींठे अमारके रस अथवा दूध के सङ्ग पीनेसे पित्तका और गुर्घ त्रिफला आदि औषधों के संग खाने से कफ रोग का नाश करता है ॥ श्लो—

धमन ।

कच्चा पित्त और कच्चा कफ (जो कफ पित्त पक जाते हैं वे आप निकल जाते हैं) की जो औषध अपने यत्नसे ऊर्ध्वमार्ग अर्थात् कै कराने के द्वारा बाहर निकाले उसे धमन कहते हैं । जैसे (मैनफल) यह औषध कै कराने के लिये श्रेष्ठ उत्तम है । मैनफल गुण में उष्ण रूखा हलका कै लाने वाला, पीमस और फोड़ा फुन्सी रोग का नाशक है ॥

शरीर शोधन ।

जो औषध अपने यत्न से कुपित मल, पित्त और कफ को कुपित-स्थान से छुटाये उसे ऊर्ध्वमार्ग या अधोमार्ग से गिरावे उसे शरीर शोधन कहते हैं । जैसे (देवदाली) इसके कहीं २ चघरवेलि, या सेनैयावेलि, बंदाली और बंदाल भी कहते हैं । दैद्यक में इतने नाश हैं । ककौटी, गरामरी, देवताड़ी, घृतकाश और जीभूत । यह एक प्रकार की लता है, रोखसा के समान फल होता है उसमें भी दे। भेद हैं, एक चकगा दूसरा पीतवर्ण और खरखरा होता है किसी २ दैद्यक घन्यके टीकाकारोंने इसे यगनुकई करके लिखा है देवदाली स्वाद में तीखी चरकरी है धमन कराने वाली कफ, वायामीर, शोष पांडु, रुमि और उखर को नाश करती है । इसके फल का गुण—उपरोक्त रोग नाशक धमन है अर्थात् मलों को पतना करके बहानेवाला है । दूसरा फल जो पीत वर्ण और खरखरा है उपरोक्त गुण के अतिरिक्त श्लेष्म का नाशक है । इस फल का एक परीक्षा हमने और लिया है, जिर में यत्नसे जम गया हो और नाशिका द्वारा नफ में निकलता हो । इसे पानी में भिजोप निचोड़कर रस निकाल नाम देने में सब कफ पानी होकर यह निकलता है लेकिन यह निश्चय कर

लेना चाहिये कि बलगम गिर में जमा है । पित्त कामला (कैवल) रोग में भी इसके द्वारा पीले रंग का दूषित पानी नाशिका के द्वारा बहाया जाता है ॥

छेदन ।

जो औषध घेंघे हुये कफ आदि के दोषों को अपनी शक्ति से फोड़ कर बाहर निकाले उसे छेदन कहते हैं । जैसे अवाखार, गोंठ मिर्च और पीपर ॥

लेखन

रस रक्त मांस आदि धातु और मल मूत्रादि, जो औषध इन्हें सुखा के शरीर को दुर्बल करे उसे लेखन कहते हैं । जैसे—शहद, गरम जल और यव । यही कारण है जो गर्मे निजाजयाले को शहद और गर्मजल का सेवन निषेध किया है परन्तु पाठकगण को इस बात का आश्चर्य होगा कि यव धातु शीघ्र है तो दाह रोग में ययमन्य (जी का सत्तू) पीने को क्यों लिखा है ? इसका कारण यह है कि ममस्त औषध पांच रूप से गुणकारी होते हैं जैसे घीर्य्य विपाक और शक्ति आदि कोई औषध रस से कोई घीर्य्य से और कोई विपाक में गुण करते हैं जैसे कफ पीने में शीतल दाह नाशक है परन्तु विपाक में गर्मे हो धातु को दुर्बल और मूत्राशय के जल को शुष्क करता है ॥

ग्राही—जिग औषधियोंमें दीपन और पाचन गुण दोनों हैं परन्तु अपने उष्ण शक्ति से कफ धातु और मल इनके रस को सुखावे उसे ग्राही कहते हैं । जैसे—गोंठ श्वेत जीरा और गज पीपर । इन तीनों औषधों का प्रयोग कफ, अतीसार और यहशी आदि रोगोंमें करना उचित है ॥

स्तम्भन—जो औषधी रुखी और प्रकृति में शीतल तथा कषायल हो और पाचन शक्ति जिसमें बहुत कम हो परन्तु वातरुत अर्थात् वात कारी हो उसे स्तम्भन कहते हैं । जैसे कुरैया का छाल और सोहनपत्र । इस स्तम्भन शब्द को धातु स्तम्भन में न समझना यह मल स्तम्भन है

बहुते हुये मल (अतीसार) को जो बांधे उसे स्तम्भन कहते हैं । कुरैया को घट्टक में कुटज कहते हैं कुटज वृक्ष दक्षिणमें बहुत होतेहैं इस वृक्ष में लम्बी खीमी निकलती है उसके भीतर के बीज को इन्द्रजय कहते हैं । कुटज अतीसार रोग में प्रधान औषध है । डाकूरी में भी इस औषधका व्यवहार है स्याटिन में (राईटिया एटिन्हिसेन्टेरिका करटेवस) और अंगरेजी में (कनेसाई वार्क कहते हैं ॥ ८१

रसायन—जो औषध मनुष्यको शीघ्र बृद्ध होने न देय अर्थात् जिस औषध को नित्यशः सेवन करने से जल्दी बुढ़ापा न होय उसे रसायन कहते हैं । जैसे—मुर्च, रुद्रवन्ती, गूगुल, और हरीतकी ॥ ८२

धात्रीकरण—जिस औषध के सेवन से स्त्रियों के साथ मैथुनमें अधिक हर्ष उत्पन्न हो तिसे धात्रीकरण कहते हैं । जैसे—धरियारा का जड़ गुलसकरी और केवाछबीज बीज्य में हर्षोत्पन्न करनेमें यह तीनों प्रधान औषध हैं ॥

शुक्रल—जो औषध धातु को बढ़ावे उसे शुक्रल कहते हैं । जैसे असगन्ध, दोनों मूसली और शलाघर, यह औषध बीज्यको बृद्ध और पुष्ट भी करते हैं परन्तु असगन्ध विशेष कर स्त्रियों के रज को अधिक बढ़ाता है । दूध, चर्द और भांगला र्व भी धातु को बढ़ाते हैं उसी से रेतजन्य कहे जाते हैं ॥

बड़ी भटकटैया का फल स्त्रियों के धातुको रचन करता है, जाय-फल बीज्य स्तम्भक है, बीज्य औषध बढ़ाहृद् और तर्जुन है, विशेष हाल आगे मालूम होगा ॥

सूक्ष्म—शरीर के सहान रोम मार्ग कूपों के द्वारा, संधवभोग, सदत निम्ब और पेरण सैल देह में पैठते हैं इससे वे सूक्ष्म कहाते हैं, यही कारण है जो उक्त चारों औषध वातरोगाधिकार में श्रेष्ठ कहे गये हैं ॥

व्यवायि—जो द्रव्य पहिले समस्त शरीर के नाडियों में प्रांस हो, तब उसका परिपाक होवे तिसे व्यवायि कहते हैं जैसे भांग और अफीम ॥

विकाशि-उस द्रव्य को कहते हैं जो शरीर के मध्य को छीले करे और रसादिक धातु और शुक्र को क्षीण करे जैसे सुपारी और कौड़ों का चावल ॥

मादक-द्रव्य वह है जो बुद्धि को लोप करे और तमोगुण प्रधान हो जैसे मद्य आदि ॥

विष-व्याधि और विकाशि हो छोटे २ नमों के द्वारा मद कृत अग्नि बर्द्धन (समस्त शरीर में ज्वाला करदे) मृत्यु कारक यह सब द्रव्य जिस औषध में (योगवाहि) संग पावे सगुण करे, जैसे संख्या और संगिया आदि ॥

प्रमाथी-वे द्रव्य कहलाते हैं जो अपने से मंचित दायों को आंतों से निकाल डाले जैसे मरिच और कच ॥

अभिव्यन्दी-जो द्रव्य अपनी चिक्कनता गुण करके रस याहिनी नादियों को निरोध कर शरीर को जड़ करे उसे अभिव्यन्दी कहते हैं । जैसे (दही) यद्यपि जीव भेद से दही के गुण और रूपान्तर होने से प्रकृत औरही हो जाती है तथापि दही अपने साधारण गुण से श्लेष्म प्रकृति वाले को दुर्गुणही है इसीसे शृगुत ने रात को दधि खाना निषेध किया है "रात को दही न खाना और न बिना घी के पिनी" ॥

आन्तिक कर्म ।

बहुत है मार्ग हैं जो आजकल अपने नित्य कर्मसे ऐसे श्रुत हो गये हैं कि जिसका कुछ फल नहीं है । अभिनिवेश चित्त से ध्यान देकर देखते हैं तो भूतपूर्व अपियों के कहे हम लोगों के लिये यांचत् आचार हैं वे नियम आयु इप्सित सन्तान और धन सृष्टि करनेवाले हैं इस में सन्देह नहीं वेद के न जानने से आचार के छोड़ने से, आलस्य से मृत्यु आर्यों को मारने की इच्छा करती है । कारण यह कि आचार न पालने से मनुष्य अस्वायु होता है, सर्वदा रोग ग्रस्त रहता है मन दीर्घायु ग्लानि

और शोकयुक्त रहता है इस लिये शारीरिक स्वास्थ्य लाभार्थ आचार पालन करना सध को उचित है ॥

वसिष्ठः, आचारः परमोधर्मः सर्वपामितिनिश्चयः ।

वसिष्ठ जी कहते हैं कि आचार यह परम धर्म ऋषियों का मत है ॥

पराशरः दक्षः ।

चतुर्णामपिवर्णानां आचारो धर्मपालनम् । आचार-
भ्रष्टदेहानां भवेद्धर्मपराङ्मुखः ॥ दुराचारो हि पुरुषो लोके-
भवति निन्दितः । दुःखभोगी च स तत रोगी चाल्पायुषो भवेत् ॥

पराशर और दक्ष कहते हैं कि चारो वर्णों का आचार से रहना धर्म है आचार से भ्रष्ट मनुष्य धर्म से दूषित रहते हैं, दुराचारी पुरुष लोक में निन्दित हमेशा दुःखका भोगनेवाला और शीघ्र मृत्युका प्राप्त होता है । हे । कोट पतलून धारी होटल में महाप्रसाद खानेवाले इधर देखो मुन्दारे भूतपूर्व ऋषीगण क्या कहते हैं ॥

प्रातरुत्थानकालः ॥

वेद से लेकर पुरान तक में यही बचन मिलेगा मनुष्य को उचित है कि ब्राह्म मूहूर्त (चारपड़ी के तहके) से उठकर प्रातः स्मरण करे । विष्णु पुराण में प्रातःकाल का प्रमाण लिखा है ॥

**पञ्चपञ्चऊषःकालः सप्तपञ्चारुणोदयः । अष्टपञ्चम-
वेत्प्रातस्ततासूर्योदयः स्मृतः ॥**

सूर्योदय से ५५ घड़ी पर ऊषःकाल (कितनी के मत से यही ब्राह्म-
मूहूर्त है और यहुतों के मत में ऊषःकाल से एक घड़ी पूर्व ब्राह्ममूहूर्त
कहाता है अर्थात् ३ घड़ी सूर्योदय होने को रहे उसे ब्राह्ममूहूर्त कहते
हैं) ५७ घड़ी पर अरुणोदय और ५८ घड़ी पर प्रातःकाल होता है । सध

घर्षों को चाहिये कि ब्राह्मणमूर्त में ईश्वर का स्मरण कर अपने कृतकार्य को विचार कर तब शीघ्र को जावे ॥

“ब्राह्मणमूर्त यानिद्रामा बलक्षयकारिणी” ब्राह्मणमूर्त की निद्रा बल के नाश करनेवाली है इसलिये स्वास्थ्य के चाहनेवाले जन अथर्व उक्त समय में उठने का अभ्यास करें ॥

स्वकरतलाद्यव लोकनम् ।

आचारप्रदीपे—कराग्रेयसतेलक्ष्मो प्रभातेकरदर्शनम् ।

अन्यच्च—भारद्वाजमयूराणां चापस्यनकुलस्य च । प्रभाते दर्शनं श्रेष्ठं वामपृष्ठे विशेषतः ॥ श्रीत्रियं सुभगां गां च अग्निमग्निचितितथा । प्रातरुत्थाय यः पश्येदापदुभयः स प्रमुच्यते ॥

हस्त के अग्रभाग में जलमी का ध्यास है इसके प्रातःकाल उठ जाय देखे, भारद्वाज (खलुरीट) मोर, टिटहरी, जीर नेयरा, इन्हें प्रातःकाल देखना शुभ है यानभाग जीर पीठ पीछे देखे तो अधिक शुभ है । जो मनुष्य प्रातःकाल उठकर यज्ञ करानेवाले, सुन्दर गी यज्ञ के अग्नि का दर्शन करते हैं वह अनेक आपत्ति से मुक्तजाता है ॥

नागदेव जी कहते हैं प्रातःकाल पापी, दरिद्र, अन्धा, नकटा नरत, कैलाचाफल, यहेरा, कीवा, बिल्ली, मूग, नपुंसक और गदहा इन्हें न देखे यदि अकस्मात् देख पड़े तो पुनः आंख बंद करले ॥

ब्राह्मणमूर्त में उठ पूर्वोक्त पदार्थों को देख जल से तीन कुल्लीकर नेत्र की मूख धो पधिये हो के परमात्मा का ध्यान करे तब निम्नलिखित श्लोक को पढ़ के पृथ्वी में पाद धरे ॥

समुद्रवसने देवि पर्यतस्तनमण्डले । विष्णुपत्निनमस्तुभ्यं पादस्पर्शक्षमस्वमे ॥

विश्वमूत्रोत्सर्ग विधिः ।

पारस्कर गृह्यसूत्रे—तिष्ठन्नमूत्रपुरीषे कुर्यात्स्वयं-
प्रशीर्णं न काष्ठेन गुदं प्रमृजीत । विकृतं वा सोनाच्छादयात्
मूत्रपुरीषेष्ठीवनं चातपेन कुर्यात् ॥

सड़ा होके दिशा पेशाब न करे, जल का अभाव हो अथवा जल दूर
हो तो जीर्ण घाम फूस से गुदा पोछ हाँले तब जाके शीघ्र करे । जबतक
जल न शुद्ध न हो यक्ष न पहर, धूप में सूर्य के सम्मुख दिशा पेशाब न
करे कारण यह है कि इस्से प्रायः शिर में दर्द हो जाता है । दीघाचम
अपि कहते हैं (जलाशय से दश हाथ और तीर्थ नदियों से ४० हाथ दूराग
के दिशा पेशाब करे (निषेध करनेका समय यह है कि प्रायः जलों के समीप
दलदल रहता है) पृथ्वी में तृण बिछा के मूत्र पुरीष त्याग करे (बिना
तृण के मूत्र बिन्दु से पाद अङ्गादि अशुद्ध हो जाती हैं) पराशर और यम
महाराज कहते हैं सवेरे पश्चिम मुख दोपहर उत्तर मुख, संध्या समय
पूर्व मुख, और रात्रिको दक्षिण मुख बैठके दिशा पेशाब करे । अंधियारी
रात में गृह में ही मल मूत्र त्याग करे यह अनु जी की राय है । इस्से
स्पष्ट होता है कि पहले समय में आर्यावर्त बिल्कुल जंगल था प्रायः
शीघ्रनार्थ बाहर जाना पड़ता था ॥ *

शौचे उपवीत (जनेउ) धारणप्रकारः ।

अङ्गिराः—मूत्रेतु दक्षिणे कर्णे पूरये वा मकर्णके । उप-
वीतं सदा धार्य मैथुने तूपवीतिवत् ॥

पेशाब करने में दक्षिण और दिशा फिरने में बाग कर्ण में जनेऊ
धारण करे और स्त्री प्रसङ्ग में यथावत् रहे । सायणाचार्य का मत है कि
यदि दिशा पेशाब करते समय कान पर जनेऊ चढ़ाना भूलजाय तो
नवीन जनेऊ धारण करे । किसी २ अपियों का मत है कि मूत्र पुरीष

पियों और वैद्यक का मत भी है । आ०४० के १ खण्ड प्रथम अंक में जो जो विधि दन्तधावन करने के वैद्यक मत से लिख आये हैं वही वाक्य मध्य अधियों के मत में पाये जाते हैं विशेष करके सिर्फ इतना ही है जैसा विश्वपुराण लिखा है, प्राङ्मुखस्य घृतिःसीर्यं इत्यादि पूर्व मुख दन्त-
धावन करनेसे घृति मुख और शरीर आरोग्य, दक्षिण मुख कण्ठ, पश्चिम मुख हारि, उत्तर मुख गी सर्वा और कुटुम्बों का नाश होता है इस्से स्पष्ट हुआ कि पूर्वही मुख बैठ के दतूनि करना श्रेष्ठ है । व्यास जी के मत से प्रतिपदा अमावस्या पक्षी नवमी और रविवारके दिन दतूनि करनेवाला सप्तकुल को दहन करनेवाला होता है । शुक्ल क्राष्ट की दतूनि करना अधियों ने निषेध किया है ॥

स्नान ।

स्नान करने की विधि तथा स्नान के द्वारा आरोग्यता प्राप्ति मान-
सिक शक्ति करना जैसा आर्यावर्त में है अन्य दीपों में नहीं है । वै-
द्यक मत से स्नान करने का लाभालाभ प्रथम खण्ड में दिया है अब जो
कुछ अधियों की राय स्नान करने के विषय में है उसे भी प्रकाश करते
हैं । इसमें शक नहीं कि जो स्नान और निर्मल बस्त्रादि से अपने शरीर
को पवित्र नहीं रखते वे सबदा सन मलीन दुःखी विचार हीन आलसी
और रोगार्त बने रहते हैं और उससे शारीरिक तथा मानसिक परिश्रम
कभी नहीं हो सकेगा ॥

स्नानात्पूर्वं भक्षणयोग्याः पदार्थाः चतुर्विंशतिर्मताः ।

इक्षुरापःफलंमूलं पयस्तांबूलमौषधम् । भक्षयित्वा-
पिकर्तव्याः स्नानदानादिकाः क्रियाः ॥

सब अधियों का मत है कि (इलु) ऊख या पेंडा जल फल कन्द
दूध तांबूल और औषध इन्हें भोजन करके भी अनुप्य स्नान दानादिक
क्रिया कर सक्ता है परन्तु स्नान करके भक्षण करना अति उत्तम है ॥

स्नानकालः ।

हेमाद्रौ—अरुणकिरणयुक्तां, प्राचींदिशमवलोक्य-
स्नायादिति ॥

याज्ञवल्क्यः—अत्यन्तमलिनःकायो नवल्लिष्टसमन्वितः ।
स्वत्येवदिवारात्रौ प्रातःस्नानंविशोधनम् ॥१॥

किञ्चित् सूर्योदय देख स्नान करना उत्तम है । याज्ञवल्क्य का यवन है कि नवल्लिष्ट सहित अत्यन्त मैली यह शरीर है दिन रात रम आदि घातुओं का मल बहता रहता है उसके शुद्ध के लिये प्रातःकालमें स्नान करना उचित है ॥

गुणादशस्नानपरस्यसाधो रूपंचतेजश्चवलंचशौचम् ।
आयुष्यमारोग्यमलोलुपत्वं दुःस्वप्ननाशश्चयशश्चमेघा॥

अपियों ने स्नान का दश गुण लिखा है । रूप तेज और बल की वृद्धि पवित्रता आयु तथा आरोग्यलाभ एवं (मल) शरीर की मलीनता और दुःस्वप्न का नाश और बुद्धिबृंहक है ॥

स्नानार्थेउक्तंजलम्—वाप्यांकूपेतडागे वा नद्यांवाचो-
ष्णवारिणा । प्रातःस्नानंसदाकुर्यादुष्णोनैवसदातुरः ॥

वृद्धमनुः—संक्रांत्यारविवारेच सप्तम्यांराहुदर्शने । आ-
रोग्येपुत्रमित्रार्थेनस्नायादुष्णवारिणा ॥

वायली कुआं तालाब और नदी में अथवा गरम जल से हमेशा सवेरे स्नान करना उत्तम है परन्तु गरम जल सिर्फ रोगियों को लिखा है अर्थात् जिन्हें अति ठंडे दिनों में शीतल जल से स्नान करने से शरीरमें दर्द आदि वायु का बिकार होजाता है उन्हें गरम जल से स्नान करना निषेध नहीं है । मनु, महाराज कहते हैं आरोग्यता पुत्र मित्र और धन

और मन को शुद्ध रखना (मनस्सत्येन शुद्ध्यति, मनः सत्यं धीरुने से शुद्ध होता है) तीर्थों का भी तीर्थ कहा जाता है ॥

मनोविशुद्धं पुरुषस्य तीर्थं वाचां यमस्त्विन्द्रियनिग्रह-
स्तपः । एतानि तीर्थानि शरीरजानि स्वर्गस्य मार्गं प्रतिबोध-
यन्ति ॥

भावार्थः—मन की शुद्धता पुरुषों का तीर्थ मन्त्र ब्रह्म और इन्द्रियों का अवरोध तप है यह सब शरीर से उत्पन्न तीर्थ स्वर्ग के मार्ग को दिखलाते हैं ॥

चित्तमन्तर्गतदुष्टं तीर्थस्नानान्न शुद्ध्यति । शतशोध-
जलैर्धौतं सुराभाण्डमिवाशुचि ॥

भावार्थः—जिन लोगों का अन्तःकरण दुष्कर्मों से दूषित है वे तीर्थस्नान से भी नहीं शुद्ध होते जैसे मद्य पात्र से कहीं पड़े गङ्गाजल को धोने से भी नहीं शुद्ध होता ॥ शेष आरोग्यदर्पण के चतुर्थखण्ड में लिखेंगे—

विशेष विज्ञप्ति ।

आरोग्य दर्पण के द्वितीय खण्ड के लिख को अब हम यहीं समाप्त करते हैं । आरोग्य दर्पण के चतुर्थ खण्ड में प्रथम ज्वर चिकित्सा लिख के जिसकी अत्यन्त आवश्यकता है क्योंकि देशीय रीत्यानुसार ज्वरचिकित्सा न जानने के कारण तथा अंगरेजी दवाइयाँ खा खा की असंख्य प्राणी अकाल कालोंमें मर जाते जाते हैं । वह ज्वरचिकित्सा परोक्षित प्रणाली हम ऐसे सुगमता से लिखेंगे कि सर्वसाधारण जन ज्वर रोग से स्वयं बचेंगे और अनेक ज्वरार्तियों को आरोग्य कर सकेंगे । उस रीति का ज्वर चिकित्सा नामक अपूर्व ग्रंथ आज तक देखने में न आया होगा । पश्चात् योगविद्या (आध्यात्मिकशक्ति वृद्धिपात्र) का आद्यापान्त वर्णन करेंगे कि जिसकी द्वारा अनेक जन अनेक प्रकार के अपूर्व लाभ उठा सकें जो बड़े २ महात्माओं को दुर्लभ है । तत्पश्चात् भूत पूर्व महर्षियों के अनुमान किये हुये दिनचर्या का वर्णन करेंगे । इस स्थल में “भारतान्नात का वैद्यक प्रथम अङ्ग है” लिखकर, इस आयुर्वेदाक्त औषधालय में जो परोक्षित औषधियाँ हैं उनके सूचीपत्र लिखते हैं ॥

आप लोगों का शुभचिन्तक

जगन्नाथ शर्मा राजवैद्य

जानसेनगञ्ज

इलाहाबाद

भारत के उन्नति का वैद्यक प्रथम अङ्ग है ।

इस विषय में हमें बहुत लम्बा चीड़ा छेख देना अभीष्ट नहीं है क्या-पाठकगण नहीं जानते जैसा कि ऊपर लिखा हुआ है "धर्मार्थकाम मोक्षायामारोग्यं मूलकारणम्" फिर यह भी प्रमाण २ ज्ञाताओं का वि-
दित है कि प्रतिदिन भारत का द्रव्य विलायत (इङ्गलिस्तान) को अक-
पण रूपी नदी की अनेक धारा से बहा चला जाता है, उसमें से अधि-
कांश धन बाहिनी धारा बही है जो अंगरेजी दवाइयों के मूल्य के द्वारा
संचित होकर समुद्र पार की राह लेती है प्रायः देश हितैषी विद्वान् लोग
उसी द्रव्य के लिये छटपटाव २ चारों ओर अनेक-कानकरंज (जातीय
समाज) और भांति २ कमेटियां कर रहे हैं, रपाय शोध रहे हैं, देशी
तिजारत शिष्ट विद्या आदि का प्रचार कर रहे हैं तो बताइये बड़े २
भारद्वाजादि महर्षियों की रपाजित वैद्यकविद्या आदि की और देशी
औषधी जो लोगों के प्रकृति के अनुकूल गुण की देने वाली, पवित्र धर्म
रखनेवाली, प्रति सस्ती सदैव सुलभ सहज में बनने वाली, आपका क्या
बिगाड़े है जिसको आप लोग दिन प्रति छोड़ते जाते हो, यह नहीं
सोचते कि उसके छोड़ने के साथ ही साथ हमारे अर्थ धर्म काम मोक्ष भी
छूटते जाते हैं? अर्थ के नाम धन है तो वह धन जैसा कुछ हाकरी औ-
षधी में लगता है उसे यही खूब जानता है जिसको उनसे काम पड़ता
है । बस धन इस प्रकार पर पिदा हुआ जिसके साथ ही साथ पवित्रता
भी जो धर्म का प्रधान अङ्ग है नष्ट हो जाती है, क्योंकि शूकरादि अ-
नेक मलिन और अखाद्य जन्तुओं की चर्बी और भांति २ के घृणित पदार्थ
रचित मदिरा और आसब और अनेक सजल निर्जल रूप उन लोगों की
बमार्हे हुई कि जिनके खान पान व्यवहार को स्मरण कर सच्चे धर्मेगील
को बमन की दशा आ जाती है । यह कौन नहीं जानता कि घृणित
द्रव्य संयोजित मद्य से बनी हुई अंगरेजी औषधियां होती हैं जो पहले

कहीं स्वप्न में भी नहीं दिखलाई देती थीं और हाकुरों का कहीं नाम निशान भी नहीं था, तो क्या हम लोग रोग में मरही जाते थे? कभी नहीं । कितने बड़े कहते हैं "निर्वीजापृथिवी निरीपध रसा" यहां की पृथिवी निर्वीज होगई और औषधियों का रस जाता रहा हम कहते हैं जेरा आंख खोल कर मेटीरिया मेहीका को देखो, आधी औषधियां भारत बपंकी हैं और शरीरक बिद्या और अरुत चिकित्साके भी मूल सूत्र इसी भारतवर्ष से बिदेश गये हैं । यह यूरोप के प्राचीन इतिहासों में स्पष्ट रूपसे लिखे हुये हैं, उन्हीं सब बातों को खूब कैला के अंगरेजों ने परीक्षा पूर्वक प्रकाशित की है और अब उनी के द्वारा लाखों रुपये पर धीठे भारत से खींचे लेते हैं, क्या उक्त लोक उन् लोगों के लिये चरितार्थ नहीं हो सका ? उक्त उलोक का अभिप्राय यह है कि पृथ्वी निबल हो जायगी अर्थात् जहां बड़े २ अलयाग, शूर, और पैदा होते थे यहां निर्वल कायर कुपूत उत्पन्न होंगे क्योंकि पांच तत्वों में से पृथ्वी तत्व विशेष प्रधान है और सब का आश्रय भूत है और "निरीपधिरसाः निर्गता औषधिरसाः येभ्यः" अर्थात् अन्धी २ संजीवनी औषधियों का रस जाता रहेगा लोग आसुरी चिकित्सा और असुर प्रिय पदार्थ के लालुप हो जायंगे क्योंकि "गीयामहरवंगता" यदि कोई यह कहे कि यहां के वैद्य लोग भूर्ख हैं दो चार भाया की किताब देख लिखा वैद्य बन गये, रोगी जहजम में जाय अपनी हथपकीती से चार पैसा पैदा कर लेता उनका मुख्य कर्तव्य है । तो हम कहते हैं कि इसमें विद्या और औषध का क्या देय है राजा बिदेशी ठहरा वह इस पर क्यों ध्यान देने लगी और न भारत में कोई ऐसा आयुर्वेद कालिज है कि जहां विद्यार्थी लोग पूर्ण रूप से शिक्षा पावें । अगर यह कहा जाय कि यथा राजा तथा प्रजा, मुसलमानों के राज होमेसे हकीमीकी तककी हुई अङ्गरेजी राजमें हाक्तरी की इसी प्रकार जिसका राज्य होगा आयुर्वेदक तत् देशीय औषधों का प्रचार भी अवश्य होगा और होता ही है देखिये अभी जांट हफरिन की रानी श्रीमती लेहीहफरिन ने हाक्तरी फण्ड में लाखों रुपये का चन्दा एकत्र कर गये और उनका भार बतमान बाइसराय की लेही साहबा ने

अपने ऊपर लिया है और प्रत्येक प्रान्त के गवर्नर लफटेण्ट गवर्नर उस की सहायता में उद्यत हैं इस कार्य का प्रधान हेतु यह कहा जाता है कि संकलित साह्या को हिन्दुस्तानी स्त्रियों पर दयाआर्ष है पर यह गूढ़ बात को हमें नहीं कहता कि इंग्लिस्तानी महाशयों (दयाहयों) के कारखानों पर अत्यन्त दया आर्ष है आज तक किसी लेडी को हिन्दुस्तान की असंख्य दुधातुर अनाथ अबलाओं पर दया न आर्ष न उनकी मूर्खता के निन्दित करने का विशेष प्रयत्न हुआ हां सर विलियम न्यूटन की शिक्षा पर अधिक कटाक्ष पात किया या सो बिलकुल ठीका हो गया सारे खर्च की कसर सरिश्ते तालीम से निकाली जाती है फ्रीज जाता है कि निर्दुनी के बालक विद्या के भी निर्दुनी बने रहें ।

ज़बरेदस्त का ठेगा सिर पर तो भी हम लोगों को सोचना चाहिये कि हुकीमी औषधियों से हमें इतनी हानि नहीं हुई क्योंकि उनमें प्रायः घनीषधियों के सेवन का प्रयोग है परन्तु होकुरी औषधियों से गारारिक नानसिक्त दीर्घायता और धन धर्म की शर्यामांश हो रहा है ।

द्वितीये प्रथम तो अति हिम प्रमाण वा लयवनादि देशी मनुष्यों की प्रकृति के अनुकूल परीक्षित औषध इस घटकतु सम्यक् देशीय मनुष्यों के स्वभावानुकूल नहीं हो सका है ।

दूसरे-प्रत्येक गौली दवाइयां भांति २ के शराय से और मलहम घनैरह सुभर आदि की चूर्ण से तैयार होती हैं ।

तीसरे-औषध बनाने का यंत्र भरतन स्थान और किसतरह कौन २ चीजों के मेल से कौन औषध बनाया जाता है हम नहीं जान सके ।

चौथे-अङ्गरेजी दवाइयों का दाम बहुत अधिक है जहां तक जिस्ते लेते बन पड़े चाहे उसमें दमही की भी लागत न हो अच्छी शीशी और अच्छे २ टिकट चिपका देने से और आतुरता की तारतम्य से दाम वेही बिसाव बढ़ सका है

पांचवें-प्रायः अंगरेजी औषधों में जहर का मेल रहता है कि पोखे में जरा भी अधिक पी जाय तो रोगी को यमालय पहुंचना दूर

महीं है और ऐसा प्रायः देखने में आता भी है । अभी इलाहाबाद में एक बड़े भारी ओहदेदार का प्राण सड़क में लग गया उसी रंगी चुंगी शीशी के पीछे में ।

उठे—यह विंध्य प्रान्तीय उष्ण प्रधान देश है और अनेक दिगान्त-रीय लोगों के यहां आने से इतना गर्म हो गया कि है शीत अतुओं में भी बिना कुछ ठंडी शीज खाये तदर दाह शांत नहीं होता । अंगरेजी दवा और व्यवहारों से यहां के लोगों का बल सुद्धि पराक्रम इतना कम-जोर हो गया है कि जिसका अनुभव प्रत्येक व्यक्ति शिर की भूत्पता से स्वयं सिद्ध हो रहा है वर्णन की कुछ भी आवश्यकता नहीं है ।

सातवें—यह बातें तो प्रायः सभी जानते हैं तथा पुराणों के देखने से भी जाना जाता है कि भूतपूर्व आर्य्य सन्तानयन विषयी कम होते थे इसी से वे लोग बलवान् पुरुषार्थी अधिक होते थे जब से मुसलमानों का राज्य हुआ संस्कृत विद्या का सूर्य अस्त हो गया हिन्दू मुसलमानों में मेल मुलाकात अधिक बढ़जाने के कारण देखा देखी एतद्देशीय लोग भी इतने विषयी हो गये कि आज के समय में वीर्य्य सम्पन्न बलवान् बिरलें पुरुष पाये जायेंगे ।

जो रहा सहा सो भी अंगरेजों की संगति और मेल मुलाकात से चुरट एकसा धन बरांडी गर्म दिनों में भी काले बनावत का कोट पतलून से और होटल का नहा मसह इतना हमलों के धीरे हीन कर दिया है कि जिसका कुछ ठिकाना नहीं उसी पर जहां अति तीक्ष्ण विद्वेसी अंगरेजी दवा सेवन हुआ कि पच्चीसही तीस वर्ष की अवस्था में यमपुर घास करने का अवसर मिल जाता है ॥

यह जो हमने लिखा है कि देशी औषधियों की अपेक्षा अंगरेजी दवाइयों के मूल्य बहुत अधिक हैं, उसका कारण दिखलाते हैं । आर्य्य-वर्तमें अंगरेजी औषधियां नहीं तैयार होती और न बनाने की कोई भाशा है क्योंकि कलामिल, क्लोरोफार्म आदि औषध बनाने के स्थान और यंत्रादि यहां निरूपन करने में कई लाख रुपयों का खर्च तथा विलास

मे प्रकृपा कुंजल चुरोपियन वैद्यों का जाना असम्भव है और यहां घ-
 नने से बहुत से भेद सुलजाय तो दाग भी घट जाय और जो भक्ष्य-
 भक्ष्य अनेध्यानेध्या मिश्रित वस्तुओं का गर्म प्रगट हो जाय तो बहुत मे
 रोगी कि जिनको परलोक का कुछ भी भय है उन औपधियों के मेधन
 की अपेक्षा मरनेहों को अच्छा समझने लगें, स्पष्ट है कि अंगरेजी दवा-
 इयों का मुख्य स्थान विलायत है और मनस्त प्रधान औषध पुटाम,
 आदि जो आज यहाँ पर २ में जारी है विनायत से बन के आते हैं ।
 विचार करने का स्थान है कि विनायत में इसका कैसा कुछ कारखाना
 होगा और कितने बड़े २ कल होंगे जिनके द्वारा हजारों भन दवाइयां
 धड़ाधड़ तैयार हो जाती हैं और उन वस्तुओंका भेद अभी वही जानते
 हैं कि जो उनको फूट खान गला के या मत्त निकाल के औषध के रूप
 में करते हैं उनमें से बहुत सी चीजें ऐसी हैं कि हिन्दुस्तान में संत में
 मिलती हैं केवल लेजाने में जो कुछ खरबा पड़ता है, और बहुत मे
 ग्रीष्म जन्तु के तम सम्बन्धी पदार्थ उसी विलायत में मिल सक्ते हैं जो
 पहिले मिट्टी के मोल विकते हैं पर औषध बन जाने और टिकट के
 पिपकाने पर सोने की कीमत को भी गाल करते हैं बुद्धिमानोंके निकट
 सोचने पर यह बात साफ जाहिर हो सक्ती है कि वह वस्तु बहुत कम
 कीमत और कम कदर और बेकदरवाली है फिर उन्हीं से कितने लोग
 नफा उठाते हैं प्रथम तो खुद इंगलिस्तान के बड़े २ सीदागर जो हि-
 न्दुस्तान के बड़े शहर कलकत्ता और बम्बईमें कोठी रखते हैं और किस
 कदर नफा लेते हैं छिपा नहीं है * फिर हर एक शहर के पोषवाले दू-

* करीब ३ वर्ष हुये मैं श्री युत महाराजा हुमरांव की चिकित्सा
 करता रहा और उन्हीं के भाव कलकत्ते जाना पड़ा महाराजा साहब के
 खास मुन्गी भुं रंगधीर प्रसाद जी के दांत बनवाने के लिये भाव में
 मुझे भी कई अंगरेजों की दूकानों में जाया पड़ा पांच छः सी रुपये मे
 किसी ने दांत का चीज (मूर्ख) कम न किया अन्त में बेचाई उत्तम दत्त
 स्वर्ण निमित्त एक बहूयासी महाशय ने (१७५) में दिया ॥

में न रखते हैं। बल्कि सैराती अंगरेजी दवाइं बटवाया भी करते हैं। फिर कौन ऐसा शहर है जहां दश बीसे हाकुर और दो चार अंगरेजी दवाइं खाना न हो, बस इसी से जान लीजिये कि आर्य्यवर्त में कैसा कुछ अंगरेजी दवाइयों का प्रचार है। इस समय २० कोटि भारमवर्ष निवासिनी प्रजा है तिसमें ५ कोटि इक्कीमी और ३ कोटि वैद्यक की औषध खानेवाले हैं। १२ करोड़ अंगरेजी दवा के खातेवाले जानिये। हम कहते हैं २० करोड़ में मिर्फ एक करोड़ ऐसे मनुष्य हैं जो प्रायः अंगरेजी ही दवा खाते हैं यदि चेत पूर्वापर मिना के प्रत्येक मनुष्य प्रत्येक मास में मिर्फ दो रुपये के औषध खाते हैं। तो एक रुपया प्रत्येक व्यक्ति का विलायत जाता है इस हिमाब से एक करोड़ रुपया सहीना और १२ करोड़ रुपया साल हुआ अर्थात् प्रति वर्ष कम से कम भारतसे अंगरेजी दवाइयों का दाम १२ करोड़ रुपया विलायत जाता है ॥

हे भारत देशहितैषियों भारत शुद्धा प्रवर्तकों भारत के मित्रों आर्य्यसमाजियों ब्रह्मसमाजियों और हिन्दूसमाजियों क्यों आप डोंग

काशी में सरकारी हास्पिटल के अतिरिक्त कई महाराजों के तर्फ से भी अंगरेजी दवाइयां बटती हैं बल्कि इसी विषय में दोहे दिन हुये कि हमने विशुद्धानन्द स्वामी (जो काशी में एक प्रसिद्ध संन्यासी हैं) जिसे भारतके प्रायः महाराजें जानते हैं) से कहा कि यह काशी परम पुण्यस्थ नगरी में प्रायः धार्मिक गणवास करने के अर्थ जाते हैं जल दोष से जहां बीमार हुये वही मद्यमिश्रित औषध उन्हें सेवन करना पड़ता है यदि आप इसे धर्मशील महात्मा चाहें तो राजाओं के ओर से एक आयुर्वेदिक औषधालय खोल दिया जावे तो बहुत कुछ धर्म की रक्षा हो सक्ती है उसका उत्तर यही दिया कि अंगरेजों का राज है तो जिसका राज उसी की विद्या कोई राजा हमारी क्यों सुनने लगे अब बतलाइये जब ऐसे २ महात्माओं की यह दशा है भांग अफीम का गोला खाने और लाखों रुपये राजों से लेकर भीज उठाने से काम, चाहे भारत जहन्नुम में जाय ॥

घोर निद्रा में सो रहे हों ? आप लोगों की इस पर दृष्टि क्यों नहीं पड़ती ? इसका आन्दोलन और विचार आप लोग क्यों नहीं करते हो ? इसमें केवल धन सम्बन्धी हानि नहीं है कि जिसको सब कोई जानते हैं, वरन् धर्म सम्बन्धी हानि बड़ी भारी है हाथ, आप लोग देवता और ऋषि मुनि की मन्तान होकर राक्षसी क्रिया और महा घृणित वस्तुओं से मिली हुई औपधियां कि जिनका नाम छेने और बुध करने से भी संज्ञात हो जाय दाम देकर खरीदने हो और कैसा दाम कि धारंवार हनों को देना पड़ता है लोकल टैक्स के अनुसार हमें सबसे रुपया लेकर गहरों और कसों में छोटे बड़े हस्पताल जारी हैं तिसपर भी हाकिन लोग दबाव डाल कर बड़े २ आदमियों से चन्दा लिया करते हैं क्या आप लोगों की जीभ में इतनी सामर्थ्य नहीं है कहे कि हम लोगों की चिकित्सा के लिये अच्छे २ वैद्य और हकीम नियत किये जाय कि जिनके औपध सेवन से हमारा लोक परलोक दोनों बनता है इसके कहने से किनी को कांसी नहीं हो जाती, यह बात सब कोई जानता है इस धर्म के मूल सिद्धान्त पर क्या न दो बड़ी भारी हानि है वल्कि प्रकृति के विपरीति दीयी सृष्टि के लोगों को आहारी सृष्टि की औपधियों से सेवन से युद्ध की मन्दता आयुर्बल की घटती शारीरिक पुष्टता का विनाश होता जाता है ऐसा कि ऊपर मैं लिख चुका हूं कि अति ठंडी विलायत की औपधियां इस गरम मुक्त वालों के स्थभावानुकूल गुणकारी नहीं हो सकती ॥

सोचने की बात है कि जिन हंस पक्षियों का आहार दूध और मोती प्रभृति तत्तन २ पदार्थ हैं उनके बच्चों को पगुलों का अपवा गृहादि मलिनाहारी पक्षियों का भोजन दिया जाय तो कब उन्हें लाभ होगा, यदि इस लेख पर कोई तर्क करे कि इस देश के वैद्य हकीम अंगरेजी औपधियों को बड़ाई द्वेषभाव और हाह युद्ध से नहीं करते और न करेंगे ? यह बात ठीक नहीं है तत्तन पदार्थों को कोई भी घुराई नहीं कर सकता और न हो सकती है हम न्याय पूर्वक कहते हैं केवल भारतीय एयरही को देखिये जो कारण हमारे प्राचीन आर्य महर्षि गण निर्दोश

कर गये हैं वहे २ पण्डिताभिषांगी इतरोपीय चिकित्सक गण अद्यावधि सभी को सेवार्थ मेलेरिया की वरु के एवं कूर्इनाईन व्यवहार के कणमात्र अधिक कुछ कह सकते हैं ? हममें कोई सन्देह नहीं कि कूर्इनाईन ज्वर दमन करने में एक अपूर्व औषध है परन्तु इस पर आव्य मन्तान गण को आययित न होना चाहिये, यह तो आयुर्वेद ही कहता है "तिक्तं द्रव्यं ज्वरां जयेत्" अर्थात् कटु, खीज ज्वर को जीतता है तो कूर्इनाईन के सेवन से ज्वर कुछही गया तो कीन, जाइरस, दुभा लेकिम, ज्वरादि कोई रोग क्यों न हो। अधिक तिक्त औषध का सेवन करना आयुर्वेद विरुद्ध है और कूर्इनाईन के सेवन से भारत की कैसी दशा हो रही है और उस से फल की अपेक्षा अफल क्या है कोई भी दृष्टि नहीं देता है ॥

अति तिक्त द्रव्य के अधिक मात्रा व्यवहार से निम्न लिखित रोग हो जाते हैं ॥

चरक सूत्र स्थान अध्याय २६ में लिखा है। अधिक तिक्त औषध के खाने से वह तिक्त अपने कृत्वादिप्रभाव से रस क्षीर, मांस मेद अस्थि मज्जा और शुक्र में कसता और शिरासमूहों में खरता उपस्थित करता है, शारीरक बल नाश, ग्लानि मोह अथ मुख शुष्कता एवं अनेक वात-रोग उत्पादन करता है ॥

यही दोष भाषप्रकाश के पूर्वखण्ड और सुश्रुतादि ग्रन्थों में भी पाये जाते हैं। अगर कोई कहे कि शुक्र तारण्य धातु की दीर्घव्यता आदि रोग भारतवासियों के कूर्इनाईन के खाने से हुआ है इस्का पुष्ट प्रमाण उपरोक्त ग्रन्थों में कैसे हो सकता है ? क्योंकि हिन्दुस्तानी लोग लाल निषादि तीती वस्तु ग्रहण खाते हैं उसमें भी वही दोष होना सम्भव है ? हम कहते हैं उसे न मानिये अधिक कूर्इनाईन सेवन से यही म-कल फुफल सम्बन्ध में, विलापत और अमेरिका के प्रसिद्ध २ डाक्टरों ने जो अपनी किताबों में परीक्षा पूर्वक लिखा है जिसे मैं संक्षेप से नीचे लिखता हूं उसे तो मानिये ॥

ए० बी० गारह एम० डि० एफ० एस ने अपने पुस्तक के द्वादश संस्करण २६ पृष्ठ में लिखा है कि अधिक मात्रा कूर्इनाईन का सेवन

हृदय संबन्धी रुपा को जड़ता भाव करता है जिससे रक्त का गमनागमन अर्थात् कम होने में आक्षेप रोग मृत्यु पर्यन्त हो सकता है ॥

एम. डी. ने अपनी पुस्तक के ११ चाप्टर के ५३९ पेज में लिखा है कि कूईनाईन अधिक दिन सेवन करने से निम्नलिखित उदर व्यथा उपस्थित होती है जैसे पेट में उष्णता और भारी मालूम होना सूखी ओंकी आना या जी नचलाना यह ब्वा और भी प्रबल उदररोग हो जाता है।

कूईनाईन की रुपा संबन्ध में और बातों के अतिरिक्त यह विषय ध्यान देने लायक है कि जो कूईनाईन का विकार शरीर में व्याप्त हो पीथ २ में देखा गया है एवं स्पेलेरिया बिप शरीर में जो संपूर्ण उपद्रव उपस्थित करे उसके द्वारा शरीर में रक्त का परमाणु कम और विकृत भायापन्न हो शरीर रक्त हीनता पांडु वर्णता, मृदुति रोग, रसांशिक दुर्बलता अन्त में शय्यागत की आरुस दशा प्राप्त करता है ए. सी. काह्ल, पार, खोपेट, एम. डी. पीएच. डी. एल. एल. ४ एडीसन २१३ पेज देखो ॥

कूईनाईन अधिक दिन सेवन करने से प्रसंग करने की शक्ति केवल घटती नहीं जाती किन्तु मधुन शक्ति का एक बोरगी छाप हो जाता है और रात को स्वप्नावस्था स्वप्नदोष आय चिरता है। डी. एफ. एडेन, एन. एनडी, तृतीय चाप्टर के २३२ पृष्ठ में देखो ॥

होहा और यकृत रुद्धि एवं शूल होता है हेनरी यक एन. आर, सी. एम. १०२ पृष्ठ में देखो ॥

रिचार्ड हिठजेस एल. आर. सी. पी. ने अपने ४०९ पृष्ठ में क्या लिखा है देखो ॥

अधिक कूईनाईन सेवन से दूध में एक विलक्षण दोष उत्पन्न होता है यदि तक कि अच्छे हो जाते हैं एवं शिरपीछा सूर्यावर्त शिर भारी होना और विनाश फूटता है ॥

इस स्थल में नीतिप्र देश वासी पुरुषों का विचार करना चाहिये कि अति इस प्रधान देशीय अंगरेज लोग जो शरीर से अति दृढ़ मय मांस खाने वाले और बलवान हैं कथ उन लोगों को कूईनाईन

पूर्वोक्त प्रकार पर हानिकारक है तो उष्ण देशीय क्षीण देही शाकान्न भोजी नाना प्रकार के शोच ग्रस्त आर्य्य सन्तानों को अधिकतर अवगुण करता है इसमें अणु मात्र भी सन्देह नहीं है ॥

अन्त में हम अपने प्रिय देशी भाइयों से निवेदन करते हैं कि यदि आप लोग उक्त भयङ्कर विपद से उद्धार पाने की इच्छा रखते हो और अपना धन धर्म और अमूल्य जीवन को नष्ट न करना चाहते हो तो भूतपूर्व ऋषियों की परीक्षित उपदेश और नियमावली का पालन करो इसी में आप लोगों की कल्याण है ॥

पाठकगण, आप सत्य जानिये कि सनातन वैदिकधर्मके परम बैरी मजहबी तास्त्वय से भरे हुये कहर अर्यावारी यवनों के राज्य होने से भी जो धर्म नष्ट नहीं हुये वे सब धर्म कर्म आज नीतिज्ञ अंगरेजी राज से सिर्फ खिलायती अमोघ दवाइयों के सेवन से धन और मानसिकशक्ति तथा शारीरक बल समेत प्रतिदिन धमेकर्म नष्ट और निर्मूल होते जाते हैं, अंगरेजी औपधियों की बढ़तायत और गोरस की अल्पता ही का कारण है कि छोटे बड़े के तनमें प्रमेह और धातुर्घाण का डङ्का बज रहा है पन्द्रह सालह वर्ष की अवस्था में गाल खुसक जाते हैं जिस देश के पुरुष लोहे के कवच (बस्त्र) अंगरेजों की भांति पहनते थे वहाँ अथ लोगों को अगले मजबूत गाढ़े मोटे सूत की धोती दोन्ध नालून पहती है जो कड़े कोस घराघर दीड़े बले जाती ये सो उन्हीं अथ कीया देवीया चलने से भी नांस फूलती है लड़कों के शक्ति बाप दादे लोग खुद अपनी शक्ति हीनता के विचार पर शिवा देते हैं कि भैया पांख धीरे र रक्खा करो कहीं गिर न पड़े। सब है कि निर्बल कुतिया को पूछ ही भारी पड़ जाती है ॥

कोई २ कहते हैं कि "औपधजान्दवीतीय वैद्योनारायणोदरिः" तो हमका यह अभिप्राय नहीं है कि जान यूँकर महा अपवित्र तन धन धर्मेनाशक मलिन पदार्थ खा लेय और यह भी कोई प्रमाण नहीं है कि खाद्य अखाद्य वस्तु जैसे बिट्टा और महामांस की बनी हुई दवा बिना विचार खाले "अकतव्यं नक्तव्यं प्राणैः कठं गतिरपि" तो खाने योग्य

कभी नहीं रच सके हैं हमारे लिये यही देशीय जड़ी बूटी श्रेयस्कर है जो हमारे प्रकृति के अनुकूल है। मनुष्य का जन्म पञ्च विकार से होता है जिस देश की जमीनी हवा जल पृथ्वी आदि के गुण हैं उसीके अनुसार मनुष्य का रंग और प्रकृति इन्द्रिय बोल चाल होता है (जैसे ब्रिजायत और काश्मीर के मनुष्य गौरांग, भदरांग के काले, नेपाल के चपटे मुँह वाले, उत्तरीय पहाड़ों में अश्वमुखवाले होते हैं और वहीं के निही में जो धान्यादि उत्पन्न होते हैं वहाँ को खाकर वे लोग जीवन काटते हैं और बिमार होने पर वही देशीय जड़ी बूटी के सेवन से तद्रुस्त हो जाते हैं। देखिये पश्चिम के लोग प्रायः उर्द की दाल खाते हैं। उन को कोष्ठ बद्धादि कोई बिकार उत्पन्न नहीं होता है पूर्ववाले एक दिन भी खावें तो बीमार हो जाते हैं परन्तु चावल रोज खाते हैं और पश्चिम के लोग चावल बहुत कम खाते हैं। इसका मुख्य कारण देश है पश्चिम में चावल की उत्पत्ति कम है पूर्व में उर्द कम होता है ऐसाही औषधों को भी जागिये। ईश्वर ने जिस देश में जिसे उत्पन्न किया है उसके शरीर रक्षा के लिये समस्त पदार्थों को भी वहाँ उत्पन्न कर दिया है तो फिर हम लोग जान बूझ कर अपने धन धर्म को नाश करते हैं तो चिन्तायुक्तता के और क्या है ॥

अंगरेजी दवाइयों के खाने से धर्म नाश होने के अतिरिक्त एक बड़ी भारी हानि और भी है कि जिसपर किसी देशीय चिकित्सक ने अब तक ध्यान नहीं दिया वह यह है कि अंगरेजी दवाइयों में अधिकांश औषध खड़ी (सलफ्यूरिक एसिड, टार्टरिक एसिड और साइट्रिक एसिड वगैरह) चारद्रव्य (कार्बोनेट आफ सोडा आदि) निमक (पुटासादि) और तीक्ष्ण (लायकर आदि) हैं और हेर केर कर सब रोगों में प्रायः दवाइयों के साथ वहाँ को योग रहता है और सोडा एसिड अर्थात् सोडावाटर लेमनेट का तो आज भारत में घर २ गंगा जल के समान पतोंय हो रहा है और एसिड आदि याने अम्ल क्षार तीक्ष्ण और लयण, धातु को दुर्बल सप्लीन और काह कर बहानेवाले हैं और बीयही आयु का मूल है तो जिन औषधों से मूलही का नाश है उसके सेवन से

हम लोग आरोग्य और दीर्घजीवी कैसे हो सकते हैं ? कदापि नहीं इस विषय पर सर्वसाधारण धार्मिक जनों को अवश्य दृष्टि देनी चाहिये, अब पाठकगण इतनाही से जान सकते हैं कि हम को अंगरेजी दवा खाना चाहिये या नहीं ॥

विज्ञापन ।

आयुर्वेदोक्त औषधालय जानसेनगञ्ज इलाहाबाद ।

त्रिवेणी जल से आयुर्वेद की प्रसिद्ध और पवित्र औषध बनायेनाई पूर्ण बटी आसथरसादि जो कहीं न मिले यहां लीजिये खराब या नकली निकले प्रत्यक्ष करा देने पर १०० रुपया दण्ड दें ॥

इस कारखाने में औषध बनानेवाले ब्राह्मणादि वृत्तम जाति हैं और जल के स्थान में अमृतोषम त्रिवेणी जी के धारा का गुंजाजल डाला जाता है ॥

जिन रोगियों को डाक्टर हकीमों की दवा साफकत न करती, हो या उनके रोग का पता न लगता हो कि यह कौन रोग है वे लोग अवश्य हमें लिखें या हमारे पास आवें, हम उनके रोग का नाम, दवा, पर्षों कायदा नहीं करता कौन दवा से यह रोग कितने दिनों में आराम होगा, रोग साध्य है या असाध्य, अर्थात् अच्छा होगा या नहीं हम सब यत्नाराम देंगे, परन्तु चिट्ठी में इतनी बातें अवश्य लिखें कि रोगी स्वयं है या पुरुष और कितने दिन से रोग है शरीर का रंग कैसा है शरीर मोटी है या दुबली चलने फिरने की ताकत कैसी है खाना किस किस का साफकत करता है दिशा पेशाब कैसा और किस रंग का होता है पेशाब के साथ धातु का जाना या जल के पेशाब होना, इत्यादि अगर कारूरा देख के लिखें तो और भी उत्तम हो, पेट में कड़ासन शिर में घुमरी जी मचलाना पेट में जलन कलेजा धक २ करना इत्यादि और भी जो प्रत्यक्ष लक्षण हो लिखें इसके अतिरिक्त और अनेक शरीर

सम्बन्धी प्रणाली के द्वारा पूछ सकते हैं । जहाँ का वह या जहाँ के लिये
 टिकट रख देवें नहीं तो जहाँ बिरंग दिया जायगा ।

भूमिका ।

प्रायः लोगों के मुख से शिकायत सुनने में आती थी कि वैद्यक
 मूल की औषधियां उत्तम और ताजी कहीं नहीं मिलती और यह तो
 सभी जानते हैं, बनियों के दूकानों में तो अक्सर सड़ी चुनी दवाइयां
 मिलती हैं इस अभाव को दूर करने के अर्थ यद्यपि यह दूकानें लीज बंद
 से जारी है परन्तु संपूर्ण कार्य लोगों के रुचि पर निर्भर है, जब लोगों
 के चित्त में यह असर पैदा हुआ कि इस देश के स्वभाव पर इसी देश
 की औषध अधिक गुणकर है क्योंकि जिस देश में जो रोग उत्पन्न होता
 है उसी देश में उस रोग की औषधियां भी उत्पन्न हुआ करती हैं और
 अंगरेजी दवाइयां सिर्फ बनावट मात्र प्रकृति विरुद्ध हैं और भारत से
 प्रतिवर्ष जो ₹ २०००००००० रुपया अंगरेजी औषधों के मुख्य विलायत जाता
 है क्यों जाय, जब हमारे प्रकृति के अनुकूल देशी औषध मौजूद हैं ।
 दूसरे माध्यमों से अंगरेजी दवाइयां शराब से और किसी रेगुलरी में
 साबुन पड़ती हैं और विलायती साबुन गोबर सुअर आदि जीवों की
 चर्बी से बनती हैं तो जब तक हम देशी औषध से आरम्भ नही करते हैं
 तो क्यों अपने धन धर्म को मारा करें । तब से हम लोगों ने भी कुछ
 प्रयत्न हो संपूर्ण औषधालय की वृद्धि करना आरम्भ किया है । यहां
 सब प्रकार की औषधियां सुसज्जित रीति और सफाई से बनाई जाती
 हैं । जहाँ बूटी जिसका मिलना तो कठिन है वही लोग पीतते तक नहीं
 वे सब भिलों के द्वारा जंगलों से भेगाई जाती हैं जैसे सरिखन पिचवन
 श्योनाक सिंभारि विधारी गुलसंकरा दातूनि बिलाहेकन्द प्राली रुद्रवन्ती
 आदि इस लिये मांग जाने पर जंगली औषध भी भेज सकते हैं । लेकिन
 यह बात अवश्य याद रहे कि तैल वगैरह या अधिक दवा रेल में भेजाने
 से बहुत कम महमूल में पहुंच जाता है और शीशी टूटने का भय नहीं
 रहता ।

यदि कोश दो कोश पर भी रेल का स्टेशन हो तो स्टेशनका नाम और किस छैन में है अवश्य चिट्ठी में लिख दें ॥

नियमावली ।

जिन महाशयों को विज्ञापन के अनुसार मंगाई हुई दवा माफकत न करे वह औषध लक्षणा सहित लिखकर लौटा देने से दूसरी दवा भेजी जायगी परन्तु दवा के आने जानेका हांक नहसूल रोगीको देना होगा ॥

उचित है कि दवा का दान पहले भेज दें वेल्यूपेयुल में मँगाने से पोष्टकमीशन अधिक देना पड़ता है । पोष्टकाफिस द्वारा हांक नहसूल निम्नलिखित हिसाब से लिया जाता है एक पाय तीलमें हो तो १) आधसेर का १) इसके उपरान्त फी आधसेर पर १) नहसूल लगता है शक होने पर तील लें ॥

जो लोग पार आने की भीतरही दान की दवा परीक्षा में मंगाये और तैल न हो ॥ का टिकट भेज देने से उनके पास पैलीमें घन्द दवा प्रहुंम जायगी परन्तु टिकट ऐसे ढंग से बन्द करके भेजें कि ऊपर से दिखलाई न दे क्योंकि अक्सर पोष्टमैग लोग निकाल लेते हैं ॥

जो महाशय पारसल में दवा मँगाने के (बिना किसी ऐसे कारणों से पारसल टूट गया हो) वापस कर देंगे वह नहरा पारसी समझे जायगी और उनके नाम दगांयाजी की श्रेणी में छपा दिया जायगा । क्योंकि यह औषधालय देशोद्वार के लिये जारी हुआ है ॥

जगद्विख्यात नारायण तैल ॥

इस तैल के मदन से या नाश देने से या मुदा में पिघकारी देने से लकवा आदि सब प्रकार के वायु रोग आराम होत हैं एक पायका दान ॥ हाकव्यय ॥

विषगर्भतैल—शीत वायु रोग के लिये इसे बहुतकर अन्य तैल नहीं है यह तैल बहुत गर्म है जिसको अति शीतसे गरिया आदि धातु

रोग हुआ हो या जोड़ों में दर्द या सूजन आगया हो इस तेलके लगाने से बहुत जल्द आराम होता है पाचभर का दाम १) हाकव्यय ॥)

मापादितैल—रक्त विकार से हो या जीत से हो दोनों प्रकार के वायु रोग गठिया आदि आराम होते हैं और लिसका शरीर मूलनया हो या सूखा जाता हो थोड़े ही दिन इस तेल के लगाने से मोटा हो जाता है और लड़कों का मिठवा रोग भी छुट जाता है। पाच भर का दाम १) हाकव्यय ॥)

लाक्षादितैल—इस तेल के लगाने से कैसाहू पुरानी खांसी बुखार क्यों न हो बहुत जल्द आराम होता है पाचभर का दाम १) हाकव्यय ॥)

कामलाक्षादितैल—इस तेल के लगाने से शरीर में ताकत और धातु बढ़ता है और बदन का पीलापन जाता रहता है पाचभर तेल का दाम २) हाकव्यय ॥)

चन्दनादितैल—इस तेल के लगाने से शरीर में सुखी आती है बल बढ़ता है शिर की गर्मी हाथ पैर का चलना उन्माद इत्यादि छुट जाते हैं पाचभर तेल का दाम १) हाकव्यय ॥)

त्रिफलादितैल—इस तेल के लगाने से बदन की खजुली जगन लाल २ चट्टे पड़ जाना नश्वी में सुखराइट होना खून बिगड़ जाना ये सब बहुत जल्द आराम होता है और जो खून की बीमारी पुटास सालसा आदि के पीने से न आराम हो तो इस तेल के लगाने से आराम होता है इस तेल से हजारों बीमार अछे हुये हैं एक पाच का दाम ॥) हाकव्यय ॥)

अनभूतदन्तारोगाशनि चूर्ण—इस चूर्ण को दांतों में रगड़ने से दन्त-शूल दांत से रक्त आना दांतों में पानी का लगना हिलना और मुख की दुर्गन्धि निस्सन्देह जाती रहती है। एक डिब्बी का दाम १) हाकव्यय ॥)

बृहत्प्रपामार्ग द्वार तैल—इस तेल को शाम सवेरे ५ विन्दु कान में डालने से निस्सन्देह कर्णशूल कर्णश्राव कर्ण शब्द और थोड़े दिन का बहिरापन आराम होता है एक शीशी तैल का दाम १/-) हाक व्यय।)

व्याघ्रीतैल—इस तेल के नाश लेने से किसीहू पीनस की बिमारी क्यों न हो अर्थात् जिसके नाक से मवाद और दुर्गन्धि आने लगती है एक पक्ष में आराम होता है दाम ॥) हाक व्यय।)

कुमारकल्पद्रुल बटी—अर्थात् (मिठवा की गोली) किसी बालक मिठवा रोग से क्यों न सूख गया हो अनुपम पत्र लेखानुसार इस गोली के खिलाने से बालक आरोग्य हो तैयार हो जाता है दाम ॥) हाक व्यय।)

प्रमेहारि चूर्ण ।

आज कल आम्पावर्त में एक भी मनुष्य ऐसे न मिलेगा कि जिन्हें घातु की शिकायत न हो, बालक से बूढ़े तक इस रोग में ग्रस्त हैं, बहु-तेरों को मालूम भी नहीं सिर्फ इतनाही कहेंगे कि हम इतना खाते पीते हैं यदन में नहीं लगता है, फिर घातु रोग यह ऐसा खराब रोग है कि शीघ्र यत्न न करने से जड़ धाम लेता है और कुछ दिन घमा रहने से दूसरी बिमारी खड़ी हो जाती है जैसे नजला, जीर्णज्वर, तपेदिक खांसी, दमा, अतीसार, कोष्ठबद्ध, अग्निमन्द, नेत्र, दांत रोग इत्यादि और भी जितने रोग हैं सब घातु की कमजोरी से होते हैं। घातु दुर्बल होने का लक्षण यह बहुत ठीक है, कैसा ही समझा खाना खाये शरीर तैयार चिकना ताकतवर न हो, शरीर मोटा भी हो तो आलस्य से मरा रहे, भीतर खफ़ीफ़ गरमी धनी रहे, पढ़ने लिखने में चित्त न जमे, मन फिर मन्द और उदास रहे, जैसे बहुत रास्ता चलने में शरीर थक जाती है वैसे ही शरीर ढीली और सुस्त कभी २ हो जाया करे प्रसंग की इच्छा कम हो, हो भी तो शीघ्रही शीर्षपात और आगन्द रहित हो, ऐसे लोगों का घातु भी कई प्रकार से जाता है जैसे दिशा के प-

हिले या पीछे गिरना, दिशा फिरते समय मल उत्तरने के लिये कांखने से सूत्र मार्ग से धातु का टाक आना, सूत्र भेद जन जाना, स्वप्न दोष होना, या भेद शीघ्र में सूत्रको एक दिन रात काग से बन्द कर रखने से सूत्र में जाला २ या या गदला नीचे जम जाना इत्यादि किसी प्रकार से धातु क्यों न जाता हो प्रमेहारिचूर्ण समूल नष्ट कर धातु डो, गाढ़ा करता है । अगर छलहीने से रोग हो तो १ दिव्य चूर्ण से आराम होता है १ वर्ष से हो तो २ दिव्य चूर्ण से और ५ दिव्य चूर्ण के खाने से कैसाष्ट पुराना धातु रोग हो आराम होता है । सुजाक आराम होने के बाद इस चूर्ण के खाने से फिर सुजाक नहीं उभरता । कैसाष्ट दुबला मनुष्य हो बदन की बड़ी तक दिखाती हो ५ दिव्य तक चूर्ण खाने से दूसरी शरीर हो जाती है । मुख से या दिशा से रून का गिरना, सूखी खांसी का सदा घना रहना, नजला आदि जो धातु से सम्बन्ध रखते हैं सब आराम होती हैं तारीफ इसमें यह है कि इस चूर्ण के सेवन से दस्त कब्ज न हो के और दस्त सुलाखा होने लगता है १ दिव्य चूर्ण का दाम (॥=) डाक, नहमूल ५) और ॥) नहमूल में दिव्य चूर्ण का सत्ता है चूर्ण खाने का विधान पत्र उपा सुभा दवा के साथ है ॥

कामदेवचूर्ण ।

इस चूर्ण के सेवन करने से धातु अत्यन्त गाढ़ा और पुष्ट होता है । धातु पुष्ट करने वाला इसे बढ़कर अन्य औषध नहीं है । कैसाष्ट पतला पानी के समान धातु क्यों न हो गया हो ४० दिन के खाने से धातु गाढ़ा हो जायगा, इस अर्थ पूर्वक कहते हैं चाहे उमर भी कुछ जादा हो गई हो कभी लड़के नहीं हुये हों, अगर स्त्री पुरुष दोनों छ मास पर्यन्त परहेज सहित कामदेव चूर्ण का सेवन करें तो निस्तन्देह गर्भाधान रहेगा और ताकतवर लड़का पैदा होगा अगर फल पड़े तो १०० दण्ड देवे । अगर तीन दिव्य तक इस चूर्ण को बराबर खाता जाये तो उसका दीर्घ अत्यन्त गाढ़ा पतल के समान बज्जी, कपूर के समान स्वेत, पात होने पर गैलाकार जग मुभा जो विभाग करने से भी अलग

न हो और प्रसङ्ग में आनन्द का देनेवाला हो। अतः यह कि पथ्य से रहे एक दिव्या चूर्ण का दाम १) डाक महसूल ॥) दो दिव्या ॥) महसूल में जा सकता है ॥

नयनामृतसलाई—चक्षुसा लगाने की जकूरत जाती रही। यह सलाई अतीव श्रम से अनेक नेत्र गुणकारी औषधियों के स्वरस में संशोधन कर बरसों में बनायी है नेत्रों में डेयल सलाई के करनेवा से धुन्ध, माड़ा, जाला, आंसू का बहना खजुरी और रतींधी जाती रहती है इस सलाई को प्रतिदिन एक दफे आंख में करने से आंख में किसी किस्म की बिमारी न होगी और कुछ रोगों के अभ्यास में चक्षुसा लगाना छूट जाता है। एक सलाई १० धन के लिये काफी है। हर एक सलाई में एक दिव्या अमृताक्षर के दाम ॥) डाकव्यय ॥) में कई एक सलाई जा सकती है ॥

विशूचिकान्तक घटी—अकं कपूर से भी बड़े कर यह बड़ी गुणदायक है निश्चय है कि यदि हैजा के प्रारम्भ होतेही अनुपाम पत्र लिखानुसार घटी खिला दिये जाय (भाग्य की बात तो दूसरी है) तो कभी ऐजे से रोगी न मरे। इस गोली से असंख्य बिसार भण्डे हुये हैं साटिंजिकठ भी मौजूद हैं। ५० गोली का दाम ॥) डाकव्यय ॥)

सुजाक की दवा—कैसाह, पुआता, सुजाक हो २० रोज में अवश्य आराम होगा दाम ३) डाकव्यय ॥)

कोष्ठघट्टारि चूर्ण—इस चूर्ण को रात्रि में सोते समय खाने से घेरे खुलासा दस्त होगा २० गोली का दाम ॥) डाकव्यय ॥)

आश्रित्यवालकों की औषध—हजारी लड़के मरने से बच गये हैं इस दवा के खाने से पसुरी का चलना खासो बुखारि पेट में दर्द होगा इत्यादि जितने बालकों के रोग होते हैं आराम होते हैं, दाम ॥) डाक ॥)

गर्भ चिन्तामणि रस—जिन स्त्रियों का कष्ट गर्भ गिर जाता है उनके वास्ते यह असतही है। इस औषध के प्रभाव से पूरे महीने

में आरोग्य लड़का पैदा होता है परंच गर्भाचन से लेकर जब तक लड़का पैदा न हो बराबर दवा खाना होगा पहरेज के साथ दाम १॥ डा० ॥)

उदरशूलघ्न बटी--यह उस पेट के दर्द को आराम करती है जो प्रायः लोगों को महीने दूसरे महीने चौथे छठे महीने बड़े जोर जोर से दर्द उठता है यहां तक कि मरने की नीयत आजाती है यह बिमारी औरतों को बहुत होती है इस गोली के खाने से चार पांच घंटे में दर्द जाता रहना है एक शीशी दवा का दाम ॥ डा० ॥)

कामोत्पादक बटी--इस गोली को संध्या समय खाकर ऊपर से गर्म दूध पी लेने से शरीर में एक उत्तेजना आजाती है और प्रसङ्ग में कुछ स्तंभन और आनन्द होता है। परंच अति गर्म प्रकृत वाले को फायदा नहीं करती एक शीशी जिसमें ४० गोली हैं दाम ॥ डा० ॥)

नपुंसकार बटी और तिला--इस बटी के खाने से और तिला के लगाने से ४० रोज में पन्द्रह बीस वर्ष तक का नपुंसक जो नस मारी गई हो आराम होता है तेल से छाले जादि नहीं पड़ते पूर्ण मात्रा दोनों औषध का दाम २) डा० ॥)

बुद्धिवर्द्धक अर्क--इस अर्क के पीने से यातों का भूलना शिर का घूमना जी संचलाना आंखों के सामने अंधियारा होना पेट या छाती का जलना बुद्धि का भ्रम ये सब आराम होते हैं एक शीशी का दाम ॥ डाकघर ॥)

अर्क खूनसफा--यह अर्क मुण्डी आदि शीयधियों से खींचा गया है इसमें सालसापरीला आदि से भी अधिक गुण है १ बोतल का दाम ॥ परन्तु यह अर्क रेतदार जा सकता है और ४ बोतल से कम न लेंगें ॥

अपूर्व दाद की दवा--निस्सन्देह इस महेपकारी देशी औषध के समान कोई अंगरेजी औषध भी ऐसा तय नहीं है किसी

पुरानी दाद तमाम शरीर में क्यों न फैल गई हो। ५ दिन के लगाने से समूल नष्ट हो जायगा और तारीफ इसमें यह है कि लगता बिलकुल नहीं। एक छिड़ी का दाम १) डाकब्यय १)

अमृताण्वचूर्ण—कैसाहू पुराना अतीसारे या आंव खून का दस्त हो इस चूर्ण के सेवन से अवश्य आराम होता है यदि इस चूर्ण से आराम न हुआ तो फिर आराम होना मुश्किल है। दाम १), डाकब्यय १)

खुफ़ खांसी की गोली—जिसमें मुश्किल से कफ आता है और खांसे २ मनुष्य घन कर देता है कुत्ते में पोड़ा होने लगती है और गरमी से जी घबड़ा उठे इस गोली के सेवन से जाती रहती है। दाम १), डाकब्यय १)

तर खांसी की गोली—यह खांसी जिसमें बलगम आता हो इस गोली को मुख में डाल कर घुसने से आराम होगी एक छिड़ी का दाम १), डाकब्यय १)

जूड़ीबुखार की अपूर्व घटी—कैसाहू जाड़ा दे के बुखार बासें से क्यों न जाता हो दिनकर (रोज २) अंतरा तिजारी और चौधिया शीघ्र ही छुट जाता है इसकी बहुत तारीफ करना निष्फल है चिकित्सक यह है कि जो बुखार कूड़ेनाईन आदि किसी दवा से न छुटा हो उस ज्वर वाले को यह घटी अवश्य लिखावे एक छिड़ी जिसमें २०० की गोली हैं १) डाक महसूल १) में ४ छिड़ी जा सकती है जो लोग ५) को एकट्ठा मंगावे ने उनको ६) का माने २५ छिड़ी मेजी जायगी १) जो लोग इस गोली को घमाये बांटना चाहें उन्हें की छिड़ी ४) में दिया जायगा परन्तु ५) रुपये से कम न मंगावे ॥

खड़बिन्दु तैल—यह प्रसिद्ध तैल है प्रायः लोग जानते हैं कि इसके नाश लेने से समस्त वायु शिर दई शिर का घूमना शिर घप घप करना

गिर में जैसे कुछ चला रहा है या काटता है ऐसा मालूम होना आंखों का हमेशा खुले रहना या जलन मालूम देना आंखों से कम मूकना इत्यादि अवश्य आराम होता है। दाम १ शीशी का ॥) डाकडमय ॥)

मस्तिष्कबलुभ तैल—बहुत दिनोंसे आंखों चला करते-२ यह मंहोपकारक गिर का प्यारा तैल तैयार हुआ है। यथा विधि इस तैल को गिर में लगाने से निम्नोक्त गिरावण्या-धुमरी-मस्तिष्क-शून्यता-ज्वर-माहट आंखों के सामने अंधियारा हो जाना आदि और यायत गिर के रोग हैं आराम होते हैं तथा मस्तिष्क सुशीतल और आंखों की ज्योति बढ़ती है इसकी सुगंध अतीव मनोहर राजा महाराजाओं के मर्यादा लगाने योग्य है। विदेशी तैलों की अपेक्षा यह तैल भारतवर्ष में विशेष फल प्रद है। एक शीशी का दाम १) डाकडमय ॥) इकट्ठी १२ शीशी का दाम १०) डाकडमय २)

पामारि चूर्ण—कैसाह खजुरी लगान गरीर में यों न फैल गई हो चाहे गीली हो या सूखी इस चूर्ण के लेपन ने शीघ्र ही आराम होता है दाम एक डिब्बी का ॥) डाक महसूल ॥)

लेवणभास्कर चूर्ण—यह प्रसिद्ध चूर्ण है प्रायः वैद्यकके ग्रंथों में लिखा है तारीफें हमसे यह है कि और चूर्णों की अपेक्षा सात दिन है स्वादिक है खाने से मन प्रमत्त होता है सम्पूर्ण प्रकार की उदर की बीमारी कैसाह पुरानी क्यों न हो कुछ दिनों इस चूर्ण के सेवन करने से आराम हो आती है जंगर हमसे आराम न हुआ तो फिर आराम होने में कठिन समझना एक डिब्बी का दाम ॥) डाकडमय ॥)

चन्दनादि चूर्ण—स्त्रियों के रक्त रोग पर अनुभूत औषध है मासिक रून का अधिक बहा रहना या बिना मासिकके रक्त का जाना अर्थात् रक्त प्रदर रक्तसिंहार और सूनी बवासीर की भी आराम करता है दाम ॥) डाकडमय ॥)

महाज्वरांकुशे बटी--यह बटी अति शुद्ध पारो, गन्धक, सों-
गिया आदि तीक्ष्ण द्रव्यों से बनी है खाने में बिलकुल गरमी नहीं करती
शीत पूर्वक ज्वर एकाहि अंतरिया तिजारी पीघिया चाहे जितने दिनसे
आते हों एक सप्ताह के अन्दर निश्चय छूट जाता है एक शीशी जिस्में
१०० गोली हैं दाम ॥) हा० ।)

अभ्रक भस्म एक सौ आंच का--यह रस का गुण गर्म नहीं
है कैसाहू छोटी अवस्था के लोग इसे खावे यदि कायदा न करेगा तो
नुस्तान भी न करेगा, विशेष कर बीसों प्रमेह का नाशक धातु बहुत
आयु बहुत है। जिस मनुष्य को धातु रोग हो और कांई दवा कायदा
न करती हो और अवस्था भी ४० वर्ष से ऊपर हो तो इसी रस को खावे
दाम की तोला ६) हा० ।)

क्षारादिवूर्ण--यह चूर्ण अति मातदिल अनेक रोगों को हटाने
वाला जैसे पेट का दर्द दाह यमन गले में जलन खट्टी हकार आना गले
में कफ सूख कर लपट जाना इत्यादि अजीर्ण को तो पेट में जातेही
भस्म करता है एक छिड़ी का दाम ।) हा० ।)

परीक्षित ववासीर की दवा--(तेल और चूर्ण) इसे चूर्ण
के खाने और मर्चों पर तेल के लगाने से दोनों प्रकार के ववासीर रोग
को कायदा पहुंचाता है दोनों का दाम ॥) हा० ।)

पञ्चामृतकल्याणचूर्ण--इस चूर्ण के सेवन से पेट का जलन
हौलदिल (कठिना पक र करना) जो घबहाना मन का उदास रहना
अकस्मात् चित्त का हवाहोल होना हरना रात को भयानक स्वप्नों
का देखना बहुत घात भूलना घुमरी कांशों के सामने अंधियारा होना
मलमूत्र जल कर होना इत्यादि आराम होते हैं गर्म दिनों में इसे प्राह
रक्षक जानना चाहिये पूर्णमात्रा का दाम १) हा० ।)

काशविजयभैरा चूर्ण--जब किसी बीपघ से सांसी बन्द
इस चूर्ण का सेवन करे क्या तब भी सांसी बनी रहेगी दाम १) हा० ।)

इस औषधालय में और भी अनेक प्रकार की वैद्यक मत से यंगी
 दुर्ब, गोलियां, चूर्ण, अवलेह, आम्र, पाक, तैल, रस, शुद्धधातु, उपधातु, विष,
 उपविष तैयार रहते हैं और जो लोग वैद्यक मत से कोई दवा बन-
 जाना चाहे अथवा सोना, चांदी, आदि धातु, अथवा उपधातु, भस्म कराना
 चाहे पुकुर आने से बहुत उत्तमता के साथ तैयार करके भेजा जायगा ॥

हर एक शहरों में एंजेस्ट की जरूरत ।

जिम महाशयों को हमारे औषधों के एंजेस्ट होने की इच्छा हो
 पत्र द्वारा लिखा पढ़ी करमें से ही हो सकता है ॥

मनेजर वैद्यनाथ शर्मा
 आयुर्वेदिक औषधालय प्रयाग

प्रशंसापत्र ।

महाशयो संसारिक जितने कर्ने हैं जब तक प्रत्यक्ष नहीं देखे
 जाते लोग समझ विश्वास नहीं लाते पं० जगन्नाथ शर्मा राजवैद्य
 इलाहाबाद में बीस प्रतीस वर्ष से चिकित्सा का काम करते हैं और कितनों
 बिनारों को आराम किया होगा करीब दस बारह वर्षों के लगभग हुआ कि
 हमारे लड़के की मारत, जूनी में माघाप्रसाद जी के यहाँ गई जैवाही
 मारत दरवाजे पर लगी कि दुग्धा के भाई, ऐदीलाल को महा घोर
 हुआ हो गया कि जिसका देख के हम खुद घबड़ा गये, और पं० जगन्नाथ
 जी वैद्य को बुलाया उन्होंने बड़े साहस से रातभर में आराम कर दिया
 जिसका कि घन्यवाद हम अब तक देते हैं । हाल में हमारे सम्पत्ति ला०
 कन्दीलाल जी उदर रोग से ऐसे पीड़ित हुये कि जिसका दुःख यही
 जान सता है जिसका वह दुःख हो अनेक उपाय किये कुछ भी लाभ
 नहीं देता गया अन्त में पं० जगन्नाथ शर्मा वैद्य जी ने एकही दिन रात
 में रोग समूल नष्ट कर दिया उस चमत्कार औषध और पं० जगन्नाथ
 जी शर्मा वैद्य को हमें तक घन्यवाद दिया जाय सोहा है याशा सि और

मित्रप्रद

अश्रुत सेवन करते दूरे मास से अधिक दिवस भीते रोग में छिटा-
हित बोध नहीं होता पर वीर्य तो अवश्य बलवान प्रतीत होता है ।
हमारे रोग दूर करने के निमित्त यदि आप दूसरी दवा तजवीज करेंगे
तो भी हम अश्रुत को न छोड़ेंगे । १ तोला अश्रुत शीशी में घुंदा करके
भेजिये पुष्टिये में नहीं और नस्तिष्क यक्ष्म द्वारा हमको आनन्द अनु-
भव होता है दूसरे के सुदयस्थ नहीं करा सक्ते कभी अवसर पाकर लिखेंगे ॥

पारमलपाने का उत्तराही

श्वेताभराय-रईस

चिकोई पालकोट लोहराग

श्रीगुरु पं० जी महाराज

महाशय ।

जो चूर्ण आप से लाया है सोही पर रामदास सा गुण प्रगट किया
है सो कृपा कर वही चूर्ण भी भेज दीजिये ॥

रामप्रसाद-दारागढ़

श्री ।

भैरवहनुमान श्रीगुरु वैद्यराज-नमस्ते

आप की दवा के इस्तेमाल से बहुत फायदा हुआ और चूर्ण (अर्थात्
नौशक) घंघासीर खतम होने पर है सो कृपा करके एक छिपिया पेटसू-
पेसुल पारमल द्वारा जल्दी भेज दीजिये तेल न भेजना । चूर्ण ने बहुत
फायदा किया है और आप की चूर्णही काफी समझा जावे या तेल भी
जरूरी है ॥

टीकम सिंह जवां हाकसाना

जिला अलीगढ़ अमृतसर पंजाब कटड़ा जैमलसिंह

१८ अप्रैल १० ।

प्रिय महाशय

“ आप की दाद की दवा से मरीज को बहुत फायदा भया आप दया करके ४ दिवसी दाद की दवा और मे० पे० भेज दीजिये ॥ ”

पं हरप्रसाद अविस्टट सरजन-पञ्जाब

जौनपुर से ता० १७ । ४ । ९१

श्रीयुक्त पं० जगन्नाथ शर्मा राजवैद्य महाशय जी नमस्ते ।

आपको कोटानुकोटि धन्यवाद है ईश्वर ने हम लोगों के उपकारार्थ अनेक चीजें बना दी है लेकिन दुष्ट पापी, लोभी मनुष्यों ने नष्ट कर डाला है आप सरीखे विद्वानों के हाथ लग जाने से अब दुनिया के उपकार होने में कोई सन्देह नहीं है, आप की रचित आरोग्य दर्पण पढ़ कर बहुत प्रसन्न हुये और मेरा दिल बहुत २ ईश्वर को धन्यवाद दिया करता है जो आपने आ० द० में आचार धर्ती लिखा है उसे तैयार कर के बिना मूल्य बांटा करता हूँ तिजारी चौपिया ६ गोली से दूर होजाती है ॥

आप का कृपाकांक्षी

शीतलसिंह शर्मा धोष्ठ० बरहं जौनपुर

पं० जगन्नाथ शर्मा वैद्य ने हमें और हमारे परिवार को ४ वर्ष से दवा कर रहे हैं । हमने सब से उनका दवा और योग्यताका अनेकानेक परिचय पाया है । उन्हें बीमार का नाही ही से बर्तें मालुम हो जाता है और बीमारियों के हलाक में प्रायः चमत्कारी दिखाते है । वैद्यक के अलावा उन्होंने बँगला भाषा में मेटिरीया मेडीका आदि ग्रन्थों को भी अच्छी तरह से पढ़ा है । उनके दवाइयों के दाम भी बहुतही सस्ते हैं ॥

सारिणीचरणघोष

गवर्नमेण्ट पेनसेनर-इलाहाबाद

१६ अक्टूबर १८८२,

पं० जगन्नाथ शर्मा वैद्य ने बहुत दिनों में हमारी बहुत पुरानी
माला की उठने की बीमारी आराम किया। हमने बहुत दिनों तक अनेक
दवाइयों का सेवन किया लेकिन किसी से कुछ भी फायदा नहीं हुआ।
आखिर में हमने उनकी इलाज किया और चोढ़े ही दिन में हमारी
आँख की दर्द और ललाई जाती रही। अब हम बिलकुल आरोग्य हैं ॥

मनमोहनलाल

१७ अक्टूबर १८८२

इलाहाबाद

पं० जगन्नाथ शर्मा वैद्य ने हमारे पिताजी की

१८ अक्टूबर १८८२
हमें अपनी सल्लोह से कहा सके हैं कि कानपुर लखनऊ और बनारस
में हमें जितने वैद्य मिले पं० जगन्नाथ शर्मा को हमने सबसे उत्तम
पीया। चोढ़े दिन में वैद्य कि हमारी यह को रोग हुआ था और यह
बिलकुल बेहोश थी उन्होंने दवा किया और भाँप चोढ़े ही में वह रोग
में आई और रोज में वह सुखी रूप से आराम हो गई ॥

मोहनलाल

जागसेनगंज इलाहाबाद

१९ अक्टूबर १८८२

साँठ १५ ज्यूलै १८८३

हमें पं० जगन्नाथ शर्मा के वैद्यक के लियार्कत पर अपनी राय
लिखने में बहुत मुशी है। करीब छ महीना से हमारे पिता जी कि ८०
वर्ष के हैं और आँखों में पीड़ित थे और कोई दवा से उनकी फा-
यदा नहीं मानूम होता था अन्तिमें हमने उनको पं० जगन्नाथ शर्मा वैद्य
जी से इलाज करवाया। उन्होंने ने ऐसा दिलावता के उनका दवा किया कि
वह बिलकुल आराम हो गये। वैद्य जी निर्फ हमारे पिता जी को नहीं
आरोग्य किया बल्कि हमारे भाई की स्त्री को जो कि अंगरेज हाकुर के
इलाज में भी मरणापन्न अवस्था में थी उनकी इलाज से आरोग्य हुई।
वममें हमने यह गुण सर्वोपरि पाया कि वह मरीजपर अपना पूरा ध्यान

देते और मेहनत करते हैं जो कि और २ धियों में मुश्किल से पाया जाता है। यह हरेवक्त रोगों के देखने के लिये मुश्किल रहते हैं और २ धियों के माफिक सो भी नहीं हैं। उनके सोमने गरीब और धनवाने बराबर है ॥

कोट इन्स्पेक्टर—इलाहाबाद

ता० १४ अपरैल १८८७,

एन बहुत सुधी के साथ अपना राय पं० जगन्नाथ वैद्य के लिये कत पर लिखते हैं हमारे खास किदा हुसैन यहल दिगं से युवति और छाती के जलन से पीड़ित था। यह बहुत दिन तक अंगरेज डाक्टरों का इलाज करता रहा लेकिन उसको कुछ फायदा नहीं हुआ। बीमारी बढ़ती गई और उसकी बचने की कोई उम्मीद नहीं थी। उसका नाप निराश हो कर अन्त में पं० जगन्नाथ शर्मा से दवा करागा आरम्भ किया और इतना फायदा हुआ कि दूसरे ही दिन उसकी हालत बदल गई। उसका दवा बराबर होता रहा जब तक वह अच्छा न हो गया। सिवाय इसके हमने अपने पेटोस में दवा करते देखा है और सर्मिरे अपरी कोन में निहायत चालाक और लायक पाया ॥

सर्मिरे जहूरु सैमरिबर

गवर्नमेण्ट हाई स्कूल इलाहाबाद

हमारे दहिने पैर में हाथीपांथ हुआ था और हमने उस बीमारी के भारान कराने के लिये बहुत हकीम डाक्टरों का इलाज किया लेकिन किसी से फायदा न हुआ। आखिर में हमने पं० जगन्नाथ वैद्य की दवा किया और हमको बहुत अच्छे आराम किया। हम इन तज्जुबे के कह सकते हैं कि वह बहुत चालाक और लायक चिकित्सक है—पुर कित्त की मज्जु बीमरिया आराम कर सके है ॥

इलाहाबाद,

ता० १५-माघ

द० जे० एच पेटरीज

फायरमैन ई० आई० नार०-

ता० १ नवम्बर १८८०

वैद्यराज पं० जगन्नाथ शर्मा ने हमें दो दिन में बीजा से आरोग्य किया—यह बीजा इस कदर बियड़ गया था कि हमें जीने का कुछ भी आशा नहीं था—हमने उनको अपने काम में बहुत होशियार और चालाक पाया ॥

—नारायणराय कर्क इलाहाबाद

१ फरवरी १८८१

पं० जगन्नाथ शर्मा वैद्य ने हमारे लड़कों को बीजे की बिमारी में चिकित्सा किया इसमें कुछ सन्देह नहीं कि पं० जी अपने काम में बहुत लायक हैं ॥

कन्हैयालाल

ब्रफ्ट्समैन चौक इलाहाबाद

ता० ८ फरवरी १८८१

हम पाँच महीने से सुजाक के रोग से पीड़ित थे—अनेक हकीम और डाक्टरों के चिकित्सा कराने के बाद हमने पं० जगन्नाथ जी वैद्य की दवा किया और बहुत-थोड़े जर्न में आरोग्य हुये ॥

जगन्नाथप्रसाद कर्क

बहादुरगञ्ज—इलाहाबाद

ता० ८ मार्च १८८५

हमको यह निखने में धड़ी सुशी है कि हमें पं० जगन्नाथ शर्मा वैद्य ने पुराने सुजाक से दो हमें बिना किसी तकलीफ के आराम किया—सिवाय इसके हमने अपने भाई की भी चिकित्सा उनसे करवाया जो कि खाँसी और सुखार से पीड़ित थे उनको भी पं० जी ने एक सप्ताह में आराम किया । जो कुछ हमने देखा और जाना पं० जी को अपने काम में बहुत चालाक और परिश्रमी और वैद्यक में पूर्ण पाया ॥

हमें यकीन है कि कोई आदमी जो कि पं० जी से चिकित्सा करवायेगा कभी निराश न होगा विशेष कर गरीब रोगी जिन पर वह अधिक ध्यान देते और परिश्रम करते हैं ॥

जगन्नाथ प्रसाद तिवारी

पि० हवल्लु० ह्री० एकजामिनई

आफिस इलाहाबाद

ता० १६ अपरैल १८८१ ।

हमारी स्त्री को इस कदर एक सख्त बिमारी हुई थी कि हमें उनकी जीवित्ता का कोई भी भरोसा नहीं था हमने उनको आराम करवाने के लिये बहुत रुपया खर्च किया और अनेक हात्तरीयों से इलाज करवाया लेकिन सब निष्फल हुआ । इस मालूम भीके मैं हमने पं० जगन्नाथ वैद्य के नाम सुनकर उनसे अपनी स्त्री का इलाज करवाया और वह बहुत थोड़े दिन में आराम हो गई । यह बहुत यथमान और मरीजों के ओर ध्यान देते हैं—और उनकी दवाओं का फायदा पिलातेही मालूम हो जाता है ॥

सुगलक्षिणी

इलाहाबाद

८ नवम्बर १८८१ ।

पं० जगन्नाथ शर्मा ने हमारे लड़के का इलाज किया जिसे आमाशय कि बिमारी बहुत दिनों से थी पं० जी बहुत ध्यान से बिमारी का इलाज करते हैं ॥

हीरालाल—आर—एन—एस

इलाहाबाद

बरैली से ता० १७, १८ २१

सहाश्रय

मुझे ३ वर्ष से आंख की बिमारी थी यहां आप की दूकानमें नयना-
मृत सलाहें कई आदमियों ने लिहा सबों को आराम होगया परन्तु
हम को अब तक पूरा फायदा नहीं हुआ और कोई दवा होता भेजा ।

गोविन्दराम बजाज

बरैली

फतहगढ़ से

सहाश्रय

आप ने जो चन्दनादि चूर्ण प्रदर रोग के वास्ते भेजा था उसके
आराम हुई ।

पं० शिवानन्द नदरी पटवारी स्कूल

फतहगढ़

बांसधरैली से ता० २३ जुलाई

श्रीपुत्र वैद्य शिरोमणि सहाश्रय पण्डित जगन्नाथ जी शर्मा पाला-
गन, निवेदन यह है कि आप के भर्क खूबमका का २० घोटल में ने
पिया जो मेरे शिर और चेहरे के बालों की जघे में कुंघियां निकलती
और खुजलाती थीं वे अब निकलना बन्द होगया मैं आप को बहुत २
धन्यवाद देता हूं मैं ने हाकूर अंगरेज और हिन्दुस्तानी वा हकीम
मूनानी वगैरह का इलाज किया परन्तु कुछ फायदा न हुआ तो आप
की दवा से आराम हुआ इसलिये आप शक्ति धन्यवाद के योग्य हैं
परमात्मा आप को यश कीर्ति लाभयुक्त करें ॥

आप का कृपाभिलाषी

ठाकुर लखन सिंह वर्मा रहैस

मु० बुधौली बांसधरैली

जिला हजारीबाग से

महाशय

आप का सुजाक का दवा भेजा हुआ मिला सो बहुत धन्यवाद था
उससे तीन आदमी को आराम होगया बल्कि बड़ी शीशी में दवा कुछ
बच भी गया है अब रुपा कर एक आदमी के लिये सुजाक की दवा
वेल्सपेयुल पारसल में बहुत जल्द भेज दीजिये ॥

श्री शम्भुराम गनपतराम

गोमीआचा जिला हजारीबाग

—:—:—

मिश्रवर आप का दवा धिपगर्भ तैल बहुत फायदायन्द है इसलिये
फिर एक शीशी घाजभर का बी० पी० पारसल द्वारा हमारे नाम जल्द
आपकी हांक भेजिये देरी न कीजियेगा दवा ठीक होने की संघष हम
उम्मीद करते हैं कि बहुत दवाइयां आप की दूकान से हम मँगायेंगे ॥

धन्य है परों न फायदा हो जब कि वेद की रीति से बना है ॥

आप का कृपाकांक्षी

बाबू रामसिंह—रेवती बलिया

हरदोई से

महाशय नमस्ते

दाद की दवा आप का अत्यन्त उत्तम है मुझको उससे लगाने से
अतिलाभ हुआ । दृष्टान्त्रूपामार्गक्षर तैल की भी एक शीशी वेल्सपेयुल
द्वारा भेज दीजिये ॥

कठ्यूलाल मजगलाल दूबे

बाघनहरदोई

फरुक्काबाद से

महाशय

पश्चात् तस्कार के विनय यह है कि शिवानन्द मिश्र की मार्फत जो दया दस्तों की हम अपने वास्ते आप के यहां से अमृतार्णव नामक पूर्ण संगवाया यह तो रातबाण होकर हमारे रक्त शत्रु रोग को भगा दिया अब इस समय दस्तों के बारे में हमें कुछ शिकायत बाकी नहीं है हमने दस्तों में बहुत दक्कीम व घीयों की औषधों सेवन की मगर किसी की औषधी ने कुछ भी कायदा न हुआ मय आपको अन्तःकरण से धन्यवाद देते हैं आप मुखार की देवा-वेल्थू-पेथुल द्वारा निम्नलिखित पते से भेज दीजिये ॥

बद्रीपनाद जीवे राईश-निवासी ग्राम

साधोनगर-फरुक्काबाद



आरोग्यदर्पण ॥

विविध वैद्यक विषयक सम्बन्धी अपूर्व पुस्तक
चतुर्थ खण्ड

जिसमें आयुर्वेद मत से ज्वरचिकित्सा और आध्यात्मिकशक्ति
प्रकाशार्थ योगशास्त्र का सम्पूर्ण अङ्ग पण्डित जगन्नाथ
शर्मा राजवेद्य सम्पादक प्रयाग समाचार ने सर्व
साधारणके उपकारार्थ रखकर प्रकाश किया

जगद्विख्यात

आयुर्वेदोक्त श्रीपधालय जानसेनगञ्ज

(प्रयाग)

“धार्मिकयन्त्रालय” में मुद्रित हुआ ॥

सिवाय ग्रन्थकर्ता के किसी को छापने अथवा सावा
अदल बदल करने का अधिकार नहीं है ॥

द्वितीय धार १०००

मूल्य फी पुस्तक ॥१॥

सन् १९०१ ई०

सूचीपत्र ।

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
ज्वर क्या है,	१	सन्निपात ज्वर की चिकित्सा	४०
ज्वरोत्पत्ति,	१	संज्ञानाश की उपाय,	४१
ज्वर होने का समय,	४	सन्निपात पर अञ्जन,	४४
ज्वर पूर्व रूप,	४	मूला उपाय,	४४
घातज्वर लक्षण,	५	तेरहो सन्निपात की चिकित्सा,	४७
पित्तज्वर लक्षण,	६	विषमज्वर लक्षण,	५३
फफज्वर लक्षण,	६	तृतीयक ज्वर का भेद,	५५
ज्वर में लंघन विचार,	७	वातुशिक ज्वर का भेद,	५५
लंघन कराने का कारण,	८	प्रलेपक ज्वर,	५७
सन्निपात में लंघन,	१८	सप्तगत ज्वर लक्षण,	५७
लंघन निषेध,	११	जीर्णज्वर,	५८
लंघन से उपद्रव,	११	घात बलासक ज्वर,	५८
अच्छे लंघन का फल,	१२	आगतक ज्वर,	५९
जल पान विचार,	१८	ज्वर के दश उपद्रव,	६१
जल गरम करने की विधि,	१३	ज्वर के साध्य लक्षण,	६२
गरम पानी के गुण,	१४	ज्वर के असाध्य लक्षण,	६३
ज्वर में घर का विचार,	१६	मन्दर ज्वर के लक्षण,	६४
दूध खाने की विधि,	१७	विषमज्वर की चिकित्सा,	६५
दूध देने का प्रमाण,	१८	शीत पूर्य ज्वर पर काढ़ा,	
औषध खिलाने की विधि,	२०	अकं, अकं गाजर	६५-६६
अपक्व ज्वर लक्षण,	२१	महा ज्वरांकुश,	६७
दवा देने का समय,	२२	कुईनाईन विधि,	६९
घातज्वर पर वशाध,	२३	ज्वर में मूलिका धारण,	७०
पित्तज्वर पर वशाध,	२३	चीपिया की उपाय,	७१
दाह शमन उपाय,	२५	तिलांजलि,	७२
फफज्वर की चिकित्सा,	२८	ज्वर नाशक घृष,	७३
सन्निपात ज्वर के लक्षण,	३१	ज्वर नाशक दीप,	७४
१३ सन्निपात नामादि,	३३	जीर्णज्वर की चिकित्सा,	७५
साध्याऽसाध्य निर्णय,	३७	कोष्ठवद विषास उपाय,	७४-७५
कर्षणत,	३८	ज्वरति पथ,	७५

ज्वर ।

भाषा में इसे बुखार, अङ्ग्रेजी में फिवर (Fever) और यूनानी में तप कहते हैं । ज्वर वह रोग है जिसका अधिकार देश मात्र पर सर्वदा सर्व काल में बनाही रहता है, किसी २ वर्ष में सर्व देशों में अथवा एक दो देशों में ज्वर का इतना भ्रमंड वेग बढ़ता है कि मनुष्य मात्र को जड़ी भूत कर देता है उस समय लोगों की यह दशा होती है कि कोई किसी को पानी तक देने लायक नहीं रहता । इसके रोकने के लिये आयुर्वेदविद् विद्वानों ने तथा यूरोपीय चिकित्सकों ने अनेक उपाय और यत्र किया परन्तु कोई अत्यन्त उपयोगी तथा लाभ दायक यत्र न निकला और न कोई ऐसी औषधी किसी से निकाली जो मनुष्य मात्र के ज्वर को एक मात्र दूर कर देय, यही सबब है कि जो मृत्येक खण्ड के चिकित्सकों ने ज्वर कोही सब से बड़ा और भयानक रोग समझ कर अपने २ ग्रन्थ और चिकित्सा कर पुस्तकों में ज्वर का विस्तार और विशेष वर्णन और मतीकार लिखा है इस लिये अधिकांश ग्रहकों के अनुरोध से आज हम भी भूत पूर्व आर्य चिकित्सकों के मतानुकूल ज्वर रोग की प्रधानता और पूर्व रूप, नाम, आदि कारण और परीक्षित चिकित्सायें लिखते हैं आशा है कि देशहितैषी गण अवश्य हमारे इस समुचित वर्णन पर ध्यान देंगे और निम्नलिखित लक्षणों से मूरा २ निदान एवं चिकित्सा करके महा कराल ज्वर रोग ग्रसित रोगियों के दुःख को दूर करेंगे ॥

“ज्वरोत्पत्तिः”

पूर्व काल के महर्षियों ने ज्वर को सब रोगों का स्वामी और रुद्र कोप करके माना है और इसी को मृत्युराज और माण नर्शक ठहराया है और महादेव जी के उस अर्द्ध नयन से इस की उत्पत्ति लिखी है कि जिस के स्पष्ट खोलने से प्रलय होती है—

“ज्वरो रोगपतिः साक्षान्मृत्युराजोऽज्ञानोऽन्तकः ।

क्रोधो दक्षा ध्वरं ध्वंसी रुद्रोर्द्धनयनीद्भवः ॥”

जैसा कि सुश्रुत में लिखा है ॥

सन्निपात (तरसाम) या एक प्रकार के तृतीय लक्षण युक्त जिसे अङ्गरेजी में (एपिप्लेक्सि) कहते हैं हो जाता है और उस रोगको न यामने से रोगी बहुत जल्द मर जाता है, लेकिन वैय लोग इस पर बहुत कम ध्यान देते हैं यहां तक कि आम ज्वर पर (कच्चा बुखार) में भी उष्ण क्वाथ या रस देके पित्त बिगाड़ देते हैं, हां, कुछ २-३ हकीमों का ध्यान इधर रहता है लेकिन वे भी पित्त में ठण्डक अधिक पहुंचा देते हैं । जैसे मूढ़ वैय लोग शीतसे डरा करते हैं, कहीं शीत न आ जाय, बैसाही अज्ञान हकीम लोग भी गरम से डरते हैं कि कहीं गरमी शिर पर न चढ़ जाय, इसलिये ज्वर की चिकित्सा बहुत विचार के साथ करना चाहिये ॥

ज्वर संप्राप्ति हेतु (ज्वर होने का सबब)

मिथ्याहार विहाराभ्यां दोषाह्यामाशयाश्रयाः ।

वहिनैरस्य कोष्ठाग्निं ज्वरदाः स्यू रसानुगाः ॥

(मिथ्याहार) अशुभ की मकृतिके विरुद्ध भोजन, जून कजून भोजन, बिना भूख में खाना, भूख लगने पर न खाना, कच्चे फलों को खाकर पानी पीना, वाली भात माठा या तेलका बरा खाना अथवा तेल दूध, दूध या दही मूली एक साथ में खाना इत्यादि (मिथ्या विहार) बहुत धूप में अथवा अग्नि के समुख रहना बाद अति काल तक पानी में भीजना, वर्षा में बहुत बौछार में रहना, रास्ते से बहुत थके हुये आना तत्क्षण जल पी लेना या स्नान कर डालना, कभी छाया कभी ओस में सोना, जुखाम की रक्षा न करना, मर्मांत काल में स्त्री प्रसङ्गादि, इन्हीं सब कारणों से आमाशय में स्थित जो वातादिक दोष बिगड़ कर रस धातु में मिल के ज्वराग्नि (जिस्से खाना पचता है) को बाहर निकाल ज्वर रोग को उत्पन्न करता है ॥

“ज्वर पूर्व रूपम्”

अमोरतिर्विवर्णत्वं वैरस्यं नयन शुवः ।

इच्छाद्वेषौ मुहुश्चापि शीतवाता तपादिषु ॥

जृम्भांग मर्दोगुरुता रोमहर्षो ऽरुचिस्तमः ।

अप्रहर्षश्च शीतिं च भवन्त्युत्पत्स्यति ज्वरे ॥

सामान्यतो विशेषात्तु जृम्भत्यर्थं समीरणात् ।

पित्तान्नयनयोर्दाहः कफान्नान्नाभिनन्दनम् ॥

निम्नलिखित लक्षण यदि किसी व्यक्ति में पाये जाय तो जानना कि उसे ज्वर आनेवाला है जैसे बिना चले फिरे थकाई मालूम होना, किसी बात में मन न लगना (विवर्णत्व) शरीर का रङ्ग और को और होना, अक्सर ज्वर के पहले शरीर का रङ्ग कुछ बदल जाता है। मुख वे स्वाद, नेत्र में आंसू भरि आना (जैसे अभी सो के उठा हो) शीत, हवा और घाम कभी किसी को अच्छा लगे कभी बुरा मालूम हो, जँभुआई शरीरमें दर्द देह भारी, रोम खड़े होना या जाड़ा मालूम देना, अरुचि, आंख में गरमी, मन उदास और ठण्ड का लगना यह सब लक्षण उपस्थित हो या दो चार लक्षण कम भी हो निस्तन्देह यह लक्षण ज्वर आने के पहले होता है यह सामान्य लक्षण है ॥

अब विशेष लक्षण सुनिये—अत्यन्त जँभुआई और शरीर में दर्द वा पेंठन हो तो जानना कि इस को वातज्वर होगा। नेत्र में दाह कुछ शिर दर्द पित्त ज्वर आनेवाले के पहिले और अन्न पर अनिच्छा कफ ज्वर आनेवाले के पहिले होता है ॥

ज्वर का सामान्य रूप केवल इतना ही है कि पसीना का न आना, शरीर बहुत गरम, सम्पूर्ण शरीर जकड़ सी जाय या दर्द करे वक्त ॥

वातज्वर लक्षणम् ।

वेपथुर्विपमो वेगः कंठोष्ठ मुख शोषणम् । निद्रानाशः
क्षवःस्तम्भो गात्राणां रौक्ष्यमेव च ॥ शिरो हृदात्र रुक् वक्र
वैरस्यं वद्धविट्कता । शूलाध्माने जृम्भणं च भवत्यनिलजे
ज्वरे ॥

वातज्वर में इतने लक्षण रहते हैं। शरीर में कम्प, ज्वर, कभी बहुत जादा तेज हो जाय कभी कुछ कम हो जाय, गला, ओठ और मुख सूखे, नांद और धीक न आवे, शरीर सूखी शिर ध्याती और हाथ पर वर्गरह में

दर्द या फाटन हो, मुख का जायका खराब, कोष्ठवद्ध (दस्त न हो हो भी तो सूखा और थोड़ा सा) पेट में कुछ हलकी पीड़ा और पेट फूला सा रहे एवं जमुड़ाई आना, इतने सब लक्षण अथवा कुछ कम लक्षण होने से वातज्वर जानना ॥

पित्तज्वर लक्षणम् ।

वेगस्तीक्ष्णो ऽतिसारश्च निद्राल्पत्वं तथा वमिः ।
कंठो ह्ये मुखनासानां पाकः स्वेदश्च जायते ॥ प्रलापो वक्त्र
कटुता मूर्च्छावाहो मदस्तृषा । पीत विण्मूत्र नेत्र त्वक् पै-
तिके भ्रम एव च ॥

बुखार बहुत तेज हो, दस्त पतला, नींद कम, गला, ओठ, मुख और नाक इनसे गरम भाफ निकले और वे सुर्ख हो जाय, पसीना बहुत आवे या कम आवे परन्तु कुछ न कुछ आता ही रहे, मलाप (बढ़वढ़ाना, आनतान बफना) मुख कटु, वेदोशी पेट में जलन या समस्त शरीर में दाह, नेत्र में जलन या नशाता मालूम हो, पिपावा बहुत, दिशा, पेशाब, आंख और शरीर कुछ पीले मालूम दे और घुमरी, यह लक्षण पित्तज्वर वाले के होते हैं ॥

श्लेष्म (कफ) ज्वर लक्षणम् ।

स्तैमित्यं स्तिमितो वेग आलस्यं मधुरास्यता । शुक्ल
मूत्र पुरीषत्वक् स्तंभस्तृप्तिरथापि च ॥ गौरवं शीतमुत्केदो
रोमहर्षोऽतिनिद्रता । प्रतिश्यायोऽरुचिः कांसःकफजोऽक्ष्णो-
श्चशुक्लता ॥

अब कफ ज्वर का लक्षण कहते हैं । बहुत मन्द ज्वर रहे, देह चिप-चिपाय, आलस्य, मुख मीठा, मल मूत्र का रंग सफेद, शरीर जकड़ी सी रहे, जैसे खून खाये हुये का पेट भरा रहता है वैसे पेट भरा रहे शरीर भारी, जाड़ा मालूम होना, जी मचलाना, रोम खड़े होना, नींद अधिक आना, नाक बहना, अरुचि, खांसी और आंख सफेद हो तो जानना कि कफ ज्वर है ॥

द्वन्द्वज्वर के लक्षण का श्लोक न लिख कर खुलासा रीति पर दिखलाये देते हैं कि जिस ज्वर में कुछ वात ज्वर के लक्षण और कुछ पित्तज्वर के लक्षण मिले तो वात पित्त ज्वर जानना ॥

वात कफ ज्वर में—वात ज्वर और कफ ज्वर के कुछ २ लक्षण और जोड़ों में दर्द एवं शिर का जकड़ना यह विशेष लक्षण मिलते हैं ॥

पित्त कफ ज्वर—जिस ज्वर में मुख लसलसा और कटुआ, नेत्र में भ्रांषी सी लगी रहै, बेहोशी, खांसी, पियास, कमी दाह कमी जोड़ा लगे उसे पित्त कफ ज्वर जानना । अब उपरोक्त कहे हुये ज्वरों की चिकित्सा लिख कर बाद सन्निपातादि के लक्षण लिखेंगे ॥

ज्वर रोग में लंघन विचार ।

ज्वर चिकित्सा का पहला अङ्ग यही है ॥

तिसमें मयम लोलिब राज का बचन लिखते हैं ।

अधुना शृणुतन्विलंघनं ज्वरितानां प्रथमं प्रशस्यते ।
हेतन्वंगि, अधुना इदानीं, त्वंसृणु, ज्वरितानां ज्वरयुक्तानां,
प्रथमं लंघनं उपवासं, प्रशस्यते, सप्त दश द्वादश दिनानि,
वात पित्त कफ क्रान्तानां, (वातिकः सप्त रात्रेण दशरात्रेण
पैत्तिकः । श्लेष्मिको द्वादशाहेन ज्वरपाकमुपैतिह) इति वा-
क्यात्, आदौज्वरीतुलंघनं कुर्यात् ॥

हे सुहृमाणि ! इस समय तुम सुनो ज्वर वाले मनुष्य को प्रथमही (ज्वरारम्भ) में लंघन (उपवास) कराना उत्तम है क्योंकि वातज्वर सात दिन में पित्त ज्वर दश दिन और कफ ज्वर बारह दिन में पचता है, इस बचन से प्रथम ज्वरवाले को उपवास करानाही अच्छा है ॥

अन्यच्च—ज्वरादौ लंघनं कुर्याज्ज्वर मध्येतु पाचनं—

सं० आ० द०—हमारे वैद्यों में ज्वर में उपवास कराने की परिपाटी ऐसी बिगड़ी है जिसका कुछ ठिकाना नहीं, बरखों से ज्वर क्यों न आता हो वैद्यराज पहुँचतही डाँटेंगे कि खाने को क्यों दिया उपवास कराओ, रोगी

भूख से चिन्ता रह गई है, कहाँ खबरदार अभी खाने को न देना, यह वायु की भूख है, वस पाठकगण, इतनाही मैं जान सकती हूँ, वैद्य लोग आयुर्वेदविद्विद्वानों के लेख पर भी ध्यान नहीं देते हैं ॥

लंघन कराने का कारण ॥

वाग्भट्टश्चाह—आमाशयस्थो हत्वाग्निं सामो मार्गान् पिपाययेत् । विदधाति ज्वरं दोषस्तस्माच्छंघनमाचरेत् ॥

अस्यान्वयः—आमयुक्तो दोषः आमाशये स्थित्वा मार्गान् आच्छाद्य अग्निं हत्वा ज्वरं विदधाति तस्मात् लंघनं आचरेत् ॥

चक्रदत्तः—तरुणतुज्वरं पूर्वं लंघने न क्षयं नयेत्, अन्यच्च—ज्वरितं पिडहेतीति लंघनं प्रति भोजितं ॥

लंघनार्थमुक्तं सुश्रुतेन—शरीरं लंघयन् करं यद्वद्रव्यं कर्म वा पुनः, तं लंघनं इति ज्ञेयं (कर्मोपवासः लघ्वाहारश्च) ।

तथाच धन्वतरिः—ज्वराभिभूतः पडहे व्यतीति विपक्व दोषः कृतं लंघनादि । यो भोजं खादति वैद्यवर्ग्यो निः संशयं हृत्पचिरात्सरोगान् ॥ आदिशब्दात्परिपाकं वारिपानं निर्वीतं तदनं वासादि ॥

भावार्थः—महर्षि वाग्भट्ट कहते हैं कि, दोष (वातादि) आम में स्थित हो के जठराग्नि को, दांप और स्रोतों के मार्गों को रोकता हुआ ज्वर को उत्पन्न करता है—इस वास्ते लंघन कराना उचित है । चक्रदत्त कहते हैं कि तरुण ज्वर में प्रथमही उपवास कराने से दोष पच जाते हैं और छ दिन ज्वर गत होने पर लंघन युक्त रोगी को पच्य देना चाहिये । लंघन के विषय में श्री महर्षि सुश्रुत जी कहते हैं कि जिस औषध से अथवा जिस कर्म से दोष पचेकर शरीर हलकी हो उसको भी लंघन जानना, क्योंकि जो फायदा लंघन में है वही हलके भोजन में है—

यथा—ये गुणाः लंघने प्रोक्ता ते गुणा लघु भोजने—

धन्वतरि जी की राय है की ज्वर आये हुये छ रोज हो जाय और लंघन कराने से दोष पच गये हों उस समय औषध खिलाने से निस्तन्देह शीघ्रही ज्वर दमन होता है ॥

अन्यच्च—सर्वज्वरेषु सप्ताहं मात्रावत् भोजनं हितम् ।

अन्नकालेह्यभुञ्जानः क्षीयते म्रियतेथवा ॥

संपूर्ण ज्वरों में सात दिन तक बहुत हलका भोजन देना क्योंकि भूख लगने पर भोजन न देने से रोगी कम जोर हो या मर जाय, इत्यादि अनेक ममाणा मिलते हैं ग्रन्थ बढ़ जाने के भय से नहीं लिखा इन सब वचनों से ठीक साबित होता है कि बिना आद्योपांत विचारे रोगी को अधाधुन्य लंघन न करावै, भूख लगने पर हलका भोजन अवश्य देवै ॥

अस्नेहनीयोऽशोध्यश्च संयोज्यो लंघना दिना ।

जो ज्वर रोगी, स्नेह पान और वमन विरेचन कराने लायक नहीं है उसको लंघनादि कराना, इस्से स्पष्ट होता है कि यदि रोगी बलवान हो तो दोषाधिक्य देख के वमन जुलाब से मल निकाल कर ज्वर आराम करना चाहिये ऐसी अवस्था में उपवास कराना निष्फल है यदि उक्त कर्म लायक न हो तो दो चार दिन उपवास करा के दोष पचाय देना उचित है—

अन्यच्च—आनद्ध स्तिमितैर्दोषैर्यावन्तः कालमातुरः ।

कुर्यादनशनं तावत्ततः संसर्गमाचरेत् ॥

जब तक यात पुरीष (हवा का छूटना दस्त का होना) बन्द रहै और दोष बढे हों तब तक उपवास करावै बाद उसके मिश्रित उपाय करना उचित है ॥

अन्यच्च—ज्वरस्य प्रथमोत्थाने लंघनं च दिनत्रयं ।

न देयं कथितंवारि न च भैषज्यं दापयेत् ॥

ज्वर के आरम्भ में पहले तीन दिन लंघन करावै, न क्षाय का जल

पीने को दे और न किसी किस्म की औषध खिलावे । जैसे जल के अधिक उद्देग में मेंह बांधना उस की शक्ति को नहीं रोक सकता और क्रोध की तरुणावस्था में उपदेश और शान्ति कारक वचन क्रोध को अधिक भड़काता है ऐसे ही ज्वर की अति तणावस्था में औषध क्रिया उस के वेग को कई गुना बढ़ती है ॥

सं० आ० द० ज्वररोग में उपवास कराने का नियम सिर्फ वैद्यक शास्त्र में है यूनानी और डाक्टरी में इस का कुछ नियम नहीं है और वे लोग इस पर कुछ ध्यान भी नहीं देते हैं कौसाह ज्वर तेज हो रोगी के मांगने से पथ्य दे देते हैं इसी से वे लोग ज्वर रोग बहुत कम आराम कर सर्कते हैं ज्वर के आरम्भ में यदि ज्वर तेज बना हो तो दो तीन दिन तक रोगी के मांगने से भी खाना न देना चाहिये लेकिन उस के वल को देख के जब देखे की ज्वर धीमा हो गया और दोष भी कुछ पच गये हैं एवं रोगी भी खाने को जिह कर रहा है तो शाम को चाबूदाना या मूंग का जूस देवें । यह नियम सब से उत्तम है कि जब तक रोगी को खूब तेज भूख न लगै खाने को न दें । क्योंकि "नहिदोषक्षये कश्चित् सहते लंघनादिकम्" दोष के पच जाने पर उपवास आदि रोगी से नहीं सहा जाता शाम को जूस क्यों देय इस का कारण आगे दिखलावेंगे ॥

सन्निपात में लंघन विचार ॥

त्रिरात्रं पञ्चरात्रं वा दशरात्रमथापि वा ।

लंघनं सन्निपातेषु कुर्व्यादारोग्य दर्शनात् ॥

तीन दिन, पांच दिन अथवा दश दिन सन्निपात में उपवास करावे जब तक आरोग्यता न दीख पड़े । कोई २ "आरोग्य दर्शनात्" का यह अर्थ करते हैं कि जब तक रोगी आराम न हो उपवास कराता जावे, यद्यपि पक्षम्यंत शब्द से ऐसा अर्थ हो सकता है, परन्तु ग्रन्थ कर्ता का अभिप्राय यह नहीं है, यदि यह अभिप्राय होती तो "त्रिरात्रं पञ्चरात्रं" वा ऐसा न लिखते इसका अभिप्राय यह है कि यदि दश दिन के भीतर ही कुछ फुरसत देख पड़े तो पथ्य दे देय, क्योंकि उपवास कराने से रोगी कमजोर हो

बहुत उपवास कराने से बल का नाश (कमजोरी) पिपासा दिख दिमाग का कमजोरी, टकटका, अधिक निद्रा (भ्रांप) घुमरी, ओकाई और दमा आदि उपद्रव अति लंघन कराने से होता है। इस लिये बिना विचारे अधाधुन्य लंघन न कराना चाहिये ॥

सम्यक् लंघन का फल ।

ज्वरघ्नदीपनं कांक्षा रुचिलाघव कारकं । सृष्टिमारुत विण्मूत्रं क्षुत्पिपासाऽसहं लघुम् ॥ प्रसन्नात्मेन्द्रियं क्षांसं नरं विद्यात्सुलंघितम् ।

लंघन कराने से दोष पचता है और दोष पचने से जब सब लाभ देख पड़ें तब जानना कि लंघन इस रोगी का अच्छा बन पड़ा है—जैसे अथो वायु खुले, डकार साफ आवे तथा दिशा और पेशाब खुलाया हो, क्षुधा लगने पर बिना खाये और पिपास लगने पर बिना पानी पिये रहा न जाय और शरीर हलकी मालूम हो, मन एवं इन्द्रियां सब प्रसन्न हों और शरीर ढीली आयुक्त हो जाय तो जानना कि इसका लंघन ठीक हो चुका है ॥

ज्वर में जल पान विचार ।

चाहे कोई विमारी हो खास कर ज्वर और हैजा आदि विमारियों में बहुत जरूर है कि रोगी को साफ पानी (परिष्कृत जल) पीने को देय, क्योंकि अधिकतर यह रोग जल विकार से होता है, और यही सबब है जो वैद्यक शास्त्र में गरम पानी पिलाने को अधिक अनुरोध किया है, पानी गरम करने का कोई विशेष सबब नहीं है, पानी गरम करने से पानी के कीड़े मर कर पानी से अलग हो जाते हैं, और छान लेने से वह पानी कृमि रहित साफ और अग्नि वर्द्धक होता है । वैद्यक शास्त्र में जहां तक हमने देखा है नव ज्वर में शीतल जल का पान निषेधही पाया है । यथा ॥

दिवास्वप्नं व्यवयश्च व्यायामं शिशिरं जलम् ।

क्रोधप्रवात भोज्यानि वर्जयेत्तरुण ज्वरी ॥

दिनमें सोना, स्त्री प्रसङ्ग, मेहनत, शीतल जलपान, क्रोध, अधिक हवा का सेवन और भोजन नया ज्वर वाला रोगी त्याग करे ॥

अन्यच्च—पार्श्वशूले प्रतिश्याये वातरोगे गलग्रहे ।
आघ्रमाने स्तिमतेकोष्ठे सद्यशुद्धो नवज्वरे ॥ अरुचि ग्र-
हणगुल्मः श्वासकासेषु विद्रधौ । हिक्कायां स्नेहपानं च
शीताम्बु परिवर्जयेत् ॥

पसुरी की दर्द, जुखाम, वात रोग (सर्वाङ्ग दर्द आदि) गलग्रह, पेट फूला हो, अग्निमन्द हो, शीघ्र ही जुलाब लिया हो, नये बुखार में अरुचि, (भोजन पर अरुचि) ग्रहणी (दस्त से कच्चा अन्न गिरता हो) वायगोला आदि, दमा, खांसी, विद्रधि (गोल या लम्बी एक तरह के सूजन शरीर में पड़ जाते हैं और वही सूजन पक भी जाता है उसे विद्रधि कहते हैं) हुचकी रोग और स्नेह पान में शीतल जल पीने को न देना चाहिये ॥

जल गरम करने की विधि ।

दिन में पीने के लिये सूर्योदय में पानी गरम कर और रात में पीने के लिये सूर्यास्तमें पानी गरम करे । वर्षा और वसन्त में कूप (कुआँ) जल, हेमन्त और शिशिर ऋतु में कूप अथवा साफ तालाब का पानी ॥

अभाव में सब ऋतों में कूप का जल लेवे क्योंकि कुँयें का जल पान किसी ऋतु में निषेध नहीं है इसलिये न मिलने पर कूपही का जल लेना । रोगी के पीने के माफिक जल लेकर चांदी अथवा शृत्तिकापात्र में गरम करे एक दो उफान आ जाय अथवा जितना गरम करना है गरम हो जाय वो पात्र को अग्नि पर से उतार ले और कुछ देर तक उसी पात्र में जल रहने दे जब जल स्थिर हो जाय और देखे कि मल नीचे जम गया होगा आइस्ते से दूसरे मिट्टी के बतन में चौपरता खूब गफ कपड़ा पात्र के मुखपर देके तीन हिस्सा पानी छान ले और एक हिस्सा जो नीचे का मैला पानी है फेंक दे,

नहीं देते हैं, बरते हैं कि शीत करेगा यह उन की महा मूर्खता है क्योंकि "सुपितो मोहमायाति मोहान् प्राणं विमुञ्चति" पियाये को पानी न मिलने से विहोरी आती है और मोह से प्राण छूटने का मय है इस लिये पियाय लगाने पर पानी अवश्य पीने को देय परन्तु थोड़ा २ जल पिलाना शास्त्रोक्त विधि है ॥

ज्वर में गृहादि विचार ।

नवज्वरी भवद्यत्ना गुरुणा वसनावृतः । सामान्यतो ज्वरापूर्वं निर्वाते निलये वसेत् ॥

नये ज्वरवाले को याद करके कोई भारी वस्त्र से ढाँप देना । यद्यपि ज्वरवाला भारी वस्त्र के ओढ़ने से घबड़ावै गा लेकिन वस्त्र के ओढ़ने से कुछ भी पसीना निकल आने से ज्वर बढ़ने का भय जाता रहता है, अगर देखें कि भारी वस्त्र के उढ़ाने से रोगी बहुत घबड़ाता है और स्वेद विलकुल नहीं निकलता तो भारी वस्त्र न उढ़ा के बरफ़ एक दोहर उढ़ाय दे और पित्त ज्वर वाले को और जिस के शिर में अधिक दर्द हो बहुत गरम और भारी कपड़ा न उढ़ावै । नव ज्वरी कहने से यह मतलब है कि पुराने ज्वर में रोगी को कभी कपड़े में ढाँक न रखना चाहिये ॥

यह सामान्य बात है कि बुखार वाले को हवादार मकान में न रखना, इससे यह मत समझना कि रोगी को एक अन्व कोठरी में बन्द कर देओ कि अच्छा भी आदमी घबड़ाकर मर जावै । रोगी को एक ताफ़ मकान में जिस्में बड़ा केवाड़ और शुद्ध वायु आने जाने के लिये खिड़कियां लगी हों, हां, यदि उन खिड़कियोंसे बाहरी अधिक हवा आती हो तो परदा डाल देवै (मवातसेवा) प्रथम ही कह दिया गया है कि रोगी को तेज हवासे बचाना चाहिये ॥

इस बात को खूब याद रखना चाहिये, अगर रोगी को बहुत गर्मी लगे और वह पंखा हाँकने को कहै और जिसके वारम्बार पसीना आता हो और उस पसीना के आने से ज्वर को कुछ भी फायदा न पहुँच कर उलटा रोगी सुस्त और कमजोर होता जावै तो, उसके गरमी, पसीना,

विहोशी शांति के लिये रोगी के मुखपर बराबर पंखा हाँकता रहै कभी बन्द न करै । किस पंखेकी हवा देवै ममाणके लिये सद्ग्रन्थोंका इलोक लिखतेहैं ॥

व्यजनस्यानिलस्तृष्णा स्वेदमूर्च्छा श्रमापहः । (व्यजनं खजूरीपत्रभवंश्रेष्ठं) तालवृंतभवोवातस्त्रिदोष शमनोमतः ॥
वंश व्यजनजः सोष्णो रक्तपित्त प्रकोपनः ॥ चामरो वस्त्र संभूतो मायूरो वेत्रजस्तथा । एतेदोषहरावातासिन्ध्या हृद्यः सुपूजिताः ॥

पंखे की हवा पियास, पसीना, विहोशी और थकाई को दूर करता है । पंखा खजूर पत्र का अच्छा होता है, ताड़ के पंखे की हवा तीनों दोष को नाश करता है, बांस के पंखे की हवा गरम, रक्त पित्त को बिगाड़नेवाला है, चामर, कपड़े के पंखे, मयूरपंख और बेंत के पंखे की हवा, दोषों को हरने वाला, चिकना, दिल को ताकत देनेवाला और ऋषियों करके मशहूरनीय है ॥

ज्वर रोग में दूध खाने की विधि ।

वैद्यक में तीन अङ्ग हैं निदान, निघंट, चिकित्सा—निदान पूर्व कारण को कहते हैं कि रोग किस सबब से होता है और उसका पूर्व रूप और साध्यासाध्य का विचार निदान से जाना जाता है और निघंट में औषधियोंकी उत्पत्ति लक्षण गुण विकार आदि वर्णन रहता है, निदान और निघंट यह दोनों मकरुण चिकित्सा के सहायकहैं—“चिकित्सा” यह शब्द ‘कित’ धातु से बना है जिसका अर्थ है रोगों को दूर करना हटाना, भगाना, चिकित्सा यह बड़ा कठिन काम है क्योंकि जैसे किले में शत्रुवा, राज्य में दुशमन दखल कर लेता है तो उसका निकालना बहुत कठिन हो जाता है उष अवस्था में राज नीति विशारद पुरुष—याम, दाम दण्ड भेद, चार उपाय से शत्रु को निकालते हैं यह चारों उपाय किसे राजा के पास होते हैं कि जिसका राज्य सम्पूर्ण से पूर्ण रहता है जिसका विस्तार वर्णन नीति शास्त्र में लिखा है ऐसा ही पूरी चिकित्सा वह वैद्य कर सकता है जो आयुर्वेद के समस्त अङ्ग और शाखा मशाखा के विज्ञान में दक्ष होता है और न केवल दसताही काम

देता है किन्तु सब प्रकार की सामग्री और सामान भी होना चाहिये जैसे नीति विशारद पुरुष किले से दुश्मन को निकालना चाहता है और निकालने की सब विधि भी जानता है पर उसके पास—खाम, दाम, भेद, दण्ड चारों सामान नहीं तो कहिये किस तरह निकाल सकेगा अथवा सब सामान है पर उसको काम में लाने की क्रिया नहीं जानता तो भी वह शत्रु के हटाने में असमर्थ रहता है—वैसे इसी दृष्टान्त के मूल पर सज्जनों को सोचना चाहिये कि चिकित्सा कर्म बड़ा सूक्ष्म और पूर्ण विद्या और शुद्ध बुद्धि के द्वारा ठीक किया जा सकता है जैसे शत्रु संकट में नीति विशारद लोग शान्ति के द्वारा अथवा कुत्र दे लेकर अथवा शत्रुओं के आपस में भेद उपना के शत्रु पक्ष को निर्बल करते हैं पर जब यह तीनों यत्न नहीं चलते तो अस्त्र शस्त्र के द्वारा लड़ते हैं कि जिसके लिये बहुत सामर्थ्य और साहस चाहिये यदि राजकीय युद्ध से रोग और चिकित्सा की लड़ाई का मिलान किया जाय तो मृत्येक बात मिल सकती है परन्तु लेख बढ़ने के कारण वह नहीं लिखा जा सकता है पर ब्रद्धिमानों के निकट इतनाही उपदेश बहुत है कि चिकित्सा कर्म बहुत गंभीर और बुद्धि विद्या साध्य है इसमें कुछ सन्देह नहीं है कि चिकित्सा शास्त्र के न जानने ही से भारत की बड़ी हानि है क्योंकि आरोग्यता ही जीवन का एक मात्र फल है और विधिवत आयुर्वेद के जाने बिना आरोग्यता की रक्षा नहीं हो सकती है । हमारे इस देश में वैद्य लोग बुखार में दूध खाने को नहीं देते चाहें ज्वर नया हो या पुराना और डाक्टर लोग नये ज्वर में भी दूध खाने को बता देते हैं अब हम फिन की बातों पर ध्यान दें; किसकी सम्मति से ज्वर में दूध खिलावें अब हम को वास्तविक धर्म है कि कुछ वैद्यक शास्त्र देखें—युने अपनी स्वास्थ्य रक्षा खुद करें ॥

दूध देने का प्रमाण ।

कृशोऽल्पदोषो वीनश्च नरो जीर्णज्वरादितः । विवंधा
सुष्ठु वीपश्च रुक्षः पित्तानिलज्वरी ॥ पिपासार्तः सदाही वा

पयसा स सुखीभवेत् । तदेव तु पयः पीतं तरुणी हन्ति मानवम् ॥

इतने लोगों को दूध अमृत के समान गुण करता है । अति दुर्बल, अल्प दोष युक्त, दीन अर्थात् घबड़ाया हुआ या डरा हुआ, और जीर्ण ज्वर से दुर्बल (पुराना ज्वर) जिस रोगी को दस्त न होया हो रुखा और पित्त वात ज्वर वाला, तृपा एवं दाह रोग वाले को दूध फायदा करता है और वही दूध नये ज्वर में पिया भया रोगी को मार डालता है ॥

अन्यच्च—जीर्णज्वरे कफेक्षीणे क्षरिंस्यादमृतोपमम् । तदेव तरुणे पीतं विषवत् हन्ति मानवम् ॥ धारोष्णं वा पया शीतं पीतं सद्यो ज्वरं जयेत् ।

पुराने बुखार वाले को और जिसका कफ सूख गया हो उसे दूध अमृत के समान गुण करता है और नये बुखार में पिया भया, दूध विष के समान रोगी को मार डालता है । धारोष्ण अर्थात् सघही का दुहा हुआ गरम दूध जो पृथ्वी पर न रक्खा गया हो अथवा शीतल दूध पीने से शीघ्र ही वह दूध ज्वर को नाश करता है । इस्ते स्पष्ट हुआ कि नवीन ज्वर में पांच सात दिन दूध न देना चाहिये बाद दूध पिलाना गुण दायक है इस में महर्षि युशुत का भी वचन ममाण है ॥

सूत्र स्थान अध्याय ४५

वातपित्त शोणित मानस विकारेष्वविरुद्धम् जाणज्वर कासस्वांस शोषक्षय गुल्मोन्मादोदर मूर्च्छा भ्रम मद दाह पिपासा तृद्धस्ति पाण्डुरोग ग्रहणी दोषार्शः शूलोदावर्तान्ति-सार प्रवाहिका योनिरोग गर्भास्त्राव रक्त पित्त श्रमक्रम हरं ।

वात पित्त रक्त और मन के विकार में दूध पिलाना मना नहीं है, तथा जीर्णज्वर जो चिरकाल से ज्वर न छूटा हो दमा खांसी (शोष) शरीर का प्रति दिन सूखते जाना (क्षय) तपेदिक, गोला, उन्माद, बिहोसी, घुमरी,

नेत्र में नसा सा बनावे रहै, शरीर में जलने होना पियाण हृदय का दर्द नाभि के नीचे दर्द होना, पांडु, ग्रहणी, वावासीर, पेट का दर्द, उदावर्त, अर्तीवार, प्रवाहिका, योनिरोग गर्भ का न ठहरना, रक्त, पित्त, यकॉई (कृम) बिना परिश्रम किये शरीर का थकित हो जाना इत्यादि रोगों को दूध नाश करता है ॥

ज्वर में औषध खिलाने का नियम ।

ज्वर में औषध देने का नियम लोग बिलकुल नहीं जानते ज्वर पका हो या न पका हो शीघ्रही दवा लिखा देते हैं इसी से ज्वर न छुट के दूना हो जाता है क्योंकि ॥

आमज्वरस्य निह्नानि न दद्यात्तत्र भेषजम् । भेषजं ह्याम-
दोषस्य भूयो वर्द्धयति ज्वरं ॥ शोधनं शमनीयं तु करोति विष-
ज्वरम् ।

कच्चे ज्वर में औषध न देय क्योंकि आम (कच्चा) ज्वर में औषध देने से और भी ज्वर बढ़ता है, और कच्चे ज्वर में शोधन अथवा शमनीय औषध दे तो मानों ज्वर को विषम करना है इस लिये कच्चे बुखार में कभी धोखे से भी औषध न देय ॥

मृदोज्वरे लघोवेहे प्रललेपु मलेपुच । पक्वं दोषं विजा-
नीयाज्ज्वरे देयं तदौषधम् ॥

जब देखे कि ज्वर कुछ घीमा हुआ है और शरीर हलकी हुई है तथा वातादिक दोष यथा स्थित हुये हैं तब जानना की अब दोष पचा है उस अवस्था में दवा देने से ज्वर का नाश होता है । लेकिन इस विषय को हकीम साहब और डाक्टर बाबू बिलकुल नहीं जानते हैं, जाने कहां से, इस बात को तो हम कई स्थलों में दिखला चुके हैं कि वैद्यक विद्या देश काल पर निर्भर है, तो बिलायत और अरब देश की वैद्यक विद्या के बल से इस देशवाले की चिकित्सा करना बिना इस देश की परीक्षा किये लाभ दायक हो सकता है ? कदापि नहीं, इस लिये डाक्टर हकीमों को भी वैद्यक शास्त्र पढ़ना चाहि ॥

अपक्व ज्वर लक्षण ।

सुश्रुत उत्तर तन्त्रम् अध्याय ३६

हृदयोद्वेष्टनं तंद्रा लालाश्रुतिरोचकः । दोषाप्रवृ-
त्तिरालस्यं विवंधो बहुमूत्रता ॥ गुरुदरत्वमस्वेदो न पक्तिः
शकृतोऽरतिः । स्वापः स्तंभो गुरुत्वं च गात्राणां बन्धि-
मार्द्रवम् ॥ मुखस्याशुद्धिरग्लानिः प्रसंगी बलवान्ज्वरः ।
लिंगैरेभिर्विजानीया ज्वरमामं विचक्षणः ॥

यद्यपि दोष पचने का यह पुरा साबूत है कि बात ज्वरादि में बात
ज्वरादि के लक्षण कम न हुये हों तथापि अधिक चेत कराने के लिये फिर
दिखलाया जाता है कि जब तक निम्नलिखित लक्षण ज्वर रोगी में पाया
जावे तो जानना कि दोष अभी नहीं पचा उस अवस्था में औषध कदापि न
देवें । जैसे—जिस ज्वर में छाती जकड़ी सी मालूम हो, नेत्रों पर झपकी, मुख
से लार गिरना या पंछा छूटना, अन्न पर अरुचि, बातादि दोषों का स्वा-
भाविक काम में अमृति हो, सुस्ती दस्त का न होना और मूत्र जादा होना,
पेट भरासा मालूम हो तथा पसीना न आवे, कल न पड़े, नींद न लगे, शरीर
जकड़ी हो या दर्द हो, अग्निमन्द, मुख का स्वाद खराब और बुखार खूब
तेज हो तो जानना कि दोष अभी नहीं पचा । अगर कोई यह कहे कि बहुत
लोग ऐसे कोमल मिजाज के होते हैं कि अन्न मर्दादि ज्वर के लक्षण से घ-
बड़ाये जाते हैं, हाय २ मचाने लगते हैं, वस उसी अवस्था में वैद्य लोग
घबड़ाये के दवा देते हैं, तो उस समय उपद्रव शांत्यर्थ कोई औषध देय या
नहीं ? (उ०) रोगी को अचेतन्य देख वैद्य का घबड़ाना शास्त्र सम्मति नहीं
है अन्ततोगत्वा जब किसी मवल उपद्रव से रोगी को अत्यन्तही क्लेशित देखे
तो ऊपरी प्रयोग से सिर्फ उस उपद्रव को शांत करे, दोष पचने की औषध न
दे, यदि कहो कि बिना दोष पचाये उपद्रव कैसे शांत होंगे क्योंकि उपद्रव
दोष के अन्न हैं (उ०) ठीक है बिलकुल शांति नहीं हो सकते हैं कुछ बेग कम
हो जायगे और ज्वर में बिन्न भी न होगा, जैसे अन्न दर्द में अन्न मर्दन क-

राना (वात नाशाय मर्दन) उससे दर्द निश्चय न हो के क्लेश कम हो जायगा और इसे ज्वर में कुछ बाधा नहीं हो सक्ता, जैसे शिर के दर्द में दर्द नाशक लेप माथे में लगाना यद्यपि वह लेप बिना दोष पचे शिर दर्द समूल नष्ट नहीं कर सक्ता है तथापि हानि भी नहीं पहुँचाता इस लिये ऊपरी प्रयोग करना कोई हर्ज नहीं है परन्तु बिना दोष पचे दोष पाचनार्थ औषध कभी धोखे से भी न देवे। ज्वर रोग विशूचिका आदि रोगके समान भयंकर नहीं है यदि विचार सहित चिकित्सा की जावे तो ज्वर रोग से एक भी रोगी न मरे केवल भूल होने से ज्वर रोग में रोगी मर जाते हैं ॥

औषध दान कालः ।

मृदौ ज्वरे लघो देहे प्रचलेषु मलेषु च । पक्वोपविजानिया
ज्वरे देयं तदौषधम् ॥ दोषप्रकृति वैकृत्यादेकेषां पक्व
लक्षणम् । सप्तरात्रात्परं केचिन्मन्यन्ते देयं मौषधम् ॥
वशरात्रात्परं केचिद्वातव्य मिति निश्चिता ॥

ज्वर रोग में जो औषध देने का नियम आपधियों ने कहा है उसे दिखलाते हैं। जब बुखार घीमा हो और शरीर हलकी हो और देखे की वातादिक दोष यथा स्थित हो गये हैं उस अवस्था में दोष पचा जान कर औषध देवे। किसी २ विद्वान की राय है कि वातादि दोष जैसे ज्वर में बेगमान रहते हैं यदि उनमें फर्क पर जाय या उलटे हो जाय तब भी जानना कि दोष पच गये हैं औषध देना उचित है और भी किसी आचार्य का मत है कि सात दिन पीछे और किसी के मत से दश दिन पीछे ज्वर रोगमें औषध देने का काल है। परन्तु सिद्धान्त मत यही है कि ज्वर के आदि में लघन से दोष अवश्य ही पचैगा वर कुछ भी दोष पचा देखे क्वाथादि औषध देवे इसमें हमारी पूरी सम्मति है कि ज्वर रोग में बड़ी चूर्णादि न देके केवल क्वाथ पिलाना अत्यन्त लाभदायक होता है। परीक्षा द्वारा यहाँ तक देखा गया है कि यदि ज्वर रोगवाले को क्वाथादि कोई औषध न देके लघनादि ठीक उपचार सहित रखनेही से ज्वर रोग छुट जाता है, उपचार बिगड़ जाने से अमृत समान भी औषध पिलाने से ज्वर नहीं छुटता बल्कि बढ़ जाता है ॥

(अभया) बड़ा हड़ आधा भाग (जल) सुगन्धवाला १ भाग सब दवाइयों को ढाई तोला ले पूर्वोक्त प्रकार दोनों समय क्वाथ पिलाने से त्रिहोषी (शोष) गल-तालु जीभ का सूखना (निदाघ) ग्रीष्म कलौष्मणा अनिता ज्वरोनिदाघः (वृद्ध) बारम्बार पियास का लगना (मलपन) अनर्थक वात बकना और बुद्धि भ्रांति इत्यादि उपद्रव युक्त पित्तज्वर शांति होता है उसी तरह (दुस्पर्शा) यवाणा (ममदा) मियंगु-मियंगु मालकगुनी को भी कहते हैं, यहाँ पर मियंगु नामक फूल लेना (किराता) चिरायता, कुटकी (सिंहास्य) आरुणा (रेणुः) पित्तपापड़ा इन सब औषधों का काढ़ा में (शर्कयान्वितः सितायुक्तः) एक तोला मिथ्री या चिनी डाल के दोनों समय पिलाने से, पियास (दाहः) बन्दिस्पर्शवद्दुःखः—जैसा अग्नि से जलने से दुख होता है वैसाही जलन शरीर में होने को दाह कहते हैं इत्यादि उपद्रव सहित रक्त पित्तज्वर आराम होता है। यह हम मथही कह चुके हैं कि पित्तज्वर में दाह अधिक होता है पित्तज्वर अथवा कोई ज्वर दाह युक्त हो तो निम्नलिखित क्वाथ को पिलावें ॥

जलजल जल वाहरेणु विश्वोषध शिशिरैः शिशिरं जलं शृतं स्यात् । सपदि सुखकरं सदा सदाहज्वर तृपियोज्य-मिव नवज्वरेपि ॥

श्रीमता चरकेणाप्युक्तम्—मुस्त पर्पट कोशीर चन्दनो-दीच्य नागरैः शृतं शीत जलं दद्यात्पिपासा ज्वरशान्तिये ॥

(जल) खस (जल) सुगन्धवाला (जलवाही) मोथा (रेणु) पित्तपापड़ा (विश्वोषध) शोठ (शिशिर) लालचन्दन उक्त सब औषधों को समान भाग ले अधिकचरा कर ढाई तोला ले एक पाव जल में पकावें जब आधा रहे मल छान कर खूब शीतल कर अथवा उस काढ़े के पात्र को बर्फ पर रख देय १ तोला मिथ्री मिला के पिलावें एक ही दो रोज के बाद देखे कि दाह शांत नहीं होया तो काढ़ा न पका के बर्फ रात को भिजा के ओंख में रख देय और प्रातःकाल मल छान कर १ तोला मिथ्री मिला के पिला देवें इसी प्रकार सवेरे भिजा के किसी शीतल स्थान में रख देय और साम को मल छान के

मिश्री मिला के पिलाने से अति पिपासा सहित भी-पित्त ज्वर शांत होता है इसी पर चरक महाराज भी कहते हैं । नागरमोथा, पित्तपापड़ा, खस, लाल चन्दन, सुगन्धवाला और शोठ इनका काढ़ा बहुत शीतल करके पिलाने से पिपासा सहित पित्त ज्वर शांत होता है ॥

दाह ज्वरे दाहशमनोपायाः ।

सुश्रुत उत्तर तन्त्रम् ॥

दाहाभिभूते तु विधिं कुर्याद्दाह विनाशनम् । मधु-
फाणित युक्तेन निम्बपात्राम्भसापि वा ॥ दाहज्वरार्त्तं माति-
मान् वामयेत् क्षिप्रमेव च । शतधौत घृताभ्यक्तं दिग्ध्याद्वयं च
शक्तुभिः ॥ कोलामलक संयुक्तैः शूक धान्याम्ल संयुक्तैः ।
अम्लपिष्टैः सूशीतैश्च फेणिला पल्लवैस्तथा ॥ अम्लपिष्टैस्तु
शीतैर्वा पलाशतरुजैर्दिहेत् । बदरीपल्लवोत्थेन फेनेनारिष्ट-
कस्य च ॥ लिप्तेऽङ्गे दाहतृणं मूर्च्छासर्वथैव प्रशाम्यति ।

नया ज्वर हो अथवा माचीन हो जिस ज्वर में दाह अधिक हो उस दाह की चिकित्सा अवश्य करनी चाहिये । अगर रोगी कुछ भी बलवान् हो तो दो तोला निम्बपत्र को महीन घोट पाव भर जल में छान उसमें छः मासा शहद और दो तोला मंगरा सकर मिला के रोगी को पिला के तुरंत वमन कराना । या शतवार का धोया भया घृत को शरीर में मर्दन कराना । या धान जो गेहूं तीनों को पाव भर ले एक सेर पानी में दो या तीन दिन भिजा रखना जब पानी खटा हो जाय पानी को छान लेय तब उसी पानी में जब का सत्तू बैर और आवले को महीन पीस सम्पूर्ण अङ्गों में अथवा जिन २ अङ्गों में दाह हो लेप करना या बैर के पत्र को पानी में बांट पांच सेर पानी में घोल के मथना उसमें जो फेन उठे उसे दाहजनित अङ्ग में लेप करना उसी प्रकार रीठे के फेन का लेप करना इत्यादि उपाय से दाह, पियास और मूर्च्छा शांत होते हैं ॥

दाह पर प्रह्लादन तैल ।

यवाद्धकुडवंपिष्ट्वा मज्जिषाद्धपलंतथा । अम्लप्रस्थ
शतोन्मिश्रं तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥ एतत्प्रह्लादनंतैलं ज्वर
दाह विनाशनम् ॥

जब एक पाय, मंजीठ दो तोला, काले तिल का तेल १ सेर, दही का तोड़ २॥, मन । तेल को चांदी की कढ़ाई या कलईदार कढ़ाई में चढ़ाय जब और मंजीष्ठ को पानी में महीन पीस तेल में डाल दे और दही का तोड़ थोड़ा २ डाल मंदग्नि में पचावै जब सब पानी जलजाय तेल मात्र रहजाय अग्नि से उतार छान बोतल में भर दे इस तेल को शरीर में लगाने से दाह ज्वर शीघ्रही शांत होता है । अंगर श्लोकानुसार ७॥ मन दहीका तोड़ डाल के तैय्यार करै तो एकही बार उस तेल के लगानेसे दाहज्वर शांत होता है ॥

हमारे कविवर लोलिम्बराज महाशय ने दाह के शांत्यर्थ जो उपाय लिखे हैं, पाठकगणों के प्रवन्धार्य उसे भी प्रकाशित करता हूं और काव्य का-
अर्थ भाषा में ललित नहीं होता इस हेतु से संस्कृतमें अन्वय लिखे देता हूं ॥

श्रीखंड मण्डित कलेवर वल्लरीणां मुक्ताफलाकुल
विशाल कुचस्थलीनां । वैदग्ध्य मुग्ध वचसां सुविलाशिनी
नामालिंगनं सकल दाह मपाकरोति ।

श्रीखंडेति—विलाशिनी नामालिंगनं सकलदाहं अपाकरोति दूरीकरोती-
त्यर्थः कीदृशीनाम् श्रीखंडैर्मण्डिता कलेवर वल्लरीयाणां, श्रीखंडं स्वेतचन्दनं,
कलेवर शरीरं, वल्लरीलता, तनुलतेत्यर्थः, मुक्ता फलैराकुलानि विशालानि
कुचस्थलानियासां, कुचस्थलो वक्षजः, वैदग्ध्यं चातुर्यं, तेनमुग्धवचसां ॥

भाषार्थः—अति रूपवती स्त्री सोदश वर्ष की जिनके कोमल अङ्ग और
कठोर कुचों में चन्दन लगे एवं मोतियों के हार से कुच शोभित एवं जिसकी
चातुर्यता भरी मन्द मुपुकानि मन कों मोहित कर रहा है, ऐसी स्त्रियों को
अपने अङ्ग में लपटाने से महा दाह शांत होता है ॥

शय्यापल्लव पद्मपत्र रचिता वासोवयस्यैः समं कान्तरे कुसमस्फुरत्तरुवरे वीणान्वितं गायनम् । आलापाश्च शुकालिं कोकिलकृताः कान्ताश्चकान्ताः कथां वाताश्रमल बालक व्यजनजा दाहं निरा कुर्वते ॥

शय्येति—पल्लवा वा लक्षदाः विभक्ति विपरिणामे न योज्ये पल्लवो स्त्री किशलयमित्यमरः कदल्यादीनां वा पद्मपत्रैः (कमलपत्रैः) रचिता शय्या दाहनिरा कुर्वते दूरीकरोति, वयस्यैः समंवासः वयस्यै समानं कालिकैः सहवास इत्यर्थः, कथंभूतं—कुशुमस्फुरत्तरुवरे मफुल्लपुष्पयुक्ते वृक्षे, कांतारो महावनं, कांतारो स्त्री महारण्ये इति मेदिनी, वीणावाद्येन युक्तं गायनं (वीणांशितारलोके) शुकालि कोकिलकृता, आलापाः अलिपरिभाषणे इत्यस्य रूपं, शुकाः प्रसिद्धाः, अलिभ्रमरः कोकिलः पिकः आलापाः वचांसि, कान्ता नवीननार्यः कांता मनोहरा कथा भरतादि ग्रंथोक्ता शृङ्गार भेदा, अमल बालक व्यजन जनिताः वाताः बालको वीरणमूलं खस इति लोके, दाहं निराकुर्वते—मत्येकमसंवध्यते ॥

भावार्थः—कदली (केला) पत्र अथवा कमल पत्रोंका पलंगपर विद्याय उस शय्या पर दाह युक्त रोगी को सुलाने से दाह शांत होता है ॥

(कान्तारे वासः) जो, वन मफुल्लित पुष्पों से युक्त वृक्षों से शोभायमान हो रहा है ऐसे वन में रखने से (कांतार महा जंगल और स्त्री दोनों का बोधक है परन्तु इस स्थल में महावन लेना ।) शितार हारमोनियम् एवं वीन आदि वाजाओं करके संयुक्त गान भी दाह रोग को नाश करता है । तोता, कोयल की आवाज, अमर गुंज, रूपवती युवा स्त्री का स्पर्श, मनोहर कथा और कहानियों का सुनना, नवीन खस के पंखे की हवा, पित्त ज्वर जनित दाह को नाश करता है ॥

शेष पित्त ॥

पित्त ज्वर शांत होने पर भी यदि कुछ पित्त का शेष देखे तो उसे शान्ति

कर दे क्योंकि कुछ भी पित्त बाकी रहने से पुनः ज्वर होने का सम्भव है। प्रायः पित्त रह जाने से विषम ज्वर हो जाता है उसे डाक्टरों में (इन्टर मिटेन्ट फीवर) कहते हैं इस लिये शेष पित्त को शान्ति करना बहुत जरूरी है।

हतावशेषपित्तं तु त्वक्स्थं जनयति ज्वरम् । पिवेदिक्षु-
रसं तत्र शीतं वा शर्करोदकम् ॥ शालिपट्टिकयोरन्नमश्री-
यात्क्षीरसंप्लुतम् ।

जो पित्त शान्त भये पर कुछ शेष रह के त्वचा में रह जाय तो वह पित्त निस्सन्देह ज्वर पैदा करता है उस अवस्था में उसे पौड़े का रस या चिनी का शरबत पिलाना चाहिये जब तक पित्त की शान्ति न हो ॥

वैद्यक न जानने के सबब से चिनी के शरबत आदि शीतल चीजों से इतना लोग डरते हैं, रोगी को कौन कहे आरोग्य भी पीनेमें डरते हैं कि कहीं शीत न आजाय देखिये भाव प्रकाश में क्या लिखा है ॥

शर्करोदकस्य गुणाः ॥

जलेन शीतले नैव घोलिता शुभ्र शर्करा । एला लवंग-
कर्पूर मरिचैश्च समन्विता ॥ शर्करोदकं नाम्नै तत् प्रसिद्धं
विदुषां मुखः शर्करोदकं माख्यातं शुक्लं शिशिरं सरं ॥ वल्यं
रुच्यं लघु स्वादु वात पित्तास्र नाशनम् ॥ मूर्छा छर्दि तृषा-
दाह ज्वर शान्ति करं परम् ॥

शीतल जल में साफ चिनी अथवा मिथी की शरबत बनाय उत्तम छोटी लायची कर्पूर लवंग और काली मिर्च पीस के मिलाने से शर्करोदक ऐसा नाम पण्डितों के मुख द्वारा सुना गया है । यह शर्करोदक वीर्योत्पन्न कारक, उदर दाह निवारक और दस्तावर है बलकर, रुचिकर हलका स्वादु वात पित्त और रुधिर विकार का नाश करने वाला, बिहोशी शिर की घुमरी बमन पियास और दाह ज्वर शान्ति करने में परम श्रेष्ठ है । इसलिये पित्त शेष नाशार्थ चिनी का शरबत अवश्य पिलाना चाहिये ॥

और भी लिखा है (शर्करा सहित नीर, कफ कृत्पवनापहम्) शफेद शर्कर (चिनी) का सरबत कफ को घटाता है परन्तु वायु को नाश करता है, जिस ज्वर में कफ का कुछ लेश न हो और पित्त का महा-कोप हो तो उस अवस्था में मिथ्री का सरबत देना कदापि हानि कर न होगा, बल्कि शीघ्रही रोगी को तबली होगी ।

वात पित्त ज्वर पर फांट ।

मधूक पुष्पम्मधुकं चन्दनं सपरूपकम् । मृणालं कमलं
लोध्रं गम्भारी नागकेशरम् ॥ त्रिफलां सारिवान्द्राक्षां लाजा-
न कोष्णे जले छिपेत् । सितामधु युतः पेयः फांटो वा सौ
हिमोऽथवा ॥ वातपित्त ज्वरं दाहं, तृष्णा मूर्छा रतिभ्रमान् ।
रक्तपित्त मदं हन्यान्नात्र कार्यविचारणा ॥

यह फांट वातपित्त मिश्रित कज्व को और वातज्वर तथा पित्तज्वर को निस्सन्देह-आराम करता है । महुआ का फूल, मुलेठी, लालचन्दन, (परूपक) फाल्गु के जड़ का छाल, कमल वृक्ष की डंठी, (न मिलने पर कमल-गद्दे का बीज), ' कमल' कमलगद्दा, लोध्र, खम्भारि, नागकेशर, त्रिफला, सारि-वन, मुनक्का और धान का लावा । इन सब दवाइयों को ३ तोला ले अध-कचरा कर अथवा कलई दार पात्र में एक पाव पानी एक मृत्तिका पात्र में खूब गरम कर अग्नि पर से पानी को सतार उठी में औषध को डाल कर ढांप देवें जब शीतल होजाय-मल के छान लें और एक तोला मिथ्री २ मासा सहित ढाल के पीजावें अथवा हिम बना के पीवें अर्थात् दवा को रात में भिजा देवें सवेरे मल के छान कर मिथ्री मिला के पिये । इस फांट के पीने से वातपित्त ज्वर, दाह, पियास, मूर्छा (बेहोशी) ग्लानि, धुमरी, रक्तपित्त और नेत्रों में नशा सा मालूम देना आदि सबों को आराम करता है ।

कफ ज्वर की चिकित्सा ।

इस बात को खूब याद रखना चाहिये कि जब तक रोगी में ठीक २

चिभ्रमः ॥ परिदग्धां खरस्पर्शां जिह्वां स्रस्तांगता परा । घृ-
वनं रक्त पित्तस्य कफेनोन्मिश्रितस्य च ॥ शिरसो लुण्ठनं
तृष्णा निद्रा नाशो हृदिव्यथा । स्वेद मूत्र पूरीपाणां चिरा-
दर्शनमल्पशः ॥ कृशत्वं नाति गात्राणां सततं कण्ठ कूज-
नम् । कोठानां श्यावरक्तानां मण्डलानां च दर्शनं ॥ मूक-
त्वं स्त्रोतसांपाको गुरुत्वमुदरस्य च । चिरात्पाकश्च दोषाणां
सन्निपात ज्वरा कृतिः ॥

अर्थ—सन्निपात ज्वर में कभी जाड़ा लगे और कभी दाह मालूम हो; ह-
डियां, चन्धियों और शिर में दर्द हो, आंखों से आंसू बहें, नेत्र लाल या धू-
मिल रंग के हों और भीतर को बैठे जान पड़ें, कानों में खनखनाहट एवं दर्द
हो, गला सूखा और गले में कांटे से पड़ गये हों, भूषकी, वेहोखी आनतान बकना
खांसी, हांपी, खाने पर मन न चलना और घूमरी हो । जीभ ऐसा हो जैसा अग्नि से
जल गया हो और छूने में खरखरी मालूम हो, संपूर्ण शरीर सुस्त वा ढीली हो
जाय जो करवट लेने में भी आलस्य लगे, मुख से थूक ललाई लिये हुये कफ
पित्त के सहित निकले, शिर में ऐसा दर्द या बेचैनी हो कि शिर को इधर उधर
हिलाता रहै, पियास की आधिक्यता, नोंदका न पड़ना और छातीमें दर्द हो ।
प्लीहा बहुत कम निकले और दिशा पेशाब भी बहुत देर में और बहुत कम
हो ललाई लिये । यहांपर पाठ है “कृशत्वं नातिगात्राणां” और कहीं २ ऐसा
भी पाठ मिला है “कृशत्वं चातिगात्राणां” अर्थात् शरीर बहुत दुर्बल हो जाय
(लेकिन देखने में दोनों आते हैं हमने कई सन्निपात ज्वरी को बहुत दुर्बल
देखा है और किसी को अतिदुर्बल भी नहीं पाया) रोगी हरसमय कांखता
रहे और पीत, काली अथवा लाल रंगके गोले २ चढ़े या फुंसियां संपूर्ण शरीर
में निकल आवें विशेषकर कोखों और जांघोंमें । अच्छीतरह बोल न सके या
बिलकुल ही न बोलें न कान से सुने और न आंखों से देखे और नाक कान एक
जांय, पेट भारी और फूला वा रहै और उत्तम चिकित्सा करने पर भी दोष
बहुतदिनोंमें ऐसे इत्यादि लक्षण युक्त रोगीको सन्निपातज्वरी समझना । उक्त

संपूर्ण लक्षण उपस्थित होने पर अवाध्यही समझना चाहिये । यद्यपि सन्निपात रोग एक प्रकार का है परन्तु दोषों के न्यूनाधिक से तेरह भेद कहा है— जैसे एक २ दोष की अधिकता से, अर्थात् किसी सन्निपात ज्वर में वात का जोर अधिक रहता है, और वह इस वजे से मालूम होता है कि वात के जितने उपद्रव हैं स्वास, खांसी, घुमरी, आनतान बकना अंगों में दर्द, जभुआई अधिक आना इत्यादि होने से इसी प्रकार पित्ताधिक से शरीर में लाल २ दाने पड़-जाना, मुख पाक, अतीवार अंतरदाह आदि, कफाधिक से अंग की जड़ता, बाष्पी की स्तब्धता आदि इसी प्रकार लक्षणों की अधिकता से दोष की आ-धिकता जानी जाती है । इस तरह वातादि से तीन, द्वंद्व से तीन, सन्निपात से एक तथा वातादि दोष के अधिक मध्य और हीन होने से सब तेरह भेद कहे हैं शास्त्रज्ञ वैद्य लोग तत्क्षण अनुमान कर लेते हैं । अब वैद्यों के नाम करण किये हुये तेरह प्रकार के सन्निपात ज्वर के नाम और लक्षण लिखते हैं ॥

त्रयोदश सन्निपात के नाम ॥

सन्धिकश्चान्तकश्चैवरुग्दाहश्चित्तविभ्रमः । शीताह्न-
स्तान्द्रिकः प्रोक्तः कण्ठकुब्जश्चकर्णकः ॥ विख्यातो भुग्ननेत्रश्च
रक्तष्टीवीप्रलापकः । जिह्वकचेत्याभिभ्यासः सन्निपातास्त्रयोदशः

सन्धिक १ अन्तक २ रुग्दाह ३ चित्तविभ्रम ४ शीताह्न ५ सन्द्रिक ६
कण्ठकुब्ज ७ कर्णक ८ भुग्ननेत्र ९ रक्तष्टीवी १० प्रलापक ११ जिह्वक १२
और अभिन्यास यही तेरह नाम सन्निपात के हैं । अब हम तेरहा सन्निपात
के अवधि लिखते हैं कि कौन सन्निपात कितने दिन तक रहता है ॥

१३ सन्निपात की अवधि ॥

सन्धिके वासरः सप्तचान्तके दशवासराः । रुग्दाहे विंश-
तिर्ज्ञेया बन्हाष्टौ चित्तविभ्रमे ॥ पक्षमेकन्तु शीताह्ने इत्यादि ॥

उक्त तेरहो सन्निपात के आयु के दिन रेलाक में पूर्ण न लिखके भाषा

में लिखे देते हैं। सन्धिक-सन्निपात की मर्यादा सात दिन है अन्तक के दश दिन, रुग्दाह के २० दिन, चित्तिविभ्रम के २४ दिन, शीतांग के १५ दिन, तन्द्रिक के २५ दिन, कण्ठकुब्ज के १३ दिन, कर्णक के तीन मास, भुग्मनेत्र के ८ दिन, रक्तपीवी के १८ दिन, प्रलापक के १४ दिन, जिह्वक के १६ दिन और अभिन्यास के भी १६ दिन की मर्यादा है परन्तु यथार्थ रत्ता अर्थात् चिकित्सा न होने से रोगी तत्काल मर जाता है इस का कोई नियम नहीं है, उत्तम उपाय द्वारा रत्ता करने पर भी उक्त दिन पर्यन्त मर्यादा रहता है। अथ तेरहों सन्निपात के विशेष २ लक्षण लिखते हैं ॥

संधिक—सन्निपात उसे कहते हैं, जिस ज्वर के पूर्वरूप ही में संधि २ (जोड़) में वात पीड़ा की आधिकता, कफ, संताप, यलहानि और नोद न पड़े। इस ज्वर का वेग सात दिन रहता है और सातदिल चिकित्सा करने से आराम होता है ॥

अंतक—उस ज्वर को कहते हैं जिस में अति दाह, शरीर भाग सी जली जाय, धिहोसी, शिर दर्द कंपन, और हिचकी हो, इस ज्वर की अवधि दश दिन है लेकिन असाध्य है रोगी मुश्किल से बचता है ॥

रुग्दाह—इस ज्वर का लक्षण यह है कि रोगी आन तान बहुत धके, ज्वर का जोर अधिक हो धिहोसी, पुमरी, जो वात पुटो ठीक २ जघाय न दे सके, कंठ और गले में दाह, पियास बहुत, कुछ २ खांसी और स्वास हो। इस ज्वर की मर्यादा बीस दिन की है, कष्टसाध्य है अर्थात् उत्तम चिकित्सा करने पर आराम हो ॥

चित्तिविभ्रम—नाम ही से समझ सकते हो, जिस ज्वर के वेग से मनुष्य पागल हो जाय, कभी हंसे, कभी गाये, कभी नाचे, कभी रोये और आन तान थकता रहे, इस बुलार की आयु आठ दिन की है उपाय करने से आराम हो जाता है, चिकित्सा होलदिल रोग के समान करना उचित है—

शीताङ्ग—समस्त शरीर बरफ के समान शीतल हो, देह कांपे, हाथ पैर सब ठीले हो गये हों किसी की बात न सुने, नेत्र में जलन, खांसी, वमन, और दस्त पतले हों, यह ज्वर पन्द्रह दिन रहता है ऐसा शास्त्रकारों ने कहा है परन्तु जल्द खून में गरमी न पहुँचाने से रोगी शीघ्र मर जाता है। यदि इसी ज्वर में अन्तः में अधिक दाह और पियास हो तो निस्तन्देह रोगी मर जायगा क्योंकि प्रायः ऐसा देखने में आया है कि भीतर अधिक दाह और ऊपर शीत होने से रोगी नहीं बच सका ॥

तन्द्रिक—ज्वर में अकसर रोगी एक टक निहारता है, शरीर बहुत गरम हो और बारम्बार गले में कफ आ जाय, जीभ में कांटे पड़जाय जीभ काली और मोटी हो जाय, दस्त पतले, कानों में दर्द, गला अत्यन्त खुष्क जो बोलने में तकलीफ हो, ऐसी विहोशी हो मालूम हो कि रोगी सो रहा है। यह ज्वर पच्चीस दिन में पीछा छोड़ता है वह भी यदि चिकित्सा करने वाला हो कहीं मूर्खों के हाथ लगा तो सच ही यमालय का रास्ता लिया ॥

कण्ठकुण्डज—इस बुखार में पहले ही गला रुन्ध जाता है और पानी पीने में रोगी को निहायत तकलीफ होती है, जैसे पागल कुत्ता के काटने के जहर से पीड़ित रोगी से पानी नहीं पिया जाता, वैसा ही कण्ठकुण्डज ज्वर गले से पानी नहीं पिया जाता, एक घूंट पानी पीने से प्रायः छूटने का सा दुःख होता है, इस ज्वर में यद्यपि दाह, मोह, विलाप आदि और लक्षण रहित हैं पर गला का पकड़ जाना इस ज्वर में विशेष लक्षण है। वैद्यों ने इस ज्वर को कट साध्य कहा है परन्तु असाध्य ही समझिये दश रोगी में एक दो आराम होता है। इसकी चिकित्सा नारायण तैल गले में मालिस करके अथवा राई के पलस्तर आदि से गला खोलने का उपाय बहुत जल्द करे, अगर किसी उपाय से गला का खुलना न जान पड़े तो गले में दो तीन जोक लगाके खून निकलवाय देय और शीतल जल आदि

पीने को न देवे और न कोई बहुत गर्मही दवा देवे जहां तक हो किञ्चित् उष्ण गी का दूध अधिक पीने को देय ॥

कर्णकज्वर—इस ज्वर में रोगी कान का बहरा हो जाता है यह विशेष लक्षण है । प्रलाप, कष्टरूप, दमा, खांसी मुखसे लार का बहना आदि लक्षण रहते हैं । इस ज्वर की आयु वैद्यधरों ने तीन महीना लिखा है और अत्यन्त कठिनता से आराम होता है ऐसा कहा है । किसी २ रोगी को देखा भी गया है ॥

भुग्ननेत्र—इस जुखार में नेत्र टेढ़े हो जाते हैं, यह विशेष लक्षण है । तथा ज्वर की आधिक्यता, बुद्धि का नाश, मोह, प्रलाप, घस और कहीं २ सूजन यह भी लक्षण होते हैं । इस ज्वर की आठ दिन की मर्यादा है परन्तु असाध्य है ॥

रक्तहीवीज्वर—इसमें जीभ अतिशय काली अथवा लाल, उसमें चकत्ते पड़ गये हों जीभ तथा जीठ भी फट गये हों और उसमें रुधिर बहता हो यह विशेष लक्षण है, इस के अलावा बमन, पियास, मोह, पेट में दर्द, दस्त पतला, हिचकी, पेट का फूलना, घुमरी, और चित्तचम आदि लक्षण होते हैं । रक्तहीवी दस दिन रहता है परन्तु रोग असाध्य है, चिकित्सा इस में बहुत गरम नहीं करनी चाहिये ॥

प्रलापक—यह ग्यारहवां सक्रियात ज्वर है कि जिस में रोगी दिन रात बकताही रहे, अपनी बड़ाई को बातें करे पवित्रता में चित्त राखे, हर एक प्राणी को चिन्ता करे, बुद्धि स्थिर न रहे और चित्त भड़ा व्याकुल रहे । इस ज्वर की अवधि चौदह दिन है परन्तु यमालाप का रास्ता प्रत्येक समय निहारता रहता है ॥

जिह्वक—सक्रियात उसे कहते हैं जिस में अति कठिन कंठक युक्त जिह्वा होय, इस ज्वर में प्रायः रोगी बहिरा और मून्ता हो जाता है, स्वास

कास आदि और भी उपद्रव होते हैं । इस ज्वर की मर्यादा सोलह दिन और कट साध्य है ॥

अभिन्यास—अब तेरहवां सन्निपात का लक्षण कहा जाता है । रोगी के मुख पर चिकनाई हो, निद्रा अधिक हो, इन्द्रियां शिथिल बल का नाश और बोला कम जाय एवं स्वास रुक २ के आवे तो अभिन्यास ज्वर जानना, यह सन्निपात केवल मृत्यु तुल्य है । इस के आगे अब तेरहवां सन्निपात के साध्यासाध्य का निर्णय करते हैं ॥

अथ साध्यासाध्य निर्णयः ॥

संधिकेस्तन्द्रिकश्चैव कर्णकः कंठकुब्जकः । जिह्वकश्चित्त
विभ्रंशः षट्साध्याः सप्तमारकाः ॥

सन्धिक, तन्द्रिक, कर्णक, कंठकुब्ज जिह्वक और चित्त विभ्रंश यह छ सन्निपात साध्य अर्थात् सत् वैद्य द्वारा देशकाल यात्र के अनुसार उत्तम चिकित्सा होने से आराम हो सकता है । अन्तक, रुग्दाह, शीतांग भुग्नदूक, रक्तद्वीधी, प्रलापक और अभिन्यास यह सात प्रकार के सन्निपात प्राण के हरने वाले हैं । हिक्मत में सन्निपात को सरसाम कहते हैं और हाकुरी में सन्निपात का लक्षण प्रायः एपोलेक्स रोग में मिलता है और हाकुर लोग उसी के अनुसार चिकित्सा भी करते हैं इसी से सन्निपात प्रसिद्ध रोगी को कम आराम कर सकते हैं क्योंकि इस रोग में हाकुर लोग शिर पर धर्क रखाते हैं और सन्निपात में शीतल जल से सिंचन करना निषेध किया है । लियां भी है—सन्निपातेतु दाहार्तं यः सिंचेच्छीत वारिणा । आतुरःसकथं जीवेद्भूमिपथा सकथंभयेत् जो वैद्य सन्निपात के दाह में शीतल जल से सिंचन करता है अर्थात् शिर या छाती वगैरह में धर्क या शीतल जल लगाता है यह वैद्य रोगी को कैसे आराम करेगा किंतु भारहालेगा उस को वैद्य कैसे कहना चाहिये । पाठकगण

को स्मरण होगा, पूर्व में हम लिख आये हैं कि ज्वर रोग में गरमी प्रधान रहती है उस गरमी से और मस्तिष्क से पूरा संयन्ध है उस पर ध्यान रखना चिकित्सक मात्र को जरूरी है ज्वर रोग में उस के निवारण के उपाय न कर के चलती चिकित्सा जैसे आमज्वर (कच्चा बुखार) में दवा देना * अथवा खाने को देना, या मर्यादा से अधिक छंघन कराना, यात पित्त ज्वर वाले को एकाएकी कोठरी के भीतर बंद रखना, या पियास लगने पर पानी पीने को न देना, अथवा गरम २ औपधियों का काढ़ा या रस खिलाना इत्यादि उदपटांग उपायों से ज्वर रोग में सन्निपात हो जाता है और इस रोग से बिरले रोगी आराम होते हैं देखिये लो-लित्वराज क्या कहते हैं ॥

सन्निपातस्य कालस्य कश्चिद्भेदो न विद्यते । चिकित्सको जयेद्यस्तं तस्माकोस्ति प्रतापवान् ॥

* सन्निपात रोग और काल (मृत्यु) में कुछ भी भेद नहीं है जो वैद्य उस सन्निपात को जीते अर्थात् अपनी अनुभव प्रक्रिया के द्वारा उस काल रूपी रोग से रोगी को बचावे तो उस से बढ़ कर संसार में और कौन प्रतापी है ॥

* कपायं यः प्रयुज्जतिनरानां तरुणज्वरे । तसुप्तं कृष्ण-
सर्पं तु कराग्रेण परामृशेत् ॥

जो वैद्य नये बुखार में अर्थात् कच्चे-ज्वर में काढ़ा आदि दवा पीने को देता है वह भूख वैद्य मानों सोते हुये काले सांप को उंगलियों से छू कर जगाता है । तात्पर्य यह कि ज्वरारंभ में दवा खाने को देने से अथवा अन्य कुपथ्य के होने से सन्निपात हो जाता है जिस रोग से बिरलाही लोग बचते हैं ॥

सन्निपात ज्वर में कर्णमूल ॥

सन्निपातज्वरस्यान्ते कर्णमूले सुदारुणः । शोथः स जायते तेन-कश्चिदेव प्रमुच्यते ॥

सन्निपात ज्वर के अन्त में कान की जड़ में खून जम कर महा दुःखायक एक सूजन पैदा होती है, उस सूजन से ऐसा ही कोई भाग्यशाली हो तो आरोग्य होता है क्योंकि वह सूजन मनुष्य के मारने को होती है यह सूजन भी दुखार दियगड़ने के कारण से होती है क्योंकि ज्वर में जब आभ्यान्तरिक घात-पित्त की गरमी अधिक बढ़ती है और अज्ञान वैद्य उसे शान्ति नहीं कर सके तो वही गरमी मस्तिष्क में पहुंच तत् सम्बन्धी नसों के खून को अत्यन्त उष्ण कर पतला कर देती है तब वही खून वहां से टोकर कर कान के नीचे नस में आ के जम जाता है उसे जो सूजन पैदा होती है उसी को कर्णमूल कहते हैं (सन्निपात ज्वरस्यान्ते) इस पाठ का तात्पर्य यह है कि ज्वर के अन्त में ही प्रायः कर्णमूल होता है, किन्तु ज्वर के आदि मध्य में भी कर्णमूल होता है जिसका प्रमाण देते हैं ॥

ज्वरस्य पूर्व ज्वरमध्यतो वा ज्वरान्ततो वा श्रुतिमूलशोथः ।

क्रमादसाध्यः खलुकष्टसाध्यः सुखेन साध्यो मुनिभिः प्रदिष्टः ॥

भावार्थः—अगर सन्निपात रोग के पूर्व ही में कर्णमूल शोथ उत्पन्न हो तो असाध्य जानना, मध्य में कर्णमूल होने से कष्ट साध्य और अन्त में कर्णमूल होने से सुख साध्य जानना, यह घड़े २ वैद्यवरों का अनुभव किया हुआ है । सन्निपात रोग में कर्णमूल क्यों होता है उसका ठीक कारण यही है कि मस्तिष्क में जो रक्त है गरम होने से पतला हो के नीचे को आता है किन्तु कर्णस्य मूल नाड़ी के गाढ़ रक्त के सम्बन्ध से यह सो गाढ़ा हो के जम जाता है और उसी से कान के पीछे नीचे की तरफ फूल आता है, फिर रक्त ऊपर को नहीं जा सका इसी से वैद्यवरों ने

उसके निकाल देने की राय प्रगट की है । बहुत से मूर्ख वैद्य जो शुश्रुतादि ग्रन्थ को देखा सुना नहीं है डर से कर्ण का रक्त नहीं निकालते जिससे रोगी मर जाता है ॥

अहिषापुर में एक प्रयागवाल के स्त्री को सन्निपात ज्वर यथात् कर्ण मूल हुआ और यहाँ के एक नामी वैद्य की चिकित्सा होती थी, वैद्य महाराज डर से अथवा और किसी विचार से उस रक्त को मोक्षण न करके टिंचर आइयोडिन लगाना आरंभ किया, वह भला आराम कय हो सका था अन्त में एक डाक्टर ने आ के चीरा, करीब दो ढाई सेर के सवाद निकला किन्तु ज़िपादा दिन होने से वह सवाद ऐसा सब गया था कि जिस के घिप से स्त्री मर गई । लिखा है:-

शान्तित्रिदोषे श्रुतिमूलजातः शोथस्य रक्तं प्रविमोचयेत् प्राक्, पदचान्मुहुर्कटफलकृष्णजीरा विदवाकुलथ्योत्भव लेपनंसत् ॥

त्रिदोष अर्थात् सन्निपातज्वरके शांत होने पर कर्णमूल में उत्पन्न शोथ से पहिले जलीका (जोंक) या नस्तर द्वारा रक्त निकाल बाद कायफल, कालाजीरा, शीठ और कुरथी इन सबों को पानी में सूख महीन पीस के मोटा लेप करे या अपनी विचार से अन्य लेपादि लगावे, जोंक लगाने के उपरान्त एक दिन निम्ब पत्र यांच के तब कोई लेप लगावे ॥

सन्निपात ज्वर की चिकित्सा ॥

बुद्धिमान वैद्य को प्रथम ही यह निदान कर लेना बहुत उचित है कि १३ प्रकार के फहे हुये सन्निपातों में इसे कौन सन्निपात है और इसे ज्वरारंभ ही में सन्निपात हुआ है अथवा अपथ्य से ज्वर बिगड़ कर सन्निपात हुआ है । रोगी की प्रकृति अवस्था वल, देशकाल, इसके कोई प्रमे-दादि अन्य रोग तो नहीं थे या ज्वर के अतिरिक्त पूर्वोपार्जित अन्य रोग

भी उपस्थित है इत्यादि सब बातों को दवा देने के पूर्व ही जांच लेना चाहिये क्योंकि बिना सब बातों को जांचे दवा देना महा पाप है ॥

यदि अपथ्य से ज्वर रोग बिगड़ कर सन्निपात हुआ हो तो उसे लंघन नहीं कराना, हलका पथ्य देना जावे और बड़े हुये दवाओं को कामल चिकित्सा से शांत करे, यदि प्रारंभही से सन्निपात हुआ हो तो विचार के साथ १८-११ पृष्ठ के अनुसार लंघन करावे, जल प्रकरण को देर के गरम जल पीने को देय, सन्निपात रोगी को ऐसे मकान में रखना चाहिये जो बहुत साफ, सुलासा, जिसमें दो तीन दरवाजे हों, जादा हवा होती परदा टांग दे किवाड़ न बन्द करे और न रोगी को समीप बहुत भीड़ रहे अगर रोगी की होश हवास दुस्त हो तो वैद्य तीन, २ घण्टे पर अथवा दोनों समय उस्ते भीतरी दुख पूछं लिया करे और दीसाड़ी चिकित्सा करे अगर बतलाने की सामर्थ्य जाती रही हो तो बड़ी बुद्धिमानी के साथ चिकित्सा करनी चाहिये ॥

यदि रोगी की चैतन्यता जाती रही हो अथवा कण्ठ का अवरोध हो तो वैद्य इस बात की कोशिस सबसे पहले करे जिससे रोगी कुछ होश में आवे और गला खुले जिससे वह अपना मुरा दुख बयान कर सके । इस स्थल में यह जता देना बहुत ही उचित है कि बिना शर पर-अधिक गरमी पहुंचे न रोगी विहोश होता है और न कंठ बन्द होता है इस लिये सुखित रोगी की चिकित्सा रसादिक से कभी न करे अर्थात् रस साने को न देय ॥

संज्ञानाश की उपाय ॥

कम्पः प्रलपनं च स्य संज्ञानाशश्च दारुणः । रसैश्च ला-
ववर्तैश्च कुलिङ्गैः शशतिचिरैः ॥ तर्पणे प्राकुराणेन सर्पिपाश्या-
जयेन्नरं । बलारास्त्रागुडूच्याद्यैस्तैलैश्च परिपेचयेत् ॥

जो सन्निपाती रोगी के शरीर में कम्पन अधिक हो, या किसी को न चीन्हें आनतान बन्ता हो अथवा इन्द्रियों की चैतन्यता मिलकुल जाती

रही हो उस रोगी को लवा, घटेर, चिड़ा, खरगोस और तीतर इनके मांस रस अर्थात् घुसवा को पहले पिलाय के फिर समस्त शरीर में पुराने घी की मालिस करे अथवा गरियारा के जड़ की छाल, रासन और गुरच के काष से सिद्ध किया तैल को मर्दन करे। अगर इस क्रियासे मूर्छित न जाये अर्थात् संज्ञा चेतन्य न हो तो निम्नलिखित औषध का प्रयोग करे ॥

मूर्छित सन्निपात पर लघु सूचिकाभरण रस ॥

विषंपलमितं सूतः शाणकश्चूर्णयेद्वयम् । तच्चूर्णं
संपुटे क्षिप्त्वा काचलिसारावयोः ॥ मुद्रादत्वाच्च संशोष्य
ततश्चुल्ल्यां निवेशयेत् । बन्धिं शनैःशनैः कुर्यात् प्रहरद्वय
संख्यया ॥ तत उद्धारयेन्मुद्रामुपरिस्थांशरावकात् । संलग्नो
यो भवेत्सूतस्तंगृहणीयाच्छनैः शनैः ॥ वायुस्पशौ यथा
नस्यात्तथा कुप्यानिवेशयेत् । यावत्सूच्यामुखेलग्नः कुप्यानि
यातिभेपजं ॥ तावन्मात्रां रसो देयो मूर्च्छिते सन्निपातिनि ।
क्षीरेण प्रस्थितेमूर्द्धि तत्रांगुल्या च घर्षयेत् ॥ रक्त भेपजसं
पर्कांन्मुर्छितोपिहि जीवति । तथैव सर्प द्रष्टुस्तृताव-
स्थोपि जीवति । यदातापो भवेत्तस्य मधुरं तत्रदीयते ॥

यह श्लोक शारङ्गधर के द्वितीय खण्ड का है । (विषं) शोंगिया इसी को भीठा तेलिया भी कहते हैं २ तोला (सूत) पारा ४ मासे दोनों को एक में मिला के सूख महीन चूर्णकर, दो रक्षाधी जिस में कांच का लुक हो (यह रक्षाधी सौदागरों के दुकानों में मिलती भी हैं) उस में चूर्ण को घर दूसरी रक्षाधी ऊपर से ढक पांच कपरीटी करके सुखाय लेय बाद निर्घात काठरी में उस प्याले को चूल्हे पर चढ़ाय दोपहर पर्यन्त बहुत धीमी आंच से पचाये, उस के बाद सम्पुट को ठंडाकर आइस्ते से रक्षाधी को अलग कर लय, ऊपर की रक्षाधी में जो पारा लगा हो उसे निकाल छिरी

काँच की सीसी में रस काग से फीरन उस का मुख बंद कर दे, ताकी हवा न लगने पाये । भूछित रोगी का धीरे में बोझा सा शिर मुझाय महीन नस्तर । सार के जरा सा घाय कर देय जय उस में से रुधिर निकले, जितना सूचीका मुख होता है उतना सीसी में से रस लेके उस घाय में छोड़ उंगली से घिसे और बोड़े से दूध से चो डाले, यह रस रक्त से मिल भस्तिष्क में जाके जमे रुधिर और कफ को ठीक करता है इस से भूछित जाग उठता है । उसी प्रकार सर्प दंशित (सर्प से काटा हुआ) भूछित (मरे के समान) के शिर पर उक्त रस का प्रयोग करने से आराम होता है । पूर्वोक्त प्रयोग द्वारा भूछित के जागने पर अथवा न जागने पर ताप आये अर्थात् शरीर जादा गरम हो जाय या नाहीं देखने से भीतर गरमी अधिक बोध हो तो उसे पीछे का रस अथवा सींठे अन्तर का रस पिलावे । यदि दोनों चीजों में से एक भी न मिले तो गौ के ताजे दूध में मिश्री मिला के अथवा केवल मिश्री का शरबत पिलावे । भूत पूर्व वैद्यगण ऐसे ही ऐसे क्रियायों के द्वारा यश लाभ करते थे आजकल के वैद्यों में कठिन क्रियायों का प्रयोग करना तो दुस्कर एवं है, यद्यपि औषध तक नहीं बना सके तो रोगी कैसे आराम कर सके ॥

सन्निपात पर उन्मत्त रस का नस्य ॥

रसगंधौ समानांशौ घतूरफलजै रसैः । मर्दयेद्दिन-
मेकंच तत्तुल्यंत्रिकटुक्षिपेत् ॥ उन्मत्ताख्यो रसोनाम नस्ये-
स्यात्सन्निपातजित् ॥

पारा और आमलासारगंधक दोनों को समान भाग छे घतूर के फल के रस में एक दिन अर्थात् चार प्रहर घराघर खरल कटे उस फजली के घराघर त्रिकटु (शोठ पीपर मिर्च) महीन पीस के मिलाये इस का नाम उन्मत्त रस है इस का मात्रा आधी रत्ती से दो रत्ती तक है इस रस को नाश देने से (सूंधाने से) भी सन्निपात भूछित जागता है ॥

सन्निपात पर अंजन ॥

निस्त्वक् जैपाल बीजं च दशनिष्कं त्रिचूर्णयेत् । मरि-
चं पिप्पलीसृतं प्रतिनिष्कं त्रिमिश्रयेत् ॥ भाव्योजं वीरजै-
र्द्रावैः सप्ताहं संप्रयत्नतः । रसोयमंजने दत्तः सन्निपातं
विनाशयेत् ॥

खिला हुआ जालघोटे के बीज ४८ मास मिरच छोटी पीपर और
पारा यह सब चार २ मास ले के स्यों को महीन चूरन कर खरल में
हाल जंभीरी नौधू के रस में सात दिन छोटे पश्चात्तं घुसाय की सूख महीन
चूर्ण कर किसी कागदार सीसी में रख दे । इस चूर्ण के अंजन देने से सन्नि-
पात मूर्छित-जागता और सन्निपात रोग विनाश का प्राप्त होता है—

अगर कोई प्रश्न करे कि यहां पर मूर्छा किस रोग नहीं है सन्निपात
रोग का उपद्रव है तो सन्निपात ही का द्वाय वरिष्ठ क्यों न देखे मूर्छा आप
ही जाती रहेगी ? यह ठीक है, किन्तु यह बीजों का सिद्धान्त मत है, कोई
रोग क्यों न हो जिस रोग में जो उपद्रव अधिक बढ़ा हो खासकर मूर्छा
आदि जो शीघ्र ही प्राण धरणा करने वाले हैं उन्हें विशेष चिकित्सा द्वारा
जहां तक हो सके जल्द शांत करे । (ग्रिहा) अंजनादि पूर्वोक्त प्रयोग करने
के पूर्व ही बीज को यह जांच लेना बहुत उचित है कि रोगी का वर्तमान
रोग के पहले जुकाह, गरमी, प्रमेह, अंतीसार, शिररोग हीलदिल, उन्माद,
रक्तजघयासीर, घृष्णा, वमन, घातुशोष और सज्जवायु आदि कोई रोग तो
नहीं था कथथा वातपित्त प्रकृति युक्त मरण निर्जल तो रोगी नहीं है यदि
हो तो ऐसे रोगी के साथ उपरोक्त दवाइयों के प्रयोग न करके साधारण
और मांसदिल औषधों के द्वारा मूर्छा को दूर करे क्योंकि ऐसे रोगियों का
मस्तिष्क निहायत निर्जल रहता है अतः उग्र औषधों के प्रयोग करने से
रोगी के मर जाने का खौफ है । उपरोक्त रोग युक्त सन्निपात रोगीकी मूर्छा
इस प्रकार दूर करे ॥

मूर्छा की मातदिल उपाय ।

रोगी का शिर मुड़ा देय अथवा बाल महीन कतराय देय कालेतिल का तेल १ छँटाक, अंगूर अथवा जल का शिरका जिसमें मसाला वगैरह कुछ न पड़ा हो २ तोला, पानी डेढ़पाव सबों को एक में मिला लेय और उसी में कपड़ा तर कर के शिर पर रखो जब कपड़ा सूख जाय फिर उसी पानी में कपड़े को तर कर लो और शिर पर रखो लेकिन कपड़ा धुवाते समय हरबार पानी को हिला के तेल पानी को एकदिल कर लिया करे । इसी प्रकार जब तक होश न हो बराबर रखता जाय, पानी चुकजाय उसी प्रकार दूसरा पानी तैयार कर लेय । चार पांच सेर पाँगीको ऐसा गरम कर लेय जो शरीर पर छालने से क्षेय न हो, उसी पानी को एक टोंटीदार घरतन में भर एक आदमी रोगी के पैर के गाँठ के नीचे तरेरा देवे और एक आदमी आधस्ते २ पैर को धोवे, जैसे गाय दुही जाती है उस प्रकार धोवे नीचे से ऊपर को हाथ न लेजावे । पैर धोने के बाद पैर पोछ के ऊनी या सूती हो मोजा पहनाय देय अगर मोजा न मिले तो पैर में कपड़ा लपेट देय और चन्टा दे। चन्टे के बाद खोल देय, इसी प्रकार दो तीन दफे करने से निस्तद्देह मूर्छा जाती रहती है । हमारे देशी वैद्य प्रथम तो ऐसी चिकित्सा जानते नहीं यदि कोई हकीम या हिकमत का जागने वाला यह उपाय करे भी तो झूट कह देंगे कि शीत आजायगी । हम कहते हैं दूध घी के कमी के वजह से, घाल धियाह से, मांस भक्षियों के इस देशमें अधिक भर जाने से, आरुफल देश की दशा ऐसी घिगड़ गई है, कि समस्त भारत के लोग धातुहीन हो रहे हैं और धातु की निर्धलता से सद्य से अत्यन्त गरम दवाइयाँ लोगों को कम माफकत करती हैं, हम ३० वर्ष से चिकित्सा का काम करते हैं जितने सन्निपात रोगी साधारण मातदिल औषधों के प्रयोग से आरोग्य किया है उग्र और अत्यन्त उष्ण औषध द्वारा नहीं ॥

संधिक सन्निपात की चिकित्सा ।

नागरमेधा, देवदारु, गुरुच, रासन, शतावर, यह सब एक २ तोला । रेव की जड़ का छाल, कनूर कुटकी रुमा की पत्ती और ग्रीठ यह सब

छः छः मासा ले अथकचरा कर चार पुड़िया बनाय एक पुड़िया को एक सुत्तिका पात्र में पाचपर जल हाल के पीसी आंचसे पकावे जय एक छँटाक जल रह जाय शीतल कर मल के छान लेय और एक मासा गहद हाल के पिलाय देय इसी प्रकार दोनों समय पिलायें ॥

जिस कमरे में रोगी हो उसके बाहर निर्गुण्डी, गुग्गल, पीली सरसों, निम्बवृक्ष और रालापुष्प इसकी धूनी देय । इस्से संधिख सन्निपात का नाश होता है ॥

संधिख सन्निपात में हलका लंपन कराना और पसीना न आता हो तो पसीना लाके शरीर हलकी करना और यवागू आदि का पच्य देना ॥

अन्तक सन्निपात ॥

यद्यपि अन्तक सन्निपात त्याग करने को लिखा है क्योंकि यह सन्निपात मनुष्य को मारनेही के लिये आता है यद्यपि कंठगत प्राणवालों की भी चिकित्सा करना ऐसा शास्त्रकारों ने आछादी है ॥

इस को यकृत, रुसा की पत्ती, अमलतास का गूदा, देयदाह, फुटकी, रासन, गुरख और फुलीजन सब को समान भाग ले अथकचरा कर एक २ तोला की पुड़िया बनायें पूर्वोक्त प्रकार दोनों समय काढ़ा पिलायें ॥

अन्तक सन्निपाते रोटिका बंधन ॥

यह प्रयोग अनेक घंटों का अनुभव किया हुआ है । राई के चूण को लहसुन के रस में सान के रोटी बनावे और तवे पर रख घी का पुचारा दे के सेंके बाद गरमागरम शिर पर बांध देय और तीन चार घंटे के बाद खोल देय एवं दोपहर के बाद दूसरा तैयार कर के फिर बांधे, इस रोटी के बांधने से मनुष्य के अन्तक सन्निपात की मृत्युकारक व्याधा निस्सन्देह दूर होती है । लेकिन यह बात याद रहे कि यदि रोटी बांधने से होस वाला रोगी न बरदास्त कर सके अथवा होस रहित रोगी अपना शिर झुटके तो रोटी १५ मिनट रख के खोल लेय और एक दूध में फायदा न जान पड़े तो उसी रोटी

को ५ या १० मिनट में फिर फिर पर रखे अगर रोटी सूख गई हो तो दूसरी रोटी तैयार करले किन्तु दश पन्द्रह मिनट से अधिक न रखे । अन्तक सन्निपात में गरम जल और मांस जूस इत्यादि पीने को देय किन्तु ज्वरनाश कर्ता महासुतुज्जय मंत्र का जप और शिवाचमन विद्वान् ब्रह्मणों के द्वारा अवश्य करावे क्योंकि अन्तक सन्निपात का आरोग्य होना अति दुष्कर है इसी से वैद्यों ने दार कर यह श्लोक कहा है ॥

भिषग्भिरितिनिर्णीतं सन्निपातैतकाभिधे । भेषजंजान्-
ह्वी नीरं वैद्यो गोधिन्द एवहि ॥

अन्तक सन्निपात में वैद्यों ने यह ठीक निश्चय कर के कहा है कि इस रोग में रोगी को जीवपी गंगाजल है और वैद्य विष्णु भगवान हैं ॥

रुग्दाह सन्निपात की चिकित्सा ॥

धलधर मलयजनागर सवालकोशीर पप्यंटेःक्षयितं ।
यः पिवतिपयः सुशीतंशाम्यति रुग्दाहकस्तस्य ॥

नागरसोया, लालचन्दन, सोठ, गुग्गुली, लस और पित्तपापड़ा इन सब दवाइयों को समान भाग ले कर अथकचरा कर के दो २ तोले की पुष्टिया बना ले पूर्वोक्त प्रकार से ३ माश। मिश्री डाल के दोनों समय काढ़ा पिलावे यदि रोगी के अन्तःकरण में दाह अधिक होती यह काढ़ा न दे के निम्न लिखित-काढ़ पिलावे ॥

उशीर चन्दनोदीच्य द्राक्षामलक पपंटेः । शूतं शीतं
जलं ददाद्दाहहृद्ज्वर शान्तये ॥

गुग्गुली, लालचन्दन, लस, मुगझा बीज रहित, भूलाभायला बीज रहित और पित्तपापड़ा इन का काढ़ा-सूय शीतल कर मिश्री मिला के पिलाने से दाह पियास और बुखार शान्त होता है ॥

धूप, अगर, कचूर, सल्लकी, नख, तगर, नेत्रवाला सफेदचन्दन और राजा धूप सब को एक में मिला के किसी पात्र में रख दे और दिनमें कई दफे रोगी के मकान के बाहर धूनी देय । अगर रोगी के शरीर में दाढ़ अधिक हो खास कर कपर का चमड़ा जला जाता हो तो इस लेप को तैयार करके समस्त शरीर में लेपन करे । बैर के पत्तों को दही में खूब महीन पीस के अथवा कपूर, सफेदचन्दन और नीम पत्र सब को दही में पीस लेप करे । यदि समस्त शरीर में दाढ़ न हो सिर्फ हाथ पैर के तलुए में जलन हो तो उसी में लेपन करे और घान के लावा का घूष घना के ससमें कुछ मिश्री और मासा दे मासां गहद डाल के पिलावै, या सावू-दाना गी के दूध में पका के मिश्री मिला के पिलावै । रुग्दास ज्वर और पित्तज्वर की चिकित्सा एक समान जानना ॥

चित्तविभ्रम सन्निपात की चिकित्सा ।

इस सन्निपात में विशेष लक्षण, विशेषी, किसीको न चीन्हना पागल सरीखा भानतान बकना, हँसना गाना रहता है । गंधार लोग इसी को भूत प्रेत की याथा समझ सतर्पियों के द्वारा उत्तम चिकित्सा न कराके झाड़ फूँक में लग रोगी को यमपुरी की यात्रा करा देने हैं । चिकित्सक को बा-दिये कि साधारण प्रयोग द्वारा मूर्खों को प्रथम शांति करे लेकिन शिर में किसी प्रकार का विघ्न न पहुंचने पावे ॥

पथ्यापर्पटकटुका मृद्वीका दारुजलद भूनिम्याः ।
शम्याकपटोलशिवा द्वाथश्चित्तभ्रमंहन्ति ॥

बड़ा उहका थकल, पित्तपापड़ा, फुटकी, मुनक्का, देवदारु, नागरमोचा, गिरायता, अमलतास का गूदा, पटोलपत्र (परवल का पात) और तुण्डुल आयल सब को समान भाग ले २ तोला मात्रा का पूर्वोक्त प्रकार काढ़ा घना के पिलावै यदि रोगी के पतले दस्त आते हों तो अमलतास का गूदा और एह काढ़े से निकाल देय ॥

चित्तविभ्रम पर अंजन ।

पीपर, कालीमिर्च, शोंठ, होंग, पीलीसरसों, हड़, वहेरा, आंवला, हल्दी, कंजा के बीज, दुधियावच और सेंधानोन सबों को एकत्रित कर कूट कपड़छान कर थकरा के सूत्र में खरल कर के गोली बांध ले और छाया में सुखाय ले । इस गोली को जल में पीट कर अंजन लगाने से चित्त विभ्रम, सुगी, भूतोन्नाद और शरदी से शिर का दर्द आराम होता है ॥

शीताङ्ग सन्निपात की चिकित्सा ।

इस दुखार में विशेष लक्षण शरीर का अत्यन्त शीतल हो जाना, शरीर का कंपना और भीतर दाह रहता है और इसीका प्रथम शान्त करना श्रेयस्कर है ॥

मदार के जड़ की छाल, सफेद जीरा, शिकुटा (शोंठ पीपर मिर्च) भारङ्गी भटकटैयाका पञ्चाङ्ग, ककड़ासिंगी और पुहकरमूल । इन सब दवाइयों को सत्तान भाग लेय, मात्रा १ तोला से २ तोला तथा पूर्वोक्त प्रकार दोनों समय काढ़ा पिलावे । इसके पीने से शीताङ्ग सन्निपात, सूखी, श्वास और कफ वृद्धि इनका नाश होता है ॥

शीताङ्ग पर धुरा ।

पित्तपापड़ा, कुलथी, पीपल, धच, कायफर, कालाजीरा, चिरायता, चीता, कहुई तूम्बीकी बीज और हड़ इनका समान भ गले कूट कपड़छान करले । इस घूर्ण को देह में मलने से शीताङ्ग सन्निपात का नाश होता है ॥

तान्द्रिक सन्निपात की चिकित्सा ।

इस ज्वर की स्पष्ट परीक्षा यह है कि हर समय आँखों के सामने अंधियारा भालुम हो या आधी पलक ढपी रहे । इस ज्वर में शिर को तैलों के द्वारा तर रखें और निम्नलिखित दवाइयों का अंजन नेत्र में दें ॥

सेधानिमक, कपूर, मैनसिल, छोटीपीपर इन चारों चीजों को घोड़े

की लार और शहद में महीन घोंट कर नेत्रों में अंजन लगाने से तन्द्रिक सन्निपात का नाश होता है ॥

काढ़ा ।

भांगीगुडूची, धनकण्टकारि हरीतकी, पौष्करनागराणां ।
कृतः कपायस्त्रिदिनं निपीता घोरज्वरे तन्द्रिकसन्निपातं ॥

भारङ्गी, गुर्ब, नागरमेया, भटकटैया की पञ्चाङ्ग, हड्डी का बकला, पुष्करमूल और सोंठ इनका काढ़ा ३ दिन पीने से घोर तन्द्रिकसन्निपात नाश (आराम) होता है अगर यह काढ़ा अधिक गर्मी करे या प्यास की अधिकता हो तो इस काय को पिलावे । नीम पर की ताजी गुर्ब ४ तोला, परवरका डाल पात २ तोला, रुसा की पत्ती १ तोला इन तीनों चीजोंकी अथकचरा कर ४ पुडिया बनाले और पूर्वोक्त प्रकार शाम सवेरे काढ़ा बनाके पिलावे ।

कण्ठकुब्ज सन्निपात की चिकित्सा ।

इस जुखार में गिर का दर्द कण्ठ का अवरोध और सूखा विशेष कर लक्षण हैं इस उखर में निम्नलिखित काय को पिलावे । (शृङ्गादि काय) कंकड़ासिंघी, नागरमेया, सुष्कआंवली, देवदारु, बहेडा और कुरेआ की डाल दो २ तोला, भटकटैया का पञ्चाङ्ग, रुसा की पत्ती और हड्डी का बकल एक २ तोला, कचूर, चिरायता, भारङ्गी, हल्दी कुटकी, पुष्करमूल चीता, कालीमिर्च, चाय, सोंठ, पीपल और कायफल इन सबों को समान भाग ले अथकचरा कर डेढ़ २ तोले की पुडिया बना ले और पूर्वोक्त प्रकार दोनों समय काढ़ा पिलावे और किसी प्रकार का बलकारक बूझ भी देता जावे कि जिससे रोगी का थलघीय न होने पावे और न कण्ठ सूखे ॥

कर्णक सन्निपात की चिकित्सा ।

इस उखर में विशेष कर के बहिरापन, मुख से लार का बहना, कान और गालों में पीड़ा इत्यादि होता है ॥

रास्त्राश्वगंधा घनकंटकारी भार्गवचापौष्कररोहिणीनां ।
क्राथःकृतः शृंगभयायुतानां पीतो जयेत्कर्णकं सन्निपातं ॥

कर्णक सन्निपात में यह काढ़ा देने से प्रायः लाभ देखने में आया है, रासन, भटकटैया की जड़, असगंध, नागरमोथा, भारद्वाजी दुधियाघच, पुष्करमूल, कुटकी, ककरासिंगी, और सूखा आवला इन सब चीजों को समान भाग ले डेढ़ तोले को मात्रा को पावमर जल में काय बनाय दो मांसा शहद डाल दोनों समय कई दिन पिलाने से निस्सन्देह कर्णक सन्निपात दूर होता है । वैद्य को यह भी उचित है कि घात पित्तादि दोषों को न्यूनाधिक देख के औषधियों की मात्रा को कम जादा कर देवे अथवा औषधको घटा बढ़ा देय बिलकुल क्लिष्ट के भरोसे से दवा करना उत्तम नहीं है । कर्णक सन्निपात में कर्णमूल जड़रही होता है । उसमें इस लेप को लगाना अच्छा है ॥

कुलथी, कायफल, शोंठ, और सैंफ इन चारों चीजों को समान भाग ले पानी से खूब महीन पीस कुछ गरम कर लेप करे, इस लेप से एक दो दिन में कायदा दृष्टि गोचर न हो तो नीचे लिखे हुये लेप को लगावे । मेरु (लाल मृत्तिका) गोपुरु, शोंठ, कायफल और पुष्पघच सबोंको सिरफा में खूब महीन गरम कर लेप करे, यदि इससे भी लाभ न देख पड़े तो जलीफा द्वारा उस जगह का खून निकलवाय देय वाद इस लेप को लगावे । पीली सरसो, सेंधा नोन, बच्च, धुआं का करखा, शोंठ, हलदी सबों को पानी में पीस लेप करने से सूजन सहित व्रण नाराज होता है अगर गले में सूजन हो तो भी इस लेप के लगाने से आराम होता है । सेंधानोन और छोटी पीपल दोनों को गरम पानी में पीस नास देने से भी कायदा होता है ॥

भुग्ननेत्र सन्निपातकी चिकित्सा ॥

इस छर में दृष्टि का स्तिरुत्थापन और स्मरण शक्ति का नाश विशेष लक्षण है, इसी को प्रथम शोधन करना मुख्य काम है । तिस में दिला कि-

भाग को शुद्ध करके स्मरण शक्ति को चैतन्य करना और अङ्गुन के द्वारा देही दृष्टी को ठीक करना चाहिये ॥

अवलेहादि ॥

भूनिर्म्यमाक्षिकवचा सहितचकुर्या ल्वहंकणोपण रसो-
नक राजिकाभिः । नेत्राञ्जनञ्च लवणोत्तम पिप्पलीभ्यां-
नस्यंवचा मरिचाहङ्ग मधूकसारैः ॥

चिरायता, शहत, हुचियावच, छोटी पीपल, काली मिर्च, लाखन और राई इन सबों को समान भाग ले महीन चूर्ण कर एक एक साचा की पुड़िया बना ले और दिन में दो या तीन दफे शहत में गोला करके चटावे । सेन्धा नोन और छोटी पीपल पानी से सूख महीन घोट अङ्गुन को और वच, मिरच, हाँग, मुलेठी इन सबों को भीठे अनार के रस में महीन घोट नाच देवे ॥

रक्तप्रीवी सन्निपातकी चिकित्सा ॥

✕ इस ऊपर में थूक के साथ खून आता है और बमन भी हो जाता है यह विशेष लक्षण है ॥

पित्तपापड़ा, जवासा, रोहितपास इनका काढ़ा बनाय मिश्री मिला के पिलावे अथवा मुलेठी १ तोला, कतीरा नांद १ तोला दोनों को महीन चूर्ण कर २० पुड़िया बनावे और दिन में चार दफे अथवा छ दफे अर्थात् दो दो घंटे पर शहत के साथ चटावे । और फंकेल मिर्च को चूर्ण कर के नाच देय इसे मुख से रुधिर का जाना बन्द होता है । यदि इस्से रुधिर न बन्द हो तो यह काढ़ा देय । नागरमोथा, पद्माप, पित्तपापड़ा, सफेदचन्दन, लालचन्दन चमेली की पत्ती, शतावर, मुलेठी, नींथ की छाल और सुगन्धवाशा इन सबों को समान भाग ले दो तोला की मात्रा का काढ़ बनाय दो भासा शहत हाल के पिलावे । इसी प्रकार दोनों समय

पिलाने से रक्तहीवी सन्निपात आराम होता है । इसे भी कायदा न देख पड़े तो यह काय पिलावे ।

महुआ, मुलेठी, फालसा की छाल, लालचन्दन, तेजपात, देवदारु, और सागवन वृक्ष का फल अथवा छाल सब समान भाग ले दो तोला की मात्रा डेढ़पाव पानी में पकावे एक छँटाक पानी जल जाय मल के छान लेम और दो तोला मिश्री मिला के किसी बोतल में भर देय और दो २ घण्टे पर पिलावे । तथा दूध और अनार के फूल के रस की नास देवे ॥

प्रलापक सन्निपात की चिकित्सा ॥

इस ज्वरमें अत्यन्त शिरमें दर्द, बुद्धिका नाश, और आन तान घटना विशेष लक्षण है । यह काय पिलावे नागरसेया, सुगन्धवाला, पित्तपापड़ा, लालचन्दन, धी की छाल सबों को समान भाग ले पूर्वोक्त प्रकार काय घना के दोनों समय पिलावे ॥

जिह्वक सन्निपात की चिकित्सा ।

इस सन्निपात में विशेष लक्षण—रोगी सन्ताप करके महा व्याकुल तथा कठिन कंठक युक्त जिह्वा एवं गूहापन आदि होता है । इसकी चिकित्सा रक्तहीवी के समान करनी चाहिये किन्तु जिह्वा को ऊपरी चिकित्सा से कोमल करना उचित है । और शमिन्यास सन्निपात की चिकित्सा प्रलापक सन्निपात के समान करना इत्यादि ॥

सन्निपात ज्वर तथा साधारणज्वर के उपद्रवों (तृष्णादि) की चिकित्सा विषमज्वर एवं जीर्णज्वर आदि के लक्षण लिख के तत्पश्चात् लिखेंगे ॥

अथ विषमज्वर लक्षणम् ॥

यः स्यादनियतात्कालाच्छीतोष्णाभ्यांतथैव च । वेग
तश्चापि विषमो ज्वरः सविषमस्मृतः ॥

जो बुखार सरदी तथा गरमी करके अनियत समय में चढ़े और उतरे जिसका वेग विषम हो अर्थात् कभी कम और कभी जादा हो जाय, उसको विषमज्वर कहते हैं । तात्पर्य यह कि प्रथम ज्वर वात, पित्तादि किसी किसम का आया हो और वह ज्वर कुपथ्यादि कारण से रूपादि में बना रहा हो और ऊपर से मालुम हुआ हो, कि ज्वर विलकुल छुट गया कुछ फाल के बाद पुनः ज्वर आजाय उसे विषमज्वर कहते हैं । इस ज्वर में एक प्रकार का बुखार शरीर में बना रहता है किन्तु मालुम नहीं होता ऊपरी विकार से वही ज्वर तेज हो जाता है, इस ज्वर में पित्त प्रधान है, लेकिन इस बुखार का कोई समय नहीं है जभी आजाय और यह, ऐसा दुष्कर ज्वर है कि लोगों को घरसे, नहीं छोड़ता यदि उत्तम औषध मिले तो एकही दिन में छुट भी जाता है । इस विषमज्वर का पांच भेद है जैसे:-

सन्ततः सततोऽन्येद्युः स्तृतीयकचतुर्थिकौ ॥

सन्तत ज्वर, सततज्वर, अन्येद्युः ज्वर तृतीयक ज्वर और चातुर्थिक ज्वर इन सबों के लक्षण नीचे प्रकाश करते हैं ॥

सप्ताहवादशाहवाद्वादशाहमथापिवा । सन्तत्यायो
ऽविसर्गीस्यात् सन्ततः सन्निगद्यते ॥ अहारात्रे सततकौ
द्वीकालावनुवर्तते । अन्येद्युः एकस्त्यहारात्रादेककालं प्रव-
र्तते ॥ तृतीयकस्तृतीयेन्हि चतुर्थ्येऽन्विचतुर्थकः ॥

सन्ततज्वर-उसे कहते हैं जो सात दिन किसी दस दिन या बारह दिन तक एक समान ज्वर बना रह के उतरे सात दिन से वात प्रधान ज्वर दस दिन से पित्त प्रधान ज्वर और बारह दिन से कफ प्रधान ज्वर जानना चाहिये ॥

सततज्वर-एक दिन रात भर में दो बसत, चढ़ता और उतरता है ॥

अन्येद्युः ज्वर-एक दिन रात भर में एकही बार चढ़ता और उतरता है ॥

तृतीयक ज्वर-उसे कहते हैं जो तीसरे दिन ज्वर चढ़े अर्थात् जिस दिन ज्वर उतर गया उसके तीसरे दिन फिर चढ़े अर्थात् एक दिन घीब में खाली देके और इसी ज्वर को कोई अंतरिया और कोई तिजारी कहते हैं ॥

चातुर्थिक ज्वर-उसे कहते हैं जो दुखार दो दिन बीच में छोड़ के चौथे दिन आवै जिसे लोक में चौथिया कहते हैं ॥

तृतीयकज्वर का भेद ॥

कफपित्तत्रिकग्राहीपृष्ठाद्वातकफात्मकं वातपित्ताच्छि
रोग्राहीत्रिविधःस्यात्तृतीयकः ॥

तिजारी दुखार अगर प्रथम कमर के पिछाही जहाँ तीन हाड़ है उस में दर्द होके अथवा उसे जकड़ के चढ़े तो कफ पित्त से जानना, यदि पीठ में दर्द वगैरह होके उष्ण शीतल होके चढ़े तो वात कफ से और जो प्रथम शिर में दर्द वगैरह उत्पन्न कर के चढ़े उसे वायु पित्त से जानना चाहिये, जिस ज्वर में जिस दोष का अधिक कोप देसे उसी के अनुसार चिकित्सा करे ॥

प्रथम ज्वर में जाड़ा और गरमी मालुम होती है उसका कारण दि-
खलाते हैं । जो प्रथम ज्वर में वायु कफ के साथ मिल के ज्वर रोगों में बहती है तब ज्वर के प्रारंभ में जाड़ा मालुम होता है और बाद उस के जब वायु कफ से अलग हो जाती है अन्त में पित्त दाह पैदा करता है यही कारण है जो जाड़ा से ज्वर आने के अन्त में पियासे अधिक लगती है । तभी तरह जब वायु-पित्त के साथ-रोगों में गमन करती है तब ज्वर के आ-
रंभ में दाह और शीत होने के बाद यानी अन्त में श्लेष्मा अपने स्वभावज गुण से शीत उत्पन्न करता है और जाड़ा मालुम होता है । यह दोनों दा-
हादिक और शीतादिक ज्वर संसर्गों हैं अर्थात् द्विदोषज हैं, इन में शीत पूर्वक मुख साध्य और दाह पूर्वक कण्ठ साध्य है ॥

चातुर्थिक ज्वरका भेद ॥

चातुर्थकोदशयति प्रभावंद्विविधज्वरः । जह्वाभ्यांश्ले-

ष्मिकःपूर्वं शिरसानिलसम्भवः ॥ मध्यकायन्तुगृह्णाति
पूर्वंयस्तुसपित्तजः। विषमज्वरएवान्यश्चातुर्थिकविपर्ययः॥
समध्येज्वरयत्यहन्यादावन्तेचमुञ्चति ।

चातुर्थि ज्वर दो प्रकार का प्रभाव देखाता है । जो चातुर्थिक कफ
जन्य है सो पहिले पिहिरिन से बढ़ता है और जो वातोत्पन्न है सो शिरसे
सुरू होता है । जो चातुर्थिक में पित्त प्रधान है वह मध्य शरीर अर्थात् पेट
से बढ़ता है । एक प्रकार का विषम ज्वर और है जो चातुर्थिक ज्वर से
विपरीत याने उलटा रूप से आता है यह कि बीच से दो दिन बराबर
ज्वर घना रहता है और आदि का एक दिन अन्त का एक दिन छोड़ देता
है । एक प्रकार का विषम ज्वर और कहते हैं जिसे किसी २ ग्रंथ में नरसिंह
ज्वर नाम लिखा है ॥

विदग्धेऽन्तरसेदेहेश्लेष्मपित्तव्यवस्थिते । तेनाहुंशीतलं
देहमहुंमुष्णंप्रजायते ॥ कायेदुष्टंयदापित्तंश्लेष्माचान्तेव्य-
वस्थितः । तेनाष्णात्वंशरीरस्यशीतत्वंहस्तपादयोः ॥ काये-
श्लेष्मायदादुष्टः पित्तंचान्ते व्यवस्थितम् शीतत्वं तेन गात्र-
स्यादुष्णात्वंहस्तपादयोः ॥

शरीर में जब भोजन किया हुआ आहार का रस न पचने से (विदग्ध)
जल गया तब कफ और पित्त दुष्ट होके कोष करते हैं उस अवस्था के ज्वर
में आधी शरीर शीतल और आधी शरीर गरम रहती है ॥

जब पेट में पित्त दूषित होके प्राप्त हो और हाथ पांव में कफ रहे उस
से जो ज्वर उत्पन्न हो उसमें पित्त से शिर से पेट पर्यन्त गरम रहता है और
कफ से हाथ पांव शीतल रहते हैं । इसी प्रकार जब कोष्ठ में कफ दूषित हो
और (अन्त) हाथ पांव में पित्त तब शिर से पेट तक शीतल और हाथ
पांव गरम रहते हैं ॥

प्रलेपक ज्वर का लक्षण ।

प्रलपन्निवगात्राणि घर्मेण गौरवेण च । मन्दज्वरविलेपी
च शीतः स्यात् प्रलेपकः ॥

जिस ज्वर में पसीना और शरीर भारीपन के वजे से शरीर के ऊपर का थमड़ा लिपासा अर्थात् ओढ़ा सा मालूम हो और ज्वर बहुत तेज न हो एवं जाड़ा मालूम हो उसे प्रलेपक ज्वर कहते हैं । श्रुत जी कहते हैं । (ज्वराद्यविषमाः सर्वे प्रायः क्लेशायशोषिणाम्) अन्तर करके जितने विषम-ज्वर हैं सब क्लेश सहनेवाले और धातुक्षीणवाले को होते हैं । पाठकगणको यह भी याद रखना चाहिये कि ज्वर बिना किसी धातु से लपना पूरा सम्यक् किये-अधिक दिवस पर्यन्त शरीर में रह नहीं सकता इस लिये जय देसै कि उत्तम औषध के भी योग से धुलार नहीं छोड़ता तो निम्नलिखित लक्षणों में मिला ले कि यह ज्वर किस धातु में प्राप्त है उसे अलग कर देने ही से ज्वर जाता रहेगा । सो सात धातु हैं रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, (हाड) मज्जा, और शुक्र ॥

सप्तधातुगत ज्वर लक्षण ।

रसगतज्वर—शरीर में भारीपन, जी का सचलाना, शरीर में आलस्य अकृच्छि और उदासीनता यह लक्षण रस गत ज्वर में होते हैं ॥

मांसगतज्वर—में विशेष लक्षण पैर में ऐंठन, पियास, पेशाब और दस्तों का अधिक होना, भीतर दाह और घेघैनी होती है ॥

मेदगतज्वर—में अतिशय पसीना, पियास, बिहोसी, आनतान घफना, घमन, शरीर में दुर्गन्धि, अकृच्छि, रूतानि और घेघैनी आदि लक्षण होते हैं ।

रक्तगतज्वर—का लक्षण मुह से रक्त थूकना, दाह, बिहोसी, घमन घुमरी, प्रलाप, शरीर में कुन्सियां या लाल र दांग पड़जाना और पियास घोर हो जाता है ॥

अस्थिगतज्वर-में हड्डीफूटन, कलन पड़ना, हाथ पांय का पटकना, घमन, दस्त और श्वास का फूलना यह लक्षण होते हैं ॥

मज्जागतज्वर-इसमें आंख के सामने अंधियारा मालूम होना, हुचकी, महास्वास, खांसी, जाड़ालगना, घमन, अन्तर्दाह और मर्मस्थान में दर्द यह सब सदा असह्य लक्षण होते हैं ॥

शुक्रगतज्वर-(मरणप्राप्त्युपात्त शुक्रस्थानगतज्वर) शुक्र गत ज्वर होने से मनुष्य निस्सन्देह मर जाता है । इसमें विशेष लक्षण अत्यन्त प्रसंगेष्टा और अकस्मात् वीर्यपात होते हैं ॥

उक्त सर्व धातु गत ज्वरों की चिकित्सा मुख्य यह है कि बड़ेहुये उपद्रवों को दमन करना तथा लीय धातुओं को बढ़ा के सम करना और बड़े हुओं को घटा के सम करना जिसकी विधि कुछ आगे लिखेंगे भी । अब जीर्णज्वर के लक्षण कहते हैं ॥

जीर्ण ज्वर ।

योद्वादशेभ्योदिवसेभ्य ऊर्ध्वं दोषत्रयेभ्योद्विगुणेभ्य ऊर्ध्वं ।
नृणांतनीतिपृति मन्दवेगोभिषग्भिरुक्तेज्वरएषजीर्णः ॥

जो सुखार धाहर दिन के उपर निरन्तर घना रहे विशेष करके घात ज्वर चौदह दिन के उपरान्त, पित्तज्वर बीस दिन के उपरान्त और कफज्वर चौविंस दिन के उपर घना रहे एवं सुखार बहुत सेज न हो किन्तु मन्द वेग से घना रहे उसको जीर्णज्वर कहते हैं ॥

जीर्ण ज्वर के भेद से एक ज्वर का लक्षण और कहते हैं ।

वातबलासक ज्वर ।

नित्यमन्दज्वरोरुक्षः शूनःकृच्छ्रेणसिद्ध्यति । स्तब्धांगः
श्लेष्मभूयिष्ठो नरोवातबलासकी ।

घीमा ज्वर निरन्तर शरीर में बना रहै। शरीर सूखी, हाथ पैर या समस्त शरीर में कुछ सूजन, तमाम बदन में ददं अथवा शरीर के नसें जकड़ी सी मालूम हो कफ की अधिकता यह लक्षण-होते हैं और ऐसे रोगी बहुत मुस्किल से आराम होते हैं।

अथ आगंतुक ज्वर के लक्षण ।

अभिधाताभिपंगाभ्यामभिचाराभिशापतः । आगंतुर्जायतेदोषैर्यथास्वं विभावयेत् ॥

आगंतुक ज्वर उसे कहते हैं जो खुलार मिथ्याहार मिथ्या विहार द्वारा न हो के अकस्मात् उत्पन्न हो जैसे अभिधात अर्थात् चोट लगने से (अभिपंग) भूतादिकों के लगने से • (अभिचार) मंत्र यंत्र तंत्र के योग से इस में भी वही बात है, अभिशाप अर्थात् गुरु ब्राह्मणादिकों के शाप से यथा दोष जो ज्वर होता है उसे आगंतुक ज्वर कहते हैं । भूत बाधा से उत्पन्न ज्वर ॥ लक्षण नीचे लिखते हैं ॥

• अखिल में भूत प्रेत कोई वस्तु नहीं है सिर्फ भय है, किसी कारण से क्यों न हो हृदय कंपित होने ही से (हास्य रोदन कंपन) इत्यादि उपद्रव उठ खड़े होते हैं उसी को अज्ञानी लोग भूत प्रेत की बाधा मानने लगते हैं और इस वजह से लोगों का विश्वास और भी जम जाता है कि इस प्रकार से रोग कपरी टोटका आदि उपायोंसे छुट भी जाता है यद्यपि यह सब उपाय वैद्य विद्या से संयन्त्र रखते हैं जैसे (घातोन्मादे प्रासनं) जैसे वायु के उन्माद में (पागल) की भायनक तस्वीरें अथवा रूपोंको दिखलाना, घमकाना (यह भी हो सकता है जैसे रोगी के सामने दीपक जला के माला फूल धुनी आदि दे के हाटना कि बतला तू कीन है इसे छोड़ दे नहीं तो तुझको आग में जला देंगे) विष रहित सपं से कटवाने का भय देखाना इत्यादि उपायोंसे (विषस्यविषमौषधं) जैसे (मयात् वायु) हर में वायु विगड़ जाता है वैसा ही हर दिखानेसे वायु शुद्ध होता है किन्तु अज्ञानात् लोगोंको विश्वास हो जाता है कि अशुभ आदमी क्लाहने फूफने से आराम हुआ है । इस लेख से

भूताभिपंगादुद्वेगो हास्यरोदनकंपनं । केचिद्भूताभि-
पंगोत्थं ब्रुवतेविषमज्वरं ॥

अब भूताभिपंग ज्वर के लक्षण दिखाते हैं—जैसे चित्त का उच्चाट होना, हँसना, रोना और शरीर का कांपना और कितने आचार्य वि-
षम ज्वर को भी भूत बाधा से उत्पन्न मानते हैं । मानने का कारण यह
जान पड़ता है कि विषम ज्वर में सास कर, सितारी चीखिया आदि
ज्वर यंत्र मंत्र टोटका आदि प्रयोग से भी छुट जाता है । इन सब लेखों
से जाना जाता है कि पूर्व भूताचार्य पदार्थ तत्त्वज्ञान (किमस्ट्रि सायन्स
आदि) में आम्ब्यास कम रखते थे अथवा उसे बांधियात समझते थे । तभी
तो प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सिद्ध धातों को भूत बाधा मान लेते हैं । यंत्र या
कोई जड़ी बूटी हाथ की कलाई या बाहु, गले में, बांधना ठीक रक्त के
साथ उस का सम्बन्ध कराना है क्योंकि रोग पुराना होने से रुधिर के
साथ उन का पूरा सम्बन्ध हो जाता है इसी से जल्द आराम नहीं होते
आज कल के विज्ञान दृष्टियों ने इसी लिये बिजुली की चीजें निकाली है
कि जिस के पहरने अथवा बांधने से रुधिर, रोग से अपना सम्बन्ध छोड़
के विद्युत के साथ कर लेता है ॥

हम लोग नास्तिक न समझें क्योंकि यह हमारा कथन परीक्षित है, हम ने
कितने रोगियों को आरोग्य किया है, उनमें से एक दो रोगियों का हाल
इस स्थल में लिखे भी देते हैं ॥

जानसेनगञ्ज में सूर्यदीन ठठेरी का, पुत्र जिसकी अवस्था २० वर्ष की
थी दो यज्ञे रात को दोतलों के गिरने की आवाज से चौंक उठा और डर
कर प्राणल हो गया, तीसरे दिन दोपहर को सूर्यदीन हमको बुला ले गया,
वहाँ हम जाके यह देखा कि चंद झाड़ने फूकने वाले हफाली लोग हफला
बजा रहे हैं और यह लड़का अलग एक चटाई पर सफेद नई पोती और
गले में फूलों का गजरा पहने घैठा है कहता है कि हम फलाने दरगाह के
सबेद हैं, हमारे साथ बहुत पलटने हैं देखो दो आदमी हमारा वह ताल पर

ज्वर के दश उपद्रव ।

श्वासेमूर्च्छाऽरुचिश्छर्दिस्तृष्णातीसार विडग्रहः ।

हिक्राकासेऽङ्गदाहश्च ज्वरस्योपद्रवादश ॥

१ (श्वास) अधिक हांसी या गले में फफ का घुरघुराहट अथवा सांस फंसे से लिया जाय २ (मूर्च्छा) बेहोसी या अधिक सुस्ती ३ (अरुचि) खाना पीना अच्छा न मालूम हो अर्थात् किसी वस्तु का ज्ञापका यथार्थ बोध न हो ४ (छर्दि) वमन पानी के होना अथवा जी मचलाना या मुख से पंछा छूटना ५ (तृष्णा) अधिक प्यास अर्थात् पानी से शान्ति न हो ६ (अतीसार) दस्त पतले होना ७ (विडग्रह) या दस्त बिलकुल ही न होना । (हिक्रा) हुचकी का आना, रांसी और समस्त शरीरमें जलन मालूम होना यह दश उपद्रव ज्वर में होते हैं ॥

बैठा है । हम ने सब झाड़ने वालों को हटा दिया और लड़के को हांट के कहा कि लाओ हाथ तुम्हारी नाड़ी देखें उसने हाथ दे दिया, उस समय उस की नाड़ी की गति अति वेगवान थी जैसे तीव्र ज्वर वाले की होती है हम उसे प्रोमादेष आक पुटासिपम् पानी में घोला के पिला दिया और सबों को यहाँ से हटा दिया सिर्फ दो आदमी नियत कर दिया कि जब तक यह सो न जाय हाथ पैर धीरे २ दबाते रहो और यह उठ के भागने ॥ पाये, यह लड़का आध घंटे के बाद सो गया और ५ घंटे सांस की जय यह सो के उठा तो हम उसे आरोग्य पाया ॥

सन् ८८ में हम श्रीमान् राजा साहा के छोटी रांसी जी की चिकित्सा कर रहे थे, एक दिन की याद है कि राजा साहय के एक भयवाद जिन का नाम याद नहीं है पर्वत पर तीसिल चरने गये और यहाँ डरकर पागल हो गये राजा के सिपाह छुटे उन्हें ढूँढ़ के पकड़ लाये और राजा साहय के मुसाहय पं० भगवान दत्त के दालान में बैठाया चार पांच आदमी उन्हें थांभे थे तभी उस का यादियात यकना, सोनों पर थूकना, दांत काटना आदि घंद नहीं था, राजा साहय की आज्ञानुसार हम और राजधानी के हाकर दोनों ने जाके उन्हें देखा और दोनों जने राजा साहय से आके वयान किया कि हर गये हैं और उसी से इन के शिर पर गरमी चढ़ गई

ज्वर के साध्य लक्षण ।

बलवत्स्वल्पदोषेषु ज्वरः साध्योऽनुपद्रवः ।

जो मनुष्य बलवान् है, और जिन के वातादि दोष स्वल्प हैं अर्थात् दोष बहुत बड़े नहीं हैं (उपद्रव से दोष बड़े हुये जान पड़ते हैं) और जो ज्वर के दश उपद्रव ऊपर लिखे गये हैं उन में से स्वासादि कठिन उपद्रव न हो तो साध्य जानना । कुछ साध्य उसे कहते हैं जो शरीर के बाहरी भीतरी कुछ भी उपद्रव न हो सिर्फ ज्वर मात्र हो वह कुछ साध्य है । कुछ साध्य ज्वर स्वल्प ही चिकित्सा से आराम हो जाता है ॥

जिस बुखार में भीतर दाह और पियास जादे हो, कुछ आन तान ब-कता हो, हांफी, घुमरी, शरीर में दर्द, पेट में शूल, पसीना न आता हो, न दस्त हो और न हवा छूटै उसे कष्ट ज्वर जानना इसीको वैद्य लोग अन्तरवे-गी ज्वर कहते हैं ॥

हे, राजा साहय ने कहा, कि पंडित जी आप नहीं जानते इन को एक दो बार पाएले भी इसी तरह हो चुका है और बड़े २ क्लाहने वाले आये हैं तब आराम हुए हैं, यह एक दफे पाहाय पर लाल फेंदाते थे एक लाल इन के पिंजरे में फेंदा और चोड़ी देर के बाद मांस का छोटासा सा घन गया यह देख पिंजरा फेंक भगे और धीमार हो गये और बड़ी मुश्किलों से आराम हुये । राजा साहय से हम ने कहा कि हमारे पास एक पलीता है यदि आप कहें तो उसे सुंघा के भूत उतार दें, राजा साहय ने कहा अवश्य आराम करना चाहिये । हम ने घूना और नौसादर को मिला के एक पोटरी बनाया और रोगी के पास आके बैठ गये और दो आदमियों से कहा कि तुम लोग थांभे रहो और सब लोग छोड़ दो हम ने एक हाथ से रोगी की चोटी थांभ के पूछा कि सच कह तु कौन है छोड़ के चला जा नहीं तो अभी महाबज्र पलीता सुंघाताहूँ तू जल जायगा इतना कह के नाक में पोटरी लगा दी (किसकी नाक है जो अमोनिया की भाँर एक मिनट भी बरदास्त कर सकै) वस फिर क्या बहादुर बोल उठे कि

अथ ज्वरस्य असाध्य-लक्षण ॥

ज्वरः क्षीणस्य शूनस्य गम्भीरो दैर्घ्यरात्रिकः । असाध्यो
चलवान्यश्च केशसीमन्तकृज्ज्वरः ॥

अब असाध्य ज्वर का लक्षण लिखते हैं । जो मनुष्य बुखार में अति दुबला हो गया हो, सम्पूर्ण शरीर अथवा हाथ पैरों में सूजन आगयेहों, ज्वर पीछा न छोड़ता हो, शिर में चांद की जगह का बाल उड़ गये हों और बुखार के दुप्कर लक्षण मिलते हो तो असाध्य जानना ऊपर के श्लोक में जो गम्भीर शब्द आया है वह एक मकार का ज्वर होता है जिसे वैद्यक में गंभीर ज्वर कहते हैं, उसके लक्षण यह हैं जैसे अन्तर्दाह, पियास, अतिशय वातदोष से मल का विबन्ध तथा कास श्वास का मादुर्भाव हो उसे गम्भीर कहते हैं इसे भी असाध्यही समझना और भी ज्वरों के असाध्य लक्षण लिखते हैं ॥

असाध्य लक्षणानि ॥

हेतुभिर्बहुभिर्जातो वलिभिर्बहुलक्षणः । ज्वरः प्राणान्त
कृद्यश्च शीघ्रमिन्द्रियनाशनः ॥ यो हृष्टरो मारक्ताक्षो हृदि स-
ह्वातशूलवान् । वक्त्रेण चैवोच्छ्वसतितंज्वरो हंतिमानवम् ॥
हिक्काश्वासदृषायुक्तं मूढं विधातलोचनम् । सन्ततोच्छ्वासिनं

छोड़ दो मैं जाता हूँ हम ने भी जोर से ताली पीटा कहा चल दे, रोगी चै-
तन्य हो गया उसी समय वह दूध पिया और घर में जाके भोजन किया इस
क्रिया से लोग बड़े आश्चर्यित हुये किन्तु हम ने सब लोगों को वह पलीता
बता दिया और शिक्षा दिया कि मेल की बाधा बिलकुल भूठ है सिर्फ
हृदय में भय का समाजाना ही भूत मेल का बाधा है इसी तरह हमने सैकड़ों
मनुष्यों को आरोग्य किया है और सबों का हाल रजिस्टर में दर्ज है किन्तु
स्याना भाव से नहीं लिखा ॥

क्षीणानरक्षप्रयतिज्वरः ॥ आरम्भाद्विषमोयस्तुयस्यवादै-
र्घरात्रिकः । क्षीणस्यचातिरूक्षस्यगम्भीराहन्तिमानवं ॥

जो ज्वर बलवान हो और अनेक कारणों करके उत्पन्न भया हो और अपने मर्यादा के भीतर ही आंख कान आदि इन्द्रियों की शक्ति को नाश कर दिया हो वह ज्वर निस्सन्देह भाण नाशक होता है ॥

जिस ज्वर में रोगी के बारम्बार रोम खड़े होते हों, नेत्र सुख, छाती में दर्द, नासिका बन्द मुख से श्वास लेता हो तो जानना कि वह ज्वर रोगी को जल्द मारेगा ।

जो ज्वर रोगी, हुचकी, श्वास और पियास करके अतिशय दुखित हो, संज्ञा रहित अर्थात् जिस के होस हवास दुरुस्त न हों, जिस के नेत्र बैठ गये हों या कित्ती को चीन्हता न हो और मुख से श्वास लेता हो तथा अतिक्षीण हो गया हो उस को समझना कि अब यह बमलोक की यात्रा करेगा ।

जो ज्वर आरम्भ काल ही से विषम हो गया हो और असाध्य के चिन्ह दृष्टिगोचर होते हों ऐसा गम्भीर ज्वर दुर्बल मनुष्य को नहीं छूड़ता अर्थात् मारता ही है । छोरपाणि महाराज के मत से एक प्रकार का ज्वर मंथर नामक होता है उस का लक्षण श्लोक न लिख के सिर्फ भाषा में नीचे प्रकाश करते हैं ।

मन्थर ज्वरस्य लक्षणम् ।

प्रथम ज्वर उत्पन्न हो के तब सब निम्नलिखित लक्षण आ मिले अथवा अतीसारादि अन्य रोग में मिले अथवा असाध्य जानना जिस रोग में ज्वर, पुमरी, वेहोसी, अतीसार, कै, पियास निद्रा का न आना, मुख लाल, तालू और जीभ सूखे तथा मुख पाफ और फण्ट में सरसों सरी से फुंसियां हों इत्यादि लक्षण युक्त रोग को मंथर कहते हैं । इस का कारण विशेष कर सरुण ज्वर में पी खाने तथा पसीना रोकने से होता है । हमारे हारीत मुनि कुछ औरही कहते हैं । जिस मनुष्य के ज्वर टफटफा, दांत और ओठों में श्यामता,

नाक, जीभ, मुख और कंठ में लालामी, नेत्र धक्के के नेत्र के समान निकल आये हों ऐसे रोगी को जो सात दिनों में मोतियों की माला गले में न पहराये तो २१ दिन के भीतर उस के सम्पूर्ण अङ्ग में सरसों के समान छाले पड़ जायेंगे और मुस्किल से आराम होंगे ।

विषमज्वर की चिकित्सा ।

वह विषमज्वर जो दिवा रात्रि में सिर्फ एक बार आता हो, या दूसरे दिन, तीसरे दिन अथवा चौथिपा आदि हो इसमें बहुत पहरेज कराने की जरूरत नहीं है, इतना अवश्य ध्यान रहे कि यदि कोष्ठयद्द हो तो मुलायम रेचन दे देवे या ज्वर किसी औषध से न छूटे तो अन्त में स्नेहादि क्रिया के बाद देश काल के अनुसार धमन विरेचन करा देनेही से ज्वर निर्मूल हो जाता है ॥

अथ जाड़ा दे के जो विषमज्वर आता है जिसे शीत पूर्व ज्वर कहते हैं उसकी उत्तम २ परीक्षित औषधियां लिनसे असंख्य रोगी आराम हुये हैं नीचे लिखते हैं ॥

शीतपूर्व ज्वर पर काढ़ा ॥

भटफटैया (कटेरि या कंटकारि) घनियां, शोंठ, निम्ब वृक्ष परके गुरब (गिलोय) मोथा, पद्माप, लालचन्दन, चिरायता, पटोल, (परवर का पत्र) रुसा, पुंफकरमूल, फुटकी, इन्द्रजय, नीम की अंतर छाल, भारङ्गी, पित्तपापड़ा, इन सब दवाइयों को हम धजन से अंधकचरा कर दो तोला लेकर पावभर जल में रात को भिजा देय सबेरे जोस देवे जय एक छंटाक पानी रह जाय शीतल कर मल छान के पी जाय, इसी प्रकार सबेरे भिजावे सांस को जोस देके पिये यह पूर्ण मात्रा का ध्यान है, उमर कम हो अथवा रोगी कमजोर हो या रोगी के भिजाज में गरमी अधिक हो या गरमी अधिक पड़ती हो तो मात्रा कम कर देय । पथ्य—दूध भात अथवा मूंग की दाल पुराने चावल का भात, गेहूं की रोटी, लौकी की तरकारी आदि । इस प्रकार दोनों समय पिलाने से कैसाहू पुराना विषम ज्वर हो छुट जाता है ऐसा कितनी बार

आजमाया गया है। अगर रोगी के पेट में (दाह) जलन हो गिर में घुमरी आदि, वातपित्त के उपद्रव हो तो इस अर्क को पिलावे ।

विषमज्वर पर अर्क ।

यह अर्क शीतपूर्वज्वर और उष्णपूर्वज्वर दोनों को आराम करता है तथा अन्तर दाह, घुमरी, जीमूखलाना, हाथ पैर के जलन आदि को भी शांति करता है ।

घनियां, गाजवा के फूल, वर्गगाजवां (गाजवां के पत्ते) लालचन्दन, सकेदचन्दन, कासनी, खीरा ककड़ी का बीज, काहू का बीज, कुलफा का बीज, वर्गयनपसा (वर्ग पत्ते को कहते हैं) गुलनीलोकर, गुलाब के फूल, यह सब एक २ छंटाक, लौकी (घीया) ३ पाव पेटा (श्वेत कुसाण्ड) २ पाव, कपूर छ मांसा, घीया और पेटे को छेड़ और सब दवाइयों को ३० सेर पानी में रात को भिजा दे सबेरे घीया और पेटे को कुचड़े २ कर सब को डेगभमके में भर १५ सेर अर्क खींच ले । रात सबेरे और दोपहरको आध २ पाव अर्क उसमें जरासा मिश्री डाल के पिये । थोड़े ही दिनों के पीने से विषमज्वर छूट जाता है पण्य वहीं जो ऊपर लिख आये हैं । यदि पन्द्रह दिन के पीने से ज्वर न छुटे तो इस अर्क को पिला के दो बार दिन फिर ऊपर लिखे हुये काढ़े को पिलाये । ज्वर आते २ रोगी निबेल पड़ गया हो और ज्वर भी न छूटता हो तो ज्वर सूटने की दवा देता जाय और, जिस्से रोगी का बल न घटे उपाय करें । अगर गर्म मिजज वाला हो तो यह अर्क पिलावे ॥

अर्क गाजर ।

गाजर एड्डी और छिलका दूर किया हुआ १० सेर, फिस्सिस २ सेर दोनों को एक डेग में मय २५ सेर पानी के डाल डेग का मुह ढांपके पकाये जिस्से धुवां न निकलने पावे बाद बार घंटे के डेग को उतार, शीतल कर लें और नीचे लिखी हुई दवाइयों को कुचल के उसी में डाल और ५ सेर

गौ का दूध हाल १५ सेर अर्क खींच लेवै । दवा यह है । दालचीनी, गु-
लाब के फूल नागरमोथा, विजौरे का छिलका, चोवचीनी, यहि मन सफेद
यह सब चार २ तोला सफेद चन्दन दो तोला । इस अर्क के पीने से मन
प्रसन्न, जोहों में ताकत, धातुपुष्ट और मन चलवान होता है अगर मिजाज
सर्द अर्थात् अलगमी हो तो इस घृण को दोनों समय शहद के साथ चटावै ॥

अण्डलोचन ४ तोला, छोटीलायची २ तोला, सत गिलोय २ तोला,
यहमन सफेद १ तोला, छोटीपीपर शुद्ध ६ मासा, दक्षिणी तज ६ मासा,
अकरकरहा ३ मासा, रुमीमस्तगी ३ मासा सब को महीन घूर्ण कर डेढ़ २
मासे की पुड़िया बना ले और शहद के साथ चाटै ॥

विषमज्वरे ज्वारांकुशो रसः ।

ताम्रतोद्विगुणतालं मर्दयेत्सुपवारसैः । प्रपुटेभू-
धरेशीते वज्रीक्षीरेणमर्दयेत् ॥ प्रपुटेभूधरेपश्चात्पंचगुजा-
मितंमजेत् । आर्द्रकस्यरसेनैव सवज्वरनिकृंतनः ॥ एका-
हिकं द्वाहिकं च त्र्याहिकंचतुराहिकम् । विषमंचापि शी-
ताढ्यं ज्वरंहन्तिज्वरांकुशः ॥

शुद्ध ताम्रा से दूना शुद्ध हरताल लके करेले के रस में घोटके भूधरयंत्र
में आंच देवै (भूधरयंत्र की क्रिया रस प्रकर्ष में लिखने और दैद्य लोग प्रायः
जानते भी हैं) शीतल होने पर निकाल के हेतुह के दूधमें घोटके फिर उसी
प्रकार भूधरयंत्र की आंच देव बाद निकाल महीन घूर्ण कर शीशी में रस
देय । इस ज्वरांकुश की मात्रा एक रसी से पांच रसी तक है । दोनों समय
अदरक के रस के साथ खाने से एकाहिक, अंतरिया, तिजारी और चौथिया
ज्वर आराम होता है ॥

महाज्वरांकुशोरसः विषमज्वरे ।

शुद्धसूताविपंगंधः प्रत्येकंशाणसंमितः । धूर्तवीजं

कूर्इनाईन ।

यद्यपि हमने आरोग्यदर्पण के दूसरे खण्ड में अनेक द्विपान्तर्रीय चिकित्सकों के मत द्वारा कूर्इनाईन का मलीमांति खण्डन किया है और यथार्थ में कूर्इनाईन से बहुत हानि पहुंचती है । ज्वर को छूटा देता है यह परोक्षित है किन्तु उसी के साथही लोगों को, अन्धा लङ्गड़ा, लूला नपुंसक तक बना देता है, इसमें एक कारण और भी है कि डाक्टर लोग एतद्देशीय वैद्य विद्या के न जानने से यहां के मनुष्यों के प्रकृति से अपरचित रहते हैं । सर्व साधारण को ज्वर रोग में कूर्इनाईन और चढ़ाचढ़ चिरायते का अक पिलाना शुरू कर देते हैं । खुलार तो ज्वर छुट जाता है लेकिन कलेजे पर ऐसी गरमी जमजाती है कि धरसें नहीं हटती । लेकिन जिस प्रकार हमने कूर्इनाईन के द्वारा लोगों का असाध्य शीतपूर्य ज्वर छुटाया है पाठक गणों के उपकारार्थ प्रकाश करते हैं ।

ज्वर आने के दो घंटे पहले कूर्इनाईन को इसतरह देने से ज्वर छुट जाता है । कूर्इनाईन २ रत्ती, टाटारिक ऐसिड (इमलीका सत्त) १० रत्ती, मिश्री २ तोला । पहले मिश्री को पत्थल की कूड़ी में आधपाय पानी में सरबत बनाय उसी में कूर्इनाईन और इमली के सत्त को घोल कि पिला देय अगर इमली का सत्त न मिले तो एक या दो नीयू का रस डाल दे । अगर पारी टर जाय तो दो तीन घंटे पर फिर पिलावे । जिस ज्वर का कोई नियम न हो जून कजून आवे तो उस में पूर्वोक्त प्रकार से कूर्इनाईन को दिन में तीन बार पिलावे, दोही तीन दिन में ज्वर नष्ट हो जाता है । सिंघाय तेल कच्चे फलों के और सयुष्य है ।

घियम ज्वर, मंछ मन्त्र टोटका आदि से भी नष्ट हो जाता है ऐसा अनेक बार अनुभव किया गया है । पन्द्रह अयया यीसा यंत्र को मङ्गल रविवार के दिन अष्टगंध से पीपल पत्र पर लिख कर लाल सूत्र में लपेट पुरुष के दक्षिण बाहु और स्त्री के याम बाहु में बांधने से ज्वर नष्ट हो जाता है । किन्तु यन्त्र लिखने वाला आचारशील ब्रह्मचारी, या कुमारी कन्या या पतिव्रता धर्मवती स्त्री होनी चाहिये ।

ज्वराधिकारे मूलिका धारणम् ।

द्रव्यों में अनेक गुण हैं और उनका रक्त मांसादिकों के साथ ऐसा सूक्ष्माति सूक्ष्म सम्यन्व रहता है जिसका जानना बड़े २ विद्वान्दर्शियों को दुर्लभ है किन्तु सम्यन्व यथात् प्रत्यक्ष फल दर्शन होने से मान लिया जाता है कि अमुक औषधि अमुक रोग को नाश करती है और यहुत सी ऐसी भी दवा हैं जो अपने प्रभाव से कार्य सिद्ध कर देती हैं जैसे (ज्वरं हन्ति शिराग्रह्वा सहदेवी जटायवा) शिर में बांधी सहदेई की जड़ ज्वर को नष्ट करती है । यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है किन्तु अज्ञानी लोग ऐसे २ प्रभावों को देख गुहकों के वशीभूत और प्रेत बाधा मानने लगते हैं ।

एकाहिक ज्वरे मूलिका धारणम् ।

काकजंघाचलाश्यामा ब्रह्मदंडीकृतांजलिः । पृश्निप-
र्यप्यपामार्गस्तथाष्टद्वरजोऽष्टमम् ॥ एषामन्यतममूलं पु-
ष्पेणोद्धृत्ययत्नतः । रक्तसूत्रेणसंवेष्ट्य बहुमैकाहिकंजयेत् ॥
औलूकंदक्षिणं पक्षंसितसूत्रेणवेष्टयेत् । बन्धयेत् बामकर्णेतु-
हरत्यैकाहिकंज्वरम् ॥ कर्कटस्यविलोडुभूतमृदातुतिलकं-
कृतं । एकाहिकंज्वरंहन्ति नात्रकार्याविचारणा ॥

काकजंघा जिसको चकसेनी और मंघी भी कहते हैं, बरियारा, काली तुलसी, ब्रह्मदण्डी, कृतांजलि, पिठिवन, अपामार्ग जिसे चिचरा तथा लट-जीरा भी कहते हैं और मंगिरा इन आठो बीजों में से चाहे जिसे पुष्प नक्षत्र में विधिपूर्वक पवित्र होके उखारि लावै और उसकी जड़को लाल सूत्र में लपेट कर हाथ या गले में बांधने से एकाहिक ज्वर जिते अन्तरा कहते हैं छूट जाता है । पुग्धू चिड़िया के दाढ़ने तर्फ का पंख सफेद धागे में लपेट के बाये कान में बांधने से अन्तरा ज्वर नष्ट हो जाता है । कर्कट अर्थात् फेकड़ा के बिल की माटी का तिलक करने से भी एकाहिक ज्वर जाता रहता है ॥

तृतीयज्वरे मूलिका बन्धनं ॥

अपामार्गजटाकल्यालोहितैःसप्ततन्तुभिः । वद्धावाररेवे-
स्तूर्णज्वरं हन्ति तृतीयकं ॥ कर्णस्यमलजालेनवर्तित्कृत्वाप्रय-
त्नतः । ज्वालायेत्तिलतैलेनकज्जलंग्राहयेच्छनैः । अजयेन्नेत्र-
युगलंज्याहिकंज्वरशान्तये ॥

अपामार्ग (लट्जीरा) की जड़ को रविवार के दिन उखाड़ के उसे सात तार के लाल धागे से बांध बांध या गले में बांधने से तिजारी ज्वरका नाश होता है । कान का मल रुई में लपेट के घसी घनावे और कासीतिल के तेल से कज्जल पार के नेत्रों में लगावे तो तिजारी ज्वर का नाश हो ॥

चातुर्थिक ज्वरोपायः ॥

चातुर्थिकोगच्छतिरामठस्य घृतेनजीणेन युतस्यनेश्यात् ।
लीलावतीनां नवयौवनानां मुखावलोकदिवसाधुभावः ॥
अखण्डितशरत्काल कलानिधिसमानने । चातुर्थिकहरं
नश्यं मुनिद्रुमदलांघुना ॥

भावार्थः—(रामठ) हींग को पुराने घृत * में घोंट कर नाश लेने से चातुर्थिक ज्वर श्रयात् चौथिया बुखार कैसे नष्ट होता है जैसे (लीलावती) क्रीड़ा करनेवाली नवयौवना + स्त्रियों के मुख देखनेसे साधु पुरुषोंका साधु भाव (धर्मशीलता) नष्ट हो जाता है ॥

* जीर्णघृतो दशयपांद्दुर्हः—दश वर्ष के ऊपर होने से पुराना घृत कहा जाता है ।

+ नव (लक्ष्म) यौवनानाम—प्रसूतानां—प्रसूतागतयौवना—नवयौवना स्त्री सभी तक कहती है जब तक लड़का न हो, लड़का वाला होने से गत यौवना हो जाती हैं ॥

लोलिम्बराज वैद्य रत्नकला को समझा के कहते हैं कि हे शरतकाल के पूर्ण चन्द्रमा के समान मुखवाली (मुनिद्रुम) आगस्त्यरुक् के पत्तों का केवल रस सूघने से याने नास लेने से चौथिया ज्वर नष्ट हो जाता है ॥

अन्यत्र—“यस्यतिशिरसि मेघनादमूलं, व्रजतितरं विषमो विलसद्दृष्टे” हे विलास दृष्टे, मेघनाद मूल अर्थात् चौराई की जड़ को शिर में घाघने से विषम ज्वर शीघ्रही नाश होता है । सिर्फ मूलही की क्या बात है मंत्रादिकों के काटने तथा उतारा आदि करनेसे भी विषम ज्वर नष्ट हो जाता है और उसका कारण रक्त को रोग से सम्बन्ध छोड़ना है ॥

तिलजलांजलि ।

तन्वद्भिर्गङ्गात्तरतीर भूमौ ममारहाकोप्य सुतस्तपस्वी ।
जलांजलिं तस्य कृते ददातु सैकाहिकस्याद्यादितेनुजन्मा ॥

भाषार्थः—गङ्गा जी के तट की उत्तर भूमि पर कोई पुत्र हीन तपस्वी मरा या उस तपस्वी को यह मनुष्य जिसे अंतरा बुझार आता हो यदि तिल के सहित अथवा सिर्फ जल की अंशुलि दे अर्थात् उस तपस्वीके नाम तपण करे तो एकाहिक ज्वर जाता रहे । यही यचन दालम्ब में भी लिखा है • (गङ्गायामुत्तरेतीरे अपुत्रस्तापसे।मृतः । तस्मैतिलोदकंदद्यान् मुच्यते सन्ततज्वरात् ॥ तन्त्रान्तरेतु—वानरस्याकृतिं लिख्य पटिकायां पुनः शृणु । गन्ध पुष्पाक्षतैर्धूपै रचयेत्तानि पञ्चवरः) अन्य तन्त्रों में लिखा है कि सारी से वानर के आकार एक मूर्ति लिखकर चन्दन अक्षत पुष्पादिसे पूजन करे और इस मन्त्र को पढ़े ज्वर।गमन समय में तो ज्वर का बिनाश हो (मन्त्रः) ओं ह्रीं ह्रीं श्रीं सुग्रीवाय महाबलपराक्रमाय सूर्यपुत्राय अमित तेज से एकाहिक द्वाहिक त्राहिक चातुर्थिक महाबल-मृतज्वर, भयज्वर, शोकज्वर को घ-

• दालम्ब नामक एक बहुत प्राचीन स्तोत्र है उसके द्वारा सार्जन करने से विषमज्वरादि रोग छुट जाते हैं । हमारे पुराने पण्डित लोग तो उसका प्रभाव ऐसाही वर्णन करते हैं । कहां तक सत्य है नहीं कह सक्ते किन्तु इतना अवश्य कहेंगे कि मंत्र यन्त्रादि सर्वथा मिथ्या नहीं हैं ॥

ज्वर येतालज्वराणां दहदह पचपच अवतर अवतर कलितरय महावीर धा-
नर ज्वराणां यन्त्रयन्त्र ह्रीं ह्रीं हुं फट स्वाहा और भी लिखा है "समुद्रस्यो-
त्तरेकूले कुमुदोनामद्यानरः । तस्यस्मरणमात्रेणज्वरोयाति रसातलम् ॥

ज्वर नाशक माहेश्वर धूपः ।

हिंगुलदेवकाष्टं च श्रीवेष्टधृतमेव च । गंध्यास्थोनि
तथा ध्यामं निर्माल्यंकटुरोहिणी ॥ सर्पपनिम्बपत्राणि
पिच्छाहि कंचुकं तथा । मार्जारविष्ठागेशृंगं मदनस्य फ-
लानि च ॥ द्वेष्टहतीवचाचैव कार्पासास्थिः तुपास्तथा ।
छागगोमायुविट्चैव हस्तिवंतस्तथैव च ॥ एतत्सर्वं समा-
हृत्य छागंमूत्रेणभावयेत् । उदूखलेतुसंकटत्र स्थापयेन्मू-
न्यशुभे ॥ घ्राणमात्रेण धूपोयं दीयते यत्र वैश्वमनि । नत-
त्र सर्पास्तिष्ठन्ति न पिशाचानराक्षसाः ॥ एवमाहेश्वरो
धूपः सर्वज्वरघ्निनाशनः । एकाहिकं द्वाहिकं वा त्र्याहिकं च
चतुर्थकम् ॥ एवमादीन् ज्वरान् सर्वान् नाशयेन्नात्र संशयः ॥

हिंगुल, देवदारु (श्री वेष्ट) - जिस को धूप, बंगदेश में सरल वृक्ष
और कहीं २ राला धूप कहते हैं इसी से तारपीन तैयार होता है । ची गी
की हड्डी रोहित घास बेलपत्र, फुटकी, पीलीसर्से, नींबू के पत्र, मुरले का
पंख, सांप की केशुल, बिलार का बिष्ठा, गौ की सींग, मैनफल, छोटो भटकटैया
और बड़ी भटकटैया जिसे बनभांटा कहते हैं दोनों का पंचाङ्ग, घब, वेतुर
(कपास का बीज), धान की भूसी, बकरी और सियार का बिष्ठा, हाथी दांत
इन सब चीजों को एक में मिला के बकरी के सूत्र की भावना अर्थात् उसी में
सर्पों का तर कर के सुखाय लेये, बाद खरल में फूट सहान कर के किसी
अच्छे घरतन में रखदे और समय पर धूप देवे इस माहेश्वर धूप के प्रभाव से
घर में सर्प, पिशाच राक्षस रह नहीं सके और अन्तरा आदि सब ज्वरों का
नाश होता है । धूप देते समय इस मंत्र को पढ़ें—ओं नमो भगवते रुद्राय
उमापतये सम्पत्ताय नन्दिकेश्वराय स्वाहा । अपराजित आदि और भी अनेक
ज्वर नाशक धूप हैं जिन्हें पांचवें खण्ड में बयान करेंगे । इस धूपान से हमारे
नवशिक्षित गण जो प्राचीन पुरुषों के इतिहासों को कभी नहीं देखा सुना

है और न उनके हृदय में ऐसी शक्ति है कि जो स्वयं अनुभव कर सकें हों यदि कोई अंगरेज आ के लिफ्टर में यही बात कहे तो निस्सन्देह प्रह्ला की बात समझी जायगी ।

। ज्वरनाशक दीपः ॥

छण्णोरगोन्मत्तबीजगन्धगोशृङ्गतैलजः । मृतकपर्पटवर्त्याच
दीपः सर्वज्वरापहः ॥ छण्णसर्पवसां, धनूरबीजतैलं, वृषभ-
शृङ्ग तैलं एभिर्मृतक वस्त्रवर्त्यादीपः सर्वज्वरापहः ॥

काले साप की चर्बी, धनूर के बीज का तेल, गन्ध और वेल के सींग का तेल सब को एकत्रित कर मुरदे के ऊपर के कपड़े (कफकन) की धाती बनाय चक तैलों में दीपक जला कर गृह में रखने से सम्पूर्ण विषम ज्वरों का नाश होता है । यह क्रिया भीम विनोद ग्रंथ में लिखा है ।

जीर्ण ज्वर की चिकित्सा ॥

जीर्ण ज्वर में दोनों समय गुच्छ का काढ़ा पिलाने से बहुत फायदा देखा गया है अथवा शितोपलादि चूर्ण को सहस्र में चटाव के ऊपर से गुच्छ का काढ़ा पिलाने से और भी जल्द फायदा होता है । लाजादि तैल की मर्दन करने से भी लाभ देखा गया है ।

उपद्रव शमनोपायः ।

ज्वर रोग में जो उपद्रव बढ़े हों उन के शांति करने के उपाय अथ संश्लेष से प्रकाश करते हैं क्योंकि बढ़े हुए उपद्रव अत्यन्त क्लेशदायक होते हैं बिना उन्हें शांति किये रोगी को चैन नहीं मिलता; इस लिये जिस प्रकार से शमन हों उसी तरह की चिकित्सा करना किन्तु इतना अवश्यमेव ध्यान में रहे कि कोई क्रिया ज्वर का विरोधी न हो ।

कोष्ठवद्ध ।

पित्ताधिकारी ज्वर में तो कुछ दस्त होता ही है, किन्तु वाताधिकारी ज्वर में तो मल मूल जाता है, और बिना मल उतरे ज्वर नहीं थिमाता इस लिये यह दया देना जरूरी है ।

बड़ा दड़का बकूल, हरीसनाय, शोठ, और कालानोन सबों को बराबर छे कूट ऊपर छान कर लेय छ मांसा अथवा कुछ अधिक चूर्ण को रात में गरम

जल कि साध लिखा देने से सबसे गुलाब दस्त आ जाता है । अगर मित्राज में गरमी अधिक हो तो दो सोला गुलाब का गुलकण्ड और दो सोला सीरखिस्त दोनों को जल में पीस गुनगुना कर के पिलाय देय दस्त अवश्य होगा ।

पिपासा ।

अगर रोगी को पिपास अधिक हो तो इस पानी को पिलाये । धान का लावा ४ सोला, धरोह (धरगद के दूध में जो जटा सा लटकता है) २ सोला, कमलगट्टे को गरी १ सोला, सीनों चीजों की पीटरी पानी में डाल दे और उसी पानी को पिलाये, यदि रोगी गरम पानी पीता हो तो गरमही जल में पीटरी को डाल दे अथवा धारम्यार शीतलचिनी को मुख में डाल के कुचले और जल से उतार जाये । अथवा आयला, कमलगट्टे की गरी, जूट, धान का लावा, धरोह सबों को धराधर ले महीन पीस शहद में सान के गोली यांच लें, इस गोली को मुख में रखने से पिपास की आधिक्यता और मुख का सूखना नाश होता है । रोगी की शरीर में दाह की आधिक्यता हो तो पित्त ज्वराधिकार में जो दाह शान्तिकारक उपाय लिख आये हैं उन्हीं के द्वारा शान्ति करना ॥

मस्तक पीड़ा ।

मूलेठी, हरदी, नागरमेधा, अनारका फल या छाल, अम्रयेत, काला सुरमा, तिल्लीक, खस, तेजपात, कमलगट्टे की गरी, दालचिनी, नख, इन सब दवाइयों को महीन चूर्ण कर धिजीरा नींबू का रस, शहद और मधुसूक्त सीनों चीजों में महीन घोंट ज्वरात मनुष्य के शिर पर लेप करने से शिर का दर्द, धिहोसी, जो का मचलाना, हुचकी और देह का कांपना यह सब शान्ति होते हैं । और जो मनुष्य पिपास और अन्तर दाह करके अत्यन्त पीड़ित हो तो विदारीकन्द अनार, लोच, कैयका छाल नींबू का छिलका सबों को महीन पीस शिर पर लेप करने से शान्ति होता है । ज्वर चिकित्सा का शेष प्रकरण पञ्चम खण्ड में प्रकाश होगा अथ ज्वर के अन्तिम नियम को लिखते हैं ॥

ज्वरान्ते पथ्यं ।

परिपेकावगाहांश्च स्नेहान् संशोधनानिच । खाना
भ्यंगदिवास्वप्न शीतव्यायाम योपितः ॥ नमजेतज्वरो-

सृष्टेः यावन्नोचलवान् भवेत् । त्यक्तस्यापि ज्वरेणाशु
दुर्बलस्याहितैज्वरः ॥ प्रत्यापन्नोदहेद्देहं शुष्कवृक्षमिवा-
नलः । तस्मात्कायः परीहारो ज्वरमुक्तेन देहिना ॥

ज्वर छुट जाने के बाद मनुष्य को चाहिये कि जय तक शरीर धलवान
न हो जाय निम्नलिखित कर्मों से पहरें रखे, जैसे—जल से शरीर को सोंच-
ना, बहुत पानी में रहना या डुबी मार के नहाना, चूताति का पीना, शोधन
करना, स्नान करना, उबटन तेल लगाना, दिन को सोना, बहुत शीतल प-
दार्थों का खाना, कसरत अथवा बहुत दौड़ धूप करना स्त्री प्रसङ्ग आदि ।
कारण यह कि जिस का ज्वर छुट भी गया है कुपथ्य करने से पुनः वही ज्वर
रक्त मांसादि में घुस कर मनुष्य के शरीर को ऐसा दग्ध करता है जैसे सूखे
वृक्ष को अग्नि, इस लिये ज्वर छुट जाने पर भी जय तक ताकत न आवै
ज्वर नाशक उपाय करते रहना अगर ज्वर छुट जाने के बाद अरुचि अङ्ग की
शिथिलता, धिक्करणता और मलादिक दृष्टि हो तो शोधन उपाय करना,
क्योंकि शोधन न करने से अन्य रोग उत्पन्न हो जाने का डर है और ज्वर छुट
गया हो उसका कोई विकार भी दृष्टिगोचर नहीं होता किन्तु शरीर निर्बल
है तोभी उसको एकाएकी पौष्टिक द्रव्य (पाकादि) न सेवन कराना चाहिये
क्योंकि बिना धल आये अग्नि नहीं खुलती और बिना अग्नि के पौष्टिक द्रव्य
न पचैगा बल्कि जठराग्नि नष्ट हो के ज्वर का पुनरागमन होना सम्भव है ।

हतावशेषं पित्तं तुल्यकस्य जनयति ज्वरम् । पिवेदिक्षु
रसं तत्र शीतं वा शर्करादकम् ॥

पित्त ज्वर शान्ति होने के बाद यदि चमड़े में कुछ पित्त का अंश रह
गया हो तो उसे ऊप का रस अथवा चिनी का सरबत पिला के ठीक करना
क्योंकि यह पित्त फिर ज्वर का उत्पन्न कर सका है ॥

आध्यात्मिक शक्ति ।

आध्यात्मिकशक्ति जिसका कुछ २ यपान आरोग्यदर्पण के प्रथम और
द्वितीय खण्ड में कर चुके हैं । उसका पत्र के किसका चित्त चाहता रहा
होगा कि हृदय विद्युत् प्रकाशक सम्पूर्ण क्रियायें दृष्टिगोचर हों इसलिये हम
अपने प्रिय पाठकगणों के मङ्गलार्थ योगाभ्यास का सम्पूर्ण सिद्ध अङ्ग जिस प्रकार
वेणु महाराज चण्डकपालि से वर्णन किया है प्रकाश करते हैं और आशा
करते हैं कि लोग इसमें अभ्यास यशस्व के अपने जीवन को सुफल करेंगे ॥

आरोग्यदर्पण प्रथम भाग उर्दू में ।

छप कर तैयार हो गया । श्लोक आदि संस्कृत देवनागरी अक्षरों में छपा है । देवनागरी को न जानने वाले अनेक उर्दू नवीनों के अवरोध से आरोग्यदर्पण उर्दू में छपवाना आरम्भ किया गया है जिसकी कीमत भी सबों के फायदेमन्द समझ कर ॥॥ न रख कर इसका भी ॥॥ कर दिया है यत्कि मय हाक व्यय समेत ॥

कामशास्त्र का अपूर्व ग्रन्थ ।

जो आरोग्यदर्पण के सातवें खण्ड से छपना आरंभ होगा और दशवें खण्ड तक में इसकी पूर्ति होगी । आज हम वह कामशास्त्र की बात कह रहे हैं जिसे परे दूसरा ग्रंथही नहीं है । अनङ्ग रङ्ग पञ्चशायक आदि यह सब संग्रहीत और आधुनिक बहुत लघु ग्रंथ है । आज जितने कामशास्त्र के नाम ग्रंथ के नोटिस छपे देख पड़ते हैं सब उटपटांग इधर उधरके छुटफुटे निकाल छाप कामशास्त्र का भी नाम निशान मिटा रहे हैं पढ़नेवाले जानते हैं कि यह यही काम शास्त्र है । कामशास्त्र जनाय यह शास्त्र है जिस में तीनोंलोक की चतुर्वेदा और फारीगरी भरी है । कामशास्त्र के जानने वाले अलम्ब स्त्रियों को दासी और स्त्रियां पुरुष को दास बना सकती है । विषय गंभीर है विज्ञापन में सब विषय दिखलाना असम्भव है इसके भाव पढ़ने ही से मालूम होगा । कोई पूछे इस ग्रंथ का नाम क्या है सो पाठक गण स्वयंही पढ़ लेंगे तो अब तक प्रायः लुप्त था । अनुवाद अधिक हो गया है प्रत्येक भास या पद में तीन कर्म में छप कर निकलेगा । १२ किताब का दाम ॥॥ पेशगी भेजना होगा क्योंकि पूरे किताब का दाम १० होगा जिन्हें ग्राहक बनना हो अपना नाम पूरा पता लिख भेजें ॥

पं० जगन्नाथ शर्मा राज वैद्य

प्रायुर्वेदोक्त औपचाउय

प्रयाग

सूचीपत्र ।

विषय	पृष्ठाङ्क	विषय	पृष्ठाङ्क
मन्त्रव्य	१	सुष्क खांसी की दवा	१४
विक्षिप्ति	३	जुकाम पर काष्ठ	२६
जीर्णज्वर चिकित्सा	५	श्वासेपद्रव	"
पुंगने ज्वर में पथ्य	६	मूष्मां चिकित्सा	२८
स्वर्णमोक्षतीक्ष्णता	७	चिकित्सा	२९
अमन्तमागिनी	८	अकृषि	३०
घ्रासदि घृण	१०	वमन	३१
त्रिप्यहयादि घृण	११	हिनकी	"
क्षीरघृत स्त्रीहाधिकारे	"	शिरनेत्र	३२
जीर्णज्वरे दुग्धयोग	१२	ज्वर छूटजाने का लक्षण	"
पञ्चमूली क्षीरपाक	"	ज्वर छूटजाने पर परहेज	३३
चित्तादिहरे	१३	राजयक्ष्मा (शोथ) रोग	३४
यथंगानविष्य नी	१४	राजयक्ष्मा निदान	३६
जीर्णज्वरे दुग्धफेनम्	१५	राजयक्ष्मा संपाप्ति	३७
साक्षादि तैल	१६	यक्ष्मा का पुरंरूप	३८
घट्टक तैल	१८	त्रिरूपक्षय के लक्षण	३९
दुग्धजल जगित ज्वर चिकित्सा	१९	घट्टरूपक्षयके लक्षण	"
किरासादि घूर्ण	२०	शोकशोषि लक्षण	४०
ज्वर खांसी का उपाय	"	कराशोषि लक्षण	४१
तरखासी पर मोक्षी	२१	अप्यशोषि का लक्षण	४२
२२ कफार्द्रक मयसेह	२२	व्यायमशोषि का लक्षण	"
मातीफणादि घूर्ण	"	रक्तशयशोषि और रक्तन के लक्षण	"

विषय	पृष्ठोक्त	विषय	पृष्ठोक्त
शर्बत अंजुवार	"	अथ द्राक्षादिष्ट	११४
शर्बत शतपत्रिका पाक	"	भांग्योदिष्टं मातृकासाधिकारे	११५
यकृत	८५	सोरघृतं पित्तकासाधिकारे	११६
यकृत का निदान	"	व्योषाद्यंघृतं कफकासाधिकारे	११७
यकृत की चिकित्सा	"	पिप्पली घृतम्	११८
यक्ष्मा आदि रोगों पर मोती		पारद का कजली	"
का सेवन	८७	शुद्धाराश्वकम् कासाधिकारे	११९
मोती की त्पत्ति	"	छासी पर कफ का सूखना	१२०
मोती शोधन	८८	लघणक्षार	"
मोती मारण विधि	"	बीजा लटकने से खांसी	१२२
मोती भस्म का गुण	८९	अथ श्वासाधिकार	१२३
मूंगा की उत्पत्ति लक्षण	"	पूर्यकप और संप्राप्ति	१२४
मूंगा के भस्म का गुण	१००	महाश्वास का लक्षण	१२५
अथ कासरोगाधिकारः	१०१	ऊर्ध्व श्वास के लक्षण	१२६
कासरोग का आदि कारण	"	द्विजश्वास के लक्षण	"
घातादि खांसी का लक्षण	१०३	तमकश्वास के लक्षण	"
अथ साध्याऽसाध्य लक्षण	१०५	प्रतमकश्वास के लक्षण	१२८
खांसी रोग में पथ्य	१०६	श्वासकास	१२९
खांसी रोग में अपथ्य	१०७	श्वास रोग की चिकित्सा	१३१
खांसी रोग की चिकित्सा	"	श्वासाधिकारे घृतम्	१३२
इकीसी फाड़ा	१०८	विस्वादिष्ट	१३४
पित्तकास की चिकित्सा	११०	अन्यघृत	१३५
कफ जगित खांसी की चिकित्सा	१११	अथ भृङ्गराज तैलम्	"
नजला की खांसी की दवा	११२	कालेस्वरोरसः श्वासाधिकारे	१३७
मारिषादिघटी	११३	बालक श्वासरोग	१३८
बभ्रुलारिष्ट	"	अन्य लक्षण सुश्रुत से	१३९

आरोग्यदर्पण—पञ्चमखण्ड ॥

मन्तव्य ।

आयुर्वेद क्या वस्तु है, आयुर्वेदीय चिकित्सा हम लोगों के लिये अत्यन्त उपयोगी है, हाकूरी दवाइयां हमारे प्रकृति के अनुकूल नहीं हैं और न कभी होना सम्भव है इत्यादि बातोंकी आलोचना आरोग्यदर्पण के प्रथम तथा द्वितीय आदि खण्डों में भलीभांति कर चुके हैं इस पाँचवें खण्ड के आरोग्य दर्पण में सिर्फ इस कदर कहना जरूरी समझते हैं कि जब तक आयुर्वेदीय चिकित्सा का प्रचार भारत में न फैलाया जायगा, राजा महाराजा आयुर्वेदके उद्धारकी ओर दृष्टि नहींदेने भारत का कल्याण होना अति दुष्कर है और यह जो अंगरेजी दवा के प्रभाव से हमारे देशी राजा महाराजा सेठ साहूकार अभीर नहाजन घोड़ी ही अवस्था में यम लोक की यात्रा करते जाते हैं वन्द नहीं होगा ॥

यह तो हमारे भारत का एक छहका नी कह सकता है कि चिकित्सा शास्त्र के आचार्य अखनी कुमारादि अनेक महर्षि हुये हैं कि जिनकी रचित चिकित्साशास्त्रद्वारा भारतकी मन्तान हजारों पुस्तहापुस्तके आरोग्य और दीर्घायु होतो आई है और हो सकती है, कहते हुये रोमांच हो तेह वेही पुस्तकें और उन्हीं दवाइयोंका प्रभाव कुछपहिले इस भारतवर्षमें फैला प्रदीप्तमान या छिपा नहीं है आज वही चिकित्सा शास्त्र किम दशा को और दुर्गति की प्राप्त है सम्यो में यह भी छिपा नहीं है ॥

वैद्यक की ऐसी दुर्गति क्यों है ? इस ओर राजाओं की दृष्टि न पहुँचे, अंगरेजी राज और अंगरेजी शिक्षा प्रचार होने पर भी जब तक वैद्य और वैद्यक पर राजाओं की प्रीति थी, हरएक राजधानी में दो चार वैद्य और एक दो छोटा मोटा चिकित्सालय या कुछ २ सम्राण या,

जब से राजा महाराजाओं ने वैद्यों को तिलांजुली ही दे दिया, देशी दया खाने से कसम खा गये हायटरों की मान मज्जादा बढ़ चली, देशों समय चाप सोहावाटर एकतावन सामपीन की रंगीली रंग में रंगीन हो गये, दुधपिये कच्चे तक कुर्दगार्दन चिनकोना की घूटी पीने लगे जो कुछ रहा सहा तब से और भी रमातल को घम गया । रहे हनारे प्रभु घर अंगरेज महाराज यह क्यों ध्यान देने लगे, येड़े दिन हुये यह आन्दोलन हुआ या कि देशी वैद्य एक नियम के द्वारा देशी लोगों की चिकित्सा करने से रोक दिये जायें अर्थात् जब तक यह सर्टिफिकेट नहीं प्राप्त करलें तब तक चिकित्सा न करने पायें, यद्यपि उसमें भी अनेक सन्देह उत्पन्न हुये थे कि कौन परीक्षा लेगा, किस प्रकार परीक्षा ली जायगी, जो लोग उत्तीर्ण नहीं होंगे उनको पुनः पढ़ाने के लिये कोई कालिज खुलैगा या जन्म के लिये निकम्मे कर दिये जायंगे तथापि यह आशाबंध चलीगी कि इसका कुछ परिशोधन अवश्य होगा परन्तु "स्वप्रलब्धं यथाधनं" के समान सब आन्दोलन गिट गया यदि कुछ काल पर्यन्त इस वैद्य विद्या पर और भी ध्यान न दिया जायगा तो आयुर्वेद का भारत से समूल नष्ट हो जाना कोई सन्देह जनक बात नहीं है, सो धार्मिक देश हितैषी सत्पुरुषों को चाहिये कि इस ओर भी कुछ ध्यान दें और उसका सहज उपाय यह है कि आयुर्वेद के जानने वाले मत् वैद्यों को सहायता देकर उनकी औषधियों के सेवन से आरोग्यता लाभ कर उनको उत्साहित करें और अपने नव शिक्षित मन्तानों को जो दृग ओर से उलट रहे हैं ध्यान दिलाना चाहिये ॥

विज्ञप्ति ।

पाठकगण को स्मरण होगा कि हमने चतुर्थखण्डके प्रारम्भहीमें उद्यर रोग का प्राग्रूप निदान और चिकित्सा देश कालानुसार अनेक वर्षों में जीना परीक्षा से निहृ देखा गया सर्वसाधारण गणों के उपकारार्थ प्रकाश किया और उसका अङ्ग जो कुछ बाकी रह गया है इस पञ्चमखण्ड में उसे तथा अन्य २ विषय भी क्रमशः प्रत्येक मास के आदि में प्रिय पाठकगणों की सेवा में अर्पण करते रहेंगे । हम निस्सन्देह कह सकते हैं यदि सम्प्रयोग उसे पढ़ पूर्वापर विचार करके द्रव्योपाज्जनार्थ अथवा धर्मार्थ लोगों की चिकित्सा करेंगे तो अवश्य देश का मंगल एवं वैद्यक का पुनरुज्जीवन होना कोई कठिन बात नहीं है । किसी को कुछ दया मत देना या चूर्ण घटी घनी बनाई दे देना लोग साधारण बात समझते होंगे लेकिन यह ऐसे जिम्मेदारी का काम है जो लौकिक पारलौकिक दोनों से सम्बन्ध रखता है या तो दया देने वाले के हाथ में रोगी अपना प्राण अर्पण करता है तो कहिये बिना जाने बूझे अटकपटखू दया देने से रोगी की शारीरक दशा कुछ भी बिगड़ गई तो चिकित्सक इस बातके जिम्मेदार हुआ कि नहीं जो मूर्ख वैद्यों के लिये संसार में राजकीय दण्ड, लोक मिन्दा आदि और पारलौकिक विगति । सो है भिन्नगणों चिकित्साकर्म बहुनकठिन और जिम्मेदारीका काम है । इसी समयसे मूर्ख वैद्योंकेलिये हमारे सुश्रुत महाराज ने अधकरना लिखा है ॥

यस्तुकर्मसुनिष्ठातो धाढ्याच्छास्त्रवद्भिष्कतः । ससत्सु
पूजांनाप्नोति वधमर्हतिराजतः ॥

जो वैद्य कर्म में तो निपुण है अर्थात् काढ़ा चूर्ण अथलेह आदि उ-
मदा बनालेता है या रोगीको ठीकसमयपर दवा खिलापिला सक्ता है किन्तु
शास्त्र को नहीं जानता केवल ढिठाई से काम करता है यह विद्वानों में

मान प्रतिष्ठा नहीं पावता किन्तु राजा करके बंध करवे योग्य है अर्थात् ऐसे वैद्य को राजा सरवाय डाले ॥

सात्यर्थ यह है कि बहुतसे लोग ऐसे किस्म के भी हैं जो वैद्यविद्या को नहीं जानते इधर उधर किसी से दो चार प्रकार की दवा मीस कर दवाकरने लगते हैं जहां बिचारे रोगी से कहा कि तुम्हें इन तीनदिनमें चक्का कर देंगे "गरजमन्दा बाबल होता है" झूठ ब्रिखान कर लेते हैं यह नहीं सोचते कि मूर्ख वैद्य के हाथ का औषध नहीं खाना चाहिये भक्त में धन प्राण दोनों से हाथ धो बैठते हैं । इसी लिये मूर्ख वैद्यों के लिये बंध की आज्ञा राजा को ऋषियों ने दी है ॥

भेषजंकेवलं कर्तुं योजानाति न चामयं । वैद्यकर्मसचेत्कु-
र्याद्वधमर्हति राजतः ॥

जो वैद्य बिल्कुल दवा देना जानता है किन्तु यह नहीं जान सक्ता कि इस रोगी के भीतर कौन सी बيمारी है और वह किस धातु के साथ अपना पूरा सम्यन्त्र किये है, देश कालानुसार कौन दवा से आरोग्य हो सक्ता है ऐसा न जानने वाला वैद्य यदि चिकित्सा करे तो उसे राजा अवश्य फांसी देदेवे । सो इस विषय में गवर्नमेंट का ध्यान न पड़ने से आज कल जिसे देखिये चिकित्सक का काम करने लगे इसे हमारे मनुष्य बिना भीत के मर जाते हैं ॥

यद्यपि बिना शास्त्र के जाने चिकित्सा करना महा दुष्कर पाप प्राप्त होता लिखा है किन्तु लोग लोभमय पापको कुछभीनहीं भयकते और ब्रह्महत्यादि अनेक पाप किया करते हैं लेकिन जब राजा की ओर से दंड मिलता है तब कुछ मानते हैं क्योंकि घी में सुअर गी आदि की चर्दियाँ मिलाने वाले हमारे हिन्दू भाई माइयारी ही लोग हैं, जुर्माना पर जुर्माना देने जाते हैं परन्तु चर्दियाँ मिलाने से बाज़ नहीं आते मुख्य कारण

यह है कि कभूर के नाफिक दंड नहीं मिलता, हमारे हिन्दू शास्त्र में लिखा है कि जो कोई किसीका नियम धर्म बिगाड़े राजा उसके शरीर में छेद कराके सब रुधिर निकलवाय लेय, वैसाही दंड इन अधर्मियों को दिया जाय तो स्वप्न में भी यह काम न करै । प्राचीन काल में यहां (आर्य्यवर्त्त में) पाप बहुत कम था ऐसा पुराणों में लिखा है उसका समय यही मालूम होता है कि पाप करने वालों को एक तो यथार्थ दंड मिलता था दूसरे विद्या वृद्धि के प्रभाव से लोग पाप करने से डरते थे जैसा कि धर्मशास्त्र में लिखा है ॥

प्रायश्चित्तं चिकित्सां च ज्योतिषं धर्मनिर्णयम् । विनाशा-
स्त्रेण याव्रूयात्तमाहुर्ब्रह्मवातम् ॥

प्रायश्चित्त अर्थात् पापी पुरुषकेलिये चान्द्रायण आदि प्रायश्चित्त बतलाना (चिकित्सा) रोगी को आराम करने को दवा खिलाना (ज्योतिष) ग्रहादिकों का फल तथा चौरादि प्रणय बतलाना (धर्मनिर्णय) ब्रतादिकों का बतलाना एवं दाय भागादि का विभाग कराना इनको जो विना शास्त्र के जाने कहता है उसको बड़े २ मुनीश्वरों ने ब्रह्म घातक कहा है ॥

अथ जीर्णज्वर चिकित्सा ।

जीर्ण ज्वर का आदि कारण, निदान और कुछ चिकित्सा यत्तुर्थ खंड में लिख चुके हैं इन स्थल में पूर्ण रूप से चिकित्सा लिखते हैं । पाठक गण को याद होगा कि जो ज्वर २१ दिन व्यतीत होने पर शरीर में सूक्ष्म रूप हो कर बना रहै और रापतिह्वी मन्दाग्नि आदि उपद्रव को उत्पन्न करै उसे जीर्णज्वर अर्थात् पुराना ज्वर कहते हैं इस बुखार वाले को उपवास, यमन, जुलाब और गरम दवा का उपचार कदापि न करै क्योंकि पुराने ज्वर में श्लेष्म का रक्त गांवादि सब क्षीण हो जाते हैं और लंपन आदि कराने से और भी क्षीण हो रोगी के मर जाने का

हर रहता है । यदि ऐसाही बातादि कोई उपद्रव बढ़ा देसे तो उसके दमन के लिये सिर्फ एकदे। लंपन चाहे भलेही करां दे । इसमें यत्न है ।

जीर्णज्वरीनरःकुट्या नोपवासंकटाचन । ज्वरक्षीणस्यन-
द्वितं वसनंनविरेचनं ॥ कामंतुपायसंतस्य निरुहैर्वाहरेन्म-
लान् ।

पुराने बुखार वाले को उपवास, वसन और विरेचन नहीं कराना बल्कि उसके इच्छा पूर्वक गौ का दूध पिलाना और दस्त न होता हो तो निरुह वस्ति पाने पिचकारी के जरिये से सञ्चिन मल को निकाल देना चाहिये ॥

पुराणज्वरे पथ्यम् ॥

मूंग अथवा अरहर की दाल, पुराने चावल का भात, गेहूं या जव्वे की रोटी, गाय बकरी का दूध घृत भातदिल और हलकी तरकारी, धनिया, सफेद जीरा, कालीनिर्ब, महीलायची आदि मसाला, यदि खांसी न हो तो आलूबुखारा, जरेबम या आंवला कैये की चटनी जीरा निर्ब पुदीना सेवधानेन मिलाके देव और खांसी आती है। तो खटाई कोई भी नहीं देनी चाहिये । शीतल दवाइयों का उपचार, शरीर में उपटन आदि तथा औषधियोंका बनायाहुआतेलको शरीरमें लगाके स्नान करना, सफेद चन्दन, कपूर, केशर गुलाबजल में घिस कर अंग में छेप कराना, पुष्पों का माला पहिरना, गंगाजल या पहाड़ी झरनों का जल या आम्रद जल अथवा परिश्रुत जल (फिल्टरवाटर) का पीना शाम सवेरे शुद्ध वायु का सेवन, चन्द्र की चांदनी प्रियाका आलिङ्गन सब पुरानेज्वर वालों को हित है ॥

जीर्णज्वरपर स्वर्णमालिनीवसन्त ॥

स्वर्णमुक्तादरदमरिचं भागवदध्यागृहीतं स्वर्णप्यष्टौप्रथम
मंखिलं मर्दयेन्मृत्तणेन । यावत्स्नेहोन्नजतिविलयं मर्दनदी-
यतेसौ गुञ्जाह्वमधुमगधया मालिनीप्राग्वसन्तः ॥

शुद्ध सेने का रसकं (तयक) १ नासा, अनवेधी छोटों मोती दे। नासा,
मकुन्दा यादी शुद्ध सिगरख तीन नासा, काली मिर्च खिलका रहित
चार नासा, शुद्ध खपरिया, इसको रसक * और सङ्गमिश्री भी कहते हैं
आठ नासा, सबों को कुचल सूख नहीन पीस एक तोला मक्खन और
सय दवा को खरल में हाल एक प्रहर तक घांटे बाद उसके कागदी
नीबू के रस हाल कर घोटै अब तक मक्खन की चिकनई दवा से बिल-
कुल न निकल जाय, बाद उसके तीन २ नासे की टिकिया बनाय के
सुखाय लेय । इनका नात्रा एक रत्ती से ४ रत्ती पर्यन्त हैं । इस स्वर्ण
नासली वसन्त को देनें समय एक नासा गुर्च का सत्त २ छोटी ला-
पची और एक रत्ती छोटी पीपर मिलाय के सहत के संग घाटने से
जीर्ण ज्वर का नाश होता है किन्तु खाने को कुछ दूध और रात में
गलाई मिश्री मिला के अवश्य देवे ॥

* रस दो प्रकार का होता है १ दूर्ध्व यह मोटा दलदार, दूसरा का-
रवेल्लक नामक रसक पतला होता है । जो खपरिया रंग में मोली पत्रवान
है सो उत्तम है । खपरिया शुद्ध करने की वैद्यक में अनेक विधि लिखी है,
जिसे रस प्रकरण में लिखेंगे । खपरिया क्या वस्तु है इसको उत्पत्ति स्थान
कहां है कैसे होती है अब तक किसी ग्रंथ में दृष्टि गीचर नहीं हुआ । लोग
कहते हैं टकसाल घर में जिस्में सेना चांदी गलाया जाता है उसी घरिया
को खपरिया कहते हैं । नागार्जुन आचार्य कहते हैं कि काला पीला लाल
खपरिया किसी २ पृथ्वी में दीख पड़ता है ॥

वसन्तमालिनी ।

रसकयुगलभागं वल्लिजंभागमेकं द्वितयमपिसुखत्वे मर्द-
येन्मृत्तणेन । भवतिष्ठतविमुक्ती निवुनीरेण यावज्ज्वरहर म-
धुकुल्यामालिनी प्रवसन्ता ॥ जीर्णज्वरेधातु गतेऽतिसारे
रक्ताश्विते रक्तजवेष्ट रोगम् । घोरव्यथेपित्तकृतेच दाहिवल-
प्रदेा दुग्धयुतंचपथ्य ॥ प्रदरं नाशयत्यासौ तथादुर्नाम सा-
निता । विषमंनेचरोगं व गजेन्द्रमिवकेशरौ ॥

सोधी खपरिया १० तोला, काली मिर्च ५ तोला दोनों को महीन पीस ५ तोला मक्खन डाल के एक ग्रहण चोटें बाद नींबू के अर्क में चोटें जब तक मक्खन की चिकनई दूर न हो, अगर एक दो दिन के घोटने से चिकनई अच्छी तरह न निकलै तो टिकरी बना के सुझाय लेप और फिर नींबू के रस में चोटें इसी प्रकार तीन चार गरतवे घोटने से मिलकुल चिकनई निकल जाती है । तीन २ गांसे की टिकिया बना के सुझा लेप यह वसंत मालिनी काले रंग का होगा ॥

दूसरी रीति—अगर खपरिया अच्छा न मिलै तो उसकी जगह शुद्ध जस्ते का भस्म लेवे, किन्तु यह भस्म किसी जीपघ के द्वारा न हुआ हो पूर्वोक्त प्रकार उसे भी घोट कर तैय्यार कर लेय यह वसन्त मालिनी मफेद रंग की होगी, इसकी तामीर शीतल है, आत्मा एक रत्ती से चार रत्ती पर्यन्त इसको गुर्घ का सत्त छोटी लायधी और महत के सङ्ग घाटने से गरभी से उत्पन्न जीर्णज्वर, किनाहू पुराना हो आराम होता है । कुरिया के छाल के काढ़ा अथवा जवलेह के माथ घाटने से रक्ता-
तिमार, रक्त पित्त से अथवा पीनस रोग से नाक के भीतर छेाहू की प-

पही जमती है तो यह असंततालिनी सहत के साथ या आघटे के मुख के साथ आने से निहायत फायदा होता है । इसके सहत के साथ चाट कर ऊपर से गी के कचरे दूध में मिश्री मिला के पीने से रक्त विकार से या पित्त से अथवा धातुस्रय से उत्पन्न अन्तःकरण का दाह शांत होता है । दो रक्ती असंततालिनी और एक मासा रसवत दोनों के सहत में मिला के खाने से खूनी दायासीर से लोहू का आगा, गुदा की जलन आदि उपद्रव दूर होता है । इसके चिकने पाथर पर पानी से महीन घोंट आंखों में अजुन देने से धुन्ध, आगा, नाखूना, आंखों से पानी का बहना बन्द होता है और नेत्र की ज्योति बढ़ती है ॥

जीर्ण उवर की गरमी से रोगी की शरीर रुखी हो जाती है उसका कारण वायु का कोप है ऐसी अवस्था में जब तक वायु शमन नहीं किया जाता बिनारी नहीं छुटती इसलिये वायुशांति होनेकेवास्ते घृत दुग्ध पान करावै क्योंकि जिसे जलते हुये घर में जल डालने से अग्नि की शांति होती है वैसेही रुखे शरीर में घृत दुग्ध के डालने से वायु की शांति होती है इसमें यथन भी हैं—“लघ्वेन कफंहन्ति पित्तंहन्ति सघर्करा । घृतेन घातजानरोगान् सर्वरोगानमुदाश्रिताः” नमक से कफ का नाश, नीठी चीजों से पित्त का नाश, वायु से उत्पन्न जितने रोग हैं घृत पान से शांति होते हैं और प्राचीन गुह मिश्रित औषधियों के द्वारा प्रायः सर्व रोगों का नाश होता है । यह सिद्ध हुआ कि पुराने मुखार (जीर्ण उवर) में घृत पान कराना श्रेष्ठ है किन्तु किस विधि से पिलाना हो कहते हैं ।

अगर बिमार बहुत दुर्बल बल हीन हो गया हो, खाना न पचता हो या दस्त पेटले आते हों तो आधा तोला घृत से प्रारम्भ करावै, मो घृत आधा तोला, सहत ३ मासा, मिश्री ३ मासा तीनों के एक में मिला के पहले ४ । ५ दाना गोल निच मुख में कुचल कर ऊपर से घृत पीजावै और उस समय पानी न पीवै । अथवा आधा तोला नखन

बराबर की मिश्री मिला के रोज सवेरे खिलाये और जस २ पचता जाय मात्रा बढ़ाता जाये । अगर रोगी का मल मूत्र गया हो तो आधपाय गरम पानीमें आधा तोला घृत और ३ मासा सेंधानोन डालके खिलाये॥

वासादि घृत ॥

वासांगुडूचीचिफलां त्रायसाणांदुरालभां । गङ्गातीनक-
पायेण पयसादिगुडेन च ॥ पिप्यलेमुस्यमृद्धीका चन्दनीत्यन-
नागरैः । कल्कोक्ततश्च विपचेत् घृतं जीर्णज्वरापह ॥

जिस जीर्णज्वर वाले को खांसी सहित ज्वर बना रहता हो और शरीर सूखी जाती हो तो वासादि घृत खिलाये । बनाने की विधि-
ऊसा की पत्ती, गुरिच, त्रिफला, विचारा और जवामा इन पाँचों चीजों को एक २ छँटाक ले जधकधरा कर एक मुत्तिका पात्र में चार सेर पानी में रात को भिजा देय सवेरे पकाये जब चौपाई पानी रह जाय शीतल कर मल के खान लेय । गी अथवा बकरी का दूध २ सेर । छोटी पीपर, नागरमेपा, मुगङ्गाबीजरहित, लालचन्दन, कमलगट्टे की गरी बीघ में हरी पत्ती रहती है उसे निकाल डाले और बैतराशोंठ सोंधों को एक २ तोला ले शिथ पर पानी डाल के सूख महीन पीस लुगदी बनाय लेय, गी अथवा बकरी का घृत १ गेर रंगे की कलई की हुई कढ़ाई को चूल्हे पर बढ़ाय घृत लुगदी दूध और काढ़ा को छोड़ घीभी भाँच में पकाये जब दूध काढ़ा यगैरइ सब गल जाय घृत गात्र रह जाय चूल्हे पर से उतार शीतल कर खान के अमृतघान में रख दे इसका मात्रा छ मासा से दो तोला तक है । सवेरे रोगी को खिलाये ऊपर से पानी पीने को न देय गलेसे थिकनाई दूर करनेके लिये सेंधानोन जरा सा खिलाये या एक दो पान का बीड़ा खाये १५-२० मिनट के बाद पानी पीने में हर्ज नहीं है अगर रोगी को दोनों समय पूर्ण मात्रा घृत निविंघ्न पप जाय तो

और अधिक घृत भी पी सकता है यह बासादि घृत जीर्णज्वर को नि-
स्तन्देह नाश करता है । अगर घृत पान से खांसी कुछ बढ़ जाय तो
घृत पिलाना बन्द नहीं करना चाहिये खांसी शमन होने का भी उपाय
करता जाय घृत पचन होने लगने पर खांसी स्वयं शान्ति हो जायगी ॥

पिप्पल्यादिघृत ॥

यह घृत भी जीर्णज्वर को नाश करता है ऐसा कईबार अनुभव किया
गया है । यदि उपरोक्त घृत पान करने से रोग में कुछ शमन न देखपड़े
तो उसके बाद पिप्पल्यादि घृत अवश्य पिलावे रामभासरे पर बैठा न
रहे । छोटी पीपर, लाल चन्दन, मागरनीया, सुगन्धबाला, कुटकी, इन्द्र
जघ्न, आंवला, सरिवन, अलीश, मुनक्का, गटकटैया का पञ्चाङ्ग इन सबोंको
तीन २ तोला छे सबोंको बधकचरा कर पूर्वोक्त प्रकार पांच सेर जल में
भिजावे दूसरे दिन काढ़ा बनाय गी या बकरीका घृत एक सेर, दूध ५२॥
सबों को कढ़ाई में चढ़ाय मन्दाग्नि में पचा लेवे इस घृत का भी नाशा
वही है जो बासादि घृत का है । उपरोक्त दोनों घृतों की रोगी रोटी
दाल के साथ भी खा सकता है यदि अच्छा लगे तो ॥

क्षीरघृत ग्रीहाधिकारे ॥

अगर जीर्णज्वर को खांसी उबरके अलावा ग्रीहा भी हो जिसे क-
खुई, तिखी और बरघट भी कहते हैं तो इस घृत को अवश्य पिलावे ॥

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचिन्नकनागरैः । ससैन्धवैद्यपलिकै
घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥ क्षीरश्वतुर्गुणंदत्वात् तत्सिंहलोहनाशनम् ।
विषमज्वरमन्दाग्निहरं रुचिकरं परम् ॥

छोटी पीपर, पिपरामूल, चाय, चीता, चैतरा खोंट और सैन्धानोन

इन पांशों औषधों को एक २ छँटाकले पूर्णोक्त प्रकार काय बनाय एक
सेर गौ के घृत में चार सेर गौ या बकरी के दूध के सहित मन्दाग्नि में
पचाय घृत सिद्ध करलेय इसका भी मात्रा छ मासा से दो तोला तक है।
यह घृत मीठा रोग, जीर्णज्वर विषमज्वर और मन्दाग्नि को नाश कर
रुचि को बढ़ाता है ॥

जीर्णज्वरे दुग्धयोगः ॥

क्षीणेकफज्वरेजीर्णचक्षुपदे। पोपिपासते। दाहार्तेतुपये। या-
ज्यतेनैवतुविप्रसभवेत् ॥

बीधे खण्ड के ज्वर चिकित्सा में यद्यपि ज्वर में दूध खाने की विधि
निषेध लिख पायी है प्रसंगवश इस स्थल में भी दुग्ध योग पुनः लिखते हैं ॥

जिसे प्रमेह या प्रदर रोग होके ज्वर रोग हुआ हो और वह ज्वर
पुराना हो गया हो, अथवा जिस पुराने ज्वर में कफ सूख गया हो अथवा
अल्प होय होने के कारण पियास और दाह अधिक बढ़ा होतो उस रोगीको
अवश्य दूध पिलावै चाहे भारीय दूध पिलावै या निम्नलिखित चौर पाक
बनाके पिलावै फायदा निश्चन्देष्ट करेगा ॥

पञ्चमूली क्षीरपाक ॥

सर्वज्वराणांजीर्णोनीचौरमौपज्यमुत्तमं। श्वासात्कासाच्छि-
रःशूलात्पाश्वशूलात्सपीनसात् ॥ मुच्यतेज्वरितःपीत्वापञ्चमू-
लीशृतं पयः ।

जो जीर्णज्वरवाला रोगी अत्यन्त दुर्बल हो गया हो कि जिसे अत्यन्त दाह
रहने पर भी बलवत् बढ़ने अथवा पसुरी में दर्द होने का डर हो तो पञ्चमू-

छो चोर पिलावै । पंचमूलौ अर्थात् पांच वृक्ष की जड़ वच यज्ञ है सालपर्णी (सरिवन) पृष्ठपर्णी (पिथिवन) दीनां कटरौ (छोटी भटकटैया, बड़ी भटकटैया) और बड़ा गोष्ठुक्त इन पांचों वृक्षों की जड़ पांच तोला ले अध-
कचरा कर एक मृत्तिका पात्र में आधसेर दूध और दो सेर पानी डाल के धीमी आंच में पकावै जब पानी जलजाय दूध अकेला रह जाय अग्नि पर से उतार घोटल कर छान लेय और उसी दूध को थोड़ा २ कर दिन भर रोगी को पिलावै, अगर फीका दूध पीने में रोगी असुवि प्रगट करै तो थोड़ीसी मीथी दूध में मिलादिय । किन्तु प्रथम उपरोक्त विधि से सिर्फ आधपाव दूध तैयार करके पिलावै फिर जस २ पचता जाय क्रमशः बढ़ाताजावै । इस दूधके पिलाने से स्वास, खांसी, गिरदद, पसुरी का दर्द, सुकाम और पुराने ज्वर को प्रायदा होता है ॥



ज्ञितादिक्षरि ॥

सिताज्यविप्रखर्जूरौनृद्धीकाभिःशृतंपयः । पृथ्वीचक्रिल्व-
वर्षाभूपयश्चोदकमेवच ॥ क्षीरावशिष्टतत्पीततद्विसर्वज्वरापहं ।

घोठ, छहारा और मुनक्का बीज रहित तीनों चीजों को पूर्वोक्त प्रकार तौलमें ले लरमें दूधको पानोके सहित तैय्यारकर थोड़ोमियो और सघत डाल के पिलावै, इस के पीने से ज्वर का नाश, कोष्ठ परिष्कार और मेदे में ताकत आती है। अगर मल पतला अथवा आम का कुछ उपद्रव हो तो यह दूध पिलावै। बेल की गरी २ तोला, घोठ ६ मास दिनों को एक पाव गौ के दूध में एक सेर पानी डाल के पकावै जब दूध अकेला रहनावेतो थोड़ा २ कर के कई बार रोगी को पिलावै ॥

वर्धमानपिप्पली ॥

त्रिवृध्यापञ्चवृध्यावासप्तवृध्यायवाकणाः । गव्यक्षोरेणसं-
पिष्टःपिवेद्दशदिनानिह ॥ एवविंशद्दिनेर्सिद्धंपिप्पलीवर्धमा-
नकम् । अनेनपाण्डुवातास्रकासस्त्रासरुचिज्वराः ॥ उदरार्शः
क्षयश्लेष्मवातान्मध्यन्त्युरोगाः ॥

यद्यपि यह वर्धमान पीपल का योग विशेष कर पाण्डुरोग पर है किन्तु अनेक बार देखा गया है कि श्लेष्म युक्त जीर्ण ज्वर को भी नष्ट करता है । शुद्ध छोटी पीपल को एक २ तीन २ अथवा पांच २ कर के जैसे ताकत हो अर्थात् जहाँ तक पच सके गरमो, दाह, जलन, पियास की अधिकता उत्पन्न न करे, सेवन करे और उसके सेवन करने की दो विधि है, प्रथम यह कि पीपल को गो के दूध में पीस लुगही बनाय मुख में रख दूध से उतार जावे अथवा पीपल को टुकड़े २ कर पाव आधपाव दूध में चोयुना पानो दे के पकावे जब पानो जल जाय दूध मात्र रह जाय, पीपल निकाल के फेंक दिय और दूध पीजावे और कितने बैद्य पीपल भी खिला दिते हैं यद्यपि उसका खिला देना कोई हानिकर नहीं है किन्तु वह पीपल सत्त रहित है । पूर्वोक्त प्रकार पीपर चाहे जिस रीति से खावे दस दिन तक बराबर बढ़ाता जावे । जैसे एक पीपल से आरम्भ करे तो दूसरे दिन दो तीसरे दिन तीन, इसी प्रकार अगर तीन पीपल से आरंभ करे दूसरे दिन छ तीसरे दिन नौ ऐसाही दस दिन तक बराबर बढ़ाता जावे और दस दिन के बाद क्रमशः वैसाही घटाना आरंभ करे इस प्रकार दोस दिन पर्यन्त निरन्तर पीपल सेवन से जीर्ण ज्वर पाण्डुरोग, खासी, खास, मन्दा र कफ का नाश होता है ॥

जीर्णज्वरे दुग्धफेनम् ॥

मोदुग्धप्रभवं किंवा छागी दुग्धमया पिवा । भवेत्फेनं चिदे ।
पद्मरोचनं बलवर्द्धनम् ॥ बन्दिहृदिकरं पथ्यं सद्यः स्तम्भित्त्वाकरं लघु ।
अतिसारिणि मांशे च ज्वरजीर्णे प्रशस्यते ॥

इस बात को हम कह चुके हैं कि जीर्णज्वरी रुख रोगी को घृत अथवा दूध पिला के उसकी रुखता दूर करना नितान्त आवश्यकता है और इसी लिये कई क्रियायें घृत दूध को भी लिख दी गई हैं अब इस बात को दिखाना है कि अधिक दिन शरीर में बिमारी को रहने से मेदा ऐसा कमजोर हो जाता है कि वो दूध को कौन कहे रोटी दाल का पचना सुखिल पड़ जाता है, दूसरे पाज फल के हमारे सहयोगी वैद्यगण जीर्ण ज्वरी को सिर्फ कखी घरघर की दाल और रोटी खिला के रोग शराम करने को पलट रोगी के पांत रक्त मेदादि को इतना सुखा डालते हैं कि चजम होगा तो दूर ही हो जाता भी अन्न पेट में जाने से दस्त हो जाता है तो ऐसी अवस्था में रुखता निवारणार्थ सिवाय दुग्ध फेन सेवन कराने के अन्य उपाय नहीं । जब देखि कि रोगी निहायत निवृत्त और कमजोर हो गया है और अग्नि निहायत हृद्दर्जे की दुर्बल है, तो दुग्ध फेन पिलाना आरंभ करे जब दूध का फेन पचने लगे तब और पाक अथवा घत पिलावे ॥

दुग्धफेन बनानेकीविधि यह है कि जैसे भांग छाननेवाले भांगको दो छोटोंमें बारम्बार मिलातेहैं उसीप्रकार तातकालिकदुहा गी गणया मकरी के दूध को दो छोटों में ले बारम्बार एकसे दूसरेमें ऊपरकी धारासे उड़ेले उमेंमें जो फेन उत्पन्न हो उमे किमी घर्तन में निकालता जाये जब फेन भागा यन्द होजाय दूध गलग करदेय, दूधकाफेन दूध के मपने से भी नि

कल सक्ता है किन्तु मयानी के मयने से केन के माग मक्खन (घृत) भी आ जाता है इसलिये मयन की अपेक्षा दूध को फेंट के केन लेना उत्तम है । यम नर्मी केन में जरामा मिश्री डालके रोगी को पिलावे इसी प्रकार देनों मय पिलावे यह दुग्ध का केन विदोष नाशक, रुधिकारी, समघर्तक, जठराग्निघर्तक और एक प्रकार का पथ्य है तथा शीघ्रही वृद्धि कर एवं हलका है । इस दूध के केन को अग्निगन्ध, अतीमार और जीर्णउत्तर में अवश्य पिलाना चाहिये ॥

लाक्षादि तैल ।

लाक्षाढकंक्रायित्वा जलस्यचतुरादकैः । चतुर्यांशशृतं नीत्वा तैलप्रस्थंविनिक्षिपेत् ॥ मस्त्वाढकंचगीदध स्तत्रैवविनियोजयेत् । शतपुष्पामंश्वगन्धां हरिद्रादेवदारुच ॥ कटुकीं रेणुकांमूर्वां कुष्ठचमधुयष्टिकाम् । चन्दनंमुस्तकांरक्षां पृथक्कर्षप्रमाणतः ॥ चूर्णयेत्तत्रनिक्षिप्य साधयेन्मृदुवज्जिना । अस्याभ्यंगात्पुशाम्यन्ति सर्वेऽपिविषमज्वराः ॥ कासश्वासप्रतिश्यायत्रिकपृष्ठग्रहास्तथा । वातपित्तमपस्मार सुन्मादंयक्षराजदान् ॥ कांडूंशूलचदौर्गंधं गात्राणांस्फुरणंजयेत् । पुष्टगर्भाभवेदस्य गर्भिण्यभ्यंगतोभृशम् ॥

इस लाक्षादि तैल का गुण विषमउत्तर नाशक लिखा है और श्लोक में जीर्णउत्तर का नाम नहीं है लेकिन यह तैल जीर्णउत्तर को भी नष्टकरता है ऐसा अनेकबार परीक्षाकरके देखा गया है । अनेक ग्रन्थोंमें लाक्षादि तैल अनेक विधि सहित लिखे हैं किन्तु उपरोक्त औषधों के सहित यह तैल सधैं तीनों से उत्तम और गुणकर है ॥

पीपर की लाही तीन सेर १६ तोला छे के १२ सेर तीनपाय ४ तोला पानी में एक दिन रात भिजा रखे अगर सही के घड़े में भिजावे तो १ सेर पानी अधिक देवे दूसरे दिन गन्दाश्रि से पचावे चौपाई जल याकी रहै शीतल कर छान लेय, काली-तिल का तेल तीनपाय चार तोला कड़ाई में ढाल चसी में लाही का पानी और गौ के दही का तोड़ तीन सेर तीन तोला ढाल के पचावे और निम्नलिखित औषधों की लुगदी बना के चसी तेल में ढाल दे । सौंफ, अशगन्ध, हल्दी, देवदारु, कुटकी, रेणुका बीज, मुरां, फूट, मुलेठी, -सफेदचन्दन, नागरमोथा और रासन इन सब दवाइयों को छे पानी में सूब नहीन पीस लुगदी बनाय तेल में ढाल के धीमी आंघ से पचावे जय पानी मिश्रकुल जल जाय तेल मात्र रह जाय अगि पर से उतार शीतल कर कपड़े में छान थोतल में भर कर रख देय । इस तेल को रोज सवेरे रोगी के समस्त शरीर में घीरे २ दो तीन घंटा तक मालिस करै अगर रोगी सबल हो और स्नान करने की इच्छा प्रगट करै तो तेल लगाने के एक घंटे के बाद स्नान करा देवे, अगर रोगी कमजोर हो शरीर पर जल पड़ने से जाड़ा मालूम होता हो तो स्नान न कराके बदन पोछ लिया करै । इस तेल के लगाने से जीर्णोत्तर, विषमोत्तर, खांसी, खास, जुकाम, कनर पीठ का जकड़न, यात पित्त, मृगीरोग, उन्माद भूतबाधा, खजुरी पेट का दर्द शरीर की दुर्गन्धता और अङ्गों का करकना आदि नाश होता है इस तेल के मालिस करने से गर्भिणी का गर्भ पुष्ट होता है ।

अगर निम्नलिखित रूप से लाही का इस तैय्यार करके छातादि तेल बनावे तो और भी अधिक गुण कर हो और सिद्धान्त ग्रंथों का मत भी यही है ॥

दशांशलाघ्रमादाय तद्दशांशचस्त्रिंशकां । किंचिच्चवदरी
पत्र वारिषाङ्ग वा मतं ॥ वस्त्रपुतारसोद्याद्यः लाक्षायाः पाद-
तापितः ॥

लाक्षादि तैल यह ज्वर रोग पर प्रसिद्ध तैल है और प्रायः सभी वैद्य इसे बनाते हैं परन्तु लाही का रस किस प्रकार निकाला जाता है इसे विरलाही लोग जानते हैं इसका कारण यह है कि एक दो पुस्तक पढ़ा यस वैद्य मन गये यह सब बातें अनेक ग्रन्थों के व्यवलोकन से होता है । लाह का रस निकालने की विधि यह है कि जितनी लाह हो उसका दशवां भाग लेव लेवे और लेव का दशवां भाग सज्जी और बन्दाजन घोड़ी की घैर की पत्ती । पहले लाही को एक दो पानी से धो डाले ताकी लाही का गरदा मैल निकल जाय और लाही ने सोलह गुना पानी हाल के एक रात दिन भिजा रखे दूसरे दिन लेव घीराए हाल चूहे पर चढ़ाय घीमी आंच से पचावे जब घीयाई जल रह जाय सतार कर कपड़े से खान लेव इस लाह के रस से लाक्षादि तैल बनाना उत्तम होगा ॥

जिस जीर्ण ज्वर में दाह अधिक हो दाह घैर के तलुवे बहुत जलते हों, गर्मी से येचैन हो तो गिल्लिखित तैल को गालिस करे ॥

पट्ट तक्र तैल ।

सुवर्चिकानागरकुष्ठमूर्धा लाचानिशालोहितयष्टिकाभिः ।

सिंहहरेत्पट्टगुणतक्रपक्व तैलज्वरदाहसमन्वितंच ॥

सज्जीखार, शोंठ, फूट, मूर्धा, लाही, हरदी, सफेदचन्दन और जेठी मधु इन सब दवाइयों को समान भाग करके एक सेर से अधिककर कर सोलहसेर पानी में रात को भिजा दे सवेरे अग्नि पर पकावे जब घीयाई पानी रह जाय मल के खान लेव और एक सेर काले तिल का तैल, और तैल से छ गुना गी का साठा या गी के दही का तोड़ (पानी) सबों को क-याई में चढ़ाय घीमी आंच से पचाय लेव जब तैल सिद्ध हो जाय खान कर दोतल में भर के रख देय, इसके गालिस करने से दाह ज्वर और

शीतज्वर अर्थात् जीर्णज्वरी को चाहे जलन मालूम होता हो अथवा जाड़ा मालूम होता हो दोनों शांति होते हैं ।

दुष्ट जल जनित ज्वर चिकित्सा ।

बहुत दिनों का रक्खा हुआ जल के पीने से, रास्ते में ताछा, कुण्ड, सोता के जल के पीने से; जिस जल में फूल पत्ती पड़ेके सड़ गये हों या मेड़क आदि कीड़े पड़े हों उस जल के पीने अथवा उसमें स्नान करने से, बारम्बार बहुत जल के पीने से, अथवा कहीं से पका जाया हो अथवा बिना शांति कियेही अधिक जल पी लेने से प्रायः लोगों को ज्वर हो जाता है और जो लोग कोमल प्रकृति के हैं, जिनका साना पीना एक समय में अन्दाज से मन्दा है, हमेशा एकही कुआँ का जल जिसके पीने में जाता है उन्हें दूसरे देशमें जानेसे जुकाम या ज्वररोग प्रायः हो जाता है इस लिये विदेश जानेवाले को चाहिये कि रास्ते में जल बहुत विचार के पिये या निर्मली जादि बीजों से जल को रोज शुद्ध कर लिया करे अथवा निम्नलिखित औषध को खाता जाये तो जल का विकार न हो ॥

माहार्द्रक यवचारौ पीत्वाचोष्णवारिणा । नानादेश
समुद्भूतं वारिदोषमपोहति ॥

अदरक अथवा शीठ चार मासा, जयासार चार मासा, दोनों को एक में मिलाय दो मासा करे एक मासा सयेरे और एक मासा सामको गरम जल के साथ पीता जाये तो विदेश गमन के रास्ते में चाहे जहाँ का जल पीता जाये पानी का दोष न होगा ॥

भोजनादीनरैर्भुक्तं गुंठीराज्यभयोत्थितं । कल्कं तु भोजने नि-
त्यं नानादेशोद्भवं जलं ॥

शोट, राई और हड़ का बकल तीनों को बराबर तीन चार मासा लेकर शिल पर पानी के साथ पीस के लुगदी बनाय लेय, याद लुगदी को मुख में रख पानी से चतार जावै । इस लुगदी को जो मनुष्य हमेशा सोजग के पहले खाता रहै उसे किसी देश का जल विकार नहीं करैगा यह अनभूत है । अथवा रोज सवेरे थोड़ी सी नींबू की पत्ती पीस के जल के साथ पीता जावै तो भी किसी देश के जल का विकार नहीं हो गा । अगर दुष्ट जल के पीने से ज्वर आगया हो तो इस चूर्ण को सहित के साथ चाटने से निस्सन्देह ज्वर जाता रहता है ॥

किरातादि चूर्ण ।

कटुचिरायता, कालीनिशोय, नागरमेधा, वायुबिरंग, कूट और शोंठ यह सब एक २ तोला, छोटी पीपल छ मासा सब को कूट फपरलन कर दो दो मासे की पुड़िया बनाय लेय दिन में तीन दफे पाने चार २ घंटे पर अर्पात्त सवेरे, दोपहर और सांय को सहित के साथ चाटै तो दुष्ट जलजनित ज्वर रोग बहुत जल्द आराम हो ।

ज्वर खांसी की उपाय ।

खांसी बहुत कारों से होनी को जाने लगती है किन्तु ज्वर रोग में अधिक शीतल जल पीने से, शरीर में अधिक गर्म हवा के लगने से, वही पीजों के खाने से, अथवा बहुत अर्पात्त कलेजे पर शीय होने से खांसी जाने लगती है । क्षयकास का लक्षण जैसा आपूर्वेद में लिखा है यही सम्पूर्ण लक्षण जीर्ण ज्वर में जब कलेजे में शीय हो के खांसी जाने लगती है मिलते हैं फर्क यह होता है कि जीर्ण ज्वर होने के बाद खांसी जाने लगती है और क्षयकास में पहले खांसी जाने लगती है पीछे ज्वर होता है ॥

साधारण ज्वर से लेकर जीर्णज्वर तक किसी ज्वर में खांसी हो तो

प्रथम इस बात को अवश्य विचार लेना चाहिये कि यह खांसी सुख है या तर और उसका पड़िचान यही है कि सुख खांसी में बलगम मुसकिलसे निकलता है, और पतला बलगम आता है। तर खांसी में बिना परिश्रम खांसी आतेही बलगम अंठा का अंठा फूट ने बाहर निकल आता है और खांसी बन्द हो जाती है। अगर तर खांसी आती होतो इस दवा को चटावे ॥

कासेकणाकणामूलं कलिद्रुमफलंरजः । सविश्वभेषजं-
लिह्यान्मधुनाववृषारसं ॥

छोटीपीपल, पिपलामूल, बहेराकाखिलका और बैतरासोंठ इन चारों चीजों को समान भाग ले महीन चूर्ण कर देा नासे की पुड़िया बनाय लेंय, एक पुड़िया में तीन भासा रुसे की पत्ती का रस और तीन भासा सहत मिंछा के चटा दे इसी प्रकार शाम सयरे चटावे अगर रात को खांसी की तकलीफ अधिक हो तो नी इस वजे रात को भी उसी प्रकार एक पुड़िया चटा देय अगर रुसे का रस न मिले तो केवल सहतके साथ चटावे और निम्न लिखित गोली को तैयार कर रोगी को चुसने देय अर्थात् गोली रोगी के मुख में पड़ी रहे ॥

तरखांसी पर गोली ॥

तुल्यालवङ्गमरिचाचफलत्वचःस्युः सर्वसमोनिगदितःखदि
रस्यसारः। बव्यूलवृक्षजकषाययुतंचचूर्णं कासान्निवृन्तिगुटिका
घटिकाष्टकान्ते ॥

लींग, फाळी मिर्च, बहेरा का खिलका तीनों को समान भाग ले और तीनों चीजों के बराबर सूख साफ पपरिया कत्वा अर्थात् जिंदे हाथीपांय कत्वा कहते हैं लेय सबों को महीन चूर्ण कर बबुड बबुड कर

के काढ़े में सूख घोट कर सटरके बराबर गोली बना लेय जय सांसी जावे एक गोली मुख में डाल के चूसे इसी प्रकार दिन रात में एक रोगी १०-१२ गोली तक चूस सकता है किन्तु इस बात पर अवश्य ध्यान रहे कि बलगम सूखने न पावे । उपरोक्त अवलेह तथा गोली अगर रोगी को गरमी करै याने पेट में जलन भाखून हो, पियास बढ़े, गला सूखे तो अवलेह और गोली की मात्रा कम कर देय और इस अवलेह को बना के दिन में कई बार चटावे ताकि बलगम गोला बना रहे और निकलता जावे ॥

कफार्द्रकर अवलेह ॥

हंगराज १ तोला, मुलेठी १ तोला, तुलसीपत्र ८ भांसा, उन्नाय ५॥ तोला, और जूफा ६ भांसा इन सब दवाइयों को अच्छेकरा कर आधसेर जलमें रातको भिजादे, सबेरे मन्दाग्निमें पचावे जय आधापाणी जलजाय शीतल कर मल के छानलेय और आधपाय मिश्री डालके अवलेह बनाय लेय दिन रात में रोगी को जरा २ सा कई बार चटावे । इस अवलेह के चटाने से कफ सूखने नहीं पाता । उपरोक्त यटी घूर्णादिकों के देने से सांसी में कुछ शान्ति न देख पड़े तो इस घूर्ण को बहुत के साथ दवाओं समय चटावे । यद्यपि यह घूर्ण यही रोग पर प्रधान है किन्तु सांसी और स्वास में भी इस घूर्णको सेवनकराके देसा गया है कि बहुत फायदा करता है ॥

जातीफलदि घूर्ण ॥

जातीफललवंगीला पत्रत्वङ्नागकेशरम् । कर्पूरचन्दन-
तिल त्वक्क्षीरीतगरामलैः ॥ तालोसपिप्पलीपथ्या कृष्णजी-
रकचिबकैः । शुंठीविडङ्गमरिचान् समभागानिचूर्णयेत् ॥

यावन्त्येतानि सर्वाणि कुर्याद्भृङ्गां च तावतीम् । सर्वचूर्णसमादेया
शर्कराचभिषग्भवैः ॥ कर्षमात्रं ततः खादेन मधुना म्लानावितं सुधीः ॥
अस्य प्रभावात् ग्रहणी कासस्वासा रुचि क्षयाः ॥ वातश्लेष्मप्र-
तिक्ष्यायाः प्रसमं यांति वेगतः ।

जायफल, लौंग, छोटी छायाची केदाने, तेजपात, दाउचिनी, नाग-
केशर, कपूर, * सफेद सन्दन, कालीतिष्ठ, बंसलोचन, तगर, सूलाभांघ-
ला, ताळीसपत्र, छोटी पीपल, गड़ेदण्डकायकल, कालाजीरा, चीते-
कीछाळ, सोंठ, पायभिरंग, और कालीनिर्घ इत सब औषधियों को
समान भाग से कूट फण्डलन कर उतनाही अर्थात् सब चूर्ण के बराबर
धुली हुई भांगके चूर्णको मिलाय, सबोंके बराबर मिश्री मिलाय देय इसीका
गान जाती फलादि चूर्ण है इसका एक कर्ष † का मात्रा लिखा है और

* कपूर के तीन भेद हैं जैसे चीनियाकपूर, पक्कपूर आदि किन्तु
शुद्ध कपूर लिखने से भीमसेनी कपूर समझना, लेकिन कहीं मिलता तो है
नहीं—बजार में मामूली कपूर जो बिकता है उसी को खूब साफ़ निर्मल
दिख के लेतेय ॥

† वैद्यक शास्त्र में कर्ष के पर्याय १३ नाम लिखे हैं और वित्पत्ति से
वे सब साधक समझ पड़ते हैं ॥ जैसे अक्ष नाम भी कर्ष के हैं और अक्ष वहे-
ड़ा को कहते हैं तो वहेड़ा के बराबर दवा के तौल कर्ष समझना इसी प्रकार
(पाणितल) गद्दीरोभर (तेंदुक) तेंदू के फल के बराबर (घोड़घिना) इत-
ना जे कर्ष का प्रमाण १६ भांजा का माना गया है । घाल कल के बराबर
कर्ष का मात्रा एक तोला मानते हैं किन्तु अप्रमाणिक है ॥

एक कर्प १६ मासा का होता है (जो वैद्य अनभिज्ञ हैं, किताबी नुसखा से रोगियों की दवा करते हैं उनसे रोग का आराम होना दूर रहा और बिमारी बढ़ जाती है और अन्त में लोग वैद्य और वैद्यक की निन्दा करते हैं । क्योंकि १६ मासा के मात्रा में ४ मासा भांग हुआ सो जो कभी भांग नहीं खाते उनके लिये ४ मासा भांग बहुत अधिक है किन्तु जो एक एक मुद्दत से बिमार है जिसका दिल दिमाग निहृष्यत कमजोर हो रहा है ४ मासा उसके लिये किम कदर हानिकार होगा ? एक छोटीसी बुद्धि रखने वाला भी कह सक्ता है कि निस्सन्देह नुकसान करेगा) इस घूर्ण की मात्रा एक मासा से ३ मासा पर्यन्त है और जो लोग भांग खाते हैं वह भी ६ मासा से अधिक मात्रा नहीं देनी चाहिये । इस घूर्ण की सद्यत के साथ, या सरयत गुलघनप्ला या सरयत उत्प्लाव के साथ चाटने से ग्रहणी, अतीसार, खांसी, स्वास, गरुधि, कफसर्द, वात कफ की दृष्टि और जुकाम आराम होता है । बहेरा का छिलका, अमार का छिलका, मुलेठी, रौर की हली मुख में रख कर चूमने से भी खांसी में फायदा होता है । दिन में कई बार गुदा में तेल लगाना भी खांसी को फायदा करता है ॥

खुश्क खांसी की दवा ।

फतीरागोद २ तोला, गोद ययूल १ तोला, मुलेठी का घूर्ण १ तोला यंसलोचन १ तोला भीठीलीकीकीयीजकीगरी १ तोला सबों को महीन घूर्ण कर तीन २ मासे की पुड़िया बना लेय, दिन में तीन दफे बराबर की मिट्टी मिलाय जरासा पानी हाल के गीला कर दो मांसा संहत मिठा के चटाये और निम्नलिखित घटी तैय्यार कर चूमने को देय ।

पपरिया कत्या १ छँटाक, खतनी के बीज २ तोला, गोंद बबूळ १ तोला, कतीरगोद १ तोला, महेरा का छिलका १ तोला मुछेठी २ तोला, कपूर ६ साया । इन सब दवाईयों को खूब महीन चूर्ण कर बिहीदानी के लुभाव में महीन घोट के मटर बराबर गोली बनाय ले, जय खांसी आवै एक गोली मुख में घाल के चूसे, एक दिन रात में एक रोगी ८ १० गोली तक चूस सक्ता है । गोली चूसने की रीति यह है कि गोली मुखमें पड़ी रहे कुचल कर खा न जावे, जिह्वा के रस (यूक) से गोली खयं पिघलेगी, जम २ पिघलतीजाय कुछ तो पीय उसका निगल जाय कुछ थूक दिया करै । इस गोली के चूसने से खांसी में खाती पर का जमाधुमा कफ पक के निकल जाता है और खांसी जाती रहती है ॥

अगर खांसी प्रतिश्याय याने नजने के साथ हो अर्थात् पड़ले जुकाम जुवा हो, इसमें भी लोग बिना समझे दूजे गरम दवा खिला देते हैं यहां तक कि उसे बड़ी भारी सरदी समझ रखतक देदेते हैं जिससे कि छाती का कफ सूख गला सांघ २ करने लगता है और फिर भी बिना कारण समझे रस की बढ़ती कियेही जाते हैं अंततः गत्या उस बिघारे पराधीन रोगी को बगालय का रास्ता तका देते हैं ।

पाठकगण यह सब अनूत्प विषय जो हमने बड़े परिश्रम और त-युर्व से हासिल किया है आप लोगों की सेवा में अर्पण करते हैं आशा है कि आप लोग इस ग्रन्थ के अनुसार रोगियों की चिकित्सा कर के अवश्य मश के भागी होंगे, सम्पादक को भी यश और धर्म के भागी बनायेंगे ।

याद रहे अगर जुकाम से ज्वर हुआ हो तो कोई गरम औषध न दे के निम्नलिखित एकीनी फान्ट को पिलावे ।

जुकाम पर फाट ।

गुलशनप्पा, ६ मासा, मुलेठी ३ मासा, तुखनखतमी २ मासा, मुन-
झा ६ दाना, उन्नाय ४ दाना और मिश्री १ तोला । आधमाय जल को
एक गिलास में रख गरम करें जब उफान आनेलगे अग्नि पर से गिलास
को उतार ऊपर की सब दवाइयाँ कुबलकर मै मिश्री के उसी गिलास में
डाल के ढांप दें, जब शीतल हो मल के छान कर पिला दें, इसी
प्रकार दोनों समय पिलाये, छ सात दिन इस फांट के पिलाने से जुकाम
बिलकुल पच कर आराम हो जायगा । बहुत से लोग जो इस घात को
नहीं जानते कि जुकाम के रोकने से शरीर को क्या हानि पहुंच सकता
है, जुकाम होतेही गरम दूध गुड़, या गुड़ अजवायन, अथवा अफीम
या सराय पीलेते हैं लेकिन इन चीजों के पीने से नजला रुक कर बल-
गम सूख के जाती और मस्तिष्क में छपट जाता है जिसे स्वास्वादि
बिमारी लोगों को हो जाती है इस लिये मनुष्य को चाहिये कि जुकाम
को गरम दवाइयों से कभी न रोकें ।

* श्वासोपद्रव ।

ज्वर रोग में प्रथम उपद्रव स्वास का है जो छाती पर कफ सूखजाने
से होता है । यह भी उपद्रव ऐसा दुष्कर है कि शीघ्र यत्न न करने से
शीघ्रही प्राण हरण करता है । प्राण हरण रोग तो बहुत से हैं परन्तु
जितना शीघ्र स्वास और हिचकी प्राण हरण करते हैं अन्य नहीं ।

+ छोटी पीपल, कायफल और ककड़ासिंही तीनों को समान भाग
ले नहींन धूर्ण कर एक भागा अथवा आधा भागा चूर्ण को सहत में
गोला कर के दिन रात में तीन बार बार घटाने से स्वास दब जाता
है । अगर बलगम का जोर बहुत अधिक हो और इस चूर्ण के घटाने
से एक दो रोज में स्वास दबा न देय पड़े तो ।

दत्तमृगमदचूर्णं गुंजैकच्चाद्र्द्विकरसेन । अपहरतिशीघ्रमेव-
श्वासं श्लेष्मील्वणत्वच्च ॥

फरतूरी आधी रक्ती अथवा एक रक्ती को दो भांसे आदी के रस में चोट के पिला दे अगर रोगी कमजोर हो तो एकही दूध में न पि-
लावे एक २ चावल या दो २ चावल भर तीन चार दूध के फर के आदी के
रस में चोट के पिलावे अगर इसे भी स्वास दूध न देख पड़े तो ।

घतूरमूलमादाय छायाशुष्कंप्रकल्पयेत् । तत्त्वचोधूसपा-
नेनश्वासानश्रुतिसत्वरम् ॥

घतूर के जड़ की छाल को छाया में सुखाय तीन भासा के अंदाज
पिलन में भर रोगी को धूनपान करावे, यदि रोगी धूनपान करने में
असमर्थ हो तो न पिलावे । छाती को धुरा अथवा चोटली से सेंक करे ।

उद्धूलनप्रकर्तव्यं शुंठीभांधोश्चवक्षसि । तेनसाम्यतिशीघ्रेन
श्वासंपरमदारुणम् ॥

वालुकापुटकैःखेदोलवणवापियच्छति । श्वासकासेप्रकर्त-
व्यकफस्तन्मप्रवृत्तिये ॥

धैतराशोठ को तबे पर अधभूजा कर गहीन चूर्ण बनाय छाती पर
मलने से बहुत जल्द स्वास दूध जाता है यदि शोठ के धुरा से न दूध
तो निम्निलिखित चोटली से सेंक करे ।

भरभूजे के भार का घालू और सेंधानेन दोनो को एकत्रित कर
दो चोटली बनावे, एक तबे को जगि पर पर उसी पर चोटली को

गरम कर द्याईस्ते २ छाती गला और गले के रंगों को सेकें । यम अगर उपरोक्त उपायों से श्वास का दमना दृष्टिगोचर न हो तो गरम द्याईयों का देना बिलकुल बन्द कर देना चाहिये क्योंकि इससे अधिक गरम द्याईयों के व्यवहार से निश्चन्देह रोगी मर जायगा, उन अवस्था में जान लेना चाहिये कि इसे श्वास का जोर सरदी से नहीं है बल्कि गरमी से है और उसे जुकाम और सुख खांसी की चिकित्सा जो ऊपर लिखाया है उन प्रयोगों के द्वारा श्वास के युद्धि को शांति करे । ऐसी अवस्था में शीघ्र छाती पर पलस्तर लगा देते हैं अथवा एक प्रकार का ऐन्टमेन्ट ऐ लिन्ट में लगा के चपका देते हैं । इससे भी कहीं-२ लाभ देखने में आया है किन्तु श्वास के लिये यह उपाय जो ऊपर हम लिख आये हैं निहायत परीक्षित हैं बिना किसी विशेष कारण के निस्कल नहीं जाता है ॥

मूर्छाचिकित्सा ॥

ज्वर का दूसरा उपद्रव मूर्छा है, मूर्छा विहोशी को कहते हैं, जिसके घेग से रोगी की चेतन्यता जाती रहे उसी को मूर्छा, मोह, विहोशी गफलत और असंज्ञता कहते हैं । यह भी उपद्रव ऐसा दुष्कर है (प्राणि विमुच्यतेऽशीघ्रं मृत्यामद्यः फलाक्रियां) कि यदि उसमें तत्काल चिद्धि दायक चिकित्सा न की जाय तो मनुष्य शीघ्र ही मर जाता है ॥

मूर्छा को संस्कृत में असंज्ञता कहते हैं (असंज्ञतासंज्ञोपधातः) अ संज्ञता उसे कहते हैं जिसमें संज्ञा का नाश हो । मूर्छा याने विहोशी अन्य रोगों के बढ़ने में भी होता है किन्तु ज्वर रोग की गरमी मस्तिष्क में पहुँचने से अकसर मूर्छा हो जाता है इसी को वैद्य लोग सीत में डूबा समस्त रसों की भरती कर रोगी को यमालय पहुँचाय देते हैं । मूर्छावस्था में वैद्य को चाहिये की यही युद्धिमानी के साथ चिकित्सा करके रोगी के प्राण की रक्षा करे क्योंकि जरा भी विपरीत चिकित्सा होने से रोगी बहुत जल्द मर जाता है ॥

इस स्थल में हमें यह भी मतलब देना बहुत जरूरी है कि मूर्छा दो प्रकार का होता है, एक तो भस्तिष्क (शिर का मध्य भाग) का सून प्रयत्न गरम हो जाता है बाद श्लेष्मा के साथ मिल के जम जाता है यह प्रायः सन्निपात ज्वर में होता है और उसका लक्षण यह है कि ज्वर होने लगता है और मूर्छावस्था में आंखें सून के समान लाल हो जाती हैं, आंखें बिलकुल ढपी रहती हैं अथवा कुछ खुली भी रहें, इसमें शीतल चिकित्सा जैसे शिर पर घरफ रखा देना अथवा शिर पर शीतल जल का धार देना मना है ऐसी चिकित्सा करनी चाहिये जिसे रक्त बलगम से अलग हो अधोगामी रोगों में फैल जाय । दूसरा हृदय से बात पित्त की गरमी उठ कर भस्तिष्क में जाके भर जाती है जिससे रोगी भ्रमवेश हो जाता है ॥

चिकित्सा ॥

प्रथम प्रकार की मूर्छा में जो सन्निपात रोग में अज्झनादि लिखे हैं उन उपायों से हटाना अथवा निम्नलिखित अज्झन लगा के रोगी को चेत करना ॥

शरीषवीजंगी। मूत्रं कृष्णामरिचसैधवैः । अज्झनं स्यात्पूवाधाय
सरसीनशिलावचैः ॥

सिरसा के बीज, छोटी पीपर, काली मिर्च और सेन्धानाम एक रत्ती मैनसिल आधी रत्ती, लासुन का टुकड़ा दो चावल भर सघों को घिकने पत्थर पर गोमूत्र में सूब महीन काजल के समान घोंट रोगी के आंख में अंजग लगावे नियम है कि इससे रोगी चेतन्य होगा । लेकिन मूर्छावस्था में खाने के लिये कोई गरम दवा नहीं देना चाहिये । छोटी पीपर का पूर्ण १ भासा शहद के साथ चटाना, भीठे अमर का रस पिलाना, अथवा मुनक्का, टोहारा, खस, नागकेशर, कमलगहे की गंती सब दवा-

इयों को समान भाग ले क्राय बना मिश्री हालके दिनमें कई बार पि-
लाने से कायदा देखा गया है ॥

जो सिर्फ गिर पर गरमी पहुंचने से सूखी हुआ हो तो उसे निम्न-
लिखित उपायों से शान्ति करै ॥

अंगूर अथवा कस का सिरका जिसमें कुछ मिला न हो २ तोला,
गुलाबजल अथवा सिर्फ जल, १ पाव, रोगनगुल अथवा गरी का तेल दो
तोला तीनो को एकमें मिला उसीमें एक सफेद कपड़ा तर करके गिरपर
रक्खे और जब सूखजाय फिर मिला दे, इसी प्रकार जबतक होश न आवे
बराबर रक्खा रहै और सुंघने को हरा खीरा काटके या खस का अंतर
सूङ्घने को देय अगर देखे कि कई दिनोंसे दस्त नहीं हुआ है तो मुलायम
रेचन द्वारा अथवा पिचकारी के जरिये से बहुत जल्द दस्त करा दे
ऐसी २ बिमारियों में नल मूत्र पर प्रयत्नही दृष्टि देनी चाहिये क्योंकि
नल मूत्र में गरमी पहुंचने से भी अनुष्य को खलि, सूखा, प्रलाप, सुदक-
म्प आदि उपद्रव उठ खड़े होते हैं और उन्हें साफ करने से निवारण
हो जाते हैं ॥

अगर बहुत दस्त आने से सूखी हुआ हो तो बहुत शीतल उपचार
न करै, नाभी पर गरम तेल मलै और सांधी चीज सुंघावे तथा दस्त
बन्द करने का उपाय करै । अगर ह्रिचकी आते २ बिहोसी हुई हो तो
मुलेठी मैतफल का पानी पिला के बमन करावे इत्यादि किन्तु ऐसी
अवस्था में बिद्वान सत् वैद्य की सहायता लेना बहुत जरूरी है ॥

अरुचि ।

किसी चीज का स्वाद न मालूम हो उसे अरुचि कहते हैं यह सर्व
साधारण ज्वर में हो जाता है और जब तक ज्वर पूर्णरूप से निर्गत नहीं

होता अरुचि नहीं जाती । अगर खांसी तेजी के साथ न हो तो कागजी नींबू में जरा सा कांछी मिर्च और काला नीम का चूर्ण भर आग पर भूँज रोगी को चटावै ॥

वमन ।

रोगी के पीने वाले पानी में थोड़ा सा पुराना चायना भिजा दी आध घंटे के पश्चात् मल के छान ले और उसी जल को थोड़ा २ पिछावै इससे वमन बन्द हो जायगा, चायना इससे न बन्द हो तो कमल गह्वे की गरी एक तोला चायभर पानी में पकावै जब आधपाय पानी रह जाय मल के छान लेय और उसमें ६ मांसा मिश्री मिला के दो २ घंटे पर पिछावै इससे जरूर वमन सूखी ओंकी का आना बन्द होगा ॥

हिचकी ।

जब रोग में हिचकी का आना आकाश यात्रा के लिये मानों यमराज का पुकारना है, ठीक हिचकी रोग वैसा ही है इसमें कोई संदेह नहीं है । वैद्य को चाहिये कि हिचकी प्रारम्भ होते ही चिकित्सा करना शुरू करे ॥

नीरेणसिंधुत्थरजातिसूक्ष्मं नस्येतिनूनं विनहतिहिक्कां ।

शुंठीइठाद्वासितयासमेता धूपोद्यवा हिंसुसमुद्भवश्च ॥

दो तोला पानी में तीन मांसा निमक सूख महीन घोंट नाश देने से अथवा ६ मांसा शोंठ को आधपाय पानी में पकाय मल छानकर एक तोला मिश्री मिलाय उसे कईवार पिछाने से अथवा होंग की नाक में धूनी देने से सिर्फ एकही प्रयोग अथवा तीनों प्रयोग से हिचकी रोग का नाश होता है ॥

शिर लेप ।

विशेषमपरंचात्र शृणुपद्रवनाशनम् । मधुकरजनीमुस्तं
दाडिमञ्चास्त्रवेतसं ॥ अंचनंतिन्तिरीकञ्च नलदंपत्रमुत्पलं ।
त्वचंव्याघ्रनखंचैव मातुलुङ्गरसीमधु ॥ दिद्यादेभिज्वरात्तस्य
मधुशुक्तयुतैशिरः । शिरोभितापसंमोह इमिहिक्वाप्रवेवधून् ॥
प्रदेहानाशयत्येष ज्वरितानामुपद्रवान् ॥

सुश्रुत महाराज कहते हैं कि इसके जाने विशेष औषध ज्वर के उपद्रवों के नाश करनेवाली सुगंध, मधुभा के दूध का फल वा अंतर-छाल, छलदी, नागरमेया, अनार का फूल वा छाल, जमलवेत, जमिठी की छाल, छरीछा, बालछड़, तेजपात, कमलगह्वे की गरी, दालचीनी (व्याघ्रनख) नख नामक सुगन्धद्रव्य, बिजौरा नींबू का छिलका इन सबों को ले महीन चूर्ण कर पोछा या सहत और अंगूर जपवा जामुन का चिरका निलाय उपर पीछित वाले के शिर और भाचे पर लेप करने से शिर की तीव्र पीड़ा, शिर का जलन, बिहोसी, यमन, शय्या जी का नचलाना या मुख से पंछा छूटना, हिचकी और यदन का कांपना नष्ट होता है । यस जय उपर के उपद्रवों की चिकित्सा समाप्त करके उपर छुट जाने के बाद क्या पहरेज करना चाहिये सो लिखते हैं ॥

ज्वर छुट जाने का लक्षण ।

मधुत्वंशिरसःखेदा मुखमापाण्डुपाकिच । चवधूश्चात्रकां-
चाव ज्वरमुक्तस्य लक्षणम् ॥

शरीर हलकी हो, गिर में खफीफ पसीना अछ्यै, मुख की पियराहें या मलीनता जात रहै मुख कुछे पंक जाय अथवा न भी पके, छोंक जायै, और भूख लगे तो जानना की उबर छुट गया ॥

ज्वर छुट जाने पर परहेज ।

परिप्रेक्षावगांश्चक्षेहान् संशोधनानिच । स्नानाभ्यङ्गदिवा-
स्वप्न शीतव्यायामयोषितः । गभजेतज्वरोत्सृष्टो यावन्नावल-
वान्भवेत् ॥ त्यक्तस्यापिज्वरेणाशु दुर्बलस्याहितैर्ज्वरः । प्र-
त्यापन्नेदहेद्देहं शुष्कवृक्षमिवानलः ॥

आरना या छौछार से भीजना, नदी या तालावादि गम्भीर जल में सुधी लगाना, तेल घी का पकवान खाना अथवा स्नेहादि पीना, घसन घिरेषणादि शरीर शुद्ध करना, खूब गिर से स्नान करना, तेल चपटन लगाना, दिन में सोना, अधिक शीतल पदार्थ का सेवन, कसरत और स्त्री प्रसंग आदि कर्मों से ज्वर छुट जाने के पश्चात् जय तक शरीर खूब बलवान न हो जाय परहेज करै क्योंकि ज्वर से छुटा दुर्बल मनुष्य को उपरोक्त अपघ्यों से पुनः ज्वर आके ऐसे दण्ड करता है जैसे सूखे वृक्ष को अग्नि ॥

यावन्नप्रकृतिस्थः स्यादोषतःप्राणतस्तथा । ज्वरेप्रसोहाभ-
वति स्वल्पैरप्ययचेष्टितैः ॥ निपण्णंभोजयेत्तस्मान्मूत्रोच्चारौ
चकारयेत् । आरोग्यकेगात्रसांदि वैवर्ण्येऽङ्गमलादिपु ॥ शांत
ज्वरेऽपिशोध्यऽस्यादनुबंधमयान्नरः ॥

यस लिये ज्वर से छुटे मनुष्य के जितने दोष हैं और ब्रह्म से करने

स्वमाय में स्थित न हो। उसे तितने अहित पदार्थ का परिहार करना उचित है क्योंकि थोड़े भी यिरुद्ध चेष्टा अर्थात् बल से अधिक खाना पीना चलना फिरना आदि भी कर्म करने से ज्वर सहित विहे।शी जाने लगती है इस लिये वैद्य को चाहिये ज्वर से छुटे रोगी को जय तक यथार्थ बलाघान न हो बैठेही रखे अर्थात् रोगी से कोई भी शारीरक काम न कराके उसे दोनों समय अग्नि दोष के अनुसार भोजन कराये और ऐसी बल कारक औषध दे जिसे सब मूत्र भी साफ हो जाये ॥

अगर अरुचि, वदन में दरद, मुख की पियराई, या कृत्रापन और शरीर का मैलापन ज्वर के छुट जाने पर भी बना रहै तो वैद्य को चाहिये कि फिर ज्वर होने के भय से उसके दोषों को शोधन करे ॥

नाजातुतर्पयेत्प्राज्ञः सहसाज्वरकर्षितम् । तेनसन्दूषिता-
ह्यस्य पुनरेवभवेज्वरः ॥ चिकित्सेच्चज्वरान्सर्वान्निमित्तानां
विपर्ययः । अमक्षयाभिघातीत्ये मूलव्याधिसुपाचरेत् ॥

बुद्धिमान वैद्य, ज्वर से दुबले हुये रोगी को उसकी इच्छानुसार एक बार किसी चीज से कदाचित् तृप्त न करे क्योंकि एक बारगी तृप्त कर देनेसे दूषित ज्वर उस मनुष्य को फिर हो जाता है । हमेशा निदानों के व्यतिक्रमों से सम्पूर्ण ज्वरों की चिकित्सा करे और खेदज्वर, क्षयज्वर, अभिघातज्वर, दग ज्वरोंमें वैद्यको चाहिये कि मूल व्याधि को दूर करे ॥

स्त्रीणामपप्रजातानां स्तन्यावतरणेचयः । रात्रसंशमनं
क्षुर्याद्ययादीषं विधानवित् ॥

जिन स्त्रियों का बालक घर जाय और दूध के उतरने में जो ज्वर उत्पन्न हुआ हो उस ज्वर को आयुर्वेद विद्यानदर्शी दोष अनुसार शांत करे । इति ज्वराधिकाराः समाप्तः ॥

इसके आगे अब हम राजयक्ष्मा रोग का निदान, कारण और चिकित्सा लिखते हैं । यद्यपि प्राचीन ग्रन्थोक्तानुसार ज्वर रोग के आगे अतीसार रोग का प्रकरण कथन करना उचित है लेकिन यक्ष्मा के अनेक लक्षण जीर्णज्वरादि में मिलते हैं और जीर्णज्वरादि के अनेक लक्षण यक्ष्मा में मिलते हैं इस हेतु से इस स्थल में अतीसार रोग का प्रकरण न दे के यक्ष्मा रोग का निदानादि लिखते हैं ॥

राजयक्ष्मा (शोष) रोग ।

अनेकरीगानुगतो बहुरोगपुरोगमः । दुर्विज्ञेयो दुर्निवारः
श्रीषिव्याधिर्महाबलः ॥ संशोषणाद्रसादीनां शोषइत्यभिधी-
यते । क्रियाक्षयकरत्वाच्च क्षयइत्युच्यते पुनः ॥ राज्ञश्चन्द्रमसी-
यस्माद्भूदेष किलामयः । तस्मात्तंरामयन्मेति केचिदाहु-
र्मनीषिणः । रोगेपुराजतेयस्मात्तत्तोयंरोगराडिति ॥

भावार्थः—अनेक रोगों के पहले और बहुत प्रकार के रोगों के पश्चात् होने वाला, बड़ी कठिनता से जाना जाये अर्थात् जिसका निदान एकाएकी बहुत जल्द न मिल जाय, अत्यन्त दुःख से दूर किया जाय ऐसा महा बलवान् शोषरोग मनुष्यों के शरीर में हो जाता है । यह रोग निरन्तर रक्त रक्त आदि सातों धातुओं को सुखाता है इस लिये शोष नामक रोग संज्ञा पड़ा है और सम्पूर्ण द्रव्यों के कर्मों को क्षय करता है इस वास्ते क्षय रोग भी कहा जाता है । एक समय भड़े तेजस्वी प्रतापी चन्द्रगुप्त नामक राजा को यह रोग हुआ और उसे निर्मूल नष्ट करने में वैद्यों की अति परिश्रम पड़ा तब से वैद्य लोग शोष रोग को यक्ष्मा रोग

कहने लगे और सम्पूर्ण रोगों में उत्पत्त्य से मिराजमान है इस कारण से रोगराज या राजरोग भी कहते हैं ॥

इतने प्रचलित शोथ रोग के पर्याय नाम हैं, जैसे शोथ, राजयक्ष्मां क्षय या कफक्षय, राजरोग, दिक् सपेदिक आदि ॥

राजयक्ष्मा निदान ।

वेगरोधात्क्षयाच्चैव साहसद्विषमाशानात् । त्रिदोषोजा-
यतैयक्ष्मा गदोहेतुचष्टयात् ॥

जय यक्ष्मा रोग का निदान कहते हैं, निदान आदि कारण को कहते हैं, यानि जिन अवस्थाओं से रोग उत्पन्न होता है उसे निदान कहते हैं । (वेगरोधात्) वेग १३ प्रकार के हैं जैसे गल, मूत्र, र्छीक, जंभुमारु, आदि कि जिनको के रोकने से उदायत रोग होता है लेकिन यहां अधो-
यात गल मूत्र तीनहीं वेग का ग्रहण किया है । इस्ते भरद्वाज का मन्त्र है ।
"वातमूत्रपुरीषाणां क्षीणपाद्यैर्यदामराः । वेगं निरोधयेत्तेन राजयक्ष्मादि-
संभवः" अनुप्य प्रायः किसी २ स्थान में गय अवस्था लज्जा वस रेचित
अधोयायु को रोक लेते हैं वैसाही गल मूत्र को भी कहीं २ रोकना प-
ड़ता है किन्तु उस्से यक्ष्मा रोग होने का सम्भय है (क्षयात्) धातुक्षय
से यह धातुक्षय अतिमैथुनादि से होता है, यद्युतसे विषयी कामोन्मत्ततासे
दिनरात मैथुन क्रिया में लिप्त हो जाते हैं अन्तिम परिणाम उसका यह
होता है कि यक्ष्मां रोग द्वारा यमालय को यात्रा करना पड़ता है (ना-
श्यात्) जो भार अवस्था परिश्रम या कसरत अपने शरीर से करने ला-
यत नहीं है उसे करना या लोभ वस दिन रात कामहीं में लगे रहना उसे
साहसात् कहते हैं इस्से भी यक्ष्मा रोग होता है (विषमाशानात्) वि-
षम भोजन उसे कहते हैं जैसे कधी कम कधी जादा, कधी सवेरे कधी
दुपहर के भोजन करना, कधी सागही नहीं (व्रण) कधी कई बार तो-

जन करना । अक्षर औरतों को जो दिक् का आरजा है। जाता है वि-
पम अशनही से उन्हें खाने पीने पर बिलकुल लिहाज नहीं रहता और
पुरुषों की अपेक्षा अत भी बहुत करती हैं । यह चार कारण तीनों दोषों
करके यक्ष्मा रोग होने को घेद्यवर्षों ने दिखलाया है किन्तु इसके अतिरिक्त
और भी छः कारण हैं जैसे अतिशोक, अराशोपि, अध्वशोपि, व्यायाम-
शोपि, उरस्त और व्रणशोपि जिसके लक्षण आगे लिखेंगे ।

राजयक्ष्मा संप्राप्ति ।

कफप्रधानैर्दोषस्तु रुद्धेपुरसवर्त्मसु । अतिव्ययायिनीवा-
पि क्षीणोरेतस्यनन्तरा । क्षीयन्तेधातवः सर्वततः शुष्यतिमा-
नवः ॥

जब राजयक्ष्मा का संप्राप्ति अर्थात् शरीर के भीतर प्या मिश्र
कर शोथ उत्पन्न करता है उसे दिखलाते हैं । प्रथम शरीरकी रक्षा या घ-
नाघट रक्तादि अनेक वस्तुओं से है किन्तु शरीर में कफ प्रधान है । हम
छात्रों का चलना, फिरना, घोलना तथा भीतर समग्र मस तथा आशयों
का काम भी कफ की चिकनहट से होता है। सो मातादिक कुपित होने
से यथार्थ कफ न मन के स्थान से कफ श्रुत हो। मुखमार्ग से रेंघन होने
लगता है, उस अवस्था में रस की बहने वाली नाड़ी बन्द हो जाती है,
तब भोजन का रस न स्थिर कर यह भी कफ हो जाता है इससे प्रतिदिन
शरीर सूखता है । दूसरा अति मैथुन से जय वीर्य क्षीण होता है तो
उसके क्षीण होने से दूसरे भी मांसादिक धातु क्षीण होने लगते हैं । इस
वजे से मनुष्य गित्यवति सूखने लगता है, यम यही शोथ या यक्ष्मारोग
कहाता है । लेकिन जहां तक हमने परीक्षा किया है अधिकतर धातु
क्षीण से यक्ष्मारोग पाया है, खास कर जो लोग अल्पवय में अतिमैथुन
या अस्त्रमैथुन करते हैं उन्हें और जो माता पिता धातुतीक्ष्णवर्द्धा में न-

यथा सुज्ञाक आदि धातु सम्यन्त्री रोगातुरायस्था में गर्भ स्थापन करते हैं उस गर्भ से उत्पन्न पुत्र या कन्या को दश बारह अथवा सोलह घरघ की अवस्था में अवश्य यक्ष्मा रोग हो जाता है ॥

यक्ष्माकापूर्वरूप ॥

श्वासांगसादकफसंस्त्रवतालुशोष वम्यग्निसादमदपीनस
क्वासद्विक्वा । शोषेभविष्यतिभवन्तिसचापिजन्तुः शुक्लेक्षणाभ-
वतिमांसपरोरिरंसुः ॥

जब मनुष्य को यक्ष्मारोग का आरंभ होता है तब निम्नलिखित लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं जैसे (श्वास) दम का फूलना (अंगसाद) अंगों की शिथिलता याने हाथ पैर निहायत ढीले और मुस्त (कफ संस्त्रव) कफ का गिरना (तालु शोष) गला सूखना या गले में कांटा खरीखा गड़गा (वमि) जी मचलाना या कै होना (अग्निसाद) भूख का न उगना, किसी २ को दश रोग में अधिक भूख वाला देखा है (मद) नेत्रों में नशा सा मालुम होना (पीनस) नाक बहना याने जुकाम (क्वास) खांसी, किसी को सूखी खांसी आती है और किसी के खांसी में खांसते ही अंठा के अंठा कफ गिरपड़ता है * (द्विक्वा) द्विचकी यह लक्षण होते हैं तथा उस मनुष्य के नेत्र सफेद ३ मांस खाने की इच्छा और मैथुन की चाह रहा करती है । किसी विमार में यह सब लक्षण मिलते हैं और किसी में कुछ कम किन्तु कम लक्षण से भी विमारी अवश्य समझी जा-
यगी ॥

* इस जगह दो पाठ है द्विक्वा द्विचकी याना और निद्रा अधिक नींद याना और दोनों लक्षण मिलते हैं ॥

† मांस खाने की इच्छा उसी मनुष्य को होगी जिसे पूर्व में मांस का स्वाद मिला चुका है ॥

त्रिरूपक्षयके लक्षण ॥

अंसपाश्वर्भाभितापश्चसन्तापःकरपादयोः । ज्वरःसर्वाङ्गिक-
श्चेतिलक्षणराजयक्ष्मणः ॥

त्रिरूपक्षय अर्थात् तीनों दोषों से जो साधारण यक्ष्मा के लक्षण हैं उसे कहते हैं । पन्धे और पसुरी में दर्द हाथ और पायों में दाह तथा सगण शरीर में ज्वर ये राजयक्ष्मा के लक्षण हैं । इतने लक्षणों से जानना कि यक्ष्मा अभी प्रथम दर्जे पर है अच्छा हो सक्ता है ॥

पट् रूपक्षय के लक्षण ।

भक्तद्वेषोज्वरःश्वासःकासःशोणितदर्शनम् । स्वरभेदश्चजा-
यन्ते पट्टपेराजयक्ष्मणि ॥

(राजद्वेष) खानेकी कीन कही भोजन देखनेकी भी इच्छा न हो, उवर से शरीर तपा करे, दग फूले, खांसी, घूंक के साथ छोट्ट का गिरना और स्वर भंग अवाज का घीठ जाना, यहां तक यक्ष्मा दूसरा दर्जा समझना अच्छे २ सत् विद्या के द्वारा कोई २ आराम हो जाता है किन्तु तीसरा और चौथे दर्जे का यक्ष्मा आराम नहीं होता ॥

सर्वैरहैस्त्रिभिर्वापि लिंगैर्मांसवलक्ष्यैः । युक्तोवर्ज्यश्चिक्षि-
त्यन्तु सर्वरूपोप्यतोऽन्यथा ॥

हमारे भूत पूर्व वैद्यवरों ने उपरोक्त लक्षण युक्त तथा मांसादि क्षय को असाध्य कहा है । लिखते हैं सम लक्षण युक्त अथवा तीन लक्षण युक्त तथा मांस और चलक्षय लक्षण युक्त यक्ष्मा रोगी हो तो उसकी चिकित्सा न करना, किन्तु जो रोगी मांसादि क्षय रहित हो और रोग के संपूर्ण

उत्पन्न भी मिलते हैं तो उसकी चिकित्सा ईश्वर भरोसे पर करना क्योंकि यह ऐसा दुष्कर रोग है कि ईश्वर ही आरोग्य करे । लिखा है कि अगर सत् वैद्य यक्ष्मावाले को आरोग्य भी कर देय तो भी वह मनुष्य एक हजार दिन से अधिक न जियेगा क्योंकि हजार दिन के बाद फिर उसी रोग में ग्रसित हो मनुष्य इस असार संसार को परित्याग करता है । एक स्थल में लिखा है कि जो यक्ष्मा रोगी औषध से आराम हो जाय तो जानना कि उसे यक्ष्मा का रोग नहीं था । सो है मेरे प्यारे पाठक वगैरे जहाँ तक हो सके बीमारी को रक्त करो क्योंकि यक्ष्मा ही पर प्या निर्भर है यावत् रोग है सब बीमारीय से होते हैं । अब इन धातु तयादि पद कारण से जो यक्ष्मा होने को पूर्व में लिख आये हैं उसके लक्षण सुश्रुत से दिखलाते ॥

शोक शोषि लक्षण ।

प्रध्मानशीलः सस्तांगः शोक्शोष्यपितादृशः । विनाश-
क्रययत्नतैर्विकारैरूपलक्षितः ॥

अति पिता शोक करने से जो यक्ष्मा रोग होता है उसमें यह लक्षण होते हैं शरीर का ढीलापन और धातुसयके बिना भी जो धातुसयके लक्षण हैं सब मिलते हैं । शोक यह है कि शरीर के रक्त मांसादि सभी को दहन कर देता है, जैसा किसी कवि ने कहा है "पितापित्तो समा-
ख्याता ततोपित्ता गरीयसी । पितादहति निर्जीव स्सजीवोदहति
पित्तपः" पिता (जिस चुनी हुई लकड़ियों पर मुरदा रख के फूटा जाता है) और पिता (शोक, क्रोध, रंजनादि) इन दोनों में कवियों ने समानत्व दिखलाया है और अन्त में पिता से पिता को बड़ा माना है इस लिये कि पिता बिना जीव के शरीर को जलाती है और पिता जीव मर्दित इस स्थूल शरीर को दहन करती है तो भला कहिये जब

चिन्ता में ऐसी दाढ़कता शक्ति है कि बिना रोग ही रक्त मांसादि सभी को जला देती है तो इस स्थल में रोग एक नाम मात्र समझना चाहिये ऐसी अवस्था में (स्वयोनियर्तन द्रव्याण्येवप्रतीकारः) क्या होगा? चिन्ता को दिल से हटाना । यदि कोई सन्देह करे कि चिन्ता कारण है उसका कार्य यक्ष्मा रोग है और प्रायः स्थलों में कार्य दृश्यमान होने से कारण नाश हो जाता है तो चिन्ता कारण है उसका यक्ष्मा रोग हुआ और उसके लक्षण अंग शिथिलतादि उपस्थित हैं उसके ऊपर ध्यान देके सिर्फ नाशमान कारण का शांतीपाय करने से यक्ष्मा रोग का नाश कैसे होगा? यद्यपि कारण नाशमान सा देख पड़ता है किन्तु आभ्यन्तरिक उसका दीप जला रहता है इसलिये बिनाकारणके नाशकार्यका नाश नहीं होता, चिकित्सकगणों को चाहिये कि कारण पर ध्यान अवश्य रक्खा करें ॥

जराशोषि लक्षण ।

जराशोषीकृपिमन्द वीर्यवृद्धिवलेन्द्रियः । कम्पनीरुचि-
मान्भिन्न कांस्यपाचहतस्वरः ॥ टीवतिष्णोष्णोद्दीनं गौरवा-
रुचिपीडितः । संप्रसृतास्यनासाक्षः शुष्करूक्षमलच्छविः ॥

एक प्रकार का यक्ष्मा युद्धापा होने से होता है जिसमें शरीर दुबली अल्प वीर्य वृद्धि और इन्द्रियों का काम शिथिल, शरीर अथवा हाथ मुख का कांपना, खाना अच्छा न लगना और जैसा फूटा कसे का घरतन बजाने से बजता है वैसा गले से शब्द निकलें, खांसते २ पसीना निकल आये, दयाकुल हो जायंती भी फफ न निकलै, शरीर में शोष्कापन, मुख का जायका खराब, मुख, नाक और भांसेंसे पानीका बहना, सूखा और रुखा दस्त का होना इत्यादि लक्षण होते हैं ॥

यह यक्ष्मा उस युद्धापे में बहुत कम होता है जो क्रमशः अपनी अवस्था पर जाके युद्धापा होते हैं खान कर उस युद्धापे में होता है जो

अकाल लड़ चुके हैं अधिकतर ४० वर्ष की कम अवस्था वाले की यक्ष्मा रोग होता है ॥

अध्व शोषि का लक्षण ।

अध्वप्रशोषी स्वस्तांगः संभ्रष्टपुरुषश्च विः । प्रसुप्तगान्धाव-
यवः शुष्कलोमगलाननः ॥

तीसरे प्रकार का यक्ष्मा रोग अधिक रास्ता चलने से होता है । जिसका लक्षण यह है, सम्पूर्ण शरीर का थिथिल होना, कान्ति शरीर की जाती रही, हाथ पैर शून्य हो जाय याने घुटकी काटने से बोध न हो (लोम) जो पिपासा त्याग है वह और गला मुँह सूखता रहे इत्यादि ।

व्यायाम शोषि लक्षण ।

व्यायामशोषीभूयिष्ठ मेभिरेवसमन्वितः । लिंगैरुतः क्षत-
कृतैः संयुक्तश्च तन्विना ॥

अधिक कसरत या अन्य प्रकारकी मेहनत करनेसे जो यक्ष्मारोग है उसमें प्रसुप्ता करके अध्वशोषी के लक्षण मिलते हैं और क्षत रोग के बिना जो चरक्षत रोग के लक्षण हैं यह भी मिलते हैं । कसरत करने की जैसी विधि प्रथम खण्ड के आरोग्य दर्पण में लिखी है उसके परिशिष्टाफ करने से निस्तन्देह यक्ष्मा का रोग होता है ॥

रक्तक्षय शोषी व्रण शोषी और उरक्षत के लक्षण ।

रक्तक्षयाद्देहनाभिस्तथैवाहारयन्त्रणान् । व्रणितस्य भवेच्छोषः
स चासाध्यतमस्त्वतः ॥ व्यायामभाराध्ययनै रभिघाताति-

मैथुनैः । कर्मणाचाप्युरस्येन बक्षीयस्यविदारितम् ॥ तस्योर-
सिचतेरक्तं पृथःश्लेष्माचगच्छति । कासमानच्छर्दयेच्च पीतरक्ता
सितारुणम् ॥ सन्तप्तवचाःसोऽत्यर्थं दूयनात्परिताम्यति ।
दुर्गन्धवदनीच्छासो भिन्नवर्णस्वरोजरः ॥

शरीर से छेहू के निकल जाने से अथवा अन्य किसी कारण वशात्
रक्तक्षय से, अत्यंत भ्रंग दर्द से, भोजन के कुपच्य से और, ध्रुण (फोड़ा)
या छे पुरुष के भी यक्ष्मा रोग हो जाता है यह अत्यंत असाध्य होता है
अत्यंत कसरत करने से, खोका उठाने से, बहुत दिन रात पढ़ने से, चोट
के लगने से, अत्यंत मैथुन करने से, छाती के जोर से जादा काम करने
से जिमका हृदय फट जाता है । उसके फटे हुये हृदय में रक्त के साथ
पीय और कफ दीहता है और उसके खांसी में छेहू और पीछा, काळा
छाल रंग का बनन होता है । उस रोगी का हृदय अत्यन्त गरम, पीछा
से युक्त और कांपता है और मुत्र से दुर्गन्ध आती है और ऊपर को
स्वास चलती है और स्वर भंग माने गला बैठ जाता है ॥

मैथुन शोपि के लक्षण ।

व्यवायशोपीशुक्रस्य जयलिंगिरुपद्रुतः । पांडुदेहायथापूर्वं
क्षीयंतेचास्यधातवः ॥

जति मैथुन करने से जो यक्ष्मा होता है उसके लक्षण यह है । देह
की रंगत पीछी हो जाय, और सात धातु जो हैं वे क्रमशः लुप्त हो
हों जिसे धीरे से मज्जा, मज्जा से हड्डी और हड्डी से मेद इसी प्रकार रक्त
पर्यन्त क्षीण होता जाय तथा शुक्रक्षय के लक्षण भी मिटें शरीर लुप्त
जा० द० में लिस जाये हैं ॥

असाध्य लक्षण ।

महीशिनंक्षीयमाण मतीसारनिपीडितं । शूनमुष्को
दरंचैव यन्निर्गणपरिवर्जयेत् ॥ शुक्लाक्षमन्नदेष्टार मूर्ध्वश्वास
निपीडितं । कृच्छ्रेण बहुमेहतं यच्चाहतौहमानव ॥

जो राज रोगी भोजन अधिक करे और रोज २ दुपड़ा होता जावे
दस्त पतले, अंहकोश और पेट पर सूजन होने से वैद्यवरों ने असाध्य
कहा है सुन्दर यश का चाहनेवाला वैद्य ऐसे रोगी को त्याग करे । जि-
सके नेत्र सफेद, अन्न पर ग्लानि, ऊर्ध्व श्वास करके पीड़ित और प्रमेह
सहित बहुत कठिन से आरम्भ्यार मृतता है। एतादृश लक्षण युक्त यक्ष्मा
रोगी को अवश्य मारता है ॥

अथ चिकित्सा योग लक्षण ।

ज्वरानुबंधरहितं बलवन्तं क्रियासहं । उपक्रमेदात्मवन्तं दी-
प्ताग्निमकृशं नरं ॥

जब जो यक्ष्मा रोग आराम होने लायक है उसका लक्षण कहते हैं ।
जिस रोगी के शरीर में ज्वर का तपन न रहता हो, चलने फिरने की कुछ
ताकत बनी हो, तेज दवा को सह सकता हो और पथ्य करनेवाला हो
जिसको खाना पच जाता हो और बहुत दुबड़ा न हो सो उसकी चि-
कित्सा करना क्योंकि यहां तक प्रथम दर्जा है रोगी निस्सन्देह आराम
प्राप्त हो सकता है ॥

यक्ष्मा रोग में पथ्याऽपथ्य ।

यक्ष्मा रोग वाले के लिये प्रथम पथ्य लिखते हैं । पुराने धान का
चावल, अथवा साठो के चावल का भात, खिलका रहित मूंग की दाल,

संध्या समय भोजन के पहले थोड़ा सा बल कारक शराबका पीना, मांस खानेवालों के लिये जवान बकरे के मांस का जून और जिस रोगी का मांस-सूखता जाता-हो उसे केवल मांस खाने वाले जानवरोंका मांस (जैसे गिद्ध आदि) जीरा के साथ बन्ना के खिलाया हितकारी है । नी तथा प्रकरी का दूध, घी, मक्खन, तरकारी में केला, कटहर, प्याज, आलू किन्तु रोज २ नहीं । रामनेनुमा, (भट्टू) और सन्निजन की छीनी, जलो में पक्का केला, पक्का सूख सीठा आम, भावला, छुहारा, नीठा पालसा, ताजा मारियल, मधीन ताड़ का जल और मुनक्का, मसाला में सौंफ, जीरा, कालीमिर्च, लौंग, दालचिनी और पिआज । कर्म-साम सधेरे हवा खाना, भीषधियों का बनाया उत्तम तेल शरीर में मर्दन करा के जाड़े में गरम जल से और गरमी में शीतल जल से स्नान करना, गरमी में खुले खेत या मैदान में, जाड़े में पटे मकान में और वर्षा काल में हवादार कांटे पर सोना, चन्द्रमा की रोशनी में रहना, उत्तम सुगंधित पुष्पों का माला पहनना, गान सुनना, रूपवती स्त्रियों से हँसी दिखनी करना किन्तु संभोग नहीं करना इस प्रकार स्त्री भी रूपवान पुष्पों से । यदि शरीर की सामर्थ्य न बंकी हो तो हान, दान, देव पूजा और मिहान ब्राह्मणों का रोज २ सतकार करता रहे और कोई किसम का शारीरिक तथा नाभसिक परिश्रम न करे, रंज शोक फिकिर क्रोध मन से भुला दे यदि संसार में कुछ दिन जीने की आशा रखता है ॥

अपथ्य ।

दस्त लाने की बहुत दवा खाना, दिशा पेशाब को रोकना, स्त्री प्रसंग करना, शरीर से पसीना निकालना, बन्द मकान में या जहाँ अत्यन्त गरमी पड़तीहो जिस स्थानमें पित्त अग्रसक्त हो वहाँ रहना, नेत्रों में रोज श्रंजन लगाना, बहुत जागना, किसी प्रकार का अधिक परिश्रम करना, रुखा भोज जैसे माजरा जौमरी, आरहर चने का अर्थन आदि,

एक भोजन न पचा हो दूसरा भोजन कर लेना, अधिक पान का बोझ
बनाना, कुम्हड़ा, सेम ककड़ी, कुलथी, उरद, लहसुन होंग छाल मिरचा,
खटाई अचार साग पात दही तेल की बनाई चीजें, मिरका रैतुआ व-
हुत कटु वस्तु, इन सबों को क्षय रोग वाला पुरुष सावधानी से त्याग
करे ॥

राजयक्ष्माचिकित्सा ।

सर्वस्त्रिदोषजीयक्ष्मा दोषाणां तु बलावलं । परीक्ष्यावस्थि-
तं वैद्यः शोषिणं समुपाचरेत् ॥

घरक का मत है कि किसी किसम का राज यक्ष्मा हो मयही त्रि-
दोषज हैं इसलिये वातादिक दोषों का बलावल विचार कर शोषवाले
की चिकित्सा करना उचित है ।

बलिनां बहुदोषस्य पञ्चकर्माणि कारयेत् । यक्ष्मिणः जीण-
देहस्य तत्कृतं स्याद्विषोपमम् ॥ शुक्रायेत्तं वलं पुंसां मलायत्तं-
हि जीवितं । तस्माद्यत्नेन सरक्षेद्यक्ष्मिणो मलरितसौ ॥

अगर राजयक्ष्मा रोग वाला मनुष्य हो और उसके वातादिक दोष
बढ़े हों तो मननादि पञ्च कर्म अर्थात् स्नेह, स्वेद, बसन, घिरेयन और
मस्ति क्रिया द्वारा रोगी के शरीर को शुद्ध करना क्योंकि उत्तम प्रकार
पञ्चकर्म कराने से सब प्रकार के रोग नष्ट हो जाते हैं । यदि रोगी रक्त
मांसादि से क्षीण हो तो उसे कभी पञ्चकर्म नहीं कराना चाहिये क्योंकि
क्षीण देहवाले को पञ्चकर्म बियं के समान मारता है । इसका समर्थ यह
है कि मनुष्यों का बल धातुके, माधोग्रही और जीवन मल (दस्त) के स्याधीन
है [इसी से प्रमेह और हीजा रोग में जीव जल्द मरजाते हैं] तिस वास्ते
यक्ष्मा रोगी के मल और बीर्य की रक्षा यंत्र से करनी चाहिये ।

पञ्चकर्म ।

बलवान् रोगी हो जाने चलने फिरने की अच्छी ताकत हो, भोजन का यथार्थ परिपाक होना आदि ठीक हो और रोग के लक्षण मिलते हों तो पञ्चकर्म अवश्य कराना ।

स्नेहकर्म ।

स्नेह क्रिया की विधि अनेक प्रकार की है जिसे पञ्चकर्म में लिखेंगे वृक्ष स्थूल में साधारण प्रकार से लिखे देते हैं । अनुष्य के रक्त या वायु बाह्यभी नसें में मेल बिपक जाता है जिस्से रक्त वायु के समतागमन में रुज पड़ता है, स्नेह क्रिया से सब मेल फूल जाते हैं और स्वेद कर्म द्वारा, वही सब मेल रोग मार्ग से बाहर निकल जाते हैं जिस्से समस्त नाड़ियां शुद्ध हो जाती हैं ।

यस्मा रोग प्रायः त्रिदोषज होता है किन्तु जिस दोष को बढ़ा देते उसी के शमनार्थ स्नेहपान करावे ।

केवलपैत्तिके सर्पिर्वातकीलवणान्वितं । देयं बहुकफोवन्धि
व्योमक्षारसमन्वितं ॥

यदि पित्ताधिक हो तो केवल घृत पान करावे, वाताधिक में ल-
यण युत घृत पान करावे और कफाधिक में चीता, शोंठ, पीपर, मिर्च
और जयाखार के साथ घृतपान करावे । उसकी तरकीब यह है कि
पित्ताधिष्य में आधपाय गरम पानी में दो तोला घी ढाल के पिलावे,
वाताधिक में आधपाय गरम जल में दो तोला घी ६ मासा सेंपानोन
ढालके पिलावे, कफाधिक में आधपाय गरम जलमें घी दो तोला, चीता
१ मासा, शोंठ २ मासा, छोटीपीपर आधी, मिर्च १० दाना और जया-

खार ४ मासा सबों को महीन चूर्ण कर घृत समेत गरम जल में डाल के पिलादेवे ।

“शीतकालेदिवास्नेह मुष्णकालेपिवेत्तिशि”-शीतकाल हो तो दिनमें प्रातःकाल और गरम दिनों में दीपक जलने के बाद स्नेह पान करावे । अगर स्नेह न पचे तो थोड़ा २ कई बार गरम जल पिलावे । जिन को स्नेह पीने में रुचि न हो तो सभी स्नेह को गरम भात में मिला के खिलावे । अपवा भात के साथ भी जिन्हे न पसन्द हो तो निम्बिलि-खित स्नेह पान करावे ।

शर्कराचूर्णसंयुक्ते दोहनस्थेष्टतेनुगां । दुग्धाक्षीरपिवेद्रूजः
सदाःक्षेहनमुत्तमं ॥

वह बतैन जिसें दूध दुहा जाता हो सभी बतैन में घी और नि-
श्री डाल के सभीमें गी को दुह के तत्क्षण गरमागरम उस दूध के पिला
ने से तत्काल स्नेहन याने स्नेह का काम होता है । इसी प्रकार पांच
सात अपवा दश दिन जब तक उत्तम प्रकार से स्नेह न हो पान करावे,
पाने को मुलायम मिशरी आदि खिलावे । स्नेह पान करने वाला बहुत
मेहनत, फल फलहरी अतिशीतल पदार्थ का सेवन, दिशा देसाय का
रोकना, रात को जागना दिन को सोना, कफकारक और रुखे अन्न
इत्यादि त्याग करे ।

स्नेह का फल ।

दीप्ताग्निःशुद्धकोष्ठश्च पुष्टधातुर्दृढेन्द्रियः । निर्जरोवलवर्णा-
ढ्यः स्नेहसेवीभवेन्नरः ॥

स्नेह पान करने से अग्निप्रदीप्त, कोष्ठपरिस्कार, धातुपुष्ट, बल उत्-
थाह की वृद्धि और शरीर का पोषापन नाश और मातादि यथा स्थान
स्थित होता है । जब देखे कि स्नेहित रोगी का मल सिग्ध और अङ्गों
में कोमलता तथा सिग्धता, शरीर हलकी और इन्द्रियां निर्मल यह
लक्षण देखपड़े तो साधारण प्रकार से स्वेद क्रिया द्वारा शिराओं के
मेल निगंत कर देय । लेकिन यदि रोगी दुर्बल हो और निम्नलिखित
लक्षण मिलते हों तो स्वेद कर्म नहीं करना, जैसे—प्रमेह, घाघ, अतीसार,
वमन, जीधूमना, शिरदुर्द होलदिल, अधिक पीयास । ऐसाही जरूरत
जानपड़े तो सुदु स्वेद कराना ।

स्वेद कर्म विधिः ।

सर्वान्स्वेदान्निवातेच जीर्णान्तेवाऽवचारयेत् । स्वेदाद्वातु-
स्थितादोषाः स्नेहक्तिन्नस्यदेहिनः ॥ द्रवतांप्राप्यकीष्ठांतर्गत्वा
यांतिविरेकतां ।

जितने प्रकार के स्वेद हैं सबों को निवात स्थान (जिस पर में
हंसा न जाता हो) में करना चाहिये । स्नेहपान से स्निग्ध हुये रोगी
के त्वचा आदि और धातुओं में जमेहुये जो दोष हैं वे पतले होके कोठमें
प्राप्त होते हैं ये ही सब पसीना से निष्कल आते हैं ॥

स्वेद ॥

स्वेद भी चार प्रकार का है हिंसा ब्यास स्वेद प्रकरण में करेंगे इस
स्थल में यक्ष्मा वाले को जो स्वेद की जरूरत है उसे लिखते हैं । स्वेद
कर्म इसलिये कराया जाता है कि जो स्नेह कर्म से शिराओं के भीतर
का मेल फूल जाये हैं वे रक्त मार्ग (वाह के रास्ते) होके निकल जाय

जिसे नशों के मुख खुल जाय जिससे प्रायः रोगी को सुस्ती, जकड़न, ऐंठन, भारीपन मालुम होता है न हो । एक बात इस समय हमको और कह देना चाहिये, यह यह है कि पञ्चकर्म में दो बात है, कितनों का मत है कि स्नेह, स्वेद, ब्रजन, निरेचन और वस्ति क्रिया क्रमशः कराना और केचित् आचार्यों का मत है कि "प्रथमं ब्रजनं पश्चाद्विरेकश्यानुवासनं । एतानि पञ्च कर्माणि निरुद्धा नायनं तथा" पहले ब्रजन, फिर जुलाब, फिर अनुवासन, निरुह और नायन । इसमें हमारी सम्मति नहीं है क्योंकि इससे यथार्थ शरीर संशोधन नहीं होता क्योंकि शार्ङ्गधरमें साफ लिख दिया है:—

येषां नस्यं निधातव्यं वस्तिश्चापि हि देहिनां । शोधनीयाश्च
ये केचित् पूर्वस्वेद्याश्च ते मताः ॥

नस्य अर्थात् नाक में दवा बुझाने के लायक मनुष्य को, वस्ति कर्म यानि पिचकारी देने के योग्य और जुलाब दिवाने के योग्य पुरुषों को पहले शरीर से पसीना निकलवाय के पीछे नस्य आदि दिवाने का प्रयोग करना उत्तम है । और यह सिद्धान्त है कि बिना स्नेह के स्वेद उत्तम नहीं होता तो इन्हीं सब वज्रहातों से सिद्ध होता है कि शरीर शुष्यर्थे स्नेहादि पञ्चकर्म यही लाभदायक है ॥

द्वस्वेद ॥

यत्ना वाले को सिवाय द्रव्य स्वेद के अन्य स्वेद कदापि न देय वह भी सूक्ष्म, कारण यह है कि अजीर्ण वाला, बहुत कमजोर, प्रमेह रोगी, घाव वाला अथवा जिसके मुख से सूज जाता हो, बहुत प्यास से युक्त, जिसे दस्त पतले जाते हों इत्यादि उपद्रव संयुक्त रोगी को स्वेद न कराया, सो यत्मारोग बिना घातुरोग के होताही नहीं इसलिये बहुत सूक्ष्म स्वेद कराना चाहिये ॥

साधारण स्वेदविधि ॥

जलमी, पीली सरसों, कुरपी, सौंफ, देवदारु, सफेद जीरा, अरण्ड कीं-जड़, सहिजन की छाल, असगन्ध, घेल की छाल, समालू की पत्ती और सेन्थानेल, उक्त सब औषधों को एक २ छंटाक से एक बड़े घड़े भर जल में रात को भिजा देय, सघेरे पकावे, घड़ा का मुख ढपा रहै जब पानी खूब परंजाय चूहे से सतार लेय जब घोड़ा गरम सहने लायक जल हो जाय, रोगी के समस्त शरीर में छाछादि अथवा मारापण तैल या कालीतिल का तैल मालिश करके निवास स्थान में जहां हवा का ताप न हो एक गहरी कठीती अथवा कोई चौकोन बाक्स जिसमें से पानी न बहै उसी में रोगी को बैठाय ऊपर से दोनों कानों से उसी काढ़े की महीन धार छोड़े उसी प्रकार एक दिन बीच में नागा दे के तीसरे दिन फिर स्वेद करै इसी तरह तीन या चार बार करै जब तक शरीर हलकी न हो ॥

शिरामुखैरे।मुकूपैर्धमनौभिश्चतर्पयेत् । शरीरेवलमाधत्ते
युक्तःस्नेहावगाहने ॥ नातःपरतरःकश्चिदुपायोवातनाशनः ।
शीतशूलाद्युपरमे स्तम्भागौरवनिग्रहे ॥ दीप्तिग्नौमार्दवेजांते
स्वेदनाद्विरतिर्गता ।

इस अवगाहन स्वेद से सब नसों का और रोमों का मुख खुल कर शरीर की वृत्ति होती है याने नाड़ियों के मुख जो बालों के छिद्र हैं उस में अवगाहन का माप प्रवेश होके फिर रक्तादिकों के बहने वाली नाड़ियों में पहुंच कर शरीर को शुद्ध और मल को प्राप्त करता है । इसे बढ़कर दूसरा मायु नाशक उपाय नहीं है, जब शीत और गूठ की शक्ति हो एवं शरीर का जकड़न और भारीपन जाता रहे, मुख का सरस

और शरीर मुलायम हो तब स्वेद कराना बन्द कर देय और स्वेद कराने के पश्चात् रोगी के शरीर में हवा नहीं लगने पावे क्योंकि मुठे हुये तबों में शीघ्रही हवाप्रवेश हो जाता है किन्तु स्वेदके बाद रोगी के नेत्र और हृदय को केयड़ा जल या गुलाब जल से धो देना चाहिये ॥

सम्यक्स्विन्नविमृदितं स्नानमुष्णांबुभिः शनैः । भोजयेच्चान
मिष्यन्दि व्यायामंचनकारयेत् ॥

स्वेद कराने के थोड़ी ही देर पीछे रोगी के संतप्त शरीर में तैल मर्दन करके गरम जल से शनैः २ स्नान करा दे और कफ न पैदा होने पावे ऐसा भोजन करावे किन्तु परिश्रम किसी किस्मका न करने दे ॥

वमन ।

स्वेद कराने के दो तीन दिन के बाद वमन कराने की क्रिया करे अगर कफ पित्त भूरा हो तो पहिले उसे तर कर लेय तब वमन करावे, यदि घड़े हों तो उसी दिन वमन करावे किन्तु निम्न लिखित लक्षण युक्त रोगी को वमन न करावे जैसे—यवना के लक्षण के अतिरिक्त रोगी को नेत्र से कफ दिखता हो, पेट में कोई बिगारी हो, यगुत दुबला हो, शक्ति हृष्टि, गर्भिणी स्त्री, बालक, शरीर में जोड़ा फुन्सी हो या मुँह से रुधिर गिरता हो या आप ही वमन होता हो, दंस्त में कीड़े आते हों और भोजन की शक्ति न हो तो उसे वमन नहीं कराना चाहिये और यह जो लिखा है ॥

शरत्काले वसन्ते च प्रावृट्काले च देहिनाम् । वमनं रे-
चनंचैव कारयेत्कुशलाभिपक् ॥

(शरत्) कार्तिक एगहन (वसन्त) कार्तिक और चैत्र (माघ)
भाषाण और आयण इन महीनों में चतुर् वैद्य व्रत करावे और जुलाम
देवे, सो यह नियम आरोग्य-पुरुषों के लिये बांधा गया है जो सालियाना
जुलाम लिया करते हैं रोगियों के लिये नहीं क्योंकि रोगियों के लिये
सगय परखा जाय तब तक रोगीही चल सके, रोगियों के लिये हर स-
मय हर महीना जुलामादि देने के लिये शास्त्रकारों ने कह दिया है ॥

व्रत कराने के एक दो दिन पहले मुलायम मूंग की खिचरी,
यथागू या दूध भात अथवा अन्य कोई एक कृत पदार्थ भोजन करावे
और जिस दिन के कराना हो उस दिन भी दो तीन घंटे पहले मूंग की
पतली दाल बना के पिलावे ॥

कण का वेग अधिक हो तो छोटी पीपर २ मास। मैनफल ६ मास।
सैंधाना ६ मास। एक सेर पानी में लोस देव जब तीन पाव पानी रह
जाय मलकर छान लेय फुल गरम रहे तब पिला दे याद पिलाने दया
के रोगी को गोड़े से। छि के बैठाने जेने कंट बैठते हैं अर्थात् कंट के
बासम बैठाने के सम के करावे । रोगी चाहे गले में अँगुली डाल के कै
करे अथवा एरंड पत्र की डंडी गले में प्रवेश कर व्रत करे क्योंकि बिना
किसी वस्तु से गले में सुरसुराहट पहुंचाये व्रत अच्छी तरह नहीं होता
और एक आदमी शिर के। और एक आदमी दोनों प्रसलियों को सह-
राता रहे । वैद्य यहां अवश्य मीजुद रहे क्योंकि सायत रोगी घमड़ाकर
के करनेसे हिचक जाय क्योंकि अच्छी तरह व्रत न होनेसे मुखसे छार गिरने
लगता है, हृदय में पीड़ा और कोष्ठ में खजुली होने लगती है तथा अ-
धिक व्रत होने से भी पियास, हिचकी, मिहोसी, जीभ निकलना, नेत्र
का चञ्चलपना, ठोड़ी जकड़ जाना, मुख से रुधिर चूकना, कण्ठ में पीड़ा
आदि उपद्रव हो जाते हैं इस लिये व्रत कराते समय वैद्य का रहना
यत्न सज्जन ही ॥

थोड़े दिन की बात है कि यहाँ ग्राहगंज में लाला बाबूशाल कोठीवाल के छोटेदमाद लालाजोखईलालजी सबेरे सिर्फ भीतरी गर्मी निवारणार्थ वमन किया, अधिक वमन होने से ठोड़ी जकड़ गई और जोभ घुस गई विद्वांस हो कर गिर पड़े, बाका बंद हो गया, लोग कोठो में उठा लीये, गौ दान होने लगा, ब्राह्मणगण पूजन पाठ करने लगे वड़ा हाहाकार मच गया हमारे बुलाने को कोठो का सुतार दौड़ा आया हम भी गये, देखा कि भो० फजली-हसन सहर के एक नामी हकीम बैठे हैं कपड़े की दो मोटी वस्ती बनाये छौंक लाने के लिये नाक में प्रवेश कर रहे हैं, और दो कपड़ा गुलाब में तर कर छाती और पेट पर रखे हैं और बारम्बार गुलाब जल पिछाते हैं, किन्तु गुलाब जल मुख में देत ही रोगी धन्वाकार हो जाता था हम भी बैठ गये और लोगों से विद्वांस होने का कारण पूछा तो मालूम हुआ कि वमन किया उसी के साथ ही विद्वांस होकर गिर पड़े और बाका बंद हो गया, हकीम से हमने कहा आप यह क्या करते हो, दूगके शिर पर गरमो चढ़ने से ठोड़ी नहीं जकड़ी, गले का नष टोला करिये और जीभ में पानी लाइये अधिक की होने से जीभ भीतर चली गई है। वैद्यों की चिकित्सा हकीमों को कहां पसन्द, हकीमने कोठीके गुमास्ता भू० इनुमान प्रसादसे कहा आप वैद्यजी की दवा कीजिये हमको दारामंज जाना है और यह रोगी तीन चार घंटे में मर जायगा, कैसाह लोगोंने समझाया कुछ भी न सुना चल दिया, हमने गुलाब जल को जगह उष्ण गौ का दूध पिछाना शुरू किया, गले के रंगों में विषगर्भ तैल मर्दन कराय द्रव स्वेद करा दिया और थोड़ा सा नींबू का अचार मगाय जैसा ही उसका गूदा मुखमें दिया कि भट रोगी बोल उठा और कहा कि जरा सा यही दवा और खिलाओ, सब लोग अचंभेमें आ गये, रोगी कहने लगा कि गुलाब जल मुख में देत ही मालूम होता था कि मानों पूरी

से किसी ने छाती को चाक कर दिया, बोलने को बद्धत चाहते थे मुह नहीं चढ़ता था होस हवास हमारा सब दुरुस्त था, जब से आप दूध पिलाना शुरू किया उसके कुछ चैन मालुम होने लगाया इस अचार के खिलाति ही हमारा वाक खुल गया और हम बोलने लगे अब हम मजे में हैं । इससे पाठकगण मालुम कर सकते हैं कि चिकित्सा का कर्म करना सफल बात नहीं है कितने जुम्मेदारी का काम है कि यदि बيمारी पहचान में आ गई और ठीक दवा दिया गया तो रोगी जल्द अच्छा हो गया व समझ में आया तो रोगी को समालय पहुँचा देना कठिन नहीं है इस लिये बिना शास्त्र का अध्ययन दवा करना महा हत्या का काम है ॥

वमनान्तः प्रविष्टायां जिह्वायां कवलग्रहः ।

अगर अधिक वमन होने से जीभ भीतर घुस जाय तो कवलग्रह अर्थात् खट्टे पदार्थ का गोला बना के मुख में दे अपवां रोगी के सामने बैठ के अन्य गनुष्य खट्टे फलों को खाये तो उनके देखनेसे रोगीकी जीभ में पानी छुंटे जिस्से जीभ कोमल हो जाये ॥

वमनपर पथ्य ॥

वमन कराए हुये रोगी को तीसरे पहर जब तेज भूख लगे तब धुली मूंग और पुराने चावल का सूप या साबूदाना या जङ्गली देश के जीवों के मांस का सूप रुबि के अनुसार देवे और जिस दिन वमन कराये गरिष्ठ भोजन, शीतल जल, तेल की मालिस करना आदि वर्जित करे ॥

उत्तमवमन के लक्षण ॥

हृत्कण्ठशिरसांशुदिं दीप्ताग्नित्वञ्चलाघवम् । कफपित्तवि-
नाशश्च सम्यग्वान्तस्यचेष्टितम् ॥

अच्छी तरह समझ हो जाने से यह लक्षण देव पड़ते हैं—हृदय, गला और थिर की शुद्धि अर्थात् कफ पित्त के उपद्रवों का पूर्ण रूप से शान्त होना, भूख का लगना, शरीर का हलकापन और कफ का नाश हो तो जानना चाहिये कि समझ अच्छा हुआ है । यह समझ कराने का साधारण नियम कहा गया है विद्वान् लोग इसके अतिरिक्त भी अपनी बुद्धि मता के अनुसार देश काल अवस्था रोगी की प्रकृति की परीक्षा करके अन्य औषधियों के द्वारा अथवा उपायों के द्वारा समझ करा सकते हैं ॥

विरेचनविधि ॥

समझाने विरेचन पाने समझ कराने के बाद दस्त लाने की दवा जल्द देनी चाहिये । यह बात हम पहलेही कह चुके हैं कि रोग विशेषणें समाप्त परखने की जरूरत नहीं है बल्कि थोड़ी सी बुद्धि खरब करने का काम है, ये शास्त्रकारों ने लिख भी दिया है:—

सिग्धस्त्रिन्नस्यवान्तस्य दद्यात्सम्यग्विरेचनम् । अर्वातस्य
त्वधःस्तो यहणीष्ठादयेत्कफः ॥ मन्दाग्निगौरवकुट्या क्जन
येवाप्रवाहिकां ।

पहले जो पान, फिर स्वेदकर्म बाद समझ कराके जो जुलाब दिया जाता है वही उत्तम जुलाब होता है और जो लोग बिना के किये जुलाब छि छेते हैं तो उनका कफ नीचे की जांके ग्रहणी को आरब्धोदित कर लेता है जिससे अग्नि की मन्दता, देह में भारीपन और बड़ा भारी जतीमार का रोग होता है ये प्रायः देखने में भी आता है कि जो लोग अटकलपरछू जुलाब छि छेते हैं उनकी बिमारी और भी बिगड़ जाती है । मसल वन जुलाब के योग्य और अयोग्य रोगों को दिखलाते हैं ॥

जुलाबके योग्य रोगी ॥

जीर्णज्वरीगरव्याप्तो वातरक्तीभगन्दरी । चर्शःपांडूदरग्रंथि
हृदिद्वेगारुचिपीडिताः ॥ येनिरोगप्रमेहार्ता गुल्मप्लीहव्रणा-
र्दिताः । विद्रधीर्हृदिविस्फोट विषूचीकुष्ठसंयुताः ॥ कर्णना-
शाशिरावक्त गुदमेढ्रासयान्विताः ॥ यकृच्छेयाक्षिरोगार्ताः
कुम्भिचारानिलादिताः । शूलिनामूत्रघातार्ता विरेकाहान-
रामताः ॥

इनने रोगियों को जुलाब देना लाभदायक है (जीर्णज्वरी) पुराना
मुष्कार जीर्णज्वर और यक्ष्मा वालेको (गरव्याप्त) जहर खालिया हो या जह
रीली चीन्हेके खानेसे अग्नि घनैरह जिसका बिगड़ गया हो, आत रक्तरोगी,
भगन्दर रोगी (चर्शः) आवासीरवाला, पांडुरोगी, उदररोगी, ग्रंथिरोगी जि-
सके हृदय में दर्द और खाना अच्छा न गालूम होता हो । येनिरोग से
पीड़ित स्त्री, प्रमेह रोगी, गुहन आदि उदर विकार से पीड़ित, पिलहरी
रोग वाला और जिसके शरीर में जोड़ा कुम्भी हो, विद्रधीरोगी, ममनरोगी,
(विस्फोटक) नाता की बिनारी वाला (विषूचिका) हैजा यहां पर लोग
सन्देह करेंगे कि जिसे मुद्दी दस्त जारी है उसे जुलाब देना कैसा ? इस
में जुलाब देने की बिधि इस लिये कहा है कि बिध दूषित मल मला-
शय में न रहजाय क्योंकि उसके रहने से अन्ततोगत्या रुचिर पानी हो
के गलद्वारा निरंत होने लगता है ।

कुष्ठ रोग से पीड़ित । कान, नाक, शिर, मुह, गुदा, लिङ्ग,
रोगवाला, यकृत, शोथरोग, नेत्ररोग, कृमिरोग और वायुरोगवाला, शूल
याने उदर दर्द बाधवा अङ्ग दर्दवाला (मूत्राघात) मुजाक रोगवाला
इन रोगियों को जुलाब देना लाभदायक है ।

जुलाव के अयोम्य रोगी ।

वालवृद्धावतिस्त्रिगधः क्षतघ्नोभयान्वितः । आतस्तृपातः
स्थूलश्चर्माभिणी च नवज्वरी ॥ नवप्रसूतानारी च मदाम्निश्च
मदात्ययी । शल्यार्दितश्चरुक्षय न विरेच्या विजानता ॥

निम्नलिखित अनुष्यों को जुलाव नहीं देना चाहिये, जैसे—बालक, बुढ़ापा (जति स्त्रिगध) क्षति स्नेह पागवाला * (क्षत घ्नो) कफ के साथ सूत या पीस जाने वाले को, भय युक्त तथा रास्ते से घका, अधिक पि-यास से दुखित, बहुत मोटा आदमी, गर्भिणी तथा ज्वर वाला, जल्दीही जिसके छड़कापैदा हुआ हो ऐसी स्त्री, जिसकी मुतलक भूख न लगती हो (मदात्ययी) नशीली चीजों के खाने पीने वाला जिसके शरीरमें एषियार छने हों, (रुत) जिसकी शरीर धातु क्षीण वायु के बढ़ने से सुख नहीं हो ऐसे लोगों को क्षतुर वैद्य कभी जुलाव न देवे यदि ऐसा ही जरूरत संनक्त पड़े तो सोते समय कोई गुरु रोग द्रव्य लिखा के सवेरे एक दस्त करा दे । जुलाव तीन प्रकार का होता है । मुलायम, मध्यम और कड़ा, पित्त प्रकृति वाले को मुलायम, कफ प्रकृति वाले को मध्यम और वात प्रकृति वाले को कड़ा जुलाव देना वैद्य यों की सम्मति है किन्तु यक्ष्मा वाले को मध्यम जुलाव देना चाहिये क्योंकि यह रोग त्रिदोष जनित होता है ॥

* इस स्नेह से पंच कर्मवाला स्नेह नहीं समझना यहाँ पति स्नेह से ता-त्पर्य अधिक घृत तेल, सरवा चरवा आदि से है मतलब यह है कि जादा चिकनो चीज पीने वाले को यदि पचा गया तो समस्त नाड़ियों की और मल की शुद्धी आप हो रहती है और न पचा तो दस्त जारी होता है ग्रहणी कमजोर रहती है इस लिये जुलाव का निषेध किया है ॥

मुञ्जिस ।

जुलाय के पहले सर्व साधारण को, प्रकृति के अनुसार मुञ्जिस ज-
रूर देना चाहिये यद्यपि स्नेहादि कर्म से मल मुलायम रहते हैं तथापि
अथो रचनार्थ मल को जात से अलग करना बहुत उत्तम है ॥

इसी हेतु से हकीमों ने मुञ्जिस निकाला है और निहायत लाभ-
दायक है । मुञ्जिस पिचाने से एक बड़ा भारी लाभ यह है कि यदि जु-
लाय प्रकृत के अनुसार न पड़ा, दस्त जैसा होना चाहिये न हुआ तो
भी कुछ मुकसान नहीं होता इसी लिये अमीर लोग हकीमी जुलाय
प्रायः पसन्द करते हैं और हकीम लोग इसका चमंड करते हैं कि इसारे
यहां जुलाय देने की जैसी समझा रीति है, वैद्यक और हाकूरी में नहीं
है । जैसी युनानी जुलाय से रोगी के मल की सफाई होती है, चित्त प्र-
सन्न रहता है, मल नहीं घटता यह बात वैद्यक के जुलायों में नहीं है (आ०
द०) हकीमों के इस बात को सर्वथा मिया नहीं कह सकते किन्तु इतना
तो अवश्य कहेंगे कि जिस बिमार से दवा अधिक न पिया जाता हो
और कफ निजाज वाले को हकीमी जुलाय कम गुण कारक है ॥

यक्ष्मापर मुञ्जिस ।

खीरा का बीज १ तोला, गुलाब का फूल २ तोला, मुलेठी ६ नासा,
सैंफ ३ नासा उन्नाय १॥ तोला, मुनक्का बीज रहित २ तोला, इन सब
दवाइयों को अच्छकरा कर ३ पुहिया मनाले एक पुहिया को राधापाय
जल में रात को भिजा देय सवेरे गन्दाग्रि से पचाये कम डेढ़ छंटाक जल
रहजाय मल के खान लिय और १ तोला मुनकन्द गुलाब, मुनकन्द न मि-
लेतो आधा तोला मिश्री मिला के पिलाय देय, अगर निजाज में सरदी
याने कफ के अधिक लक्षण मिलते हैं तो खीरा के बीज की जगह रेह
की जगह का खाल डाले और मुनकन्द की जगह २ नासा सेंधानान डाले

इसी प्रकार सबेरे तीन दिन मुझिस पिनाये, और मूंग की खिचरी, या, मूंग की दाल पुराने चायन का भात घी हाल के खिलाये । बाद चौथे दिन पित्ताधिक्य प्रकृत वाले को आरोग्य दर्पण प्रयोग खण्ड के ४३ सके में जो हकीमी जुलाब लिखा है पिलाये भिन्न अवस्था और रोगी का मालाबल देख नात्रा को घटा बढ़ा लेना काफी है और क्रिया सब बही है । सभीके भीचे हाफूरी जुलाब लिखा है वह जुलाब भी निहायत मनदा और सब प्रकृति के लिये लाभदायक है वैद्य चाहै तो पिला सकता है । एक एक दिन बीच में खाली देके जुलाब देय, जिस दिन जुलाब देय, उस दिन घृत रक्षित मूंगकी खिचरी खिलाये और निम्नलिखित अपथ्यों से बचावे ।

प्रवातसेवांशीताम्बु स्नेहाभ्यङ्गमजीर्णता । व्यायाममैथुन-

चैव न सेवेतविरचितः ॥

तेज हवा में रहना, बहुत शीतल जल का पीना, घी मलाई आदि का खाना, शरीर में तेल लुपटन का मर्दन करना, सूप पेटभर कर भोजन करना, किसी प्रकार का मेहनत कराना, और स्त्री प्रसङ्ग जुलाब के दिन कदापि सेवन न करे ।

खाली दिनों में अपात जिस दिन जुलाब का नहीं है खिचरी या भात के साथ घी खाना निषेध नहीं है ।

श्लेष्माधिक्य प्रकृतिवाले को यदि हाफूरी जुलाब देना राय न पड़े तो यह जुलाब देना ।

पिप्यत्तीनागरसिंधु श्यामाचिशृतयासह । लिहत्क्षौद्रेण-
शिशरेवंसन्तेचविरचनम् ॥

छोटी पीप १ भासा, शोठ २ भासा, सेंधागोल ३ भासा, तिघारा

के जड़ की छाल ६ मासा और निशोत ६ मासा सब को महीन पीस एक छोला महतमें साग के खिछादे और ऊपरसे चोड़ासा गरमजल पिला दे यह दवा पूर्णमात्रा है बलाबल देखकर चिकित्सक मात्रा घटा बढ़ा सकता है ।

रेचन पर अभया मोदक ।

अभयामरिचंशुण्ठी विडंगामलकानिच । पिप्पलीपिप्पली
मूलं त्वक्पत्रंमुस्तमेवच ॥ एतानिसमभागानि दंतीचद्विगुणा
भवेत् । त्रिवृदष्टगुणाक्षेया षड्गुणाचात्रशर्करा ॥ मधुना
मोदकं कृत्वा कर्षमात्रप्रमाणतः । एकैकं भक्षयेत्प्रातः शीतं-
चानुपिविज्जलम् ॥ तावद्विरेच्यते जंतु र्यावदुष्णं न सेवते । पा-
नाहारविहारेषु भवेन्निर्यञ्चनांसदा ॥

अभया मोदक का गुण ।

विषमज्वर मन्दाग्नि पांडुकासभगंदरान् । दुर्नासकुष्ठ-
गुल्माग्निं गलगंड व्रणोदरान् । विदाहप्लीहमेहंश्च यक्ष्माणं
नयनामयान् । वातरोगंतथाध्मानं मूत्रकृच्छ्राणिचाशु-
रौम् ॥ अभयामोदकाच्चेते रसायनवराः स्मृताः । पृष्टपांश्वो-
रुजघनं कस्युदरुजं जयेत् ॥ सततं शूलनादेव पलितानि
विनाशयेत् ॥

(अभया) बड़ा हड़ जो पांसी में डूब जाता है कस्युदरुज है

जो सब मूत्रों से बड़ा और दस्तावर होता है १ तोला, काछी मिर्च १ तोला, वैतरा शोठ १ तोला, पायमिडंग १ तोला, भावला बीज रहित १ तोला, शुद्ध छोटी पीपर १ तोला, पीपलामूल १ तोला, दासचिनी १ तोला, तेजपात १ तोला, मोषा १ तोला, जमालगोटे के जड़ की छाल (इसी को लोग दातूनि भी कहते हैं) २ तोला, मिश्रीत चाहे काछी हो या सफेद ८ तोला, और मिश्री या चिनी ६ तोला । सब दवाइयों को कूट कपारछन कर ऊपर से मिश्री मिला सहन में सान के चार २ भासे की गोली बनाय लेव, यह पूर्ण मात्रा है, ताकत के अनुसार घेद्य मात्रा को घटा बढ़ा सक्ता है । प्रातःकाल एक गोली खा के ऊपर से शीतल जल पीने से दस्त आते हैं । शीतल जल इस जुलाब का लाग है, बीच २ में थोड़ा २ शीतल जल रोगी बराबर पीता जाय, गरम जल पीने से दस्त बन्द होता है इस लिये जब दस्त बन्द करना मंजूर हो तो गरम जल पी लेवे । किन्तु मुझिस के बाद इस जुलाब का लेना बहुत अच्छा होता है । एक २ दिन बीच में खाली दे के यह जुलाब लेवे, अभया मोदक से निम्नलिखित रोग नष्ट होती हैं ॥

विषमज्वर, मंदाग्नि, पांडु रोग, खांसी, भगन्दर, सब प्रकारका कोढ़, गोला, मवासीर, गलगंड, फोड़ा फुन्सी, उदर रोग, दाह रोग, पिलही, प्रमेह, यक्ष्मा रोग (जिसे प्रकर्ण में लिख रहे हैं) और नेत्र रोग, वात रोग, पेटका फूलना, सुजाक एवं पथरी रोग, यह सब पारान होतेश्च, अभया मोदक उत्तम रसायन है याने हमेशा इसी मोदकका जुलाब लिया करे तो यह मनुष्य जल्द खुदापा न हो, इसके अलावा पीठ, पथुरी, जांघ, पिंडरी, कमर और पेट इनके दर्द को अभया मोदक बहुत जल्द पारान करता है अगर इस मोदक के द्वारा मनुष्य अपने कर्बको सर्वदा दूर करता रहे तो बाल उसके बहुत जल्द न पके किन्तु यहां शोक के ठीक गाने हैं (सततं शीलनादेव पलितानि विनाशयेत्) निरन्तर इन मोदक के सेवन करने से सफेद बाल काळे हो जाते हैं यह बात असम्भव जान पड़ता है

दां मल साफ़ लाने के लिये अगर जुलाब न भी दे के अथवा मोदक खिलाये तो कोई हर्ज नहीं है ॥

इसके अलावा और भी अनेक प्रकार के उत्तम जुलाब हैं जिन्हें निरिचन प्रकरण में लिखेंगे ।

अगर जुलाब की तेजो से दे पर पहुँचने से दस्त अधिक आवे या दस्त न रुके अथवा पेट में दर्द आदि संपद्रव हो तो देा तोला आंत के छाल को पानी में महीन पीस लुगदी बनाय दही में सान जाभी पर छेप कर देय और खाने के बकरी का दूध भात मिश्री या मूंग की खिचारी खिलाये और घोड़े से चावल के धोवन में मिश्री मिला के पिलाये और जुलाब जल अथवा जल से मारम्बर नेत्र मुख धोदिमा करें ।

जुलाब के देने से दस्त खुलासा न आवे अथवा जुलाब पचजाय तो बिना दस्त कराये रोगी को अन्य औषध न देय और पचड़ा के चुपचाप न हो जाय उसके शून्य विचार करें कि जुलाब क्यों पच गया दस्त खुलासा क्यों नहीं आया ? अगर रोगी की प्रकृति गरम है और गरमही जुलाब दिया गया है इस कारण जुलाब नहीं हुआ हो तो गुलकन्द जुलाब सीरसिस्त यगैरह शीतल जुलाब पिला के दस्त कराये और सरद निजाज पाछे को सरद जुलाब के देने से दस्त न आया हो तो हड़ सनाप यगैरह देके दस्त कराये अगर खुश्की के बजे से न हुआ हो तो पुनः स्नेहपान या मुन्जिस अथवा आगवधादि क्लृप पिला के मज के गोला करें और उसके फिर जुलाब दें । जुलाब देने के दो तीन दिन याद तम मस्ति क्रिया याने पिचकारी की बिधि प्रारंभ करें ॥

वस्ति कर्म ।

गुदा के भीतर पिचकारी देने को वस्ति कर्म कहते हैं, यह पंच

कर्म की गन्तिम क्रिया है इन क्रिया से मेदे की सफाई, वायु का नाश, दिल दिमाग में ताकत धातु और वायु की वृद्धि होती है । ये बस्ति दो प्रकार की है एक अनुवासन बस्ति, द्वितीय निरुहण बस्ति ॥

यः स्नेहैर्दीयते सस्यादनुवासन नामकः । कषायक्षीरतैले-
र्योनिरुहः सनिगद्यते ॥

जिसमें घी तैलादि स्नेह युक्त पिचकारी दिया जाता है उसको अनुवासन बस्ति कहते हैं और जिसमें काढ़ा दूध तैल इत्यादि मिश्रित करके पिचकारी देते हैं उसको निरुह बस्ति कहते हैं ॥

पिचकारी के जरिये से गुदा द्वारा मलाशय में जीवध प्रवेश कर मल माफ करने की क्रिया डाकूरी में बहुत अधिक है । वैद्यक में भी है किन्तु वैद्य लोग पदरेण के बारे किसी को अन्यावश्यक पढ़ने पर भी पिचकारी नहीं देते और न अपने किसी शिष्य को सिखाते हैं कि उसी से काम लिया करे इसी से और भी वैद्य बिद्या प्रतिदिन नष्ट भ्रष्ट होती जाती है । पिचकारी की क्रिया ऐसी सहज है कि जरूरत पढ़ने पर मनुष्य अपने लिये आप खुद कर सकता है और बाल बाल कबल अधिक रहने के कारण लोग प्रायः पिचकारी अपने व्यवहार में लाते हैं । नितने गरम जल से रोज मलाशय को धोते हैं । जुलाब लेने के बाद पिचकारी लेने से अवस्था की स्थिति आदि कुछ जैसा की वैद्यक शास्त्र में लिखा है अवश्य होता है ॥

शरीरोपचयंवर्णं बलमारोग्यमायुषः । कुरतेपरिबुद्धिं च
बस्तिःसम्यगुपासितः ॥

अच्छे प्रकार यस्तिशर्मे होनेसे शरीर पुष्ट और बलवान, चेहरेपर रौनक आरोग्यता और आयु की वृद्धि होती है । सुश्रुत महाराज भी चिकित्सा स्याग के पैनीसर्वे अध्याय में लिखते हैं ॥

वीर्येण यस्तिरादत्ते दोषानापादमस्तकात् । प्रकाशयस्थोऽ-
स्वर्गा भूमेरक्षीरसानिव ॥

जैसे आकाश में उदय हुआ सूर्य अपनी किरणों के बल से पानी को खींच लेता है उसी प्रकार प्रकाशय में स्थिर हुई यस्ति अपनी ताकत से पैर से सिर तक के दोषों को नाश कर देती है ॥

सकारांपृष्ठकोष्ठस्यान्वीर्येण लाड्यसञ्चयान् । उत्खातमू-
लान्हरति दोषाणां साधुयोजितः ॥

विधि पूर्वक दी हुई यस्ति (पिचकारी) अपने पराक्रमसे कण्ठ, पीठ और कोठे में सञ्चित दोषों को नाश कर देती है ॥

दोषत्रयस्य यस्माच्च प्रकोपे वायुरीश्वरः । तस्मात्तस्याति-
वृद्धस्य शरीरमभिनिवृत्तः ॥ वायोर्विघटते वेगं नान्यावस्तेवर्तते-
क्रिया । पवनाविद्धतायस्य वेलावेगमिवोदधिः ॥

यह शरीर के सब दोषों में वायुही प्रधान है और वायुही के बजे से कफ और पित्त भी बिगड़ जाते हैं । जब वायु अत्यन्त बढ़ कर शरीर को नाश करने लगता है उस समय पिचकारी को ठोढ़ कर कोई दूसरा कर्म ऐसा नहीं है जो उसे शान्ति कर सके । जिस प्रकार वायु वेग से उ-
छलती हुई समुद्र की तरङ्गों को वेला के सिवाय और कोई नहीं रोक
सक्ता, ऐसेही उस वायु को सिवाय यस्ति (पिचकारी) के दूसरी क्रिया
नहीं रोक सकती है । सम्पूर्ण यस्तिक्रिया यस्तिप्रक्रियाके प्रकर्णमें लिखेंगे ॥

इस स्थल में इतना कहना बहुत जरूरी है कि पिचकारी किसी जानकार (जैसे हात्तर या शिक्षित कम्पीटर आदि) से दिज्ञाना उचित है। अधिक अभ्यास पड़ जाने पर आरोग्य पुरुष स्वयं पिचकारी भी ले सकता है और प्रायः लोग पेट साफ रखने के निमित्त तथा योग साधन करने वाले अभ्यास रखते भी हैं ॥

यह हम प्रथमही लिख चुके हैं कि वस्ति दो प्रकार की है अनुवासन और निरुह । निरुह वस्ति के बिना अनुवासन वस्ति ठीक नहीं है क्योंकि जैसे पहिले नालियो में से कूड़ा निकाल कर केकने से जल सुख से बढ़ता है, ऐसेही निरुह वस्ति के द्वारा नार्गं शुद्ध होने पर स्नेह वस्ति देने से वह चिकनाई सुख से सब स्थानों में पहुंच जाती है तथापि पञ्चकर्म द्वारा शरीर शुद्ध हो गया है तो निरुह वस्ति की कोई जरूरत नहीं है इस लिये विरेचनादि करा के दो तीन अनुवासनवस्ति दे ॥

अनुवासन वस्ति ।

विरेचनात्सप्तरात्रे गतेवातवलायच । कृतान्नायानुवास-
स्याय सम्यग्देयोऽनुवासनः ॥ उत्सृष्टानिलविण्मूत्रे नरेवस्तिं
विधापयेत् । एतैर्हि विहितः स्नेहो नैवान्तःप्रतिपद्यते ॥ स्नेह-
वस्तिर्विधेयस्तु नाविशुद्धस्य देहिनः । स्नेहवीर्यंतथादत्ते देह-
चानु विसर्पति ॥

जब जुलाव को दिये हुये सात दिन भीत जाय, रोगी बलवान हो जाय और चलने फिरने की ताकत आजाय और देखे कि अनुवासन देने की आवश्यकता है, तब उचित रीतिसे अनुवासन वस्ति दे (विधिः) बस्ती देनेके पूर्व रोगी को मल मूत्र त्याग करादे क्योंकि शरीरमें मलमूत्र

के रहने से स्त्रिघता याने चिकनाई भीतर जाने नहीं पाती, इसी लिये स्नेह यस्ती अशुद्ध शरीर वाले को कभी न दे क्योंकि अशुद्ध रोगी के शरीर के मलही चिकनाई के भीर्य को खींच कर अनेक रोग उत्पन्न करते हैं ॥

यस्ती रोगमें देने लायक अनुपासनवस्ति यह है—गंधापुष्पा का जड़, देवदारु, बरियारा की जड़, शलाकर, लाल चन्दन, रासन, मैगल, जेठी मधु, कमलगट्टे की गरी, मदुमसाख, मोषा, पित्तपारपड़ा, खस, निशोय और सुगंधबाला, इन सब औषधों को दो दो तोला ले अच्छकरा कर पांच सेर पानी में रात्रि को भिजा दे सघेरे चूल्हे पर चढ़ाय आंच देय जब चीपाई जल रह जाय, चूल्हे पर से उतार शीतल होने पर मल कर छान लेय, बाद एक सेर काले तिल का तेल कड़ाही में भी उसी काढ़ा के ढाल घीनी आंच में पकाय और तेल का चीगुना गौ का दूध सब को ढाल घीनी आंच में पकाय, जब काढ़ा और दूध बिलकुल जल जाय तेल मात्र रह जाय छान कर बोतल में भर काग लगा के रख देय इसका मात्रा दो तोला से ५ तोला पर्यन्त है, रोगी के बल के अनुसार मात्रा को थोड़े गरम जल के साथ नियोग करे और प्रकृति के अनुसार भोजन देय । सुश्रुत में अनुपासन वस्ति की बहुत कुछ प्रशंसा लिखी है ॥

(१) यस्ती से मूत्राशय और ग्रंथकोश चिकने होते हैं । (२) से नस्तिष्क का वायु दूर होता है । (३) से बल और तेज बढ़ता है । (४) से रस (५) से रुधिर (६) से मांस (७) से मेदा (८) से मज्जा (९) से शुक्र चिकने और सब दोष दूर होते हैं । जो अनुप्य विचार के साथ १८ यस्ती लेता है वह सब रोगों से रहित महा बलवान् होकर १२० वर्षका जीने वाला होता है ॥

वस्ति क्रिया के पश्चात् शेष रोगों को निम्नलिखित दवाइयों से शांति करे ॥

इस बात को प्रथम ही लिख चुके हैं कि पंचकर्म यलवान रोगी को कराना क्योंकि क्षीण मनुष्य को पंच कर्म विषय समान नारक होते हैं। कारण इसका यह है कि मनुष्यों का धन धैर्य के अधीन है और जीवन मृत्यु के अधीन है इसलिये क्षीण रोगी के धैर्य और मृत्यु की रक्षा यत्न पूर्वक करना चाहिये। इसी प्रकार औषध को भी जानना जितना यलवान औषध और मात्रा है यलवान रोगी के लिये दिया जाता है उसके जाधी मात्रा तथा वैसाही जशी औषध क्षीणरोगीको जाधी देना उचित है विपरीति होने से लाभ की अपेक्षा हानि पहुंचना सम्भव है ॥



लवंगादि चूर्ण यक्ष्माधिकारे ।

लवंगशुद्धकपूरं मेलात्वङ्केशरम् । जातीफलमुगैरञ्च
नागरं कृष्णजोरकम् ॥ कृष्णागुरुस्तुगाक्षीरो मासीनीलोत्पलं
कणा । चन्दनं तरुं वाखं कंकालं चैति चूर्णयेत् ॥ समभागा-
निसर्वाणि सर्वेभ्योर्वासिता भवेत् । लवगाद्यमिदं चूर्णं राजाहं
बन्धिदोषनम् ॥ रोचनं तर्पणं वृष्यं त्रिदोषघ्नं वलप्रदम् । हृद्को-
गं कंठरोगञ्च कासं हिक्काञ्चपीनसम् ॥ यक्ष्माण्यंतमकं श्वास
मतीसारमुरःक्षतम् । प्रमेहा रुचिगुल्मादीन्यहणीमपि ना-
शयत् ॥

पञ्चतर्क के पश्चात् इस पूर्ण को जिस की बिधि नीचे लिखते हैं, दोनों समय सङ्गत के साथ या गुलबन्दिया के सरयत के साथ पटा के ऊपर से आधपाव गौ का दूध में मिश्री मिला के पिलाये ॥

छींग (शुद्ध कर्पूर*) साककपूर (ऐला) छोटी लायची (त्वङ्)
कहनी लग अर्धात् पतली दानचीनी, नागकेशर (जातीफल) जायफळ (उशी
र) खस (नागर) बैतरा शोठ, कालाजीरा (कृष्णागुरु) काला अगर
(तुगाछीरी) नीलकण्ठ यंसलोचन (नांसी) जटामाषी († नीलोत्पल) कम-
लगट्टे की गरी (कण्टा) छोटी पीपर सफेद चन्दन (३ बाल) सुगन्धबाला
और कङ्कोल इन सब दवाइयों को समान भाग ले फूट कपड़हन कर
सब दवाइयों की भाची मिश्री मिलाय किसी अमृतभान अथवा कागदार
घोतल में भर कर रखदेव । इस घूर्ण की मात्रा भाचे मादा से २ मासा
पर्यन्त है, इसको छक्कादि घूर्ण कहते हैं (राजाहँ) राजाओं के खाते
योग्य है (पन्हिदीपन) अग्नि का खोलने वाला (रोचन) स्वाद को बढ़ाने
वाला (तर्पण) हृदय की ताकत देता है (रुच्यं) शरीर को पुष्ट करता है
त्रिदोष नाशक और मल का बढ़ाने वाला है (हृद्रोगं) छाती में दर्द या
दिना पर चक्काहट मालूम होना (कंठ रोग) गले में दर्द होना या गले
में छाला घेरह पड़ना, खांसी, हुचकी (पीनसम्) जुकाम याने नाक
का बहना (यक्ष्मा) फफूट है, तनक नामक स्वांस, अतीसार (उरस्त) कफ
के साथ रुधिर या मवाद का जाना, प्रमेह, अरुचि सुप्त ग्रहणी आदि
रोग को यह घूर्ण नाश करता है ॥

* भाफमें कपूर जमाय के शुद्ध किया जाता है जिसको क्रिया कठिन है
उसे इस प्रकरण में लिखेंगे इस स्थल में खूब सफ़िद घोघ चढ़ने वाला कपूर
लेना वर भी शुद्ध है ॥

† नीलोत्पल—कृष्ण कमल को कहते हैं, जहाँ कमल के किसी अंगका
वर्णन न हो वहाँ कमल के फल (कमलगट्टा) को लेना चाहिये, बाजार में
मनें विकता है । यदि नीलकमल का फल न मिले तो माझूली कमलगट्टा
बाजार से लेकर भीतर की गरी निकाल, उसके भीतर की हरी पत्ती रहती
है फिक दिव्योंकि उसमें दाय है ॥

इन चूर्णों के खाने से गरमी मालूम हो और आठ दण दिनके खाने से कुछ भी फायदा न मालूम हो। जैसी कि तारीफ ऊपर लिखी है तो व बेरे सिर्फ लवङ्गादिचूर्ण खावे और शान को निम्नलिखित जातीफलादि चूर्णों को चटावे क्योंकि जातीफलादि में विशेष कर भूख को खोलना, खाना हलम करना, और दस्त की बिमारी को ठीक करना प्रधानगुण है ॥

जातीफलादि चूर्ण ।

जातीफलसंवर्गैला पचत्वङ्नागकेशरान् । कर्पूरचन्दन
तिलैस्त्वक्क्षीरीतगरामलैः ॥ तालीसपिप्पलोपथ्या चिचक
स्थूलजीरकैः । शुंठीविरंगमरिचान् समभागानिचूर्णयेत् ॥
यावत्येतानिसर्वाणि कुर्याद्भगांचतावतीम् । सर्वचूर्णसमादेया
शर्कराचभिषगवैः ॥ कर्षमाचततःखादेन्मधुनाप्लावितसुधीः ।
अस्य प्रभावाद्यङ्गणी कासश्वासारुचिचयाः ॥ वातश्लेष्म-
प्रतिश्यायाःप्रशमयांतिवेगतः ॥

जायफल, लींग, छोटीलायची तेजपात, दालचिनी, नागकेशर, कपूर, सफेदचन्दन, कालीतिल, बसलोचन, तगर बीजरहितमूलाभांखला, तालीसपत्र, छोटीपोपर, छोटीहरे, चीता (स्थूल जीरक) कर्लीजी, बैतराशोठ, चायविरंग और गिरव । इन सब औषधियों को समानभाग ले कुट कपारखान करलेय और जितना सब चूर्ण तेल में हो उसी के बराबर धुली हुई भांग को महीन चूर्ण कर मिला दे और जितना भांग सहित सब चूर्ण तेलमें हो उतनाही मिश्री मिलादे । इस को जातीफलादि चूर्ण कहते हैं । शार्ङ्गचर्मा जो इस चूर्ण का साखा एक कर्ष अर्थात् १० मासा लिखा है किन्तु वर्तमान समय में जहां तक परीक्षा से बिदित

हुआ है कि इस कदर मात्रा मियाय गहिरी भांग छाननेवाले के यदि अन्य रोगी को दिया जाय तो सायत यमालय की रास्ता न पकड़े किन्तु तहलीफ निस्सन्देह भोगना पड़ेगा । इसका मात्रा आधा मासा से २ मासा पर्यन्त है । अगर गसा और गरमो न करे तो ४ मासा तक भी खा सक्ता है । इस चूर्ण को संध्या समय सड़त में चाट के ऊपर से गुन गुना दूध मिश्री मिला के पिये ॥

जातीफलादि चूर्ण विशेषकर ग्रहणो, खांसी, श्वास, अरुचि, लई और मात कफ सहित जुकाम को बहुत शीघ्र आराम करता है और खोलता है । यक्ष्माधिकार में जो कुछ दवा इन लिख जाये हैं और लिख रहे हैं, वे सब पंच कर्म से निवृत्त रोगी के लिये भी है और जिन्होंने पंचकर्म नहीं लिया उनके लिये भी मुफीद है । अगर यक्ष्मायालेका मल शुद्ध न होता हो अथवा कफ के साथ कुछ खून या रंगीन और दुर्गन्धित कफ गिरता हो तो निम्नलिखित अरिष्ट उपरोक्त दवाओं औषधों के मिलावा दिन में दो तीन बार और सोते समय पिलाये अथवा केवल अरिष्ट पिलाये ॥

द्राक्षारिष्ट उरःक्षति पर ।

द्राक्षातुलार्धद्विद्वेणो जलस्यविपचेत्सुधीः । पादशेषिकपा-
दैश्च मृतेशौतेविनिक्षिपेत् ॥ शुङ्गस्यद्विगुणांतत्र त्वगेलापत्र
केशरम् । प्रियंगुमरिचकृष्णां विडंगंचेतचूर्णयेत् ॥ पृथक्-
पालान्मितैभगि स्रुताभांडेनिधापयेत् । स्थापयत्वाततोमासं
ततोजातरसंपिवेत् । उरःक्षतंचयंहन्ति कासश्वासगला-
मयान् ॥ द्राक्षारिष्टाद्वयःप्राक्तो बलहन्मलशोधनः ॥

सूय समदा बड़े २ दानों का मुनक्का कलकतिया तौल ५२॥ सेर ले भीतर का धीज निकाल ५२० सेर पानी में धीमी भांघ से पकावे जम घीयाई जल बाकी रहे घूले पर से उतार शीतल कर, गल कर छानलेय पद्यात् ५२॥ सेर मिश्री और दालचिनी, छोटी लायची, तेजपात, नाग-केशर, त्रियंगुल और बायभिरंग चार २ तोला । काली मिर्च और छोटी पीपर दो। दो तोला सबोंको अथककरा कर उक्त मुनक्के के काढ़े में डाल एक मुत्तिकापात्र अथवा चिनी के पात्रको चन्दन अगर और कपूर से धूपित कर उस में भर उसका मुख प्याले और मट्टी से बन्द कर (जिसमें हवा भीतर न जाय) एक महीना तक ऐसे स्थान में रख दे जहां दिन में धूप और रात में ओस लगे पद्यात् एक महीना के मल छान कर घोल में भर लेय इसके द्राक्षादिष्ट कहते हैं, यह जर्क कभी बिगड़ता नहीं । इस का मात्रा छ मासा से दो तोला पर्यन्त है । अगर उपरोक्त दानों चूर्णों को भी दिये जाय तो इस अरिष्ट को १२ बजे और ४ बजे दिन में और एक मात्रा सेते समय पिलावे । यदि कल-के साथ रक्त के छीटे बराबर जातेहों तो एक २ मात्रा अरिष्ट दिनभर से छ दफे पाने दो २ घंटे पर पिलावे । यह अरिष्ट वास्तवके अतिरिक्त बावासीर, उदावर्त, गुह्य, उदररोग, छनिरोध, रक्तदोष, अनेक प्रकार के फोंड़ाफुन्सी, नेत्र रोग, शिर रोग, गलरोग इन सबोंको नाश करता है, अग्नि को खोलता और मल को पचाता है एवं दस्त सुलासा लाता है ८

द्राक्षादि घृतं ।

प्रस्थमेकंतुद्राचातोमधुयष्ट्याःपलायकां । चतुःप्रस्थेजलेपक्षा
पादशेषंसमुद्धरेत् ॥ पलंयष्टीपलंद्राचा कणाचूर्णंपलद्वयं ।
प्रदायसर्पिषःप्रस्थं पचेत्चौरेचतुर्गुणे ॥ सिद्धेशीतेपलान्यष्टौ
शर्करायाःप्रदापयेत् । एतंतद्राचाघृतंसिद्धंचतुर्गुणेषुखावहं ॥

मुनक्का बीज रहित १ सेर, मुलेठी डेढ़पाव दिनों को कुचल कर ५ सेर पाणी में रात को भिजा दिय, सबेरे जोस देवे जब चौथाई जल रहजाय चूल्हे पर से उतार पीतल कर छागलेय । बाद उसकी मुलेठी और बीजरहित मुनक्का दां दां ताले, छोटी पीपर ४ ताला तीनोंको शिलपर पाणीसे पीस लुगदी बना लेय, गौ का घी एक सेर किसी कलईदार कढ़ाई में चढ़ाय तीनों दवाईयों की लुगदी और मुनक्का मुलेठी का काड़ा दिनों को सभी कढ़ाई में हाल धोमी पांच से पकावे और ऊपर से ४ सेर गौ का दूध डालदे जब बुरती २ पाणी दूध सब जल कर घृत पकेला रह जाय चूल्हे, पर से उतार हाल समुतवान चयवा घी को नदियां में रख दिय जिस रोगो को सिर्फ घी पिलाना हो तो उस घी में डेढ़पाव मिथी पीस के भिजा दिय अगर घृत की भोजन के साथ खिलाने को राय हो तो सिर्फ दात रोटी के साथ देवे और इसी घी से दात तरकारी वगैरह छिड़क भी सकते हैं क्योंकि मामूली घी प्रायः रोगी को नुकसान करता है खास कर जिस यक्षावाले को खांसी अधिक रहती है कसा घी खांसी बढ़ाता है इसीसे वैद्यनाग ऊपर खांसी में घी खिलाना बन्द करदेते हैं जिससे रोगी के भीतर खड़की पहुँच कर शरीर सुखजाती है । हकीम लोग इसी डर से घी को जगह बदाम का तेल खिलाते हैं और उसीसे तरकारी वगैरह भी पकाते हैं ॥

चन्दनादि तैलम् ।

चन्दनाखुनखंवाप्य यष्टीशैलेयपद्माके । मंजिष्ठासरलंदारु
शट्येलापूतिकेशरं ॥ पञ्चशैलसुरामांसी कंकालंबनितांबुदं ।
हरिद्रेसारिवेतिक्ता लवंगागुरुकुंकुमं ॥ त्वग्नेशुनलिकाचैवी
भिस्तैलमस्तुचतुर्गुणं । लाचारसचमंसिहं ग्रहघ्नं वलवर्णकृत् ॥
अपस्मारज्वरोन्माद कृत्यालक्ष्मोविनाशम् । आयुःपुष्टिकरं-
चैव वशीकरणमुत्तमं ॥ विशेषात्क्षयरोगघ्नं रक्तपित्तहरंपरं ।
चन्दनाद्यमिदंतैलं नास्माख्यातंगवयो ॥

यों से चर्बीवालों को आराम होता कुछ न देख पड़े तो जान लेना चाहिये कि सप्त धातुओं में से जिसे यह शरीर रचित है अवश्य कुछ क्षीण हो गयी है क्योंकि धातुओं के क्षीण होनेही से चर्बी रोग असाध्य हो जाता है । वेद लोग इन विषयों पर कम विचार करते-हैं ॥

सप्त धातु यह हैं रस, रक्त, मांस, मेद, दृढ़ी, मज्जा और शुक्र यानि वीर्य अथवा रज । इनके क्षय होने का लक्षण ग्रंथ बड़ा जाने के भय से लोगों में न लिख कर पाठक गणों के बोधार्थ भाषा में लिखे देते हैं ॥

रस क्षय लक्षण ।

रस के क्षय होने से अत्यन्त सुश्की, अग्नि की मन्दता, शरीर में कम्पन या शरीर का पर पशाना धिरते पीड़ा, उदाशीलता, अकस्मात् रंज का होना और पुनरी होती है ॥

मांस क्षय का लक्षण ।

मांस के क्षय होने से शरीर का अत्यन्त दुबला होना, बालोंकी शिथिलता, नाँद का न आना अथवा अधिक्, नाँद का आना, घातों का भूलना और घात का नाश यह उपद्रव होते हैं ॥

मेदः क्षय की लक्षण ।

मेद के क्षय होने से शरीर बकी सी, मनका कहीं न लगना, अदन का टूटना, चलने फिरने की ताकत कम हो, स्वास अत्यन्त खाँसी, खाने पर मन का न चलना और न खाना हजम होना, इत्यादि लक्षण होते हैं ॥

अस्थि क्षय के लक्षण ।

दृढ़ी के क्षय होने में मन अति उदाग, और धातु की कमजोरी, अपिठ होती है तथा मेदा क्षय के जो कुछ लक्षण हैं यह भी मिलते हैं ॥

वीर्य क्षय के लक्षण ।

वीर्य के कमी हो जाना से बिचार का ठीक न रहना, अकस्मात् रंज करना या रोना अथवा अधीर्य होना और यांभ्यार कटना की अमंजन नहीं जीयेंगे, हाथ पैर मुख बगैरहमें सूजन होना, रात में नींद का न आना धीमा ज्वर का घना रहना अथवा दाह का होना इत्यादि लक्षण वीर्य क्षय के होने में होता है ॥

रस रक्तादि दृष्टि कारक उपाय ।

वैद्यों को तथा अन्य लोगों को जो साधारण चिकित्सा करते हैं उचित है कि निदान के ऊपर ध्यान अवश्य रखें । यत्ना रोग वाले के शरीर में यदि रण और रुधिर की कमी का लक्षण मिलते हैं तो जितनी दवादे उसमें रुधिररक्त का विरोधी कोई दवा न दे। यत्कि जहां तक दृष्टिकारक औषधों जैसे गुरुच चाहे किसी औषध के योग में हो अथवा गुरुच का प्लास्ट या क्राय पिलाना या गुरुच का सत अदूरत के रस के साथ चटागा रस रक्त दोनों को बढ़ाता है और कालीनिरची में पकाया हुआ गी का दूध अथवा पका हुआ दूध किसी उचित द्रव पन्त्रह दागा गोख निचो चाय पर राखी में पीना फायदा होता है अनेक बार देखा गया है कि यह प्रयोग से निस्सन्देह रोगों की वृद्धि होती है और छय रोग खुट जाता है ॥

पथ्य ।

एक साल का पुराना मेह का भूसी सहित भाटे की खमीर चठाकर रोटी अथवा जव की गूनी की रोटी, गाली संज्ञक पुराना चावल दिय जनों ने श्रेष्ठ कहा है ॥

रक्त वृद्धि कारक उपाय ।

घृतदुग्धसितांचीद्र मरिचानिचपिप्पली । पानंशस्तं मनु-
ष्याणां रक्तवृद्धिकरं परम् ॥

यह योग सड़े रोग में बहुत चरल और जाजनाया हुआ है । घी, दूध, मिश्री, सहित और निर्घ्र इन्हीं का पना बना कर पीना रक्त वृद्धि करने का श्रेष्ठ उपाय है । जैसे १ पाय गी का दूध पका है। या कच्चा हो रोगी के मिश्राज पर है उसमें ६ भासा सहित, दश भासा घी, एक तोला मिश्री २० दाता कालीनिर्घ्र या जाधी घीपर पीस के मिश्रा कर सबों को एकदिल कर सांन सधेरे चाहे किमी दया के, खिला कर ऊपर से पिना दे जयया केवल उनीको पिनाये यह योग अवश्य सुते हुये रक्त को हरा भरा करता है ॥ पच्य ॥ उपरोक्त पच्य के अतिरिक्त सूङ्ग की दाल, संधय गोम और मातदिल खान पान युगैरह ॥

मेद वृद्धि कारक उपाय ।

जितने हलके जल्ल जाने जल्द हजन होने वाले हैं मय हित है । मक्खन, घी, दूध, मिश्री और नीठे सरयत यगैरह उत्तम है । कल्प सं-
ज्ञक एव प्रकार का शराम है जिसका मयाग जाने करेंगे किमी २ को बहुतही पायदा करता है । जांगल देश के जीवों का रस जाने मुहया पिनाना वैद्ययरी ने श्रेष्ठ कहा है किन्तु हमारी राम में जय किसी अन्न खान पान या दया से लाभ न पहुंचे तो अन्तमें उपकारी पुरुषक आरोग्यार्थ मांस खिलाना अनुचित नहीं है । शिंतेपलादि पूर्ण सहितमें घटा कर ऊपर से पका हुआ यकरी का दूध मिश्री सहित साम सधेरे पिना-
ना भी मेद को वृद्धि कर सड़े रोग को आराम करता है ॥

अस्थि वृद्धि कारक उपाय ।

मक्खानिघृतशस्तसि चीराणि विविधानिच । अन्नानिच
मधुरानि सर्वाणिच प्रयोजयेत् ॥

अपित्त दिन चर्द रोग रहने से अथवा जीर्णश्वर में मनुष्यकी अस्थि पाने लुहरी पतली पड़ जाती है खास कर हाथ पैर कमर और पशुलियों की हड्डियां जरूर पतली और कमजोर हो जाती हैं इसमें मनाया हुआ अनेक प्रकारके घी दूध, और अनेक प्रकारके भीठेभज्र और जांगल देशों के जीवों का गांस दित है ॥

शुक्र वृद्धि कारक उपाय ।

शुक्रक्षयेप्रपाक्वानि रसानिचविश्रेयतः । नवनीतमयाचीरं
मधुराणिच सेवयेत् ॥ कर्कटीमूलपयसा विदारौकंदशाल्म-
ली । सिताढ्यपानं च हितं शस्यतेमधुराणिच ॥

औषध सप में अच्छे २ प्रकार के सरसत दूध का निकाछा हुआ म-
खन, तत्काल का दुहा हुआ दूध, खीर मालपुंवा आदि घने घुसे भीठे
अथ अकाही के जड़ की छाल, बिछारीकंद और सेगल का मूसरा मिश्री
मिला हुआ दूध के साथ पिलाने से अत्यंत फायदा करता है अथवा
नीचे लिखी हुई दवाइयों को भी को सिला कर उस भी के दूध को भी
पिलाने से अत्यन्त फायदा होता है और तारीफ इसमें यह है कि फिर
रोगी को धातु बृद्ध कर जीवध खाना नहीं पड़ता ॥

अश्वगंधादि चूर्ण ।

मागीरी अमगंध १ छंटाक, शताघा २ छंटाक, सफेदमुसली ३ छंटाक
तालमसाला ४ छंटाक सखाना ५ छंटाक सेगर का मूसरा ६ छंटाक और
चिनी जापमेर सब दवाइयों को फूट कपर छानकर उसीमें चिनी मिला
अमृतवान में रख देव पड़िछे आधी छंटाक सखेरे और आधी छंटाक सांभ
को जापमेर की एक रोटी मनाय रोटी को मल कर उसी में एक गाला
दया और जापपाय शक्कर मिला छिलाय देव बाँपया घानी में मिला
दिया करे किन्तु घानीमें जयका भूसा और अलसी की सरी रहे उसी में

दूध गिला दे और उस गौ के दोनों समय घेत भर सानी सिखावे, गौ भूखीन रहने पाये और गोशालोंमें खास उस जगह जहां गौका मुख्य रहता है एक बड़ी छली सेव्यानेन की तार में बांध कर लटकाय देय ताकी गौ मृत्तिका समैरह कोई चीज न चाट कर जब दूध खा हो उभी नेन की छली को चाट करै हस्ते गौ का हातगा दुस्त रहता है और मृत्तिका आदि चीजों के चाटने से जो गौ के दूध में एक मिश्रण पैदा होता है वह न होगा ॥

दस दिन दवा खिलाने के बाद उस गौ का दूध रोगी को पिलाना शुरू करे और उसको पिलानेकी रीति यह है कि दूध दुधकर भूमिमें न रखता जाय उभी समय दूधमें थोड़ा मियो मिला रोगी को पिला देय इसी तरह दोनो समय दूध दिनों तक पिलाने से अल्प बीर्य जनित चर्द रोग को बड़ा फायदा होता है । चर्दके अतिरिक्त प्रमेह, मूत्राघात दिव्य दिमाग की कमजोरी, घिर रोग आराम हो घातु अधिक पुष्ट होता है । घातु बढ़ाने और घातु को अति बलिष्ठ करनेका इस दूधसे बड़ कर दूसरा उपाय नहीं है अगर मनुष्य इस रीति से दवा खाकर हमेशा दूध पीता रहे तो कभी कमजोर न हो और एक सौ बीस वरस तक जीने वाला हो ।

हमको जहां तक आयुर्वेदके ग्रंथोंसे प्रमाण मिले हैं यही पाया गया है कि प्रायः यक्ष्मारोग घातुक्षीण होने से होता है वह भी अकाल पतित बीर्य से तो अक्षर होता है सो पाठकगण अवश्यही कम अवस्था वाले को इस रोग में ग्रसित देखते हैं। वह भी स्त्रियों को और भी अधिक । उसका संभव यह है कि एक तो कम अवस्था में व्याधी जातो हैं काम कलाओं का नान्तही नहीं किसे कहते हैं तभी पति के घर आना पड़ता है इश्वरीचा से कहीं पति भी कमसिग हुआ तो जाग बची तौभी रास नन्दको झिड़की छपटसे दुर्वल हुई जातो है और कहीं पति अवाग हुआ अथवा द्वितीयतृतीय विवाहित हुआ तो उसको रोग टूटनेकी जरूरत ही नहीं पड़ती रातमें पतिको प्रसन्न करना, दिन में चरानो का काम करना, रास नन्द के साथ गाछों से खाली न

रहना, खाने पीने का कोई इंतजाम नहीं कभी-दिपहर को कभी माम को यही सबव है जो एक २ पुरुष के चार पाँच सादो-हेतो जातो है, सादो पर सादो करते जाते हैं स्त्रियां मरतो जाती हैं । हरौत महाराज यत्नाका निदान इस प्रकार कहते हैं ।

घतक्षयाच्छ्रमाहापि सहसोपप्लवादपि । व्यवायाति प्रसङ्गे
न तथा रुक्षति सेवनात् ॥ तेन संक्षीयते गात्रं ज्वरो मन्द
श्च जायते । ज्वरान्तेजायते शोफो मलविट्घातिमूत्रता ।
अतिसारश्च भवति भक्षणेनातिशेषते । कासतेष्टीवतेऽत्यर्थं
शोषश्चक्षुःशरीरभृशम् ॥

(घत) उरुघत अथवा अधिक दिखः कमजोर होने से (क्षय) प्रमेद या प्रदर अथवा धातु पतला और कमजोर होने से अपना ताप्रात से अधिक परित्यक्त करने से, अत्यन्त प्रसंग करने से, खूब सोजान करने से, मनुष्य कमजोर होजाता है और वही कमजोरी वनो रहने से भीतर थोड़ा २ धीमा ज्वर होने लगता है तथा उसी ज्वर के वजे से मनुष्य बहुत दुबला हो जाता है अन्त में सूजन और दस्त पतला होने लगता है किसी २ को मूत्र बहुत बढ़ जाता है और थोड़ा भी खाया हुआ नहीं पचता, अत्यन्त खाँसी तथा वलगम अधिक निकलने लगता है । और भी कहते हैं ।

व्यायामयानसुरता गतिपौडिताङ्ग रोगेण वा ब्रणनिपौ-
डितक्षोणदेहात् । क्राधातिशोकानशनादि भयोपवासैः सं-
जायते च मनुजस्य महागदेऽयम् ॥

हरौत महाराज अपने शिष्यों से कहते हैं कि हे पुत्र सुनो चारहेतुओं पर के निम्नदेह यक्ष यत्ना रोग होता है जैसे—भोजन कम करके अधिक करना, दिनरात असवारी पर बैठकर चलना, अधिक प्रसंग करना और बहुत रास्ता चलना इन चारों कारणों के मिलावा भी फाड़ा फुन्धियों का अधिक दिन बना रहने से क्षोण देह होने से तथा क्रोध, शोक, लंघन, भय, व्रत आदि के करने से मनुष्य के शरीर में यत्ना नामक महान रोग होता है ।

कोई बिमारी क्यों न हो पहरेज कराना बहुत जरूरी है और खास कर बड़े २ रोगों में जैसे यक्ष्मा जलोदर आदि कि जिस की उत्पत्तिही असाध्य लिख दिया गया है उम्में तो पहरेज अवश्य ही कराना चाहिये क्योंकि बहुत सी बिमारियां हैं कि उस रोगी का चित्त उन्हीं चीजों के खाने पीने पर चलेगा कि जो चीजें उस रोग के बिरोधी हैं हारीत महाराज यक्ष्मा के विषय में लिखते भी हैं ।

यद्यदाहारमिच्छेद्दानरंघाराजयक्ष्मिणम् । तस्यत-
स्यास्यलाभेन क्षीयन्तेतस्यधातवः ॥

यक्ष्मा रोगवाले को जिस २ भोजन पर इच्छा चलती है उसी २ भोजन से उस रोगी की धातुक्षीण होती है इसलिये यक्ष्मावाले का मन जिस २ चीजों पर चले उन चीजों का सेवन न करने पावे । जहां तक होसके खाने को वही चीज देवे जिसे धातु बढे और उसकी गन्ती, हटै लिया भी है ।

यदन्नंयत्समाहारं यादृशंप्रतियाचते । तत्तस्यचप्र-
दातव्यं मधुरंघनमेवच ॥

जो जो अन्न आहारादि यक्ष्मा रोगवाले को दिया जाये वह मधुर और घन होना चाहिये क्योंकि मधुर और घन पदार्थ से धातु बनता है ॥

यक्ष्मा रोगवाले की उमर ।

सज्जीवेच्चतुरोमासान्पण्णमासंवावलाधिकः । उत्कृ-
ष्टैश्चप्रतीकारैः सहस्राहंतुजीवति ॥ सहस्रात्परतो-

नास्ति जीवितं राजयक्ष्मिणः । गतं प्राणौजोवीर्यश्च
क्षीणश्च विकलेन्द्रियः ॥ न भवेत्पुरुच्छ्रायो याप्यरोगश्च
मुञ्चति । यस्तदायाससम्पन्नो भूयोऽपिकासिना भवेत् ॥
तस्य प्राणापहारी स्याद्राजयक्ष्मणि दारुणः । त्रिभिर्मा-
सैश्च पणमासैर्वर्षैश्चापि त्रिभिः पुनः ॥

हिक्मतवालों ने यहना यरने तपेदिक की आयु की मर्यादा इस प्रकार बांधा है कि दो दर्जे तक आराम हो सकता है, तीसरे दर्जे में कुछ साध्य और चौथे दर्जे में असाध्य माना है, जो आराम नहीं हो सकता है और यह चारो दर्जे लक्षणों पर निर्भर रखा है किन्तु आयुर्वेद मतावलम्बियों ने इस प्रकार लिखा है । राजयक्ष्मा रोगवाला जिसके सम्पूर्ण लक्षण मिलते हों चार महीने तक जीता है, यदि चेत रोगी कुछ चलवान मुश्किल तो छ महीने तक जीता रहा, यदि चेत रोगी कुछ चली भी रहा और सद्बैद्यों के द्वारा उत्तम चिकित्सा होती रही तो यहना रोगवाला एक हजार दिनों तक जी सकता है अन्वया नहीं । राजयक्ष्मा रोगवाला एक हजार दिन से अधिक इसलिये नहीं जी सकता कि उतने दिनोंके उपरान्त प्राण, बल, धीरे यह सब क्षीण हो जाते हैं और इन्द्रियां सब विकल हो जाती हैं । और यह यक्ष्मा रोग जो बारम्बार घटता बढ़ता नहीं, एक समान बना रह के उत्तम दवा के योग से थोड़ा २ घटने लगता है और फिर नहीं बढ़ता यह रोग याप्य होता है अर्थात् उत्तम चिकित्सा होनेसे आराम होजाता है । तथा जो यक्ष्मा रोग बारम्बार खांसीसे युक्त हो जाता है याने कभी खांसी कम होगई कभी फिर तेज होगई इसी तरह चलगम आना कभी बन्द होगया या कम आने लगा और कभी फिर बढ़ गया यह यक्ष्मा का रोगी तीन महीने अथवा छ महीनेसे अधिक नहीं जीता रहता अथवा प्राणका नाश होता है । अमृत पान कराने

से भी प्राणकी रक्षा नहीं हो सकती क्योंकि अवधि का उल्लंघन करने की सामर्थ्य किसी में भी नहीं है दूसरे यक्ष्मा आदि महान रोग पूर्वोपार्जित अत्यन्त दुष्कर्मों के द्वारा होते हैं । लिखा भी है—

कुष्ठंचराजयक्ष्माच्च प्रमेहोग्रहणीतथा । मूत्रकृच्छ्रं-
श्मरीकास्त अतीसारभगंदरौ ॥ दुष्टं व्रणं गंडमाला पक्षा-
घातोक्षिनाशनं । इत्येवमादयोरोगा महापापोद्भवाः-
स्मृताः ॥

कोष्ठ रोग, राजयक्ष्मा, प्रमेह, संग्रहणी, मुत्राक, पयरी, खांसी, अ-
तीसार और भगन्दर, मसूर, गण्डमाला, लकवा, आंखों का फूट जाना
यह सब रोग महा अर्थात् बड़े २ पाप करने से होता है । यह सब रोग
जो ऊपर कहा आये हैं प्राणके साथ जाते हैं आराम भी होगावे तो जड़ नहीं
जाती कुपथ्य बस फिर उभड़ जाते हैं अन्ततोगत्या अपने भयंकर लक्षणों
को प्रगट कर मनुष्यके प्राणको हरण करते हैं यह महा पाप यह है जैसे-

देवानांप्रकरोतिभङ्गमथवा भूणस्यसन्तापनं । गो
• पृथ्वीधरविप्रबालहनन मारामविध्वंसनम् ॥ सोयं
स्थानविनाशनंच कुरुते स्त्रीणांवधं योनरस्तस्यैतैर्गुरुक-
र्मभिः क्षयगदो देहापहारी महान् ॥

जो पुरुष देवताओंके मूर्तिको तोड़ डालता है अथवा अनादर क-
रता है, जीओंको सन्ताप देता है अर्थात् सतायता है, गौ, राजा, ब्राह्मण
और बालको की जो हत्या करता है, किसीके याग योगीषा उत्राहता है
किसी अपि महात्मा गरीब दुखियोंके स्थानको विनाश करता है और

स्त्रियोंको मार डालता है ऐसे २ दुष्ट कर्म करने वाले को प्राण हरण करने वाला महानक्षयी रोग होता है। हम कहते हैं पापों का प्रत्यक्ष फल शरीरमें अनेक रोगोंके द्वारा दुःख का भोगना देस पड़ना है यदि यह भी न होता तो देशरको लोग और भी न मानते।

यक्षमारोगे अमृत प्राशन घृत ।

शतमूलीरसंप्रस्थं गुडूचीकल्कप्रस्थकम् । हरीतकी
शतानांच कुटजस्यत्वचातुलां ॥ निष्काथ्यचष्टथक्तेन
पुनश्चैकत्रमिश्रयेत् । दार्वीप्रलेपनंकृत्वा गुडानांशत-
पञ्चकम् । सिताचामलकीचूर्णं त्वगेलाचित्रकंशठी ॥
द्राक्षाकुप्टंशिलाजिञ्च शिलाभेदस्तुतालकं ॥ योज्यं-
तत्राक्षमानेन भक्षयेच्छुद्धसर्पिषा । तस्योपरिपिवेत्क्षीरं
भोजनञ्चततःपरम् ॥ राजयक्ष्मीलभेत्सौख्यं पाण्डुका
मलकाञ्जयेत् । अतीसारंघिनश्चति वलेनागवलो
भवेत् ॥

ताले शतावरीका रस ६४ तोला अगर शतावरी ताजी न मिले तो काय बनावे रस लेय गुरिचका फल्क ६४ तोला, एकसा बड़े हड़का बकल कुरैयादी ठाल ४०० तोले इनको अठगुना जलोंमें अलग २ काढ़ा बनावे पचात् सबों को एकत्रित कर पुनः अग्निपर घटाय धीमी आंचसे पचावे जब पचते २ इतना गाढ़ा होजाय कि करछुल में चपकने लगे तब ५५ साफ सफ़र अथवा चिनी डोह कर अच्छी तरह पकालेय बाद आंवला,

दालचिनी, छोटी लायची, चीता कपूर, मुनक्का फूट, शुद्धशिलाजीत पा-
पाणभेद और हरताल भस्म इन सबों को दूध २ मासाले कूट, कपड़ उान
कर उसीमें गिला अमृतवानमें रखदेय । इसका मात्रा ६ माससे तीन
तोला तक है । साय सवेरे मात्राकी आधा गोघृत अथवा मिक्खन मिला
कर राके ऊपरसे गौ का दूध मिश्री मिला हुआ पीनेसे तथा उसके थोड़ी
देरके बाद नीठी चीज भोजन करनेसे राजयक्ष्मा य लेको कुछ लाभ होता
है अर्थात् उक्त रोग से छूट जाता है इसके अतिरिक्त पांडुरोग कामला
अतीसार रोगका नाश होता है और बल पुरुषार्थ बढ़ता है ॥

इति क्षय रोग निदान चिकित्सादि विषयः समाप्तः ॥

अथ उरःक्षत ।

अब इसके आगे हम उरःक्षत रोगका ध्यान करते हैं क्योंकि उस
रोगके लक्षण यक्ष्मा रोगमें मिलते हैं और आरोग्य न होनेसे उरःक्षत या
ला भी हजार दिन से अधिक नहीं जीता । रहा यह कि जितना शीघ्र
यक्ष्मा वाला दुर्बल बलहीन होजाता है तितना शीघ्र उरःक्षतवाला नहीं,
यदि चेत् मुखसे खून अधिक आने लगा तो अतिशीघ्र मर भी जाता है ॥

उरःक्षत होने का कारण ।

घनुपायम्यतोत्यर्थं भारमुद्रहतोगुरुम् । युद्धमानस्य
वलिभिः पततोविपमोच्चतः ॥ वृषंहयंवाधावंतं दम्भं
चान्यंनिगृह्णतः । शिलाकाष्टाश्मनिर्घातान् क्षिपतो-
निघ्नतःपरान् ॥

उरःक्षतरोग उसीको होता है जो मनुष्य अपनी आत्माको बल से अधिक बल करता है उसकी छाती फटजाती है अर्थात् (लंका) जिसे शोधक यंत्र कहते हैं जिसके द्वारा होके समस्त शरीर में रुधिर जाता है उसका स्थान हृदय है जहां पर धक धक हुआ करता है वह नस फट कर मुख से रून आने लगता है वही जल्द उत्तम उपायों द्वारा उस फटे हुए नस को न पुराने से पक जाता है और उसीमें से मवाद होके मुख के राह से गिरने लगता है और फिर नहीं पुरता अर्थात् नसूर हो जाता है इसीको उरःक्षतरोग कहते हैं इसमें और यक्ष्मा में बहुत कम भेद है । वैद्यों को सब से प्रथम उचित है कि रोगकी परीक्षा खूब करलेय तब चिकित्सा करे । मनुष्य के यकृत जिसे डाकुरी में (लीवर) और हिक्मत में (फलेजा) कहते हैं उसमें भी विकार पहुंचने से मुख से रून या मवाद आने लगता है जिसका ध्यान आगे करेंगे, जिस वजे से उरःक्षत होता है प्रथम उसे कहते हैं । धनुषादि जो मनुष्य धनुष पढ़ाने आदि में अति परिश्रम करता है, अथवा भारी योग्य लेके चलता है, अपने से अधिक जोरवाले से कुस्ती लड़ता है, टेढ़े भेड़े जगह से और ऊंचे से गिरता है, पोड़ा बिल आदि दीड़ते हुये, जानवरों को जो पकड़ता है, जो लकड़ी पतल, ईंट, भारी चीज हाथ में लेके फेंकता है अथवा दूसरे को मारता है उसके छाती में सदमा पहुंच कर छाती फटजाती है और जिन्हें इन सब बातों का अभ्यास है अर्थात् रोज २ उसी काम को करते हैं उनको उरःक्षत नहीं होता क्योंकि उनको अभ्यास पड़जाता है यदि इस तरह हो जायें तो सैकड़ों योग्य उठानेवाले मजदूर अपनी ताकत से दूनी भारी योग्य उठाले जाते हैं । कौजी सिपाहियों को युद्ध में हाथही से पन्दूस चलाना पड़ता है, भाला फेंकना पड़ता है सभी को हो जाया करे, सिर्फ दिलके कमजोर, मुलायम, कभी उस काम को न करनेवाले, एकाएकी उक्त कामों के करने से उरःक्षत रोग होजाता है ।

इसी तरह बहुत जोरसे पढ़नेसे अथवा गानेसे बहुत दूर तक अति

शीघ्रताके साथ चलनेसे यही पाट वाली नदी को तैरकर पार करनेसे घोड़ेके साथ दीहनेसे अथवा दूरसे कूदनेसे या नारा ह्वाकनेसे बहुत जल्द २ नाचनेसे और किसी तरह छातीमें घोट लगनेसे उरःक्षत रोग होता है ।

जो मनुष्य रुखा तथा रोड़ा भोजन करके जादा मैथुन करता है अर्थात् उत्तम खाने पीनेको समय पर नहीं खाता, दिवारात्रि मैथुनासक्त रहता है उसकी छाती अति पीड़ित होती है उसके सुई छेदने अथवा फटनेसरीखे छाती फटने लगती है पछलियोंमें दर्द होने लगता है अंगसूखने और कांपने लगता है प्रथम क्रमशः धीर्घ्न बल घट्ण और जठराग्नि हीन होने लगता है पश्चात् प्यर शरीर में पीडा मनमें उदासी दस्त का पतला होना अग्नि मन्द खाना का न पचना खांसनेसे दुर्गन्धयुक्त पीला गठीला रक्त सहित फफ गिरने लगता है तब यह रोगी बहुत दुबला और निस्तेज होजाता है ।

उरःक्षत का असाध्य लक्षण ।

उरोरुक् शोणितेच्छर्दिः कासोवैशेषिकः क्षते ।
क्षणितरक्तमूत्रत्वं पार्श्वपृष्ठकटिग्रहः ॥ (अन्यच्च) अल्प
लिंगस्यदीप्ताग्नेः साध्योवलवतो नवः । परिसंवत्सरो-
याप्यः सर्वलिंगं विवर्जयेत् ॥ परं दिनसहस्रं तु यदि जी-
वति मानवः । सुभिषग्भिरुपक्रान्तस्तरुणः शोषपीडितः ॥

अब उरःक्षत के असाध्य लक्षण कहते हैं जिन लक्षणोंसे जाना जाता है कि यह रोगी अब नहीं जीवेगा ।

मुखसे थराथर खून का गिरना याने खून का बमन होना सांसी अत्यन्त तकलीफ अधिक क्षीणताके कारण पेशाब को साथ रक्ता आना

पशुलियों में दर्द, पीठ और कमर का जकड़ना इन लक्षणों से उर को असाध्य जानना और भी कहते हैं । जिस रोगी के लक्षण कम मिलते हों, अग्नि तेज हो, भूख लगती हो खाना हजम हो जाता हो और थोड़े ही दिनों का रोग हो तो आराम हो जाता है और एक वर्ष पीछे कष्टसाध्य और सब लक्षणों के मिलने से असाध्य हो जाता है यदि किसी अच्छे सह वैद्य की चिकित्सा हुई तो वह रोगी एक हजार दिनों तक जीता रहेगा अन्यथा मृत्युही सम्भक्तिये ॥

अथ चिकित्सा ।

भूत पूर्व वैद्योंका यह सिद्धान्त मत है कि अगर उरःक्षत रोगी मनुष्य शोक, चिन्ता, क्रोध करना, स्त्री प्रसंग पराये को देख के जलना आदि कर्मों को त्याग देय और मन को प्रसन्न रखना पवित्रता से देय पूजन, ब्राह्मण अतिथियों का सत्कार, भगवत् भजन, वेद वेदान्त पुराण इतिहासादि ब्राह्मण के मुख से सुननेसे रोग यलवान नहीं होने पाता ॥

यक्ष्मारोग में जो जो दवायें लिखी हैं वे सब भी प्रकृति, देश, कालानुसार उरःक्षतवाले को कायदा कर सकती हैं ॥

उरःक्षत पर एलादि बटी ।

एलापत्रत्वचोद्राक्षा पिप्पल्यर्धपलपृथक् । सिता मधुकखर्जूर मृद्वीकाश्चपलोम्भिताः ॥ सचूर्ण्यमधुना युक्ता वटिकाश्चप्रकल्पयेत् । अक्षमात्रास्ततश्चैव भक्षयेद्विदिनेदिने ॥ क्षतक्षयंज्वरंकासं श्वासंहिकां वमिभ्रमं ॥ मूर्छामदंतृपांशोपं पार्वसूलमरोचकम् । शीहा

नमाद्यवातंच रक्तपित्तज्वरंक्षतं ॥ एलादिगुटिकाहंति
वृष्यासंतर्पणीपरा ॥

छोटीलांबची, तेजपात, दालचिनी धीन रहित मुनक्का, दूधसे शुद्ध किया छोटी पीपर यह सब आधा २ पल अर्थात् दो दो तोले, मिश्री, तुलेठी, खजूर, कायफल, और किसगिस यह सब चार २ तोले, सबों को सूख सहीन चूर्ण कर आधे २ तोले की गोली बनाय लेय, यह पूर्णमात्रा है, अयस्था के अनुसार मात्रा घटा बढ़ा सकते हैं । इस गोली को दोनो समय खाकर ऊपरसे चकरी अथवा गौ का ताजा दूध मिश्री मिला हुआ पीने से उरःक्षत रोग आराम होता है इसके अलावा लिखा है । क्षयो, ज्वर, खांसी, स्वास हुचकी, यमन, पुमरी, भूछाँ, मद, पिपास शोथ, पाशवं शूल, अरुचि, स्तीहां, आद्यवात और रक्त पित्त ज्वर आदि नाश होता है यह औषध कामोद्दीपन है । हमने जहां तक परीक्षा लिया है और रोगों की अपेक्षा उरःक्षतको कुछ दिनों तक लगातार पथ्य सहित सेवन करने से अवश्य आराम करता है । उरःक्षत रोग का पथ्य वही है जो राजयक्ष्मा रोग में कह आये हैं । उरःक्षत वाले को सरबत अनार, सर-यत उन्नाय, सरयत गुलशनफ्ला आदि और भी तर पदार्थों को जो खून को शीतल और शुद्ध करनेवाले हैं सेवन करावे, दूध और मिश्री जहां तक हो पिलावे ॥

अगर खून का यमन होताहो और अनेक जतन करनेसे न रुकता हो तो एक तोला फिटकिरी को एकसेर पानी में धोले अगर दरफ मिलता हो तो उसी पानीमें हालें सूख शीतल कर उभी जल में कपड़े को भिजा कर छाती पर रखे और जय कपड़ा मुराजाय फिर भिजालेय और पीने को बिहीदाने का हुआय निकाल मिश्री मिला के एक २ चम्मच पन्ध्र २ बीस २ मिनट पर पिलावे जय तक खून का आंगा यन्द न हो और समस्त शरीर में नारायन तैल, अथवा माखादि तैल या कामलाआदि

कृतेतत्र निःक्षिपेदौषधंभिषक् ॥ सितोपलाचतुःप्रस्थं
 चातुर्जातंपलंपलं । मृद्वीकापट्पलंचैव क्षिप्त्वामधुपला
 ष्टकम् ॥ धारासत्वंतवक्षीरी श्वेतजीरं पृथक्पृथक् ।
 नागंवगंपलाद्धैच सर्वमेकत्रकारयेत् ॥ कर्पूरंवल्लमात्रंच
 दत्त्वास्थाप्यसुकुंभके । भक्षयेन्निष्कमात्रतु प्रातरेवहि
 पथ्यभुक् ॥ जीर्णज्वरक्षयेकासे अग्निमाद्येप्रमेहके ।
 दिनरात्रिज्वरेचैव शिरोरोगप्रशस्यते ॥ प्रदरेरक्तजान् रोगान्
 कुष्टाशांसिच नाशयेत् । नेत्ररोगान्सुदुष्टाश्च तथासर्वा-
 न्मुखेस्थितान् ॥ नाशयेन्नात्रसंदेहो मंडलस्यचसेव-
 नात् । महाकुमारीपाकोयं भरद्वाजविनिर्मितः ॥

शत पत्रिका अर्थात् यह सेवती पाक भारद्वाज मुनिका बनाया हुआ
 है । जो कुछ दिनों तक पथ्य सहित सेवन करने से उरक्षत और यक्ष्मा-
 रोग दोनों को आराम करता है । सून बन्द होजानेके बाद अथवा कुछ २
 सून का छीटा आता भी रहै तो भी इस पाक को पांच छ गह्वीने तक
 धराधर सेवन करता रहे ।

सेवती का एक हजार फूल, ताजा हो तो निहायत उत्तम है न
 मिले तो सूखा फूल ले, डेढ़ पाव घी में सूख भूँजै, जब सुखी पर आ-
 जाय उसे अग्नि पर से उतार लेय और अढ़ाई सेर मिश्री की चासनी
 बनाय उची में फूल को मिलाय याद निम्नलिखित बीजों को कूट कपड़
 छानकर उसीमें मिलाय देय । दालचिनी, तेजपात, छोटी लायची, नाग
 केसर यह सब तीन २ तोला, मुनक्का १८ तोला सहित २४ तोला गुरिष

का सत्व तथा क्षीर और सफेद जी० यह सब हेढ़ २ तोला । यदि उत्तम निहायत शुद्ध रांगे का भस्म अर्थात् बंगेस्वर और सीसे का भस्म याने नागेस्वर मिले तो यह भी एक २ तोला छाल देय किन्तु जिस रोगी के मिजाज में गरमी अधिक हो पेटमें जलन हो उसको दवा में रस न हाले क्योंकि सियाय हानिके लाभ होना अति दुस्कर है । साफ कपूर एक मासा छाले क्योंकि जिस दवा की निकदार अधिक है जादा कपूर छाल देने से घतना कहुआ हो जाता है कि रोगी बहुत कठिनतासे खाता है । सब दवाइयोंको एकमें मिला घृत पात्र अथवा असृतघानमें रख देय । इस का मात्रा ३ मासा से ६ मासा तक है बल के अनुसार दोनों समय खाकर ऊपरसे दूध मिश्री पीनेसे उरक्षत और यक्ष्मा दोनों आराम होते हैं ऐसे तो लिखा है पुराना बुखार, क्षयी खांसी, मन्दाग्नि प्रमेह रात दिन बना रहने वाला ज्वर शिर दर्द प्रदर रक्त सम्यन्धी रोग कोढ़ बाबाशीर नेत्र और मुख इन सब रोगों को यह पाक एक मण्डल अर्थात् उनचास दिन में आराम करता है ॥

इति उरक्षत रोग समप्तः ॥

अथ हम यकृति जिसे हाकुरीमें लीवर और हिक्मत में कलेजा कहते हैं उसका वयान करते हैं यह मनुष्यके दहिने भाग पसुलियों के नीचे होता है इसमें अन्तर पुराना ज्वर खांसी होनेसे यक्ष्मा और उरक्षत रोग में भी वरम (शोथ) आजाता है और कलेजे पर वरम होनेसे उपरोक्त रोग असाध्य होजाते हैं, सबब यह है कि कलेजे पर वरम होते ही यकृत न करने से शीघ्र उस में मवाद आ जाता है और वही मवाद अथवा उसीमें से जरा २ सा खून कफके साथ मुखसे गिरने लगता है उसी को हकीम लोग सिल की बिमारी कहते हैं । हमारे वैद्य शास्त्र में इसका वयान बहुत कम है किन्तु इतना लिख दिया है कि जो स्त्रीहाकी दवा है वही यकृत की दवा है और बंगसेनमें कुछ निदान भी लिखा है । यथा—

मन्दज्वराग्निःकफपित्तलिङ्गै रुपद्रुतःक्षीणवलोति-
पांडुः । सव्यान्यपाश्वेयकृतप्रदुष्टे, ज्ञेयंयकृदाल्युदरं
तथैव ॥

शरीर में भीमा ज्वर का घना रहना, भूख का न लगना, कफ पित्त का कोप रहना, बल का घट जाना, शरीर का रंग पीला होजाना तब जानना कि दक्षिण पशुरी के नीचे यकृत बिगड़ गया है अर्थात् इसमें यिनारी हुई है ।

प्रेह्निहृष्टाःक्रियाःसर्वा यकृतःसंप्रकल्पयेत् । का-
र्य्यश्चदक्षिणेवाहौ तत्रशोणितमोक्षणम् ॥

जो जो क्रियायें तथा औषध प्रीहा अर्थात् पिलही आराम करने की हैं वही सब यकृत रोग में कल्पना करना चाहिये और दक्षिण हाथके रक्त मोक्षण याने फस्त खुलवादेय । फस्त खुलाने की विधि हिस्मतमें भी है, इलाजुलगुरवा में लिखा है । सिल-फेफड़े के घाव को कहते हैं, इस रोगवाले को ऐसा ज्वर आवे जो कभी न उतरे, कभी सांसी से रुधिर भी निकलता है और रोगी दिन २ क्षीण पड़ता जाता है । यद्यपि यह रोग असामर्थ्य है परन्तु इसलिये कि रोगी शीघ्र न भरजावे, वासलीक का फस्तखोले फिर ज्वर और सांसी का यंत्र करे । यह रोग जैसा कठिन है वैसाही हमारे पुराने ढाँचे के वैद्य उससे अनभिष्ट भी हैं, बिलकुल नहीं जानते हैं कि फलेजा किस चिड़िया को कहते हैं । अगर रोगी कहे भी कि हमारे पेट में दहिने तरफ दर्द होता है और दहिने करघट लेटने में अधिक सांसी आती है तो आजकल के वैद्य कहेंगे कि तुम्हारे पेट में मल जम गया है ॥

यकृत ।

यकृत यानी जिगर जिसको अंगरेजी में लीवर कहते हैं मनुष्य के शरीर में सब से बड़ा यंत्र है कि जिसके बिगड़ जाने से मनुष्य को इस संसार में पादस्थित रखना नहा दुष्कर हो जाता है अगर उसे हम मनुष्य का जीवन अथवा प्राण कहें तो अनुचित न होगा । यह जिगर मनुष्य के दहिने तरफ पसुलियों के नीचे चौड़ाई में ४ इंच लम्बाई में १० या ११ इंच मोटाई में तख्तीनीन २ इंच का यह यंत्र है जो तील में एक सेर नौ छँटाक अथवा एक सेर दश छँटाक है चमर और शरीर की मोटाई अथवा दुबलेपन के हिसाब से छोटा बड़ा भी हो सकता है । इस का रंग भूरा अकसर गुराही या किसी क़दर ज़रदी मायल होता है । और कभी स्याही मायल भी हो जाता है ख़फ़फ़न में भैजनी रंग और मुज़ायम, बुढ़ापेमें अकसर फीका और पीले रंग का होता है, इस में दो पर्त हैं और दो किनारे हैं । ऊपर का परदा कुबड़ा और सामने को शुका है, नीचे के तरफ़ आढ़ा और पीछे को धूमिल नज़र आता है । यकृत का मुख्य दो काम है पित्त और रुधिर को बनाना याकी हाल शारीरिक स्थान देखने से मालूम होगा ।

यकृत का निदान ।

यकृत का मूशन अथवा उसमें ग़याद पड़ जाना यकृत के छूने से मालूम हो जाता है । दहिने तरफ़ पसुली के नीचे दयाने से कड़ा मालूम हो और दयाने से रोगी को कुछ दर्द मालूम हो, दहिने करवट लेटने से रोगी को तकलीफ़ हो अथवा सांभी अधिक हो और जब यकृत को दयाने से रोगी को कोड़ा सा दूखने का दर्द मालूम हो तो जानना चाहिये कि यकृत में ग़याद आगया है ।

यकृत की चिकित्सा ।

चिकित्सक को चाहिये की पुराने ज़र सांभी में यकृत की परीक्षा

अवश्य करै क्योंकि जय तक कलेजे पर शोथ नहीं होता, खांसी, ज्वर को आराम करना कोई कठिन बात नहीं है किन्तु शोथ होनेही से अमाध्य हो जाता है । जय देखे कि शोथ नयोन है और रोगी भी बलवान है और उमर १६ वर्ष से अधिक है, शीघ्र दहिने हाथ में कस्त, गुलपादेय और निम्नलिखित दवाइयों का लेप सूजन पर लगावै तथा रोगी को खूब पहरेज के साथ रखै ।

सुपारी गुनाय का फूल, सफेद चन्दन, चिरायता यह सब चार २ मासे, जौ का मैदा १ तोला कपूर ३ मासा सबों को सिरकेमें खूब महीन पीस दिनमें तीन दफे कलेजे पर लेपकरै और जय चाहे गरम जलसे धो डाला करै यदि फस्त न खोलावै तो भी इस लेप को लगावै ॥

अगर कलेजे पर सूजन गरमीके बजे से हो, उसकी पहिचान यह है कि यकृत में जलन हो या खजुरी मालूम हो, दोनों से गरम लगे तो इस लेप को लगावै कपूर रुमा, मस्तागी, तेजपात तीन २ मासे गेरुमही, गुल यनपसा गुलाब के फूल सफेद चन्दन, सूखा धनिया, छ छ मासे सबोंको जलमें खूब महीन पीस दिन में तीन बार दफे लेप करै ।

अगर यकृत का सूजन सर्दीसे हो उस की पहिचान यह है कि सूजन सख हो छूने में शीतल मालूम हो किन्तु यह परीक्षा कर लेना चाहिये कि पसीना निकलने से तो शीतल नहीं मालूम होता यदि हो तो इस लेप को लगावै ॥

यालउड़, सुगंधवाला और दालचिनी पांच २ मासे, केशर दो मासे सबों को बावूने के तेल में पीस के दिनमें तीन दफे आइस्ते २ यकृतपर मट्टन करै और अधिक बढ़ी हुई बीमारी में किसी सतवैद्य की भी राय लेवै क्योंकि चिकित्सा का काम बड़ा नाजुक है जरा भी चूकने में रोगी का प्राणान्त हो जाता है । दूसरे यक्ष्मा आदि रोग ऐसे कठिन हैं कि उत्तम दवा से तो शच्छे होतेही नहीं, कहीं अनारही के हाथ में पड़े तो शीघ्रही परलोक यात्रा कर आते हैं आप लोग सत्य जानिये, वर्तमान समय में जहां तक हमने परीक्षा लिया है एक हिस्से रोगी रोगसे मरते हैं और दो हिस्से अटकलपच्चू प्रकृति विरुद्ध औषध के व्यवहारसे मरते हैं इसलिये चिकित्सा कर्म बड़े सावधानी से करनी चाहिये ॥

यक्ष्मा आदि रोगोंपर मोतीका सेवन ।

और रसों की अपेक्षा मूंगा और मोती यह दो वस्तु अच्छे हैं और गुणकारी भी हैं रसों में बड़ा भारी दोष यह है कि उत्तम रस प्रकृति के अनुसार पड़ा तो अमृत के समान गुण करता है और विपरीत में विष के समान मनुष्य को मार डालता है । मोती मूंगे में यह बात नहीं है प्रकृति विरुद्ध होने पर भी अधिक कोप नहीं करते ॥

मोती की उत्पत्ति ।

शुक्तिःशंखोमजः क्रोडफणीमत्स्यश्चदर्दुरः । वेणुश्चाष्टौसमाख्याता सुज्ञैर्मौक्तिकयोनयः ॥

जवाहिरातके जानने वाले विद्वानोंने मोतीकी उत्पत्ति आठ तरह से लिखी है । सीपी से १ शंखसे २ हाथी से (जिसे गजमुक्ता कहते हैं) ३ कुंजरसे ४ सर्पसे ५ मछलीसे ६ मेढ़कसे ७ और बांससे ८ और सब मोतियोंकी पहिचान भी शास्त्रोंमें लिखे हैं ग्रन्थ बढ़जाने के भय से नहीं लिखा । जो मोती रङ्गमें फीकी, टेढ़ीमेढ़ी, पिपटी ललाई लिये मछली के आंखके समान, रूखी, कुंधी और नीची ऐसी मोती न पहरना चाहिये और न खाने लायक है ।

जो मोती नक्षत्रके समान चमकीली गोल, चिकनी, मोटी, छिद्र रहित, चन्द्रमाके समान खेत निर्मल यजन में मारी यही मोती दामी है धारण करने तथा खाने लायक है निर्दोष मोतीका परीक्षा वैद्यकशास्त्रमें इस प्रकार लिखी है ।

लवणक्षारक्षोदिन पात्रेगोमूत्रपूरितेक्षिप्तं । मर्दित-
मपिशालितुषैर्य दविकृतं मौक्तिकं जात्यं ॥

एक पात्र में आधसेर गो मूत्र और आधी छंटाक सांभर नोन डाल उसीमें दो पहर मोती को दोला यन्त्र के विधि से लटकाय देय पश्चात् निफाल चावल की भूसी में डाल के मले और पानी से धो डाले यदि मोती का रूपान्तर न हो तो उस मोती को शुद्ध जानना वही मोती खाने लायक है ।

मोती शोधन ।

मोती को अग्निमें तपाय २ कर सात घेर घीकुम्भा के रसमें और ७ बार घीलाईके रसमें युक्तावे अथवा एकही चीजमें युक्तावे तो शुद्ध हो यही मोती मालतीयसना में भी डाले,

हकीम लोग मोती को गुलाब या केवड़े के अर्क में सिर्फ ४ पहर घोटायके पूर्णकर लेते हैं और यही रोगी को खिलाते हैं और यही चाल सर्वत्र फैली है न कोई परीक्षा लेता है और न कोई शोधन करके भस्म करता है यही कारण है कि जो रोगियों को कायदा नहीं करता ।

मोती मारण विधि ।

शुद्ध मोती ४ तोला, शुद्ध पारा ६ मासा और शुद्ध आंवलासार गन्धक ६ मासा पहले गन्धक और पारे को मिलाकर कजली करे पश्चात् उसी मोतीमें डाल कर घीकुम्भार के रसमें सूख महीन घोटै ४ पहर तक खाद मोला यनाय शरावसम्पुट में रख कपूर मिट्टी कर गजपुट में पूर देय स्यांग गोतल होनेपर मोती के भस्म को कांचकी में रख रसमें

गन्धक और पारा उड़ जाता है इस भस्म का मात्रा २ चावलसे १ रत्ती तक है मोती को लोग सोना भाखी की तरह भी फूंकते हैं ।

मोती भस्म का गुण ।

मौक्तिकंसमधुरंसुशीतलं दृष्टि रोगशमनं विषापहं । रा-
जयक्ष्मपरिकोपनाशनं क्षणिवीर्यबलपुष्टिवर्द्धनं ॥

मोती का भस्म मधुर और शीतल है नेत्र रोग विष रोग और राज यक्ष्मा उरःक्षत आदि रोगों को नाश करता है धातु की कमजोरी और बलकी कमजोरी को दूर करता है ।

क्लृप्तपित्तक्षयध्वंसी कासस्वासाऽग्निमान्द्यजित् ।
पुष्टिदंष्ट्रप्यमायुष्यं दाहघ्नं मौक्तिकं परम् ॥

क्लृप्त पित्त कफक्षयी खांसी स्वास अग्निकी मन्दता को नाश करता है पुष्टिकर शरीरमें तैयारी लानेवाला तथा उमर को बढ़ाता है ।

मूंगा की उत्पत्ति लक्षण ।

मूंगे का वृक्ष समुद्रमें लालरंग का होता है उसी से मूंगा उत्पन्न होता है । पके कुंदुरु फल के समान लाल गोल, चिकना, घमकदार, छिद्र रहित मूंगा अच्छा होता है । वही मूंगा पहरने और खाने लायक होता है और जो मूंगा रंगमें पीतलके समान, अथवा फीके रंगका, टेढ़ा मेढ़ा, बारीक, छिद्र सहित, रूखा और कलौस रंग का मूंगा अच्छा नहीं होता, ऐसे मूंगे को न पहरना चाहिये और न खाना चाहिये । आज कल के वैद्य लोग बिना शुद्ध किये डाली अथवा मूंगे की जड़को भस्म करके रखते

रहते हैं और अखिल मूंगे के भस्म के नाम से वेच कर लोगों को ठगते हैं क्योंकि मूंगा और मूंगे की डाली का रंग एकही समान होता है सिर्फ गुण और भावमें फर्क है अच्छा मूंगा २) तोलेसे कममें नहीं मिलेगा और मूंगे की जड़ ४) सेर अर्थात् तीन पैसा तोला बिकता है । पीसी दवा और मुण्डा योगी को, घिरलाही लोग पहचान सकते हैं, आज के समय में धर्म का डर तो नहीं रहा रोगी चाहै मरे या जिये यहां तो पैसा पैदा करने से काम-दूसी तरह लोग सीपी को भस्मकर मोती भस्मके नाम से बेचते हैं, लोगों को नुकसान करने से वैद्यक नाम और भी हुंदा जाता है ।
 "मौक्तिकस्य विधिप्रोक्तः प्रयालेपि तथा विधिः"

जो जो विधि मोती शुद्ध करने और फूंकने की हैं वही क्रियायें मूंगे की समझनी चाहिये और वही खाने की भी विधि है ।

मूंगा के भस्म का गुण ।

प्रवालमधुरसाम्लं कफपित्तार्तिदोपनुत् । वीर्य-
 कान्तिकरं स्त्रीणां धृतेः मंगलदायकं ॥ क्षये पित्तास्त्रका-
 सघ्नं दीपनं पाचनं लघु । विषभूतादिशमनं विदुमनेत्र-
 रोगहृत् ॥

मूंगा—मधुर, खटा, दीपन, पाचन तथा हलका, वीर्य और कांति को बढ़ानेवाला; एवं स्त्रियों को धारण करने से मङ्गल करता है । कफ, पित्त, त्रिदोष, यक्ष्मा, रक्तपित्त, खांसी, विषदोष और उन्मादादि दोषों को दूर करता है ॥

यति यरुत रोगः

अथ कास रोगाधिकारः ।

यका रोग समाप्त करनेके बाद अब हम खांसी रोगका प्रकरण उठाते हैं क्योंकि इस प्रबंध में हम उन्हीं रोगों का ध्यान करना चाहते हैं जो खासकर धातु से सम्बन्ध रखते हैं । खांसी यह रोग भी ऐसी कठिन है, यदि कुछ दिन भी गफलत करे तो इसे पीछा छुटना कठिन पड़ जाता है । लोग मिसरा कहते हैं (रोग का घर खांसी और लड़ाई का घर हां-सी) क्योंकि बिना धातु से सम्बन्ध खांसी रह नहीं सकती । जुकाम घेरह से लोगों को खांसी आने लगती है अगर धातु शुद्ध है तो बिना दवाके छुट जायगी, किन्तु धातु के विकार सेही खांसी जड़ पानती है अज्ञान लोग धातु पर ध्यान नहीं देते खांसी को दवा गर्ने शर्द खिलाते जाते हैं और खांसी जावज्जीवन पीछा नहीं छोड़ती इसलिये हम पाठकगणोंके उपकारार्थ देशकालानुसार कासरोग का निदानादि कारण और चिकित्सा लिखते हैं ।

कांस रोग का आदि कारण ।

धूमोपघाताद्रजसस्तथैवव्यायामरूक्षान्ननिपेवणाश्च ।
विमार्गत्वादतिभोजनस्य वेगावरोधात्क्षवथोस्तथैव ॥
प्राणोह्युदानानुगतःप्रदुष्टः संभिन्नकांस्थस्वनतुल्यघो-
पः । निरेतिवक्त्रात्सहसांसदोषो मनीषिभिःकांसइति-
प्रदिष्टः ॥

20351

यह श्लोक भरद्वाज संहिता का है मुख और नाक में धुआं लगने से अथवा धूरि गरदा नाक मुखमें हो के ठमका लगने से अथवा कसरत

सते समय गरमी मालूम होना और कड़ुआ कफ का निकलना यह लक्षण होते हैं ।

कफ की खांसी में मुख में कफ लपटा रहता है, यह मालूम होता है कि गले में कफ भरा है, गिर में दर्द शरीर में भारीपन, भोजन अच्छा नहीं मालूम होना, शरीर में दर्द या शरीर जकड़ी सी मालूम हो, गठे में खजुली अथवा शरीर में खजुली मालूम हो और अत्यन्त खांसने से गाढ़ा कफ निकलता है ।

क्षयकास के लक्षण और क्षतकास के वही हैं जो यक्ष्मारोग में और उरक्षत रोगमें लिख आये हैं दुबारा लिखनेका कोई प्रयोजन नहीं, ग्रन्थकारों ने खांसी प्रकरण में क्षयकास अर्थात् यक्ष्मा रोग क्षतकास याने उरक्षत रोग जिसे ऊपर लिख आये पुनः निनिदान आदि कारणके लिख डाला है किन्तु यातसय वही है ग्रन्थ बढ़ानेके भयसे हमने नहीं लिखा ॥

एक प्रकारकी खांसी कौद्या की कमजोरी अर्थात् कौद्या लटक जानेसे होती है । कौद्या और भी कारणों से लटक जाता है उसमें भी खांसी आने लगती है और कमजोरी के वजसे खांसते २ भी कौद्या लटक जाता है और लड़कों का कौद्या प्रायः गिरजाता है, उसमें हर समय गला सरसराता रहता है और खांसी आती रहती है, उस रोगी को खांसी जरा भी चैन नहीं लेने देती या मालूम होता है कि गले में कुछ रुका है । कौद्ये पर ध्यान न देकर लोग खांसीकी दवा देते जाते हैं किन्तु खांसी और बढ़ती जाती है, इसके अतिरिक्त रोगों में भी खांसी हो जाती है जैसे—

पाण्डुरोगेतथायक्ष्मे गुल्मेवातिक्षतक्षये । शोफार्श-
सांप्रतिश्याये चावश्यंकाससम्भवः ॥ बालानांजायते
कासो धात्रिवैकल्ययोगितः ॥

पांडु रोग में, यक्ष्मा (आगे लिख चुके हैं), रोग में, गुहमरोग में, चोटलगने, धातु क्षय में, सूजन रोग में, घवासीरमें और जुकाममें अवश्य खांसी आने लगती है तथा धात्री अर्थात् माता के कुपथ्य से बालकों के भी खांसी आने लगती है ।

अथ साध्याऽसाध्य लक्षणम् ।

इत्येपक्षयजःकासः क्षीणानादेहनाशनः । साध्यो
बलवतावास्या द्याप्यस्त्वेवंक्षतोत्थितः ॥ नवौकदा-
चित्सिद्धयोतामपिपादगुणान्विता ॥ स्थविराणांजरा-
कासः सर्वोऽप्यःप्रकीर्तितः । त्रीन्पूर्वान् साधयेत्सा-
ध्यान् पथ्यैर्याप्यांस्तुयापयेत् ॥ पूयाभमरुणंश्यावं हरि-
तप्रीतनीलकं । निष्ठीवेच्छ्वासकासात्तौनजीवतिहतस्वरः ॥

अब कास रोग का साध्य और असाध्य लक्षण लिखते हैं । जो खांसी यक्ष्मासे होती है वह तो बड़े बलवानके भी देहको नाशकर डालती है, कदाचित् बलवान पुरुषके अग्न्यादि प्रबलके कारण साध्य हो किन्तु पूरे विश्वास लायक नहीं है । इसी प्रकार उरःक्षत रोगसे भी उत्पन्न खांसी को जानिये, अगर यह दोनों रोग माने राजयक्ष्मा और उरःक्षत नवीन हैं और वैद्यादिक चारों चरण * युक्त हों तो शायद रोग छुट

* वैद्यादिक चारों चरण यह है (भिषगद्रव्याण्युपस्थाता रोगीपाद चतुष्टयम् । गुणवत्कारणञ्चैयं विकाररूपीपशान्तये ॥) (भिषग्) वैद्य जो शास्त्र और देश काष्ठ का जाननेवाला हो प्रथम पैर है । (द्रव्य) उत्तम औषधी जो प्रकृति के सुवाफिक हो अथवा रोगो घनवान हो वैद्य जिस मौ-

जाय, जो घटुमनुष्योंके खांसी होती है जिसे जराकाम कहते हैं यह भी आपही समझिये जो ग्रन्थन यातादि दोषों करके तीन प्रकारकी खांसी कहें आये हैं सो साध्य हैं अर्थात् उत्तम चिकित्सा करनेसे छूट जाती है और साध्य हैं उन्हें यथार्थ पथ्यसे रखना चाहिये । जो खांसी वाला पीय सरीसा, लाल काला हरित, पीला और नीले रंग का कफ छूकता हो स्यास फूलता हो और गला पड़ गया हो ऐसा खांसी वाला धिमार कभी जी नहीं सकता ॥

जुकाम से उत्पन्न जो खांसी है वह जुकामके शुद्ध करनेसेही आराम हो जाती है, अगर जल्द यत्न न किया जाय तो वह भी असाध्य हो सकती है ॥

खांसी रोग में पथ्य ।

जब तथा गेहूं की रोटी, सांठी तथा पुराने चावल का भात, उरद सूंग और कुरथीकी धुली दाल जिसमें छिलका न हो, परवर, नेनुआ खरबूजा, कैला आदि की तरकारी, वधुआ मकोंई पीपतिया और कोमल

घस को बगाने पथ्यवा मँगाने की इच्छा भूगट करे शीघ्र हो जाय यह दूसरा पैर है । रोगी के पास रहने वाला वह भी ऐसा कायक हो कि जो वेद्य बतलाय जाय उस क्रिया में चावल भात फरक न पड़े और न रोगी का मुलाहिजा करे कि जो रोगी मांगे वही चीज मँगो के खिला दिय यह तीसरा पैर है । और रोगी, रोगी भी केश हो (वेद्यभक्तोजितेन्द्रियः) वेद्य में भक्ती हो, हृदय में विश्वास कर लेय कि यह हमको अवश्य आरोग्यकर देंगे और वेद्य जो खाने पीने का बता दे उससे रस्ती भात अपनी मन मौजो न करे यह चौथा पैर है यह चारो पैर एकत्रित होने से असाध्य रोग भी साध्य हो के आराम हो जाता है और इनके बिना चिकित्सा कम नहीं हो सकता है ॥

मूलीका साग, सूय मुलायम भांटाका भरता, गौ और बकरीका दूध घी और मलाई अर्थात् दूधके ऊपरकी मोटी साढ़ी (वालाई अथवा दूधके ऊपरकी मोटी मलाई साम को मिश्री मिला के खाना और ऊपरसे पानी न पीना खांसी को बहुत जल्द आराम करता है इसी प्रकार सवेरे नाश्तन मिश्री का खाना भी बहुत फायदा करता है, खांसी की बिमारी में पुराना घी खिलाना लिखा है किन्तु इसमें हमारी सम्मति नहीं है क्योंकि पुराने घी से गलेमें जलन होने लगती है । साम को भोजनके साथ प्रकृति के अनुसार शराब पीना हुक्का पीना खटाई में बिजिरा नॉयू की अथवा कैथेकी घटनी मसालामें शोंठ, अदरक, गोलमिर्च, सफेद जीरा, छोटी लायची, सहजुन और पियाज खांसी की बिमारी में जल बहुत साफ और शुद्ध पीना चाहिये कुंय का जल जिसमें बहुत लोग पानी भरते हैं उसे गरम करके उत्तम रीतिसे छानकर अथवा ताजा पानी पिये दिनमें सोना, शहद घाटना घान का लाया खाना इसके पेट रहना खांसी रोग के लिये पथ्य है ॥

खांसी रोग में अपथ्य ।

दिशा मार्गमें पिचकारी लेना सुंघनी सुंघना घान और आंच के सामने रहना गरदा गुब्बार और धुयेमें रहना बहुत रास्ता चलना स्त्री प्रसंग करना कब्ज करने वाली तथा बिदाही अर्थात् जो चीज खानेसे छाती पर जलन होती है और जितने प्रकारके रुखे अन्न हैं जैसे बाजरा आदि इनको न खावे दिशा पेशाब डकार खांसी और छोक इनके वेगों को रोकना मछली, बिरुहुअन्न, खराबजल, खांसी रोग वाला त्याग करे ।

खांसी रोग की चिकित्सा ।

प्रथम हम खांसी रोगकी साधारण दवा लिखते हैं जो सर्व साधारण जन बना सके हैं ॥

विभीतकंघृताभ्यक्तं गोशकृत्परिवेष्टितं । स्विन्नम-
ग्नौहरेत्कासं धुवमास्यविधारितं ॥

बहेरे पर घी चुपरके ऊपरसे गौ का गोबर लपेटके आग में पकाय
फिर उसको निकाल साफ करके रखै जब खांसी आवै एक टुकरा मुख
में डाल कर चूसे और पष्य से रहै तो अवश्य खांसी जाती रहैगी ॥

शठोशृंगीकणाभर्गी गुडवारिदयासकैः । सतैलेर्वात
कासघ्नो लेहोऽयमपराजितः ॥

कचूर, ककराशिंगी, छोटी पीपर भारंगी साफ गुड़, नागर मेथा
और जवासा इन सब दवाइयों को कूट कपरछान कर उसमें गुड़ मिला
देय, इसका मात्रा २ मासा है, काले तिलका तेलमें सानके देनेों समय
अथवा तीन समय चाटनेसे घातज खांसी अर्थात् सूखी खांसी जिसमें
बलगम नहीं आता आराम होती है यदि तेल पसन्द न होता शहदके
साथ पाटे किन्तु गुड़ न मिलावै ॥

लोग तेल का नाम सुन्तेही चकृत होंगे कि खांसीमें तेल चाटना
यह कैसी घात है । घातज खांसी जब पुरानी होजाती है बिना तेल घी
पिये आराम नहीं होती, शिव प्रसाद नामक एक फायस्य जिसकी उमर
चौबीस पच्चीस बरसकीथी तीन बरससे उसे खांसीकी धिनारी रही कोई
हकीम धैर्य डाकुर न छूटाहोगा उसने सबोंकी दवाइयांकी किसीके दवासे
फायदा न पहुँचा अन्तमें हमारे पास आया हमने भी चार महीने तक
सैकड़ों तरहकी दवा खिलाई किसी से कुछ फायदा न पहुँचा अन्तमें
गव्या हमने पिप्यत्वादिघृत यनाके पिलाना शुरूकिया २ महीनेमें बिलकुल
खांसी जाती रही चार महीने तक बराबर घी पिलानेसे उसकी दूनी
गरीर होगई जिसे चार बरस हुये आरोग्य है ॥

घातज खांसीमें अलसी का तेल पीना बहुत फायदा करता है किन्तु लोगोंसे तेल पिया नहीं जाता तेल पीने वालेको दूध नहीं खाना चाहिये ॥

हकीमी काढ़ा ।

जो घातज खांसीको निस्सन्देह फायदा करता है । गुलबनप्सा ६ मासा हन्सरज ६ मासा मुलेठी ३ मासा खतर्फी का बीज ३ मासा अलसी ३ मासा उन्नाय ३ दाना सबोंको अच्छकचराकर मिट्टीके बर्तनमें एकपाव पानी में पकाये जब डेढ़ छंटाक पानी रह जाय मल छानकर ३ मासा मिश्री और तीन मासा शहद डालके पी जावे इसी प्रकार दोनों समय पीनेसे १५ दिनमें खांसी जाती रहेगी अथवा जबतक खांसी न आराम हो पी जावे ॥

घातज खांसी वालेको शाम को बलाई मिश्री अथवा दूधके ऊपर फी मोटी साढ़ी मिश्री मिलाकर खानेसे बहुत फायदा करता है जैसे सब प्रकारके पुरानी खांसी रोगमें माखन मिश्री ।

रोज दोनों समय गुदा पर किसी प्रकारका तेल हो मलमा खांसी रोगमें फायदा करता है ॥

केलेके पत्ती छीनी में आधी पीपर अथवा पांच चार दाना गोल निर्घ गाढ़ कर ओसमें रखदेय और सबेरे छील कर पहले पीपर को खाके ऊपरसे छीनी को खाजाय या पीपर को खाय एक मनुष्य बल के अनुसार उसी तरह दो तीन छीनी तक खा सका है । यह योग पित्त खांसी को भी आराम करता है ॥

पित्त कास चिकित्सा ।

द्राक्षामधुकर्षजूरं पिप्पलीमरिचान्वितं । पित्तकास
हरं ह्येतद्विद्वान्माक्षिकसर्पिणा ॥

बीज रहित मुनक्का मुलेठी और बीज रहित छोहारा तीनों बीजों का समान भाग २ तोलाले आध पाय पानीमें पकावे जब आधी छटांक जल रहजाय सूख मलके छान लेय छोटी पीपर आधी और गोल निच ५ दाना महीन पीस उसीमें मिलाकर चाटनेसे पित्तकी खांसी आराम होती है । इसी प्रकार दोनों समय चाटना चाहिये दवा चाटकर ऊपर से पानी न पिये पित्तकी खांसी में भीठी बीज खाना फायदा करता है यदि पित्त अधिक बढ़ा हो तो मुलेठी का काढ़ा पिलाके बमन करा दे जिससे पित्त सब निकल जाय और मुन्जिस देके मुलापन रेचन द्वारा दो बार दस्त करादे तो औरभी उत्तम है ॥

वासकरुवरसः पेयो मधुयुक्तो हिताग्निना । पित्तश्ले-
ष्मकृतेकासे रक्तपित्ते विशेषतः ॥

पित्त कफ जनित खांसीवाला और रक्त पित्तवाला अगर दोनों समय कसे की पत्ती का रस २ तोला, यहद ६ मासा दोनों को निला के चाटे और सूख पथ्य से रहे तो आरोग्य हो । उसी प्रकार दिन में दो या तीन दफे चाटना चाहिये । यह बात चिकित्सक को हर समय ध्यान में रखना चाहिये कोई किस की दवा किसी प्रकृति के लिये क्यों न हो, रोगी से हमेशा पूछता रहे कि तुम्हें दवा गरमी तो नहीं करती अगर रोगी कहे कि यह दवा हम को गरमी करती है अर्थात् गला सूखता है और पेट में जलन होती है तो उस दवा का देना फिरन बन्द कर देय क्योंकि जो दवा रोगी को गरमी करेगी उस दवा से फायदा नहीं होगा ।

कफ जनित खांसी की चिकित्सा ।

वलिनं वमनेनादौ शोधितं कफकासिनं । यवान्नैः
कटुरूक्षोष्णैः कफघ्नैश्चाप्युपाचरेत् ॥ स्वरसंश्रृंगवेरस्य
माक्षिकेण समन्वितं । पाथयेच्छ्वासकासघ्नं प्रतिश्याय-
कफापहं ॥

कफकास वाला अगर बलवान हो तो उसको प्रथम लवण द्वारा ब-
सन कराये के कफ को निकाल देय और खाने को जवका भात अथवा
जवे की रोटी, कहुआ, कूसा और कुछ गरम पदार्थ जो कफ को नाशक
है खानेको देय । अदरक का ताजा रस दो सोला और शहद इ मांसा
दानोंको एकमें मिला के पिलावे इसी प्रकार दानों समय पिलाने से और
पथ्य सहित रोगी को रखने से; श्वास, खांसी, जुकाम और कफ का नाश
होता है ॥

मनःशिलालितदलं वर्दया उपशोषितं । सक्षीरधूम-
पानं च महाकासनिवर्हणं ॥

शुद्ध मैनशिल को पानी में पीस के घेर के पत्तों पर लेप कर छाया
में सुखाय, घिलिम में भर उसका धुआं पीके ऊपर से गी का दूध मिश्री
मिला कर पीने से कफ जनित कास रोग आराम होता है । अगर इसके
पीने से शिर में घुमरी या शिर में दर्द अथवा जो संचलायती न पीये ।
या बहुत थोड़ा २ पीने का अभ्यास करे । इसी प्रकार छोटी हरी को
घिलिम में पीकर ऊपर से दूध मिश्री पीने से और दिन में कई दफे
बिहीदाने का लुआव और मिश्री पीने से सब प्रकार की खांसी नाश
होती है ।

नजला के खांसी की दवा ।

अगर नजला पुराना हो गया हो और खांसी पीछा न छोड़ती हो तो जातीफलादि चूर्ण जो पञ्चम खण्ड के ७७ पेज में लिख आये हैं दोनों समय शहद के साथ अथवा सरसत उन्नाव या सरसत गुलबनपसा के साथ चाट कर ऊपर से मिथ्री सहित उष्ण दूध पिये या कुछ दिनों तक मोती का सेवन करे, और सूख पथ्य से रहे क्योंकि नजले की खांसी मनुष्य का पीछा बहुत दिकृत से छोड़ती है खांसी अधिक उमर में जब नजले से खांसी आने लगती है ऐसी किसीको छोड़ती है। ऐसी अवस्था में लोग अफीम खाने लगते हैं और सिवाय अफीम के दूसरी दवा है भी नहीं जब देखे कि रोगी की उमर चालीस, पचास से अधिक है और अनेक दवा दे के एक गये खांसी पीछा नहीं छोड़ती उस समय आठ दण्ड खण्ड के पेज में जो अफीम बनाने की क्रियायें लिखी हैं तैय्यार कर के बहुत कम मात्रा रोगी को देना आरंभ करे और दूध अधिक खिलावे, अगर रोगी पथ्य से रहेगा तो अवश्य खांसी की बिमारी जाती रहेगी और थोड़ेही दिनों में रोगी रिप्ट पुष्ट हो जायगा ।

अगर थोड़ेही दिनों की खांसी हो चाहे नजला भी जारी हो निम्नलिखित दवा को कुछ दिनों तक पथ्य सहित खाने से निस्सन्देह फायदा होगा ।

बंसलीचन १ तोला, छोटीलायची १ तोला, गुर्च का सत्त १ तोला, तीखुर ६ मासा, गोवंद बबूल का ६ मासा, छोटी पीपर ६ मासा, दालचीनी ३ मासा, रुमीमस्तगी ३ मासा, सब को सहोद पीस चूर्ण करलेय इसका मात्रा १॥ मासा से ३ मासा तक है शहद के साथ अथवा उक्त सरसतों के साथ दोनों समय चाटकर ऊपर से यह जुगांदा को पिये । गुलबनपसा ६ मासा, उन्नाव ४ दाना, मुलेठी ३ मासा और मिथ्री ६ मासा चारों चीजों को पांचभर पानी में पकावे जब आधपांच रह जाय मल डाल कर पी जाये, कुछ दिनों तक बराबर इस दवा को सेवन करने से नजले से उत्पन्न खांसी जाती रहती है ।

यद्देहदृ का सकल १ तोला घहेरा का सकल २ तोला सूरज आवला
धीज रहित ४ तोला छोटी पीपर २ तोला सबों को महीन चूर्ण करलेय
इस चूर्ण को अन्दाज माफिक दो समय अथवा तीन समय सहित के साथ
चाटने से खांसी, श्वास और ज्वर का नाश होता है । यह चूर्ण दस्त का
लानेवाला और अग्नि को जगता है ।

मरिचादि बटी ।

मरिचकर्ममात्रस्यात्पिप्लीकपसंमिता । अर्द्धकर्मो
यवक्षारः कर्पयुग्मचदादिमम् ॥ एतच्चूर्णीकृतैर्युज्याद-
ष्टकर्मगुदेनहि । शानप्रमाणगुटिकां कृत्वावक्त्रेविधार-
येत् ॥ अस्याःप्रभावात्सर्वेऽपि कासायांत्येवसंक्षयम् ॥

निरण्ड १ तोला छोटी पीपर १ तोला जवारखार आधा तोला,
अनादानी दो तोला इन सब दवाइयों को चूर्ण आठ तोले साफ
गुड़ में सान चार २ मासे अथवा दो दो मासे की मोली बनाय ले, जय
खांसी आदि एक मोली मुख में डाल कर चूसे, इस मोली को चूसने से सब
प्रकारकी खांसी नाश को प्राप्त होती है अथवा खंदिरादि बटी जो आठ
द० में लिख चुके हैं उसको भी चूसने से खांसी जाती रहती है ।

वज्जुलारिष्ट ।

तुलाद्वयचवज्जुल्यश्चतुर्द्रोणजलेपचेतज्ज्वान्द्रोणशेषे
रसेक्षीते गुडस्यत्रितुलाक्षिपेत् ॥ धातकीपोडशपलां
कृष्णांचद्विपलांतथा । जातीफलानिकंकोल मेलान्व-

कूपत्रकेशरम् ॥ लवंगमरिचंचैव पलिकान्युपकल्पयेत् ।
मासंभाण्डेस्थितस्त्वेष वव्वुलारिष्टकोजयेत् ॥ क्षयकुष्ट-
मतीसार प्रमेहस्वासकासनुत् ॥

यह वव्वुलारिष्टशारङ्गधरकाहै कर्ष्यारका परीक्षितहै, सर्वसे जांभांसी
है अथवा धातुके सबय से यदि खांसी आतीहो तो अवश्य फायदा होगा ।
वव्वुलारिष्ट की अंतरछाल ८ सेर से अधिकधराकर भठगुने जलमें पकावे जब
घीयाईजल रहनाय शीतलकर उसी में १२ सेर साफ गुड़ डाल देय धवका
फूल १ सेर छोटीपीपर ८ तोला, आयफल कंकाल छोटीलायधी दालचिनी
तेजपांत नागकेशर लींग और मिर्च ये सब चार २ तोले इन सबोंको एक
मही के चिकने घड़ेमें डाल परई और मृत्तिका से मुख बन्दकर १ महीना
पर्यन्त सुले स्थानमें जहां दिनमें धूप लगे रातमें ओस में रखे १ महीने
के बाद उसे खानकर बोटलमें भरदेय इसका मात्रा ६ मासासे दो तोला
है दिनमें दो दफे अथवा तीन दफे पीनेसे कफसर्वसे खांसी कुष्टमतीसार
प्रमेह श्वास और अनेक प्रकारकी खांसी आराम देती है किन्तु खास
कर प्रमेहसे अथवा यक्ष्मासे उत्पन्न खांसीको नाश करता है ॥

अथ द्राक्षारिष्ट ।

द्राक्षातुलाद्विद्रोण जलस्यविपचेत्सुधीः । पादशो-
पेकपायेच पूतशीतेविनिःक्षिपेत् ॥ गुडस्यद्वितुलांतत्र-
त्वगेलापत्रकेशरम् । प्रियंगुमरिचंकृष्णां विडंगंचेत्तित्थू-
र्णयेत् ॥ पृथक्पलोन्मितैर्भागैस्ततोभाण्डेनिधापयेत् ।
स्थापयित्वाततोमासं ततोजातरसंपिवेत् ॥ उरःक्षतं-

क्षयं हन्ति कासश्वासगलामयान् । द्राक्षारिष्टो ह्यः प्रोक्तो
वलरुन्मलशोधनाः ॥

मुनक्का धीज रहित २ सेर २० सेर पानीमें बुद्धिमान् धीमी आंघ्रि से
पकावे, जब धीपाई जल बाकी रहे तब शीतल कर छान लेय । उसमें
गुड़ ८ सेर लिखा है लेकिन साफ गुड़ ४ सेर डाले, दालचिनी छोटी स्यादी
तेजपात नागकेशर, प्रियंगुफूल, गोलनिर्घ, छोटी पीपर और वायभिरंग
यह सब चार २ तोले पूर्णकर छाल पूर्ववत् मृत्तिका पात्रमें एक सहीना
पर्यन्त भर रखै पश्चात् छानकर घोलमें भर देय, इसका भी मात्रा ६
मासासे दो तोले पर्यन्त है । इस द्राक्षारिष्टके पीनेसे उरःक्षत और क्षयीसे
उत्पन्न खांसी श्वास, गले का दर्द गला सूज आना या बैठ जागा आदि
रोग नाश होते हैं । यह द्राक्षारिष्ट बलको बढ़ाता है और नल को शुद्ध
करता है ॥

भांगर्यादि घृतं वात कासाधिकारे ।

भांगीकलकैर्घृतञ्चाथ पचेद्दधिचतुर्गणे । भांगीरसं
द्विगुणितं वातकासहरंपरम् ॥

एक पायं भांगरी यदि ताजी मिले तो अति उत्तम है नचेत् सूखी
भांगरी एक पावले कुचलकर रातको पानीमें भिजादे सबेरे सिलपेर पीसे
लुगदीकर एक कढ़ाई (जिसमें रंगेकी कलई हो) उसमें एकसेर घी और घीसे
धीगुना दही का पानी और भांगरीकी लुगुदी तीनाको एकत्रितकर धीमी
आंघ्रि से पकावे ऊपरसे पुनः भांगरी का दूना रस डाले । यहां भी उसी तरह
समझिये यदि ताजी मिले तो कुचल कर रस निकाल लेय नचेत् सूखी
भांगरी आधसेर ले कुचलकर ३६ सेर जलमें रातको भिजावे सबेरे धीमी

पिप्पली घृतं ।

यह घृत बनाने में बहुत सहज है और सब प्रकार के नई पुरानी खांसी को आराम करता है, यह निहायत परीक्षित है। छोटी पीपेर एक पाव थकरी के दूध में पीस कर लुगदा बनालिये, गाघृत २॥ ढाई सेर थकरी का दूध १० सेर तीनों को कढ़ाई में चढ़ाय धीमी आंच से पचाय कर घृत तैयार करलेय, इस घृत के सेवन से सब प्रकार का खांसी आराम होती है। अगर पचजाय तो रोगी इस घृत को चार तोले तकपी सक्ता है। इस घासको हम फिर भी कहते हैं कि पी के ऊपर पानी धोखे से भी न पिये पथ्य यही है जो ऊपर लिख आये हैं।

पारद की कजली ।

कई रोगियोंके आराम होनेसे सिद्ध हुआ है कि जिनकी अवस्था अधिक है और बहुत दिनोंसे खांसी को विमारी घेरे है तथा शीतल पदार्थों के सेवन से या शीत स्थान में रहनेसे खांसी अधिक होजाती है। जिनके कफ अधिक गिरता है लेकिन भीतर दाह गरमी नहीं मालूम होती है गरम चीजोंके खानेसे फायदा मालूम है। उस रोगीके लिये पारदकी कजली अमृत है, जिन्हे लखरत है, और के न बना सकें तो किसी वेद्य से बनवाके रोगीको खिलायें और रसोंको संपेचा, यह पारदकी कजली निश्चायत उत्तम है। इसके बनानेका विधि यह है ॥

कलांशंव्योपसंयुक्तं शुद्धगंधंविमर्दयेत् । अरत्तिमात्रे
वस्त्रेतद्विप्रकीर्यविवर्जयेत् ॥ सूत्रेणवेष्टयित्वाच यामं-
तैलेनिमज्जयेत् । धृत्वासदशतोवति मध्येप्रज्वालये-
ध्रतां ॥ हुंतोनिपतितोगंधो निर्दोषःकांचभाजने । तां-

द्रुतिप्रक्षिपेत्पात्रे नागवल्यास्त्रिविन्दुकान् ॥ चलेन प्र-
मितं शुद्धं सूतेन्द्रं च विमर्दयेत् । कासश्वासं च शूलानि-
गृह्णीयादपि दुर्धरं ॥ आमं विज्ञोपयत्याशु लघुत्वं प्रकरो-
ति च ॥

शुद्ध भावनासार गन्धक १६ तोला लेकर उसमें एक तोला (व्योष) घोट पीपर और मिर्च मिलाके खूब गद्दीग खरलकरे पचाव सवा हाथ सफेद कप-
ड़ा ले उसी पर गन्धकको फेलाये दिये और लपेटकर बत्ती बनावे और डोरेसे
खूब लपेट दिये ताकि दवा न गिरने पावे पचाव उसी बत्तीको पहरभर काले
तिलके तेलमें मिला रखे पीछे एक तरफसे चोमटासे पकड़ दूसरी तरफसे
जलावे और बत्तीके नीचे एक कटोरा काँचका रखदे उसमें जो तेल टपकके
गिरे उसे लेकर सीसीमें धरे जितना बच तेल हो उतनाही चयवा उसका
पाधा संस्कार किया जूपां पारा चयवा शुद्ध चिमरख का निकाला जूपापारे
को ले काला खरल जिसमें पतल न छूटता हो चयवा चिनी के खरलमें डाल
जितने पहरमें सुन्दर कजली हो जाय बराबर घोटता रहे । जब देखे कि
निश्चय कजली होगई है कागदार सीसी में रखदे । इस कजली का मात्रा ४
चावलसे दो रत्ती तक है । इस कजली को दानों समय सड़के साथ चाटनेसे
खाँसी खाँस और शूलरोग प्रसाध्य हो तो भी पाराम होता है तथा चामरोग
को दूरकर यह कजली प्ररीरकी हलकी करता है ।

इस कजलीके खाने वाला बहुत नमकीन पदार्थ खड़े पदार्थ चागपात
तेलमिर्चा आचार एही आदि न खावे स्त्रो प्रसंग न करे रास्ता न चले और
पिषकारो इन सब वस्तुओंको त्याग करे ॥

शृंगारामुकम् कासाधिकारे ॥

जिस रोगीकी चवस्था ४० वर्षसे अधिक है और मिजाज भीतल है

अर्थात् गर्मी चीजों से फायदा होता है उनके लिये यह अभ्रक अत्यन्त लाभदायक है ॥

शुद्ध जूया अभ्रक मस हज्जार पांच का प्रथवा सो पांचका ४ तोला; कपूर, जायफल, सुगन्धवाला गज पोपल तेजपात बीग जटामासी तालीसपत्र दालचिनी, नागकीपर, कूट, और धवका फूल, यह सब चार २ मासे बीजरहित हड़, बहेरा, भावला, मोठ, पोपल, मिर्च प्रत्येक छ छ मासे छोटी लायचोके दाने और जायफल पाठ ८ मासे सबों को खूब महीन चूर्णकर पचात शुद्ध भावलासारगंधक ८ मासे शुद्ध पारा ४ मासे दोनों को ८ पहर घोट कण्ठी घर उसो में मिला पचात सबोंको जल में घोट चनेके बराबर गीको बनाय छाया में सुखाय लिय इसका खोराक एक गीकोसे ४ गीको तक है इस गीलो को घाम सबेरे दोनों समय खाकर ऊपर से पान और पदरख का रस एक तोला प्रथवा दो तोला पिये अन्त में थोड़ा जल पिये इस गीलो के सेवन से पुरानी खांसी खास उदर रोग आदि कठिन बिमारियां पारान होती है । वैद्यक में तो इस बटो की बहुत कुछ तारीफ लिखी है जैसे—

हन्यादामाशयोत्थान् कफपवनकृतां पित्तरोगान्
शोषान् । वल्योवृष्यश्चयोगस्तरुणतरकरः सर्वरोगेप्र-
शस्तः ॥ पथ्यमांसैश्चयूपैर्घृतं परिलुलितैर्गन्धदुग्धैश्च
भूयः । भोज्यं योज्यं यथेष्टं ललितललनया दीयमानं-
मुदायत् ॥ शृंगाराग्निं कामीयुवतिजनशतं भोगयो-
गादतुष्टः । वर्ज्यं शाकाम्लमादौ दिनं कतिपयचित्स्वेच्छ-
याभोज्यमन्यत् ॥ दीर्घायुः काममूर्त्तिर्गतिवलिपलितो
मानवोऽस्य प्रसादात् ॥

आमाशयके बिकारसे उठे जितने रोग हैं, कफ, वात और पित्त करके जितने रोग हैं वे सब इस बटीसे नाश होते हैं । बल पुरुषार्थवद् क और बलसे सावान बनाने वाली यही बटी है । इस दवा को सब रोगों में देना उत्तम है । इस पर मांसका दूध, गौ का घृत और दूध पथ्य है इसने अतिरिक्त और भी प्रकृतिके पशुधार उत्तम भोजन किसी क्षुब्धतस्त्री से बनवाय कर खावे । इस गीलीकी खाने वाला पुरुष सौ स्त्रियों के साथ सहवास करने से भी संतुष्ट नहीं होता । इसका सेवन करने वाला भ्रातृ और खटाई कुछ दिनों के लिये त्याग देवे और सब प्रकृतिके पशुधार भोजन करे तो वह पुरुष होर्षागु हो और कामदेवके समान दिव्य भूतिमान हो और उसके बाख कभी संफिद न हो । इत्यादि तारीफ लिखी है किंतु इतना तो हम अवश्य कह सकते हैं कि भोत मिजाज वालीसौ पुरानीखांसों में यह बटी निश्चय ही फायदा करती है ॥

छाती पर कफ का सूखना ।

खांसी रोगवाले के छाती पर कभी २ गरम औषधों के अपघा गरम चीजोंके भोजन करने से कफ सूख कर जम जाता है कि जिस्से रोगी को खांसने में तकलीफ होती है छाती पर कफ का चरचर शब्द होता है और कफ मुसकिल से निकलता है और छातीसे कफ छुटते समय छाती में दर्द होता है ऐसी अवस्था में उस रोगीको कोई गरम औषध अपघा गरम वस्तु खाने को न दे जब तक कि बलगम छाती से छुट कर मुण अपघा दस्त से बिलकुल निकल न जाय क्योंकि ऐसे समय में थोड़ा भी गरम दवा खिलाने से रोगी यमालय का रास्ता लेता है । अज्ञान वैद्य लोग ऐसे रोगी को भी प्रायः रस खिलाकर मार डालते हैं । ऐसी अवस्था में चाहिये कि निम्नलिखित दवाइयों से बलगम को साफ करे ।

लवणक्षार ।

संधानेन आधपाय सांभर नोन आधपाय कुतिहा नोन आधपाय

अजवाइन आधपाव सुहागाआधपाव इन सब चीजों को १ मिट्टी के बर्तन में भर कपरीटी कर सुखाय हाथभरका गढ़ा खोद बीचमें नैदिया और चारों तरफसे कण्ठा देकर फूंक दे शीतल होने पर उसमेंसे निकाल महीन चूर्ण कर घोटल में रख दे और दिनमें कई दफे चार २ रत्ती खावे इस बलगम ढीला होकर निकल जायगा यदि एक दो दिन इस औषध के सेवन से लाभ न हो तो औरन दवाको छोड़कर निम्नलिखित औषधका सेवन करे । पावभर गेहूँकी भूसी लेकर आधसेर पानीमें १ घंटे तक भिजा के मलकर छान ले उसी पानीमें छिला हुआ दश बदाम और आधा तोला बधूल का गोद और १ तोला निश्री डालकर धीमी आंच से पकावे जब आधा पानी रहजाय तो उसी पानी को एक २ चम्मच कई दफे करके पीवे इसी प्रकार दोनों समय इस हरीरा को बना कर दो तीन दिन तक पीने में छाती पर का कफ छुटकर निकल जाता है अगर इससे भी लाभ न हो तो १ तोला अलसी और १ तोला निश्री दोनों को डेढ़पाव पानीमें पकाय मल छानकर एक २ चम्मच दिनमें कई दफे करके पिलावे जब तक कफ छाती से बिलकुल साफ न हो जायें रोज २ इसी तरह तैय्यार करके पिलाता रहे ।

कौवा लटकने से खांसी ।

अगर कौवा लटकनेसे खांसी हो, उसका लक्षण यह है कि हर समय गलेमें खांसीकी सुगसुगी लगी रहती है और यह बालुका होता है कि लेने गलेमें कोई चीज अटकी हो । ऐसी अवस्थामें सिवाय कौवा उठाने के अन्य उपाय नहीं हैं ।

भाजूफल, बंशलोचन, छोटी लायची के दानें तीनों को बराबर ले महीन चूर्णकर उसीसे कौवे को उठावे अथवा टिंकरस्टील याने लोहे का अर्क, अंगरेजी दवाखानों में मिलता है फोहेमें बोरकर कौवे में लगाने

से भी झटका हुआ कौवा उठ जाता है। सेकड़ों बार परीक्षा लिया गया है किन्तु यह ब्राह्मणादिकोंके जिये उत्तम नहीं है इससे कि वह स्फिरिट अर्थात् शराबसे बनता है ।

एतयारके दिन कौवेकी पीठ लेकर कपड़ेमें बांध बालकों के गलेमें बांधने से बालकों का कौवा उठ जाता है, तथा दो चार दिन इसी तरह कौवा उठाने से भी उठजाता है, प्रायः स्त्रियां उठा देती हैं ।

अथ श्वासधिकार ।

खांसी रोग के बाद अब हम श्वास रोग का प्रकरण उठाते हैं । खांसीके बाद श्वास रोगके प्रकरण का मुख्य प्रयोजन यही है कि कुछ दिनों तक खांसी बनी रहनेही से श्वास रोग होजाता है, दूसरे श्वासके कारण भी सब यहीहैं जो यक्ष्माके हैं । तीसरे धातुगुण और अवस्था पूर्ण रहनेसे श्वास रोग नहीं होता, धातुकी दीर्घस्थिता रहने पर, किसी कर्म अथवा खाद्याखाद्य द्वारा दिलपर सुष्की पहुंचनेहीसे रोग होजाता है । पाठकगण, श्वास रोग प्रायः युद्ध पुरुषों में जिनकी धातु स्वयं कम हो जाती है, और गांजा, चरस घबहू आदि नशाओं के खाने वालोंमें कि जिनकी धातु, अत्यन्त हृदयमें सुष्की पहुंचनेसे सूख जाती है, देखते होंगे । आयुर्वेदके किसी २ ग्रन्थोंमें खांसी रोगके पश्चात् हिचकी रोगका प्रमाण करके सब श्वास रोगका प्रकरण उठाया है उसका कारण यह है कि हिचकी और श्वास रोगका आधिकारण एक माना है और दोनों रोगों को असाध्य कहा है । लिखा भी है---

धैरेवकारणैर्हिक्का बहुभिःसंप्रवर्तते । तैरेवकारणेः-
श्वासो घोरोभवतिदेहिनां ॥ विहाय प्रकृतिं वायुः प्राणो-
ऽथ कफसंयुतः । श्वासयत्पूर्वगोभूत्वा तं श्वासं परि-
चक्षते ॥

यह सुश्रुतका बचन है-जिन २ कारणों करके मनुष्यको हिक्का अर्थात् हिचकी रोग होता है । उन्हीं २ कारणों करके मनुष्यको श्वास रोग भी होता है । हृदयस्थ प्राण वायु जिस अवस्थामें कफ युक्त होके अपने स्वभाव को याने जो उसका निजकाम है उसे परित्याग करके ऊर्ध्वगामी होता है अर्थात् ऊपरको चढ़ता है, बस उसको बाहर निकालनेके लिये जो मनुष्य को बारम्बार मुख खोलना मूँदना पड़ता है उससे एक प्रकारकी ह्वांकी आने लगती है उसी को वीद्य लोग श्वास (दमा) रोग कहते हैं । यद्यपि श्वास रोग एकही प्रकार का है किन्तु निदानदिकारणों करके पांच प्रकार का कहा गया है । यथा—

**महोर्ध्वछिन्नतमक क्षुद्रभेदैश्चपंचधा । भिद्यतेस-
महाव्याधिः श्वासण्कोविशेषतः ॥**

महाश्वास १ ऊर्ध्वश्वास २ छिन्नश्वास ३ तमकश्वास ४ और क्षुद्रश्वास ५ यह पांचश्वास महा व्याधि हैं किन्तु पञ्चिनामें है एकही श्वास । इसमें ३ श्वास सहाय्य १ कठ साध्य और एक साध्य है सो लिखा भी है—

**क्षुद्रः साध्यतमस्तेषां तमकः कृच्छ्र उच्यते । त्रयः श्वा-
सानसिद्धयन्ति तमको दुर्बलस्य च ॥**

जब तक श्वासके और भी समस्त लक्षण प्रत्यक्ष नहीं होती रोग साध्य रहता है और बड़ साधारण रोग समझा जाता है किन्तु सब लक्षण उपस्थित होतेही साध्याऽसाध्य का निर्णय होजाता है जैसे क्षुद्र श्वास साध्य और तमक श्वास कठ साध्य और बाको तीन श्वास रोग असाध्य हैं ॥

पूर्वरूप और संप्राप्ति ।

**प्राग्रूपंतस्य हृत्पीडा शूलमाध्मानमेव च । आनाहो-
वक्रवैरस्यं शंखनिस्तोद एव च ॥**

यदास्रोतांसिसंरुध्य मारुतःकफपूर्वकः । विष्वग्ग्रज-
तिसंरुद्धस्तदा श्वासान्करोतिसः ॥

प्रथम २-जब मनुष्य को श्वासरोग होनेवाला होता है तो निम्न-
लिखित लक्षण उपस्थित होते हैं जैसे—हृदय में कुछ दर्द या भारीपन
मालूम हो जैसे बलगम जमा हो, पेट अथवा शरीरमें दर्द, पेटका फूलना
अथवा यह मालूम हो कि पेट भोजन से खूब भरा है अथवा पेट के नसे
तन जाय, मुख का स्वाद फीका और कंठपट्टियों में दर्द का होना यह
श्वास होने के पहिले होता है, इसी को प्राग् रूप कहते हैं ।

श्वास की संप्राप्ति अर्थात् श्वास रोग शरीर के भीतर कैसे अपना
घर करता है उसे लिखते हैं, प्रथम प्राणवायु कफके साथ मिलजाता है
पश्चात् उसी की सहायता से अन्न और जल के बहनेवाली नाड़ियों को
रोकलता है और आप उस कफ को रुके मये नाड़ियों में धारो तर्फी
फिर कर रुढ़गानी हो के निकल ने लगता है अर्थात् श्वास को उत्पन्न
करता है इसी का नाम संप्राप्ति है ।

महा श्वास का लक्षण ।

निम्नलिखित पाँचों श्वासों के लक्षण श्लोकों के द्वारा न दिखला
के सिर्फ भाषा में लिखे देते हैं । उसका कारण यह है कि एक २ लक्षणों
को कई २ श्लोकों से पूरित किया है और इतने श्लोक किसी को उप-
स्थित रह नहीं सके क्योंकि प्रथम तो श्लोकोंको रटन कर कंठाप्रकरना,
दूसरे सर्वदा उपस्थित रहने के लिये पाठ किया करना बहुतही कठिन
है, सिर्फ आशय हृदय रहना चाहिये-सा भाषा के द्वारा यासूधी हो
सकता है इसलिये हम श्लोकों को न लिख कर सिर्फ भाषामें लिखते हैं ।

जिस मनुष्य का प्राणवायु शब्द करता हुआ ऊर्ध्वगति को प्राप्त

होता है उस श्वास से मनुष्य बहुतही दुखी होता है, यह श्वास कैसा चलता हुआ मालूम होता है जैसे कुछ दिनों का गैरों के साथ समागम न करनेवाला मस्त सांड श्वास लेता है, वैसाही महाश्वास वाले रोगी का श्वास फूलता है, उस अवस्था में उस रोगी का पठित शास्त्र, विज्ञान शास्त्र आदि सब विमृति हो जाते हैं, और नेत्र और मुख फैल जाता है, दिशा पेशाब कम उतरता है, स्वरभंग मन की उदासी और श्वास शब्द दूर से सुन पड़ने लगता है । यह महाश्वास के लक्षण हैं यह श्वासवाला रोगी बहुत कम जीता है ।

ऊर्ध्वश्वास के लक्षण ।

यह श्वासवाला रोगी ऊपर को लम्बी श्वास लेता है और वह श्वास नीचे को नहीं खींच सकता अर्थात् पेट में वायु नहीं समाता है कारण यह है कि ऊर्ध्वश्वास वायु के अधिक क्रोशित होने से होता है । उस रोगी के नेत्र स्थिर नहीं रहते ऊपर को इधर उधर देखता है, शरीर में दर्द मुख का सूखना, येवनी अधिक होती है, और जब श्वास नीचे को रुक जाती है तब रोगी झुंझित हो जाता है, ऐसाही बारम्बार होने से यह रोगी उसी श्वास से प्राण को परित्याग करता है ।

छिन्नश्वास के लक्षण ।

जो मनुष्य इन्द्रियों से शिथिल हो रहि रहि के स्वास लेता है और बुद्ध्यादिक मर्मस्थानों में फाटने या ठेदने सीखा दर्द हो श्वास लेते में, जिस दर्द के वजे से श्वास न लिया जाय, पेटका फूलना, पसीना आना बद्दीशी का होना, नाभी के नीचे वास्ति अर्थात् पेट में अति दाह, नेत्रों में पानी सा भरा रहना, शरीर शिथिल तथा क्षीण होना, एक नेत्र लाल, मुख का सूखना, चेष्टा का बदल जाना, कुछ आन तान बकना इन सब लक्षणों के संयुक्त छिन्न श्वास वाला रोगी व्याकुल हो के शीघ्र ही प्राण बिसर्जन करता है, इसमें कुछ भी संदेह नहीं जानना ॥

तमक श्वास के लक्षण ।

जब प्राण वायु अपना मार्ग छोड़ के कुमार्गी हो के नाड़ियों में प्राप्त होता है तब गरदन और शिर को जकड़ि के कफ को बढ़ाय पी-

नस जिसे नाक सहना कहते हैं उस रोग को पैदा करता है । तब वह प्राण वायु उस पीनस सम्बन्धी कफ से रुका गया कंठ पुरपुर करता है और अत्यन्त असहन दर्द जो सहने लायक नहीं है ऐसा दर्द प्राणस्थान जो हृदय है होके यह श्वास उत्पन्न होता है । तब वह रोगी उस श्वासके वेग से व्याकुलता तथा कष्ट एवं त्रास को प्राप्त होता है जैसे अथाह जल में डूबते हुये को सहार नौका न पाने वाला जन । बारम्बार श्वास का रुक जाना, खांसते २ बारम्बार मूर्छित हो जाना, छाती से कफ न छुटने की अवस्था में अति पीड़ित होना, कफ गिर जाने पर क्षण मात्र को आराम मिलना, सर्वदा गले में खसखसाहट बना रहना, और श्वास फूलते अवस्था में धोलने में कष्ट होना, मोँदका नहीं आना (संभव यह है कि लेटे पर उसकी पसुरियोंकी वायु धरकर जकड़ लेता है) तब रोगी भट्ट सठ बैठता है तो चैन मिलता है, इसी से श्वास वाले सामने बड़ी तकिया धर उसी पर छाती को आड़ कर अपने समय को काटते हैं



जिनका चित्र यह है) नेत्रोंका लुंघा रहना, मस्तक में पसीना का आना, मुख सूखता रहना, श्वास फूलते समय जैसे हापी पर बैठा हुआ पी-लवान हालता रहता है वैसेही यह रोगी हालता है । प्रायः तमक श्वास मेघोंके उठनेसे, पानी धरनेसे, ठंडे शकानमें रहने से और शीतल तथा कफकारक पदार्थोंके सेवनसे बढ़ता है । यह तमक श्वास कष्टसाध्य है किंतु नवीन अवस्था में उत्तम चिकित्सा होने से आराम भी हो सक्ता है ॥

सुरदावादमें सुंघी रोगमलाल नामक एक कायस्थ रहते हैं और स-न्ध' वृद्धत दिनों से श्वास रोग नजला के बजे से है, कुपय बस कभी २ सभड़ पाता है । उनकी विमारी सभड़ने से एक सप्ताह संधण मिलता है, जिस दिन संधको खास सभड़ता है वह कहते हैं कि पाछ के तीसरे दिन आदस सठंगी और पानी बरसेगा वैसेही होता है याने करे वेर देखा गया है पाकात्र साफ

प्रतमक श्वास के लक्षण ।

जो तमकश्वासके लक्षण ऊपर कह पाये हैं वही रोगी यदि ज्वरशीर भूखा करके युक्त होय तो उस श्वासको प्रतमक श्वास जानना और किसी र का मत है कि नाकमें जो मुख में घूरि गरदा के जाने से, अजोर्ण से, अधिक दूर तक पानीमें भीजनेसे तथा उदावत अर्थात् मलमूत्रादि वेगी के रोकनेसे प्रतमक श्वास उत्पन्न होता है, यह श्वास भीतल उपायोंसे शांतिरहता है क्योंकि प्रतमक श्वास वाले को भीतर ऐसी गरमी मात्तुम होता है मानों किसीने उष्णस्थान या अंधियारेमें बन्द कर दिया है । प्रतमक श्वास ज़ात्ता गरम अथवा ठंडे उपचारसे शीघ्रही यमालयके रास्तेको, वैद्यराज के, यमको गति जूये सुशोभित करता है ॥

यदि कोई पूछे कि वैद्यराजके यमको क्या गावेगा सुनिधे आज कलके प्रायः लंठाधिराज वैद्य लोग निदान तो विचारते नहीं किसी तरहका श्वास क्यों न हो, भौंका भौंक रसोकी गुड़िया चटातेही लायगे जिससे रोगी सर्वदा के लिये पारोख होजाता है । हमारे आयुर्वेदमें श्वास रोगका निदान यही तम कहा है किंतु डाक्टरोंमें कुछ अधिक कहा है इस लिये इस स्थानमें हम कुछ डाक्टरों मतानुसार भी श्वास का निदान कहते हैं ।

हे वादल कहीं नाम मात्रके नहीं देख पड़ते किंतु आकाश वादलोंसे आच्छादित होनेके तीन दिन पूर्वही उठता है इस से मात्तुम होता है कुछ आभार मेघोंके उभी दिग्गसे होता है किंतु सूक्ष्म होनेके कारण अथवा अधिक दूर रहने के कारण दिख नहीं पड़ते । वस पाठकगण इसी उदाहरणसे समझ सकते हैं कि वायु पंचतला का प्रारोहिक पंचतलोंके गाय कितना घनिष्ट सम्बन्ध है इसीसे वज्रत विभारी हैं जो समयानुसार खड़े-उठा करती हैं, और शान्त होती हैं ॥

ASTHMA (श्वसासकास)

डाक्टरों में इस रोग को ब्रोंकाइटिस कहते हैं। इस रोग का विशेष चिह्न यह है कि इसके उपस्थित समयमें श्वास बड़े कष्ट से लिया जाता है और जब श्वास दब जाता है श्वास लेने में कुछ कष्ट नहीं होता, यह रोग पांच प्रकार है।

१ Humoral Asthma or Bronchial Ftuex (वायु पथार्द्र श्वासकास) यह रोग कुछ दिनों तक श्वास नहीं दाब सक्षित रहने से पुनः भरदी पहुँचने से उत्पन्न होता है। इस श्वास का लक्षण तमक श्वास के साथ प्रायः मिलता है ॥

२ Congestive Asthma (रक्त पूर्ण श्वास कास) इसका लक्षण प्रायः उरःक्षत रोग के साथ मिलता है ॥

३ Spasmodic Asthma (दर्दयुक्त श्वासकास) इसी को स्नायु सन्तन्धीय श्वासकास कहते हैं इसका सबब यह है कि वायु स्नायुओं में घुस कर नसों को खींचता है वरु उन नसों में दर्द होने सेही श्वास खांसी होती है इसी से उक्त नाम पड़ा है ॥

४ Hay Asthma (ढण्डाघात श्वासकास) यह रोग वायु नली अत्यन्त शुष्क होने से होता है यद्यपि सड़े घास का भाफ नाक में जाने से यह रोग होता है ॥

५ Hysterie Asthma (गुल्म श्वास कास) यह रोग अक्षर स्त्रियों को गुल्मरोग होने से होता है अर्थात् औरतों को रक्त गुल्म कुछ दिनों तक बने रहने से खांसी श्वास रोग हो जाता है ॥

वायु पथार्द्र श्वासकास अर्थात् वायु वाहिनी स्नायुमें भरदी पहुँचने से जो श्वास रोग होता है उसका संक्षेप से निवरण करते हैं।

इस रोगके प्रारंभ के समय घेठमें बोझा मालुम होना, चेहरे का रंग फोका, तन्द्रा धिर दह होता है। संध्या को मालुम हो जैसे कोई छातो जकड़ दिया है इस प्रकार श्वास लेनेमें कष्ट मालुम हो और श्वास धीरे २ लियाजाय एवं गला सांय २ करे और सूखी खांसी आवै और जैसे चेहरा सुरभाय जाता है और श्वास लेनेमें इतना कष्ट होता है कि जैसा समने चित्र दिया है, बिना उसी तरह जूधे रोगी क्षण मात्रका चैन नहीं पा सकता है क्योंकि श्वास लेते २ घेठके गन्धे खिंच जाते हैं, मांस पेसी भयानक रूप से काम करने लगते हैं। किसी २ रोगी को संध्या भई रात्रि समय में भी उक्त लक्षण सहित श्वासकास उठ खड़ा होता है जिससे एका एक घबड़ाकर उठ बैठता है।

छातीके ऊपर अंगुलियोंके अग्रभाग द्वारा साघात (ठोकनेसे) करने से टपटप ऐसा शब्द बोध होता है। किन्तु यही रोग जब कठिन रूप से प्राक्रमण करता है तब बोध होता है परन्तु इसी रोगके प्रथम अवस्थामें छातीमें काम लगा कर सुन्ने से श्वास गली में बह्मविधि घड़घड़ाने का शब्द मालुम होता है पहले टकटक ठकठक एवं सांय २ तथा श्वास पंथमें जैसे कोई वस्तु घिसता हो बोध होता है ॥

घरीरके अन्तर्गत इन्द्रियोंमें हृदय प्रांत आदि पोड़ितावस्था के निदान जाननेके सिर्फ एकही उपाय है एक तो छाती पर अंगुली ठोककर और काम लगाकर शब्द सुनना बिनाय इसके और नाड़ो आदिसे यथार्थ बोध करना बह्मत कठिन है।

डाक्टरलोग श्वास रोग में निम्नलिखित रीतिसे विमारी की परीक्षा करते हैं और इस प्रकारसे परीक्षा करना बह्मत उचित है क्योंकि श्वास रोग छातीसे होता है और छातीमें अनेक आशय हैं जो श्वास रोग में विपरीत गुण वाले तथा अकृत एवं वलहीन होजाते हैं उन सर्वोच्चा हाल नाड़ी के द्वारा नहीं मालुम हो सकता। इसमें कोई सन्देह नहीं कि डाक्टरोंमें रोगों का निदान बह्मत अच्छी तरह विधि से लिखा है और डाक्टर लोग उसी

तरह परीक्षा भी करते हैं डाक्टरों दवा कांम दायक कम होती है इस में दय कारण है ।

अंगुलियोंके अग्र भाग द्वारा ठोकनेसे अथवा एक छोटीसी पतली लकड़ीका टुकड़ा लेके छाती पर धरकर उसके ऊपर अंगुलियोंसे ठोके अथवा बाये हाथकी अंगुलियोंको धरकर ऊपर से दाहिने हाथ की अंगुली द्वारा आघात करने से एक शून्यमय वा टप टप शब्द श्रवण गीचर होता है । जिस तरह खुलके बांध के ऊपर अंगुलियों के ठोकने से शब्द होता है उसी प्रकार शब्दानुभव होता है, तथा समस्त इन्द्रियादि पीड़ित होनेसे उपरोक्त शब्द का परिवर्तन हो जाता है जिस तरह बाहु वा जांघ के ऊपर ठोकनेसे शब्द होता है उसी तन्त्र शब्द होने लगता है इत्यादि और अनेकशः परीक्षा है जिसे डाक्टरों प्रकरण में पूर्ण रीति से लिखेंगे ।

श्वास रोग की चिकित्सा ।

सर्वेषु श्वासरोगेषु वातश्लेष्मनिवर्हणं । विदधीत
विधिं विद्वानादौस्वेदं मृदुं ततः ॥

अथ श्वासकी विमारी में पहले मृदुश्वेद अर्थात् शरीर से हलका पसीना निकलवायके पश्चात् वात और कफ नाश करने का उपाय करें ।

(प्रण) इस श्लोकमें जो प्रथम पसीना निकालने का वयान किया है इसका क्या मतलब है रोग के प्रारम्भ में पसीना निकाला जाये या चिकित्सा के प्रारम्भ में किन्तु इस श्लोक का तात्पर्य यह है विदित होता है कि चिकित्साके प्रारम्भमें प्रथम हलका पसीना निर्गन्त द्वारा शरीर को हलका और कफको पतला कर लेय तब वात और कफ नाश करने का उपाय करें । यही आज कल के धैर्योंकी राय भी है ॥

(उत्तर) आपका कथन भी ठीक है किन्तु इसमें यह आपत्ति आन पड़ेगी कि अधिक दिनों तक श्वास खांसी बने रहने से रोगी का रक्त मांसादि सब क्षीण हो जाते हैं और रक्तादि शोषावस्था में स्वेदकर्म निषेध कर दिया गया है कारण यह है उष्णादि रुपा द्वारा जो कोई प्रयोग किया जाता है उसे सहन करने वाला रक्तादि स्वसधातु है जब वही सब कम हैं तो सहन कौन करेगा उस अवस्थामें स्वेदादि क्रिया से रोगी को मूर्छा आना संभव है और मूर्छा से रोगी मर जाता है। स्वेदाध्याय देखो इस लिये रोगके प्रारंभ कालमें स्वेद करना उचित है ॥

(उत्तर) इस लिये कि आभ्यन्तरिक समस्त नाड़ियों में और छाती पर कफ जम जाता है और उस कफ के जमने से श्वास के नली का रास्ता जिसमें हो के वायु गमन करता है रुक जाता है, इस लिये रोगी को बारम्बार श्वास लेना पड़ता है। स्वेद से कफ पतला पड़ जाता है और वात श्लेष्म नाशक औषध के देने से वही पतला बलगम दस्त के राह निकल जाता है। वात कफ नाशक औषध यह हैं। जैसे—

१. काकराशिंगी, वैतराशीठ, मिर्च, छोटीपीपर, हड़, बहेड़ा, और आंवला यह तीनों धीज रहित, भटकटैया का पञ्चांग, भारंगी, पुष्कर-मूल और पांघों मोन सबों से महीन चूर्ण कर तीन मासा अथवा छ मासा दोनों समय गरम जल के साथ पीने से बलगम छुट श्वास रोग शांत होता है इसके अतिरिक्त यह चूर्ण हुचकी, श्वास, कटुश्वास, खांसी और अरुचि रोग नाश करने में एकही है ॥

श्वासाधिकारे घृत ।

हमारे आयुर्वेदीय ग्रन्थों में श्वासाधिकार में घृत का प्रकर्ण बहुत अधिक दिया है और जहां तक परीक्षा द्वारा देखा गया है, अन्तर्तीगरवा देने की बिमारी में घृत अधिक फायदा करता है क्योंकि श्वास रोब दो

कारणों से कठिन और असाध्य हो जाता है । एक तो छाती पर कफ सूख कर जमजमाने से, वह कफ सूख कर ऐसे सजबूती के साथ छाती में चिपक जाता है जिसका एकाएक उस स्थान से फुटा देना सहज दवा का काम नहीं है । उसी कफ के गांठ को कितने गवार लोग छाती में छिपकिली तथा उसी आकार अन्य जानवरों का पैदा होना बतलाते हैं तथा उसकी दवा भी ऐसी २ तेज लोग बना कर रोगी को देते हैं जो रोगी घरदास्त न कर सका तो अपने जीवन से माने हाथ भी चुका, हां उस श्वास रोग में घृत पिलाने से बहुत लाभ देखा गया है । दूसरे, श्वास रोग में जब यकृत अर्थात् लीवर बढ़ जाता है अथवा कड़ा हो जाता है उस अवस्था में भी श्वास रोग अति दुष्कर हो जाता है किन्तु घृत पिलाने से इसमें भी फायदा देखा गया है, इसलिये इस स्थल में हम कुछ घृत का बयान करते हैं । एक प्रकार का घृत सर्व साधरन के प्रकृति के तुल्य हो नहीं सका, इस हेतु दो चार जो उत्तम २ फायदे मंद घृत हैं उसे लिखे देते हैं ।

**कासेश्वासेचहिक्रायां हृद्गेचापि पूजितं । घृतं-
पुराणसंसिद्धं मभयाविडरामठैः ॥**

खांसीरोग, श्वासरोग, हिचकी, और हृदयरोग इन सब रोगों में अभया कहें बड़ाहड़, विड कहें विडनोन जिसे मनियारीनोन भी कहते हैं और रामठ कहें होंग इनसे सिद्ध किया हुआ पुराना घृत श्रेष्ठ अर्थात् लाभदायक है ॥

विधि—बड़ाहड़ जो जल में डूब जाता हो उसका बीजा निकाल के आधसेर लेय उसे ४ सेर जल में क्राय बनाये जब आधा जल रहजाय, पानी छान लेय, कलईदार कटारों में एक सेर एक बर्य के ऊपर का घी छोड़ और उसी में हड़ का पानी डाल भीमी आंच से पकाये जब सूख

पकै लगे तब आधपाव मनियारीनोन और एक तोला अधभूजी उत्तम होंग उसी में डाल पका लेवे जब पानी सब जल जाय घृत मात्र रह जाय, अग्नि पर से उतार शीतल कर छान अमृतबान में रख ले इसका मात्रा एक तोला से १ छँटाक तक है रोगी अपनी ताकत के अनुसार दोनों समय पिये, ऊपर से पानी न पिये, पान लायची वगैरह खा लेवे तथा इस ची को भोजन के साथ दाल भात तरकारी आदि चीजोंमें भी मिला के खा सका है, यह घृत आजमाया है कुछ दिनों तक लगातार बराबर इसे बना २ के पीता जावे । प्रथम २ घृत पीने से खांसी अथवा श्वास उभर आता है उससे यह न समझना चाहिये कि घृत जुकसान करता है उसको पीता जाय छोड़े नहीं श्वास दबाने के निमित्त कोई बटी जो ऊपर लिख आये हैं अथवा मुलेठी, खैर, अनार या बहेड़ा का द्रव्यका मुख में डाल कर चूसे ॥

विल्वादि घृत ।

सौवर्चलाभयाविल्वैः संस्कृतं वानवंचृतं ।

जिस श्वास वाले रोगी को दस्त पतले आते हों वह कालानोन, हड़ और खेल से सिद्ध किया हुआ नये घृत को पिये । इस घृत के बनाने की विधि यह है, ताजा घृत गौ का १ सेर, छोटे खेल की गरी १ पाव, हड़ आधपाव और कालानोन एक छँटाक । विल्व और हड़ को अठ-गुने जल में काय करै जब चीयाई रहै मलछाल घृत में डाल धीमी आंच से पकावे जब आधा पानी जल जाय तब नोन छोड़ देय और धीमी आंच से पचाता जावे । पानी सब जल जाय घृत मात्र रह जाय छान कर अमृतबान में रखदेय और पूर्वोक्त विधि से कुछ दिनों तक बराबर सेवन करता जावे ।

अन्यच घृत ।

हिंसाविडम्बपूतीक त्रिफलाव्योपचित्रकैः । द्वि-
क्षीरंसाधितं सर्पिश्रुतुर्गुणजलान्वितं ॥ कोलमात्रैः
पिवेत्तद्धि श्वासकासौघ्यपोहति । अर्शांस्त्रयोचकं-
गुल्मशकृद्भेदक्षयंतथा ॥

बालउड़, बायदिरंग, जंगीहरै, त्रिफला अर्थात् हड़ बहेरा आयला
शोंठ, कालीमिर्च, छोटी पीपल और चोते का छाल सबों को एक २
छँटाक ले अधिकचरा कर १२ सेर जल में रात को भिजा देय सवेरे प-
कावै जब ३ सेर जल रहजाय नलकर छान लेय । तीन सेर घी को प-
पर चढ़ाय उस तीन सेर काढ़े का पानी हाल धीमी आंच से पचा-
ना शुरू करै और ३ सेर गौ का दूध ३ सेर बकरी का दूध इसे भी हाल
के पचावे सबों के पश्चात् ४ सेर जल और छोड़ के पचा कर घृत तैय्यार
कालेय इस घृत को भी पूर्वोक्त प्रकार सेवन करने की विधि समझना
चाहिये । इस घृत के सेवन से दमा खांसीकुठ दिनों में अवश्य आराम
होती है । इसके अतिरिक्त बावासीर, अरुचि, गुल्म, टूटकर दिशा का
आना, और कफ लई को भी यह घृत हटाता है ऐसा कई बार देखा
गया है ।

अथ भृङ्गराज तैलम् ।

पाठकगण इस नाम को सुनकर चमत्कृत होंगे, कि जहां खांसी में
खाने को कौनफहै तेल मुख पर नहीं धरते तहां खांसी में तेल पीने की
विधि दी जाती है ? यह सब वे समझी है हां तोय फिर में तेल की
चीज रा लेने से निस्सन्देह खांसी श्वास की बीमारी हो जाती है,

यदि ऐसा होता तो श्वास रोग में डाक्टर लोग मछली का तेल क्यों पिलाते । मछली के तेल के विधानपत्र में लिखा है कि इस तेल को तीन बरस तक बराबर पीता रहै । हम कहते हैं भृङ्गराज तेल को खड़ी महीने पथ्य सहित पीकर देखें श्वासरोग को जड़ से उड़ा देता है या नहीं ॥

तैलं दशगुणैः सिद्धं भृङ्गराजरसे शुभे । सेव्यमानं यथा
न्यायं श्वासकासोऽव्यपोहति ॥ सुश्रुत उत्तरतन्त्रम् ॥

काले तिल का तेल १ सेर को कढ़ाई में चढ़ाय १० सेर भृङ्गराज अर्थात् भांगरे का ताजा रस थोड़ा २ डाल के पचा लेय जब स्वरस जल जाय तब उतार कर खान लेय इसका मात्रा-६ मासा से दो तोला तक है, अपने बलायल के अनुसार दिनमें दो या तीन दफे पिये । यदि यह देखे कि छाती पर पलगम बहुत सूजा है किसी तरह नहीं निकलता है तो कालेतिल के तेल की जगह अलसी के तेल में भृङ्गराज तेल तैय्यार करे । इस तेल को बराबर पीने से निस्सन्देह श्वास खांसी आराम होती है, अथवा ॥

हरिद्रां मरिचं द्राक्षां गुडं रास्ना कणां शठी । लिह्या-
तैलेन तुल्यानि श्वासात्तौहितभोजनः ॥

हरदी, कालीमिर्च, गुनफ़ा, गुड़, रासन, छोटीपीपर और कपूर-कचरी सबों को समान भाग ले महीन चूर्णकर दो मासा या तीन मासा पूर्ण को काले तिल के तेल या अलसी के तेल में मिला के चाटने से भी श्वास को नाश होने को कहा है । किन्तु इसे ऊपरवाला तेल उत्तम है ॥

श्वासाधिकारमें कुछ रसों की प्रकृति जो जाननीय थी, द्रव्य है इस स्थल में लिखते हैं । इन्में सन्देह नहीं, यदि सब पदार्थ उत्तम मिल जाय और लालय त्याग द्रव्य खर्च कर उत्तम रीति से रस तैयार किया जाय तो शैत्यप्रकृति के तथा शैत्याधिकार रोगाक्रान्त आंतुरों के लिये अमृतही समझना चाहिये और विषनिश्रित कृत्तितोत्र शीघ्रकार्यकारिणी अंगरेजी औषधियों से सहस्र गुण अधिक लाभदायक होता है किन्तु आजके समय में न उत्तम धातु उपधातु मिलते हैं और न यत्न बूढ़ियां मिलती हैं कि जिनके स्वरसके प्रभावसे कठिनसे कठिन धातु भी निश्चिन्त भस्मी भूत हो जाते थे सो न यह समय रहा और न वह चीजें रहें सिर्फ ठगबिद्यार्थे रह गये, न धर्मका ख्याल और न ईश्वरका हर चार पेसा पैदा कर पेट भरने से काम काया रस तैयार करना रोगियों को इस अवसर संसार के दुःख से निर्मुक्त करना लोगों के हाथ रह गया ।

कालेस्वरोरसः श्वासाधिकारे ।

अंगलोहंतयात्माश्च मभ्रकंपारदंमतम् । गन्धकंताप्य-
दरदौ दिव्यं जातीफलंतथा ॥ सूक्ष्मैलादालचीनीच केशरं-
त्रिपकंरुतं । धूर्तवीजं वज्रैपालं टंकणंचसमंमतं । सर्वभ्य-
क्षिगुणस्यामं क्षिपत्वाचूर्णीकृतंभिषक् । वृषायामार्गनि-
गुण्डी भंगभृंगरसेनच ॥ मर्दयेद्दिनमेकैकं रसःकालेस्वरो
भवेत् । एकगुंजं द्विगुञ्जं त्रलंज्ञात्वाप्रयोजयेत् । कासं-
श्वासंनिहन्त्याशु कफरोगंचदास्यां ॥

यह कालेस्वरस निहामत उत्तम है यदि सब चीजें उत्तम मिल जाय प्रथम किसी साक्षर वैद्य जो हस्तक्रिया में चैतन्य हो उसके द्रव्य खर्च

कर बनाया जाय तो श्लेष्माधिक्य श्वास रोगके लिये अमृत की जरूरत नहीं है (कालेस्वर की विधि) दश आंच का बंगेस्वर, कान्तीसार भस्म, ताम्बेस्वर, सी आंच का अभ्रक, चन्द्रीदय, शुद्ध आयलासार गन्धक, सुवर्ण-माक्षी का भस्म, शुद्ध नकमुदावादी सेमरिख इन, मर्चों का दूध २ मास ले करल में खूब गहीन घूर्ण कर रगदेय पचात लिंग, जायफल, छोटी लायरी, दालचीनी, माणिकेश और शुद्ध सोंगिया, शुद्ध भतूरे का बीज शुद्ध, जवाकगोटे का बीज तीन रहिन, और शुद्ध सोहागा उपरोक्त बीजों के समान लो और मर्चों की भांजी शुद्ध छोटी पीपर ले घूर्ण कर एक एक दिन गुमा के पत्ती के रस में चिबरी के रस में निर्गुण्डी के रस में भांग के रस में और सोंगिरा के रस में भाखना देने से कालेस्वर रस तैयार होना है । एक रक्ती अथवा दो रक्ती बनावल के अनुसार मर्च के माघ रोगी को देनेमें समय चटाने से कफ जमिन कासश्वास रोग शीघ्र ही नष्ट होता है । वायु पित्त जन्मित श्वास रोग में यदि अज्ञान यथात् दे दिया जाय तो यही रस रोगी को काल के समान मारता है ।

वर्तमान समय के अनुसार इस रस की मात्रा १ चावल से ६ चावल तक है यहा देना चाहिये इत्यादि और भी अनेक औषधियां हैं जो देय काल, अवस्था और रोगी के बलायत्त के अनुसार दिया जाय तो लाभ हो सक्ता है किन्तु यह बात ध्यान देने लायक है कि दवा को शीघ्रता के साथ परिवर्तन करना अच्छा नहीं होता क्योंकि श्वास रोग प्रथम तो यह आपही दुष्कर है, दूसरे कुछ काल पर्यन्त लगातार औषधि न खाने से, दवा का पूरा असर रोग पर नहीं होना, हां यदि किसी औषधि से कुछ हानि बोध हो तो प्रकृति बिछड़ जान शीघ्र ही त्याग दे तथा कभी २ आयुर्वेद विज्ञान दशियों से बिमारी के विषय में राय लेता रहे ।

बालक श्वासरोग ।

इसी के मायही हम आज बालकों के श्वास और खांसी रोग का भी निदान और चिकित्सा लिखते हैं कारण यह है कि सयाने मनुष्यों की भयंसा बच्चों को यह रोग बड़ा भयानक और दुष्कर होता है हिन्दुस्तान में औरतों के अज्ञानता यशम श्वास और खांसी रोग में हजारों लड़के बिना भीत के मरते हैं क्योंकि बच्चों का रोग माता की मददरहेगी से होता है और लड़कों के बिमार होने पर औरतें अपने हृदयहेभी पर तो ध्यान देती नहीं क्राह पूज माता भगना में पड़जाती हैं और अटकरपशू अताइयों की दयाइयां देनेलगती हैं इस्से अक्तर लड़के अकाल काल पास हो जाते हैं । लड़के खांसी श्वास होने से हांकन लगते हैं, यम फिर क्या जहां बच्चों का पेट सखरते देखा जाना कि पसुरी चल रही है शीघ्रहं उनके नारने की तदखीर में लग जाती है, इसलिये उन बच्चों के प्राणरक्षार्थे इस स्थान में हम काशश्वास का प्रकरण लिखते हैं ।

पादकण्ठ आप निस्सन्देह समझिये । काश्श्वास रोग से आज भारत के लाखों बालक बिनाभीत के मरते हैं और जो बचजाते हैं किनी आपूर्व विज्ञानदर्शी के मरुक्त से अथवा अग्नि भाग्य से, जिस प्रकार अनेक मनुष्य धिप खिला देने से भी बचजाते हैं अर्थात् नहीं मरते उसी प्रकार बालकों को समझिये क्योंकि याका रहित बालक धिचारों का प्राण माता पिता और चिकित्सक के हस्तगत रहता है । यह अपने मुख से अपने तकलीफों को श्वास नहीं कर सक्त और सिवाय रोने के न प्यास लगने पर पानी और न भूख लगने पर खाना मांग सक्ता है आपही बिगारिये ऐसा अवस्था में रोग के धिपरीति दवा खिलाने से बालकों को कैसी तकलीफ होती होगी और किस संकट से उनका प्राण निकलता होगा । क्योंकि बच्चे सिवायरोने के कुछ कह नहीं सक्त इस स्थान में अग्ने का रोना, निस्सन्देह काटेजने जानवरों के चिकोइट को चरितार्थ करता

हे-जैसे फाट जाते सन्ध्य वक़रियाँ में मैं करती हूँ और कसाई उनकी गायुली आदत समझ कर उनके चिल्लाने पर ध्यान नहीं देता और खूरी रेत भर जाता है, शायद वे यही कहती हों। कि हम भी यिनागुनाह के क्यों मरते हो हम बेकसूर हैं, तुमारा कुछ नहीं बिगाड़ा, परमेश्वर तुमारा भला करेगा तुम हमें छोड़ दो लेकिन कसाई वक़रियों की बाली न समझने के कारण कुछ भी ध्यान नहीं देता और उल्टे उसकी खमस सर देता है। उसी तरह यच्चों की हालत संनक्षिपे, यच्चों का रोना होग गायुली आदत समझते हैं और न समझने के कारण अटकलपट्टू जी जी में जाता है दया खिलाते और यच्च करते जाते हैं।

हाय २ जब हम कभी ऐसी दशा में यच्चों को देखते हैं तो छाती फट जाती है और सियाय ईश्वर से प्रार्थना करने के कि हे दयानिधि, कृपासागर तू बालकों के मुँह दुःख जानने और उनके अनुकूल आरोग्य-तार्थ औपधि देने तथा बच करने की बुद्धि सबों को क्यों नहीं दे, क्या तुझे यह बात पसंद है कि भारत के अमन्य जन सन्तान रहित कहलायें और अपनेको वृथाजीवन तथा हतभागी समझें और कुछ नहीं सूझना।

पठकगण हमारा कथन आप बहुत सत्य मनक्षिपे बालक रोग नि-
कित्सा एग भिन्न लिखनेवाले से किन्तु अगली साल अमन्य बालकों को प्रमाण काज ग्राम होने से चित्त न चेंगा और इसी स्थल में बालकों के द्याय रोग की चिकित्सा लिखने की खेजनी उठ खड़ी हुई।

इस साल अर्थात् सम्यत् १९५२ के आतरी और ५३ के आदिमें जितने लड़के चेचक (माता) और श्यास रोग से मरे हैं शायद ही कभी मह-
प्रलय के समय मरे हों ॥

देखिये यह बहुत मोटी बात है कि भीतर गर्मी रहने से शर्द दवा और भीतर शरदी होने से गर्म दवा रोगी को देना चाहिये। गरमी रहने से गरी दवा, शरदी रहने से शर्द दवा देने से रोग बढ़ जाने एवं

रोगी के मृत्यु का कारण होता है, अगर कोई कहे कि (विषस्यविषमो-
पधं) विष का विषयही औषध है, गरमी गरम दवा से हटता है और
यद्यपि में मुखों की खुट्टि भी ऐसी ही होती है । यह बचन विशेष रोग
में जैसे जल में मेकना और बड़े घाव में मोन भर देना, यह बचन सर्व
साधारण रोगों में संघटित नहीं होता ॥

बच्चों के भीतरी गर्मी शरदी जाननेको ऐसे तो अनेक लक्षण हैं किंतु
सर्पों से सहज लक्षण यह है कि पेशाब करते समय मूत्रको हाथपर रोक
लेने से, अगर पेशाब गरम हो तो गरमी समझें और शीतल हो तो शर्दी
समझें जहां तक गरम शरद् मूत्र पाये उसी के अनुसार निकिरसा करे ।
इस स्थल में एक बात और जता देने की जरूरत समझते हैं वह यह है
कि शरद् मूत्र और शरद् प्रातु में प्रयः लोगों का मूत्र कुछ उष्ण होता
है, यहां मूत्र के निकटार पर भी ध्यान देना चाहिये, गरमी रहने से
पेशाब गरम और बहुत कम होगा और शरदी होनेसे मूत्र बहुत होगा
इसी प्रकार दिवा का भी जानना चाहिये, गरमीसे दस्त पतला या कम
और शरदी से गाढ़ा और अधिक होता है ॥

अन्य लक्षण सुश्रुत से ।

अङ्गप्रत्यङ्गदंशेत् रुजायत्रास्यजायते । मुहुर्मुहुः स्पृश-
तितं स्पृश्यमाने च रोदति ॥ निमिलिताक्षोर्मूर्च्छिस्थे शिरो-
रोगेनधारयेत् । वस्तिस्थे मूत्रसङ्गतो रुजातृप्यतिमूर्च्छति ॥
विण्मूत्रसङ्गवैष्यं च्छर्द्याध्मानान्त्रकूजनैः । कोष्ठेदोषान्-
विजानीयात् सर्वत्रस्थांश्चरोदनैः ॥

बालक के जिस स्थान में दर्द होता है उसी स्थान को वह बार-
बार छूता है यदि ठीक स्थान पर हाथ नहीं पहुंचता तो इयारा उसी

तप के रहता है, अगर कोई उस स्थान को छू ले तो रोने लगता है। जब बालकों के गिर में दर्द होता है, तब वह अपनी आंखें बन्द कर लेता है। यस्ति (पेट) में घीमारी होनेसे सूत्र बन्द हो जाता है अथवा कांख कर मृतता है और इन रोगोंमें सूत्र लगती है और बेहोशी, अर्थात् लव के सुस्त हो जाते हैं। यदि बालक का मुख बन्द हो जाय मुख मुरझाय जाय, पेट फूल आवे, पेट में गुड़गुड़ शब्द हो तो जानना कि पेट में कोई रोग हुआ है अथवा मल रुक गया है और सम्पूर्ण देह में रोग होने से लड़के बहुत रोते हैं ॥

श्वास रोग का लक्षण ।

नाक का बहना, या नाक का सूज जाना और पपड़ी जन जाना, खांसी आना, छाती और गले में कक का शब्द होना, हांकना और पेट का उद्वलना (रसी को गंधार लोण पसुरा का चलना बतलाते हैं और गरम र दवा देके बच्चों को मार डालते हैं जिसका बयान हम आरोग्य दर्पण के प्रथम खण्ड में कर चुके हैं) मुख सूजना, पानी पर ज्यादा रुजू होना, पचहाना, चौंक उठना बदनपर कपड़ा का न रखना आंख निकाल देना, बेहोश हो जाना इत्यादि लक्षण होते हैं ॥

बच्चों को भयानक यह क्यों है ।

बालकों के लिये यह दुष्कर रोग क्यों होता है उसका विवरण बड़े मनुष्यों की अपेक्षा यह रोग बच्चों को भयानक इस वजह से होता है कि श्वास लेनेकी नालियां बच्चों की बहुत ही छोटी होती हैं और खांसी के वजह से बहुत जल्द फेफड़ोंके भीतर प्रदाह पहुंच जाता है। बड़े मनुष्य की श्वास घमनी इतनी बड़ी होती है कि फेफड़ों तक श्वास का दोष बहुत कठिनतासे पहुंचा है। जब बच्चों के फेफड़े तक यह रोग पहुंचता है तब बड़ी तकलीफ होती है क्योंकि यारीक कायु में रक्त भर जाता

है जिस्से बच्चों का श्वास रुकने लगता है जिस्से भीत का हर है । बयान कर चुके हैं कि इस रोग में पहले लड़कों का नाक बहता है जिमको जुकाम कहते हैं अगर उसी समय जुकाम पकाकर साफ कर दिया जाय तो कोई अंदशे की बात नहीं है, यहाँ तो भूखों में जहाँ बच्चों की नाक बहती जाना कि महाबज्र शरदी ने आघेरा धुनाधुन गरम चीज देना शुरू कर देते हैं । बाद खांसी आने लगती है और खांसती समय एक फूटका सा लगता है और घेकली बढ़ती जाती तथा ऊपर भी होाने लगता है और धीकनी सी श्वास जल्दी २ चलने लगती है तथा बरखा पेटके द्वारा श्वास लेने लगता है यही कारण है जो श्वास लेने में पेट फूलता और दबता है और मालूम होता है कि बच्चे का दम निकलने लगता है । खांसते समय मुख लाल हो जाता है, मुँह बाय देता है और हुस्त हो कर आँख फाड़ देता है, कभी कुछ लासेदार कफ भी मुख पर आ जाता है किन्तु बच्चे धूकना नहीं जानते फिर निगल जाते हैं, खांसते २ कभी फी भी हो जाती है जिस्से बच्चों को कुछ चैन मिलता है । भीतर ऊपर रहता है किन्तु आँगी और श्वास के तकलीफ के सबबसे शरीर परीनेसे तर हो जाता है जिसे गवांरदल शरदी का नामा समझते हैं । इन में बालकों की भूख घट जाती है, दूध पीने वाली दूध नहीं पीते तालू खुष्क हो जांसे-साता का स्तन मुँहसे दबा नहीं सकते और नारे प्यास के यहाँ तक अरुचि हो जाता है कि स्तन मुख में लगा देनेसे बच्चे मुख हटा लेते हैं । जब बीमारी बढ़ जाती है तो श्वास आँगी से विश्राम नहीं मिलता और घघा घोड़े ह। देर में निर्मल पड़ जाता है, चेहरा पीला, होठ सूखा, मुख फटाहुम्मा और श्वास लेती समय नपुये फूलते हैं और श्वास मुश्किल से लिया जाता है और जो भीतर से श्वास आता है कपूरा और कठिनता से आता है उस ऐसी अवस्था में अज्ञान लोग बढ़ी हुई शरदी समझ कर और भी गरम दवा खिला देते हैं, जितना ही गरम दवा दी जाती है उतनाही श्वास और बढ़ता और बढ़ोशी

आती जाती है तथा बच्चा पसीने से ढूँया जाता है अन्ततोगत्वा मूछों में प्रसिप्त हो यथा प्राण को परित्याग करता है ॥

रोग घटने का लक्षण ।

जब बालक आराम होनेवाला होता है तो नन्ही की गति धीमी, शरीर की रुग्णता (भीतरोज्वर) रूग्ण तथा श्वास कष्ट और पींक्नी सी श्वास का चलना बन्द होती जाती है, खांसी दर दर में आती है गोंद भरपूर और भूखभी लगने लगती है। यथा चैतन्य और खेलने लगता है ॥

चिकित्सा और यत्न ।

त्रिविधः कथितो बालः क्षीरान्नोभयवर्त्तनः । स्वा-
स्थ्यं ताभ्यामदुष्टाभ्यां दुष्टाभ्यां रोगसम्भवः ॥

दवा करने के पहले चिकित्सक को अवश्य जान लेना चाहिये कि बालक किस अवस्था का है क्योंकि बालक तीन प्रकार के होते हैं । एक तो केवल दूध पीनेवाला, दूसरा दूध और अन्न खानेवाला, तीसरा केवल अन्न खानेवाला होता है तहाँ बालक को शुद्ध दूध और भक्त मिलाने से आरोग्य रहते हैं तथा अशुद्ध यानि दूध महित मिलाने से रोगी होते हैं । क्योंकि जिस कारण से रोग उत्पन्न है जब तक उस कारण के शान्त का उपाय न किया जायगा रोगका छूटना अति दुष्कर है जैसे बालक माता का दूध पीता है तो माताको दवा न देकर सिर्फ बालकही को दवा खिलाना सम्भव है कि बालक आराम हो इसलिए सबसे प्रथम यह देखना चाहिये कि यथा माताकी बदपरहेजी से बालक हुआ है या उसको ठीक खाना नहीं मिला । माता की बदपरहेजी दुग्ध परीक्षा और पूछने से मालूम हो सक्ता है ॥

क्षीरयस्यौषधंचात्र्याः क्षीरान्नादस्यचोभयोः । अ-
न्नादस्यशिशोरेव प्रदद्यात्कुशलोभिपक् ॥

यह यचन आत्रेयसंहिता की है इनका सिद्धान्त मत है कि जो बालक केवल दूध पीता है तो उस बालक को दया न खिला के दूध पिलानेवाली माता अथवा दाई को दया देना चाहिये ॥

(प्रश्न) यदि बालक सिर्फ गौ या बकरीका दूध पीता हो तो ऐसी अवस्था में दूध को दया दे या बकरी गाय को दया पिलावे ॥

(उत्तर) प्रथम तो गौ या बकरी का दूध पीनेवाला बच्चा बीमार नहीं हो सक्ता क्योंकि गाय बकरियां आदि जीवों के दूध शुद्ध रहते हैं, उसका मुख्य कारण यह है कि उन लोगोंका खाना पीना सगनौजी नहीं है, बंधे अन्दाज या समय के घास पात पर निर्भर है, हां दूध पिलाने का नियम ठीक न रहने से, जैसे-दूध पकानेवाली दाइनी (नँदिया) सूख सांज भी कर सोंधई न गई हो, या अप्रमाण दूध पिलाया गया हो तो निस्सन्देह बालक बीमार हो सक्ता है-यदि एक कारण दृष्टिगोचर न हो तो धात्री दुग्ध पराक्षा की भांति गयादिके दूध की परीक्षा कर लेवे जिसका ययान समित्तर वर्णन बालचिकित्सामें करेंगे, अगर दूध दूषित लाग परे तो उनके भी दूध को औषध द्वारा शुद्ध करे । जो बालक दूध भी पीता हो और अन्न भी खाता हो तो बालक और बालककी माता दोनों को दया देवे और जो बालक अन्नदि खाता हो माता का दूध न पीता हो तो केवल दूध ही को दया देवे । आजकल के वैद्यों का ध्यान माता के दूध पर बिलकुल नहीं रहता जोकाज्जोक दूधों ही को दया देना आरंभ कर देते हैं इसे दूध ही सत्युपग्रह हो जाता है । इस स्थलमें अधिक वर्णन न कर श्वाशरेगपर दो बार औषध दूधों के उपयोगी लिखते हैं जिसे असंख्य दूधे आरोग्य हुये हैं यथात् उन

रोगों का घणन करने जो धातु से पूरा सम्बन्ध रखते हैं और जिनकी चिकित्सा अति दुष्कर है ॥

केवल दूध पीनेवाले बच्चेको श्वास कासादि रोग हुआ हो तो बच्चे को बहुत गर्म स्थान में ढांप कर न रखें और न उसके शरीर में शरदी ही प्रवेश करने पावे पूर्वोक्तानुसार जिस प्रकार मूत्रद्वारा बच्चेकी भीतरी गर्मी शरदी जान पड़े उसी प्रकार स्थानादि का इन्तिजान करें और दूध पिलानेवाली दाई को निम्नलिखित काय पिलावे। गुलबनप्सा ६ मासा, मुछेठी ४ मासा, उन्नाव ६ दाना, अलसी ४ मासा, इन सबों को अच्छे-चरा कर एक पाय पानीमें एक तोला मिश्री डाल कर पकावे जब आध पाय पानी रह जाय, मल खान कर, किचिन्मात्र गुनगुना रहे जैसे लोग चा पीते हैं उसीतरह दाईको पिलावे, इसी प्रकार दानों समय काढ़ेको पिलाना चाहिये अगर शरदी अधिक बोधहो तो एक मासा खोदीपीपर का चूर्ण शहद के साथ घाट कर ऊपर से काढ़ा पीवे खानेको मातदिल चीजे देवे, तेल मिर्चा खटाई, अचार दही, रायता आदि गरम और बादी चीजोंका खाना, उपवास करना, आग तापना, ओषध करना आदि त्याग करे। अगर बालक माता का दूध भी पीता हो और कुछ ऊपर से अन्न भी खाता हो तो उपरीक्त काढ़े में से आधा चम्मच जैसी बालक की अवस्था हो बच्चे को भी पिला दे और बाकी दाई पी जावे, यदि बच्चा मा का दूध न पीता हो सिर्फ अन्नही खाता हो तो उसी पूर्वोक्त काढ़े को बालक के अवस्थानुसार मात्रा घटा के तैयार कर के पिलावे आठ दश दिन के दवा सेवनसे रोग नष्ट हो जायगा। ऐसे तो अनेक औषध हैं किन्तु इस औषध से असंख्य बालक आरोग्य हुये हैं, यदि इस प्रयोग से फायदा कम बोध हो तो किसी अच्छे लायक वैद्य हकीम को भी दिखला देय, किन्तु हम साहस पूर्वक कह सकते हैं कि इस्से बढ़कर बच्चोंके श्वास कास रोग पर बहुत कम औषध हैं बाकी रोगों का प्रकरण बाल

चिकित्सा खण्ड में लिखेंगे । इसके पश्चात् अब हम प्रमेह का प्रकरण प्रकाश करते हैं जो आज समस्त भारत को अपने आधीन किये है ॥

प्रमेहरोग ।

आस्यासुखंस्वप्नसुखंदधीनिग्राम्योदकानूपरसाः प-
यांसि । नवान्नपानंगुडवैकृतंच प्रमेहहेतुः कफकृच्च सर्वम् ॥

अब हम प्रमेहरोग होने का कारण अर्थात् जिस वजहसे मनुष्य को प्रमेहरोग होता है उसे दिखलाते हैं (आस्यासुखं) जिनको घैठा रहना ही परम सुख माना जाता है, सिधाय बैठनेके चलना, फिरना अधिक काम करना करने में चित्त न लगना (स्वप्नसुखं) सोना ही जिनको बेकुण्ठ के सुख को भी हतास करनेवाला है अर्थात् कोई काम काम या किसी का घर न हो तो दिन रात सोता ही रहे अथवा शयन में अनेक रूपवती धारयिलाशिनियों के साथ रमण करना, जिनकी अवस्था कम होने के कारण धीर्य उत्तेजित हो रहा है, उस अवस्था में प्रत्येक व्यक्ति की आ-रम्भ्यार कन्दर्प की गरमी शान्ति करने की इच्छा यमी रहती है, उस अवस्था में अनारमणी के अभाव में मनुष्य रात को स्वप्न में खी प्रसंग करता है और धीर्यपात हो जाता है जिसको स्वप्नदोष कहते हैं ॥

(प्रस) इस श्लोक के अन्त पद में लिखा है कि (कफकृच्च सर्वम्) स-मस्त कफकारी पदार्थों के सेवन से प्रमेहरोग होता है और यह परीक्षित है कि पातविचकारी द्रव्य यानी अति उष्ण द्रव्य सेवनसे निस्तब्ध स्वप्न दोष होता है तो परस्पर विरोध हुआ ॥

(उत्तर) कफकारी द्रव्य प्रायः प्रमेह के कारण होते हैं किन्तु इनका अन्तिम परिणाम प्रमेहरोग का हेतु समझना चाहिये, दधि का अति से-

वन, घास के रहनेवाले भेड़ बकरी आदि जीव, जल के संचारी मछली कछुआ आदि जीव और अनूप अर्थात् जल के समीप अथवा जल के किनारे रहनेवाले जीव जैसे हंस, यतक, चक्रे चकवा आदि ऐसे जीवों के मांस रस याने दूध, दूध, नया अन्न और नया जल, (गुड़वैकृत) गुड़ के विकार से जो बिरका जादि बनता है उसके सेवन से अक्सर प्रमेह रोग होता है और जितने कफकारक पदार्थ हैं सो सब प्रमेह होने के कारण हैं ॥

(प्रश्न.) अगर जलघर मछली आदि, जल के किनारे रहनेवाले वनक आदि जीवों के मांस खाने से प्रमेह रोग होता है तो बंगाली और केराली इन दोनों जाति मानवों को प्रमेह रोग होना चाहिये क्योंकि बहुत घन दोनों जातों का भोजन उन्हीं जीवों पर निर्भर है सो इन दोनों में प्रमेह रोग बहुत कम देखते हैं (उत्तर) इसका कारण यह है कि बंगाली लोग जलतैल की भूजी हुई मछली खाते हैं, इसलिये विकार नहीं करता क्योंकि तैल मछली के श्लेष्मकारी गुण को नष्ट करदेता है । और अंगरेजों को हंस आदि जल तटस्थ जीवों के मांस रस हानिकर इसलिये नहीं होता, सच यह है कि प्रथम तो अंगरेज लोग घन्ही के मांस पर निर्भर नहीं हैं, दूसरे भोजन के साथ प्रायः मद्य निमलेट का सेवन रहता है उससे विकार नहीं करता । सब से अमिल बात तो यह है कि जब तक मेषुनादि से यीर्यशील नहीं होता चाहे जो खाया पिया करो कुछ भी नहीं होता, यीर्य निर्बल हुआ कि जरा भी कुपथ्य से बिमारी भरदबाया । प्रमेह रोग होने में अशुभ जी की राय ।

दिवास्वप्नाव्यायामालस्यप्रसक्तं शीतस्निग्धमधुरमे-
दद्रवान्नपानसेविनं पुरुषंजानीयात्प्रमेहीभविष्यति ॥

यह अनुष्य जो शत्रु विरुद्ध दिन में बहुत सोता है, दण्ड कसरत

कुश्ती आदि शारीरिक परिश्रम नहीं करता आलस्य में अत्यन्त ग्रस्त रहता है, अतिशीघ्र, अति चिकना घी आदि अतिमीठा और मेदा के बढ़ाने वाले भोजन और पानादिक करता है जानना चाहिये कि ऐसे मनुष्य को प्रमेह रोग होने वाला है अर्थात् प्रमेह रोग अवश्य होगा ।

(प्रश्न) उपरोक्त कारणों से स्त्री के भी प्रमेह रोग होता है या नहीं । (उत्तर) स्त्रियों को प्रमेह रोग नहीं होता क्योंकि (रजःप्रसेका-
कारीणां नासिमानिग्रिधुष्यति । सर्वेजरीरदोषाश्चनप्रमेहवृत्तयःस्त्रियः)
महीने २ स्त्रियों के रजोदशन द्वारा सम्पूर्ण शारीरिक दोष शुद्ध हो जाते हैं इससे स्त्रियों को प्रमेह रोग नहीं होता, हां प्रमेह के स्थान में स्त्रियों को प्रदर और सोम रोग होता है और जो स्त्रियों में प्रमेह रोग मानते हैं उनका मानना युक्त नहीं है ।

प्रमेह रोगों की संप्राप्ति ।

मेदश्चमांसंचशरीरजंचक्लेदंकफोवस्तिगतःप्रदूष्य ।
करोतिमेहान्समुदीर्णमुष्णैस्तानेवपित्तंपरिदूष्यचापि ॥
इत्यादि ।

यस्य जो मूत्र के घीली के समीप स्थान है जिसे पेहू कहते हैं उसमें गत अर्थात् प्राप्त जो कफ यह बिगाड़ कर मेद, मांस और शरीर के क्लेद को बिगाड़ कर कफज प्रमेह को उत्पन्न करता है, उन्मीप्रकार गरम पदार्थों के सेवन से पित्त क्षुब्ध होकर पूर्वीक मेद मांस को बिगाड़ कर पित्तज इस प्रकार के प्रमेह को उत्पन्न करता है । और यामु यह दोष क्षीण होने से घातू (कहिये यथा मज्जादिक) को हृंघ कर (बस्ती के मुख पर लापकर) प्रमेह को प्रगट करता कफ से उत्पन्न दस प्रमेह आप्य है कारण

इसका यह है कि कफ दोष और मेदः प्रभृति दूष्य इन पर कटु तिक्तादि क्रिया समान है इस रोग में रोगवाही प्रभाव ऐसा है कि इसमें तुल्य दूष्य को साध्यत्व कहा है और प्रमेह के विना और रोगों को अतुल्य (असमान) दूष्यत्व साध्य का हेतु होता है पित्त के छः प्रमेह विषम चिकित्सा करने से साध्य होते हैं अर्थात् पित्त हरण करनेवाले जो शीत मधुर आदि द्रव्य वो मेद को बढ़ानेवाले हैं और मेद हरण कर्ता उष्ण कटुकादि द्रव्य वो पित्त कर्ता हैं ऐसे क्रिया विषम हैं । वादीसे प्रगट चार प्रमेह मज्जादि गंभीर घातु के आकर्षण करने से अत्यन्त पीड़ा करते हैं और इनकी विषमही क्रिया है इसीसे ए चार असाध्य हैं ।

इस स्थल में दोष और दूष्य दो शब्द उचित हुये हैं उनको स्पष्ट जानने के लिये नीचे श्लोक लिखा है ।

प्रमेह का दोष दूष्य संग्रह ।

कफः सपित्तं पवनश्च दोषा मेदोत्सृज्ज्वालाः ।
मज्जारसौजः पिशितं च दूष्या प्रमेहिणीं विंशतिरेव मेहाः ॥

कफ पित्त और वायु यह तीनों दोष कहे जाते हैं और यही तीनों दोष फुपिब हो रस एक घातु को छोड़ मेदादि छ धातुओं को दूषित करता है इसे मेदादि घातु दूष्य कहे जाते हैं । उक्त दोष मेदा, (अन्न) रुधिर (शुक्र) बीर्य (अंशु) जल अर्थात् जिससे शरीर में तरो रहती है; (वसा) चरबी जो हड्डी के भीतर रहती है (समिका) मांस का जल, मज्जा रस, (ओज) पराक्रम और मांस इन सबों को दूष्य जानना, उक्त दोष और दूष्य इन दोनों से २० प्रकार के प्रमेह उत्पन्न होते हैं ।

तात्पर्य यह है कि अन्य रोगोत्पन्न में पूर्वोक्त घातु ऐसे दूषित

महीं होते जो द्रवीभूत हों और इस रोग में द्रवीभूत हों मुखमार्ग द्वारा मूत्र के साथ मिल कर बहने करते हैं और जो ओज का मान लिया गया है उसका कारण यह है कि जिस रीतिदि यानु कल होते जाते हैं उसीके साथही ताकत भी घटती जाती है ।

प्रमेह रोग का पूर्वरूप ।

दन्तादीनामलाढ्यत्वं प्राग्रूपं पाणिपादयोः । दाहचि-
कृततादेहेतुश्वासश्चोपजायते ॥

दांतों तथा आदि शब्द से जिह्वा तालू जानना इनमें मिला अधिक जमता हाथ पैरों में जलन या बहुत गरम रहना, अंग का चिकतापन, प्यास की आधिष्यता, थोड़े से भी काम करनेसे हांकवाना अथवा श्वास का होना, यारों में लटबंघना और नखों का अधिक बढ़ना समझना चाहिये यह प्रमेह के प्राग्रूप हैं अर्थात् ऐसे होने से जानना की प्रमेह रोग होनेवाला है । इसके बाद क्या होता है सो सुनिये ।

प्रमेह का सामान्य लक्षण ।

सामान्यलक्षणतिपां प्रभृताविलमूत्रता ।

मूत्र कुछ अधिक और कईबार तथा कुछ मात्रा आना आरम्भ हो उस इसके बादही प्रमेह होता है और दीप्त दूध के संयोग वशात् मूत्रों का रंग शिरंमाण और उसके साथ आनेवाले पदार्थ दृष्टि गोचर होने लगते हैं ।

विंशति २० प्रमेह के नाम ।

कफदोष से १० प्रमेह ।

१-उदकप्रमेह

२-इक्षुप्रमेह

३-चांद्रप्रमेह

४-सुराप्रमेह

५-पिष्टप्रमेह

६-शुकप्रमेह

७-सिक्ताप्रमेह

८-शीतप्रमेह

९-ग्रन्थिप्रमेह

१०-लालाप्रमेह

पित्तदोष से ६ प्रमेह ।

१-तारप्रमेह

२-नीलप्रमेह

३-कालप्रमेह

४-हारिद्रप्रमेह

५-नांजिष्ठप्रमेह

६-रक्तप्रमेह

वायुदोष से ४ प्रमेह होते हैं ।

१-वसाप्रमेह

२-मज्जाप्रमेह

३-चीत्रप्रमेह

४-हस्तीप्रमेह

यह सब मिला के २० प्रकार के प्रमेह होते हैं जिनका लक्षण यह है ॥

—:०:—

१० कफज प्रमेह के लक्षण ।

१-उदक प्रमेहवाले का मूत्र बहुत स्थूल मज्जे, शीतल (मूत्र करते समय शीतल जल के समान मूत्रमार्ग में घोष हो) गन्ध रहित पानी के समान ।

२-इक्षुप्रमेह में ऊँच के रस के समान रंगत और गीठा होता है उसमें चीँट भी लगती है किन्तु रोग जग्राध्य नहीं होता ॥

३-चांद्रप्रमेहवालेका मूत्र रात को पात्र में धर रखने से गाढ़ा हो जाता है और नीचे गँदला जग भी जाता है ॥

- ४-सुरामेह-यह मूत्र कारुरे में देखने से नीचे गांढापन और ऊपर का भाग पतला रंगत मटमैला या कुछ सुरखी भावल होता है ॥
- ५-पिष्टमेहवाले का मूत्र पिसेहुये चावल के पानी के समान होता है ॥
- ६-शुक्रमेह-इस रोग में मूत्र के साथ मिलकर धीर्य निकलता है ॥
- ७-शिकामेह-इस प्रमेह वाले के मूत्र के साथ बालू तथा नदी के रेत के समान वस्तु आता है और किसी को उसके निकलने में दर्द भी होता है उसीको हिकमतवाले रोगमहाना रोगभी कहते हैं ॥
- ८-शीतमेह-इसरोगवाला मधुर तथा अत्यन्त शीतल ऐसा बारम्बार सूतता है । किन्तु सुश्रुत आदि कई महारथों ने मित्र रचित संहिता में शीतमेह को नहीं लिखा इस स्थल में उन्होंने लवणमेह लिखा है (विशदलवणतुल्यलवणमेही) लवणमेहवाले का मूत्र विशद लवण जल के समान होता है ॥
- ९-शनैः प्रमेह-इस रोग में बारम्बार और चोड़ा २ पेशाव होता है और उसमें किसी प्रकार की तकलीफ नहीं होती जैसा कि मूत्रकण्डू में होता है कहने का समय यह है कि कितने लोग शनैः प्रमेह को मूत्रकण्डू समझते हैं सो भूल है ॥
- १०-लालामेह-जिसका मूत्र लाल के समान तारयुक्त और चिकना होवे यह लालामेह है किन्तु इस प्रमेह का भी सुश्रुत में वर्णन नहीं है बल्कि इस स्थल में केन प्रमेह कहा है (लोकांलोकांसेन केनमेहीमेहति) बस्ति स्थान में दोक्कासा प्रतीत हो और मूत्र कागदार अर्थात् मूत्र के ऊपर केन २ सा जमजाता है और प्रायः लालामेह और केनमेही दोनों देखने में आते हैं ॥

६ पित्तज प्रमेह के लक्षण ।

१-क्षारप्रमेह-में खारीजल के समान गन्ध, वर्ण, रस और स्पर्श ऐसा मूत्र होता है ॥

२-नीलप्रमेह-नीलरंग का भयोत् पपीया पक्षी के पंख के समान रंगका पेशाब होता है ॥

३-कालप्रमेह-इस प्रमेह में काली स्याही के समान मूत्र उतरता है किन्तु शुभ्रत में इसकी गणना नहीं है इसके स्थल में चन्दी ने अक्षप्रमेह को कहा है (अक्षरसगन्ध अक्षमेही) जिसके मूत्र में खड़ी दुर्गन्ध आवे उसको अक्षमेही कहते हैं ॥

४-हारिद्रप्रमेह-इसमें गहरी हल्दी के रंग के समान और दाहयुक्त मूत्र होता है ॥

५-साजिष्ठप्रमेह-इसमें मनुष्य नोजीठ के रंग के समान लाल और आम दुर्गन्धि सहित मूत्रता है ॥

६-रक्तप्रमेह-इस रोग में दुर्गन्धि युक्त, गरम, खारा, और रुधिर के समान लाल रंग मूत्र उतरता है ॥

घातज ४ प्रमेह ।

१-धंसप्रमेह-इस रोग में मूत्र के साथ चर्बी मिलकर आती है ॥

२-मज्जाप्रमेह-इसमें मज्जा के समान अथवा मज्जा मिला हुआ भार-म्वार पेशाब होता है ॥

३-सौद्रप्रमेह-शहद के समान रंगयाला, अथवा सीठा कसेला पेशाब होता है, जिसपर चोटी चोटी और गन्धियां बैठती हैं ॥

४-हस्तिप्रमेह-इस रोग में मूत्र प्यासी के भावे से जैसा मूत्र पड़ता है उस मूत्र के समान निरन्तर वेग रहित जिसमें तार निकले और आँसूते २ याने ठहर २ कर पेशाब होता है ॥

कफप्रमेह के उपद्रव ।

अविपाकोऽरुचिश्छर्दी ज्वरःकासःसपीनसः ।

उपद्रवाःप्रजायन्ते मेहानां कफजन्मनाम् ॥

अन्न का यथार्थ न पचना अथवा कभी पचना कभी न पचना, याने भोजन पचने की शिकायत कुछ न कुछ घना रहना, भोजन पर अरुचि, घमन याने कभी २ भीतर पित्त सञ्चित होने से जी सचलाना या घमन होना, ह्रारत खाँसी बारम्बार जुकाम होना या जुकाम का घना रहना यह कफजप्रमेह के उपद्रव हैं ॥

पित्तप्रमेह के उपद्रव ।

वस्तिमेहनयोःशूलं मुष्कावदरणज्वरः ।

दाहंस्त्वप्णास्त्रिकामूर्च्छा विडम्बेदःपित्तजन्मनाम् ॥

वस्ति (पेहू) और लिंग में दर्द हो और किसी २ को लिंग में दर्द न होके सिर्फ पेहू में दर्द हुआ करता है अथवा ऐसा मालूम हो कि पेहू में कोई चीज भरा है यह भी कभी २ अँहकोशों का फूलगा या पक कर फूटना और कभी २ ह्रारत का होना प्यास की आधिप्यता उद्दी हकार जाना शिर में चक्कर या आँख तले अँधियारा होना दस्त पतला ये सब पित्त प्रमेह के उपद्रव हैं ॥

प्रमेह पिडिका ।

सराविकाकच्छपिका जालनीविनताऽलजी । मसूरिकासर्पपिका पुत्रिणीसविदारिका । विद्रधिश्चेतिपिडिकाः प्रमेहोपेक्षयादश । संधिमर्मसुजायन्ते मांसलेपुचधामसु ॥

१-सराविका-(अन्तीकताचतद्रूपा निम्नमध्यासराविका) जो पिडिका ऊपर के भाग में कुछ ऊंची हो और बीच में धीठी सी हो जिस प्रकार मही का पिआला होता है उसको सराविका कहते हैं ॥

२-कण्डपिका-(सदाहाकूर्मसंस्थाना कृपाकण्डपिकायुधैः) जो पिडिका कण्डू के पीठ के समान कुछ ऊपर की उभड़ी और दाढ़ युक्त हो याने भीतर जलन हो उसे कण्डपिका कहते हैं ॥

३-जालिनी-(जालिनीतोप्रदाहातु भासजालसमावृता) जो पिडिका अधिक दाढ़ से युक्त और मांस जाल में व्याप्त हो उसे जालिनी कहते हैं ॥

४-विनता-(अवगाढरुजोत्कृष्टापुष्टेवाप्युदरेऽपिवा । महतीपिडिकामीला साधुधैर्विनतास्मृता) जो पिडिका पीठ और पेट में होती है अधिक पीड़ा करती है ठंडी बड़ी और नीले रंग की होती है उसकी विनता संज्ञा है ॥

५-अलजी-(रक्तासितास्फोटयती दारुणात्यलजीभवेत्) जो फुड़िया लाल और काले रंग की हो और उसके आस पास छोटी २ फुन्सियां भी हों तथा जलन आदि अनेक उपद्रव करके युतही उसको अलजी कहते हैं यह पिडिका बहुत क्लेशदायक होती है और बहुत कठिनता से आराम होती है और नहीं भी आराम होती ॥

६-मसूरिका-(मसूरदलसंस्थाना विज्ञेयातुमसूरिका) जो पिडिका मसूर के दाल के समान हो जैसी मसूरिका नामक माता होती है उसके मसूरिका कहते हैं ॥

७-सर्पिका-(गौरसर्प संस्थाना सरपमाणासर्पिका) जिन फुन्सियों का आकार सफेद सरसों के समान हो उनको सर्पिका कहते हैं ॥

८-पुत्रिणी-महत्त्वल्पचिताज्ञेया पिडिकाचापिपुत्रिणी) मोच में एक बड़ी फुन्सी हो और उसके आसपास चारों ओर छोटी २ अनेक फुन्सियाँ हों उसको पुत्रिणी कहते हैं ॥

९-बिदारिका-(बिदारीकंदयदृष्टा कठिनाचबिदारिका) जो कीड़ा बिदारीकंद के समान बड़ा हो और करीब २ उसीके आकार भी हो किन्तु गोलाकार और छूने से बहुत कड़ा सासून हो उसे बिदारिका कहते हैं ।

१०-बिद्वधिका-(नामक फुन्सी बिद्वधि नामक पिडिका के समान होती है, प्रायः यह फूट के बिपर भी जाती है यह दश प्रकार की पिडिका प्रमेह रोग के बढ़जाने से होती भी नहीं कोहि जिनका जन्त अवस्था यह संसार परित्याग करने का है । यह मत भाव-प्रकाश साधोनिदान आदि ग्रन्थों का है किन्तु भोजसंहिता और श्रुतसंहिता के मत से जी ९ पिडिका है और चरक के मत से सात ही है ॥

पिडिका उत्पन्न होनेका मुख्य कारण ।

येयन्मयाःस्मृतामेहास्तेपामेतास्तुतन्मयाः । विना-
प्रमेहमप्येताजायन्तेदुष्टमेदसः । तावच्चैतानलक्ष्यन्तेयात्र-
द्वास्तुपरिग्रहः ॥

जो प्रमेह जिन २ दोषों के अधिक कोप होने से होता है उन्हीं दोषों के उखल होने से प्रमेहपिड़िकायें भी होती हैं और बिना प्रमेह रोग के भी दुष्ट मेद होने से पिड़िका होती है इस श्लोक के लिखने का मुख्य प्रयोजन यह है कि पिड़िका होने ही से प्रमेह रोग नहीं जान लेना क्योंकि बिना प्रमेह के भी दुष्ट मेद से पिड़िका होती है (इसमें धन्वन्तरि जी की राय है कि जितने प्रकार के प्रमेह होते हैं उतने ही प्रकार की तज्जन्य पिड़िका भी होती है) और पिड़िकाओं की जब तक गांठ नहीं बँधती तब तक यह नहीं दिखलाई देती कहने का तात्पर्य यह है कि प्रमेह के अन्तमें प्रमेह पिड़िका होना आरंभ होजाती है किन्तु जब मेद में पूर्ण रूप से दोष उत्पन्न होता है तब पिड़िका की गांठ बँध जाती है ॥

असाध्य पिड़िका ।

गुदेहृदिशिरस्यंसे पृष्ठमर्माणिचोत्थिताः ।

सोपद्रवादुर्वलस्यपिड़िकाः परिवर्जयेत् ।

जो पिड़िका गुदा याने पाखाने के स्थान में होती है नवानने से लोग इसी पिड़िका को जब वह फूटकर बहजाती है और फिर सर्वद्रा घोड़ा रसा करती है लोग भगंदर समझते हैं किन्तु भगंदर में और इस पिड़िका में घोड़ा मेद है, भगंदर में कई छिद्र हो जाते हैं और यह पिड़िका एकही छिद्रवाली रहती है । हृदि अर्थात् छाती या धुकधुकी के ऊपर अथवा यंत्र के ४ अंगुल नीचे होती है और इस स्थान के बाजे २ फुड़ियोंमें भुवासा एक प्रकार का गूदा निकलता है । कंधा और शिर तथा पीठ में और समस्त स्थान में पिड़िका होती है सो असाध्य होती है क्योंकि प्रायः उक्त पिड़िकायें प्रमेह से दुर्वल और उपद्रव युक्त पुरुष को होती है और बिना प्रमेह आराम भये पिड़िका आराम नहीं होती

वातजमेह आरम नहीं होता इसे प्रमेह पिड़िकाभी आराम नहीं होती, उसे कहते हैं ।

वातज प्रमेह असाध्य क्यों है ?

कृत्स्नंशरीरंनिष्पीडयमेदोमज्जावसायुतः ।

अधःप्रक्रमतेवायुस्तेनासाध्यस्तुवातजाः ॥

वातजप्रमेह जब शरीर को दुर्बल कर और संपूर्ण शरीर को पीड़न करता है अर्थात् संपूर्ण शारीरिक धातुओं को सूत्र मार्गसे बाहर निकाल देता है और मेद मज्जा एवं चर्बी से युत होकर वायु जय उन चर्बी को नीचे को प्रेरण करता है तब वातज प्रमेह असाध्य होते हैं । यही कारण है असाध्य होने का ॥

पिड़िका के उपद्रव चरक से ।

तट्कासमांससंकोच मीहहिक्रामदज्वराः ।

विसर्पमर्मसंरोधाः पिड़िकानामुपद्रवम् ॥

पिपास का अधिक लगना, खांसी, मांस का सिकुड़ना जिसे कुरी पड़ना कहते हैं जैसा अति रुद्धि पुरुषों के शरीर में सिकुड़न पड़ जाता है (मूँछों) गणभ्राना या मदहोशी, हिचकी, नेत्रमें नशा सरीखा मालुग होना सफ़ीद प्त्रर का घना रहना, विसर्प नामक फुड़िया, मर्म संरोध होना यह सब प्रमेह पिड़िका के उपद्रव हैं ॥

असाध्य होने का पूर्व ।

सचापिगमनात्स्थानं स्थानादासनमिच्छति ।

आसनादुन्नयुतेशय्यां शयनात्स्वप्नमिच्छति ॥

जब मनुष्य को प्रमेह रोग असाध्य होनेवाला होता है तो उसको क्रमशः ऐसी सुस्ती आने लगती है कि चलने फिरने की ताकत कम हो जाती है क्योंकि चलने से खड़ा रहना अच्छा लगता है, फिर खड़ा रहने से बैठना अच्छा लगता है और बैठने से लेट रहना और लेट रहने से सोना अच्छा लगता है यह लक्षण क्रमशः होने से चाहे उपद्रव रहित भी रोगी हो अन्त में गव्यागत हो प्राण परित्याग करता है ॥

मनुष्य को उचित है, प्रमेह के निदान शरीरमें कुछ भी दृष्टि होने लगे उसके हटाने की चेष्टा प्रथमही से करना आरंभ कर दे क्योंकि बड़ जाने पर प्रमेह रोग नहीं आराम होता है, और मूत्र का कुछ अधिक आना ठीक या गाढ़ा पेशाब का होना तथा प्रतिदिन सुस्तीका घेरना आदि देखने ही से चिकित्सा शुरू कर दे और सर्वदा अपने खाने पीने प्रसंगादि का नियम ऐसे ढंग से रखे ताकि प्रमेह रोग शरीर में न होने पावे ॥

प्रमेह भेद ।

दौप्रमेहौसहजोऽपथ्यनिमित्तश्चभवतः । तत्रसहजो
मातृपितृबीजदोषकृतः । अहिताहारजोऽपथ्यनिमित्तः ।
तयोःपूर्वणोपद्रुतः कृशोरुक्षोऽल्पासीपिपासासुभृशं परि-
सरणशीलश्चभवति । उत्तरेणस्थूलोवहवाशीस्त्रिगुणशय्या-

सनस्वप्रशीलः प्रायेणेति । तत्र, कृशमन्त्रपानप्रति संस्कृ-
ताभिः क्रियाभिश्चिकित्सयेत् । स्थूलमपतर्पणयुक्ताभिः ॥

सुश्रुतसंहिता से अन्न हन प्रमेह के दो भेद दिखलाते हैं । एक सहज दूसरा अपथ्य निमित्त । इनमें से जो माता पिता के दूषित वीर्य और रज से उत्पन्न हुआ बालक जिसको समय पाकर प्रमेह रोग होता है जिसका बयान हम ऊपर लिख आये हैं उसको सहज प्रमेह कहते हैं, और जिसे मिथ्याहार और मिथ्या बिहार अर्थात् अहिताचार से जो प्रमेह उत्पन्न होता है, उसको अपथ्य निमित्तित्त प्रमेह रोग कहते हैं, जिस मनुष्य के सहज प्रमेह होता है वह मनुष्य दुबला रुख थोड़ा भोजन करनेवाला होता है और पियास उसे अधिक लगती है (परिसरणशील) अर्थात् बहुत चलने फिरने वाला होता है । सहज प्रमेह वालेको प्रायः यक्ष्मा रोग हो जाता है विशेषकर स्त्रियों को दश बारह वर्ष के आयु होने से ही रोग आरंभ हो जाता है और क्रमशः बढ़ कर अन्ततोगत्वा असाध्य हो जाता है । यथार्थ परीक्षित है कि माता पिताके वीर्यदोष से उत्पन्न बालक के उष्णता पाकर प्रायः पेशाब थूना सरीखा जम जाया करता है और चिकित्सा न होने से वही अवस्था पाकर घोर रूप से निदान उपस्थित करता है ॥

सहज प्रमेहवाले की चिकित्सा उत्तम अन्न पानादि से संस्कार की जुड़े क्रियाओं के द्वारा करे क्योंकि इस प्रमेहवाला स्वयं रुग्ण रहता है यदि और भी रुग्ण आदि क्रिया की गई तो रोगी शय्यागत हो जायगा और अपथ्य जनित रोग में रुग्णकारक उपाय करना चाहिये क्योंकि उक्त रोगी स्थूलकाय होता है यद्यपि उसमें शारीरिक पुष्टता नहीं है सिर्फ देखने में मोटा ताजा मालूम होता है किन्तु बिना रुग्णकारक क्रिया किये रोग समूल नष्ट होना अति दुष्कर है ॥

प्रमेह में वर्जित वस्तु ।

सर्वएवचपरिहरेयुःसौवीरकतुपोदकसुक्तमैरेयसुरास-
वतोय पयस्तैलघृतेक्षुबिकारदधि पिष्ठान्नासूपानकानि-
ग्राम्यान्पौदकमांसानिचैति ॥

प्रमेह रोग प्राप्त होने पर रोगी को चाहिये की निम्नलिखित पदार्थों को परित्याग करे जैसे (कांजी) सिरका, रायता और भाल पदार्थ आदि जैसे भूली आदि का आचार जो गरम पानी तेल में तीन चार दिन धूप में रखने से खड़ा हो जाता है (तुपोदक) भूरी आदि का जल जो धूप के योग से खड़ा भया हो (शुक्त) कण आदि का सिरका (मैरेय) यह भी मद्य विशेष है अर्थात् उक्त नाम का शराब है (सुरा) नामूली शराब (आसव) जो जमीन में गाढ़ के बनता है कुमारी आसव आदि (तोय) अधिक जल का पीना (पय) दूध सहज रोग में अधिक निषेध नहीं है (तैल) तेल खाने में बिल्कुल परित्याग गर्दन में लाभ दायक है (घृत) अधिक घी न खाये किन्तु दाल तरकारी वगैरह खा सकता है तथा सहज प्रमेहवाला कुछ अधिक घी भी खा सकता है (इक्षुबिकार) कण का रस राय वगैरह, दही और पीसा अन्न सेतुआ आदि (असूपानकानि) अमली आम आदि खड़े पदार्थों का सर्वत तपाम्नास्य, औदक और आनूप पशुओं का मांस जिसका खाना ऊपर कर्तुके हैं, रोगी यदि आरोग्य की इच्छा रखता हो तो अवश्य त्याग करे ।

प्रमेह में सेवन वस्तु ।

ततःशालिपष्टिकयवगोधूमकोद्रवीद्दालकाननवान्भु-
ञ्जीत । चणकाढकोकुलत्थमुग्द विकल्पेनतिक्तकपायाभ्यां

शाकगणाभ्यांनिकुभ्यंगुदीसर्पपातसीतैलसिद्धाभ्यां बटुमू-
त्रैर्वाजाङ्गलैर्मांसैरपद्धृतमेदोभिरनम्लैरघृतैश्चेति ॥

प्रमेह रोगवालों के सेवन योग्य यह वस्तु हैं, पुराना आसमती
आदि चावल और शाठी के चावल का या कोदण के चावल का भात,
जव और गेहूं की रोटी किन्तु सहजवाले को जीकी रोटी लाभदायक
कम होगी और उद्दालक आदि पुराने अन्नों को सेवन करें तथा चना अ-
रहर कुरची और मूंग की दाल किन्तु सबों से उत्तम मूंग और अरहर की
दाल दोनों को एक में मिला कर खाना अच्छा है, तरकारी में
कैला आदि चरपरे कसायले साग जो गोदी, सरसो, अलसी के तेल में
अच्छे प्रकार भूँजे गये हों (किन्तु तेल की भूजी तरकारी आदि सहज
प्रमेहवाले के लिये कदापि लाभदायक न होगा) अथवा जांगल जीओं
के मांस के घूस के साथ भी रोटी का खाना उत्तम है किन्तु बलकारी
मेद सज्जायुक्त द्रव्य अवश्य प्रमेह रोगवाले को उत्तम नहीं है यदि
खाने की इच्छा हो तो मांस के भीतर से मेदा निकाल कर और जिस्में
ची खटाई न पड़े बनाकर खावे ।

प्रमेह चिकित्सा ।

अथ ह्य प्रमेह रोग के नाशनाश अनेक औषध लिखते हैं, जिन्हे
द्वारा अनेक रोगियों को आराम किया और निदान पूर्वक चिकित्सा
करने से आराम होने की पूरी सम्भावना है । आयुर्वेद में जिस तरह
बीसों प्रमेह को कहकर पश्चात् सहज और अपथ्यजनित दो प्रकार का
प्रमेह दिखाया है किन्तु उन दोनों के लिये औषध भिन्न नहीं लिखा,
यह विचार वैद्यों के बुद्धिपर छोड़ दिया है, जो लायक हैं वे रोगी को
प्रकृति अवस्था समय और औषधियों का गुण देख कर उत्तम औषध
खिलाय रोगी को आराम करदेते हैं, अज्ञान वैद्य पुस्तक में खिली हुई

तारीकी दवाईयों के गुणों को पढ़ मगी पर मोहित हो जाते हैं और झट उन्हीं दवाईयों को बनाय रोगों को खिलाते हैं जिससे रोग न घटकर और भी बढ़जाता है । इसलिये हम उन दवाईयों को लिखते हैं, जो दोनों प्रकृति के रोगियों को लाभ पहुंचा सकता है ।

जय देखे कि रोग नबीन है अथवा कुछ निदान मिलते हैं तो रोगी को तेज दवा न देके साधारण दवा से आराम करे और पच्य ठीक रखे क्योंकि पच्य ठीक न रखने से रोग नहीं छूटता विशेषकर प्रमेह रोग, इसी से सुश्रुत जी ने बड़े आदमियों के खाने पीने में घुरी बस्तु मिला देने को लिखा है जिसे पृष्ठा उत्पन्न होने से वह अपच्य वस्तुओं को त्याग दे. सुश्रुतसंहिता के चिकित्सा स्थान ग्यारहवें अध्याय में लिखा भी है ।

कपायाणिवापातुं महाधनमहिताहार मौपधद्वे-
पिण्णमीश्वरं वा पाठाभयाचित्रक प्रगाढमनत्यमाक्षिक
मन्यतममासवं ।

प्रमेह रोगवाले को कपाय का पान कराना बहुत हित है किन्तु प्रायः धनवान् रोगी अपच्य करहालते हैं और कड़वी औषधों को भी पीना नहीं चाहते इसलिये राजाओं को पाढ़ी, इड़ और चीता के काप में बहुतसा सहित डालकर, पिलावे अथवा मदकारक आसव बनाकर पिलावे ।

मधुकपित्त्यमरिचानु सिद्धानिचारुमैपानान्युपहरेत् ।
उण्ड्राश्वेतरस्वरपुरीषचूर्णानि चारुमैदद्याशनेषु । हिंसुसै-
न्धवयुक्तैर्यूपैः सार्वपैश्वरागैर्भोजयेत् ॥ अविरुद्धानिचा-

रोग में वायु गरम हो के मेदा के साथ मिल जाता है जिसे शरीर तैयार होती जाती है और बल घटता जाता है उसके दमनार्थ कसरत अवश्य करना चाहिये क्योंकि शारीरिक परिश्रम से शरीर दुबली होती है जो प्रमेह रोग में फायदा करता है । किन्तु प्रायः यह नियम अपघ्न जलित प्रमेह रोग का है ॥

बहुत लोगों को विश्वास है कि प्रमेह रोगमें कसरत करना निषेध है मगर उनकी भूल है, क्योंकि कसरत न करने से प्रमेह रोग होता है, सिर्फ निम्नलिखित रोगों में कसरत न करना चाहिये ॥

रक्तपित्तकृतः शोषो श्वासकासक्षतातुरः ॥

भुक्तवान्स्त्रीपुचक्षीणोभ्रमार्तश्चविवर्जयेत् ॥

रक्तपित्ती, दुर्बल और जो किसी रोग से सुखा जाता हो दमा, खांसी, और घाव से पीड़ित या भोजन के उपरान्त अति ली प्रसंग करनेवाला, क्षीण पुरुष और जो रास्ता चलनेसे थका हो इन मनुष्योंको कसरत नहीं करना चाहिये ॥

प्रमेह पर औपध ।

उदकप्रमेह—उदकप्रमेह वाले को चाहिये कम से कम एक सास पर्यन्त नीम के अंतरखाल का काष पिये । जैसे दो तोला नीम के छाल को एक पाव पानी में मृत्तिका पात्र में पकावे जब साधपाव या एक छंटाक जल रह जाय मल खानकर एक तोला शहद डाल कर पिये । यदि सुष्की अधिक रहती हो तो, काष न यना के साधपाव जल में नीम के छाल को डाल के भिजाकर ओश में रख देय और सघेरे मल खानकर शहद डालकर पिये इसी प्रकार सघेरे सिगावे साम को पिये ॥

अपघ्न धन का फूल, अर्जुन वृक्ष और शालश्रुत की छाल और मफेदचन्दन सबों को दो तोला ले काष बनाय शहद डाल के या रात में भिगा हिम यना कर शहद डाल के पिये, यह पूर्य सात्रा है, रोगी बलहीन हो तो सात्रा कम कर लेना चाहिये ॥

२-श्लेष्मिणी को अरनी का काढ़ा या हिम पिलावै ॥

३-घान्द्रप्रमेह वाले को सातला के जड़ की छाल का काढ़ा या हिम एक भास पर्यन्त पिलाना चाहिये ॥

४-सुराप्रमेह वाले को गोंब वृक्ष के अतरछाल का काढ़ा या हिम पिलावै ॥

५-पित्तप्रमेह रोगीको दोनों हरदी अर्थात् हरदी और दाह हरदी का काढ़ा या हिम पिलावै जयलक्ष्म पेशाब से पिसान का आना बन्द न हो अथवा थोड़े दिनों तक पीने के पछात् भागे कहीं हुई औषधियां सेवन करावै ॥

६-शुकमेही को सफेद दूध की जड़, शीवाल और कंजा की गरी का काढ़ा अथवा हिम पीना चाहिये ॥

७-शिक्षाप्रमेह में पीते की जड़ के छाल का काढ़ा या हिम बहुत फायदा करता है । शिक्षाप्रमेह का निदान ठीक मिला लेना चाहिये क्योंकि शिक्षाप्रमेह के निदान से शर्करा रोग जो सुजाकके धजे से होता है जिसको हिकनत में रोग मसाना कहते हैं और इकीम लोग शिक्षाप्रमेह को भी रोगमसाना कहते हैं । इन दोनों में भेद है शिक्षाप्रमेह मूत्र के साथ सफेद रंग का दालू आता है और शर्करा में लाल रंग का रेत आता है जैसा प्रायः नदी या नारों में पाया जाता है ॥

८-शीतप्रमेह-सुश्रुत में शीतप्रमेह की जगह लवणमेह लिखा है यह भी ठीक है क्योंकि निदान उसका भी मिलता है । अन्य ग्रन्थियों ने जो शीतप्रमेह लिखा है उसका निदान प्रत्यक्ष में यह है । शीतप्रमेहवाला मूत्र करते समय कांप उठता है याने रोंगटे खड़े हो जाते हैं और कुछ जाड़ा सा बोध होता है । इस प्रमेहवालों को कुछ दिनों तक पाढ़ी और अगर का काढ़ा अथवा हिम अवश्य पिलाना चाहिये ॥

८-शनैः प्रमेह वाले को खैर वृक्ष की खाल का काय या हिम पिलाना उत्तम है ॥

१०-लाला प्रमेह अथवा फेण प्रमेह दोनों एक ही का नाम है इस प्रमेह वाले को सिर्फ त्रिफला का काढ़ा या हिम पिलाना उत्तम है । त्रिफला योग । इह का बकल १ भाग, खड़ेरा का बकल २ भाग, भांवला बीज रहित ४ भाग इसका नाम त्रिफला है ॥

उपरोक्त दशों प्रमेहों में काय या हिम में मिश्री की जगह गहद डालना चाहिये जिसकी मात्रा ३ मासा से लेकर एक तोला पर्यन्त है । कुछ दिनों तक यदि उपरोक्त कायों के पीते हुये बीमारी आराम होती न देख पड़े तो आगे प्रमेह रोग पर जो बड़ी २ दवाइयां लिखी है उसका सेवन करे ॥

काय और हिम का निर्णय ।

जाड़ा और वर्षा काल में काय और ग्रीष्म ऋतु अर्थात् गरम दिनों में हिम बना के पीना चाहिये । दूसरे तरी और खुष्की पर निर्भर है, चाहे जो काल हो तर मिजाज वाले को काय और खुष्क मिजाज वाले को हिम पिलाना चाहिये ॥

पित्तज छः प्रमेह ।

१-सार प्रमेह वाले को भी त्रिफला का हिम पिलाना उत्तम है ।

२-नील प्रमेह वाले को पीपल वृक्ष की खाल का काय या हिम अथवा पीपल वृक्ष के पञ्चांग का चूर्ण गो दुग्ध के साथ पिलाने से लाभ होता है । अथवा खश, भांवला, नागरमेथा और इह, इन्हीं का काय या हिम पीने से फायदा होता है ॥

३-कालप्रमेह वाले को परवल का हार पात, नीम का अतरछाल, आंवला और गुर्घ (गिलोय) इन चारों का क्वाथ या हिम मिश्री हाल के या शहद हाल कर एक मास पर्यन्त बराबर दोनों समय पथ्य सहित पीने से अधिक लाभ देखा गया है ॥

४-हारिद्र प्रमेह रोग में मोषा, इड़, पद्याल और इन्द्रजी इनका काढ़ा या हिम अथवा पठानीलोच, सुगन्धबाला, पीत चन्दन या स्वेत चन्दन और धव का फूल इन चारों का काढ़ा या हिम पीना श्रेष्ठ है । यदि हारिद्र प्रमेहवाले को दस्त साफ न आते हों तो कमिलतास के गूदे का काढ़ा देके रचन करादे पश्चात् पुनः उपरोक्त काढ़े को पीने को देय ।

५-माजिष्ठा प्रमेह पर नीम का छाल, अर्जुन वृक्ष का छाल और कमलगट्टा इन तीनों का क्वाथ या हिम पिलाना निस्सन्देह फायदा करता है । अथवा शीतलचिनी जिस को कषायचिनी कहते हैं, उसका घूर्ण कर दो दो मासे की पुड़िया बनालेय, दो दो घंटे पर एक २ पुड़िया मुख में रखकर थोड़े जल से सतार जाय, जल का कोई नियम नहीं है एक छँटाक से लेकर एक पाव तक जल मनुष्य पी सकता है । प्रमेह रोग में अधिक जल पीने का निषेध है यहि सन्देह हो तो समझलिय कि इस दवा के साथ में जल पीना हानिकर नहीं है दूसरे इस औषध के साथ भिलाकर वह मूत्र के द्वारा निकल जाता है । दूसरे अधिक जल का पीना वायु और श्लेष्मा जनित प्रमेह रोग में बहुत निषेध है ।

६-जब तक पेशाब सूत्र निर्मल जल के समान न हो जाय बराबर दवा खरता जायै । सूत्र स्वच्छ निर्मल होने के बाद आगे अयान की हुई कोई धातु मर्दुक औषध का सेवन करे जब तक प्रमेह का सन्देह बिलकुल जाता न रहे । यह औषध जो सिर्फ शीतलचिनी है दूहों प्रकार के प्रमेह रोगों को मूत्रद्वारा मीर्य की गरमी बाहर निकाल मीर्य शीतल और प्रसक्त करता है । जैसे उदरस्थ रोगों के शान्त्यर्थ वैद्यलोग प्रकृति के अनु-

सार रेषनद्वारा सलसाफ करके तब औषध का प्रयोग करते हैं उसी प्रकार प्रमेह रोगों में उपरोक्त द्रव्यद्वारा मूलमार्ग से धीरे धीरे का धिकार साफ कर के कोई उत्तम औषध सेवन करावें तो बहुत शीघ्र रोग जाता रहे ।

१-रक्तप्रमेह में शीतलचिनी से मूत्र साफ करने की निश्चायत जरूरत है क्योंकि इस प्रमेह में आन्तरिक सज्जता मनुष्य के शरीर में बहुत फैल जाती है और उसका दिल इस कदर कमजोर हो जाता है कि बिगार की स्थिरता जाती रहती है । प्रथम तो रोगी का विश्वास दवाइयों से कम हो जाता है दूसरे औषध देर में गुण दिखलाती है, इस्से मूत्र साफ कर देने से रोगी का मिजाज शीतल हो जाता है और आराम होने का विश्वास आ जाता है पश्चात् इस काय को देय ।

२-मिर्गु का फूल, लाल कमल का फूल, नील कमल का फूल और पलाश का फूल इन चारों को मिश्री मिला के चाँहे काढ़ा पिलावे या दिन पिलावे अवश्य लाभ होगा ।

अन्य प्रयोग ।

अमृतायारसःक्षौद्र युक्तसर्वप्रमेहजित् । हारिद्रचू-
र्णयुक्तोवा रसोधात्र्याःसमाक्षिकः ॥

ताजी मुर्चे को शिल पर कुचल दो तोला उसका स्वरस ले उसमें छः मासा शहद डाल कर पीजावे इसी प्रकार दोनों समय मुर्चे का स्वरस और शहद पीने से पित्त तथा वात जनित प्रमेह रोग आराम होता है इसी प्रकार ताजा आंवले का स्वरस ४ तोला, हल्दी का चूर्ण एक मासा, और शहद छः मासा मिला कर दोनों समय पीने से सब प्रमेहों का नाश होता है खासकर पित्तजनित प्रमेह रोग तो अवश्य ही नाश होता है । किन्तु इस दवा को तीन सहीने तक बराबर सेवन करना चाहिये ।

घंटे पश्चात् चार आंगुला घी और गहद के साथ खावे और दूध आदि स्निग्ध पदार्थों का सेवन करे किन्तु हलका भोजन करे ता कि अजीर्ण न हो क्योंकि रसायन में कोष्ठबद्ध और दस्त का पतला होना दोनों हानिकर है । इसतरह एक वर्ष पर्यन्त त्रिफला रसायन का सेवन करता रहे तो अजर (बुढ़ापा न हो के) और प्रमेहादि व्याधि रहित होकर सौ वर्ष पर्यन्त मनुष्य जीता रहे ॥

**रसायनविधिभ्रंसाज्जायेरन्व्याधियोयदि । यथा-
स्वमौपधन्तेपां कार्यभुक्त्वारसायनम् ॥**

रसायन विधि में गड़गड़ हो जाने से यदि रोग उत्पन्न हो जाय अथवा प्राचीन रोग उभड़ आवे तो रसायन बन्द करके अन्य औषधियों से रोग को शीघ्र शान्ति कर पुनः रसायन सेवन करना आरंभ करे ॥

रसायन सेवन करनेवाला झूठ बोलना, क्रोध करना, शराब पीना, स्त्री प्रसंग करना, जीव मारना, बहुत मेहनत करना, चिन्ता, शोक, जागरण, उपवास, निष्ठुरता आदि अपथ्यों को त्यागकर सत्यवादी, प्रियवादी, दयापरायण, उचित समय पर सोने, जागनेवाला, समय पर शीघ्र दन्तधावन, स्नान, दान, संध्या भोजन करनेवाला, जितेन्द्रिय और तिव्दानों का सेवक होना चाहिये क्योंकि ।

**यथास्थलमनिर्वाह्यदेापान्शारीरमानसान् । रसा-
यनगुणैर्जन्तुर्युज्यतेनकदाचन ॥**

इसका अर्थ यह है कि जो मनुष्य शारीरिक और मानसिक दोनों के बिना दूर किये रसायन सेवन करता है उसको रसायन का विनाकुल फल नहीं मिलता है तात्पर्य यह है कि आरोग्यता प्राप्त करने में यथार्थ पथ्य सेवन करने की निहायत जरूरत है ॥

कफपित्त प्रमेह परं लोध्रासवं ।

लोध्रंशठीपुष्करमूलमेला मूर्वाविहंगंत्रिफलायवा-
नी । चट्यंप्रियंगुंक्रमुकंविशालां किराततिक्तंकटुरोहिणीं
च ॥ भाङ्गींनतंचित्रकपिप्यलीनां मूलंसकुष्ठातिविषां च
पाटाम् । कलिङ्गकंकेसरमिन्द्रसाह्या नन्तासिपत्रंमरिच-
प्लवंच ॥ द्रोणोऽभसःकर्षसमांश्चपक्त्वा पूतेचतुर्भागजलाव-
शेषे । रसार्धभागंमधुनःप्रदाय पक्षनिधेयोद्युतभाजनस्थः ॥
लोध्रासवोऽयंकफपित्तमेहान्क्षिप्रंनिहन्याद्विपलप्रयोगात् ।
पाण्डुमयाशौस्यरुचिंग्रहण्या दीपंवलासंविविधंचकुष्ठम् ॥

(लोध्र) पठानी लोध (शठी) कचूर (पुष्करमूल) पोहकरमूल (एला)
छोटीलायचीके दाने (मूर्वा) मुरां (विहंग) वायविरंग, त्रिफला, (यवानी)
अजवाइन (चट्यं) चाव, प्रियंगुफूल (क्रमुक) दक्षिणी चिकनीसुपारी (वि-
शाला) ईंदाहण के जड़ की छाल (किराततिक्त) कटुभाचिरायता (कटुरो-
हिणी) कुटकी (भाङ्गी) भारगी (नत) तगर (चित्रक) चीतेकी जड़का छाल
(पिप्यलीमूल) विषरामूल (कुष्ठ) कूट (अतिविषा) अतीस और पाट्टी
(कलिङ्गक) इन्द्रगव (केसर) नागकेशर कर्जुन वृक्ष की छाल, जवाचा,
इस कालोमिर्च और मोथा इन कटु-इस औषधों को एक २ तोला हो
अधकचरा कर १२ सेर जल में रात को भिजा देय सृत्तिकापात्र अथवा
कलईदार वर्तन हो, सघेरे धोमी आंच से पकाये जय चौपाई जल पाने
३ सेर पानी रह जाय शीतल कर जल के खान लेय और उसमें १॥ सेर
शहद मिला किसी बिकने पात्र अथवा गुणाममें भर मुल बन्द कर दे ता
कि भीतर हवा न जाने पावे १५ दिन घर राखे बाद १५ दिन के फिर
उसे खान देतलमें भर देय-इस आसव का मात्रा खः-मासासे दो तोला

तक है यल के अनुसार मात्रा बना लिये इस आसव को दोनों समय परहेज के साथ पीने से कफपित्त जनित प्रमेह रोग आराम होता है । यह आंसव पांडु और खादी यवासीर को भी फायदा करता है जिस प्रमेहवाले को इस आसव के पीने से दस्त जारी हो उसके दवा में इन्द्रायन न छोड़े ॥

देवदार्वारिष्ट वात कफ प्रमेह पर ।

तुलाहुं देवदारुस्याद्वासाचपलविंशतिः । मंजिष्टेन्दु
यवादन्ती तगरं रजनीद्वयम् ॥ रास्नाकृमिघ्नमुस्तंच शिरी-
षं खदिरार्जुनी । भागान्दिशपलान् दद्याद्यत्रान्यावत्सक-
स्यच ॥ चन्दनस्य गुडूच्याश्च रोहिन्याश्चित्रकस्यच ।
भागानष्टपलानेतानष्टद्रोणैः समसः पचेत् ॥ द्राणेष्टोपेकपा-
येच पूतेशीते प्रदापयेत् । घातक्याः षोडशपलं माक्षिकस्य
तुलात्रयम् ॥ व्योपस्य द्विपलं दद्यात् त्रिजातस्य चतुःपलम् ।
चतुपलं प्रियंगुश्च द्विपलं नागकेशरम् ॥ सर्वाण्येतानि संचूर्ण्य
घृतभांडे निधापयेत् । मासादूर्ध्वपिवेदेन प्रमेहं हन्ति दुर्ज-
यम् ॥ वातरोगान् गृह्ण्यशां मूत्रकृच्छ्राणि नाशयेत् । देवदा-
र्वारिष्टोदह्नुकुण्ठविनाशनः ॥

देवदारु तेलही गांठ १०० तोला, (वासा) रूसा की पत्ती २० तोला
मजीठ, इन्द्रजय, जयालगोटेकीजड़, तगर, हरदी, दारुहरदी, रासन,
वायभिरंग, मोषा, शिरस की छाल, सैर यस्त की छाल, अर्जुन छाल की
छाल यह सब दस २ तोला, अजमोदा, कुरैया की छाल, भफेदचन्दन,
गुरिच, कुटकी, चीते के जड़ का छाल, यह छः औषध आठ २ तोला

लेप सब दवाइयों को अधिककरा कर सवागन जल में रात को भिजा देय सघेरे आंच पर चढ़ाय घीमी आंच से पकावे जब चौथाई जल अर्थात् १२ सेर जल याकी रह जाय घूरे पर से उतार शीतल कर छान लेय और उसे किसी घृत प्राग् अथवा क्षुयान में भर तब उसमें घब का फूल १६ तोला, शङ्ख ३ सेर, शोंठ छोटीपीपर और कालीमिर्च यह तीन देा तोला, दालचीनी, छोटीलायची और तेजपात यह तीन चीज ४ तोला लेय, त्रियंगुका फूल, और नागकेशर देा दो तोला लेय इन सब दवाइयों को अधिककरा कर उसी काढ़ेमें डाल देय किसी लकड़ी से सबों को मिला के घरतन का मुख बन्द कर दे ताकि हवा न जाने पावे एक गद्दीने तक खुले मैदान में रख देय जो कि दिनमें धूप और रातको ओस लगे एक सप्तीने के बाद पुनः उसे छान घेतल में भरकर रख देय । इस आसव का मात्रा १ तोला से चार तोला तक है, रोगी की अवस्था और पलायल देख के मात्रा बना लेय । इस आसव को दिन में दो या तीन बार पीने से उपद्रव सहित प्रलेप्ता और घात जनित प्रमेह रोग नाश होता है इसके अलावा ग्रहणी, वायासीर और गुजाक भी इसके सेवन से नाराज होता है किन्तु विशेषकर यह आसव प्रमेहरोग पर है ॥

प्रमेह रोग पर वसन्तकुसुमाकर रस ।

द्विभागीहेमभूतेश्च गगनंचापितवसमम् । लोहभस्म
त्रयोभागाश्चत्वारोरसभस्मतः ॥ वह्नभस्मत्रिभागस्यात्स-
र्वमेकत्रमर्दयेत् । प्रवालंमौक्तिकंचैव रससात्म्येनदाययेत् ॥
भावनागव्यदुग्धेन रसेर्घृष्टाटरूपकैः । हरिद्रावारिणाचैव-
मोचकंदरसेनच ॥ शतपत्ररसेनापि मालत्यास्वरसेनच ।
पञ्चान्मृगमदश्चन्द्रस्तुलसीरसभावितः ॥ कुसुमाकरइत्ये-
षवसन्तपदपूर्वकः । गुंजाद्वयंददीतास्य मधुनासर्वमेहेनुत् ॥
सिताचन्दनसंयुक्तश्चास्त्रपित्तादिरोगजित् ।

त्रिवृहंतीपत्रकंचत्वगेलावंशरोचना । प्रत्येकंकर्पमात्रंच
 कुर्यादेतानियुद्धिमान् ॥ द्विकर्पहतलोहंस्याञ्जुतुःकर्पासिता
 भवेत् । शिलाजत्वष्टकर्पस्यादष्टौकर्पास्तुगुग्गुलाः ॥ एभि-
 रेकत्रसंक्षुरयैः कर्तव्यागुटिकाशुभा । चन्द्रप्रभेतिविख्या-
 तासर्वरोगप्रणाशिनी । प्रमेहान्विंशतिकृच्छ्रं मूत्राघातं
 तथाश्मरीम् ॥ चन्द्रप्रभायांकर्पस्तु चतुःशाणोविधीयते ॥

(चन्द्रप्रभा) कछूर, दुधियाबब, (मुस्त) नागरमोथा (भूमिस्त्र)
 निष्ठबिरायता (अमृत) गुर्ब या गिलोय, देवदारु, हरदी (अतिविषा)
 जतीस, (दार्वी) दारुहरदी, पिपराभूल, चीता के जड़ की छाल, चन्नि-
 या, त्रिकला, चाव, चावविरंग, गजपीपर, (व्योषं) शोंठ प्रीपर और
 मिर्च (मासिक घातु) सुवर्णमासिक का शुद्ध भस्म, (द्वीक्षारी) जवा-
 खार और सज्जीखार (लवणत्रय) सेंधानेरान, कालानेन और बिहुनेन
 इन चीजों को तीन २ भाग लेय (त्रिवृत) निशोध, (दन्ती) जवाल-
 गोटे के जड़ की छाल, (पत्रक) तेजपात, (त्वग) दालचीनी, (एला)
 छोटी लायची के दाने और बंसलोचन इन सब दवाइयों को दश २
 भाग लेय । सूख शुद्ध कांतीसार अथवा पोलाद भस्म जो जल पर उत-
 राता है २० भाग लेय सबों को चूर्ण कर तथा अढ़ाई तोला मिश्री
 और शुद्ध शिलाजीत पांच तोला सभीमें मिलादेय और शिलाजीत के
 बराबर साधा उत्तम गुग्गुल मिलाय पानी का पुट दे चना बराबर गोली
 बनाय छाये में सुखाय बोटल में भर कर रखदेय इसको चन्द्रप्रभा गुटिका
 कहते हैं । इसको दोनों समय सेवन करने से कफ वात जनित प्रमेह
 रोग नष्ट होता है ॥

चन्द्रप्रभा गुटिका का गुण दन्त मेवादि रोगोंका भी नाशक लिखा है
 किन्तु बिलकुल वाह्यात है जो यथार्थ गुण है वह हमने लिख दिया है ।

दूसरी बात, यह है कि चन्द्रप्रभायटी की सील एक कर्ष भर लिखा है (चन्द्रप्रभायां कर्षस्तु) यदि कर्षभर याने दश मासा की मोली बना के रोगी को खिलाई जाय तो बिमार विचारे की क्या दशा होगी, रोग दूर होना तो दूर रहा उसे खुदी इस दुनिये को तिलांजलि देना पड़े, मात्रा निध्या नहीं है क्योंकि उस जमाने में लोग बीसाही बलवान होते थे जिस जमाने में यह पुस्तक रची गई है, शोक वर्तमान के वैद्यों पर होता है जो नई पुस्तक रचने अथवा टीका बनाने में तो चन्वन्तरि के भी गुप्त घनजाते हैं किन्तु देश समयके अनुसार मनुष्यके बलाबलपर बिलकुल ध्यान नहीं रखते। हमने ठीक देखा है जिस औषधकी मात्रा छ मासा है आजकल के लोगोंको एक मासा दवा पचना मुस्किल पड़जाता है। यही समय है जो आजकल लोगों की बिमारी न आराम हो के जस र दवा खाते हैं और भी बिमारी बढ़ती है।

दूसरे आजकल के टीकाकारों में एक बड़ा भारी दोष और भी पाया जाता है, वेद्यक क्या चीज है जानते नहीं व्याकरण की शक्ति से शब्दार्थ निकाल कर रख देते हैं वह भी औषधियों के नाम तो बड़ा ही गड़बड़ करहालते हैं उदाहरण में सिर्फ एक दवा को दिखलाते हैं। जैसे—पत्रज जिसको प्रसिद्ध नाम तेजपात है तमाला में भी पड़ता है उसके पर्याय नाम में एक नाम तमाल पत्र है और भारत में यह प्रसिद्ध है कि तमाकू की लोग तमाल पत्र कहते हैं तो यह समस्त साधारण लोगों में नहीं होता, भाषा की किताबों को देख के प्रायः आयुर्वेद विद्वान रहित जन औषध बनाते हैं, तमाल पत्र को पढ़ कर तेजपात की जगह कहीं तमाकू छेड़ दिया तो रोगी की क्या गति होगी इसीसे पण्डितों की सम्मति आर्थ ग्रन्थों में रहती है और भी अनेक आपत्तियाँ हैं जिन्हें समय पा के दिखलावेंगे ॥

प्रमेह रोग पर शिलाजीत प्रयोग ।

वातज चार प्रमेह जो प्रायः नसाध्य होता है क्योंकि यह रोग

अमुष्य के मारने के लिये जाता है ऐसे दुष्कर रोग को यदि आराम करने की सामर्थ्य है तो शिलाजीतमें है यदि उत्तम शिलाजीत नहीं और पथ्य सहित सेवन किया जाय तो मिस्रग्देह प्रमेह रोग आराम हो जाय क्योंकि उत्तम औषध के अलाभ से रोग अमुष्य को मारता है । शिलाजीत में वैद्यों की सम्मति ।

नसोस्तिरोगोभुवि साध्यरूपो यो ह्यस्य जेयं न जयेत्प्रसह्य । तत्कालयोगैर्विविधैः प्रयुक्तं स्वास्थ्यं तनौ यद्विपुलं ददाति ॥

ऐसा कोई असाध्य रोग पृथ्वी पर नहीं है जो शिलाजीत के खाने से न जाय, अनेक योगों के साथ शिलाजीत को सेवन करने से बहुत शीघ्र शरीर में आरोग्यता लाभ होता है ।

शिलाजीत की उत्पत्ति ।

शिलाजीत की उत्पत्ति शास्त्रकारों ने इस प्रकार लिखा है-समुद्र से अमृत निकालने के समय जब देवता और दैत्यों ने मिलकर मंदराचल पर्वत को समुद्र में डालकर मथा था, ऐसा कहा जाता है कि उस समय गरभाक्षुट प्राकर उस पर्वत में पसीना निकला और समुद्र में गिरा, मथने के समय यह भी देवताओं को मिला, तब देवताओं ने उस शिलाजीत को ग्रहणा और इन्द्र की राय लेकर अमुष्यों की उपकारार्थ उसे समस्त पर्वतों को दिया अर्थात् सब पर्वतों में उसका बिह्वन डाल दिया तभी से यह सामान्य शिलाजीत अमृत कल्प के समान ग्रीष्म रितु में सूर्य की धूप से पर्वत तप्त होने से उसमें से बहता है जिस पर्वत में जो घातु होता है उसी के वर्ण के समान उस पर्वत से शिलाजीत निकलता है ।

सेना, चांदी, रांगा, सीसा, तांबा और लोहे से शिलाजीत की उत्पत्ति है अर्थात् जिन पर्वतों में उपरोक्त धातुओं में से किसी धातु का

निदाघेधर्मसंतप्ता धातुसारंधराधराः । निर्यासवत्प्र-
मुंचन्ति शिलाजतुप्रकीर्तितम् ॥

सूर्य के किरणों की गर्मी से जम पर्वत तप्त होते हैं तब उनमें से धातुओं का भार रूप (निर्यासवत्) याने गोद के समान पतला पदार्थ जिसे शिलाजीत कहते हैं निकलता है और बहुत दिनों तक गोद के समान लसदार बना रहता है। कहने का तात्पर्य यह है कि जो शिला-जीत बाजार में बनियों के यहां सूखा मिलता है दर हकीकत बन्दरों का बिष्टा है, अज्ञान लोग उसे जो शिलाजीत समझते हैं ॥

शुद्ध असिल शिलाजीत की परीक्षा ।

वन्हौंसितन्तुनिर्धूमं पक्त्वालिङ्गोपमंभवेत् । तृणाग्ने-
णांभसिक्षितमधोगलतितन्तुवत् ॥ गोसूत्रगन्धमलिनं शुद्धं
ज्ञेयंशिलाजतु ॥

जो शिलाजीत अग्नि में डालने से निर्धूम याने धुआं न देय और पकनेसे याने अग्नि पर रखने से लिङ्गके समान खड़ा होजाय तिनका के अधभाग पर रखकर जल में डालने से तार तार सा होकर जल में नीचे बैठ जावे, और उसमें गोसूत्र की सी दुर्गन्ध आवे, मलिन काळे रंग का पतला गोद के समान हो उसे शुद्ध शिलाजीत जानना ॥

शुद्ध शिलाजीत के गुण ।

रसोपरसंसूतेन्द्र रत्नलोहेपुयेगुणाः । वसंतितेशिला-
धातौः जरामृत्युजिगोषया ॥ शिलाजकटुतिक्तोष्ण कटु-
पाकरसायनम् । छर्दिरोगन्तथाहन्ति कम्पमेहास्मशकंराः॥

मूत्रकृच्छ्रक्षयश्वासं वातमर्शांसिपाण्डुता । अपस्मारमथो-
न्माद शोफकुण्ठोदरकृमीन् ॥

रस, उपरस, पारस, रस और लोहे में जो गुण हैं वह सब गुण शिलाजीत में हैं यह बुढ़ापा और मृत्यु को जीतनेवाला है शिलाजीत कहुशा, तीता, गरग, पाक में कटु और रसायन माने बुढ़ापापन को नाश करनेवाला है । वमन, कम्पवायु, जीर्णोन्मेषरोग, पथरी, रोगमसाना, सुजाक, कफसर्प, श्वासरोग, दादीबाबासीर, पाण्डुरोग, मृगी, उन्माद, मूजन, कोढ़ और कृमिरोग को नाश करता है ॥

शिलाजीत का सामान्य लक्षण ।

यत्सर्वतित्तकटुकं कपायानुरसंसरम् । कटुपाक्यु-
ष्णवीर्यञ्च शोषणं छेदनं तथा ॥ तेषु यत्कृष्णमलमु स्त्रिगंध-
निःशर्करञ्च यत् । गोमूत्रगन्धियञ्चापि तत्प्रधानं प्रचक्षते ॥

यस प्रकार के शिलाजीत स्वाद में चरपरे, कहुये, कपायल, होता है जीर्णों में दस्ताघर कटुपाकी, उष्णवीर्य, (शोषी) रसादि धातुओं का सुखानेवाला और छेदी • है लेकिन उन सबों में से जो शिलाजीत काले रंग का भारी चिकना कंकड़ रेत रहित और जिसमें गोमूत्र किसी दुर्गन्ध जाती हो यह शिलाजीत उत्तम होता है ।

शिलाजीत शुद्ध करने की प्रथम विधिः ।

गरमी के दिनों में जब आकाश मेघ और वायु गर के रहित हो उस समय उत्तम स्थान में लोहे के चार पात्र जो कटोरे के भांति हो

• जो क्षीयते मिले हुये कफादि दोषों को अपने शक्ति से यहां से हटाकर बाहर करदे उसे छेदी कहते हैं ।

स्थापन करे उनमें से पहले पाल में शिलाजीत को टुकड़े कर के ढाल दे और शिलाजीत से उसमें दूना जल ढाल दे और ऊपर से थोड़ा गरम जल ढाल के हाथ से सूय जल के मोटे कपड़े से छानले, उस छाने जल को दूसरे पात्र में ढालकर धूपमें रखदेवै और उसके ऊपर जस २ मलाई जमतीजाय तीसरे पात्र में रखता जाय, जब मलाई का जमना बन्द हो जाय उस पानी को फेक धरतन साफ करलेय और जिस धर्तन में मलाई रखी गई है उसमें भी गरम जल ढाल के धूप में रखदे, जब उसमें भी मलाई जमना मुक्त हो चौथे पात्र में रखताजाय जब मलाई जमना बन्द हो जाय तो उसका भी पानी फेंक धर्तन साफ करलेय और चौथे पात्र में फिर गरम पानी ढाल के धूप में रखदेय और जस २ मलाई जमती जाय पुनः प्रथम पात्र में रखता जाय और गरम पानी ढाल के धूप में रखदेय इस प्रकार पांच छ बार करने से जब देखे की अब मलाई नहीं जमती पानी स्पष्ट बना है तब जानना चाहिये कि शिलाजीत शुद्ध हो गया उसे निकाल किसी उत्तम पात्र में रखदेय, यह उत्तम शुद्ध शिलाजीत है ।

द्वितीय विधिः ।

शिलाजतुंसमानीय ग्रीष्मेतप्तशिलाच्युतं । गोदुग्धै-
स्त्रिफलाक्वाथैर्भृङ्गद्रावैश्चमदयेत् ॥ घ्रातपेदिनमेकैकं
तच्छुष्कंशुद्धतां व्रजेत् ।

ग्रीष्म ऋतु अर्षात् गरमी के दिनों में जब पर्यंत अत्यन्त गरम हो जाता है तब पर्वतों से शिलाजीत चूता है । उस शिलाजीत से मलिन दूरी करणार्थ गी का दूध, त्रिफला का काढ़ा और भांगरे का स्वरस में एक २ दिन भावना देके सुखालेखे शिलाजीत शुद्ध होजायगा । किन्तु यह शुद्धता मध्यम दर्जे का है यह शिलाजीत गरम करता है ।

नष्ट होता है क्योंकि इस औषध का फल बहुत शीघ्र दृष्टिगोचर होता है । जब औषध पच जाय तब उक्त भोजन करे ।

मधुमेह की चिकित्सा ।

सुश्रुत संहिता चिकित्सित स्थानः ।

मधुमेहित्वमापन्नं भिषग्भिःपरिवर्जितम् । योगेना-
नेनमतिमान् प्रमेहिणमुपाचरेत् ॥ मासेशुक्रेशुचौचैवशैलाः
सूर्योशुतापिताः । जतुप्रकाशंस्वरसं शिलाभ्यःप्रस्रवन्तिह ॥
शिलाजत्वितिचिरयातं सर्वव्याधिविनाशनम् । त्रप्यादी-
नान्तुलोहानां पण्णामन्यतमान्वयम् । ज्ञेयंस्वगन्धतश्चापि
पेडूयोनिप्रथितंक्षितौ ॥ लोहात्भघतितद्यस्माच्छिलाजतु
जतुप्रभम् । तस्यलोहस्यतद्वीर्यं रसञ्चापिविभर्तितत् ॥
त्वपुसीसायसादीन प्रधानान्युत्तरोत्तरम् । यथातथाप्रयो-
गेऽपि श्रेष्ठेऽपिष्ठगुणाःस्मृताः ॥

मधुमेहादि चार प्रकार के वातज प्रमेह रोग में सुश्रुत जी ने शिला-
जीत को प्रधान औषध कहा है । सुश्रुत जी कहते हैं कि जिस मधुमेही
को असाध्य जानकर वैद्यों ने त्याग दिया हो उसकी चिकित्सा निम्न-
लिखित उपाय से करना उचित है । ज्येष्ठ अथवा भाद्रपद के महीने में
जब सूर्य की गरमी से पर्वत अत्यन्त तप्त हो जाते हैं तब पत्थरों के
सन्धिपों से पिघली हुई लाही के समान एक प्रकार का रस निकलता
है, उसी रस को वैद्य लोग शिलाजीत कहते हैं, और उसी नाम से वि-
ख्यात है तथा ग्रहों में विकृता भी है । यह वात अथवा कि जो रोग किसी

जीवध से आराम न हो यह रोग शिलाजीत से दूर होता है अर्थात् शिलाजीत अनेक-प्रकार के योगों से अनेक रोगों को नाश करता है ।

रांगा, सीसा, तांबा, रूपां सुवर्ण और लोहा इन छ धातुओं में से किसी एक धातु कि सुगन्धि शिलाजीत में अवश्य आया करती है इसी से शिलाजीत को खट्योनि भी कहते हैं इसका मुख्य कारण यह है कि उपरोक्त छः धातुओं में किसी एक धातु की खान या अंश जिस परवत में होगा उसी परवत से शिलाजीत कि उत्पत्ति होगी अन्य परवतों से नहीं इससे जो परवत में जिस धातु का अंश होगा उसी धातु कि गन्ध शिलाजीत में आवेगी और उसी धातु का बीर्य और उसीका रस भी शिलाजीत धारण करता है । रांगा, सीसा, तांबा, लोहा इत्यादि सब धातु गुणों में उत्तरोत्तर श्रेष्ठ हैं उसी तरह शिलाजीत भी गुणों और प्रयोगों में श्रेष्ठ है ।

तदभावितंसारगणैर्हृतदोषोदिनोदये । पिवेत्सारोदकेनैव श्लक्ष्णपिष्टंयथैवलम् ॥ जाङ्गलेनरसेनान्नं तस्मिन्जीर्णंभोजयेत् । उपयुत्यतुलामेवगिरिजादमृतोपमात् ॥ वपुर्वर्णवलोपेतो मधुमेहविवर्जितः । जीवद्वेपशतंपूर्णम् जरोऽमरसन्निभः ॥ शतशतंतुलायान्तु सहस्रशतौलिके । भल्लातिर्कविधानेन परिहारविधिःस्मृतः ॥ मेहंकुष्टमपस्मार भुन्भादंश्लीपदंगरम् । शोषशोफार्शसीगुल्मं पाण्डुतांविषमज्वरम् ॥ अपोहत्यचिरात्कालाच्छिलाजतुनिषोवितम् । नरोऽस्तिरोगोयज्ञापि निहन्यान्न-

शिलाजतु ॥ शर्करांचिरसम्भूतां भिनत्तिचतथाश्मरीम् ।
भावनालोडनेचास्य कर्त्तव्येभेपजैर्हितैः ॥

पूर्वोक्त प्रकार से शुद्ध किया हुआ शिलाजीत को अथवा शालि-
सारादि द्रव्यों की भावना देकर अमन विरेचनादि द्वारा दीर्घों के दूर
हाने पर सुयोदय के पश्चात् उसी शालिसारादि केजल में पीस के बल
के अनुसार खाय उसके पचाने पर जंगल पशुओं के मांस रस के साथ
पुराने चावल का भात या जव की रोटी भोजन करे इस रीति से अमृत
के समान गुणकारी इस शिलाजीत को जो पांच सेर खालीग उसका देह
सुन्दरवर्ण और बल से युक्त हो जायगा, और मधुमेह भी जाता रहेगा ।
अजर अमर होकर सौ वरस की पूर्ण आयु को प्राप्त करेगा और एक
पक्षेरी शिलाजीत सेवन करने से सौवर्ष आयु बढ़ती चली जायगी अर्थात्
समानन खालीने से सहस्र वर्ष की अवस्था को प्राप्त होगा । भिलाये के
विधान के समानही इसमें आहार विहार का नियम है । शिलाजीत से
प्रमेह, कोढ़, भृगी, पागलपना, पीलपाय, शोथ, शोफ, अर्श, गुल्म, पाण्डु
रोग, विषमज्वर इत्यादि सब रोग बहुतही अल्पकाल में नष्ट हो जाते
हैं । ऐसा कोई रोग नहीं है जो शिलाजीत से दूर न हो । बहुत दिवस के
उत्पन्न हुये शर्करा और पक्षरी रोग दूरजाते हैं । इसमें उत्तम २ औषधों
की भावना देकर उत्तमही औषधों में इसे पीटें ॥

सात्पर्य यह है कि भूतपूर्व ऋषियों ने जिन औषधियों को अधिक
गुणकारी पाया है उसीको अधिक पुष्टता के साथ खिलाने को जोर
दिया है सिर्फ भेद इतनाही है ऋषियों ने उसी समय के अनुसार औ-
षधियों के गुण मात्रा और खाने का विधान लिखा है, जिस समय नि
सहों ने अपनी २ संहिता रची है उन को यह मालूम नहीं था कि
भविष्य में इस शुद्ध आयुर्वेद में सौधों का राज्य होगा और खान, पान,

व्यवहारादिक धर्तन से मनुष्यों की प्रकृति, बल, रोग, और समय का भी बहुत कुछ हेर फेर हो जायगा नहीं तो भविष्यत के लिये भी यही अविगण्य औषधियों के मात्रा की न्यूनाधिक करने की विधि लिखनाते ।

लिखा है कि इस शिलाजीत को एक तुला, याने पांच सेर जो खालीगो बिमारी आराम होने के बाद सी वर्ष जीवेगा, इसी तरह प्रति पांच सेर से सी २ वर्ष की आयु समझना चाहिये इस प्रकार से मवासन शिलाजीतखाने से मनुष्य एक हजार वर्ष जी सकता है । अगर यह बात सत्य हो तो कौन मनुष्य ऐसा है जो बहुत दिनों तक इस संसार में जीने की इच्छा न रखता हो । पाँचकण यह न समझें कि हम शिलाजीत के गुण का जो अपिषों ने लिखा है असत्य समझते हैं नहीं बिलकुल सत्य है किन्तु अब मनुष्य में यह बल नहीं रहा जो दो तोला रोग खासके । पूर्व जमाने में जिन औषधियों की मात्रा एक तोला थी उसकी मात्रा आज के जमाने में एक मासा या अधिक से अधिक दो मासा समझना चाहिये, तो आज के समय में यदि ५ सेर शिलाजीत खाना चाहे तो उसके लिये १३ वर्ष ४ महीना की जरूरत है । आयु बढ़ये इतने दिनों तक किसी औषध का सेवन करना कठिन बात नहीं है, यहां तो लोग चाहते हैं कि एकही दिन के औषध सेवन से जन्म के रोग छुट जाय यही से आज भारत में १०० में ८५ वे मनुष्य रोग ग्रस्त हो रहे हैं । प्रमेहरोग पर शिलाजीत का सेवन करना हमारी पूरी सम्मति है क्योंकि इसे हम स्वयं सेवन करके परीक्षा ले चुके हैं ।

इसी तरह एक और प्रधान औषध परीक्षित है जिसे छठवें खण्ड में प्रकाश करते हैं ॥